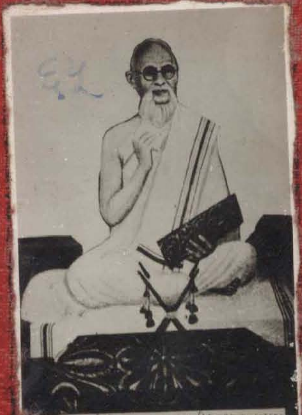

પૂ. આચાર્યશ્રી આનન્દસાગરસૂરીશ્વરજી મહારાજ

अल्पपरिचितसैद्धान्तिकशब्दकोषः

प्रथमो विभागः

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

॥ णमोऽत्थु णं समणस्स भगवओ महावीरस्स ॥

श्रेष्ठि-देवचन्दलालभाई-जैनपुस्तकोद्धारे ग्रन्थाङ्कः १०१॥

आगमोद्धारक-आचार्यश्रीआनंदसागरसूरिसङ्कलितः—

अल्पपरिचितसैद्धान्तिकशब्दकोषः ।

(प्रथमः स्वरपर्यन्तो विभागः)

सम्पादकौ—आगमोद्धारक—आचार्यश्रीआनन्दसागरसूरीश्वरान्तेवासिनौ
कञ्चनविजय-क्षेमङ्करसागरौ।

संग्राहकः—आगमोद्धारकान्तेवासी गुणसागरः ।

प्रकाशकः-सुरतवास्तव्य-श्रेष्ठि-देवचन्दलालभाई-जैनपुस्तकोद्धारकोशस्यावैतनिक-
कार्यवाहकः—चोकसी मोतीचंद मगनभाई ।

★

वीराब्दः २४८०। वैक्रमाऽब्दः २०१०। शाकाब्दः १८७६। खिस्ताब्दः १९५४

प्रथमं संस्करणम्] निष्क्रयः रुप्यषट्कम् । [प्रतयः ५००

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इदं पुस्तकं सूर्यपुरे श्रेष्ठि-देवचन्दलालभाई जैनपुस्तकोद्धारसंस्थाया अवैतनिककार्यवाहक-मोतीचंद-मगनभाई चोकसी इत्यनेन सरस्वतीमुद्रणालये, गोपीपुरा, मुद्रणमन्दिरे बालुभाई-हीरालाल-लालनद्वारा मुद्रापितम्।

अस्य पुनर्मुद्रणाद्याः सर्वेऽधिकारा एतद्भाण्डागारकार्यवाहकैरायत्तीकृताः।

All Rights Reserved By The Trustees of the Fund.

Printed By :-
Balubhai Hiralal Lalan at the 'Sarasvati Mudranlaya' Gopipura, Surat.

Published By Sheth :-Devchand Lalbhai Jain Pustakoddhar Fund, At Sheth Devchand Lalbhai Jain Boarding House for Shri Ratansagarji Jain Boarding, Badekhan Chakla, Gopipura, Surat. By the Hon: Managing Trustee, Motichand Maganbhai Choksi.

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

THE LATE
SHETH DEVCHAND LALBHAI JAVERI.

BORN 1853 A. D. SURAT. DIED 13TH JANUARY 1906 A. D., BOMBAY

श्रेष्ठी देवचन्द लालभाई जहवेरी.

जन्म १९०९ वैक्रमाब्दे	निर्याणम् १९६२ वैक्रमाब्दे
कार्तिकशुक्लैकादश्यां (देवदीपावलीदिने)	पौषकृष्णतृतीयायाम् (मकरसंक्रान्तितिथौ)
सूर्यपूरे.	मोहमयीनगर्याम्.

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Sheth Devchand Lalbhai Pustakoddhar Fund Series No. 101

Shree Alpaparichit Saidhantik Shabda - Kosh

FIRST PART

[*A To AOU*]

—: *Author* :—

Agmoddharak Acharya Shree Anandsagarsurishwarji

: *Editor* :—

Agmoddharak Shree Anandsagarsurishwarji 's Sishyo

Muni Kanchanvijay and Muni Kshemankarsagar

Collected:-

SHREE GUNSAGARJI

SHREE ANANDSAGARSURISHWARJI'S ANTEWASI

-: **Publisher** :-

Motichand Maganbhai Choksi

Managing Trustee For :-

Sheth **DEVCHAND LALBHAI JAIN PUSTAKODDHAR FUND**

S U R A T

First Edition	**Price Rs. 6-0-0**	*Vikram Samvat 2010.*
Copies 500		*Christation Era 1954.*

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

The Board of Trustees:

Nemchand Gulabchand Devchand Zaveri
Talakchand Motichand ,,
Babubhai Premchand ,,
Amichand Zaverchand ,,
Keshrichand Hirachand ,,
Motichand Maganbhai Choksi
Hon. Managing Trustee.

संस्थानुं ट्रस्टी मंडळ :—

श्री नेमचंद गुलाबचंद देवचंद झवेरी
,, तलकचंद मोतीचंद ,,
,, बाबुभाई प्रेमचंद ,,
,, अमीचंद झवेरचंद ,,
,, केशरीचंद हीराचंद ,,
,, मोतीचंद मगनभाई चोकसी
ऑन. मेनेजींग ट्रस्टी

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अल्पपरिचितसैद्धान्तिकशब्दकोषः

प्रथमो विभागः

प्रकाशकः :—
शेठ देवचन्द लालभाई-जैनपुस्तकोद्धार
फण्डस्य
कार्यवाहक :-
चोकसी मोतीचंद मगनभाई : सुरत.

सङ्कलयिता :—
आगमोद्धारक-आचार्य
श्रीआनन्दसागरसूरीश्वरजी

चित्र परिचय :—
हिन्दुस्तानना नकशामां आवेला तीर्थोनो [illegible].
(१) श्री सिद्धाचलजी.
(२) श्री तारंगाजीनुं जिनालय.
(३) श्री चितोडनो किर्तिस्तंभ.

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शेठ-देवचंद-लालभाई-जैनविद्यार्थी भुवन

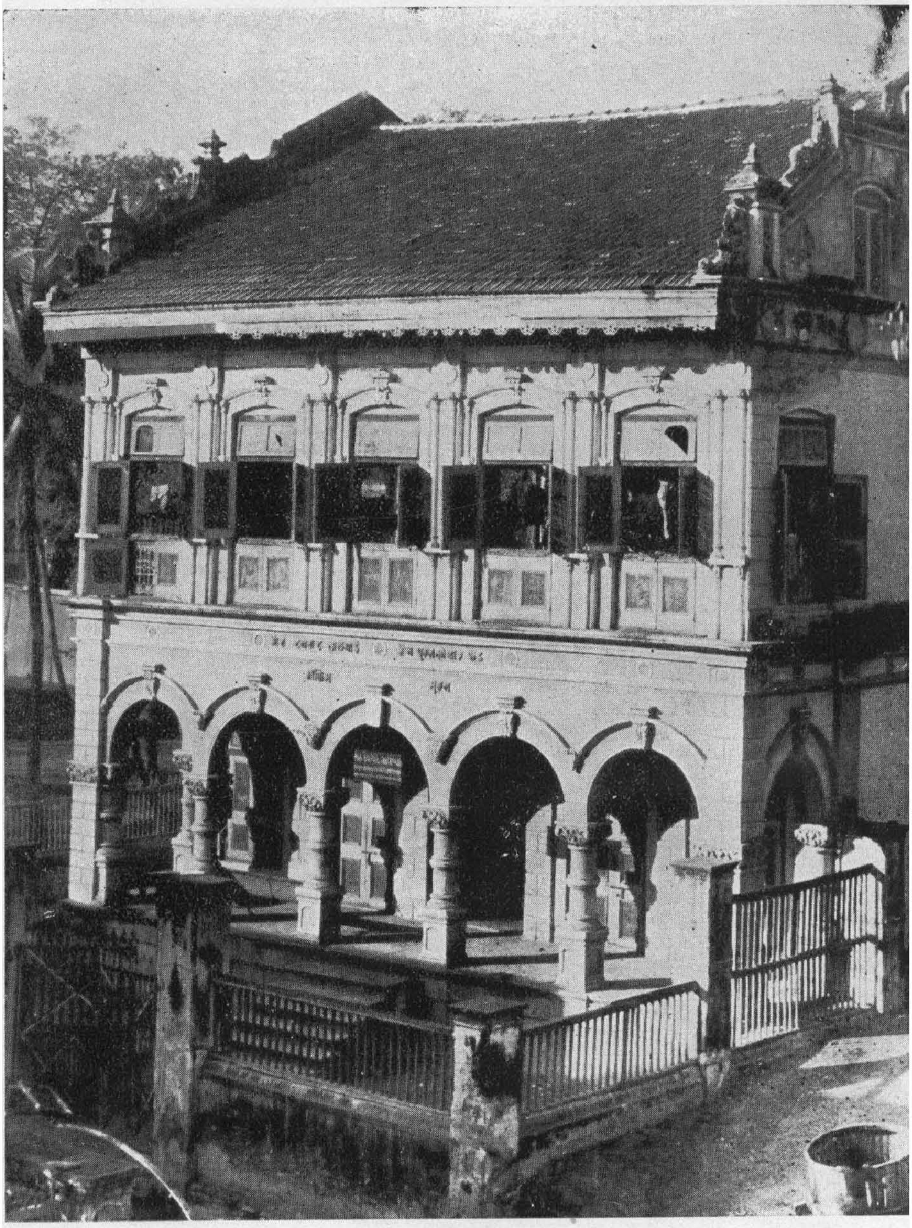

जेमां
शेठ देवचंद लालभाई जैन पुस्तकोध्धार फंड तरफथी
पुस्तकालय अने
प्रासिद्धथतां पुस्तकोनो संग्रह अने वेचाण थाय छे.

●

गोपीपुरा, बडेखांनो चकलो, सुरत.

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रकाशकीय

卐

आ अवसर्पिणी कालना दुःषम आरामां चरमशासनपति श्रमण भगवान् महावीर स्वामीना शासनमां शासनना पुण्य प्रतापे ते ते समये आचार्य भगवंतोअे 'आगम' वगेरे साहित्यनो उद्धार, पुनरूद्धार करीने आ कलिकालमां वीसमी सदीमां जे विद्यमान राख्युं छे ते आपणुं अहोभाग्य छे. तेथी तेवा साहित्यने प्रकाशन करवा माटे अमारी आ संस्था सं. १९६४मां प. पू. आगमोद्धारक गुरुदेवश्रीना उपदेशथी स्थपाई हती. आ संस्था मारफत अमे आज सुधी १०० ग्रन्थो प्रकाशीत करी चूक्या छीअे अने अमे १०१मा ग्रन्थाङ्क तरीके श्रीअल्पपरिचितसैद्धान्तिकशब्दकोषना नामे आ ग्रन्थने सहर्ष प्रगट करीअे छीअे.

तारक आगमोद्धारक गुरुदेवश्रीअे आ कलिकालना विषम वातावरणमां आगमोनो बोध दुर्बोध न थई जाय ते हेतुअे आगमोदयसमितिनी स्थापना करावी अने आगमवाचना आपवानुं कर्युं. तेथी ते समितिअे आगमो छपाववानुं काय शरू कर्युं. तेमज आ संस्थाअे पण अनुयोगद्वार वगेरे आगमो छपाव्यां. ते वखते अने पछीथी आगमोद्धारक गुरुदेवश्रीअे आगमोना जुदा जुदा विषयो तारवतां 'आगमकोष'नो पण अेक विषय तारव्यो हतो अने कोष छपाववो हतो. आ विचारोत्पत्ति आजथी पांत्रीस वर्ष पहेलां थई हति प. ता. गुरुदेवश्रीना सदुपदेशथी नीचेना सद्गृहस्थो तरफथी नीचेनी रकमो अमारी संस्थाने मळी हती. ते आ प्रमाणे —

१. अमदावादनिवासी शा. डाह्याभाई पीतांबरदास रू. १५०१.

२. सुरतनिवासी झवेरी सोभागचंद सुरचंद रू. १००१.

३ सुरतनिवासी झवेरी सांकळचंद सुरचंद रू. ५०१.

आचार्य देवनो विहार माळवा, बंगाळ तरफ लंबायो होवाथी ते कार्य घणी मुदत सुधी पडी रह्युं हतुं. ते (छपाववानुं कार्य) अमे आगमोद्धारकगुरुदेवश्रीनी संमतिथी शरू कर्युं. आ नीर्णय सं. २००४मां थयो.

आथी प. ता गुरुदेवश्रीनी आज्ञा अनुसार पू. मुनिमहाराज श्रीगुणसागरजी पासेथी श्रीअल्पपरिचितसैद्धान्तिकशब्दकोषनुं प्रेस मेटर अमे मेळव्युं. ते श्रीसरस्वतीमुद्रणालय, सुरतमां छपाववा माटे आप्युं अने तेनुं संपादन करवा माटे मुनिमहाराज श्रीकंचनविजयजी तथा श्रीक्षेमंकरसागरजीने विनंति करी. तेओश्रीअे आगमोद्धारकगुरुदेवश्रीना अनन्य पटधर, विद्याभ्यासंगी, श्रुतस्थविर, आचार्य महाराज श्रीमाणिक्यसागरसूरीश्वरजी महाराजनो संयोग मल्यो त्यां सुधि प्रूफ वंचाववा पूर्वक अने ते पछीथी स्वतंत्रपणे (ते मुनिवर्योअे) आ संपादन कार्य कर्यु तेथी अमो आ अद्वितीय आगमतलस्पर्शीज्ञाता, आगामतत्त्व पारदृश्वा, आगमज्योतिर्धर, शासनसंरक्षणवद्धकक्ष, तत्त्वशिरोमणि, आगमाव्युच्छित्तिकर शिलाताम्रपत्रोत्कीर्णागमकारापक, गंभीरानेकग्रन्थप्रणेता, अन्त्यसमये पक्षावधि अर्धपद्मासनस्थायी, ध्यानस्थस्वर्गत

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आगमोद्धारक आचार्यवर्य श्रीआनन्दसागरसूरीश्वरजी[1] महाराजे 'संकलित' करेलो श्री-अल्पपरिचितसैद्धान्तिकशब्दकोषनो 'संपूर्ण स्वर' सुधीनो पहेलो भाग सहर्ष प्रकाशित करीए छीए.

आ संस्थाना प्रथम पुस्तकना संपादक[2] तरीके पण आचार्यदेव श्रीआणंदसागरसूरिश्वरजी म हता अने बीजा सेंकडानी शरुआतना प्रथम पुस्तक तरीके पण तेओश्रीनो संकलीत अमूल्य कोष प्रसिद्ध करीए छीए.

कोषनी विशिष्टता अंगे संपादकिय निवेदनमां घणु कह्युं छे, छतां अमारी संस्थाए आना प्रकाशनमां वधारे रस लीधो तेनु मुख्य कारण ए छे, के आज सुधी छपायेला प्राकृतकोषोमां अभिधानराजेन्द्रकोष, पाइयसद्दमहण्णवो आदि केटलाक कोषो छे पण तेमां न्यूनाधिकरुपे विचार करतां उपयोगितामां बाध आवे छे—जेमके अभिधान राजेन्द्र कोष प्रमाणमां एटलो बधो मोटो छे के तेमांथी कोइ शब्द शोधवा माटे वधारे परिश्रम पडे अने छपाईमां के सम्पादनमां त्रुटी रहेवाने लीधे सूत्रो अने ते ते प्रकरणो घणा परिश्रम पछी पण जडतां नथी. पाईयसद्दमहण्णवोमां जैनसैद्धान्तिक शब्दो उपर वधारे भार मूक्यो होय तेम जणातुं नथी. पण प्रस्तुत ग्रन्थमां कोई पण जैन के जेनेतर विद्वान् प्रचलित जैन पारिभासिक शब्दोनो यथार्थ परिचय टूंकमां अने सहेलाइथी प्राप्त करी शके एवी तक छे, तथा मुनिराजो पण ग्रन्थ सम्पादनना कार्योमां सहायता लइ शके तेम पण छे.

अमे इच्छीए छीए के आना प्रकाशनने विद्वज्जनो योग्य आदर करशे ज.

आ कोषने अंगे संज्ञाओनी समजणो तथा ते ते ग्रन्थोनां पानांओनी सूची पण संपादक पू. महाराजोए आपी छे. ते अंगे 'संपादकीय' वांचवा वांचक वर्गने अमारी विनंति छे.

आ ग्रन्थना संकलनाकार प. पू. आगमोद्धारक गुरुदेवश्रीनुं स्तोत्र सुमनोहर गूंथी ग्रंथने अलंकृत करनार सदा ज्ञानोद्यमीव्याकरण-साहित्य-न्यायविशारद × × × × नो उपकार मानीए छीए.

अमारा प्रकाशन कार्यमां जे जे महाशयोए अमने मदद करी छे ते ते महाशयोना अमे ऋणी छीए.

वि. सं. २०१०
आशो सुद १५ विजयादशमि
ता. ७-९-१९५४

लि० भवदीय
मोतीचंद मगनभाई चोकसी
विगेरे ट्रस्टीओ

---

१ तेओश्रीनो सुरत उपर तो अनहद उपकार छे. तेओश्रीने संवत १९७४ ना वैशाख सुद १० ना सुरतमां ज 'आचार्य' पदवी अपाइ हती. श्रीजैनानदपुस्तकालय, श्रीवर्धमानजैनताम्रपत्रागममंदिर वगेरे सुरतमां ज छे. अने सं. २००६ ना वैशाख वद ५ मे 'स्वर्गवास' पण सुरतमां ज थयो छे. तेओश्रीनो अग्निसंस्कार पण सुरत शहेरनी मध्यवर्त्ती गोपीपुरामां आगममंदिरना सामे जूनीअदालतथी ओळखाती जमीनमां थयो हतो. वळी तेज जग्या उपर गुरुदेवश्रीना स्मरण तरीके संपूर्ण इतिहासने जणाववानाहं 'श्रीआगमोद्धारकगुरुमंदिर' बंधाववामां आव्युं छे.

२. तेओश्रीनु मूख्य कार्यक्षेत्र सुरत ज रह्यु हतुं. तेनी प्रतिकतरीके अनेक ज्ञान पिपासानी संस्थाओ स्थपाइ हति.

(१) शेठ देवचंद लालभाई जैन पुस्तकोद्धार फंड.

(२) शेठ नगीनभाई मंछुभाई जैन साहित्योद्धार फंड.

(३) श्रीरत्नसागरजीजैनबोर्डींगस्कुल (विद्याशाला) कायमि फंड.

(४) श्रीजैन तत्वबोध बोध पाठशाला वीगेरे अनेक संस्थाओ तेओना उपदेशनुं ज परिणाम छे.

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संपादकीय वक्तव्य

卐

"ॐ णमो चउवीसाए तित्थयराणं उसभाईमहावीर पज्जवसाणाणं। णमो गोयमाईमहामुणीणं। इक्कारस अंगाइं, बारसुवंगा पइन्नगा दस य। छेया छ चऊ मूला, नंदी अणुओगा णमंसामि[१] ॥१॥"

साहित्यमां ऊंडा ऊतरेला रसिकोने विविध विषयोना बोधनी आवश्यकता रहे छे. जे विषयनो बोध जे मनुष्यने होवो जोइअे ते बोध सिवायनो मनुष्य ते विषयने ग्रहण करवा जाय तो अज्ञानी वांदरानी जेम "मने पकडयो-मने पकडयो" जेवी अेनी दशा थाय. तेथी ते विषयना बोध माटे ते विषयना शब्दना ज्ञाननी, अर्थना ज्ञाननी अने तेना भावार्थना ज्ञाननी, अर्थात् ते पदार्थना शब्दार्थ, भावार्थ अने ऐदंपर्यानी जरूर छे. जो ते समज्या सिवाय प्रवृत्ति कराय तो भोजन करवा बेठेलो 'सैंधव' मंगावे अने 'घोडो' लावे तेना जेवुं थाय.

शब्दना बोधने करनारूं जे साहित्य होय तेने 'शब्दकोष' आदि शब्दथी संबोधी शकाय. एवा 'शब्दकोषो'नी उत्पत्ति कां तो आगमोमां आवेला पर्यायो रूपे आपी होय कां तो निघण्टु जेवा 'शब्दकोषो' रूपे होय, अथवा बीजा घणाअे 'शब्दकोषो' रूपे होय. आथी दरेक भाषावार अनेक 'शब्दकोषो' योजाया छे अने योजाय छे.

जैन दर्शन माटे तो ते शब्दोना अर्थ टीकाकारोए प्रकरणना आधारे जे रीते मंजुर कर्या छे ते रीते ज लेवा योग्य छे. शब्दो-यौगिक, रूढ अने मिश्र एम साहित्यकारोए मान्या छे, ते यथार्थ छे. आथी जैन दर्शनमां ऊंडा ऊतरवावाळाने पण ते बोधनी जरूर तो छे ज, तेथी तेवा प्रकारना 'शब्दकोष'नी जरूरियात मानवी'ज पडे. आ उद्देश लक्ष्यमां लइशुं तो जैन दर्शनमां आवता शब्दोना अर्थवाला अनेक कोषो होवा छतां पण आ नवा कोष माटे स्थान छे ज.

संकलनाकार—ग्रन्थकार स्वतंत्र लेखिनीथी जे ग्रन्थ करे तेमनी ज कृति कहेवाय छे. परंतु बीजा ग्रन्थोमांथी अेकत्रित करेलुं होय तो आ बधुं बीजा ज ग्रन्थोमांनुं छे, एम जणाववा माटे पोते संकलना करी छे एम जणावे छे. तेथी महत्त्वपूर्ण अनेक जैन ग्रन्थोना संपादक अने संशोधक, तेमज संस्कृत, प्राकृत अने गुजरातीमां विविध विषयोनी कृतिओ रचनारा,[२] आगमोद्धारक[३] आचार्य श्रीआनन्दसागरसूरीश्वरजी महाराजे सैद्धान्तिक शब्दोनी आ कोषमां संकलना करी छे, आथी आ ग्रन्थना 'संकलनाकार' प. ता. आगमोद्धारकगुरुदेवश्री छे.

---

(१) मंगळाचरण तरीके आपेलुं समग्र अर्धमागधी छेल्ला अेक शब्दने छोडीने 'शिलोत्कीर्ण आगमो'नी पीठिकामांनुं छे. जुओ—आगमरत्नमंजूषा शिला नं. १/१.

(२) जुओ अमारी संपादन करेली पुस्तिका—(१) प्रशमरति अने संबंधकारिका, परि. ३ थी ८ 'आगमोद्धारकनी साहित्यसेवा', (२) उपदेशरत्नाकर (भावार्थ) पृ. १९-२७ 'आगमोद्धारकनी साहित्यसेवा', (३) आचारांगसूत्र पृ. २५२-२५६ 'आगमोद्धारकनी साहित्यसेवा', (४) आनंदसुधासिन्धु भा. २. परि. ४ 'आगमोद्धारकना व्याख्यानोनी सूत्रो तथा 'आगमोद्धारककृत चैत्यवंदनादि', (५) आराधनामार्ग भा. १ पृ. २२-२३ 'आगमोद्धारककृत चैत्यवंदनादि.

(३) आ संबंधमां जुओ—"आगमोद्धारकबिरुद" अे नामनो प्रो. हीरालाल र. कापडियानो लघु लेख. अे लेख गुरजना "प्रभाकरपत्रना ता. १४-५-५०ना अंकमां छपायो छे.

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आगमोनुं मुद्रण-वाचना—आ कलिकालमां विक्रमनी वीसमी सदीमां एवो पण एक समय आव्यो के ज्यां शास्त्रीय बोध ओछो थवा लाग्यो अने हस्तलिखित प्रतो वांचवानी तेमज वांचवा माटे प्रतो मेळववानी पण मुश्केलीओ ऊभी थई. आथी जो लखाण छापेलुं मळी जाय अने तेनो जो बोध अपाय तो ते हितावह निवडे. आ हेतुथी आगमो[४] छपाववा अने तेनी वाचनाओ आपवी एम प. पू. आगमोद्धारकगुरुदेवश्रीनी प्रेरणाथी नक्की थयुं. अने संपादननुं कार्य अने वाचनानुं कार्य आगमज्योतिर्धर, अप्रमादी आगमोद्धारकश्रीने ज करवानुं थयु. आथी जेम जेम आगमो छपाता तेम तेम पाटण[५] आदि स्थळोए 'वाचनाओ' अपाई अने तेनो सेंकडो साधुसाध्वीओए लाभ लीधो.

आगमो रूपी सागर अने तेमां आवता विषयो पण ए सागरना उपसागरो जेवा छे. परंतु ते अखात रूपे छूटा छूटा पड्या होय तो उपसागर रूपे देखाय, तेथी ते बधा प्रवाहो एकत्र करी जुदा जुदा उपसागरो बनाववा. आ मुद्दाए जेम आगमो छपाता गया तेम तेम वर्तमान श्रुतना ज्ञाता आगमोद्धारकगुरुदेवश्रीए आगमोमां जुदा जुदा विषयोने जणावनारा त्रेपन (५३) अंको पाड्या अने 'शब्दकोष' माटेना शब्दो अंगे पण 'फूल'नुं एक निशान कर्युं. ए निशानो एवां हतां के—अंकोमां कया शब्दथी क्यां सुधीनो भाग लेवानो छे ते जणाववा माटे आदिमां अने अंतमां निशाननी साथे अंक मूकवामां आवतो हतो. ज्यारे आ कोषना शब्दोने अंगे फूलनुं निशान मूकवामां आवतुं हतुं. तेमां पण खूबी करवामां आवती हती के—जो शब्द एक अक्षरनो होय तो एकनी नीचे, बेनो होय तो बेनी वच्चे, यावत् जेटला अक्षरनो होय तेना मध्य बिन्दुए निशान मूकवामां आवतुं हतुं आवी रीते शब्दोनी संकलना थई. आ बधा विषयो अने शब्दो लहिया द्वारा उतारावीने एकत्रित कराववा हता.

नाम—आ कोषनुं नाम 'श्रीअल्पपरिचितसैद्धान्तिकशब्दकोष' राखवामां आव्युं छे. कारण ए छे के—आ कोषमां आगमोमां वपरायेला तमाम शब्दो नथी, परंतु जे शब्दनो परिचय अल्प

---

४ आगमो छपाववा माटे भोयणीतीर्थमां सं. १९७१ना महा सुद १० ने सोमवार २५–१–१९१५ना दिवसे श्रीआगमोदयसमितिनी स्थापना थई. आना अंगेनुं आगमोद्धारककृत 'आगमसमितिस्थापनास्तव' अमारा संपादित आचारांगसूत्र (भाग १) (व्या. सं.) मां छपायुं छे.

५नं.	स्थळ	वि. सं.	वाचना आपेल ग्रन्थोनां नाम
१	पाटण	१९७१	श्रीदशवैकालिक, श्रीसूत्रकृतांगसूत्र, २।। षट्त्रिंशिकाओ।
२	कपडवणज	१९७२	श्रीललितविस्तरा, श्रीयोगदृष्टिसमुच्चय, श्रीअनुयोगद्वारसूत्र १/२. श्रीआवश्यकसूत्र १/४, श्रीउत्तराध्ययनसूत्र १/३।
३	अमदावाद	१९७३	श्रीविशेषावश्यकसूत्र ८/४, श्रीस्थानांगसूत्र १/२।
४	सूरत	१९७४	श्रीविशेषावश्यकसूत्र १/२, श्रीस्थानांगसूत्र १/२, श्रीऔपपातिकसूत्र श्रीउत्तराध्ययनसूत्र २/३, श्रीआचारांगसूत्र १/२।
५	सूरत	१९७५	श्रीआवश्यकसूत्र ३/४, आचारांगसूत्र १/२, श्रीअनुयोगद्वारसूत्र १/२, श्रीनन्दीसूत्र।
६	पालीताणा	१९७६	श्रीओघनिर्युक्ति, श्रीपिण्डनिर्युक्ति, श्रीभगवतीसूत्र ८/४१, श्रीप्रज्ञापनासूत्र ३३/३६।
७	रतलाम (मालवा)	१९७७	श्रीभगवतीसूत्र ३३/४१, श्रीप्रज्ञापनासूत्र ३/३६, श्रीसमवायांगसूत्र

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

छे, तेवा आगमगत-सैद्धान्तिक शब्दोनो आमां संग्रह करवामां आवेलो छे. आ 'श्रीअल्पपरिचित-सैद्धान्तिकशब्दकोष' माटे हवे पछी 'अ. सै. श.' एवी संज्ञानो उपयोग कराशे.

शब्द अने तेना अर्थो—अ. सै. श. मां जे शब्दो जणाव्या छे ते शब्दो घणे भागे तो जेवा छे तेवा ज राखवामां आव्या छे. अर्थात् अकार अने थोडा आकार सिवायना बाकी बधा शब्दो जे मूलना छे ते अर्धमागधीमां छे अने टीकाकारोए टीकामां आपेला जे शब्दो जे भाषामां छे ते ज भाषामां मोटे भागे कायम राख्या छे. एटले के अकार अने थोडा आकारमां आवेला संस्कृत शब्दो अर्धमागधीमां पण आप्या छे.

शब्दोना बहुश्रुत टीकाकारोए भिन्न भिन्न टीकाओमां भिन्न भिन्न अर्थो कर्या छे, तेथी भिन्न भिन्न स्थळोमांथी ते ते अर्थो लईने ते ते टीकाकारोना अर्थोने कायम राख्या छे. आ कारणथी आ अ. सै. श. मां छेदना ग्रणना ज शब्दो लेवामां आव्या छे. तेमज बृहत्कल्प जेवा कोईकमां आगमोद्धारकगुरुदेवश्रीना हाथना ऊतारेला शब्दो छे. तेमां टीकाकारोना आधारे अर्थोनुं टुंकाववापणुं पण छे.

---

६ तारवेला ५३ अंकोनां नामो— (चोथा पानानी फुटनोट)

१ विषयानुक्रमः *	१४ छन्दोविचारः	२७ खण्डनपक्षाः	४० वैद्यकम्
२ अधिकारानुक्रमः	१५ अलंकाराः	२८ पाठान्तराणि	४१ नयाः
३ विशेषोपयोगिनो विषयाः	१६ न्यायाः	२९ प्रस्तावना	४२ स्थापनानि
४ विशिष्टाः	१७ साक्षिभूतग्रन्थाः	३० सूत्राद्यकारादिक्रमः	४३ विधिः
५ साक्षिपाठानामकारादिक्रमः	१८ उपोद्घातः प्रशस्तिश्च	३१ शङ्कासमाधानानि	४४ अेकार्थिकशब्दाः
६ वादाः	१९ आचार्यनामानि	३२ काठिन्यार्थः	४५ अल्पबहुत्वम्
७ लक्षणदूषणाधिकारः	२० प्राचिनमतानि	३३ सुभाषितानि	४६ अनुमानानि
८ विशेषनामानि	२१ मतानां समाधानानि	३४ निक्षेपानां संग्रहः	४७ सङ्कलनाः
९ इतिहासः	२२ सूक्तावलिः	३५ वायुवृष्टिः	४८ प्रत्येकबुद्धनामानि
१० भूगोलः	२३ राजकीयविभागः	३६ समानशब्दानां पर्यायः	४९ विसंवादा
११ ज्योतिष्कं	२४ प्रज्ञाप्यम्	३७ गच्छाः पट्टावलयश्च	५० संग्रहश्लोकाः
१२ प्रचलितमतानि	२५ लोकोक्तिसंग्रहः	३८ दृष्टान्ताः	५१ स्थलनिर्देशः
१३ व्याकरणविचारः	२६ व्याख्यानान्तराणि	३९ सम्प्रदायाः	५२ सामुद्रिकम्

५३ निशीथाद्यकारानुक्रमः निशीथभाष्यगाथाद्यपदानि च

* नन्दी आदि २७ना विषयानुक्रम अने सूत्रादि अकारादि वगेरे छपायां छे, तेमां नीचे प्रमाणेना नंबरो सूत्रोने अपाया छे—

१ नन्दी, २ अनुयोगद्वार, ३ आवश्यक, ४ ओघनिर्युक्ति, ५ दशवैकालिक, ६ पिण्डनिर्युक्ति, ७ उत्तराध्ययन, ८ आचाराङ्ग, ९ सूत्रकृताङ्ग, १० स्थानाङ्ग, ११ समवायाङ्ग, १२ भगवती, १३ ज्ञाताधर्मकथा, १४ उपासक, १५ अन्तकृद्दशा, १६ अनुत्तरौपपातिकदशा, १७ विपाकश्रुत, १८ प्रश्नव्याकरण, १९ औपपातिक, २० राजप्रश्नीय, २१ जीवाजीवाभिगम, २२ प्रज्ञापना, २३-२४ सूर्यचन्द्रप्रज्ञप्तियुग्म, २५ जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति २६ निरयावलिका अने २७ प्रकीर्णकदशक।

(५३ नंबरोमांना नं. २२, २५, ३३ अने ५० आगमीयसूक्तावलीना नामे छपाया छे.)

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आ अ. सै. श. मां भिन्न भिन्न शब्दो व्याकरणना प्रयोगो रूपे, कोई तेवां नामो रूपे, कोई इतिहास तरीके, कोई भूगोळ तरीके तथा कोई पर्यायो तरीके पण आव्या छे.

काचो खरडो—शरूआतमां लहियो एकेक आगम लईने कापलीमां ते शब्दने ऊतारतो अने टीकाकारनो बतावेल अर्थ लक्ष्यमां आवे तो ते अर्थ लखतो. आवी रीते ऊतारेली छूटी कापलीओने प. पू. आगमोद्धारकगुरुदेवश्रीना विनयगुणसंपन्न, तीक्ष्णबुद्धि, स्वर्गस्थ मुनिराज श्रीमहेन्द्रसागरजीए अकारादि क्रममां गोठवी कागलमां सलंग चोटाडीने तैयार करी ते उपरथी ए लखाण लहिया आदि द्वारा लखावीने तेमज तेओश्रीए (श्रीमहेन्द्रसागरजीए) पोते पण लखीने काचो खरडो तैयार कर्यो.

प्रकाशननी तैयारी—आ अ. सै. श. ने छपाववानी प. ता. आगमोद्धारकगुरुदेवश्रीनी घणी इच्छा हती. तेथी लगभग त्रण दशका उपर सद्गृहस्थो पासेथी अ. सै. श. ना प्रकाशनने अंगे रूपिया शेठ देवचन्द्र लालभाई पुस्तकोद्धारकफंडने अपाव्या हता. ते पछी वि. सं. २००४ मां ते संस्थाए आ अ. सै. श. छपाववा माटे ठराव कर्यो. आथी मुद्रणालयपुस्तिका करवानुं कार्य पू. स्व. मुनिश्री महेन्द्रसागरजीना शिष्य मुनिश्रीसौभाग्यसागरजीने (तेओश्रीना लघुबन्धुने) सोंपायुं. तेथी तेओ दरेक आगमना ते ते पत्रमां ते ते शब्दो मेळवता अने तेना अर्थोने पण मेळवता. तेमज ज्यां टीकाकारना शब्दो लेवाना हता त्यां प. ता. आगमोद्धारकगुरुदेवश्री पासेथी तेना मूळ शब्दो बनावी लेता अने जे शब्दोना अर्थ टीकाकारे न आप्या होय तेना अर्थो पण पूछी लेता. आवी रीते तेमणे लगभग बार फार्म सुधीनुं मेटर तैयार कर्युं.

उपर जणावेली संस्था (दे + ला)ना ट्रस्टीओए प. ता. आगमोद्धारकगुरुदेवश्रीनी जीवन पर्यंत सेवा करनार मुनिराज श्रीगुणसागरजी महाराज पासेथी आ कोपीनुं लखाण मेळव्युं अने छपाववा माटे प्रबंध कर्यो. तेमज अमने संपादन माटे विज्ञप्ति करी. तेथी अमे आ संपादननुं कार्य शरू कर्युं. साथोसाथ मेटर पण तैयार करवा मांड्युं.

संपादन पद्धति—दरेके दरेक शब्द ते ते आगमनी साथे मेळववो अने तेमां जणावेल अर्थ मेळवी लेवो. ते रीते कार्य करतां केटलाक आगमोना अंगे शब्दोना प्रश्नो ऊभा थया. तेमां श्रीव्यवहारसूत्रना त्रीजा उद्देशाना शब्दो हता पण ते सिवायना बाकीना उद्देशाना शब्दो न हता. तेथी प. ता. आगमोद्धारकगुरुदेवश्रीए व्यवहारनी आखी प्रतमां निशानो करी आप्यां. आथी तेनी कापलीओ उतारी तेना शब्दोनो उमेरो कर्यो. आगळ जतां बीजा पण आगमोना शब्दो नथी एम देखायुं, तेनी तपास करतां-नंदी, अंतगड, अणुत्तरोववाइय, उपासकदसा, रायपसेणीय, अने निरयावलिना शब्दो न हता. तेथी तेना शब्दो पण उतार्या. अने ते शब्दो धीरे धीरे मेळववामां आव्या. आगळ चालतां नायाधम्मकहाना शब्दो बिलकुल नथी एम मालम पड्युं. नायाधम्मकहानी प्रत तो प. ता. आगमोद्धारकगुरुदेवश्रीनी निशानवाळी प्राप्त न थई, तेमज जे समये शब्दो नथी तेवी शंका थई ते समये तो अमारु पुण्य पण न हतुं के पू. गुरुदेवश्री 'विद्यमान' होय. आथी अमे अमारी मंदमति अनुसारे आ आगमनी सटीक प्रतमां निशानो कर्या, शब्दो तारव्या अने ते तारवेला शब्दोने कोशमां स्थान आप्युं.

आ अ. सै. श. मां अग्यार अंग, बार उपांग, त्रण[७] (बृहत्कल्प, व्यवहार अने निशीथ) छेदसूत्र, चार मूल, ओघनिर्युक्ति, विशेषावश्यक, नंदी, अनुयोगद्वार, अने दशवैकालिकचूर्णिना शब्दोनो संग्रह

७. विस्तारथी चूर्णि वगेरे जेना पर नथी तेवा जीतकल्प, पंचकल्प, दशाश्रुतस्कंध, अने महानिशीथना शब्दो लीधा नथी

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

करवामां आवेल छे. तेमज दशाश्रुतस्कन्ध, दशप्रकीर्णक, पउमचरिय, उपदेशमाला, अने तत्त्वार्थ· सूत्रना केटलाक शब्दो पण लेवामां आवेल छे.

संज्ञा पत्रक—अ. से. श. मां जे शब्दोनो संग्रह करवामां आव्यो छे अने तेमां आगमो-शास्त्रो वगेरेनी जे संज्ञाओ आपवामां आवेली छे, ते संज्ञाओना स्पष्टीकरण माटे तेमज लीधेली प्रत-टीका वगेरे शेनी छे ते जणाववा अने तेना संपादक तथा प्रकाशक जणाववा एक संज्ञापत्रक नामथी प्रकरण राख्युं छे. तेमज बीजी बीजी प्रतोनी साथे पण शब्दो मेळववानुं शक्य बने ते उद्देशथी पत्राङ्कसूचा नामथी एक प्रकरण आप्युं छे.

वर्णक्रम—अ. सै. श. मां अनुस्वारने पहेलुं स्थान आपवामां आव्युं छे. कारण के शरूआतमा प. ता. आगमोद्धारकगुरुदेवश्रीए आ रीते शरू करवानुं जणाव्युं हतुं. आथी ए पद्धति कायम राखी छे. पण आनो हेतु हमे जाणी शक्या नथी, तेथी अत्रे हेतु आप्यो नथी.

विद्वज्जनो प्रत्ये—सुज्ञ विद्वज्जनो ! अमो गूर्जर भाषाना संपादनना कार्यमां अनुभव मेळवतां संपादनमां आगळ वध्या छीए. ते रीते संस्कृत अने प्राकृतना संपादनमां प्रवेश करता थया एवा समयमां प. ता. गुरुदेवश्रीनी सेवाना प्रतापे अमने 'अ. सै. श.' संपादन कर्युं. आथी अमे ते कार्यमां रस लीधो ने संपादन कार्य शरु कर्युं. आथी पंडितोनी अपेक्षाए के विद्वानोनी अपेक्षाए अमारा आ संपादनना अंगे जे सूचनाओ करवी उचित छे ते अमे विद्वज्जनोनी समक्ष रजू करीए छीए.—

१ मूळ शब्दो विभक्तिवाला तेम विभक्ति वगरना एम बन्ने प्रकारना छे. तेथी ते जे लिंगनो जे शब्द होय ते शब्द तेवी तेवी विभक्तिथी ते ते लिंगमां समजी लेवो. जेमके-अंकुर (पृ. १, २), अंकुसयं (पृ. १, २) इत्यादि (कोईक शब्दकोशमां विभक्ति सहित शब्दो नथी तेवु पण प्राये अमारा जाणवामां छे.

२. जो के शब्दो बधा एक जातना विभक्ति विगर अगर एक विभक्तिथी भेगा लेवा जोईए, परंतु आमां भिन्न भिन्न लेवाया छे. जेमके-अंकावइ (पृ. १, २), अंकावइओ (पृ. १, १) इत्यादि.

३. वैकल्पिक शब्दोना विकल्पने साचववा माटे अर्थात् तेवा प्रयोगोने साचवी राखवा माटे आमां भिन्न लेवाया छे. जेमके-अंकवडेंसए (पृ. १, १), अंकावडिंसए (पृ. १, १) इत्यादि.

४. टीकाकार महाराजे जे शब्दोना प्रयोगो टीकामां कर्या छे ते ते शब्दो मूळमां नथी तेवा शब्दोनुं प्राकृत जे कौंसमां अपायुं छे ते प. पू. आगमोद्धारक गुरुदेवश्रीने पूछीने मुनिश्रीसौभाग्यसागरजीए आपेलुं छे. वळी तेवा शब्दो कोई वखत शरुआतमां अपाया छे. अने कोइ वखत संस्कृत-शब्दनी पछी पण अपाया छे. तेनी बन्ने बाजुए बनतांसुधी कौंस आप्यो छे. जेमके (अंकोल्ल)नर्तकः (पृ. १, १), अंगारः (इंगाल) (पृ. २ २) इत्यादि.

५. शरूआतमां तो शब्दोना अर्थो अने शब्दोना संग्रहनी शैलि नियमित रही नथी, पण जेम जेम अनुभव थतो गयो अने तेना अभ्यासमां वधारो थतो गयो तेम तेम पद्धतिमां सुधारो थतो गयो छे. छतां एटलुं कहेवानी जरूर छे के पहेला भाग करतां बीजा भागमां पद्धति इत्यादिनो सुधारो मळेला अनुभव प्रमाणे करी शकीशुं एवी आशा छे.

६. (१) अध्ययन, (२) विशेषनाम, (३) वनस्पतिना नामना अंगे तेनी साथे अर्थना रूपमां संस्कृतमां अपायुं छे. जेमके (१) अंडे-विपाकश्रुताद्यश्रुत० (पृ. २, २), (२) अंगारवई-अंगारवती संवेगोदाहरणे० (पृ २, २), (३) अंकोल्ल वृक्षविशेषः (पृ २, १) इत्यादि.

७. टीकाकारोए शब्दोना जे जगो पर अर्थ नथी कर्या तेवा शब्दो पण अत्रे अर्थ वगर अपाया छे. जेमके ओली (पृ. २२४, २), उवट्टगा (पृ. २०७, २) इत्यादि. वळी आ शब्दोना अर्थो जो कदाच मेळवी शकीशुं तो परिशिष्टमां आपवा विचार छे.

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

८. देशी शब्दोना अंगे 'देशीय' अगर 'देशी' एवुं कौंसमां लखायुं छे. अर्थात् टीकाकारे आपेलुं कायम राख्युं छे. जेमके–उत्तुइउ (देशी०)-गर्व्वे (पृ. १८७, १).

९. चूर्णिकार महाराज चूर्णिनी अंदर प्राकृत अने संस्कृत एम बन्ने भाषाना प्रयोगो करे छे, तेथी चूर्णिना शब्दोना अर्थोमां प्राकृतना अने संस्कृतना बन्नेना प्रयोगो छे. परंतु बहुधा तो प्राकृत ज होय छे.

१०. आ 'अ. सै. श. मां एवा पण शब्दो छे के जे अभिधानराजेन्द्र के पाइयसद्दमहण्णवोमां न होय.

अ. सै. श. नुं संपादन कार्य शरू थतां सुरतमां हता त्यां सुधी एक वखतनुं प्रुफ जोई आपवा प. ता. आगमोद्धारकगुरुदेवश्रीना एकेव पट्टधर, श्रुतवारिधि, शास्त्रतत्त्वदर्शी, गच्छनायक, आचार्यश्रीमाणिक्यसागरसूरीश्वरजी महाराजे कृपा करी हती.

ए रीते संपादननुं कार्य चालतुं हतुं, तेमां प्रथम भागनुं पंदर आनी काम थई गया पछी सुरतथी दक्षिण तरफ विहार थवाना कारणे अने प्रेस आदिना प्रतिकूल संयोगोमां अमारी अनिच्छाए पण नहि जेवा कार्यमां वर्षोनां वर्षो वीती गया बाद आजे आ श्रीअल्पपरिचितसैद्धान्तिक–शब्दकोषनो 'प्रथम भाग' विद्वानोना करकमळमां उपस्थित करी शक्या छीए.

आ प्रथम भागमां 'संपूर्ण स्वरो' आपवामां आवेला छे. स्वरोमां तेमज बीजा रही गयेला 'शब्दो' तथा देशीनाममालाना शब्दो श्रीअल्पपरिचितसैद्धान्तिकशब्दकोष पूर्ण थतां 'परिशिष्ट' तरीके आपवा विचार छे.

प. पू. आगमवाचनादाता, देवसूरतपागच्छसामाचारीसंरक्षणकटिबद्ध, अनेक ग्रन्थोना प्रणेता, वादीमानमर्दक, चरमशासनपति महावीर परमात्माना शासनमां आगममंदिरोना संस्थापक, जैनआनन्दपुस्तकालयादि संस्थाना संस्थापक, शैलानानरेशप्रतिबोधक, युगप्रधानसदृश, वर्तमान श्रुतना ज्ञाता, स्वआराधनर्थे आराधनामार्ग करनारा, मौनपणे रही अर्धपद्मासने स्वर्गे संचरनार, प. पू. आगमोद्धारक *आचार्यवर्यश्रीआनन्दसागरसूरीश्वरजी महाराजनी पुनित सेवाना प्रतापे जे कंई बोध-शक्ति मेळवेल छे, ते आधारे अमे अमारी बुद्धि केळवीने काळजीपूर्वक आ श्रीअल्पपरिचितसैद्धान्तिकशब्दकोषनुं संपादन कर्युं छे.

मुनिराज श्रीअभयसागजी महाराजे संजोग मळतां आमां मार्ग बताव्यो छे. तेओश्रीने तेमज प्रो. हिरालाल र. कापडीयाने पण हमे अत्रे भूलता नथी.

आमां जे अशुध्धिओ जणायी छे तेनुं शुद्धिकरण पण आप्युं छे, छतां विद्वज्जनो प्रति अमारी प्रार्थना छे के क्षति देखाय तो जणाववा उदारता दाखवे.

वीरसं. २४८०, वि. सं. २०१०
ज्येष्ठ पुर्णिमा
हींगनघाट
(मध्यप्रदेश)

आगमोद्धारकउपसंपदाप्राप्त शिष्याणु
कंचनविजय
तथा
आगमोद्धारक शिष्यलव
क्षेमंकरसागर

* जेमना स्मरणार्थे सुरतमां 'आगमोद्धारक गुरुमंदिर' झलहळी रह्युं छे.

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संज्ञापत्रकम्।

क्रमाङ्क	संज्ञा	सूत्रनाम	सम्पादकः	प्रकाशकः
१	अनु.	मलधारगच्छीयश्रीहेमचन्द्राचार्यविरचितवृत्तियुक्तं श्रीअनुयोगद्वारसूत्रम्।	आगमोद्धारकः	दे.[1] ला. जै.
२	अनुत्त.	श्रीचान्द्रकुलीनाचार्याभयदेवसूरिसूत्रितविवरणयुतं श्रीअनुत्तरोपपातिकदशाङ्गम्।	,,	आ.[2] स.
३	अन्त.	श्रीचान्द्रकुलीनाचार्याभयदेवसूरिसूत्रितविवरणयुतं श्रीअन्तकृद्दशाङ्गम्।	,,	आ. स.
४	आउ.	श्रीआतुरप्रत्याख्यानप्रकीर्णकम् (गाथा)।	,,	आ. स.
५	आचा.	निर्युक्तिकलितशीलाङ्काचार्यविहितवृत्तियुतं श्रीआचाराङ्गसूत्रम्।	,,	आ. स.
६	आव.	निर्युक्तियुतभाष्यकलितश्रीभवविरहहरिभद्रसूरिविहितवृत्तियुतं श्रीआवश्यकसूत्रम्।	,,	आ. स.
७	उत्त,	निर्युक्तियुतानि श्वादिवेतालश्रीशान्तिसूरिसूत्रितवृत्तियुतानि श्रीउत्तराध्ययनानि।	,,	दे. ला. जै.
८	उप.मा. गा.	श्रीधर्मदासगणिदब्धा श्रीउपदेशमाला (गाथा)।	,,	
९	उपा.	श्रीचान्द्रकुलीनाचार्याभयदेवसूरिसूत्रितविवरणयुतं श्रीउपासकदशाङ्गम्।	,,	आ. स.
१०	ओघ.	भाष्ययुता श्रीद्रोणाचार्यसूत्रितवृत्तिविभूषिता श्रीओघनिर्युक्तिः	,,	आ. स.
११	औप.	श्रीचान्द्रकुलीनाचार्याभयदेवसूरिसूत्रितविवरणयुतं श्रीऔपपातिकोपाङ्गम्।	,,	आ. स.
१२	ग.	श्रीगच्छाचारप्रकीर्णकम् (गाथा)।	,,	आ. स.
१३	गणि.	श्रीगणिविद्याप्रकीर्णकम् (गाथा)।	,,	आ. स.
१४	चउ.	श्रीचतुःशरणप्रकीर्णकम् (गाथा)।	,,	आ. स.
१५	जं. प्र.	उपाध्यायश्रीशान्तिचन्द्रविहितवृत्तियुतं श्रीजम्बूद्वीपप्रज्ञप्त्युपाङ्गम्।	,,	दे. ला. जै.
१६	जीवा.	श्रीमलगिर्याचार्यसूत्रितविवरणयुतं श्रीजीवाजीवाभिगमोपाङ्गम्।	,,	दे. ला. जै.
१७	ज्ञाता.	श्रीचान्द्रकुलीनाचार्याभयदेवसूरिसूत्रितविवरणयुतं श्रीज्ञाताधर्मकथाङ्गम्।	,,	आ. स.
१८	ठाणा.	श्रीचान्द्रकुलीनाभयदेवसूरिसूत्रितविवरणयुतं श्रीस्थानाङ्गसुत्रम्।	,,	आ. स.
१९	तं.	श्रीतन्दुलवैचारिकप्रकीर्णकम् (गाथा)।	,,	आ. स.

१ दे. ला. जै.=शेठदेवचन्दलालभाईजैनपुस्तकोद्धारफंड।

२ आ. स.=श्रीआगमोदयसमिति।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२०	तत्त्वा.	भाष्योपेतं श्रीतत्त्वार्थसूत्रम् (अध्यायः, सूत्रम्)।	आगमोद्धारकः	ऋ.[3] के.
२१	दश.	निर्युक्तिभाष्योपेतं श्रीभवविरहहरिभद्रसूरिविरचित-विवरणयुतं श्रीदशवैकालिकसूत्रम्।	,,	दे. ल. जै.
२२	दशचू.	श्रीदशवैकालिकचूर्णिः *	हस्तपोथी	जै.[4] पु. नं. १६७३
२३	दशाश्रु.	श्रीदशाश्रुतस्कन्धः	,,	
२४	देव.	श्रीदेवेन्द्रस्तवप्रकीर्णकम्।	आगमोद्धारकः	आ. स.
२५	नंदी.	श्रीमलयगिर्याचार्यविहितवृत्तियुतं श्रीनन्दीसूत्रम्।	,,	आ. स.
२६	निरय.	श्रीचन्द्रसूरिविरचितवृत्तियुतं श्रीनिरयावलिकापंचकम्।	श्रीदानविजयगणी	वीर.[5]
२७	नि. चू. प्र.	*भाष्यचूर्ण्युपेतस्य श्रीनिशीथसूत्रस्य प्रथमो विभागः	हस्तपोथी	जै. पु. नं ४८३
२८	नि. चू. द्वि.	,, ,, द्वितीयो ,,	,,	जै. पु नं ४८४
२९	नि. चू. तृ.	,, ,, तृतीयो ,,	,,	जै पु. नं. ४८५
३०	पउ.	श्रीविमलाचार्यविरचितं 'पउमचरियं' (उल्लासः)	प्रो. हर्मन जेकोबी	[6]जै. ध.
३१	पिंड / पिण्ड.	भाष्यश्रीमलयगिर्याचार्यविहितवृत्तियुता पिण्डनिर्युक्तिः	आगमोद्धारकः	दे. ला. जै.
३२	प्रज्ञा.	श्रीमलयगिरिसूरिविहितविवरणयुतं श्रीप्रज्ञापनोपाङ्गम्।	,,	आ. स.
३३	प्रश्न.	श्रीचान्द्रकुलीनाचार्याभयदेवसूरिसूत्रितविवरणयुतं श्रीप्रश्नव्याकरणाङ्गम्।	,,	आ. स.
३४	बृ. प्र.	निर्युक्तिभाष्यटीकोपेतस्य श्रीबृहत्कल्पसूत्रस्य प्रथमो विभागः	हस्तपोथी	जै. पु. नं ३०३
३५	बृ. द्वि.	,, ,, द्वितीयो ,,	,,	जै. पु. नं, ३०४
३६	बृ. तृ.	,, ,, तृतीयो ,,	,,	जै. पु नं. ३०५
३७	भक्त.	श्रीभक्तपरिज्ञाप्रकीर्णकम् (गाथा)।	आगमोद्धारकः	आ. स.
३८	भग.	श्रीचान्द्रकुलीनाचार्याभयदेवसूरिसूत्रितविवरणयुतं श्रीभगवतीसूत्रम् (श्रीव्याख्याप्रज्ञप्तिः)।	,,	आ. स.
३९	मर. / मरण.	श्रीमरणसमाधिप्रकीर्णकम् (गाथा)।	,,	आ. स.
४०	महा. / महाप्र	श्रीमहाप्रत्याख्यानप्रकीर्णकम् (गाथा)।	,,	आ. स.

३ ऋ. के.=शेठऋषभदेवजीकेशरीमलजी, रतलाम

४ जै. पु. नं.=श्रीजैनआनंदपुस्तकालय, सुरत, हस्तपोथी नंबर

५ वीर.=श्रीवीरसमाज, अमदावाद.

* सूत्र, निर्युक्ति अने भाष्यगाथानां मात्र प्रतीक छे.

६ जै. ध.=श्रीजैनधर्मप्रसारक सभा, भावनगर.

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४१	राज.	श्रीमलयगिर्याचार्यसूत्रितविवरणयुतं श्रीराजप्रश्नीयोपाङ्गम	आगमोद्धारकः	आ. स.
४२	विपा.	श्रीचान्द्रकुलीनाचार्याभयदेवसूरिसूत्रितविवरणयुतं श्रीविपाकश्रुताङ्गम।	,,	आ. स.
४३	विशे.	मलधारिश्रीहेमचन्द्रसूरिविरचितबृहद्वृत्तियुतं श्रीविशेषावश्यकभाष्यम्।	पं. हरगोवनदासः	[1]य जे.
४४	व्य. प्र.	*निर्युक्तिभाष्यटीकोपेतस्य श्रीव्यवहारसूत्रस्य प्रथमो विभागः	हस्तपोथी	जै. पु. नं. ४८७
४५	व्य. द्वि.	,, ,, ,, द्वितीयो ,,	,,	जै. पु. नं. २६६
४६	सं.	श्रीसंस्तारकप्रकीर्णकम (गाथा)।	आगमोद्धारकः	आ. स.
४७	सम.	श्रीचान्द्रकुलीनाचार्याभयदेवसूरि सूत्रितविवरणयुतं श्रीसमवायाङ्गम।	,,	आ. स
४८	सूत्र.	निर्युक्तिभाष्यशीलाङ्काचार्यविरचितविवरण यु श्रीसूत्रकृताङ्गम।	,,	आ. स.
४९	सूर्य	श्रीमलयगिरिसूरिविहितविवरणयुतं श्रीसूर्यप्रज्ञप्त्युपाङ्गम।	,,	आ. स.

१ य. जै.=श्रीयशोविजयजीजैनग्रन्थमाला.

* सूत्रादिनां मात्र प्रतिक ज छे.

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पत्राङ्क सूचा

श्रीआचाराङ्गम्

प्रथमःश्रुतस्कंधः

अध्ययनानि	आपत्रं
१	८१
२	१४८
३	१७४
४	१९५
५	२३१
६	२५८
८	२९६
९	३१७

द्वितीयः श्रुतस्कंधः

चूला-१

१	३५८
२	३७४
३	३८४
४	३९१
५	३९८
६	४०१
७	४०६
चूला-२	४२७
,, ३	४२९
,, ४	४३२

श्रीसूत्रकृताङ्गम्

प्रथमः श्रुतस्कंधः

अध्ययनानि	आपत्रं
१	५२
२	७७
३	१०१
४	१२१
५	१४१
६	१५३
७	१६५
८	१७५
९	१८६
१०	१९५
११	२०७
१२	२२९
१३	२४०
१४	२५२
१५	२६०
१६	२६६

द्वितीयः श्रुतस्कंधः

१	३०३
२	३४२
३	३६०
४	३७०
५	३८५
६	४०५
७	४२७

श्रीस्थानङ्गम्

अध्ययनानि	आपत्रं
१	३८
२	१०१
३	१७९
४	२८९
५	३५२
६	३८०
७	४१५
८	४४३
९	४६९
१०	५२८

श्रीसमवायाङ्गम्

आविषयं	आपत्रं
सागरोवम-कोटाकोटी	१०५
गणिपिटकं	१३३
अवसरपिणि	१५२
निगमनम्	१६०

श्रीभगवतीजी

शतकानि	आपत्रं
१	१०८
२	१५२
३	२०२
४	२०६
५	२४९
६	२८६
७	३२७
८	४२४
९	४९२
१०	५०८
११	५५२
१२	५९२
१३	६२९
१४	६५८
१५	६९६
१६	७१९
१७	७३१
१८	७६०
१९	७७३
२०	८००
२१	८०२
२२	८०४
२३	८०५
२४	८५१
२५	९२८
२६	९३७
२७	९३८
२८	९३९
२९	९४१
३०	९४८
३१	९५०
३२	९५३
३३	९६४
३४	९७०
३५	९७१
३६	९७१
३७	९७१
३८	९७१
३९	९७१
४०	९७५
४१	९८१

श्रीज्ञाताधर्मकथाङ्गम्

प्रथमःश्रुतस्कंधः

अध्ययनानि	आपत्रं
१	७७
२	९०
३	९६
४	९९
५	११३
६	११४
७	१२०
८	१५५
९	१६९
१०	१७०
११	१७३
१२	१७७
१३	१८२
१४	१९२
१५	१९५
१६	२२६
१७	२३४
१८	२४२
१९	२४५

द्वितीयः श्रुतस्कंधः

१-१०	२५४

श्रीउपाशकदशाङ्गम्

१-१०	५४

श्रीअन्तकृद्दशाङ्गम्

वर्गाः	आपत्रं
१-८	३२

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनुत्तरोपपातिकदशाङ्गम्

वर्गाः	आपत्रं
१–३	८

श्रीप्रश्नव्याकरणाङ्गम्

अध्ययनानि	आपत्रं
१	२५
२	४१
३	६४
४	९०
५	९८
६	११३
७	१२१
८	१२९
९	१४१
१०	१६५

श्रीविपाकश्रुताङ्गम्

प्रथमः श्रुतस्कंधः	
१	३३तः ४४
२–१०	८८
द्वितीयः श्रुतस्कंधः	
१–१०	९६

श्रीऔपपातिकसूत्रम्

आविषयः	आपत्रं
राजधाण्यादि	२४
साधुगुणा	४८
पर्षन्निर्गमं	७७
सिद्धवर्णनं	११९

श्रीराजप्रश्नीयं

आविषय :	आपत्रं
सूर्याभः	१७
यानविमानादि	४४
कुटाकारदृष्टान्तः	५९
स्नानपूजादि	११३
मोक्षवर्णनं	१५०

श्रीजीवाजीवाभिगमं

प्रतिपत्तयः	आपत्रं
१	५१
२	८८
३	४०७
४	४०९
५	४२६
६	४२८
७	४३१
८	४३२
९	४६७

श्रीप्रज्ञापनोपाङ्गम्

पदानि	आपत्रं
१	७०
२	११२
३	१६७
४	१७८
५	२०३
६	२१८
७	२२०
८	२२३
९	२२७
१०	२४५
११	२६८
१२	२८३
१३	२८८
१४	२९२
१५	३१६
१६	३२९
१७	३७३
१८	३९४
१९	३९५
२०	४०७
२१	४३४
२२	४५२
२३	४९१
२४	४९३
२५	४९४
२६	४९६
२७	४९७
२८	५२४
२९	५२७
३०	५३१
३१	५३४
३२	५३५
३३	५४२
३४	५५२
३५	५५८
३६	६११

श्रीसूर्यप्रज्ञप्तिः

प्राभृतकानि	आपत्रं
१	४४
२	६२
३	६६
४	७५
५	७८
६	८२
७	८३
८	९१
९	९९
१०	१९६
११	२०१
१२	२३२
१३	२४३
१४	२४४
१५	२५५
१६	२५६
१७	२५७
१८	२६७
१९	२८४
२०	२९७

श्रीजम्बूद्वीपप्रज्ञप्तिः

वक्षस्काराः	आपत्रं
१	८८
२	१७८
३	३८०
४	३८२
५	४२४
६	४३२
७	५४६

श्रीनिरयावलिका

वर्गाः	आपत्रं
१	१८
२	२०
३	३६
४	३८
५	४२

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्रीनिशीथसूत्रम्

हस्तपोथी			लीथोप्रिन्ट	
भागः	उद्देशकः	आपत्रं	भागः	आपत्रं
१	१	१२९	१	२०२
	२	१८२	२	३०८
	३	१९४		३३४
	४	२२२		३०४
	५	२४७		४४५
	६	२५३	३	४६३
	७	२५७		४७८
	८	२७०		५०५
	९	२७७		५३३
	१०	३६१		६६५
२	११	५८	४	७७३
	१२	८२		८३२
	१३	१०३		८७५
	१४	१२३		९१६
	१५	२७३	५	१००८
३	१६	५६		११४१
	१७	६२		११६०
	१८	६५	६	११६७
	१९	८८		१२१२
	२०	१७२		१३३८
				+२
				+३५

श्रीबृहत्कल्पसूत्रम्

हस्तपोथी			
भागः	उद्देशकः	आपत्रं	आगाथा
१	१	७७	५००
		१६६	१०००
		२३५	१५००
		३१७	२१३०
२		१११	३०००
		१५५	३२९२
	२	२०३	४६४
	३	२९३	७२८
३		६४	११९२
	४	१६८	८०५
	५	२१२	३७५
	६	२६७	४३०
—: मुद्रितः :—			
१	१	२५४	८०५
२		६१०	२१२४
३		९२१	३२८९
४	२	१०२२	३६७२
	३	१३०६	४८७६
५	४	१५०२	५६८१
	५	१५९९	६०५९
६	६	१७१२	६४९०

श्रीव्यवहारसूत्रम्

हस्तपोथी			मुद्रितः	
भागः	उद्देशकः	आपत्रं	उद्देशकः	आपत्रं
१	१	१७४	१	१–६१
		०		१–९९
		०		१–३७०
	२	२१९	२	१–८७
	३	२५८	३	१–७३
२	४	११०	४	१–१०४
	५	१३५	५	१–२९
	६	१९९	६	१–७१
	७	२८३	७	१–९५
	८	३३६	८	१–६०
	९	३५५	९	१–२३
	१०	४५८	१०	१–११४

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्रीआवश्यकसूत्रम्

आविषयः	आपत्रं
पिठिका	५०
प्रथमवरवरिका	१३६
द्वितीयवरवरिका	१८८
गणधरवादः	२५६
निण्ह्ववादः	३२५
नमस्कारनिर्युक्तिः	४५२
१ सामायिकनिर्युक्तिः	४९२
२ अध्ययनम्	५१०
३ ,,	५५०
४ ,,	७६३
५ ,,	८०१
६ ,,	८६६

श्रीविशेषावश्यकम्

पृष्ठं आविषयः	आपत्रं
आभिनिबोधिकज्ञानं	२४९
केवलज्ञानं	२९९
उदेशादिद्वारव्याख्या	६६२
गणधरवादः	८३६
निण्हववादः	१०४४
अर्हन्नमस्कारः	११८०
सिद्धनमस्कारः	१२२७
प्रशस्तिः	१३६०

श्रीओघनिर्युक्तिः

आविषयः	आपत्रं
प्रतिलेखनादि	१२७
पिण्डद्वारम्	२०७
विशुद्धिद्वारम्	२३७

श्रीदशवैकालिकम्

टीका मुद्रितः अध्ययनानि	आपत्रं	चूर्णि : हस्तोथी आपत्रं	मुद्रितः आपृष्ठं
१	८१	३२	७०
२	९९	४१	९२
३	११९	५२	११७
४	१६०	७२	१५८
५	१९०	८९	२०६
६	२०६	१०१	२३४
७	२२३	११५	२६५
८	२३८	१२८	२९४
९	२५८	१४३	३२९
१०	२६८	१५२	३४८
चू. १	२७७	१६०	३६६
चू. २	२८६	१६६	३८०

श्रीपिण्डनिर्युक्तिः

आविषयः	आपत्रं
पिण्डनिरुपणम्	२८
उद्गमादिदोषाः	११९
उत्पादनादोषाः	१४६
ग्रासैषणाः	१७८

श्रीनंदीसूत्रम्

आविषयः	आपत्रं
पर्षद्	६४
अवधिज्ञानम्	९८
मनःपर्यवज्ञानम्	१२१
केवलज्ञानम्	१२९
मतिज्ञानम्	१८४
श्रुतज्ञानम्	२४७

श्रीउत्तराध्ययनानि

अध्ययनानि	आपत्रं	अध्ययनानि	आपत्रं
१	७०	१९	४६५
२	१४०	२०	४८१
३	१८९	२१	४८७
४	२२८	२२	४९६
५	२५४	२३	५१२
६	२७०	२४	५१९
७	२८५	२५	५३१
८	२९७	२६	५४७
९	३१९	२७	५५३
१०	३४१	२८	५६९
११	३५३	२९	५९७
१२	३७३	३०	६०९
१३	३९२	३१	६१८
१४	४११	३२	६३९
१५	४१९	३३	६४८
१६	४३०	३४	६६२
१७	४३६	३५	६६८
१८	४४९	३६	७१४

श्रीअनुयोगद्वाराणि

आविषयः	आपत्रं
आवश्यकश्रुतस्कंध– निक्षेपा	४३
आनुपूर्वी	१०४
दशनामाधिकारः	१५०
प्रमाणद्वाराधिकारः	२४१
निक्षेपाधिकारः	२५७
अनुगमाधिकारः	२६२
नयाधिकारः	२६७

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शुद्धिपत्रकम्

पृष्ठं	विभागः	पंक्तिः	अशुद्धम्	शुद्धम्
५	१	९	विषतृ०	विषयतृ०
५	१	३४	दशायध्य०	दशाध्यय०
७	१	७	अन्त०	आन्त०
१५	२	३५	शब्दो–प०	शब्दोप०
१८	१	३		
१८	१	१८	०त्त	०त्तुण
२०	२	७	०नक्षत्र०	०नक्षत्रगोत्र०
२१	१	१६	०ष्टपदिष्टयु०	०ष्ट्युपदिष्ट०
२१	१	३३	०सा	०सा वा
२४	१	९	क्षिप्पंते	क्षिप्यन्ते
२५	२	१७	०त्	०द् अजीवप्राद्वेषिकी
२७	१	९	आर्जवम्	ऋजोः–रागद्वेषवक्रत्ववर्जितस्य सामायिकवतः कर्म भावो वा आर्जवः संवर इत्यर्थः, तस्य स्थानानि–भेदा आर्जवस्थानानि
३६	२	२५	प्रज्ञा	प्रज्ञा
३९	१	१७	क्रर०	क्रूर०
४१	१	१९	अनिश्रेयसः	अनिःश्रेयसाय
४३	२	५	०न०	०नु०
५३	१	३३	०भाषी	०भासी
५६:	१–२	३५,१	अर्यते-गम्यत इति	अर्यते-गम्यत इति अर्थः
५८	१	६	आद्रा०	आर्द्रा०
५९	१	१९	द्वापे	द्वीपे
६०	१	३०	अधर्मे	अधर्मः
६४	२	२५	०श्रतम्	श्रुतम्
६५	२	२३	०त्ति–नि०	०त्तिनि
७२	१	२७	०कलिका	०कल्पिका
७८	१	९	०नार्थे	०नार्थं प्रयुञ्जान इत्यर्थः

पृष्ठं	विभागः	पंक्तिः	अशुद्धम्	शुद्धम्
८७	२	२९	द्वापः	द्वीपः
८९	१	१	अट्टा०	अट्ठा० त्रसानां स्थावराणां वा आत्मनः परस्य वोपकाराय हिंसाऽर्थदण्डः,
९६	१	२८	०दिगाग०	०दिग्गा०
११५	१	७	आचायः	आचार्यः
११९	२	२	०युष्ममां०	०युष्मां०
१२१	२	१३	समा०	सम०
१२८	१	१२	निर्युक्त्या०	सूत्रव्याख्यानं निर्युक्त्या० रुचिः–श्रद्धानम्
१३६	१	२६	०हेत्वः	०हेतवः
१३९	१	२	०इति	०इति आदानः
१३९	१	९	०नेति	०नेति आदानः
१४९	१	२१	०देवाता०	०देवता०
१६२	२	८	०सदो	०सद्दो
१६३	१	१	०तीथ०	०तीर्थं०
१७१	२	२४	उक०	उत्क०
१७२	२	७	उक्षि०	उत्क्षि०
१८९	१	१५	पनाका	पनकः
२०४	२	२२	०शात्र	०शस्त्र०
२०९	१	२६	०विषय०	०विषयी०
२११	१	२५	नादका०	नारका०
२२७	१	२९	अेतद्रपं	अेतद्रूपं
२२७	१	११	०वचसि	०वचसि
२२८	२	३५	सादु०	साधु०
२२९	१	२२	अर्वाका०	अर्वाक्का०
२३१	२	२८	०चरा	०वराः
२३२	२	१०	ओमद्विया	ओमद्दिया
२३३	२	२७	मांसाथिस्ना०	मांसास्थिस्ना०

—:—

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चित्रहारबन्ध :

[छन्दः- शार्दूलविक्रीडितः]

शश्वच्छान्तिप्रयान् महामतिमतः कल्यङ्करान् कर्मठान्,
भव्यापत्तिभरापहान् जलजवज्जन्तुभ्य आनन्ददान् ।
दान्तान् नौमितमां विभावितविधीन् व्याख्यानसव्यासनान् ,
प्रौढान् सत्यसखान् सदा नतिधिया ऽऽनन्दाब्धिसूरीश्वरान् ॥ १२८ ॥

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

समर्पण

आगमोद्धार-आचार्य

श्री आनन्दसागरसूरीश्वरजी महाराजना

चरणकमलमां समर्पण.

—★—

जेओए अमारा
शहेर सूर्यपुर अने संस्थाना
सर्वोदय माटे अहोनीश अमोघउपदेशोद्धारा
कृपा वरसावी उत्कर्ष सधाव्यो छे. अमारी संस्थाना
बीजा सैंकडानु प्रथम पुष्प प्रातिक पण तेओने ज
समर्पण करवामां अमो अमारी कर्तव्यता
अनुभवीशुं. आ ग्रन्थ तेओश्रीना आगमोद्धारना
दोहन रूपे जीवनकार्य
गणाशे

— प्रकाशको

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

॥ શ્રી તામ્રપત્રાગમ મંદીર - સુરતના ભૂમિગૃહમાં ઉત્કૃષ્ટ
॥ ૐ હ્રીં ॥ - શ્રુતમંદીરમાં સ્થિત સ્વર્ણાક્ષરી આગમ પુરૂષ ॥

संकलनाकार

आगमोद्धारक श्री आनन्दसागरसूरीश्वरजी

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

॥ गीतार्थसूरये नमः ॥

卐 श्रीआगमोद्धारक-स्तवः 卐

[अनुष्टुप्छन्दः]

श्रीमत्पार्श्वं १ सदापार्श्वं, नत्वा ध्यात्वा च सद्गुरून्।
प्रकुर्वे भक्तिप्रह्वोऽहमागमोद्धारकस्तवम् ॥ १ ॥

[उपजातिछन्दः]

सद्भिः प्रशस्येन सुधर्मभाजा, जैनागमज्योतिसमर्थनं सत्।
कृतं २ सदाराद्धश्रुतेन येन, जीयात्स 'आनन्दसूरीश्वरेन्दुः' ॥ २ ॥

[वसन्ततिलकाछन्दः]

शैलाणराजमनसि श्रुतधर्मतुष्ट्या,
३ हिंसानिषेधविधिना कृतधर्मपुष्टिम्।
गीतार्थहेमनिकषं श्रुतसार[४]मुष्टि-
'मानन्दसागरगुरुं' नुत मुक्त[५]रुष्टिम् ॥ ३ ॥

[मन्दाक्रान्ताछन्दः]

स्वस्तिङ्काराद्विबुधमहिताध्यात्मतत्त्वात्प्रकृष्टे,
६ धर्मार्थश्रीन्द्रियसुखभरे 'भारते' भारतेऽस्ति।
७ जैनेन्द्राज्ञाऽप्रहतविधया राजमानो वदान्यः,
श्रीधीप्राज्यः प्रथितमहिमा 'गूर्जरत्रा'ख्यदेशः ॥ ४ ॥

तस्यापाऽचेऽधरितधनदश्रेष्ठिधर्मिष्ठकीर्णे,
शोभाभासे सुगुणबहुले मण्डले खेटकाख्ये।
८ धर्मज्ञप्तौ सुविशदमतेर्लब्धतत्त्वप्रतिष्ठं,
सर्वोत्कृष्टं 'कपडवणजं' राजते पूर्गरिष्ठम् ॥ ५ ॥

यत्रोत्तुङ्गं नवजिनगृहं 'पार्श्वनाथादि'मुख्यं,
यद्वास्तव्याः बहुभवभयाः दीक्षिताः नैकभव्याः
पट्टावल्या ९ 'अभयमुनिप'-स्वर्गभूमिः सुगीता,
'वाणिज्या'ख्यं 'कपड'सहितं तन्नु वर्ण्येत केन? ॥ ६ ॥

---

१ मध्यमपदलोपिसमासोऽत्रज्ञेयः। २ सत्=सम्यक् आराद्धं श्रुतं येनेति विग्रहः। ३ अमारिपटहार्थपरकोऽयं शब्दः। ४ सारसंचयार्थपरकोऽयं शब्दः। ५ क्रोधवाची शब्दोऽयम्। ६ धर्मस्यार्थं श्रीः इन्द्रियाणि सुखभरश्च यस्य (देशस्य) इति विग्रहोऽत्र बोध्यः। ७ जैनेन्द्राज्ञायाः अप्रहतस्वरूपप्रकारेणेत्यर्थः। ८ धर्मावबोधे। ९ नवाङ्गीवृत्तिकारश्रीअभयदेवसूरीश्वरस्येत्यर्थः।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तस्योत्तंसे कलिमलहरे वर्य'दालालपाटे,'
'मीठाभ्रातुः' भवभयमथोपाश्रयस्योपकण्ठम् ।
ख्यातं रम्यं जनिततिहरं 'वासुपूज्य'स्य चैत्यं,
तत्सान्निध्ये विहितकुशलः 'भाइचन्द्रो'ह्यवात्सीत् ॥ ७ ॥

तस्यासीद्वै सुकृतरुचिरा सुज्ञ'मञ्छा'ख्यपत्नी,
शीलोदात्ता सुगुणसदना धर्मतत्त्वे प्रवीणा ।
धर्माबाधं समनुभवतोः [1] पुण्यसारं तयोर्वै,
'ताराचन्द्रा'नुज'मगनलाला'ख्यपुत्रो बभूव ॥ ८ ॥

[2] यः पूर्वाराधितसुचरणज्ञानवैराग्यसारात्,
[3] सारूप्याप्तेर्वर'धनगिरेः' कालवैषम्यवारी ।
शास्त्राभ्यासाद् तनुभवरतिस्[4]साधुभावस्पृहालु-
'वज्रस्वामे'र्जनक इव यो जातरागाल[5]भाव ॥ ९ ॥

यद्वद् भोगान् किल'धनगिरि'र्मन्यमानो [6] विघातान्,
[7] वाग्दानार्थं सुबहु यततः शुद्धबुद्धिः समाख्यत् ।
दीक्षां लास्ये सपदि सुतरां कार्यमालोच्य कार्य-
मेतच्छ्रुत्वा चकितमनसः श्रेष्ठिनो मौनमासुः ॥ १० ॥

तद्वद्गाढं शमितमनसा 'मग्नलाले'न कन्या-
[8] दानात्स्वेष्टप्रभवनलषाः श्रेष्ठिनोऽकारि मोघाः ।
किन्त्वम्बादे[9]स्समधिकमुहः मानसं तोषयन् वै,
औपायंस्तातिरति'यमुना'ख्यां [10] कर्णेहत्य कन्याम् ॥ ११ ॥

मोहाद्वैते जगति सुतरामुन्मनीभूय सम्यक्,
संसारीयां कृतिकुशलतां व्यज्य विश्वास्य सर्वान् ।
कालच्छिद्राधिगतिमुदितः संविजानोऽग्रहीद्यः,
सार्वीं दीक्षां सुमुनिसविधे भावशुद्धिप्रकर्षात् ॥ १२ ॥

---

१ शुभानुबन्धि सुखमित्यर्थः । २ पूर्वजन्मन्याराधितानां सच्चरणज्ञानवैराग्याणां सारभूतान्निर्विकारभावादित्यर्थः । ३ श्रीवज्रस्वामिपितुः धनगिरिमहर्षेर्गृहस्थावस्थायां यादृशी मनोदशाऽऽसीत्तादृशीं शुभां परिणतिं समधिगम्य तत्सादृश्यवता येन मगनलालेन चरित्रनायकजनकेनाज्ञप्रमादिजनयुक्तिछलरूपकालविषमताया असारत्वं प्रथितमिति द्वितीयपादरहस्यम् । ४ मोहजन्यासक्तिसूचकमिदं पदम् । ५ वेदोदयसूचकमिदं पदम् । ६ मोक्षमार्गेऽन्तरायभूतानित्यर्थः । ७ व्यवहारे 'सगाई' पदेन अेतदर्थः प्रतीतः । ८ स्वस्य इष्टस्य=लग्नसम्बन्धस्थापनरूपस्य प्रभवनं लषन्ति—कामयन्ति ये ते इति विग्रहः । ९ प्रबलमोहवत इत्यर्थः । १० 'अनिच्छये'त्यर्थकमेतदव्ययम् ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

किन्त्वज्ञानाहितमतिभराः 'भग्नलाल'स्य स्वीयाः,
दीक्षाच्चयावां प्रचुरविधयाऽकार्षुरूर्जस्विचेष्टाम्[1]।
झञ्झावातैरचलप्रतिमं नैकविघ्नैश्च मत्वा,
राजद्वारेऽसदभियुजनात्[2] कार्यसिद्धिं प्रचक्रुः ॥ १३ ॥

एवं दैवाद् विषमभवके चारके[3] बद्धरूपात्,
भोगान् भव्यान् प्रबलविधिना भुञ्जमानादकामम्।
लेभे पत्युः सुभग'यमुना'देस्तथा पुत्ररत्नं,
शुक्तिर्मुक्तां लभति हि यथा स्वातिजाद् वारिवर्षात् ॥ १४ ॥

१ ३ ९ १
ऊर्वीब्रह्मग्रहशशधराब्दे सदाषाढमासे,
[4]दर्शाख्याहे [5]विदितमहसः धुर्यस्वप्नात्सुतस्य।
[6]सच्चन्द्रार्कज्ञभृगुसहिते कर्कलग्ने सुरम्ये,
जातास्वाधुः मुदितपितरो 'हेमचन्द्रे'ति संज्ञाम् ॥ १५ ॥

यो वै बाल्ये धृतिमतियुतः [7]मार्गदीपस्य भङ्गे
नाभिव्येजे पुलिससविधे छद्मतां सत्यनिष्ठः।
धर्माभ्यासं व्यवहृतिकलां द्राग् समभ्यस्य चित्रं,
वाचां पत्युः सुमतिलघुतां स्वीयबुद्ध्या हि व्येजे ॥ १६ ॥

जैनाचारे स्वपितुरनिशं प्रेरणालब्धनिष्ठ-
स्तत्त्वज्ञानाद् विमलमनसा भोगवैगुण्यमानी।
आत्मोन्नत्यै प्रगुणमतिकः मोहभूपं जिगीषुः
सच्चारित्रग्रहणपरतां व्येज उद्वाहकाले ॥ १७ ॥

---

६ पूज्यवर्याणां जन्मकुण्डलिकेयम्।

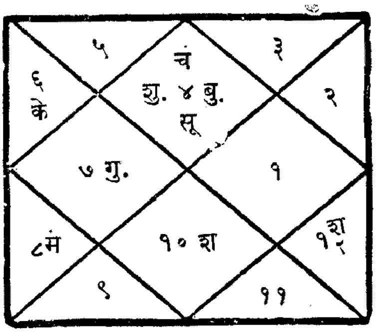

आगमोद्धारकश्रीणां जन्मकुण्डली

१ व्यवहारे ह्येतत्पदभावार्थः 'धमाल-तोफान'शब्देन व्यज्यते। २ लग्नविधान-(कायदो)स्यासदालम्बनेनासदारोपहेतुकाधिकरण(दावो-केस)प्रयोगेनेत्यर्थः। ३ बद्धसदृशादिति भावः। ४ अमावास्यायामित्यर्थः। ५ वृषभस्वप्नादिति भावः। ७ 'म्युनिसिपालिटीफानस' इत्यर्थपरसोऽयंशब्द।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

किन्तु प्रेम्णा परवशधियां [१] बन्धूनां विघ्नरूपा
[२] सन्निर्बन्धाच्चरणमलनाच्छन्दतस्स्निग्धमातुः ।
मन्वानो वै परिणयविधिं [३] चारकापत्तिरूपां,
'माणेका'ख्यां कुलजसुकनीं [४] पर्यणैषीद्विचेताः ॥ १८ ॥

मोहान्ध्याढये जगति विषमं [५] ग्रस्तरूपोऽपि दुःखा-
ग्न्युत्तापाद्यैः [६] प्रकृतिमजहन् 'हेमवच्चन्द्र'शुद्धः ।
ज्येष्ठभ्रातुः सुमुनिभवनाच्चेरणाद् भूरि [७] वप्तुः,
छित्त्वा मोहं समयमिषतः प्राव्रज'द्धेमचन्द्रः' ॥ १९ ॥

[८] किन्तून्मुह्यच्छ्वशुरजननिस्वीयकैर्ध्यान्ध्यवृत्ते-
र्न्यायागारे [१०] परिणयविधेः [९]व्याजतो [११] रावितं वै ।
न्यायाध्यक्षं चकितममसं धैर्यसारैस्सदुक्तैः,
कृत्वाऽप्याप्तद् [१२] द्विगुणचरणात्कर्मणा च्यावितोऽसौ ॥ २० ॥

[१३] नन्द्याद्रार्दिप्रकृतिजहनात्कर्मणोऽपूर्वशक्ते-
र्मोहात्क्रान्तोऽपि [१४]जनकसुचोद्यात् त्रियो भूषणार्थम् ।
[१५]आहम्मद्ये पुरि शुभविधेर्जग्मुषो जम्बुरासात्,
दीक्षोत्कोऽगाज्जनकसहगो 'निम्बपुर्यां' 'सुराष्ट्रे' ॥ २१ ॥

'झव्हेराब्धी'न् कुमततिमिरोज्जासकात् दिव्यधाम्नः,
७ ४ ९ १ ५
निश्रायेतिश्रुतिनिधिविधौ माघशुक्लेषुघस्रे ।
प्रव्रज्या'नन्दयुतजलधि'हेमचन्द्रो' बभूव,
तुष्टो वप्ता निजसुतहितश्रेष्ठरीतिप्रसेधात्॥ २२ ॥

---

१ विघ्नभूतादसदाग्रहादित्यर्थः । २ चारित्रस्यान्तरायभूतादित्यर्थः, अेतद्वि'छंदतः'पदविशेषणं ज्ञेयम् । ३ कारागारप्रसनरूपा-मित्यर्थः । ४ विमनस्क इत्यर्थः । ५ ग्रस्तसदृशोऽपीति भावः । ६ स्वजनसम्बन्धिवर्गजनितनानाकष्टरूपाग्नेरुत्तापादि-भिरित्यर्थः । ७ पितुरित्यर्थः । ८ प्रकर्षेण मोहाधीना इत्यर्थः । ९ अेतत्पदस्यार्थो हि लोकभाषायां 'धांधल' इति पदेन व्यवह्रियते । १० लग्नविधान (कायदो) स्येत्यर्थः । ११ लोके हि 'फरियाद करी' इति कथ्यते । १२ अेतत्पादस्यायं भावार्थः– हेमचन्द्रो हि कर्मणा विवशीभूतस्सन् द्विगुणचरणात्=द्विविधचरणात् (अेकं च बाह्यवेषरूपं द्वितीयं चान्तरभावस्फीतिरूपं) च्यावितः इति । १३ (कर्मविवशतया चरणपतितानां) नंदिषेणार्द्रकुमारादीनां प्रकृतेः (स्वभावस्य) जहनं (त्यागः–परिवर्त्तन-मितियावत्) यस्मादिति विग्रहः, इदं च 'कर्मणः' इत्यस्य विशेषणम् । १४ पितुःशुभप्रेरणयेत्यर्थः । १५ अहमदाबाद-नगरे इत्यर्थः ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'आनन्दाब्धिः' शिवसुखजनौ संयमे दत्तचित्त-
श्चातुर्मासं प्रथममुषितः 'लीम्बडौ' गुर्वुपान्ते।
बह्वभ्यस्तं यतिजनहितं तत्र दैवात्प्रतीपात्,
मार्गस्याश्वेतभवदिवसे[1] पूज्यपादा ययुः स्वः ॥ २३ ॥

उद्यद्रोहे हिमपतनवद् गुर्वभावाधिक्षिप्तो
ऽप्युद्यद्धैर्यो गुरुवरवचो[2] धारयन्नागमीयम्।
'आनन्दाख्या' गुणमनसा क्षिप्तमोहो द्वितीयां,
चातुर्मासीं सुविधि विदधे 'ऽहम्मदे शाहपूरे'[3] ॥ २४ ॥

यात्रां कुर्वन् विहरणविधेः 'केशरीयादितीर्थे'-
ष्वातीत्याप्द रस[4]'दुदयपुरे' लोकसंख्यां सुवर्षाम्।
मौने धर्मे सुबहु सुयतन् शास्त्रवार्त्तासु विज्ञ-
स्तीर्थोद्भासी कुसमयमथान् 'मारवाडे' व्यहार्षीत् ॥ २५ ॥

सिद्धान्तोक्त्या विशकलयिता लुम्पकादिप्रचारं,
कृत्वा यात्रां वरमुनिमतां 'गोलवाडे'[5] सुतीर्थ्याः।
'पालौ' तुर्यं जिनमतमहैर्वृष्टिकालं व्यतीत्या-
स्थात् सद्वृत्तः पठनसुयती 'सोजते'[6]ऽक्षाङ्कवर्षाम् ॥ २६ ॥

सार्वं तत्त्वं सुविशदमथो बोधयन् भव्यजन्तून्,
विहृत्योग्रं 'मरुधरभुवि' प्राप्तवान् गूर्जरत्रान्।
तस्योत्तंसे 'चरुतरभुवो' भूषके 'पेटलादे,'
संजुष्टो 'जीव-मणिविजयौ' वप्तृबन्धू[7] सुदीक्षौ ॥ २७ ॥

ऐहामुत्रोपकृतिचतुरं रुग्णमायुक्तचेताः,
निर्याम्याप्ताचरितचतुरः षष्ठवर्षामवात्सीत्।
'संवत्सर्या अवमतिथिजे बुद्धिभेदप्रसङ्गे,
पर्यायाल्पोऽप्यधिगतरहश्शास्त्रमान्यं जुघोष' ॥ २८ ॥

---

१ मार्गशीर्षकृष्ण एकादशीतिथौ इत्यर्थः। २ श्रीमद्भिः झव्हेरसागरपूज्यपादैरन्तिमसमये स्वशिष्यायानन्दसागराय आगमाभ्यासपरतायाः श्रुतप्रचारस्य च भारपूर्वकं शिक्षादत्ताऽऽसीत्। ३ अहमदावादनगरे शाहपुरमध्ये इत्यर्थः। ४ तृतीयां। ५ गोलवाडीयपंचतीर्थ्याः। ६ पंचमीमित्यर्थः। ७ पिता ज्येष्ठभ्राता चेत्यर्थः।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वर्षान्ते 'चारुतर'जनतां बोधयित्वार्यतत्त्वं,
'छाणीग्रामे'ऽवसदृषिमितं[1] वृष्टिकालं सुधीरः ।
मूर्त्तिन्द्वावाञ्जिनमतरिपून्[2] ढुण्ढकान् जोषमाऽऽस्य,
'कल्लोलाख्ये'पुरि विहरता येन दीप्तं सुचारु ॥ २९ ॥

शास्त्रव्याख्याचकितसुबुध'स्तम्भने' यो ह्यकार्षी-
च्चातुर्मासं वसुमितमथो[3] कृतधर्मप्रचारः ।
प्रश्नोत्कर्षाज्जिनमतहितात् पार्श्वचन्द्रान्यतीर्थ्यान्,
कृत्वा वादे प्रतिहतधियो भासिता जैनदृष्टिः ॥ ३० ॥

वर्षान्ते षड्[4]रियुतभविकं सङ्घमादाय भव्यं,
यात्रां कृत्वा विमलगिरिसत्तीर्थराजस्य सम्यक् ।
भव्योद्बोधं सुविधिविचरन् व'सार्णद'पुर्यां,
चातुर्मासं नवममवसच्छास्त्रतत्त्वप्रकाशी ॥ ३१ ॥

चातुर्मासत्रय'महमदावाद'माश्रित्य लब्धा,
शाब्दे[5] न्याये रुचिरपटुता येन विद्वत्सुमान्या ।
कृत्वा रम्यां सुविधि तमसां[6] नोदिकां तीर्थयात्रां,
दुष्कालार्त्तौ सहकृतिनिधिः[7] कारिता 'पट्टणे'[8] येः ॥ ३२ ॥

८ ५ ९ १
नागाक्षाङ्केन्दुमितशरदो माघराकाह्निरम्ये,
प्रायच्छद्धर्मज[9]जरणछोडाय दीक्षां सुशिक्षाम् ।
आद्यं शिष्यं 'विजयसहितं सागरा'न्तं विधाय,
९ ५ ९ १
वर्षा ब्रह्मेषुनिधिकुभवां 'भावपुर्या'[10]मवात्सीत् ॥ ३३ ॥

१ सप्तमम् । २ मूर्तेरपलापकारिणः । ३ अष्टमम् । ४ एष हि शब्दः भाषायां 'छरीपालतो संघ' इत्युच्यते । ५ व्याकरणे इत्यर्थः । ६ पापानामित्यर्थ; । ७ 'सहायकारी फंड' इति भावः । ८ गूर्जरदेशीयाणहिल्लपुराख्य पट्टणे इति भावः । ९ (पेटलादासन्न) धर्मजवासिने रणछोडदासाख्यपाटीदारज्ञातिकाय भव्यायेत्यर्थः । १० भावनगरे इत्यर्थः ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शास्त्रोपज्ञं हितमुपदिशन् भूरिभव्यप्रबोधं,
वर्षाकालं मनु[1]मितमथो 'राजपुर्या'[2]मुवास ।
तत्रा श्री'नेमिमुनिपति'नोद्बह्य सिद्धान्तयोगान्,
'पन्न्यासाख्यं' पदमलभत ज्येष्ठशुक्ले दशम्याम् ॥ ३४ ॥

वर्षां नीत्वा 'कपडवणजे' धर्मकृत्यैस्सुरम्यै-
र्यात'स्सौराष्ट्र'मथ विचरन् देशनादानदक्षः ।
कृत्वेतस्ता[3]रणवरगिरेस्स्पर्शनां धर्मवाचा,
प्रीतैः[4] 'पेथापुर'परिषदो योजकैस्सत्कृतोऽभूत् ॥ ३५ ॥

मज्जद्भव्यान् भवजलनिधौ रक्षिता जैनवाग्भि-
र्वर्षे[5] नीत्वाऽऽगमविधियुते 'भावराजाख्यपुर्योः'[6] ।
'सूर्यद्रङ्गे' विविधसुमहैस्सत्कृतस्सूरतीयै-
श्चातुर्मासीं 'सुरतनगरे' यापयास रम्याम् ॥ ३६ ॥

चैत्यान् सर्वान् सविधि 'सुरते'श्राद्धसङ्घेन नत्वा,
गत्वा 'मुम्बापुरि' भविजनैः प्रार्थितः 'लालबागे' ।
गौराङ्गाणां 'समितशिखरे' हर्म्यसन्निर्मिमीषां,
धैर्यात् सत्ताभियमगणयन् ध्वस्तवान् यः क्षणेन ॥ ३७ ॥

'दे×ला. भ्रातु'र्निधिमपि वरं स्थापयित्वोपदेशा-
दारेभे सद्विषयखचितग्रन्थरत्नप्रकाशम् ।
सङ्घं[7] नीत्वाऽभयविधु'मुखं 'चान्तरीक्षाह्वतीर्थे,'
यात्रां चक्रे[8] रसरिनिरतैः श्राद्धवर्यैस्समेतः ॥ ३८ ॥

धाष्टर्ये नग्नैस्[9]सुबहु विहितं तत्र पूजाप्रसङ्गे,
मिथ्याभ्याख्यानमपि च ततो न्यायगेहे प्रयुक्तम् ।
जित्वाऽकार्षुः झगिति गुरवस्सत्यतत्त्वप्रयोगा-
दाङ्ग्लन्यायाधिपतिहृदये जैनधर्मप्रकाशम् ॥ ३९ ॥

---

१ चतुर्दशमित्यर्थः । २ राजनगरे-अहमदावादपुरे । ३ तारंगातीर्थस्येत्यर्थः । ४ पेथापुरीयप्रान्तिकपरिषदि गुरुवरस्य जातसत्कृतेस्सूचकोऽयंपादः । ५ चातुर्मासद्वयमित्यर्थः । ६ भावनगरे-राजनगरे । ७ अभयचंद्रझवेरिणस्संघपतिपदेन नियोजितमित्यर्थः । ८ 'छरी पालतो संघ' इतिभावः । ९ दिगम्बरैरित्यर्थः ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बाणर्[५]त्य[६]ङ्के[९]न्दु[१]मितसमसि[१] प्रावृषं 'येवलायां,'
स्थित्वोद्वाह्य प्रथममुपधानव्रतं श्रावकाणाम् ।
'सूर्यद्रङ्के' जलदसमयौ यापितौ धर्मकृत्यै-
दीक्षित्वैतर्हि[२]तनगणपं 'माणिकं' चान्यभव्यान् ॥ ४० ॥

धर्मकान्तिच्छलमुपदधन् लालनाख्यो हि विद्वन्-
मन्य'स्सिद्धाचल'भुवि तदाऽपूजयत्स्वं शिवाद्यैः[३] ।
पाखण्डं तत् भृशमपगतं कर्त्तुकामैर्गणीन्द्रै-
र्मन्दश्रीः[४] कान्तिविजयमुखैस्सङ्घबाह्यः कृतस्सः ॥ ४१ ॥

स्थित्वा वर्षं[५] विषय[६]जिनमौ 'स्तम्भतीर्थे' च'छाण्यां,'
ज्येष्ठभ्रात्रे 'विजयमणये' वर्यपन्न्यासभूषाम् ।
दत्त्वा तीर्थानि सविधि नमन् 'पत्तनं चाणहिलं,'
भव्यश्रोतॄन् जिनमतसुधां पाययन्नाप रम्यम् ॥ ४२ ॥

तत्राया[७]प्य श्रुतवरमुदाप्यायिनीं भव्यवर्गा,
सङ्घ[८]स्थित्यां तपसि[९] धवले दिक्तिथौ[१०] 'मण्डुतीर्थे'[११] ।
अज्ञानान्धंतमसमथनायागमोद्धारकर्त्रीं,
श्रीउद्यां[१२] संस्थाप्य समितिमथो हर्षयामास भव्यान् ॥ ४३ ॥

आज्ञप्तं य'त्स्वगुरु'जयवीरा'भिधैरागमाना-
मुद्धारार्थं चरमसमये' पालितुं तद् यथेष्टम् ।
वह्वायासेन च गणिवरस्साधुसङ्घोपकृत्यै,
प्रारेभे मुद्रणमथ महत् स्वाश्रयेणागमानाम् ॥ ४४ ॥

---

१ वर्षे । २ वर्त्तमानकालीनगच्छाधिपतिमिति भावः । ३ शिवजीदेवशीप्रभृतिभिः । ४ प्रवर्त्तककान्तिविजयमहाराजमुख्यैः सूरिभिरित्यध्याहार्यम् । ५ चातुर्मासद्वयम् । ६ त्रयोविंशति–चतुर्विंशतितममित्यर्थः । ७ श्रुतज्ञानस्य वरमुदः–हर्षस्याप्यायिनीं–पोषिकां । ८ चतुर्विधसंघस्योपस्थितिसूचकमिदं पदम् । ९ वैशाखमासे । १० दशम्याम् । ११ भोयणीतीर्थे । १२ आगमोदयसमितिसूचकोऽयं शब्दः ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वर्षायां 'पाटण'मुपगतैर्वाचनाऽद्या ह्यकारि,
निर्ग्रन्थानां वरमतिमतामागमाभ्यासवृद्ध्यै ।
तस्यां श्री'सूयगडदशवैकालषट्त्रिंशिकादी'न्,
व्याख्यायाऽयुः 'कपडवणजे' वाचनायै गणीशाः ॥ ४५ ॥

तत्र व्याख्याय पटु 'ललितावश्यकादी'[१]न् सुयत्नं
जग्मुर्वर्षार्थं 'महमदपुर्यां'[२] स्वधर्माभिवृद्ध्यै ।
तत्र'स्थानाङ्ग'मथ सविशेषाकरं[३] वाचयित्वा,
वर्षामस्थात् 'सुरतनगरे' भासयन् जैनधर्मम् ॥ ४६ ॥

तत्राकार्षुर्युगशरमिते[४] वाचने 'चानुयोग-[५]
श्रीनन्द्याचारमुखमहदावश्यकाद्या'गमानाम् ।
एवंकारात् सुयतिसमजे[६] कालदोषात्प्रहीणं,
सच्छास्त्राणां विततपठनं संततं वृद्धिमाप ॥ ४७ ॥

'आनन्दाब्धेः' प्रवरगणिनस्तत्त्वनिष्ठागरिष्ठौ,
भक्त्युत्साहौ श्रुतजिनमतस्फीतिकार्येषु दृष्ट्वा ।
(४)(७)(९)(१)
वर्षेऽयात्रिग्रहतनुमते राधशुक्ले[७] दशम्या-
माचार्यत्वं 'कमलविजया'स्सूरयः 'सूरते'ऽदुः ॥ ४८ ॥

स्वर्णे माणिक्यमिव खचितं योग्यसाम्यं च सूरे-
वीक्ष्य प्रीतस्सुमहमकरोत्'सूर्यपुर्या'स्सुसङ्घः ।
न्यायागारे:ललनविषयानिष्टवादं[८] विजित्य,
धर्मभ्राजी मुनिपतिरथो 'मोहमय्यां' समेतः ॥ ४९ ॥

---

१ ललितविस्तरा-आवश्यकसूत्र१/४-अनुयोगद्वारसूत्र-योगदृष्टिसमुच्चय-उत्तराध्ययनसूत्र१/३ग्रन्थानित्यर्थः । २ अमदाबादनगरे । ३ विशेषावश्यकभाष्य८/४सहितमित्यर्थः । ४ चतुर्थो-पंचमो चेति भावः । ५ ललितविस्तरा-योगदृष्टि० अनुयोग०१/२-आवश्यक०१/४-उत्तराध्ययन०१/३-विशेषावश्यक०८/४- स्थानांग०१/२-सूत्राणामित्यर्थः । ६ साधुसङ्घे इति भावः । ७ वैशाखशुक्ले । ८ लालन-शिवजीप्रकरणे न्यायागारेऽपि विजित्येत्यर्थः ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(२८)
लब्ध्यङ्कप्रावृषि[१] वृषमहिम्नोऽर्जको नैककार्यै-
दुर्भिक्षार्त्तीयनिधिकरणेऽप्रेरयद् दानशौण्डान्।
'कीकाभ्रातु'र्भवनमुषितस्सूरिराड् 'भायखले,'
स्वागःक्षान्त्यै विहितविनयः प्रार्थितो लालनेन ॥ ५० ॥

(५) (७) (९) (१)
चातुर्मासे शरमुनिनवेन्दौ श्रुतप्रोक्तरीत्या,
देवस्वोत्सर्पण[२]विवदने वादगल्भान् विजेतुः।
सूरेस्सङ्घार्पितनिखिलसद्ग्रन्थरत्नानि सङ्घो
'जैनानन्दश्रुतवरगृहे'[३]ऽस्थापय'त्सूरतीयः' ॥ ५१ ॥

'सिद्धाद्रेर्जीवणनवलचन्द्रो'हि यत्प्रेरणातो,
यात्रासङ्घं विविधसुमहैः पादचारं निनाय।
कृत्वा यात्रां सह सुभविकैस्सूरिवर्यश्चकार,
'पालीताणे' गुहमुख[४]मितां वाचनां साधुसङ्घे ॥ ५२ ॥

'पिण्ड-प्रज्ञापन-भगवतीनोघनिर्युक्तिका'श्च,
व्याख्यायो द्य शुभमुपधानव्रतं भाविकानाम्।
विज्ञप्ति'मालववसिमतां' मानयित्वा च सूरि-
शिष्यैःसाकं किल 'रतिललामाख्यपुर्यां'[५] समेतः ॥ ५३ ॥

धर्मोन्नत्या 'ऋषभसहितां केशरीमल्लनाम्नीं,
संस्थां'[६] तत्राखिलजिनमतोद्भासिकां स्थापयित्वा।
'व्याख्याप्रज्ञप्तिसमवय[७]सूत्रादिप्रज्ञापना'नां,
चक्रे व्याख्यां कुलगिरि[८]मितां वाचनां कत्तकामः ॥ ५४ ॥

'शैलाणाख्यं' पुरमथ यतीन्द्रो हि सङ्घाग्रहेण,
चातुर्मासार्थमुपगमितो धर्ममुद्धान् प्रबोद्धुम्।
मत्वा धन्यं नृपतिरपि गच्छाग्रवाचो निशम्या-
मार्युद्घो दयितहृदयस्स्वीयराज्ये चकार ॥ ५५ ॥

---

१ धर्मप्रभावनाया इत्यर्थः। २ उत्सर्पण(बोली)स्याशास्त्रीयताया देवद्रव्यस्य च चर्चासूचकमेतत्पदम्। ३ श्रीजैनानन्द-पुस्तकालये इत्यर्थः। ४ षष्टीमित्यर्थः। ५ रतलामनगरे इत्यर्थः। ६ खिलशब्दो हि विघ्नापरपर्यायोऽतोऽत्र निर्विघ्नतया जिनमतस्योद्भासकारिणीमित्यर्थो ज्ञेयः। ७ छन्दोभंगभिया विहितः श्रीसमवायाङ्गसूत्रार्थे ऐतादृशपदप्रयोगः मर्षणीयः धीधनैः विद्वद्भिः। ८ सप्तमीम्।

Jain Education International 2010_05　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

पूर्णे[1] 'शैलाणनृपविषये' ह्यष्टमीरुद्रदर्शा-

ऽऽख्याताहःपर्युषणदिवसे मारीचारं न्यषेधीत्।

प्राच्यं वृत्तं ह्यकबरविबोध्धुः स्मृतिं 'हीरसूरे'-

रानीयायाद्विविधनिगमान् पावयन् 'रत्नपुर्याम्[2]' ॥ ५६ ॥

प्रेमज्ञप्त्या श्रुतवरतपस्सम्यगुद्धाह्य चान्यैः-

पुण्यैः कृत्यैर्जलदसमये भ्राजयित्वा सुधर्मम्।

'माण्डूतीर्थ'[3]प्रचलितविधौ बाधकं 'धारभूपं,'[4]

हस्तक्षेपो[5]न्निरसविधयेऽबोधयत्तत्र गत्वा ॥ ५७ ॥

'माण्डू-भोपावर'लसितसच्चैत्ययोस्स्वोपदेशा-

ज्जीर्णोद्धारं प्रवरभविकैः कारयित्वा यतीन्द्रः।

बोधं 'पञ्चेडपुरपतये' 'सेमलीठकुराय,'

प्रादात्ताभ्यां निजभुवि ततो मारयो[6] वारिता वै ॥ ५८ ॥

वर्षाकाले जिनमतविभां वर्द्धयन् 'रत्नपुर्यां,'

शास्त्रैर्वादे यतिपविजयं[7] त्रिस्तुतीयं व्यजैषीत्।

सङ्घस्याभ्यर्थनमथनिशम्योपधानं सुवाह्य,

'सम्मेताद्रिव्रजितुमभिवङ्गं' प्रतस्थे मुनीन्द्रः ॥ ५९ ॥

मध्ये मार्गे निजप्रतिभया धर्मभासं वितन्वन्,

लोकं नानाविधमुपदिशान् 'कालिकाता'मयासीत्।

(४) (३)

चातुर्मासे युगगुणमिते तत्र चैत्यादिधर्म्य-

स्थानस्थित्यै बहुतरनिधिः कारितो देशनातः ॥ ६० ॥

---

१ अष्टम्यामेकादश्याममावास्यायां पर्युषणासु चेत्यर्थः। २ रतलामनगरे। ३ मांडवगढार्थपरकमिदं पदम्। ४ धारसंस्थानाधीशमिति भावः। ५ उत्कर्षेण निरसनार्थमित्यर्थः। ६ हिंसाः। ७ श्रीयतीन्द्रविजयाहमितिभावः।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(०) (२)
तीर्थेशानां खयमलमितानां सुनिर्वाणभूमे-
'स्सम्मेताद्रे': प्रथितयशसः पुण्ययात्रामकार्षीत्।
राज्ञो 'दुद्धेडियविजअसिंह'स्य भक्त्या विहृत्य,
वर्षाहेतोस्सुमुनिपतयोऽजीमगञ्जे' न्यवात्सुः ॥ ६१ ॥

बाबूलोकं विषयजसुखास्वादलीनं विबोध्य,
संवेगापूरितसुवचनैर्धर्ममार्गे न्ययुञ्जन्।
दीक्षाब्रह्मव्रतविधियुतानुत्सवान् कारयित्वा,
पात्रं पात्रं विविधनिगमान् 'सादडी'ग्राममापुः ॥ ६२ ॥

पात्रं पात्रं जिनमतसुधीर्भव्यलोकं यतीन्द्रः,
प्राग्वाटानां मरुजसहजं वैमनस्यं चिरत्नम्।
कृत्वा दूरे श्रुततपविधिं सोत्सवं कारयित्वा,
बोद्धुं धर्मं शिथिलकृतिकान् 'मेदपाटं' विजह्रे ॥ ६३ ॥

१ (७) (३)
नीत्वा वर्षा'मुदयनगरे' सम्मितां धातुत्त्वै-
र्जग्मुस्सङ्घेन सह गुरवः 'केशरीया'ख्यतीर्थम्।
२
तत्रौद्दण्डयं क्षपणककृतं स्वीयबुद्ध्या व्यपास्या-
ध्यारोप्योच्चैस्सितपटयशोऽवर्धयन् सद्ध्वजं वै ॥ ६४ ॥

नग्नाटीयैः प्रतिहतमथो धर्मतेजो विवर्द्धय,
न्यायागारेऽधिगतविजया आययुर्गूर्जरत्रान्।
चातुर्मासं सुमुनिसहिता हम्मदाबादपुर्या,'
तस्थुर्भव्यान् विविधममलं जैनतत्त्वं दिशन्तः ॥ ६५ ॥

'माकुभ्रातु'र्विनतिवशगा 'आश्विनीं सेद्धचक्री-
मोलीं' दिव्यां नवपदमहो बोधिकां कारयन्तः।
३
संस्थां संस्थाप्य च नवपदाराधिकां स्वोपदेशा-
४
दंग्मेन्सोसायटिविनयतंश्चख्युरास्तिक्यतत्त्वम् ॥ ६६ ॥

---

१ उदयपुरे। २ दिगंबरविहितम्। ३ श्रीनवपदआराधकसमाजस्थापनायाः सूचक अेष पादः। ४ विद्याशाला(डोशीवाडानी पोळ) मध्ये आस्तिक-नास्तिक चर्चा स्फोटस्वरूपप्रसिद्धव्याख्यानवार्त्ता सूचकोऽयं पादः।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तद्व्याख्यानात् क्षुभितमतिकान्[१] शिक्षितान् शास्त्रपाठै-
स्सन्तोष्यार्थं धनवितरणौचित्यतत्त्वं[२] विबोध्य।
याताः 'श्रीदेशविरतिसमाजं' ततस्स्थापयित्वा,
'श्रीभोयण्या'मतिशुभमहैराद्यतन्मेलकाय[३] ॥ ६७ ॥

वर्षावासं निधिगुणमितं (९) (३) याषितुं 'जामपुर्यां'[४]
यान्तौ मार्गे'ऽह्मदनगरे' 'तीर्थसिद्धाचलस्य'।
रक्षाहेतोस्सपदि निधये प्रेरयित्वा सुभव्यान्,
लक्षाधिक्यं[५] द्रविणचयनं कारयामासुराशु ॥ ६८ ॥

स्थाने स्थाने जिनमतमहं वर्द्धयन्तो गणीन्द्रा-
स्स्थित्वा वर्षा 'नवलनगरं'[६] चारुवाग्भिस्स्वकीयैः।
सत्र[७]चामाम्लगृहमथ चास्थापयन् छात्रगेहं[८],
दान्ताः[९] पूज्यैः धृतिमतिबलात् बालदीक्षाविरुद्धाः ॥ ६९ ॥

पश्चादेता स्सुरतनगरे' जैनसाहित्यवृद्धि-[१०]
सत्कोशार्थं धनिक'नगिनं मञ्छुपुत्रं'[११]व्यबोधन्।
'मुर्शिदाबादपविजयसिंह'स्समेतोऽत्र सूरे-
र्भक्तिव्यक्तीकरणपटुको भावतो दर्शनाय ॥ ७० ॥

आसीच्छ्री'देशविरतिसमाजस्य' पर्षत्[१२]सुरम्या,
दत्ता तस्यां भविकहितदा देशना सारगर्भा।
'रत्नाम्भोधेः'[१३]पठनसदनस्थायि कोशं विवर्द्धय,
दब्धा 'तत्त्वप्रसारणकरी बोधमालाख्यसंस्था' ॥ ७१ ॥

---

१ आंग्लशिक्षाप्रभावितान् नवयुवकानित्यर्थः। २ धनस्य व्यये दाने वा पात्रापात्रविवेकमित्यर्थः, एतद्धि तस्मिन् समये ज्ञान-प्रचारनाम्नी भौतिकवादसमर्थककेलवणीपोषककॉलेज-हाइस्कूल-बोर्डिंगादीनां हिताहितकरत्वमीमांसा सूचकं पदमस्ति। ३ श्रीदेशविरतिसमाजस्य प्रथमाधिवेशनायेत्यर्थः। ४ जामनगरे। ५ षष्टिसहस्राणि रुप्यकानां वार्षिकं दत्त्वा तीर्थस्वामित्वनिर्णय-स्यानुकूल्याय श्रीसिद्धाचलरखोपाफंडपोषणप्रवृत्तिरेतच्छ्लोके प्रदर्शितास्ति। ६ जामनगरमित्यर्थः। ७ सत्रं=भोजनशाला, आचाम्लगृहं=आंबिलखातुं। ८ बोर्डिंगाख्यविद्यार्थिगृहमिति भावः। ९ निष्फलप्रवृत्तिमंतः कृता इत्यर्थः। १० जैनसाहित्योद्धारक-फंडमित्यर्थः। ११ नगीनभाई-मंछुभाई-श्रेष्ठिनमित्यर्थः। १२ अधिवेशनमित्यर्थः। १३ श्रीरत्नसागरजैनबोर्डिंगस्थायिफंड-मिति भावः।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रव्राज्यानेकभविकजनान् पावयन्त 'स्सुराष्ट्रान्',
प्राव्रुट्काले शुभकृतिभरैस्स्तम्भतीर्थं' व्यतीयुः ।
संस्थाप्याहम्मद्पुर'मितास्तत्रसंस्थाय वर्षां,
श्रुत्वोद्यच्छन् 'वटपुर[१]नृपाज्ञां सुदीक्षाविरुद्धाम् ॥ ७२ ॥

सूरेश्शास्त्राभ्यसनमुदिता जङ्गमज्ञानशाले-
त्येवं चाशंसदतिविदुषी 'जामिनी काउझाख्या' ।
नेत्राम्भोधि(२)(४)प्रमितजलमुक्काल[२]लाभस्पृहावन्-
मुम्बापुर्यां गतभविजनप्रार्थनातो विजह्रे ॥ ७३ ॥

शास्त्रव्याख्याप्रथितयशसो 'लालबागे' हि सूरे
र्दीक्षापुष्टिं प्रवचनविधेः क्षुब्धयूनां प्रचारैः ।
व्यामूढाया ऋजुजनततेर्मोहहत्यै[३] समित्या,
पत्रं संस्थाप्रथनजनितं चालितं 'सिद्धचक्रम्' ॥ ७४ ॥

'माणेकाम्भोनिधि'सदुपदेशात्प्रकृतोपधाने,
मालारोपोत्सवमुपगता 'घट्टकाह्वे[४] पुरे' वै ।
व्याख्यानैस्स्वैस्समयसहितैस्संयमायोग्यसूचि[५]-
नाट्यं रुद्ध्वा युवजनमतं भासितं शीलनं हि ॥ ७५ ॥

पश्चाद्याता'स्सुरतनगरं' शिष्यवृन्दैस्समेता-
स्संवत्सर्यास्तिथिगतविसंवादमुन्मुच्य शास्त्रैः ।
भाव्युत्सूत्राध्वगविषमता याऽऽसा व्यञ्जिता सा,
किन्नोऽद्यापि प्रकटविदिता वर्त्तते पर्वतिथ्याः ? ॥ ७६ ॥

---

१ वडोदराराज्यदीक्षाप्रतिबन्धककायदार्थपरकमेतत्पदम् । २ चातुर्मासवाची अयं शब्दः । ३ श्रीसिद्धचक्रसाहित्यप्रचारक-समितेः स्थापनं सिद्धचक्राख्यपाक्षिकप्रारंभश्चेत्यर्थः । ४ घाटकोपरे इत्यर्थः । ५ दीक्षाया अयोग्यताप्रदर्शकं युवकसंघप्रेरितं नाटकमित्यर्थः ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नानाप्रश्नोत्थितमतिगतभ्रान्तिशान्त्यै सुपर्षत्[१],
सङ्घायासात् सितपटमतालम्बिनां सद्यतीनाम्।
'आकाशाङ्काङ्कशशिसहिते वत्सरे राजपुर्यां'[२],
जाता यस्यां यतिपतिवरास्सम्यगामन्त्रिता वै ॥ ७७ ॥

शङ्कापङ्कं भविकमनसो क्षालितुं दत्तचित्ताः,
गत्वा तत्र स्वकमतिभराच्छास्त्रपाठैश्च सर्वान्।
सन्तोष्यैता भविकविनयान्नीरदैस्साकमेवा-
सेक्तुं सांसारिकजनगणं सूरयो 'मेहसाणाम्' ॥ ७८ ॥

[३]मध्ये वर्षं सुबहु विहितश्शासनोन्नायिकार्यै-[४]
रन्तःक्षेत्रे[५] सुभविकनृणां धर्मपीयुषसेकः।
यूरोपीयः श्रुतिपटपुटै'र्ब्राउनः' सूरिशंसां,
पीत्वाऽत्रेतो ह्यमृतवचनैर्वीततृड्कः शशंस ॥ ७९ ॥

काले काले पुनरपि पुनः सूरयः पालितेभ्यः,
शिक्षा-दीक्षा-वितरणमपि प्रायशो योग्यमेव।
तस्मात् पादार्पणकरुणया पावयन्त्वेषमोऽस्मा-[६]
नेवंसङ्घादरभरभृतः संययुः' पालिताणाम् ॥ ८० ॥

चातुर्मासे गतवति यथा भ्राजते शारदी श्रीः,
पद्मव्याजेस्सरसि सरसा सन्ततं तद्वदेव।
सज्ज्ञानश्रीरपि गुरुवराणां च सन्तन्यमाना,
नानारूपैर्नवनवमहैर्धर्मकृत्यैश्च रेजे ॥ ८१ ॥

---

१ संमेलनमित्यर्थः। २ राजनगरे–अहमदावादे। ३ चातुर्मासमध्ये इत्यर्थः। ४ शासनप्रभावककार्यैरिति भावः। ५ अन्तःकरणरूपक्षेत्रे इति भावः। ६ आता नहि।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'श्रीमाणिक्य:'[१] 'कुमुदविजय'श्चेत्युपाध्यायवर्यौ,
पन्न्यासौ द्वौ बहुगुणयुतौ 'भक्ति'-'पद्मा'भिधौ च।
अत्युत्साहैस्सह शुभकृपासिन्धुवद्भ्यो भवद्भ्यो
लब्ध्वाऽऽचार्याह्वयमुपदवीं धर्मभ्राजो विरेजुः ॥ ८२ ॥

'आनन्दस्याम्बुनिधि'रिति यद् वर्त्तते नाम सत्यं,
प्रत्यक्षन्तत् भुवि विदधती किं न जैनी प्रजाऽभूत्।
तस्मात् सूरीन् झगिति 'नगरे जामपूर्वे'[२]ऽपि सङ्घः,
प्रार्थं प्रार्थं कथमपि चतुर्मासवासाय निन्ये ॥ ८३ ॥

अज्ञैः कैश्चित् श्रुतकथितसिद्धान्तवाचा विरुद्धं,
प्रोक्तं वृद्धिक्षयविषयकं पर्वतिथ्याः मतं यत्।
उग्रं तत्खण्डनमथ कृतं शास्त्रदृष्ट्यापि लोकं
बोधित्वाऽरं नवमतवतो लज्जितास्यान् प्रचक्रुः ॥ ८४ ॥

तत्रैवाग्रे जलदसमये स्थापितो 'देवबाग-
लक्ष्म्या'नाम्नाऽऽश्रमवर उपादिश्य लोकः सुखेन।
पश्चाद् भक्तो 'नगरधनपः पोपटाह्व'स्सुभक्त्या,
सौराष्ट्रीयाखिलजिनपसत्तीर्थसंस्पर्शनाय ॥ ८५ ॥

सङ्घं नीत्वाचरणचलनं षड्रिसम्पालनोत्कं,
सानन्दोऽगात्[३], सकलमपि तद्वर्णनं चारुरीत्या।
'तीर्थाः सौराष्ट्रविषयभवाः सङ्घयात्रा च'[४] नाम्ना-
ख्याते ग्रन्थे लसति तदिवाऽऽयोकुमाकेतयन्तून् ॥ ८६ ॥
(संदानितकम्)

---

१ श्रीमाणिक्यसागरोपाध्याय श्रीकुमुदविजयोपाध्याय-श्रीभक्तिविजयपन्न्यास-श्रीपद्मविजयपन्न्यासेभ्य आचार्यपदप्रदानसूचकमिदं पूर्वार्द्धम्। २ जामनगरे। ३ आनन्दसागरसूरीश्वरेण सहेत्यर्थः। ४ 'सौराष्ट्रनां तीर्थो अने संघयात्रा' इत्याख्यग्रन्थे इति भावः।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(८) (४)
एवं वस्वब्धिमितमथ ये वृष्टिवासं जनानां,
पुण्याढ्यानामतिविनयतः सिद्धक्षेत्रे हि कृत्वा ।
१
'खातारम्भं चरमजिनपस्याह्वया ह्यागमानां,
रक्षागेहस्य च' शुभविकैः कारयामासुरत्र ॥ ८७ ॥

२
अन्यत्तत्र श्रमणनिकरग्रन्थसंग्राहि सद्मं,
संस्थाप्यारं शुभ'महमदाबादपुर्यां' यतीन्द्राः ।
३
भक्त'श्रीमोहन' इति महच्छ्रेष्ठिना सद्व्रतानां,
रम्ये ह्युद्यापनविधिमखेऽभ्यर्थ्यमानाः प्रजग्मुः ॥ ८८ ॥

सिद्धं शास्त्रैरुपकृतिकरं लक्षशो रूप्यकैस्तं,
सम्पाद्योद्यापनविधिमलं 'झाम्पडापोल' मध्ये ।
(५)(५)(९)(१) ४
तत्रावात्सुः शरनवनवैकाङ्किते ऽब्दे ऽब्दकाले,
५
चार्व्यां वीथ्यां सुगुरुचरणाः 'नागजिद् भूधराणाम्' ॥ ८९ ॥

६ ७
पश्चादेताः क्षरणसमयं यापयित्वाऽऽगमाना-
मागारस्य प्रचलितविधिं वीक्षितुं 'पालीताणाम्' ।
साङ्गोपाङ्गं त्रुटिविरहितं सत्यमारब्धकृत्यं,
त्यक्त्वा सर्वस्वमपि सततं साधयन्त्येव सन्तः ॥ ९० ॥

कृत्वा लोकोत्तरसुचरितं ये तरन्तीह लोकं,
धन्यास्ते वै सफलजनना भूभराः सन्ति चान्ये ।
सत्यामेतां भणितीमथ ते कर्तुकामा यतीन्द्रा-
८
स्तत्रातिष्ठन् वरसलिलदाऽऽसेककालत्रयीं ते ॥ ९१ ॥

---

१ श्रीवर्धमानजैनागममंदिरस्य खातमुहूर्त्तमिति भावः । २ श्रमणसंघपुस्तकालयाख्यज्ञानालयस्थापनामित्यर्थः । ३ श्रेष्ठिवर्य-श्रीमोहनलाल छोटालाल इति भावः । ४ वृष्टिकाले । ५ पोलवाची अयं शब्दो ज्ञेयः । ६ चातुर्मासमिति भावः । ७ शिलोत्कीर्णागममदिरस्येत्यर्थः । ८ चातुर्मासत्रयमित्यर्थः ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दीर्घायासैर्गणधरवरप्रोक्तजैनागमानां,

पाठं शुद्धं दृषदुदरगं शिल्पविद्याप्रवीणैः ।

कारं कारं किमु न कलितं सूरिभिः कर्म चित्रं,

यस्माज्जातो ह्युपलनिकरोऽप्यागमज्ञः(भ्राट्) परे के ? ॥ ९२ ॥

रम्योपाध्यायकपदमदुः 'श्रीक्षमासागरेभ्यः,

श्रीमच्चन्द्रेभ्य उचितपदं चारु पन्न्यासकाह्वम् ।

वर्षे चाग्रे गणधरगृहं[1] सिद्धचक्राह्वपूर्वं,'

संस्थाप्यैवं जिनमतविभाभासकं सत्समाजम्[2] ॥ ९३ ॥

(९)(९)(९) १)

अङ्काङ्काङ्काब्जमितशरदि ह्यागमानां गृहस्य,

सत्थां पूर्त्ताविभिनवप्रतिष्ठाविधिं माघमासे ।

पञ्चम्यामञ्जनशुभशलाकोत्सवेनापि सत्रां,

सन्मूर्त्तीनां श्रुतविधियुतं कारयामासुरत्र ॥ ९४ ॥

सम्पाद्यैवं 'कपडवणजश्रेष्ठिचीमन्नलाल-

डाह्याभाईत्यभिधपरमश्रावकप्रार्थनातः ।

निश्रायां सूरिवरसुगुरोश्चारु संयोजितायाः

एताश्चैत्या नवपदसमाराधनायाः सुसिद्ध्यै' ॥ ९५ ॥

चातुर्मासं भविकहितकृच्चापि तत्रैव कृत्वा,

श्रीसङ्घस्यानुनयसहितप्रार्थना'न्मोहमय्याः' ।

धर्मोद्भासं विहृतिममलां कुर्वतां भक्तवृन्द-

स्स्थाने स्थाने मुदितमनसा स्वागतं सुष्ठु चक्रे ॥ ९६ ॥

---

१ श्रीसिद्धचक्रगणधरमंदिरमित्यर्थः । २ श्रीजैनधर्मप्रभावकसमाजाख्यसंस्थास्थापनसूचकोऽयं पदसमूहः ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शामं शामं चिरसमयजां सद्दिदृक्षा पिपासां,
व्याख्यानैः स्वैरपि च जनता अभ्यषिञ्चन् प्रकामम् ।
सम्प्राप्ताः 'श्रीसुरतनगरं' यत्र चाभूतपूर्वं,
भव्यं भव्यैः कृतमतितमां स्वागतं भासमानम् ॥ ९७ ॥

अर्धक्रोशादपि चलसमारोह[1] आसीद् दवीयान्,
यस्मिन् केतुप्रवर[2]लसितप्राग्रहस्ताश्च केचित् ।
सुप्रेष्ठा[3]स्संवरगुणमिताः (५७) बेण्डवाद्यीयसङ्घाः (!)
वादं वादं शुभततधनानद्धवाद्यान् विरेजुः ॥ ९८ ॥

लक्षाधिक्या नगरजनता राजमार्गेऽभिसूरिं,
शीर्षाण्युच्चैर्गुणरतिभरान्नम्रयन्ती बभूव ।
मार्गे मार्गे वसन-कुसुम-स्वर्ण-रुप्यादिपात्रै,
श्चालं द्वाराण्यति विरचितान्यार्थ सद्भक्तिभावैः ॥ ९९ ॥

गिन्नीमुक्ताप्रभृतिसमुदयैश्च रत्नैर्गहूंली,
बह्वचजातश्शुचिगुणलसद् रागदाढ्यद् यतीशे ।
स्वर्णैः रौप्यैर्वरसुमभरै[4]स्सत्यमुक्तासुलाजै:[5]
प्रोद्यद्रङ्गं विविधसुमहैस्सत्कृतं 'स्सूरतीयैः' ॥ १०० ॥

साम्बेलानांभयशरमितानां (७) (५) मुदापादिदीप्ति,
स्सूरेर्नानासुगुणमहिमाख्यायकास्साधुवादाः[6] ।
रीत्या चैवं प्रचुरनिरावर्णितुश्लाघ्यक्या,
ग्रन्थाज्ज्ञेया प्रविशनकथा 'सागरस्वागता'-ख्यात् ॥ १०१ ॥

वक्खारीयाकुलजसुजनैः क्षत्रियैः मीलपै[7]र्वं,
एकाह्नि विंशतिमियसहस्राधिकं राव्ययित्वा ।
सूरेःपादार्पणमुदितया कारयित्वा सुभक्त्या,
पायं पायं जिनमतसुधां सूरिवक्त्राज्जहर्षुः ॥ १०२ ॥

---

१ स्वागतयात्रा (सामैयुं) २ झंडा-निशानधारिणः । ३ उत्तमाः । ४ श्रेष्ठकुसुमसमूहैः । ५ सत्यमुक्ताफलानां वर्धापनैरितिभावः । ६ व्यवहारे हि एतच्छब्दार्थः "साइन बॉर्डो" इतिपदेन कथ्यते । ७ अन्यालयपतिरिति ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सत्रा सङ्घेन च विधियुता [1]चैत्ययात्रा सुरम्या-
ऽकार्यास्ते यद् समविवरणं मुद्रितं [2]पुस्तके वै।
सोत्साहं विंशतिमणमितान् मोदकान् संवितीर्य,
धन्या जाता 'सुरत'-जनता देशनादर्शनाभ्याम् ॥ १०३ ॥

चातुर्मासं तदनु विहितं '[3]मोहमय्यां' प्रशस्तं,
यस्मिन् धर्मोन्नतिततिकृतीः[4] कारयित्वा सुबह्व्यः।
भूयोऽप्येतास्सुरतनगरं श्रावकाभ्यर्थनात-
स्तत्राभूवन् रुचिरचरमाः वृष्टिवासाश्च पञ्च ॥ १०४ ॥

२ ० ० २
द्वया-काशाभ्रद्विमितशरदो [5]माधवे मासि शुक्ले,
ह्येकादश्यां शुभशनिदिने [6]श्रावकेभ्यः सुशास्ता।
संस्थाऽस्थापि प्रयतमनसा ताम्रपत्रागमानां,
भव्यादर्शस्थितिकरमहन्मन्दिरस्थापनायै ॥ १०५ ॥

वर्षे[7] चाग्रेऽहमदवरपूःश्रेष्ठिनो[8] माकुनाम्नः[9]
हस्ताभ्यामागमवरगृहस्यादिमं खातकर्म।
संस्कार्यारं तदनु च शिलारोपणं वाडीलाले-[10]
त्याख्यश्रेष्ठिप्रवरकरतः कारितं मोदपूर्वम् ॥ १०६ ॥

३ ० ० २
वर्षे रुद्रा-क्ष-ख-ख-मिथुने ह्याश्विने शुक्लपक्षे,
आशातिथ्यां[11] सुजिनप्रतिमाः पालिताणात इद्धाः।
सद्विंशत्युत्तरशतमिता[12] आगमागारहेतो-
रानाय्याकारि च सुविधिना तत्र भव्यप्रवेशः ॥ १०७ ॥

४ ० ० २
'तुर्योद्र्द्धे-द्वयभ्र-नयन-मिते हायने माघशुक्ले,
शुक्रे श्रेष्ठे क्षणतिथियुते[13] सन्मुहूर्त्ते समासाम्।
सन्मूर्त्तीनामपरिगणितोत्साहयुक्तैर्जनौघै-
रम्ये तस्मिन् श्रुतवरगृहे कारिता सुप्रतिष्ठा ॥ १०८ ॥

---

१ चैत्यपरिपाटीत्यर्थः। २ 'सूर्यपुरनुं स्वागत' इत्याह इति शेषः। ३ मुंबाईनगरे। ४ धर्मस्योन्नतिविस्तार-कारिकार्याणीत्यर्थः। ५ वैशाखे इत्यर्थः। ६ श्रावकद्वारेत्यर्थः। ७ २००३ वर्षे इत्यर्थः। ८ अमदावादनगरवासिन इत्यर्थः। ९ मांकुभाईत्यभिधया प्रसिद्धस्य माणेकलाल-मनसुखलालाख्यश्रेष्ठिन इत्यर्थः। १० मुंबापुरीयख्यातव्यापारि श्रीवाडीलाल चत्रभुजाह्वश्रेष्ठिकरत इत्यर्थः। ११ दशमीदिने। १२ १२० संख्याकाः। १३ क्षणशब्दस्य कालवाचित्वमत्र ज्ञेयं, कालस्य च भूतवर्तमानभाविरूपेण त्रैविध्यस्य विदितत्वात् तृतीयायामित्यर्थो बोध्यः।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संवत्सर्यास्तिथिवरसमाराधनायाः प्रसङ्गे-
ऽस्मिन्नेवाब्दे समुदितविसंवादनिर्यासकार्ये।
नैकैर्वैः प्रचलितविधेयैं श्रुतप्रोक्ततां वैः
संसाध्यान्यानपि जिनपथः पोषणोत्कान् प्रचक्रुः॥ १०९ ॥

काले गच्छत्यविरतमितो ह्यग्रिमे पौषमासे,
कृष्णे पक्षे [1]शरतिथिगतेऽचिन्तितो वायुरोगः।
वृद्धिं यातो बहुतरचिकित्साविधिभिः सुयत्नात्,
सञ्ज्ञाः जातास्समुपचरिताः किन्तु शान्तो न जातः॥ ११० ॥

सैवाऽपूर्वा स्थितिरथ तदाऽऽसीन्नचाल्पाप्यशान्ति-
श्चेतोऽप्राक्षीज्जिनपतिपदेऽभूदपूर्वोऽनुरागः।
स्थित्यां तस्यामपि नवनवश्लोकनिर्माणकार्ये,
ज्ञानध्यानादिकमपि मनाङ् नावरुद्धं कदाचित्॥ १११ ॥

६ ० ० २ २
षड्-खा-काश द्वि-मितपरवाणो पुनर्वायुवेगो
वारंवारं प्रबलरभसा पीडयामास देहम्।
मध्ये यस्य स्थितिपरवशाच्छ्रीनमस्कारमन्त्र-
स्यायातोऽभूदहह! सततं श्रावणस्य प्रसङ्गः॥ ११२ ॥

आदेः स्वभ्यस्तमथ च तथा देहास्थत्यादि सम्यग्
दार्ढ्यं येनेतरजनगणासह्यरोगेऽपि शान्त्या।
ये स्तम्भाद्याश्रयविरहिताश्चारु पद्मासनेन,
स्वेष्टस्मृत्यामथ निजमनो योजयामासुरारात्॥ ११३ ॥

दृष्ट्वाऽऽश्चर्यं भृशमुपगता डॉक्टरा अप्यवोचन्,
धन्या एते यदिह विषमस्थेऽपि रोगे सुशान्ताः।
अन्यः कश्चिद् यदि गदहतोऽस्यां स्थितौ स्यात्तदा तु,
स्वान्तर्भीतः स खलु सहसान्यां दशामेव यायात्॥ ११४ ॥

---

१ पंचमीतिथौ। २ अयंशब्दः संवत्सरापरपर्याय इति हैमलिंगानुशासने।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एवं रुग्णां स्थितिमथ निजां वीक्ष्य विज्ञाय चास्या-
ऽनित्यत्वं वै सपदि वपुषो माधवे[1] शुक्लषष्ठ्याम्।
सर्वानाहूय च निजशरीरं ततो व्युत्सृजन्तो-
ऽस्मार्षुर्भक्त्या जिनपतिवरान् ह्यर्धपद्मासनस्थाः॥ ११५ ॥

एकादश्यां निशि कविदिनेऽप्येकवारं त्वतीव-
वेगादाक्रान्तिरभवदहा ! येन सर्वेऽप्यचेष्टाः।
सन्त्यक्ताशाः जिनवरवचः श्रावयामासुराशु,
सत्पुण्यानामतिबलतया किन्त्वितं[2] दुर्दिनं तत्॥ ११६ ॥

वैशाखस्या[3]सितदलगते पञ्चमेऽह्न्यस्तकाले,
सूर्यस्याभूत् त्रिदशनिलये श्रीगुरूणां प्रयाणम्।
हन्ताकस्माद् सुरतजनताऽचिन्त्यदम्भोलिपाताद्,
भीता व्यग्रा प्रकृतिविधुरा कृत्यशून्या बभूव॥ ११७ ॥

सङ्घेनोच्चैस्तरशिखरिता चारु दोला ह्यकारि,
प्रासादस्यानुकरणकरी सत्कलाभिश्च युक्ता।
विद्युत्पत्रै[4]रधिगतसमाचारवन्तश्च भक्ताः
ग्रामाद्ग्रामादरमुपगता[5] अन्त्ययात्रार्थमाशु॥ ११८ ॥

दोलोत्थानाय च कृतसहस्रादिमुद्रापणा वै,
भक्ताः स्वीयं मनुजजननं सार्थकीचक्रुरेव।
अन्ये प्रादुर्द्रविणनिचयं वह्निसंस्कारकार्ये,
भव्या यात्रा निखिलनगरे भ्रामिता भक्तिभावैः॥ ११९ ॥

पश्चाद्गोपीपुरपरिसरे स्वागमौकः[6]समीपं,
संस्थित्यां चापरिमितजनानां गुरूणां सुभव्यम्।
नानाकाष्ठैर्मलयगिरिजैर्दाहसंस्कारकृत्यं,
नाभूत् पूर्वं न च परमितो भावि तादृग् बभूव॥ १२० ॥

---

१ वैशाख मासे। २ किंतु इतं = गतम् इति पदच्छेदोऽत्र बोध्यः। ३ गूर्जरदेशीयपद्धत्येदं ज्ञेयं, पूर्णिमान्तमास (शास्त्रीय) पद्धत्या तु ज्येष्ठस्येति बोध्यम्। ४ तार–टेलिग्रामाख्याधुनिकशीघ्रसंदेशावहपत्रैरित्यर्थः। ५ अरम्=शीघ्रम्। ६ सुंदरागममंदिरपार्श्वे।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शिष्याः पादोत्तरशतमिताः[१२५] अष्टत्रिंशत्[३८] सुसंस्थाः,
ज्ञानागाराः मुनिमितमताः[१२] सन्ति यत्कीर्त्तिदीपाः।
यैश्चाकारि श्रुतहितकरीर्वाचनाः सप्त[७] यासु,
ग्रन्थाः लक्षद्वयधिकगणितश्लोकमात्रा[१] ह्यवाचि ॥ १२१ ॥

सप्तत्रिंशत्सुरपनयनाङ्काधिकाना[२] नवीन-
श्लोकानां ते भुवि रचयितारः कथं स्युर्न नम्याः।
ऊनाशीत्युत्तरगतशतग्रन्थसम्पादकास्ते,[१७९]
धन्याः पञ्चाशदधिकशुभग्रन्थसङ्ग्राहकाश्च[५०] ॥ १२२ ॥

व्याख्यानानामपि कतिपये ग्रन्थवर्याः प्रसिद्धाः,
येषां सन्ति प्रथितविभवा भूमिकाः[३] प्राथमिक्यः।
द्व्यनाशीतिप्रमितरुचिरग्रन्थरत्नेषु[७८] येषां,
मार्गे लोकान् जनिहितकरं बोधयन्त्यो लसन्ति ॥ १२३ ॥

आदित्याङ्काः[१२] सुततमुपधानव्रताः कारिताः यैः,
शोधं शोधं सकलसुजिनोक्तागमानां सुपाठान्।
सल्लोकानामुपकृतिहितं मञ्जु मुद्रापयित्वा,
नैकान् योग्यानभ्यसकृतिनोऽधीतयेऽयूयुजँश्च ॥ १२४ ॥

एवं नानाव्रतजपतपोध्यानदीक्षाप्रतिष्ठा-
यात्रास्नात्रादिकबहुविधोद्यापनैश्चोपधानैः।
भव्यान् जीवान् जिनपगदिते रम्यमार्गे नियुज्य,
त्यक्त्वा देहं सुरपतिगृहं संययुः सूरिवर्याः ॥ १२५ ॥

१. २३३३४२ श्लोकप्रमाणग्रन्था वाचनासु वाचिताः । २ सप्तत्रिंशत्सहस्रमितानामित्यर्थः । ३ प्रस्तावना इत्यर्थः ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

येषां कीर्ति विमलविमलामश्मताम्रागमाना-
मागारस्था दिशि दिशि दिशन्त्यः पताका नितान्तम्
[१]यावच्चन्द्रारुणकिरणवन्तौ दिवि द्योतमानौ,
गायं गायं तदवधि मुदा रञ्जयिष्यन्ति लोकम् ॥ १२६ ॥

॥ अन्त्यमंगलम् ॥

(शिखरिणी)

कृतं यैर्लोकानामुपकृतिहितं वाचनिकया,
श्रुतानामभ्यासस्त्रुटिविरहितः सम्प्रचलितः।
सुपूज्याँस्तान् 'श्रीसागर'इति शुभाख्याप्रथितकान्,
नमामः सूरीन्द्रान् श्रुतवरसमुद्धारनिरतान् ॥ १२७ ॥

चित्र–हार–बन्ध *

(शार्दूलविक्रीडितम्)

शश्वच्छान्तिमयान् महामतिमतः [२]कल्यङ्करान् [३]कर्मठान्,
भव्यापत्तिभरापहान् जलजवज्जन्तुभ्य आनन्ददान्।
दान्तान् नौमितमां विभावितविधीन् [४]व्याख्यानसंख्यासनान्,
प्रौढान् सत्यसखान् सदा नतधियाऽऽनन्दाब्धिसूरीश्वरान् ॥ १२८ ॥

(स्रग्धराछन्दः)

धन्या मान्या वदान्याः गुणिगणगणनास्वग्रगण्या महान्तो,
विद्वद्गोष्ठीगरिष्ठाः [५]जिनपतिचरणेन्दीवरेन्दिन्दिराश्च।
वादीन्द्रा [६]देशकेन्द्रा अविकलनिगमज्ञाततत्त्वा [७]महिष्ठा,
'आचार्यानन्दवर्याः' प्रथितगुणगणाः 'सागरान्ता' जयन्ति ॥ १२९ ॥

॥ आगमपर्यालोचनप्राणः आगमोपजीवी च श्रमणः
श्रामण्यसारमवाप्नोति लभते च निर्वृतिम् ॥

॥ जीयासुरागमोद्धारकाः सद्गुरवः ।

१ यावच्चन्द्रार्कावित्यर्थः। २ कल्यशब्दो हि कल्याणापरपर्यायभद्रवाचकस्ततः भद्रङ्करानित्यर्थोऽत्र ज्ञेयः। ३ क्रियाकुशलान्। ४ व्याख्यानलब्धप्रतिष्ठानित्यर्थः। ५ तीर्थकृच्चरणकमलभ्रमरा इत्यर्थः। ६ शास्त्रापरपर्यायोऽयम्। ७ पूज्याः।

* अयं हि श्लोकः आधुनिकभूषणपरिभाषया नेकलेसेत्याख्य स्वर्णमयरत्नहाररूपेण संयोजितोऽस्ति–अेतत्प्रतिकृतिरप्यस्मिन्नेव ग्रंथे मुद्रिताऽस्त्यन्यत्र।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

॥ ॐ अर्हम् ॥

णमोऽत्थु णं समणस्स भगवओ महावीरस्स ।

शेठ देवचन्द्रलालभाइ-जैन-पुस्तकोद्धार-ग्रन्थाङ्के-१०१

आगमोद्धारक-आचार्यश्रीआनन्दसागरसूरिसङ्कलितः-

अल्पपरिचितसैद्धांतिकशब्दकोषः

अकारः

अंकः-लाञ्छनम् । जीवा० पृष्ठ २७० । अङ्कः, उत्सङ्गः । ओघ० १४३ । रत्नविशेषः । जं० प्र० २३ ।

अंककरेलुगं-शाकविशेषः । आचा० ३४८ ।

अंकणं-अङ्कनं, तप्तायःशलाकादिना चिह्नकरणम् । प्रश्न० २२ । लाञ्छनम् श्वशृगालचरणादिभिः । आव० ५८८ ।

अंकधाती-अंकधातृ, धात्रीदोषे । नि० चू० द्वि० ९३आ ।

(अंकपतिता)-दासी । उत्त० २६२ ।

अंकमुहसंठिया-अङ्कमुखसंस्थिता, पद्मासनोपविष्टोत्संगमुखवत् अर्धवलयाकारः । सूर्य० ७१ ।

अंकलिवी-लिपिविशेषः । प्रज्ञा० ५६ ।

अंकवडेंसए-ईशानकल्पपूर्वदिगावतंसकः । भग० २०३ ।

अंकविद्या-(अंकविज्जा) गणितम् । जं० प्र० १३६ ।

अंकहरो-अङ्कधरः, चन्द्रमाः । जीवा० २७० ।

अंकावइ-अङ्कावती, वक्षस्कारपर्वतः । जं० प्र० ३५७ ।

अंकावई-अङ्कावती, रम्यविजये राजधानी नाम । जं० प्र० ३५२ । शीतोदादक्षिणकूले वक्षस्कारः । ठाणा० ८० । दक्षिणवर्ती वक्षस्कारः । ठाणा० ३२६ ।

अंकावईओ-महाविदेहे विजयराजधानी । ठाणा० ८० ।

अंकावडिंसए-अङ्कावतंसकः, ईशानस्य पूर्वस्यामवतंसकः । जीवा० ३९१ ।

अंकितो-अङ्कितः, चिह्नितः । आव० ८२२ ।

(अंकिल)-नर्त्तकः । औप० ३ ।

(अंकुडिओ)-अंकुटिकः, नागदन्तकः, । जं० प्र० ५० । जीवा० २०५ ।

अंकुर-अंकुरः, प्रवालः । जं० प्र० ३० ।

अंकुर-अंकुरः, शाल्यादिबीजसूचिः । भग० ३०६ । जं० प्र० १६८ ।

अंकुल्ल-अङ्कोठः । वृक्षविशेषः । प्रज्ञा० ३१ ।

अंकुसं-महाशुक्रे विमानविशेषः । सम० ३२ । अंकुशं, येन रजोहरणमङ्कुशवत्करद्वयेन गृहीत्वा वन्दते तत् । कृतिकर्मणि षष्ठदोषः । आव० ५४३ ।

अंकुस-अंकुशः, सृणिः । प्रश्न० २२ ।

अंकुसपलंबं-महाशुक्रे विमानविशेषः । सम० ३२ ।

अंकुसयं-अंकुशकम्, तरुपल्लवग्रहणार्थमंकुशाकृतिः । भग० ११३ ।

अंकुसये-अंकुशका, देवार्चनार्थवृक्षपल्लवाकर्षणार्थम् । औप० ९५ ।

अंकुसो-अंकुशः । अंकुशाकारो मुक्तादामावलम्बनाश्रयभूतः । जीवा० २१० ।

अंके-अंककाण्डं खरकाण्डे चतुर्दशं काण्डम् । जीवा० ८९ । अंकः, । प्रज्ञा० २७ । उत्सङ्गे । जं० प्र० ३८ । मणिभेदः उत्त० ६८९ । श्वेतरत्नविशेषः । प्रज्ञा० ३६१ । रत्नविशेषः । जीवा० २३ ।

अंकेल्लण-अंकेल्लण, तर्जनकविशेषः । जं० प्र० २३५ ।

अंको-अङ्कः, पृथिवीभेदः । आचा० २९ । रत्नविशेषः । भग० ४७९ । एकोरुमैथुनं । नि० चू० प्र० २५५आ । रूढिगम्यः, शंखजातिविशेषः । प्रश्न० ३७ । रत्नविशेषः । जीवा० १८०, १९१ । पद्मासनोपविष्टस्योत्सङ्गरूपः आसनबन्धः । सूर्य० ७१ । जं० प्र० ४५४ ।

अंकोल-गुच्छविशेषः । प्रज्ञा० ३२ ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अंकोल्ल-वृक्षविशेषः । भग० ८०३ ।
अंकोल्लाणं-गुल्मविशेषः । भग० ८०३ ।
अंगं-अङ्गम्, अङ्गविषयम् । आव० ६६० । कारणमवयवः । ठाणा० ३ । कारणम् । प्रश्न० १०३ । शरीरावयवप्रमाण-स्पन्दितादिविकारफलोद्भावकं शास्त्रम् । सम० ४९ । समग्रं वपुः । जीवा० २७० । कारणम् । जं० प्र० ९९ । अज्यते व्यक्तीक्रियतेऽस्मिन्नित्यङ्गम् । आचा० ५ । भेदः कारणं वा । दश० ९० । शिरःप्रभृति । दश० २३७ । आंगं-अक्षिबाहुस्फुरणादिकम् । सूत्र० ३१८ । शिरःस्फुरणादि । ठाणा० ४२७ ।
अंग-अङ्गानि । शिक्षादीनि षडङ्गानि । भग० ११४ ।
अंगओ-अङ्गकः, भद्रप्रकृतिकः । आव० ७०४ ।
अंगचूलिया-अंगचूलिका, अंगानामुपासकदशाप्रभृतीनां पंचानां चूलिका-निरयावलिका । व्य० द्वि० ४५४आ ।
अंगणं-मंडवथाणं । नि० चू० प्र० १९२अ । अजिरम् । प्रश्न० १३८ । अङ्गणं-षट्स्थंडिलभूमिस्थानम् । ओघ० २०० ।
अंगणेत्रिका-हस्तमालक आभरणविशेषः । औप० ५५ ।
अंगदं-बाहुशीर्षाभरणविशेषः । जीवा० १६२ । केयूरम् । जं० प्र० १०६ ।
अंगदे-केयूरे । ठाणा० ४२१ । अङ्गनिका । उत्त० ७८ ।
अंगनाम-शिरउरःपृष्ठबाहूदरपादनामानि । तत्त्वा० ८ ।
अंगपडिहारिणि-अन्तःपुरप्रतिहारिणी । आव० ७०० ।
अंगपविट्ठ-गणधरकृतं मातृकापदत्रयप्रभवं वा ध्रुवश्रुतं वा । ठाणा० ४९ । अङ्गप्रविष्टम् । ठाणा० २०० ।
अंगप्रविष्टं-गणधरदृब्धमाचारादि । तत्त्वा० १-२४ ।
अंगबाहिरे-अङ्गबाह्यम्, स्थविरकृतं मातृकापदत्रयव्यतिरिक्त-व्याकरणनिबद्धमध्रुवश्रुतं वा उत्तराध्ययनादि । ठाणा० ५१ ।
अंगमंगं-अङ्गमङ्गम्, गात्रम् । औप० ११ ।
अंगमंगो-अङ्गमङ्गम्, अङ्गप्रत्यङ्गम् । जीवा० २७७ ।
अंगमंदिरंमि-चंपाचैत्याभिधानम् । भग० ६७५ ।
अंगमद्दियाओ-अंगस्वल्पमर्दनकारिकाः । भग० ५४८ ।
अंगयं-अङ्गदं, बाह्वाभरणविशेषः । जीवा० २५३ । प्रश्न० ७१ । बाहुशीर्षाभरणविशेषरूपम् । प्रज्ञा० ८८ ।
अंगय-अङ्गके, मूर्द्धादौ । जं० प्र० १८९ । अङ्गदम्, बाह्वा-भरणविशेषः । भग० १३२ ।
अंगरिसी-अङ्गर्षिः, आर्जवोदाहरणे भद्रकः कौशिकार्यज्ये-ष्ठशिष्यः । आव० ७०४ । येनोपशमे सत्यवाप्तं सामायिकम् । आव० ३४७ ।
अंगलोअं-अङ्गलोकं, म्लेच्छजातीयजनाश्रयस्थानम् । जं० प्र० २२० ।
अंगवंसो-अङ्गवंशः, अङ्गराजसन्तानस्य सम्बन्धिनः सप्त-सप्ततिराजानः प्रव्रजिताः । सम० ८५ ।
अंगविगारं-अङ्गविकारः, शिरःस्फुरणादिस्तच्छुभाशुभसूचकं शास्त्रमपि । उ० ४१७ ।
अंगविज्जं-अङ्गविद्याम्, शिरःप्रभृत्यंगस्फुरणतः शुभाशुभ-सूचिकां विद्याम् । उत्त० २९५ ।
अंगविज्जा-अङ्गविद्या, अङ्ग-पादः विद्या-प्रासादपातनात्मिका (सत्कारपुरस्कारपरिषहे दृष्टांतपदम्) । उत्त० १२५ ।
अंगहारिका-नृत्यकलाद्वितीयभेदः । सम० ८४ ।
अंगा-अंगाः, जनपदविशेषः । प्रज्ञा० ५५ ।
अंगाई-अंगानि, शिरःप्रभृतीनि । प्रज्ञा० ४६९ । एकादशांगानि प्रज्ञा० ५६ । अवयवाः । ठाणा० १७० । शिरःप्रभृतीनि, । उत्त० ४२८ ।
अंगाणं-देशविशेषः । भग० ६८० ।
अंगादाणं-मेढ्रम् । नि० चू० प्र० ११६अ ।
अंगादानं-मेहनम् । नि० चू० द्वि० ३०आ ।
अंगारः-(इंगाल), विगतज्वालोऽग्निः, । भग० १२२ । विगतधूमज्वालो दह्यमानेन्धनात्मकः । उत्त० ६९४ । कृष्णवर्णवस्तु । आचा० २९ ।
अंगारओ-अंगारकः, महाग्रहः । जीवा० ३३६, ३३७ ।
अंगारकारिका-(इंगालकारिया), अग्निशकटिका । भग० ६९७ ।
अंगारदोषः-(इंगालदोस), आहाररागाद्गाद्धर्याद्वृज्ञानस्य चारित्रांगारत्वापादनाद् । आचा० ३५१ ।
अंगारमर्द्दकः-(अंगारमद्दय) द्रव्यप्रव्रजितः । दश० ११५ । उत्त० ५६६ । विशे० १०६४ ।
अंगारय-अंगारकः, मंगलः । औप० ५२ ।
अंगारवई-अंगारवती, संवेगोदाहरणे शिशुमारपुरपति-धुन्धुमारदुहिता श्राविका । आव० ७०९ ।
अंगारवई प०-अंगारवती प्र० । आव० ६७ ।
अंगारशकटिका-(इंगालकारिया) । आचा० ३०९ ।
अंगारा-(इंगाल), लघुतराग्निकणाः । ठाणा० ४२० ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अंगारियं-अंगारकितं, विवर्णीभूतम् । आचा० ३४९ ।
अंगिरसा-गौतमगोत्रोत्तरभेदः । ठाणा० ३९० ।
अंगुट्ठं-अंगुष्ठम् । आव० ८४५ ।
अंगुट्ठपसिणा-विद्याविशेषः । नि० चू० प्र० १७७अ ।
अंगुट्ठिं-स्नानम् । नि० चू० प्र० १९१आ ।
अंगुट्ठी-अंगुष्ठी, शिरोऽवगुण्ठनम् । आव० ९५ ।
अंगुलपुहुत्तिया-अंगुलपृथक्त्वम् । जीवा० ३९ ।
अंगुलभावो-अंगुलभावः, शुभाशुभपदार्थः । विशे० ८७६ ।
अंगुलिं-अंगुलिः, करशाखा । आचा० ३८ ।
अंगुलिको-चर्ममयोपकरणम् । नि० चू० प्र० १३७अ । नखभंगादिरक्खट्ठा । नि० चू० द्वि० १८अ । अंगुलिकोशः, शृङ्गमयो दारुमयो वंशमयो वा येनाङ्गुलिसंलग्नेन तन्त्री आहन्यते सः । जीवा० १९५ । अंगुलिकोशकः, शृङ्गदारुदन्तादिमयः । जं० प्र० ४० ।
अंगुलिज्जं-अंगुलीयकम्, अंगुल्याभरणविशेषः । औप० ५५ ।
अंगुलिज्जग-अंगुलीयकम्, मुद्रिका । जं० प्र० १०६ ।
अंगुलिज्जयं-अंगुलीयकम् । आव० १७० ।
अंगुलिधणुहओ-अंगुलधनुः । आव० ४८४ ।
अंगुलिभमुहा-कार्योत्सर्गदोषः । आव० ७९८ ।
अंगुलिसत्थयं-शस्त्रकोशविशेषः । नि० चू० द्वि० १८अ ।
अंगुलीयगं-अंगुलीयकं, भूषणविधिविशेषः । जीवा० २६९ ।
अंगुले-प्रमाणभेदः । भग० २७५ । अंगुष्ठ-प्रश्नभेदः । ठाणा० ३०१ । अंगुष्ठप्रश्नः, शुभाशुभसूचकः प्रश्नः । उत्त० ४४६ ।
अंगोवंगाइं-अंगोपांगानि । प्रज्ञा० ४६९ ।
अंगोहलिं-अंगरूक्षणम्, देशस्नानम् । आव० ४१७ । व्य० द्वि० ४०५अ ।
अंचइ-अञ्चति, उत्पाटयति । जं० प्र० ४२१ । जीवा० २५५ ।
अंचिअं-अञ्चितं, नृत्यविशेषः । जं० प्र० ४१२ ।
अंचिअंचियं-उत्पतनिपतां पार्श्वतः करोति । ठाणा० ५२२ ।
अंचिओ-अञ्चितः, व्याप्तः । आव० १६७ । अञ्चितनामा पञ्चविंशतितमो नाट्यविधिः । जीवा० २४७ ।
अंचितरिभितं-अञ्चितरिभितनामा सप्तविंशतितमो नाट्यविधिः । जीवा० २४७ ।
अंचितांचिं-गमागमः । भग० ६८३ ।
अञ्चिते-सकृद्गते । भग० ६८३ ।
अञ्छियं-दुर्भिक्षः । नि० चू० प्र० १४८आ । दात्रसंधी । नि० चू० प्र० १८३आ । नाट्यभेदः । नि० चू० तृ० १अ । अञ्चितं, नाट्यम् । जं० प्र० ४१७ । आव० ३९९ ।
अंच्छेइ-आकुञ्चयति । औप० २५ ।
अंछंति-आकर्षन्ति । विशे० ३८३ । आव० ४८ ।
अंछणं-पण्हपसिरणं । नि० चू० प्र० १९१आ । अंगुल्या लिप्तस्य रंगितस्य । ओघ० १४४ । आकर्षणं-समारणम् । ओघ० १४४ ।
अंछमाणाणं-आकर्षताम् । आव० ४८ ।
अंछवियंछियं-आकर्षविकर्षम् । आव० ८३२ ।
अंछिऊण-आकृष्य । आव० ४२७ ।
अंछित्ता-अपह्रियतां माया । व्य० द्वि० ८४आ ।
अंछिय-आकृष्यते, प्रक्षाल्यते । बृ० प्र० ८१अ ।
अंछियनयना-आकृष्टनेत्राः । प्रश्न० २१ । (जिब्भिन्दियंछिय) आञ्छितम्-आकृष्टम् (आकृष्टजिह्वेन्द्रियाः) । प्रश्न० ६० ।
अंछिया-आकृष्टा । आव० २२७ ।
अंजणं-आणतकल्पे विमानविशेषः । सम० ३५ । सौवीराञ्जनादि । बृ० द्वि० ९२अ । सोवीरयं रसंजणं वा । नि० चू० प्र० २१८आ । अञ्जनम्, सौवीरादि । आव० ५३० ।
अंजण-अञ्जनं, तप्तायःशलाकया नेत्रयोः प्रक्षणम् वा देहस्य क्षारतैलादिना । सम० १२६ । अञ्जनं, सौवीराञ्जनादि । प्रज्ञा० २७ । सौवीराञ्जनम् । जं० प्र० ६० । अञ्जनाः, अञ्जनरत्नमयत्वात् । जं० प्र० १६३ ।
अंजणई-वल्लीविशेषः । प्रज्ञा० ३२ ।
अंजणए-अञ्जनकः, वनस्पतिविशेषः । औप० १० ।
अंजणकेसिया-अञ्जनकेशिका, वनस्पतिविशेषः । जं० प्र० ३३ ।
अंजणकेसियाकुसुमं-अञ्जनकेसिकाकुसुमम्, वनस्पतिविशेषपुष्पम् । प्रज्ञा० ३६१ ।
अंजणगं-अञ्जनकः, पर्वतविशेषः । आव० ८२७ ।
अंजणगपव्वय-अञ्जनकपर्वतः । आव० ३८९ । सम० ९० ।
अंजणगा-अञ्जनकाः, नन्दीश्वरचक्रवालमध्यवर्त्तिनः पर्वताः । प्रज्ञा० ९६ । ठाणा० ४८० ।
अंजणगिरि-अञ्जनगिरिः । जं० प्र० १९६ ।
अंजणपव्वय-अञ्जनपर्वतः, नन्दीश्वरद्वीपे पर्वतविशेषः । जीवा० ३५८ ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अंजणपुलए-अञ्जनपुलककाण्डम्, एकादशं, अञ्जनपुलाकानां विशिष्टो भूभागः । जीवा० ८९ ।

अंजणप्पभा-अञ्जनप्रभा, पुष्करिणीनाम । जं० प्र० ३६० ।

अंजणमओ-अञ्जनमयः, अञ्जनरत्नात्मकः । जीवा० ३५८ ।

अंजणसमुग्गयं-अंजनसमुद्गकम् । जीवा० २३४ ।

(अंजणसिज्झ)-अंजनसिद्धः । दश० १२८ ।

अंजणा-पर्वतविशेषः । ठाणा० ८० । अंजना, पुष्करिणीनाम । जं० प्र० ३३५ । जं० प्र० ३६० ।

अंजणागिरि-अंजनागिरिः, दिग्हस्तिकूटनाम । जं० प्र० ३६० ।

अंजणिं-अंजनिका, कज्जलाधारभूता नलिका । सूत्र० ११७ ।

अंजणे-प्रभंजनेंद्रलोकपालः । ठाणा० १९८ । सीता-दक्षिणवर्ती तृतीयवक्षस्कारः । ठाणा० ३२६ । अंजनः, वेलम्बाभिधानवायुकुमारराजस्य लोकपालः, वरुणस्य पुत्रस्था-नीयो देवः । भग० ३९८ । राहुप्रलापीमते कृष्णपुद्गलविशेषाः । सूर्य० २८७ । अंजनकाण्डं दशमं, अञ्जनानां विशिष्टो भूभागः । जीवा० ८९ । कर्मजीवमालिन्ये हेतुत्वात् । जं० प्र० १४८ । अञ्जनो वक्षस्कारः । जं० प्र० ३५२ । सौवीरा-ञ्जनं रत्नविशेषो वा । प्रज्ञा० ३६१ । रसाञ्जनादि । दश० १७० ।

अंजणेइ-अञ्जनं, सौवीराञ्जनं रत्नविशेषो वा । जं० प्र० ३२ । अञ्जनं, कृष्णरत्नविशेषः । ठाणा० २३२ । अञ्जनं सौवीराञ्ज-नादि । जीवा० २३ । कज्जलम् । उत्त० ६५२ । समीरकम् उत्त० ६८९ । रजोभेदः । आचा० ३४२ ।

अंजणगपव्वय-अंजनकपर्वतः । सम० ९० ।

अंजलिं-अञ्जलिः, हस्तन्यासविशेषः । सूर्य० ६ । भग० १४ । अञ्जलिं, मुकुलितकमलाकारकरद्वयरूपम् । जं० प्र० १८७ ।

अंजली-अञ्जलिः, हत्थुस्सेहो । द० चू० १२९ । नि० चू० प्र० ७अ । अञ्जलिः, द्वयोर्हस्तयोरन्योऽन्यान्तरितांगुलिकयोः सम्पुटरूपतया यदेकत्रमीलनं सा । जीवा० २४३ । संयुतह-स्तमुद्राविशेषः । जं० प्र० १७ । प्रसृतिद्वयम् । नि० चू० द्वि० १२०आ ।

अंजु-ऋजुः, ऋजोः-संयमस्यानुष्ठानात् । आचा० ३०३ । मायाप्रपञ्चरहितत्वादवक्रः । सूत्र० १७७ ।

अंजुया-शान्तिजिनप्रवर्तिनीनाम । सम० १५२ । अंजुका, शक्रदेवेन्द्रस्याग्रमहिषी । जीवा० ३६५ ।

अंजुल-वनस्पतिविशेषः । भग० ८०२ ।

अंजू-प्रगुणोऽव्यभिचारी । सूत्र० ५१ । अंजू, व्यक्तम्, प्रगुणेन न्यायेन स्वरसप्रवृत्त्या वा । सूत्र० २९६ । अंजुः, व्यक्तः, निर्दोषत्वात्प्रकटः, (ऋजुर्वा) वक्रैकान्तपरित्यागादकुटिलः । सूत्र० ३९३ । अंजूः, सार्थवाहसुता । विपा० ३५ । अन्जुः, धनदेवसार्थवाहसुता । विपा० ८८ । शक्रस्याग्रमहिषीनाम । जं० प्र० १५९ । भग० ५०५ ।

अंजूए-शक्राग्रमहिषीराजधानी । ठाणा० २३१ ।

अंड-अण्डम्, काष्ठनिश्रितो जीवविशेषः । आचा० ५५ ।

अंडए-अण्डजः, हंसादिः ममायमित्युल्लेखेन वा प्रतिबन्धः, अण्डजं-पट्टसूत्रजम् । ठाणा० ४६५ । हंसादिः मयूराण्डकादिः वा अण्डजः, पक्षी कोशिकारकीटाण्डकप्रभवं वस्त्रं वा । औप० ३६ ।

अंडओ-अण्डकः, जन्तुयोनिविशेषः । प्रश्न० ३३ ।

अंडग-अण्डकम्, आहारः । भग० २९२ । मुखं । व्य० द्वि० ३३३आ । अण्डजाः, अण्डाज्जाताः । ठाणा० ११४ ।

अंडय-अण्डजः, हंसादिः । भग० ३०३ । अण्डजाः, पक्षि-गृहकोकिलादयः । दश० १४१ ।

अंडसुहुम-अण्डसूक्ष्मम्, मक्षिकाकीटिकागृहकोलिकाब्राह्मणी-कृकलासाद्यण्डम् । दश० २३० । अण्डसूक्ष्मम्, मक्षिका-कीटिकागृहकोकिलाब्राह्मणीकृकलास्याद्यण्डकमिति । ठाणा० ४३० ।

अंडु-अण्डु, अन्दुकं काष्ठमयं लोहमयं वा हस्तयोः पादयोर्वा । औप० ८७ ।

अंडे-विपाकश्रुताद्यश्रुतस्कंधतृतीयाध्ययनम् । ठाणा० ५०७ । ज्ञातायां तृतीयाध्ययनम् । आव० ६५३ । सम० ३६ । अण्डम्, षष्ठांगे तृतीयं ज्ञातम् । उत्त० ६१४ ।

अन्तःकरणम्-मनः । आव० ५८५ ।

अन्तःशल्यः-(अंतोसल्ल), अन्तः-मध्ये मनसीत्यर्थः, शल्य-मिव शल्यमपराधपदं यस्य सो अन्तःशल्यो-लज्जाभि-मानादिभिरनालोचितातिचारः । सम० ३४ ।

अंतं-अन्तः शब्दो मध्यवचनः । विशे० ११७ । परिजीर्णम्, । बृ० द्वि० १७५आ । वस्त्रस्य दशान्तम् । बृ० द्वि० २३५अ । अन्त्यम्, अन्ते भवम्, जघन्यधान्यम् । औप० ४० । अन्त्रम्-पुरीतत् । प्रश्न० ८ । कुल्माषादिकम् । बृ० प्र० २२०आ ।

(अंतचरे)-आन्तम्-अन्ते भवं-आन्तम्-भुक्तावशेषं वल्लादि (तच्चरति) । ठाणा० २९८ ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अन्तयोः-अंचलयोः। भग० ४७७। भूभागः। भग० १२२। अवसानम्। पज्ञा० ३९७। भूमिभागः। भग० ३२३। ठाणा० १३९। समीपम्। जं० प्र० ४५५। वल्कचणकादि। प्रश्न० १०६। समीपः। ठाणा० ११७। अधिकरणप्रधानमव्ययम्। उत्त० २६१। (अंतचरे)-आन्तम्, अन्ते भवं आन्तम्, भुक्तावशेषवल्लादि (तच्चरति)। ठाणा० २९८।

अंतंतं-पर्युषितं वल्लचणकादि। ओघ० १८८।

अंत-अन्तः, निश्चयः। भग० २९०। परिच्छेदः। ठाणा० १७४।

अंतओ-अन्तकः, विषतृष्णायाः पर्यन्तवर्ती। सूत्र० २५९। अन्तकम्, पर्यन्तम्। उत्त० ६२८।

अंतकडे-अन्तकृत्। भग० १११। अन्तो भवस्य कृतो येन सः अन्तकृतः। ठाणा० ३६।

अंतकम्मं-अन्तकर्म, अञ्चलकर्म वा न लक्षणम्। औप० ५५। अन्तकर्म्माणि, अञ्चलयोर्वा न लक्षणानि। जं० प्र० २७५। अन्तकर्म, अञ्चलयोर्वा न लक्षणम्। जीवा० २५३।

अंतकम्मा-अन्तकर्मा, प्रान्तः। औप० ११।

अंतकरे-अन्तकरः, भवच्छेदकरः। भग० २१९।

अंतकरो-अन्तकरः, प्रशस्तभावकरविशेषः, कर्मणः संसारस्य वा अंतकरः। आव० ४९९।

अंतकिरिआ-अन्तक्रिया, निर्वाणलक्षणा। आव० १३५।

अंतकिरियं-अन्त्य(न्त)क्रिया, अन्त्या च सा पर्यन्तवर्तिनी क्रिया चान्त्यक्रिया। अन्त्यस्य वा कर्मान्तस्य क्रिया अन्तक्रिया। कृत्स्नकर्मक्षयलक्षणां मोक्षप्राप्तिम्। भग० ४९।

अंतकिरिया-अन्तक्रिया, अन्तः-कर्मणामवसानं तस्य क्रिया-करणम्, कर्म्मान्तकरणं मोक्ष इति। प्रज्ञा० ३९६। निर्वाणम्। भग० ९१। प्रज्ञापनाया विंशतितमं पदम्। प्रज्ञा० ६। मोक्षः। सम० ११८। भवस्यान्तकरणम्। ठाणा० १८०।

अंतकुलाणि-अन्तकुलानि-वरुटछिम्पकादीनाम्। ठाणा० ४२०।

अंतक्खरिया-लिपिविशेषः। प्रज्ञा० ५६।

अंतगडदसा-अन्तकृद्दशा, अन्तो-भवान्तः कृतो विहितो यैस्तेऽन्तकृताः, तद्वक्तव्यताप्रतिबद्धा दशाः-दशाध्ययनरूपा ग्रन्थपद्धतय इति। अन्त० १।

अंतगडो-अन्तकृत्, ज्ञानावरणीयादिकर्म्मान्तकृत्। आव० १६३। तेनैव भवेनेति। आव० ११७। अन्तकृताः-तीर्थकरादयः। सम० १२१।

अंतगतावधिः-(अंतगतावही)-आत्मान्तगतः, शरीरान्तगतः, अवधिक्षेत्रान्तगतः (पुरःपृष्ठपार्श्वेषु)। प्रज्ञा० ५३७।

अंतगो-अन्तकः, विनाशकारी, आत्मनि वा गच्छतीति, आन्तरः आत्मगो वा। सूत्र० १७८। अन्तंगः, अन्तं गच्छतीति, दुष्परित्यज्यः। सूत्र० १७८।

अंतचारी-अन्तचारी, पार्श्वचारीति। ठाणा० ३४२।

अंतदीवगं-सव्वेहिं अभिसवज्झात अमज्जमसासी भवेज्जा। दश० चू० १६३।

अंतदीपकम्-प्रागुक्तेष्वपि समन्वयः। विशे० ३३०।

अंतद्धाणं-अदृश्यः। नि० चू० प्र० ७६ अ।

अंतद्धाणपिंडो-अप्पाणं अंतरहितं करेत्ता जो पिंडं गेण्हति सो अंतद्धाणपिंडो भण्णति। नि० चू० द्वि० १०२ अ।

अंतरं-उववासो। नि० चू० प्र० १७४ आ। अन्तरं प्राप्तिः। विशे० २४७। मज्झं। नि० चू० तृ० १४० अ। समुद्रमध्यम्। उत्त० ७००। उत्तरम्। आव० ४४२। विशेषः। उत्त० २१७। अवसरः। आचा० १०७। अवकाशः। प्रज्ञा० ६९। मध्यः। जीवा० ४६। शैलान्तरम्-कन्दरान्तरम्, वनान्तरम् वा आश्रयरूपं। प्रज्ञा० ६९। अन्तरालम्। आव० ३३। विशेषो रूपनिर्म्माणादिभिः। ठाणा० २०३। पूर्वत्यागापरवस्त्रादानकाले-प्रतिमाविशेषः। नि० चू० द्वि० १६३ आ। पार्श्वरूपम्। जं० प्र० ३८७। व्यवधानम्। जीवा० १२२। अन्तरायम्। ओघ० १७६। उपवासः। आव० २०३। राजगमनस्यान्तरम्। विपा० ५३। अवसरः। विपा० ७३। अपान्तरालम्। सूर्य० ४९। अवसरः। प्रश्न० ४२। ग्रामादीनामर्धपथः। प्रश्न० ५२। पृष्ठोदरयोरन्तरालं पार्श्वे इति। जीवा० २७७। विचालं। व्य० प्र० १२८ अ।

अंतरंजिया-अन्तरञ्जिका, नगरी यत्र त्रैराशिकदृष्टिरुत्पन्ना, बलश्रीराजधानी। उत्त० १६८। पुरी यत्र त्रैराशिकनिह्नवस्य दृष्टिरुत्पन्ना। आव० ३१८। नगरी। विशे० ९८१।

अंतरंत-अंतरतो नाम असहा मूधा। व्य० द्वि० १० आ।

अंतरंतगो-गिलाणो। नि० चू० प्र० १९८ अ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अंतर–वस्त्रैषणाभेदः । आचा० २७७ । अन्तरशब्दो मध्यवाची । प्रज्ञा० ५० । अन्तरे, पृष्ठोदरयोरन्तराले, पार्श्वे । जं० प्र० ११७ । अंतरागि–पार्श्वदेशः । प्रश्न० ८३ ।

अंतरकंदे–अन्तरकन्दः । जलजवनस्पतिविशेषकन्दः । प्रज्ञा० ३७ ।

अंतरकरणं–औपशमिककालः । प्रज्ञा० ३८७ ।

अंतरगए–अन्तरगतः, संस्पर्शी । सूर्य० ७९ ।

अंतरगामम्मि–अपान्तराल एव यो ग्रामस्तस्मिन् । ओघ० ७७ ।

अंतरगिरिपरिरओ–अन्तर्गिरिपरिरयः, गिरेरन्तः परिक्षेपः । जीवा० ३४३ ।

अंतरजातम्–भावभाषाजातः तृतीयो भेदः । अन्तरे भाषाद्रव्यमिश्रणं । आचा० ३८५ ।

अंतरतेणो–गामदेसंतरेसु हरंतो । नि० चू० द्वि० ३८ आ ।

अंतरदीव–अन्तरद्वीपः । भग० ४२५ ।

अंतरदीवगा–अन्तरद्वीपगा, अन्तरे लवणसमुद्रस्य मध्ये द्वीपा अन्तरद्वीपाः, तद्गता अन्तरद्वीपगाः । प्रज्ञा० ५० ।

अंतरदीवगो–अन्तरद्वीपः, लवणसमुद्रमध्ये अन्तरेऽन्तरे द्वीपः । जीवा० १४४ ।

अंतरदीविगा–आन्तरद्वीपजाः । ठाणा ११५ ।

अंतरद्धा–अन्तर्द्धानम्, भ्रंशः । आव० ८२७ ।

अंतरद्धाए–अन्तरकालेऽर्धसंलिखिते देहे । आचा० २९१ ।

अन्तरद्वीपजाः–अन्तरम्, इह समुद्रमध्यं तस्मिन् द्वीपास्तेषु । उत्त० ७०० । अन्तरद्वीपजाः, सम० १३५ । अन्तरद्वीपाः, अन्तरम् । इह समुद्रमध्यं तस्मिन् द्वीपाः । उत्त० ७०० ।

अंतरपल्ली–अन्तरपल्लिकावृषभग्रामयोरन्तरालम् । बृ० प्र० ३०५ ।

अंतरपल्ली–बहिःसन्निवेशः । नि० चू० प्र० ३३६अ । मूलग्रामादर्धतृतीयगव्यूतान्तर्गतो ग्रामः । बृ० तृ० १२१ आ । तस्माद्ग्रामात्परतो योऽन्य आसन्नग्रामः । ओघ० १०४ ।

अंतरभासिल्ल–अन्तरभाषिल्ल, अन्तरभाषावान्, गुरुवचनापान्तराल एव स्वाभिमतभाषकः । उत्त० ५५२ ।

अंतरभासा–अन्तरभाषा, आचार्यस्य भाषमाणस्यान्ते यद्भाषते सा । आव० ७९२ ।

अंतरवीहिअं–अन्तरवीथी, अवान्तरमार्गः । जं० प्र० १८८ ।

अंतरा–अगृहीतवीप्सा । जीव० १९९ ।

अंतराइयदोसो–अन्तरायिकदोषः, अन्तर्भवो दोषः । आव० ८३८ ।

अंतराए–अन्तरायः, शक्त्यभावः । सूत्र० १८४ । अन्तरायिकः (मध्यभव) । आचा० ३४० ।

अंतराणि–उत्कर्षापकर्षात्मकविशेषरूपाणि निवासभूतानि वा गिरिकन्दरविवरादीनि । उत्त० ७०१ ।

अंतरापहे–अन्तरापन्थाः, अन्तरालमार्गः । भग० ११६ ।

अंतरायं–अन्तरायः, असज्झाइकाध्यायादिभिः । आव० ५८० ।

अंतरालं–अन्तरालं, अन्तरम् । उत्त० ३८१ । आव० ३३ ।

अंतरावणं–अन्तरापणं । उत्त० २२२ । आवणान्तरम् । उत्त० २०९ । राजमार्गमध्यभागवर्त्तिहट्टम् । विपा० ५८ ।

अंतरावासं–वृष्टेरवसरः, वर्षाकालश्च । भग० ६६ ।

अंतरिए–लघ्वन्तररूपाः । जं० प्र० ४९ ।

अंतरिओ–अन्तरितः, । आव० ४२९ ।

अंतरिका–अन्तरस्य–विच्छेदस्य करणमन्तरिका । जं० प्र० १५० ।

अंतरिक्खं–अन्तरिक्षं, आकाशप्रभवग्रहयुद्धभेदादिभावफलनिवेदकशास्त्रम् । सम० ४९ ।

अंतरिक्खो–मेहो । दश० चू० ११४ ।

अंतरिच्छा–अन्तरेच्छा, अन्तरा–मध्ये इच्छा–अभिमतवस्त्वभिलाषः । उत्त० ४७४ ।

अंतरिज्जं–अंतरिज्जं णाम पाउरणं अथवा जं सिज्जाए हेट्ठिल्लापात्तं । नि० चू० द्वि० १६३ आ ।

अंतरिया–अन्तरिका । सूर्य० १४१ । लघ्वन्तररूपा । जीवा० २०४ । विच्छेदकरणम् । भग० २२० ।

अंतरीयं–परिधानं । बृ० प्र० ९८ अ ।

अंतरुच्छुअं–इक्षुपर्वमध्यम् । आचा० ३५४ ।

अन्तरे–पथि । ओघ० ६६ । मध्ये परस्परविभागः । ठाणा० २२७ । अन्तरे, अन्तराले । उत्त० ३८१ । अन्तरे, अवसरः । भग० ३८१

अंतरो–अन्तरः, अवसरः । आव० ४२१ ।

अंतरोदगाणं–अन्तरोदकानाम्, जलान्तर्वर्त्तिसन्निवेशविशेषाणाम् । जं० प्र० २७७ ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अंतर्मुहूर्त्तम्–मुहूर्तस्यान्तरं, मुहूर्त्तमपि न्यूनम्। उत्त० ६९७। भिन्नमुहूर्त्तम्। जीवा० १३०।

अंतर्हितः–(अंतद्धिओ) अदृश्यः। ठाणा० ५१३।

अंतलिक्खं–अन्तरिक्षं, ग्रहभेदादिविषयम्। आव० ६६०।

अंतलिक्ख–अन्तरिक्षम्, नभः। दश० २२३। अमोघादिकम्। सूत्र० ३१८।

अंतलिक्खं–अन्तरिक्षम्–गंधर्वनगरादि। ठाणा० ४२७।

अंतवाले–अन्तपालः, अन्तं–स्वदादेश्यदेशसम्बन्धिनं पालयति–रक्षयति उपद्रवादिभ्य इति। जं० प्र० २०३।

अंतसो–अन्तशः, निरवशेषतः। सूत्र० १७१।

अंताः–अवयवाः। उत्त० ४५९। उत्त० ५८५।

अंता–अंते ठिता, ण अंता अणंता। नि० चू० प्र० २५५ आ।

अंताक्षरिका–(अंतक्खरिया) क्रीडाविशेषः। उत्त० ४७।

अंतिए–अन्तिके, समीपे। भग० ९०। उत्त० २७७।

अंतिमधनं–अंतिमे–अंकस्थाने परिमाणं। व्य० प्र० ७६।

अंतिमराइयंसि–रात्रेरवसाने। ठाणा० ५०२। भग० ७११।

अंतिमसरीर–अन्तिमशरीरम्, चरमशरीरम्। भग० २१९।

अंतियं–समीपम्। भग० ६५९। अत्यन्तमरणं, मरणस्य तृतीयो भेदः। उत्त० २३०। आन्तिकं, सामीप्यम्। आव० २६७।

अंतिय–अन्तिकम्, आसन्नम्। भग० २१७। अत्यन्तमरणम्। उत्त० २३०।

अंतिया–आन्तिकी समीपाभ्युपगता। उपा० १५।

अंते–अन्तः, पर्यन्तः, अतिदूरं वा। सूत्र० २०४। अन्ते, अग्रे। उत्त० ६०१। परिसमाप्तिः। बृ० द्वि० १९९ आ।

अंतेउरे–(आंतःपुरिकी), आतुरस्य नाम गृहीत्वा आत्मनोऽङ्गं प्रमार्जयति–आतुरश्च प्रगुणो जायते। व्य० द्वि० १३३ आ।

अंतेण–मार्गेण। नि० चू० प्र० ६ आ।

अंतेणं–आन्त्रेण। ठाणा० ५०२।

अंतेवासि–भर्तृज्जुकाः। नि० चू० प्र० २५० अ।

अंतेवासी–शिष्यः। जं० प्र० १५। भग० ११।

अंतेहि–अरसतया सर्वधान्यान्तवर्तिभिर्वल्लचणकादिभिः। भग० ४८४। रागद्वेषौ। आचा० १५८। आचा० १६६।

अंतो–अन्तो, विभागः। भग० ३९३। विभागः। ठाणा० ३८०। अन्तः, परिच्छेदः। प्रज्ञा० ५३२। मार्गः। आव० ४०२। अन्तः निवेशनस्य। आव० ७४५। अन्तो, रोगः, भङ्गः, विनाशः। विशे० १३०७। अन्तः, मध्यभागे। जीवा० २०१। मार्गः। आव० ६८६। विभागः। जं० प्र० ४५९। भिन्नम्। आव० ५८४। मार्गः। आव० ४८५। आव० १८९। मध्ये। प्रज्ञा० ४७। इन्द्रियाननुकूल आश्रयः। प्रश्न० १३८। मध्यकरणम्। आव० ५८३। चतुर्दशभेदान्तरग्रन्थः। उत्त० २६१।

अंतोजलगयपव्वय–जलान्तर्गतपर्वतः। उत्त० २६४।

अंतोधूमं–अभ्यन्तरधूमम्। आव० ६६२।

अंतोनायं–अन्तोनादं, हृदये सदुःखमारसन्। आव० ६६१।

अंतोनियंसणी–निर्ग्रंथ्युपकरणविशेषः। ओघ० २०९।

अंतोमुहुत्त–अन्तर्मुहूर्तम्, भिन्नमुहूर्तम्। भग० २९। उत्त० ६९७।

अंतोवणीते–आहरणतद्दोषविशेषः। ठाणा० २५३।

अंतोवाहिणी–अन्तर्वाहिनी नदी। जं० प्र० ३५७। ठाणा ८०।

अंतोवेइया–प्रतिलेखनादोषः। नि० चू० प्र० १८२ अ।

अंतोसंबुक्कावट्टा–गोयरपिंडेसणाए कमेणं ति, तत्थ गोयरातिमे अभिग्गहविसेसतो जाणियव्वा। नि० चू० तृ० १२ अ।

अंतोसल्लं–अन्तःशल्यमरणम्। मरणस्य षष्ठो भेदः। उत्त० २३०।

अंतोसल्लमरणे–अन्तःशल्यमरणम्, अन्तःशल्यस्य द्रव्यतोऽनुद्धृततोमरादेः, भावतः सातिचारस्य यन्मरणं तत्। भग० १२०। सम० ३३।

अंतोहिंतो–गृहादेर्मध्याद्बहिर्नयन्तः। ठाणा० ३५३।

अंत्यः–आनुपूर्व्यन्त्यपक्वर्यकाः। सूत्र० १०। विशेषम्। ठाणा० ३९१।

अंदुकम्–हस्तिबन्धनविशेषः। उत्त० ४११।

अंदेरे–गुच्छाविशेषः। प्रज्ञा० ३२।

अंदोलगा–पक्ष्यन्दोलकाश्च तत्र यत्रागत्य २ मनुष्या आत्मानमन्दोलयन्ति। जं० प्र० ४४।

अंदोलगो–आन्दोलकः यत्रागत्य मनुष्या आत्मानमन्दोलयति सः। जीवा० २००।

अंध–अन्धः, अज्ञानः। भग० ३१२।

अंधकण्टकीयम्–अतर्कितसम्भवो न्यायविशेषः। आचा० १८।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अंधकारे-अन्धकारम्, तमोरूपम्। भग० २७०।
अंधकारेति-तमस्कायनाम। ठाणा० २१७।
अंधगवण्हिणो-अंह्रिपा-वृक्षास्तेषां वह्नयस्तदाश्रयत्वेनेत्यं-ह्रिपवह्नयो बादरतेजस्कायिकाः। भग० ७४६।
अंधगवण्ही-अन्धकवृष्णिः, द्वारवत्यां राजा यादवविशेषः। अन्त० २। दश० ९७।
अंधतमसं-अन्धतमसम्। आव० ३६६।
अंधपुरं-नगरविशेषः। बृ० तृ० १०८ आ०। नि० चू० द्वि० ४२आ।
अंधप्रदीतपलायनम्-(अंधपलितपलाणं)। दश० १५८।
अंधमूढि--अविमर्शकारिता। आचा० ६२।
अंधयं-अन्धकम्, नयनयोरादित एवानिष्पत्तेः, कुत्सिताङ्गम्। विपा० ३६।
अंधलीभूय-अन्धीभूतः। आव० ६८८।
अंधिय-चतुरिन्द्रियविशेषः। प्रज्ञा० ४२।
अंधिया-चतुरिन्द्रियजीवभेदः। उत्त० ६९६। चतुरिन्द्रिय-जन्तुविशेषः। जीवा० ३२।
अंधिल्लगो-अन्धिल्लकः, जात्यन्धः। प्रश्न० १६२।
अंधीयताम्-अन्धीभवतु। दश० १०६।
अंधो-अन्धः, चिलातदेशनिवासी म्लेच्छविशेषः। प्रश्न० १४।
अंधोपलः-(अंधोवल), अन्धपाषाणः। दश० ४०।
अंधोपलादिः-छायारहितपाषाणः। विशे० ९१८।
अंध्र-(अंध), अंध्रादिदेशोद्भवा म्लेच्छप्राया, आर्यभाषामजानाना। व्य० द्वि० २८अ।
अंध्री-(अंधी), अन्ध्रदेशीया स्त्री, उत्कृष्टरूपा। आव० ५८१।
अंब-अम्लवचनयोगाद् परुषवचनव्यवहारः। व्य० प्र. २५६।
अंब-आम्र। प्रज्ञा० ३१।
अंब-आम्रम्। प्रज्ञा० ३२८। फलविशेषः। प्रज्ञा० ३६४। थोवेण ऊणं अंबं भणति। नि० चू० द्वि० १२४आ।
अंबए-अग्रप्रलंबविशेषः। बृ० प्र० १४३आ।
अंबकंजिय-सुगंधिकाञ्जिकम्। ओघ १६०।
अंबकुज्जं-पादतलमध्यम्। बृ० द्वि० २२३ आ।
अंबकूणए-आम्रास्थिकम्। भग० ६८१।
अंबकूणगहत्थगए-आम्रफलहस्तगतः। भग० ६८४।
अंबक्खलगं-अम्लखलम्। आव० ३५३।
अंबखुज्ज-आम्रकुब्जः, आम्रफलवत् कुब्जो वक्रः। भग० ९०। पादतलमध्यम्। बृ० द्वि० २२३ अ। तं०
अंबगपाणगं-पानकविशेषः। आचा० ३४७।
अंबगपिंडी-आम्रपिण्डी। आव० ६९७।
अंबचोयए-आम्रत्वक्। भग० ६८१।
अंबचोयगं- ,, आम्रछल्ली। आचा० ४०५।
अंबजुज्झं-पादतलमध्यम्। नि० चू० प्र० १३७ अ।
अंबट्ठ-अम्बष्ठः, ब्रह्मपुरुषेण वैश्यस्त्रियां जातो वर्णः। आचा० ८।
अंबट्ठो-अम्बष्ठः, ब्राह्मणेन वैश्यायां जातः। उत्त० १८२।
अंबडे-अम्बडः, माहणपरिव्राजकभेदः। औप० ९१। (अंमडः) परिव्राजकविद्याधरश्रमणोपासकः। ठाणा० ४५७। अम्बडः। सम० १५४।
अंबडो-अम्बडः, अमूढदृष्टित्वोदाहरणे लौकिकऋषिः। दश० १०२। सुलसाश्राविकापरीक्षकपरिव्राजकः। व्य० प्र० १८ आ। म्लेच्छविशेषः। प्रज्ञा० ५५। अम्बडपरिव्राजकः। प्रज्ञा० ६१।
अंबपलंबं-फलविशेषः। आचा० ३४८।
अंबपेसी-आम्रफाली। आचा० ४०५।
अंबप्पहारो-प्रहारार्त्तः। उत्त० १९३।
अंबभित्तयं-आम्रार्द्धम्। आचा० ४०५।
अंबय-आम्रः। आव० ४१७।
अंबयरुक्खे-अष्टादशजिनचैत्यवृक्षः। सम० १५२।
अम्बरतलम्-(गगनयलं)। सूर्य० २६४।
अंबरवत्थं-अम्बरवस्त्रं, स्वच्छतयाऽऽकाशकल्पम्। जं० प्र० ४०६। स्वच्छतयाऽऽकाशकल्पवसनम्। भग० १७४।
अंबरसे-अम्बा-पूर्वोक्तयुक्त्या जलं तद्रूपो रसो यस्मात् तन्निरुक्तितोऽम्बरसम्। भग० ७७६।
अंबरिस-अम्बरीषः, द्वितीयः परमाधार्मिकः। भग० १९८।
अंबरिसी-नारकान् कल्पनिकाभिः खण्डशः कल्पयित्वा भ्राष्ट्रपाकयोग्यान् करोति। सम० २८। अम्बर्षिः, द्वितीयः परमाधार्मिकः। सूत्र० १२४। पञ्चदशसु परमाधार्मिकेषु द्वितीयः। उत्त० ६१४। नरके द्वितीयः परमाधार्मिकः। आव० ६५०। विनयविषये उज्जयिन्यां ब्राह्मणः श्रावकः। आव० ७०८।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अंबरिसे-अम्बरीषः, कोष्टकः। जीवा० १२४। अम्बरीषम्-भ्राष्ट्रम्। प्रश्न० १७। अम्बरीषा-भ्राष्ट्र आकरणानि। ठाणा० ४१९।

अंबले-अम्बरागि। बृ० द्वि० २८३ अ।

अंबसालवणं-आम्रशालवनं, आमलकल्पानगर्यां वनविशेषः। उत्त० १५९। चैत्यविशेषः। आव० ७०७। आम्रशालवनम्। आव० ३१४।

अंबा-विद्याविशेषः। आव० ४११। जलम्। भग० ७७६।

अंबाडगं-अम्बालकम्, फलविशेषः। अनुत्त० ६। अंबाटकं-फलविशेषः, अधोगतिमत्। प्रज्ञा० ३२८।

अंबाडग-बहुबीजको वृक्षः। भग० ८०३। अंबाडक-बहुबीजविशेषः। प्रज्ञा० ३२। आम्राटकः-कापोतलेश्यारसे। प्रज्ञा० ३६४।

अंबाडगपलंबं-फलविशेषः। आचा० ३४८।

अंबाडगपाणगं-पानकविशेषः। आचा० ३४७।

अंबाडिओ-तिरस्कृतः। बृ० प्र० ३०आ। तिरस्कृतः। आव० ९१। तर्जितः। आव० १८७। उपालब्धः। आव० ३९८।

अंबाडिय-निर्भर्त्सितः। आव० ३०६।

अंबाडिया-तिरस्कृता। आव० २२५।

अंबाडेइ-तिरस्कुरते। उत्त० १४७। उपलभते। आव० २२३। नि० चू० प्र० २११ आ।

अंबाण-गंधाम्रे, आम्राः। बृ० प्र० १४३आ।

अंबारेवई-अम्बारेवती, व्यन्तरीविशेषः। आव० ६९१।

अंबावल्ली-वल्लीविशेषः। प्रज्ञा० ३२।

अंबियपहारो-प्रहारार्त्तः। आव० ६६६।

अंबिया-प्राप्ता गवेषितलब्धा वा। बृ० द्वि० ८२अ।

अंबिलं-अम्लम्। आव० २००। अम्लम्, तक्रारनालादि। दश० १८०। आचाम्लम्-अवश्यानम्। आचा० ३४६।

अंबिल-पर्वगवनस्पतिः। भग० ८०२। अम्बोऽम्लिकायाश्रितः। जं० प्र० १७४। हरितविशेषः। प्रज्ञा० ३३। रब्बा। बृ० प्र० २९अ।

अंबिलजवागू-अम्लयवागूः। आव० ९१।

अंबिला-आम्लिका। ओघ० २१५।

अंबिलि-आम्लभाजनम्, चिञ्चिणिकापात्री। आव० ६२४। रब्बा। बृ० प्र० २८आ।

अंबिलिबीयं-अम्लिकाबीजम्, चिञ्चिणिकाबीजम्। आव० ६२४।

अंबिलोदए-आम्लोदकम्, अतीवस्वभावत एवाम्लपरिणामम्। जीवा० २५। आम्लोदकम्, स्वभावत एवाम्लपरिणामं काञ्जिकवत्। प्रज्ञा० २८।

अंबूखुज्जो-आम्रकुब्जः। आव० ६४८।

अंबे-आम्लः। नि० चू० प्र० ३५६ आ। प्रथमपरमाधार्मिकः। सम० २८। अम्बः, नरके प्रथमः परमाधार्मिकः। आव० ६५०। पञ्चदशसु परमाधार्मिकेषु प्रथमः। उत्त० ६१४। अम्बः, प्रथमः परमाधार्मिकः। सूत्र० १२४।

अंबेल्ली- (रब्बा)। आव० ९१।

अंबो-आम्रवृक्षः, भावुके दृष्टांतः। ओघ० २२३।

अंमिया-प्राप्ता। नि० चू० द्वि० १० आ।

अंमेउं-प्राप्तुम्। नि० चू० प्र० २०२ अ।

अंवाडेति-खरंटेति। नि० चू० प्र० २११ आ।

अंस-अस्रिः, पर्यङ्कासनोपविष्टस्य जानुनोरन्तरं, आसनस्य ललाटोपरिभागस्य चान्तरं, दक्षिणस्कन्धस्य वामजानुनश्चान्तरं, वामस्कन्धस्य दक्षिणजानुनश्चान्तरम्। चतुर्दिग्विभागोपलक्षितः शरीरावयवो वा। भग० ११। अंसेसु-कोणेषु। जं० प्र० ११५। अंशः, सत्पर्यायोऽयं शब्दः। उत्त० ५८९।

अंसलग-अंसगतः। तं०।

अंसहरा-अंशधरा, अंशं-प्रक्रमाज्जीवितव्यभागं धारयन्ति-मृत्युना नीयमानं रक्षन्ति। उत्त० ३८८। अंशाः-दुःखभागास्तं हरन्ति अपनयन्ति ये ते। उत्त० ३८९।

अंसातो-एकस्मात्। ठाणा० २३६।

अंसिया-अविभक्तोऽंशः। बृ० द्वि० १९९ आ। गामततियभागादि। नि० चू० द्वि० ७०आ। अंशिका-यत्र ग्रामस्यार्द्धं, आदिशब्दात् त्रिभागो वा चतुर्भागो वा गत्वा स्थितः सा ग्रामस्यांश एव अंशिका। बृ. प्र० १८१ आ।

अंसियालए-अंहयालये। दश० ३७।

अंसी-अस्रिः, चतुर्दिग्विभागोपलक्षितः शरीरावयवः। जीवा० ४२। प्रज्ञा० ४१२। (अर्शांसि) रोगविशेषः। नि० चू० प्र० १८९ अ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अंसुप-श्लक्ष्णपट्टः। बृ० द्वि० २०१ आ।
अंसुयं-वस्त्रम्। नि० चू० प्र० २५४ आ। दुकूल-विशेषरूपम्। जीवा० २६९।
अंसुय-श्लक्ष्णपट्टः। ठाणा० ३३८।
अंसुयाणि-अंशुकानि, वस्त्राणि। आचा० ३९३।
अंसो-अंशः, भेदः। विशे० २५१। अस्रिः, चतुर्दिग्वि-भागोपलक्षितः। सूर्य० ४। अस्रिः, पर्यङ्कासनोपविष्टस्य जानुनोरन्तरं १, आसनस्य ललाटोपरिभागस्य चान्तरम् २, दक्षिणस्कन्धस्य वामजानुनश्चान्तरम् ३, वामस्कन्धस्य दक्षिणजानुनश्चान्तरं ४। सूर्य० ४। अंशः-भेदः। प्रज्ञा० ६०१। अंशः-भागः। उत्त० १८८। भागः। आचा० १७७।
अइं-असुना। बृ० द्वि० २१३ अ।
अइंताणं-अतियतां-आगच्छतां। व्य० द्वि० ३६६ आ।
अइंति-प्रविशन्ति। ओघ० ६७। आगच्छन्ति। प्रश्न० १२०।
अइंतु-प्रविशन्तु। ओघ० ७९।
अइंते-प्रविशति। बृ० द्वि० ६०अ।
अइंतो-आगच्छन्। आव० २६५।
अइ-अयि, आमन्त्रणे। उत्त० ३५४।
अइअच्च-अतिगत्य, अत्येत्यातिक्रम्य। आचा० २४१। अविगणय्य। आचा० ३०३।
अइआरो-अतिचारः, पापम्। आव० ७७८। अतिक्रमः। आव० ५७५। स्खलना। ओघ० ३८।
अइकाए-अतिकायः, दक्षिणनिकाये सप्तमो व्यन्तरेन्द्रः। भग० १५८।
अइकाय-अतिकायः, महोरगेन्द्रः। जीवा० १७४।
अइकुंडियं-अतिबाधितम्। आव० ५७४।
अइकोहग्गहघत्थं-अतिक्रोधग्रहग्रस्तम्, अतीवोत्कट-रोषग्रहाभिभूतम्। आव० ५८८।
अइक्कंतं-अतिक्रान्तम्, अतिक्रान्तकरणात्। आव० ८४०।
अइक्कंत-अतिक्रान्तम्, अतिक्रान्तकरणादतिक्रान्तम्। भग० २९६।
अइक्कंता-अतिक्रान्ता, जाता। उत्त० २१५। अतीताः। आचा० १७८।
अइक्कंतो-अतिक्रान्तः, पर्यन्तवर्ती। प्रज्ञा० ९१।
अइक्कमओ-अतिक्रमः, अनानुपूर्वी भवनम्। विशे० १७४।
अइक्कमे-अतिक्रामेत्, प्रविशेत्। उत्त० ६०।
अइक्कमो-अतिक्रमः, आधाकर्मनिमन्त्रणे प्रतिशृण्वति साधु-क्रियोल्लङ्घनरूपः दोषविशेषः, यावदुपयोगकरणम्। आव० ५७६। अतिलङ्घनम्। आव० ८२३। पीडात्मको महा-व्रतातिक्रमो वा मनोऽवष्टब्धतया परतिरस्कारं वा। सूत्र० १७३।
अइगच्छिहिति-अतिगमिष्यति। आव० ३६९।
अइगतो-पविट्ठो। नि० चू० तृ० १३ आ। अतिगतः। आव० ३४९।
अइगमणं-अतिगमनम्, अतिगमनकथा, राज्ञ आगमन-सम्बन्धी विचारः, राजकथाया द्वितीयभेदः। आव० ५८१। उत्तरायणम्। भग० १४७।
अइगया-अतिगता। ओघ० १५८।
अइगुविलगव्वरा-अतिगुपिलगह्वरा। आव० ३८४।
अइचारो-अतिचारः, स्खलना। ओघ० ३८। मिथ्यात्व-मोहनीयकर्मोदयादात्मनोऽशुभः परिणामविशेषः। आव० ८१३। अतिचरणानि-चारित्रविराधनाविशेषाः। विशे० ५५०।
अइचिराविओ-अतिचिरायितः। आव० ५१२।
अइच्छ-अतीच्छा, अदाने सत्यतिगच्छेति वचनम्। आव० ४७८।
अइच्छओ-अतिक्रामन्, भिन्दानः। बृ० प्र० १७ आ।
अइण्णं-आकीर्णम्, सव्वलोगो आयरइ। नि० चू० प्र० २७४ अ।
अइणा-गोरमिगादिणो। नि० चू० प्र० २५५ अ।
अइनिद्धं-अतिस्निग्धम्, हविः प्रचुरम्। आव० ५६८।
अइपंडुकंबलसिला-अतिपाण्डुकम्बलशिला। आव० १२४।
अइपडागा-अतिपताका, एकां पताकामतिक्रम्य या पताका सा। औप० ५। पताकोपरिवर्तिनी। भग० ४७६।
अइ(णु)परियट्टित्ता-अति(नु)परिवर्त्त्य, सामस्त्येन परि-भ्राम्य। प्रज्ञा० ६००।
अइपहाए-अतिप्रभाते। आव० ६४१।
अइप्पयं-अतिप्रभाते। ओघ० ९८।
अइबले-आगामिन्यां पञ्चमो हरिः। सम० १५४। अतिबलः-भरतसंताने तृतीयः। ठाणा० ४३०।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अइभद्दा-अतिभद्रा, प्रभासमाता। आव० २५५।

अइभारे-अतिभारः, प्रभूतपूगफलादेः स्कन्धपृष्ठयादिष्वारोपणम्। आव० ८१८।

अइभूमि-अतिभूमिः, गृहस्थैरनुज्ञाता यत्रान्ये भिक्षाचरा न यान्ति। दश० १६८।

अइमत्तं-अतिमात्रः, अतिरिक्तम्, अतिक्रान्तमर्यादम्। उत्त० ४२९।

अइमत्ते-अतिमात्रे, बृहत्प्रमाणे। ओघ० १७०।

अइमुत्तग-पुष्पविशेषः। नि० चू० प्र० ११८ आ।

अइमुत्तगचंदसंठाणसंठिते-अतिमुक्तकचन्द्रसंस्थानसंस्थितम्, घ्राणेन्द्रियसंस्थानम्। प्रज्ञा० २९३।

अइमुत्तगणा-वल्लीविशेषः। प्रज्ञा० ३२।

अइमुत्तय-लताविशेषः। प्रज्ञा० ३८२।

अइमुत्ते-अतिमुक्तः, महावीरस्वामिनः कुमारश्रमणः शिष्यः। भग० २१९। अन्तकृद्दशानां षष्ठवर्गस्य पञ्चदशाध्ययनम्। अन्त० १८।

अइयंचिय-अतिक्रम्य। ठाणा० ३००।

अइयारो-अतिचारः, गृहीते आधाकर्मणि दोषविशेषः, यावद्वसति गत्वेर्यापथप्रतिक्रमणाद्युत्तरकालं लम्बनोत्क्षेपः। आव० ५७६। अतिचरणं-चारित्रस्खलनाविशेषः। आव० ७८। अपराधम्। उत्त० २३३।

अइर-अचिरा, शान्तिमाता। आव० १६१।

अइरत्त-अतिरात्रः, अधिकदिनं, दिनवृद्धिः। ठाणा० ३७०।

अइरत्तकंबलसिलाओ-मेरुमस्तकशिला। ठाणा० ८०।

अइरा-अचिरा, शान्तिजिनमाता। आव० १६०। सम० १५२। सम० १५१।

अइरित्तसिज्जआसणिए-अतिरिक्तशय्यासनिकः, चतुर्थमसमाधिस्थानम्। आव० ६५३।

अइरेगो-अतिरेकः, अतिशायिता। जीवा० २७४। अतिशयः। जीवा० २६७।

अइवत्तियं-पातकादतिपातिकां, निर्दोषाम्। आचा० ३०५।

अइवाइज्ज-अतिपातयेत्, व्यथेत। आचा० १२८।

अइवायंमि-अतिपाते। ठाणा० ३२९।

अइवाय-द्वादशशतके प्राणातिपातादिविषयः पञ्चमोद्देशकः। भग० ५५२। अतिपातः, हिंसादिदोषः। ओघ० ३६। वधः। भग० २८९।

अइवालग-अजापालकः, वाचकविशेषः। बृ० तृ० २०आ।

अइवेलं-अतिवेलं, स्वाध्यायादिवेलातिक्रमेण। उत्त० ११०। अतिवेला अन्यसमयातिशायिनी मर्यादा समतारूपा। उत्त० ११०।

अइसंधणपरो-अतिसन्धानपरः, परवञ्चनाप्रवृत्तः। आव० ५८९।

अइसंपओगो-अतिसम्प्रयोगः, गार्ध्यम्। सूत्र० ३२९।

अइसय-अतिशयः, आमर्षौषध्यादिः। सम० १२४। अर्थविशेषः। बृ० प्र० १९२ आ।

अइसुहुमं-अतिसूक्ष्मम्। आव० ५३६।

अइसेस-अतिशयः, अतिशयनं, अवध्यादिप्रत्यक्षं ज्ञानं। ओघ० १४। अतिशयी-अवध्यादिज्ञानयुक्तः। दश० १०३। सूत्रार्थसामाचारीविद्यायोगमंत्रातिशयः। बृ० प्र० २०३ आ।

अइसेसी--अतिशायिनी, स्निग्धमधुरद्रव्याणि। बृ० प्र० २४६ आ।

अइसेसो-अतिशेषः, अतिशायी। जीवा० २७७। शेषाणि-मत्यादिचक्षुर्दर्शनादीनि अतिक्रान्तं-सर्वावबोधादिगुणैर्यत्तदतिशेषमतिशयवत्केवलम्। ठाणा० २१३।

अईइ-अतीति, आगच्छति, प्रविशति। आव० २३२।

अईतेआ-अतितेजाः-चतुर्दशरात्रिनाम। जं० प्र० ४९१।

अईया-अतीताः, अतिक्रान्ताः। आचा० १७८।

अईह-अतियासीः। आव० १७३।

अउअंगाति-अयुतांगानि, संख्याविशेषः। ठाणा० ८६। सूर्य० ९१। भग० ८८८।

अउआति-अयुतानि, संख्याविशेषः। ठाणा० ८६। सूर्य० ९१। भग० ८८८। भग० २९०। भग० २७५।

अउज्झं-अयोध्यम्, अनभिभवनीयम्। जं० प्र० २१२।

अउज्झा-अयोध्यानि, परैर्योद्धुमशक्यानि। प्रज्ञा० ८६।

अउज्झाओ-नगरविशेषः। ठाणा० ८०।

अए-अजः, बर्करः। प्रज्ञा० २५२। उत्त० २७५।

अओज्झा-अयोध्या, राजधानी। जं० प्र० ३५७। अजितस्य प्रथमपारणकस्थानम्, आव० १४६।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अओमुहदीवे-अंतरद्वीपविशेषः। ठाणा० २२६।
अओमुहो-अयोमुखः, अन्तरद्वीपविशेषः। जीवा० १४४।
अकंटए-अकण्टकः, कण्टकरहितः। जीवा० १८८।
अकंठगमणाई-अकण्ठगमनादि,कण्ठेन भक्तकवलो नोपक्रामति। ओघ० ८०।
अकंडूयते-अकण्डूयकः, न कण्डूयत इति। ठाणा० २९९।
अकंतं-सरोषभणितम्। नि० चू० प्र० २७८ अ।
अकंतत्ता-अकान्तता, अकमनीयता। भग० २३। असुन्दरता। भग० २५३। अकान्तता। प्रज्ञा० ५०४।
अकंतदुक्खी-अनभिप्रेताशातावेदनीया। आचा० ४३०।
अकंता-अकान्ताः, अकमनीया। भग० ७२।
अकंपिए-अकम्पितः, अष्टमगणधरः। आव० २४०।
अकक्कस-अकर्कशम्, सुखम्। भग० ३०५।
अकज्जं-अकार्यम्-मैथुनासेवालक्षणम्। व्य० प्र० २०५ आ।
अकडजोगी-यतनया योगमकृतवान्। व्य० प्र० २५१।
अकडसामायारी-सामायारिं जो न करेति सो अकडसामायारी। नि० चू० तृ० ८१अ।
अकण्णा-अकर्णनामा अन्तरद्वीपाः। प्रज्ञा० ५०।
अकण्णो-अकर्णः, अन्तरद्वीपविशेषः। जीवा० १४४।
अकति-असङ्ख्याता अनन्ता वा। ठाणा० १०५।
अकतिसञ्चिता-असङ्ख्याता, एकैकसमये उत्पन्नाः सन्तस्तथैव सञ्चितास्ते। ठाणा० १०५।
अकतिसंचया-कतिसंचिता न ये। भग० ७९६।
अकन्नदीवे-अकर्णद्वीपः, अन्तरद्वीपविशेषः। ठाणा० २२६।
अकप्प-अकल्पः, शिक्षकस्थापनाकल्पादिः। दश० १९६।
अकप्पए-अकल्पिके, वसतिपालके। व्य० द्वि० १३ अ।
अकप्पट्ठवणा-अयोग्यानीतपिंडवर्जनम्। नि० चू० प्र० २४२ अ।
अकप्पणारुमणा-अकल्पनारुग्मनसः। मरण०।
अकप्पे-सामायिकसंयमः, अस्थितकल्पश्चतुर्यामिधर्मो वा। बृ० तृ० १२५ अ।
अकप्पो-अकल्पः, आव० ७७८। अकृत्यम्। आव० ७६१।
अकब्बरसुरत्राण-मोगलनृपः। जं० प्र० ८८।
अकम्मंसे-अकर्मांशः। आव० ६१५।

अकम्मंसो-अकर्मांशः, अंशाः-कर्मणोऽवयवास्तेऽपगता यस्य सः। उत्त० २५७।
अकम्म-आक्रम्य, बलात्कारेण। आव० ६६२।
अकम्मगं-अकर्मकं, अविद्यमानदुश्चेष्टितं। सम० ५२।
अकम्मभूमगा-अकर्मभूमकाः, अकर्मा-यथोक्तकर्मविकला भूमिर्येषां ते अकर्मभूमाः, ते एव अकर्मभूमकाः। प्रज्ञा० ५०। सम० १३५।
अकम्मभूमी-अकर्मभूमिः, हैमवतादिकभोगभूमिः। प्रश्न० ९६। ठाणा० ११५।
अकम्मयं-अकर्मकं, अप्रमादम्। सूत्र० १६९। उत्त०७००।
अकम्मयारो-अकर्मकारी, स्वभूमिकानुचितकर्मकारी। प्रश्न० ३६।
अकम्मा-अकर्मा, न विद्यते कर्माऽस्येति, वीर्यान्तरायक्षयजनितं जीवस्य सहजं वीर्यम्। सूत्र० १६८।
अकम्हा-अकस्मात्, बाह्यनिमित्तानपेक्षम्। आव० ६४६। अकस्मात् क्रिया, अकस्माद्यत्करणम्, क्रियायाश्चतुर्थो भेदः। आव० ६४८।
अकम्हादंडे-अकस्माद्दण्डः। सम० २५।
अकम्हाभयं-अकस्माद्भयम्, बाह्यनिमित्तानपेक्षं गृहादिष्वेवावस्थितस्य रात्र्यादौ यद्भयम्। आव० ६४६। सम० १३। ठाणा० ३८९।
अकयकरणो-अकृतकरणः, अनभ्यस्तक्रियः। आव० ७०३। अकृतकरणः। आव० ३४४।
अकयकिरिए-अकृतयोगोद्वहनः। नि० चू० प्र० २९२ अ।
अकयपरलोयसंबलो-अकृतपरलोकशम्बलः। आव० ३६७।
अकयन्नुया-अकृतज्ञता। आउ०।
अकयपुण्णे-अकृतपुण्यः। उत्त० ३२९।
अकयपुण्णो-अकृतपुण्यः, अविहिताश्रवनिरोधलक्षणपवित्रानुष्ठानाः। प्रज्ञा० ९८।
अकयमुहो-अकृताक्षरसंस्कारमुखः। बृ० तृ० २५ आ।
अकयरूवो-वक्कलपिंडठितो। नि० चू० द्वि० ८७ अ।
अकयागम-अकृतकर्मोदयः। आव० २७४।
अकरंडुअं-अकरण्डुकम्, अनुपलक्ष्यमाणपृष्ठवंशास्थिकम्। औप० १९।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अकरंडुयं-अविद्यमानपृष्ठिपार्श्वास्थिकम् । प्रश्न० ८१ ।
अकरंडुय-अकरण्डुकः, अनुपलक्ष्यपृष्ठास्थिकः । प्रश्न०८४।
अकरणं-मैथुनम् । व्य० प्र० २५१ अ ।
अकरण-अलेश्यस्य केवलिनः कृत्स्नयोर्ज्ञेयदृश्ययोरर्थयोः केवलं ज्ञानं दर्शनं चोपयुञ्जानस्य योऽसावपरिस्पन्दोऽप्रतिघो वीर्यविशेषः सः । ठाणा० १०६ । भग० ५७ ।
अकरणतयैव-अक्रिययैव संयमानुष्ठानमन्तरेण । आचा० १४९ ।
अकरणयाइ-अकरणेन, अपूर्वानुपार्जनेन । उत्त० ५८७ ।
अकरणयाए-अव्यापारतया । आचा० ३०५ ।
अकरणिज्जं-अकृत्यम्, असंयमं मन्दधर्माणः । आव० ५३६ ।
अकरणिज्जो-अकरणीयः । आव० ७७८ ।
अकरिंतो-अकुर्वन् । आव० ५०९ ।
अकलिज्जंता-अज्ञायमाना । ओघ० १६० ।
अकलुसे-अकलुषः, द्वेषवर्जितं । अन्त० २२ ।
अकलेवरसेणि-अकडेवरश्रेणिः, कलेवरं-शरीरं अविद्यमानं कडेवरमेषामकडेवराः सिद्धास्तेषां श्रेणिरिव श्रेणिः क्षपकश्रेणि-रिति । उत्त० ३४१ ।
अकल्पम्-(अकप्पं)-असमर्थं । आचा० १०६ ।
अकविल-अकपिला, श्यामा । जं० प्र० ११५ ।
अकसिणपवत्तगो-अकृत्स्नप्रवर्त्तकः । आव० ४९३ ।
अकसिणा-आचारप्रकल्पस्य अष्टाविंशतितमो भेदः । सम० ४७ । अकृत्स्ना-यत्र किंचित् झोष्यते । व्य० प्र० १२४ आ ।
अकसिणो-अकृत्स्नः । विशे० ४२४ ।
अकस्मात्-(आकस्मिकः), निर्युक्तिकः । आचा० २६६ ।
अकस्मात्-कस्मादिति हेतुर्न कस्माद् अकस्मात् । आचा० २६७ ।
अकस्माद्दण्डः-अनभिसन्धिना दण्डः । प्रश्न० १४३ ।
अकस्माद्भयम्-बाह्यनिमित्तानपेक्षम् । प्रश्न० १४३ । बाह्यनिमित्तमन्तरेणाहेतुकं भयम् । आव० ४७२ ।
अकहा-अकथा, मिथ्यात्वमोहनीयं कर्म वेदयन् विपाकेन यां काञ्चिदज्ञानी कथां कथयति सा । दश० ११५ ।
अकांडे-अकाले । बृ० प्र० १५५ अ ।
अकाऊण-अकृत्वा, अभणित्वा । ओघ० १५५ ।
अकाम-अकामः, मोक्षः । उत्त० ४१४ । अकामः, उप-रोधशीलता । दश० १७७ । निरभिप्रायः । भग० ३६ । निर्जराद्यनभिलाषी । भग० ३६ ।
अकामकामे-अकामकामः, कामान्-इच्छाकाममदनकाम-भेदान् कामयते-प्रार्थयते यः स कामकामो न तथा अकामकामः, अकामो-मोक्षस्तत्र सकलाभिलाषनिवृत्तेस्तं कामयते यः स तथा । उत्त० ४१४ ।
अकामणिज्जराए-अकामनिर्जरया । आव० ६५ ।
अकामतण्हा-अकामतृष्णा । औप० ८६ ।
अकामनिकरणं-अकामनिकरणम्, अकामो वेदनानुभावेऽनिच्छाऽमनस्कत्वात् स एव निकरणं-कारणं यत्र तदकाम-निकरणं-अज्ञानप्रत्ययं, अनिच्छाप्रत्ययम् । भग० ३१२ ।
अकामनिर्जरा - पराधीनतयाऽनुरोधाच्चाकुशलवृत्तिराहारा-दिनिरोधश्च । तत्त्वा० ६-२० ।
अकाममरणम्-बालमरणाद्यमप्रशस्तम् । उत्त० २४१ । अकाममरणं-उत्तराध्ययनेषु पञ्चमाध्ययनम् । उत्त० ९ ।
अकाममरणिज्जं-उत्तराध्ययनेषु पञ्चमाध्ययनम् । सम० ६४।
अकारए-अकारकः, अरोचकः । विपा० ४० ।
अकारकम्-अपथ्यम् । ओघ० १३९ । ओघ० १८३ । शीतलम् । ओघ० १७६ ।
अकारिंजणो-अकारिजनः । आव० १७६ ।
अकारिणो-अकारिणः आमोषाद्यविधायिनः । उत्त० ३१३।
अकाल-अवर्षा । ठाणा० ३९९ ।
अकालपडिबोधी-रातो चेव पडिबुज्झंति । नि० चू० तृ० ४३ अ । एषां न कश्चिद्पर्यटनकालः । आचा० ३७७।
अकालपरिभोगी-रातो सव्वादरेण भुजंति । नि० चू० तृ० ४३ अ । एषां न कश्चिदभोजनकालः । आचा० ३७७।
अकालपरिहीणं-अविलम्बेन । भग० ७३८ । निर्विलम्बम् । जं० प्र० ३९७ ।
अकालसज्झायकारए-अकालस्वाध्यायकारकं । सम० ३७।
अकालसज्झायकारी-अकालस्वाध्यायकारी, यः कालिक-श्रुतमुद्घाटपौरुष्यां पठति, चतुर्दशमसमाधिस्थानम् । आव० ६५४ । अकालस्वाध्यायकरणम्, पञ्चदशमसमाधिस्थानम् । प्रश्न० १४४ ।
अकालिचरिया-अकालचर्या, रात्रौ पथि गमनम् । व्य० प्र० १९ आ ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अकालियं-आकालिकं, यथास्थित्यायुरुपरमादर्वागेव। उत्त० ६३०।

अकाले-अकालः, मध्याह्नादिः। विपा० ६९।

अकाहलं-अमन्मनाक्षरम्। प्रश्न० १२०।

अकिंचणे-अकिञ्चनः, न विद्यते किमप्यस्येत्यकिञ्चनः, निष्परिग्रहः। आचा० ४०३। अकिञ्चनं-निष्परिग्रहत्वम्। उत्त० ५९०।

अकिच्चं-अकृत्यम्, अकरणीयम्, प्राणवधस्य पञ्चमः पर्यायः। प्रश्न० ५। मेहुणं। नि० चू० प्र० ७९ आ। अनिर्वर्त्तनीयम्। भग० १०४।

अकिट्ठे-अकृष्टः, अक्लिष्टो वा, अविलिखितः, अबाधितो निर्वेदनमिति वा। भग० १८०।

अकित्तिम-अकृत्रिम, क्रमाद्रत्नखानिसम्भूतानुप्तसम्भूतैरुपशोभितः। जं० प्र० ७०।

अकित्ती-अवर्णवादभाषणम्। बृ० तृ० ९९ आ।

अकिरियं-अक्रिया, नास्तिवादः। आव० ७६२।

अकिरियवादी-अक्रियावादी, क्रियां-जीवादिपदार्थो नास्तीत्यादिकां वदितुं शीलं यस्य सः। सूत्र० २०८।

अकिरिया-अक्रिया। आव० ३६८। योगनिरोधः। भग० १४१। अक्रिया। आव० ४१२। अवर्णः। आव० ४२९। आव० ४१२।

अकिरिया-दुष्टक्रिया मिथ्यात्वाद्युपहतस्यामोक्षसाधकमनुष्ठानम्। ठाणा० १५३। योगनिरोधः। ठाणा० १५७। योगनिरोधलक्षणा नास्तिकत्वं वा। सम० ५। अविद्यमानक्रियं, व्युपरतक्रियाख्यं शुक्लध्यानचतुर्थभेदः। उत्त० ५८६।

अकिरियाओ-अकप्पपडिसेवणं। नि० चू० तृ० २०अ।

अकिरियावाइ-क्रियाभाववादिनः, आत्माभाववादिनः, चित्तशुद्धिवादिनः। भग० ९४४।

अकिरियावाती-एकात्मकवाद्यादयोऽष्टौ। ठाणा० ४२५। नास्तिकाः। ठाणा० २६८।

अकीयकडं-अक्रीतकृतः, न क्रीयते-न क्रयेण साध्वर्थं कृतः। प्रश्न० १०८।

अकित्ती-अकीर्त्तिः, एकदिग्गामिन्यप्रसिद्धिः। ठाणा० ४१८। भग० ४९०।

अकुऊहले-अकुतूहलः, कुहकादिष्वकौतुकवान्। उत्त० ६५१।

अकुओभय-अकुतोभयः, संयमः, अप्कायलोको वा। आचा० ४४।

अकुक्कुए-अकुक्कुचः, अशिष्टचेष्टारहितः। उत्त० १०९। अकुत्कुचः, कुन्थ्वादिविराधनाभयात्कर्मबन्धहेतुत्वेन कुत्सितं हस्तपादादिभिरस्पन्दमानः। उत्त० १०९। अकौत्कुचः-मुखविकारादिरहितः। आचा० ३१५।

अकुक्कुयं-अकुक्कुचं, अस्पन्दमानम्। उत्त० ५८।

अकुक्कुय-कुत्सितं कूजति-पीडितः सन्नाक्रन्दति कुकूजो न तथेत्यकुकूजः। उत्त० ४८६।

अकुचो-निश्चलः। नि० चू० प्र० १६७ अ।

अकुट्टिले-अहिहे। दश० चू० १५१।

अकुट्ठो-(आकुष्टः)। जारजातोतिवयणेण। नि०। चू० प्र० २९६ अ।

अकुसल-अकुशलः, अनिपुणः स्थूलमतिश्वरकादिः। दश० ६४।

अकुसलो-अप्रधानः बन्धाय संसाराय। नि० चू० प्र० २५ आ।

अकुहए-कुहगं-इंदजालादी तं न करेइत्ति वाइत्तादि वा। दश० चू० १४०।

अकेल्ला-राजस्तोत्रपाठकाः। नि० चू प्र० २७७ अ।

अकोवणिज्जो-अकप्पो अदूसणिज्जोत्ति वुत्तं भवति। नि० चू० द्वि० १३९ अ।

अकोसापंतं-विकाशीभवत्। औप० २०।

अकोहणे-अक्रोधनः, अपराधिन्यनपराधिनि वा न कथंचित् कुप्यति। उत्त० ३४५।

अकोहे-अक्रोधः, स्वल्पक्रोधेण। जं० प्र० १४८।

अकंडे-अकाले (आउ०)

अकंता-आक्रान्ता। आव० ५०४। अवष्टब्धा। आचा० २५७।

अकंतितो-अडाडाए बला हरंतो। नि० चू० द्वि० ३८ आ।

अकंतिया-न कुतोऽपि बिभ्यति ये स्तेनाः। बृ० द्वि० ११८ अ

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अक्कंते-अचित्तस्य प्रथमो भेदः। ओघ० १३३। आक्रान्ते-पादादिना भूतलादौ यो भवति सः। ठाणा० ३३६।

अक्कंतो-आक्रान्तः। आव० २२७।

अक्कंदणं-आक्रन्दनम्, महता शब्देन विरवणम्। आव० ५८७।

अक्क-(अर्कतूलम्)। नि० चू० द्वि० ६१ अ।

अक्कबोंदी-वल्लीविशेषः। प्रज्ञा० ३३।

अक्कबोंदीणं-वल्लीविशेषः। भग० ८०३।

अक्कम-आक्रमः, तदुच्छेद इतियावत्। आव० ६०।

अक्कमणं-आक्रमणम्। विशे० ४८६। आक्रमणं-पादेन पीडनं। आव० ५७३।

अक्कमइ-आक्रामति, अवष्टभ्नाति। उत्त० १३४।

अक्कमित्ता-हत्वा। भग० ६३७। आक्रम्य-मिश्रीकृत्य। ओघ० १९५।

अक्किट्ठा-अक्लिष्टाः, स्वशरीरोत्थक्लेशवर्जिताः। जं० प्र० १२६।

अक्किट्ठो-अक्लिष्टः, स्वशरीरोत्थक्लेशरहितः। जीवा० २८४।

अक्कोडियाओ-प्रवेशिताः। बृ० प्र० ३० आ।

अक्कोस-आक्रोशः, अनिष्टवचनम्, द्वादशः परीषहः। आव० ६५६। यकारादिभिः। दश० २६७। दुर्वचन-परीषहः। सम० ४१।

अक्कोसेज्ज-आक्रोशेत्, तिरस्कुर्यात्। उत्त० १११।

अक्कोसो-आक्रोशः, असभ्यभाषणम्। उत्त० ६२। आक्रोशनं, असभ्यभाषात्मकः। उत्त० ८३। म्रियस्वेत्यादि वचनम्। प्रश्न० १६०।

अक्खं-अक्षम्, चन्दनकम्। आव० ७६७। अक्षाटकम्। आव० ३४४। वराटकाः। आव० ८८। आत्मा। ठाणा० ४९। इन्द्रियम्। प्रज्ञा० ८८। अश्नीते नवनीतादिकमित्यक्षो-धूः। उत्त० २४७।

अक्ख-अक्षः, अक्षोपाङ्गदानवच्चेति साधोरुपमानम्। दश० १८। जीवः इन्द्रियं वा। भग० २२२। संखाणियप्पदोसो अण्णतरं इंदियजायं वा। नि० चू० प्र० २५५ अ। अक्षं-चक्रनाभिक्षेप्यकाष्ठम्। जं० प्र० १७१।

अक्खए-अक्षयम्, अविनाशी। भग० ११९। सदाभावेन, अवयविद्रव्यापेक्षया अक्षतो वा परिपूर्णत्वात्। ठाणा० ३३३।

अक्खओदए-अक्षयोदकः, अक्षयसम्यग्ज्ञानोदकः। अक्षतोदयः, अक्षत उदयः प्रादुर्भावो वा। उत्त० ३५३।

अक्षणिक-(**अक्खणिए**), व्यग्रः। ओघ० १७५।

अक्खणिओ-अक्षणिकः, निर्व्यापारः। दश० चू० ५८।

अक्खति-आख्याति (गणि०)

अक्खपडिय-अक्षपतितः, अक्षपातनिका। आव० ४५३।

अक्खपाडओ-अक्षपाटकः। जीवा० २५७। चतुरस्राकारः पाटकः। जीवा० २२८।

अक्खपाद-हेतुसत्थं। नि० चू० तृ० ३० आ।

अक्खमाते-अक्षमाय-अयुक्तत्वाय। ठाणा० १४९। अनु-चितत्वाय असमर्थत्वाय वा। ठाणा० २९२। असङ्गतत्वाय अक्षान्त्यै वा। ठाणा० ३५८।

अक्खयं-अक्षयम्, साद्यपर्यवसितस्थितिकत्वात् ततो नाश-रहितः, महावीरः। भग० ७। विनाशकारणाभावात्। जीवा० २५६। अक्षयाः, अवयविद्रव्यस्यापरिहाणेः। जं० प्र० २५७। अपुनरावृत्तिकं। सम० १२०।

अनाशं-साद्यपर्यवसितस्थितिकत्वात्, अक्षतं वा परिपूर्ण-त्वात्। सम० ५।

अक्खयणिहि-अक्षयनिधिः, देवभाण्डागारम्। विपा० ७७।

अक्खयणिही-अक्षयनिधिः। आव० ३६०।

अक्खया-अक्षया, अक्षयत्वात्। जीवा० ९९। न विद्यते क्षयो यथोक्तस्वरूपाकारपरिभ्रंशो यस्याः सा। जं० प्र० २७।

अक्खयायारचरित्तो-अक्षताचारचारित्री, अक्षताचार एव चारित्रं तद्वान्। आव० ७६३।

अक्खरं-अक्षरम्, निरुक्तिविधिनार्थकारलोपादक्षरम्, अथवा क्षीयत इति क्षरं न क्षरमक्षरम्, अन्यान्यवर्णसंयोगेऽ-नन्तानर्थान् प्रतिपादयति, न च स्वयं क्षीयते येन तेनाक्षरमिति भावः। विशे० २५५। अविशुद्धनयाभि-प्रायेण सर्वमपि ज्ञानमक्षरम्, तथा सर्वेऽपि भावा अक्ष-रास्तथापि रूढिवशाद्वर्ण एवेहाक्षरं भण्यते। विशे० २५४। 'अक्खरं सो य चेयणाभावो' अक्षरं, क्षर-सञ्चलने, न क्षरति न चलति-अनुपयोगेऽपि न प्रच्यवत इत्यक्षरम्। विशे० २५३। अक्षरम्। आव० ७९३।

अक्खर-अक्षरम्, न क्षरति न विनश्यति। विशे० १११६। अक्षराणां 'स्वृ' शब्दो-पतापयोः अक्षराणां व्यञ्जनानां स्वरणेन संशब्दनेन स्वरा अकारादयः प्रोच्यन्ते,

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अथवा अक्षरस्य चैतन्यस्य स्वरणात् संशब्दनात्स्वराः । विशे० २५५ । न क्षरतीत्यक्षरं, तच्च ज्ञानं चेतनेत्यर्थः । आव० २४ ।

अक्खरडियत्ति-अखरंडितम् । ठाणा० ३८६ ।

अक्खरपुट्ठिया-लिपिविशेषः । प्रज्ञा० ५६ ।

अक्खरसंन्निवाति-अक्षरसंनिपातः, अकारादिसंयोगाः । ठाणा० १७९ ।

अक्खरसमं-तत्र दीर्घे अक्षरे दीर्घः स्वरः क्रियते, ह्रस्वे ह्रस्वः, प्लुते प्लुतः, सानुनासिके सानुनासिकः तदक्षरसमम् । ठाणा० ३९६ ।

अक्खराणि-लिपिज्ञानम् । बृ० द्वि० १६३ अ ।

अक्खवाउ-अक्षपादः । विशे० ६४९ । विशे० ६४८ ।

अक्खसोय-अक्षश्रोतः, चक्रधुरः प्रवेशरन्ध्रम् । भग० ३०९ ।

अक्खा-अक्षाः, चंदनकाः । नि० चू० प्र० १०६ अ । अनुयोगे भङ्गचारणोपकरणम् । बृ० द्वि० २५३ आ । आख्या, शब्दप्रथा । प्रज्ञा० ६०० ।

अक्खाइं-अक्षाणि, इन्द्रियाणि । प्रज्ञा० ६०० ।

अक्खाइ-आख्याति प्रथमतो वाच्यमात्रकथनेन । जं० प्र० ५४० ।

अक्खाइउवक्खाइया-आख्यायिकोपाख्यायिका । सम० ११९ ।

अक्खाइयं-आख्यातिकम्, नामिकादिपंचसु पदेषु चतुर्थं । आव० ३७९ ।

अक्खाइयाणिस्सिया-आख्यायिकानिःसृता, यत्कथास्वसंभाव्याभिधानम् । प्रज्ञा० २५६ ।

अक्खाइया-आख्यायिका । सम० ११९ ।

अक्खाओ-आख्यायिका, कथानका । सम० ११९ ।

अक्खाग-म्लेच्छविशेषः । प्रज्ञा० ५५ ।

अक्खाडए-अक्खाटकः, मल्लयुद्धस्थानम् । पिंड० १२९ ।

अक्खाडगा-आखाटका, प्रेक्षाकारिजनासनभूताः । ठाणा० २३० ।

अक्खाडगे-आखाटकः, प्रेक्षास्थाने आसनविशेषलक्षणः । भग० २७१ ।

अक्खाडगो-चतुरस्रः । ठाणा० १४५ ।

अक्खाणं-आख्यानं, त्वामिमुख्येन वाऽऽदरेण वा । विशे० १३१८ । समवसरणस्य । आव० २६८ ।

अक्खाणग-आख्यानकम् । नि० चू० द्वि ७१ अ ।

अक्खाणयं-आख्यानकं । नि० चू० प्र० ३४६ आ ।

अक्खातित-आख्यायिकानिश्रितं तत्प्रतिबद्धोऽसत्प्रलापः । ठाणा० ४८९ ।

अक्खायं-आख्यातं, सकलजन्तुभाषाभिव्याप्त्या कथितम् । उत्त० ८० ।

अक्खाय-आख्यातम्, केवलज्ञानेनोपलभ्यावेदितम् । दश० १३६ ।

अक्खायगो-आख्यायकः, यः शुभाशुभमाख्याति सः । जीवा० २८१ ।

अक्खायपयं-आख्यातपदम्, साध्यक्रियापदम् । प्रश्न० ११७ ।

अक्खासुयं-आख्याश्रुतम् आख्यानकप्रतिबद्धश्रुतम् । प्रश्न० १०८ ।

अक्खिसंति-आख्यास्यन्ति । नि० चू० प्र० ३५० आ ।

अक्खित्त-आक्षिप्तम्, आवर्जितम् । दश० ११४ ।

अक्खित्तनियंसणा-आक्षिप्तनिवसना, आकृष्टपरिधानवस्त्रा । प्रश्न० ५६ :

अक्खित्ते-ठिता । नि० चू० प्र० १८६ अ ।

अक्खित्तो-आक्षिप्तः । आव० १७५ ।

अक्खिवणं-आक्षेपणम्, चित्तव्यग्रतापादनम् । प्रश्न० ४३ ।

अक्खीण-अक्षीण, अक्षीणायुष्कमप्रासुकम् । भग० ३७२ ।

अक्खीणझंझए-अक्षीणझञ्झः, अक्षीणकलहः । आव० ६६१ ।

अक्खीणमहाणसितो-अक्षीणमहानसिकः । उत्त० ३३२ ।

अक्खीणमहाणसियं-अक्षीणमहानसिकम् । आव० २९१ । ठाणा० ३३२ :

अक्खीणमहाणसी-अक्षीणमहानसी, अत्रुटितभिक्षालब्धभोजनवान् । औप० २८ ।

अक्खुडिय-आस्फालितः, स्खलितः । आव० ५५५ ।

अक्खुंदइ-चक्खिउं मुंचति । नि० चू० द्वि० १२४ अ ।

अक्खुन्नइ-आक्षुण्णत्ति, विलिखति । बृ० द्वि० ६६ अ ।

अक्खुन्ना-अमर्दिताः । बृ० द्वि० ७८ अ ।

अक्खे-अक्षः, शकटावयवविशेषः । भग० २७७ । सम० ९८ । आख्या-प्रसिद्धिः । जं० प्र० ६२ ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अक्खेड़-षण्णवतिरङ्गुलानि एकोऽक्षः। जं० प्र० ९४।

अक्खेव-आक्षेपः, प्रश्नः। भग० ११४। आव० ९७। उत्त० ५२४।

अक्खेवणि-आक्षेपणी, धर्मकथायाः प्रथमो भेदः, आक्षिप्यन्ते मोहात्तत्त्वं प्रत्यनया भव्यप्राणिन इति। दश० ११०। धर्मकथाभेदः। आचा० १४५।

अक्खेवणी-आक्षिप्यते-मोहात् तत्त्वं प्रत्याकृष्यते श्रोताऽनयेत्याक्षेपणी। ठाणा० २१०। आक्षिप्यते-मोहात्तत्त्वं प्रत्याकृष्यते श्रोता यकाभिरिति। औप० ४६।

अक्खेवी-आक्षेपी, आक्षिपति वशीकरणादिना यः स ततो मुष्णाति सः। प्रश्न० ४६।

अक्खेवो-आक्षेपः, आक्षेपणम्, आशङ्का। आव० ३७७। पूर्वपक्षः। बृ० तृ० १२५ अ। परद्रव्यस्य. अधर्मद्वारस्यैकोनविंशतितमं नाम। प्रश्न० ४३।

अक्खो-अक्षः, द्युतपासकः। आव० ५०२। फलविशेषः, अनुत्त० ६।

अक्खोडगा-क्रियाविशेषः। नि० चू० प्र० १८२ अ।

अक्खोडभंगपरिहरणा-आस्फोटकभङ्गपरिहरणा, आस्कोटकानां यो भङ्गस्तस्य प्रतिलेखनादिविधिविराधनापरिहरणा। आव० ५५२।

अक्खोडयं-अक्षोटकम्, अक्षोडवृक्षफलम्। प्रज्ञा० ३६४।

अक्खोभे-अक्षोभः, अन्तकृद्दशानां प्रथमवर्गस्याष्टमाध्ययनम्। अन्त० १। अन्तकृद्दशानां द्वितीयवर्गस्य प्रथमाध्ययनम्। अन्त० ३।

अक्खोलं-फलविशेषः। प्रज्ञा० ३२८।

अक्खोवंगं-चक्रोंजनं। गणि०।

अक्खोवंजण-अक्षोपाञ्जनम्, शकटधूर्म्रक्षणम्। भग० २९४।

अक्रियावादिनः-क्रिया-अस्तीतिरूपा सकलपदार्थसार्थव्यापिनी सैवायथावस्तुविषयतया कुत्सिता, अक्रिया नञः कुत्सार्थत्वात्तामक्रियां वदन्तीत्येवंशीलाः अक्रियावादिनः, यथावस्थितं हि वस्त्वनेकान्तात्मकं तन्नास्त्येकान्तात्मकमेव चास्तीति प्रतिपत्तिमन्त इत्यर्थः। ठाणा० ४२५। (अकिरियावाई)-नियतकृष्णपाक्षिकाः। दशाश्रु० १६।

अक्षः-बिभीतकः। प्रज्ञा० ३१।

अक्षरः-घोलना स्वरविशेषः। जीवा० १९५।

अक्षरकुटी-अक्षरच्छेदेन। विशे० ८३२।

अक्षरकोविदपरिषद्-(विद्वत्परिषद्)। आचा० १४६।

अक्षरश्रुतम्-ज्ञानं इन्द्रियमनोनिमित्तं श्रुतग्रन्थानुसारि तदावरणक्षयोपशमो वा। आव० २४।

अक्षि-नेत्रम्। आचा० ३७।

अक्षीणमहानसीलब्धिः-येनाऽऽनीतं भैक्षं बहुभिरप्यन्यैर्भुक्तं न क्षीयते किन्तु स्वयमेव भुक्तं निष्ठां याति। विशे० ३८५।

अक्षोपाङ्गन्यायः-(अक्खुवंजण)-चक्रोजनं। दश० १८०।

अखंड-अखण्डः, सम्पूर्णावयवः। आव० २३९। अखण्डम्-अस्फुटितम्। दश० १९५।

अखमे-अक्षमा, परकृतापराधस्यासहनं। भग० ५७२।

अखित्तं-इन्द्रकीलादियुतं ग्रामादि। बृ० तृ० ३६ अ।

अखुण्णा-अमर्दिता। नि० चू० प्र० ३३५ अ।

अखेत्तं-जं० छिण्णमंडवं। नि० चू० प्र० ३४१ आ। सचित्तपृथ्व्यादिमदस्थण्डिलम्। बृ० द्वि० १४० आ।

अगंथिमा-कयलआ मरहट्ठविसये फलाण कयलक्कपमाणाओ पेण्डीओ एक्कंमि डाले बहुक्कीओ भवन्ति ताणि फलाणि खंडाखडीकयाणि। नि० चू० तृ० ३९ अ।

अगंधण-अगन्धनः, मानी सर्पः। दश० ३७।

अगंधणा-अगन्धना, सर्पजातिविशेषः। उत्त० ४९५।

अगंधिं-दुर्गन्धि। बृ० तृ० ९९ अ।

अगइचरमे-अगतिचरमः, न गतिचरमः। प्रज्ञा० २४५।

अगड-कूपः। बृ० प्र० १०९ आ। अवटः खड्डा। आव० ६९१। आव० २०४। कूपः। भग० २३८। जं० प्र० १२३।

अगडदत्तो-अगडदत्तः, अमोघरथरथिकपुत्रः। उत्त० २१३। रक्षकविशेषः। व्य० द्वि० १७० आ।

अगडमहेसु-कूपमहेषु। आचा० ३२८।

अगडाति-अवटा-कूपाः। ठाणा० ८६।

अगडेसु-अवटेषु, कूपेषु। प्रज्ञा० ७२।

अगडो-कूपः। नि० चू० प्र० ४३ अ। अवटः, कूपः। प्रज्ञा० २६७।

अगणि-अग्निः, इन्धनस्य प्लोषक्रियाविशिष्टरूपस्तथा विद्युदुल्काशनिसङ्घर्षसमुत्थितः सूर्यमणिसंसृतादिरूपश्च। आचा० ४९। आव० ६२१। अयःपिण्डानुगतः। दश० २२८। दश० १५४। अग्निभयात्-प्रदीपनभयात्। ओघ० ११८।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अगणिज्झामिय–अग्निध्यामितम्, वह्निना ध्यामितं, श्यामीकृतम्। भग० २१३।

अगणि-झूसिए–सेवितः, क्षपितः। भग० ६८३।

अगणिज्झूसिय–अग्निना शोषितं, पूर्वस्वभावक्षपणात्, अग्निना सेवितं वा। भग० २१३।

अगणिपरिणामिय–अग्निपरिणामितम्, सञ्जाताग्निपरिणामम्। भग० २१३।

अगणी–अग्निः। ओघ० १५६। चतुर्दशशतके पञ्चमोद्देशकः। भग० ६३०।

अगतं–नकुलाजादि। नि० चू० प्र० ७६ अ।

अगतो–अगदः, औषधिः। आव० ८३५।

अगत्थिओ–वृक्षविशेषः। अनुत्त० ५।

अगत्थिगुम्मा–अगस्त्यगुल्माः। जं० प्र० ९८।

अगत्थी–अगस्तिः,ग्रहविशेषः। जं० प्र० ५३५। ठाण० ७९।

अगदो–अणेगदव्वेहि। नि० चू० द्वि० १८ आ।

अगमा–वृक्षाः। बृ० द्वि० १८३ आ। नि० चू० प्र० १५२ आ, १८३ अ।

अगमेत्त–ज्ञात्वा, आज्ञापयेदात्मानमनासेवनयेति। आचा० २१९।

अगम्मगामी–अगम्यगामी, भगिन्याद्यभिगन्ता। प्रश्न० ३६।

अगर–अगुरुः–दारुविशेषः। प्रश्न० १६२।

अगरला–सुविभक्ताक्षरता। औप० ७८।

अगरिहिअं–अगर्हणीयम्, सामायिकनवमपर्यायः। आव० ४७४।

अगलदत्तो–अगडदत्तः,। उत्त० २१५।

अगहणे–अग्रहणे–अकरणे। ओघ० १४९।

अगा–वृक्षाः। नि० चू० तृ० १४० अ।

अगामितं–अगामिकं, अकामिक–अनभिलषणीय। ठाणा० ३१४।

अगामियं–अगामिकां, अकामिकां वा–अनभिलाषविषयभूताम्। भग० ६७२।

अगारं–अगैः कृतं गृहम्। नि० चू० तृ० १४० अ। गेहम्। प्रश्न० ८। गृहम्। आव० ३२९। अगारः, गृहस्थः। आव० ३२९।

अगार–अगारम्, गृहम्। दश० ६२।

अगारट्ठिय–अगारस्थितभाषा–गृहस्थभाषा। व्य० प्र० ५४ आ।

अगारधम्मं–अगारधर्मम्, गृहाचारं गार्हस्थ्यम्। उत्त० ५७८।

अगारबंधणं–गृहपाशं पुत्रकलत्रधनधान्यादिरूपम्। आचा० ४२९।

अगारत्थेभ्यः–(गारत्थेहिं),अनुमतिवर्जसर्वोत्तमदेशविरतिप्राप्तेभ्यः। उत्त० २५०।

अगार–अगाराः, गृहिणः। ठाणा० ५३।

अगाराओ–गृहवासात्। जं० प्र० १४५।

अगारिसामाइयङ्गाइं–अगारिणो–गृहिणः सामायिकं-सम्यक्त्वश्रुतदेशविरतिरूपं तस्याङ्गानि–निःशङ्कताकालाध्ययनाणुव्रतादिरूपाणि अगारिसामायिकाङ्गानि। उत्त० २५१।

अगारी–अगारी, क्षत्रियादिकः। सूत्र० १४३। गृही, असंयतः। ठाणा० १८१। जं० प्र० १४५।

अगारो–अगारः, गृहस्थस्तस्येदमगारिकं, देशचारित्रसामायिकं देशविरतिसामायिकम्। विशे० १०६३।

अगालिणो–अगारिणः। बृ० द्वि० २८२ अ।

अगाहा–अगाधा, अपरिमितजला। आव० ८१९। प्रायोगंभीरम्। दश० २२०।

अगिण्हियव्वं–अग्रहीतव्यम्, अनुपादेयं, हेयम्। दश० ८०।

अगिला–अग्लानिः। नि० चू० प्र० १७ आ। अग्लानः–उचितकर्तव्यसहिष्णुः। आचा० २८१।

अगिलाए–अग्लान्या, अखिन्नतया बहुमानेनेत्यर्थः। ठाणा० २९९। विशे० ८७५।

अगिलायउ–अग्लान्यैव, शरीरश्रममविचिन्त्यैव। उत्त० ५३६।

अगीयत्थं–अपरीणामग, अतिपरिणामगाय। नि० चू० प्र० ४५ आ।

अगीयत्थत्त–अगीतार्थत्वम्। आव० ५२।

अगीयत्थो–जेण आवस्सगादीयाण अत्थो ण सुतो। नि० चू० तृ० २५ अ।

अगुण–अगुणः, अविद्यमानगुणः। दश० २६३।

अगुणगुणे–वक्रता। आचा० ८६।

अगुणरिणं–अगुणा एव अणंतगुणाणं अणंति वा रिणंति वा एगट्ठा तं च। दश० चू० ८९।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अगुणा–अगुणाः, मिथ्यात्वादयो दोषाः। उत्त० ४३१।

अगुत्ती–अगुप्तिः, इच्छाया अगोपनम्। परिग्रहस्य त्रयोविंशतितमं नाम। प्रश्न० ९२।

अगुरु–अगुरुः, सुगन्धिद्रव्यः। आव० १०१। काष्ठविशेषः। जीवा० १३६।

अगुरुलहु–अगुरुकलघुकम्, अत्यन्तसूक्ष्मं भाषामनःकर्मद्रव्यादि। ठाणा० ४७५।

अगुरुलघु–यदुदयात् प्राणिनां शरीराणि न गुरूणि नापि लघूनि तत्। प्रज्ञा० ४७३। सूक्ष्मपुद्गलद्रव्याणि। जं० प्र० १३०।

अगुरुलहुफासपरिणामे–स्पर्शविशेषः। सम० ४१।

अगेहि–अगृद्धिः–भोजनादिषु परिभोगकाले अनासक्तिः। भग० ९७।

अगो–अगः, विपाककालेऽपि जीवविपाकितया शरीरपुद्गलादिषु बहिःप्रवृत्तिरहितः, अनन्तानुबन्ध्यादिः। उत्त ०१९।

अगाधे–(गाधे), पदप्रचारालङ्घनीये। विशे० ५७६।

अग्गं–अग्रम्, अपरिभुक्तम्। जीवा० २५४। अग्र्यम्, प्रधानम्। प्रश्न० १३६। अन्तः। भग० ३५। मूर्धा। प्रज्ञा० १०८। परिणामः। सूर्य० २८०। आलम्बनम्, आव०। २६५। परिमाणम्। भग० ३५। संयमतपसी मोक्षो वा। आचा० १६०। भवोपग्राहिकर्मचतुष्टयं। आचा० १६०। प्रमाणम्। ठाणा० ४६२। कोटिः। उत्त० २८३। अग्रं, वरं प्रधानं अहवा जं पढमम्। नि० चू० प्र० १४२ अ।

अग्ग–निर्वाणस्थानम्। आव० १४८। द्रव्यावगाहनाद्यग्रेषु। आचा० ३१८।

अग्गकूरमंडी–अग्रकूरमण्डी, ओदनस्योपरिभागः। आव० ५७५।

अग्गकोडीणं–अग्रकोटयः, प्रकृष्टा विभागाः। जं० प्र० ९५।

अग्गजायाणि–अग्रजातानि, वनस्पतिविशेषः। आचा० ३४९।

अग्गजिब्भा–अग्रजिह्वा, जिह्वाग्रं। ठाणा० ३९५।

अग्गतावसगोत्ते–अग्रतापसगोत्रम्। सूर्य० १५०।

अग्गपलंबं–आम्रातकफलं। बृ० प्र० १४३ आ। तलादिप्रलंबा। नि० चू० द्वि० १२४ आ।

अग्गपिंडो–जइ दिणे २ दाहिसि, अग्गपिंडो अग्गकूरो। नि० चू० द्वि० ९० आ। अग्रपिण्डम्–निष्पन्नस्य शाल्योदनादेराहारस्य देवताद्यर्थं स्तोकस्तोकोद्धारं। आचा० ३३६। काकपिण्ड्यां। आचा० ३४०। शाल्योदनादेः प्रथममुद्धृत्य भिक्षार्थं व्यवस्थाप्यते। आचा० ३२६। अप्रवृत्ते परिवेषणे आदावेव यो गृह्यते। ठाणा० ५१५।

अग्गबीए–अग्रबीजाः, अग्रे बीजं येषामुत्पद्यते ते तलताली–सहकारादयः शाल्यादयो वा, अग्राण्येवोत्पत्तौ कारणतां प्रतिपद्यन्ते येषां कोरण्टादीनां ते वा। सूत्र० ३५०।

अग्गबीय–अग्रबीजाः, कोरण्टकादयः। दश० १३९। आचा० ५८। व्रीह्यादयः। ठाणा १८६। जपाकुसुमादि। आचा० ३४९।

अग्गभावे–अग्रभावम्, धनिष्ठा गोत्रम्। जं० प्र० ५००।

अग्गमहिसी–अग्रमहिषी, पट्टराज्ञी। जीवा० १६२। ठाणा० ११७।

अग्गरसो–अग्र्यः रसश्च, प्रधानो मधुरादिकश्च, अग्र्यो रसः शृङ्गारादिकः। उत्त० ४०५।

अग्गल–अर्गलम्, गोपुरकपाटादिसम्बन्धि। दश० १८४।

अग्गल–अर्गलः, षडशीतितमग्रहनाम। जं० प्र० ५३५।

अग्गलपासाया–अर्गलाप्रासादाः, यत्रार्गला नियम्यन्ते। जं० प्र० ४८। जीवा० २०४।

अग्गला–गोवाडादीहारेसु भवति। दश० चू० ८५। अर्गला, प्रतीता। जीवा० २०४। जीवा० ३५९। अधिकं। उत्त० ७, ६६०।

अग्गलापासाय–अर्गलाप्रासादः, प्रासादे यत्रार्गला प्रविशति सः। जीवा० ३५९।

अग्गवपूरओ–परिधानविशेषः। बृ० तृ० १०२ अ।

अग्गविडवं–अग्रविटपम्, शाखामध्यभागाग्र्यं, विस्ताराग्रं वा। प्रश्न० ९२।

अग्रशिरः–(अग्गसिरा), उष्णीषलक्षणम्। जं० प्र० ११३।

अग्गसिंगं–अग्रशृङ्गम्। आव० १७४।

अग्गहणं–अनादरः। ओघ० ९४। बृ० प्र० २४५ अ।

अग्गहत्था–अग्रहस्ता, बाह्वोरग्रभूताः शयाः। अनुत्त० ६। अग्रहस्तौ, भुजौ। प्रज्ञा० ९१।

अग्गहत्थो–अग्रहस्तः, बाह्वग्रभागवर्ती हस्तः। जीवा० २७५।

अग्गाइं–अग्र्याणि, सद्यस्कानि। जं० प्र० २१८।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अग्गासणे कूरं-अग्रासनम्, प्रतिगृहं सदक्षिणं भोजनम्। आव० ६७९।

अग्गाहारो-अग्रासनम्। आव० ३००।

अग्गिंतेण-अग्न्यन्तेन, अग्निमार्गेण। आव० ७१।

अग्गि-तीर्थकरविशेषशिबिका। सम० १५१।

अग्गिउत्तं-ऐरवतावसर्पिणीतीर्थकरः। सम० १५३।

अग्गिओ-अग्निकः, उत्सन्नवंशजो दारकः। आव० ३९१।

अग्गिकुमारा-अग्निकुमाराः, सोमस्याज्ञोपपातवचननिर्देशवर्तिनो देवाः। भग० १९५। भवनपतिभेदविशेषः। प्रज्ञा० ६९।

अग्गिकुमारीओ-अग्निकुमार्यः, सोमस्याज्ञोपपातवचननिर्देशवर्तिन्यो देव्यः। भग० १९५।

अग्गिघरं-अग्निगृहम्। आव० २९५।

अग्गिच्चा-कौशिकगोत्रभेदः। ठाणा० ३९०। सुप्रतिष्ठाभविमानवासी अष्टमो लोकान्तिकदेवः। भग० २७१। ठाणा० ४३२।

अग्गिच्चाभे-कृष्णराज्यवकाशान्तरे लोकान्तिकविमानम्। ठाणा० ४३२। सम० १४।

अग्गिच्चो-अग्निः, मरुत्। आव० १३५।

अग्गिज्जोओ-अग्निद्योतः, पुष्पमित्रजीवः। आव० १७१।

अग्गितरोगी-अग्निकरोगी। आव० २७४।

अग्गिभीरु-अग्निभीरुः, प्रद्योतस्य रथः, द्वितीयं रत्नम्। आव० ६७३।

अग्गिभूई-अग्निभूतिः, अग्निद्योतजीवः। आव० १७२। द्वितीयगणधरः। आव० २४०। श्रीवीरस्य द्वितीयगणधरः। भग० १५३। सम ८४।

अग्गिमाणव-अग्निमानवः, उत्तरनिकाये पञ्चम इन्द्रः। भग० १५७।

अग्गिमाणवे-अग्निमाणवः, उत्तरदिग्वर्तिनामग्निकुमाराणामधिपतिः। प्रज्ञा० ९४। ठाणा० ८४। जीवा० १७०।

अग्गिमेह-अग्निमेघाः, अग्निवद्दाहकारिजला मेघाः। भग० ३०६।

अग्गिमो-प्रथमः। ओघ० ३३।

अग्गिय-व्याधिविशेषः। नि० चू० द्वि० ६० अ।

अग्गियए-अग्निः, तितिक्षोदाहरणे प्रथमो दासचेटः। आव० ७०२। अग्निकः, भस्मकाभिधानो वायुविकारः। विपा० ४२।

अग्गियओ-अग्निः, दासचेटः। आव० ३४३।

अग्गियतो-अग्निकः, इन्द्रदत्तराजस्य दासचेटः। उत्त० १४८।

अग्गिल्लए-ग्रहविशेषः। ठाणा० ७९।

अग्गिवेससगोते-कृत्तिकानक्षत्रनाम। सूर्य० १५०।

अग्गिवेसाणं-अग्निवेशस्यापत्यं वृद्धं अग्निवेश्यो 'गर्गादिर्य'-त्रिति यञ् प्रत्ययः तस्याप्यपत्यमाग्निवेश्यायनः। नंदी० ४८।

अग्गिवेसायणे-गोशालनिशाचरः। भग० ६५९।

अग्गिवेसे-अग्निवेश्यः, शास्त्रीयचतुर्दशदिवसनाम। सूर्य० १४७। द्वाविंशतिमुहूर्तनाम। सूर्य० १४६। जं० प्र० ४९१। अग्निवेश्म-शास्त्रीयचतुर्दशदिवसनाम। जं० प्र० ४९०। अग्निवेश्यं-कृत्तिकागोत्रम्। जं० प्र० ५००।

अग्गिसिहा-अग्निशिखम्, वनविशेषः। दश० १०३।

अग्गिसिहे-अग्निसिंहः, दत्तवासुदेवपिता। आव० १६३।

अग्गिसिहो-विष्णुविशेषपिता। सम० १५२।

अग्गिसीहे-अग्निसिंहः, दक्षिणदिग्वर्तिनामग्निकुमाराणामधिपतिः। जीवा० १७०। ठाणा० ८४। प्रज्ञा० ९४। पञ्चमो दक्षिणनिकायेन्द्रः। भग० १५७।

अग्गिसेणं-ऐरवतावसर्पिणीतीर्थकरः। सम० १५३।

अग्गिहोत्त-अग्निहोत्रः, अग्निकारिका। उत्त० ५२५।

अग्गिहोत्तसाला-अग्निहोत्रशाला। आव० २२५।

अग्गी-अग्निः, ग्रहविशेषः। जं० प्र० ५३५। वह्निः। आचा० ३३। आव० २७३।

अग्गीसेणं-ऐरवतावसर्पिणीतीर्थकरः। सम० १५३।

अग्गुज्जाणं-अग्रोद्यानम्, अग्न्युद्यानम्। आव० १९०।

अग्गो-दसिकापर्यन्ते। ओघ० २१४।

अग्गेई-आग्नेयी, पूर्वदक्षिणमध्यवर्तिदिक्। आव० २१५।

अग्गेज्ज-आग्नेयः, मण्डलकोणः। सूर्य० २२।

अग्गेणियं-द्वितीयपूर्वम्। सम० २६।

अग्गेणीयं-अग्रायणीयम्, द्वितीयपूर्वनाम। ठाणा० १९९।

अग्गेया-वत्सगोत्रान्तर्गतं गोत्रम्। ठाणा० ३९०।

अग्गेयी-अग्निकोणः। भग० ४९३। ठाणा० १३३।

अग्गोवरयंकरेति। नि० चू० द्वि० ३५ अ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अग्गोदयं-अग्रोदकम् ; देशोनयोजनार्धजलादुपरि वर्द्धमानं जलम्। जीवा० ३०९। षोडशसहस्रोच्छ्रिताया वेलाया यदुपरि गव्यूतद्वयमानं वृद्धिहानिस्वभावं तदग्रोदकम्। सम० ७५।

अग्घं-अर्घम्। आव० ३००। महार्घ्यम्। आव० ८२७। आव० २९५। अर्घ्यम्-मूल्यम्। आव० ८२६।

अग्घंति-अर्घन्ति, महार्घन्ति। आव० ८२९।

अग्घविए-अर्घितम्, कृतमूल्यम्। दश० ६१।

अग्घाडग-गुच्छाविशेषः। प्रज्ञा० ३२।

अग्घाया-आघ्राताः, आहूताः। विशे० ९६०।

अग्घियं-बहुमोल्लं। नि० चू० प्र० १३९ अ।

अग्घेइ-अर्हति। उत्त० १४२।

अग्घेऊणं-अर्घित्वा। आव० २६१।

अग्घो-अर्घः, मत्स्यकच्छपविशेषः। जीवा० ३२१।

अग्गिमानव-भवनपतीन्द्रविशेषः। ठाणा० २०५।

अग्निशर्मा-यो मिथ्यादृष्टपदिष्टयुतपसाऽपि अनन्तं कालं संसारे पर्यटित्। सूत्र० ५७।

अग्निशिख-भवनपतीन्द्रविशेषः। ठाणा० २०५।

अग्निष्टोमः-यागविशेषः। दश० २७६।

अग्रश्रुतस्कन्धः-द्वितीयश्रुतस्कंधः। आचा० ३१८।

अग्राह्यः-अप्रमेयः। जीवा० १८७।

अघा- गर्ता ह्रदो। बृ० प्र० १०९ आ।

अघोर-मन्त्रविशेषः। उत्त० २६७।

अङ्कुसल-अंकुशयुक्तः। (मर०)

अङ्गमंगो-अंगोपांगानि। (मर०)

अचंड-अचण्डः, सौम्यः। उत्त० ४७।

अचंडो-अचण्डः, कारणविकलकोपविकलः। प्रश्न० ७४।

अचक्किय-अचकिताः, अत्रासिताः। उत्त० ३५३।

अचक्खुदंसणं-अचक्षुर्दर्शनम्, चक्षुर्वर्जशेषेन्द्रियमनोभिर्दर्शनम्। जीवा० १८।

अचक्खुसे-अचाक्षुषम्, चक्षुरिन्द्रियाग्राह्यम्। दश० २०२।

अचक्खुस्सं-अनिष्टम्। बृ० तृ० ४१ अ।

अचक्षुषा-चक्षुर्वर्जेन्द्रियचतुष्टयेन मनसा। ठाणा० ४४८।

अचरम-अचरमः, यस्य चरमो भवो न भविष्यति सोऽचरमः। भग० २५९।

अचरमसमयनियंठो-अचरमसमयनिर्ग्रन्थः, अचरमा-आदिमध्यास्तेषु यो वर्तमानः सः। उत्त० २५७।

अचरिमं-अचरमम्। प्रज्ञा० २३४। अप्रान्तं, मध्यवर्ति। प्रज्ञा० २२८।

अचरिमंतपएस-अचरमान्तप्रदेशः। भग० ३६६।

अचरिमो-अचरमः, अभव्यः सिद्धश्च। प्रज्ञा० १४३। जीवा० ४४४।

अचल-(अयलो) कलाशिक्षायामुदाहरणगतः पुरुषः। दश० १०९।

अचलेन्द्रः-मेरुः। आव० ४७।

अचले-अचलः, अन्तकृद्दशानां द्वितीयवर्गस्य पंचमाध्ययनम्। अन्त० ३।

अचवचवं-चवचवेतिशब्दरहितम्। प्रश्न० ११२। अचवचवम्। अनुकरणशब्दोऽयम्। भग० २९४। वल्कमिव चर्वयन् न चबचबावेइ। ओघ० १८७।

अचवलं-अचपलम्, मानसचापल्यरहितम्। भग० १४०।

अचवलो-अचपलः, कायिकादिचापल्यरहितः। प्रश्न० ७४। नाऽऽरब्धकार्यं प्रत्यस्थिरः, अथवा अचपलो-गतिस्थानभाषाभावभेदतः चतुर्धा। उत्त० ३४६।

अचिअत्तं-अप्रीतिकरम्। दश० २२१।

अचिअत्तकुलं-अप्रीतिकुलम्, यत्र प्रविशद्भिः साधुभिरप्रीतिरुत्पद्यते तत्कुलम्। दश० १६६।

अचिअत्ति-यः साधुभिरागच्छद्भिर्दुःखेनास्ते। ओघ० ९३।

अचिणित्तु-आचित्य, आत्मप्रदेशैः सहोपचित्य। प्रश्न० ९८।

अचित्तं-आयुःक्षयेणाचित्तं न परसंयतार्थम्। बृ० द्वि० १०६ अ। अचित्तम्, दग्धदेशादि। दश० १७८।

अचित्तद्रव्यपरिद्यूनः-(अचित्तदव्वपरिज्जुण्ण), जीर्णपटादिः। आचा० ३५।

अचित्त-अचित्तमहास्कन्धः। आव० ३५।

अचित्तस्कन्धः-द्विप्रदेशिकादिस्कंधः। विशे० ४२४।

अचियत्तं-अचियत्तः, स्वचेतसि करोति वाचा न किमपि ब्रूते एष देशीभाषया। बृ० प्र० २४६ अ।

अचियत्तं-अदानशीलं। ओघ० १५६। अप्रतीतिः। ओघ० १६९। अप्रीतिकम्। आव० १९१। आव० ११८।

अचियत्ता-न रोचते। ओघ० १९४।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अचियत्ते-अचियत्तः, अनभिमतः । सूत्र० ३३७। अप्रीतिकरः । उत्त० ३४६ । अप्रीतिकानि-नास्ति प्रीतिः साधुषु गृहमुपगतेषु येषां तानि । बृ० प्र० २३५ अ ।

अचियत्तो-साधुन् प्रत्यप्रीतिमान् । प्रश्न० १२४ । अप्रतीत्युत्पादकः । प्रश्न० ६४ ।

अचियत्तोग्गहो-अप्रीतिकावग्रहः । आव० ३०४ । आव० १८९ ।

अचिरं-स्थानम्, स्थण्डिलम् । आचा० २९४ ।

अचिरकालकयं-अचिरकालकृतम्, द्विमासिके ऋतौ यदग्न्यादिना प्राशुकीकृतम् । ओघ० १२३ ।

अचिरवत्तवीवाहे-अचिरवृत्तवीवाहः । सूर्य० २९२ ।

अचुल्ला-चुल्लीए समीवे । नि० चू० प्र० ३२८ आ ।

अचेल-अचेलः, अल्पचेलो जिनकल्पिको वा । आचा० २४२ । अपगतचेलोऽल्पचेलो वा अचलनस्वरूपो वा । आचा० २४५ । यः साधुर्नास्य चेलं-वस्त्रमस्तीति अचेलः, अल्पचेल इत्यर्थः । आचा० २४४ । नास्य चेलं-वस्त्रमित्यचेलः । आचा० २४४ । षष्ठः परीषहः । आव० ६५६ ।

अचेलकः-अवमानि, असाराणि लघुत्वजीर्णत्वादिना चेलानि-वस्त्राण्यस्येति । उत्त० ३५९ । अविद्यमानचेलकः कुत्सितचेलको वा । उत्त० ५०० ।

अचोक्खं-अचोक्षम्, अपवित्रम् । जीवा० २८२ ।

अचोक्षाः-पिशाचभेदविशेषः । प्रज्ञा० ७० ।

अच्चंतत्थावरा - अत्यन्तस्थावरा, अनादिवनस्पतिकायादुद्वृत्त्य । आव० ४६५ ।

अच्चंतिओ-आत्यन्तिकः, सर्वकालभावी । सूत्र० ३९५ ।

अच्चंतिया-तेन सह तत्रैवासितुकामाः । बृ० तृ० १३२ अ ।

अच्चइओ-व्यथितः, पीडितः । दश० ४४ ।

अच्चणिज्जं-अर्चनीयम् । सूर्य० २६७ । चन्दनगन्धादिभिः । औप० ५ ।

अच्चणिज्जाओ-चन्दनादिना । भग० ५०५ ।

अच्चणिय-अर्चनिका । आव० ३५० ।

अच्चणियवावडा-अर्चनिकाव्यापृता । आव० ८६३ ।

अच्चंतो-विबुद्धोवि जं फुडं ण संभरति संभरतो वा जस्सत्थं ण वि बुज्झति सो अच्चंतो । नि० चू० द्वि० ८६ अ । अन्तमतिक्रान्तोऽत्यन्तः । उत्त० ६२१ । अनादिः । उत्त० ६२१ । अतिकान्तपर्यन्तम् । उत्त० ६३९ ।

अच्चल्लीणो-आसण्णं । नि० चू० प्र० १७५ अ ।

अच्चल्लूढो-अतीव प्रज्वलिते । नि० चू० प्र० १७५ अ ।

अच्चसणे-अत्यशनः, शास्त्रीयद्वादशदिवसनाम । जं० प्र० ४९० ।

अच्चा-प्रतिमा । बृ० तृ० २६आ । नि० चू० प्र० ११७ आ । अर्चा, मनुष्यतनुर्भाविनी । औप० ८१ । तनुः, शरीरं, पद्मादिका लेश्या वा । सूत्र० २३८ । लेश्या चित्तवृत्तिः । सूत्र० २३४ ।

अच्चासणयाए-अत्यन्तं सततमासनं-उपवेशनं यस्य सोऽत्यासनस्तद्भावस्तत्ता तया । ठाणा० ४४६ ।

अच्चासणे-अत्यशनः, शास्त्रीयद्वादशदिवसनाम । सूर्य० १४७ ।

अच्चासाइत्तए-अत्याशातयितुम्, छायाया भ्रंशयितुम् । भग० १७५ ।

अच्चासायणा-अत्याशातना, किमेभिः कलहशास्त्रैरिति । आव० ५८० ।

अच्चि-ब्रह्मलोककल्पे विमानविशेषः । सम० १४ ।

अच्चि-अर्चिः, छिन्नज्वालम् । दश० २२८ । मूलाग्निविच्छिन्ना ज्वाला । दश० १५४ । अनलविच्छिन्ना ज्वाला । जीवा० १०७ ।

अच्चिकंतं-अर्चिःकान्तम्, विमानविशेषः । जीवा० १३८ ।

अच्चिकूडं-अर्चिःकूटम्, विमानविशेषः । जीवा० १३८ ।

अच्चिज्झयं-अर्चिर्ध्वजम्, विमानविशेषः । जीवा० १३८ ।

अच्चिप्पभं-अर्चिःप्रभम्, विमानविशेषः । जीवा० १३८ ।

अच्चिमालिं-कृष्णराज्यवकाशान्तरे लोकान्तिकविमानः । सम० १४ । भग० २७१ ।

अच्चिमाली-अर्चिर्मालिः, अर्चिषां माला । प्रज्ञा० १०१ । अर्चिर्माली, चन्द्रस्य तृतीयाग्रमहिषी । जं० प्र० ५३२ । शक्राग्रमहिषीराजधानी । ठाणा० २३१ । सूर्यस्य तृतीयाग्रमहिषी । ठाणा० २०४, भग० ५०५ । चन्द्रस्याग्रमहिषी । ठाणा० २०४, भग० ५०५ । दक्षिणपूर्वरतिकरपर्वतस्यापरस्यां शक्रदेवेन्द्रस्य शच्या अग्रमहिष्या राजधानी । जीवा० ३६५ । अर्चीषि-किरणास्तेषां माला, साऽस्यास्तीति किरणमालापरिगत इति । जीवा० ३८७ । चन्द्रस्य सूर्यस्य च ज्योतिषेन्द्रस्य तृतीयाग्रमहिषी । जीवा० ३८४ । कृष्णराज्यवकाशान्तरे लोकान्तिकविमानः । ठाणा० ४३२ । द्वितीयं लोकान्तिकविमानम् । भग० २७१ ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अच्चिरावत्तं-अर्चिरावर्त्तम्, विमानविशेषः। जीवा० १३८।

अच्चिरुत्तरावडिंसए-अर्चिरुत्तरावतंसकम्, विमानविशेषः। जीवा० १३८।

अच्चिलेस्सं-अर्चिर्लेश्यम्, विमानविशेषः। जीवा० १३८।

अच्चिवन्नं-अर्चिर्वर्णम्, विमानविशेषः। जीवा० १३८।

अच्चिसिंगारं-अर्चिःश्रृङ्गारम्, विमानविशेषः। जीवा० १३८।

अच्चिसिट्ठं-अर्चिःसृ(शि)ष्टम्, विमानविशेषः। जीवा० १३८।

अच्ची-अर्चिः, अनलाप्रतिबद्धा ज्वाला। प्रज्ञा० २९, जीवा० २९। प्रथमं लोकान्तिकविमानम्। भग० २७१। कृष्णराज्यवकाशान्तरे लोकान्तिकविमानः। ठाणा० ४३२। अर्चिः, शरीरस्थरत्नादितेजोज्वाला। औप० ५०, भग० १३२। विमानविशेषः। जीवा० १३८। स्वशरीरगतरत्नादितेजोज्वाला। जीवा० १६२। अर्चिः, लेश्या। सूत्र० १९०। दाह्यपतिबद्धो ज्वालाविशेषोऽर्चिः। आचा० ४९।

अच्चीकरणं-गुणवण्णणं। नि० चू० प्र० १९५ आ।

अच्चीसहस्समालिणीयं - चन्द्रप्रभाशिबिकाविशेषणम्। आचा० ४२३।

अच्चुओ-अच्युतः, देवलोकविशेषः। आव० ११७।

अच्चुत्तवडिंसगं-अच्युतकल्पगतविमानविशेषः। सम० ४१।

अच्चुदयं-अत्युदकम्, महान् वर्षः। ओघ० ३१।

अच्चुयवडिंसए-अच्युतावतंसकः, अच्युतदेवलोकस्य मध्येऽवतंसकः। जीवा० ३९३।

अच्चुया-अच्युताः, कल्पोपपन्नवैमानिकभेदविशेषाः। प्रज्ञा० ६९। अच्युतः-आयातः। ओघ० ५०।

अच्चुव्वाया-परिश्रान्ताः। बृ० द्वि० २११ आ।

अच्चेइ-अत्येति, अतिक्रामति। आचा० १४४।

अच्छं-ऋक्षम्। आचा० ३३८। अतिस्वच्छम्। जीवा० १६०। स्फटिकवच्छुद्धम्। जीवा० १२३। आकाशस्फटिकवदतिस्वच्छम्। प्रज्ञा० ८७।

अच्छंद-अच्छन्दः, अस्ववशः। दश० ९१।

अच्छंदो-यथाछन्दः, पाषण्डस्थः। आव० १९३।

अच्छ-ऋक्षः, प्रसिद्धः। भग० १९०, नि० चू० प्र० १३८ आ। ऋक्षः। भग० ३०९। ऋक्षाः, अच्छभल्लाः। जं० प्र० १२४।

अच्छउ-तिष्ठतु। दश० ३७।

अच्छणं-अवस्थानम्। बृ० प्र० २३६ अ। सन्निधौ आसनम्। आव० ५२४।

अच्छण-उपविश्यावस्थानम्। बृ० प्र० ११० अ।

अच्छणए-यत्र स्वाध्यायं कुर्वद्भिरास्यते। ओघ० ९४।

अच्छणघरं-अवस्थानगृहकम्, यत्र यदा तदा वाऽऽगत्य बहवः सुखासिकयाऽवतिष्ठन्ते। जीवा० २००।

अच्छणघरगा-अवस्थानगृहकाणि। जं० प्र० ४५।

अच्छणजोए-अक्षणयोगः, अहिंसाव्यापारः। दश० २२८।

अच्छणिउपूरे-संख्याविशेषः। भग० ८८८।

अच्छणिउराति-संख्याविशेषः। ठाणा० ८६।

अच्छणिउरे-संख्याविशेषः। भग० २१०। भग० २७५।

अच्छणिकुरंगाति-संख्याविशेषः। ठाणा० ८६।

अच्छणे-आसने, प्रक्रमादाचार्यान्तरादिसन्निधौ अवस्थाने। उत्त० ५३५।

अच्छण्णपडिच्छण्णो-आच्छादितप्रत्याच्छादितः। जीवा० १४५।

अच्छते-तिष्ठति। आव० ८३२।

अच्छभल्ल-ऋक्षः। नि० चू० द्वि० ५८ अ। वनजीवा। (मर०)

अच्छभल्लो-ऋक्षः। नि० चू० द्वि० १२९ अ।

अच्छरं-आस्तरकम्, आच्छादनम्। जीवा० २१०।

अच्छरसा-अच्छरसाः, अतिनिर्मलाः। जं० प्र० १९२।

अच्छरा-अप्सरा, चप्पुटिका। सूत्र० ३२५। शक्रस्याग्रमहिषीनाम। भग० ५०५।

अच्छराणिवातो-अप्सरोनिपातः, चप्पुटिका। प्रज्ञा० ६००।

अच्छराते-शक्रस्याग्रमहिष्या राजधानीविशेषः। ठाणा० २३१।

अच्छरानिवाए-अप्सरोनिपातः, तिस्रश्चप्पुटिकाः। औप० १०९। चप्पुटिका। भग० २६९। जीवा० १०९।

अच्छरीयं-आश्चर्यम्। आव० ३९५।

अच्छवि-अक्षपि, अशरीरः, अव्यथकः। भग० ८९२।

अच्छवी-अच्छविः, अव्यथकः। उत्त० २५७, ठाणा० ३३६।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अच्छह-तिष्ठत। ओघ० १५८।

अच्छा-अच्छाः, आकाशस्फटिकवत्। ठाणा० २३२।

अच्छा-अच्छापुरी, वरणजनपदे आर्यक्षेत्रम्। प्रज्ञा० ५५। सनखपदविशेषः। प्रज्ञा० ४५। आकाशस्फटिकवदति-स्वच्छा। जं० प्र० २०।

अच्छाडेइ-आच्छादयति। आव० ४३४।

अच्छारियभत्तं-लावकभक्तम्। आव० २०७।

अच्छारिया-लावकम्। आव० २०७। मूल्यप्रदानेन शालि-लवनाय कर्म्मकराः, अस्तारिका-क्षेत्रे क्षिप्यंते ते। व्य० द्वि० १६९ आ।

अच्छाविज्जइ-स्थाप्यते। आव० ६३३।

अच्छावित्तो-स्थापितः। आव० ३५२।

अच्छावेइ-स्थापयति। आव० ६३१।

अच्छि-(रोडए), चतुरिन्द्रियजीवभेदः। उत्त० ६९६।

अच्छि-अक्षी। आव० १९२। बीजप्रदेशस्थानानि यस्याः सा निंदिता। ओघ० २१८।

अच्छिउं-स्थातुम्। उत्त० १५३।

अच्छिक्को-अस्पृष्टः। व्य० प्र० १८६ आ।

अच्छिचमढणं-चक्षुषोर्मीलनम्। बृ० द्वि० २०७ आ।

अच्छिज्जं-आच्छेद्यम्। आचा० ३२९।

अच्छिढोक्कणियं-अक्षिछादनम्। आव० ५६१।

अच्छिणिउपूरंगे-संख्याविशेषः। भग० ८८८।

अच्छिण्णे-अच्छिन्नः, अव्यवहितः,नान्यैः शब्दान्तरैर्वातादि-कैर्वाऽप्रतिहतशक्तिकः। प्रज्ञा० २९९।

अच्छिद्द-अच्छिद्रम्, अविरलम्, निर्दूषणं वा। भग० १३६।

अच्छिद्दजालो-अच्छिद्रजालः, अङ्गुल्यन्तरालसमूहरहितः। जीवा० २७२।

अच्छिद्दे-गोशालकदिशाचरः। भग० ६५९।

अच्छिद्द्पाणि-प्रतिमापन्नो जिनकल्पिको वा। आचा० २७७।

अच्छिन्न-अच्छिन्नः, अपृथग्भूतः। ठाणा० ४७२।

अच्छिपत्ताइं-अक्षिपत्राणि, नेत्ररोमाणि। जं० प्र० ८१। जीवा० २३४।

अच्छिफुलयं-अक्षिपुष्पिका। नि० चू० प्र० ७ अ।

अच्छियं-वृक्षविशेषफलम्। आचा० ३४९।

अच्छियाइओ-स्थितवान्। आव० ६८३।

अच्छिरे-चतुरिन्द्रियजीवभेदः। उत्त० ६९६।

अच्छिरोडा-चतुरिन्द्रियजन्तुविशेषः। जीवा० ३२। चतुरि-न्द्रियविशेषः। प्रज्ञा० ४२।

अच्छिवेयणा-अक्षिवेदना, नेत्रपीडा। भग० १९७।

अच्छिवेहए-चतुरिन्द्रियजीवभेदः। उत्त० ६९६।

अच्छिवेहा-चतुरिन्द्रियविशेषः। प्रज्ञा० ४२।

अच्छिवेहो-अक्षिवेधः, चतुरिन्द्रियजन्तुविशेषः। जीवा० ३२।

अच्छुत्ता-उद्धृत्य। नि० चू० द्वि० १४ आ।

अच्छुरंति-आस्तृण्वन्ति। ओघ० ८३।

अच्छुरलभे-प्रचुरलाभे। नि० चू० द्वि० १४ आ।

अच्छुढं-अक्षिप्तम्। ओघ० १६५।

अच्छे-अच्छः, सुनिर्मलः, जाम्बूनदरत्नबहुलत्वात् मेरुनाम। जं० प्र० ३७५। ऋक्षः-अच्छभल्लः। प्रज्ञा० २५३।

अच्छेओ-अच्छेकः, अविकलः। आव० ५२७।

अच्छेज्ज-आसीत। भग० ९०। आच्छेद्य-षष्ठशबलदोषे। प्रश्न० १४४।

अच्छेज्जे-आच्छेद्य-बलाद् भृत्यादिसत्कमाच्छिद्य यत्स्वामी साधवे ददाति। ठाणा० ४६०।

अच्छेज्जेइ-भोजनदोषः। भग० ४६६।

अच्छेण्णं-आच्छेद्यं, यदाच्छिद्य भृत्यादिभ्यः स्वामी ददाति। प्रश्न० १५५।

अच्छेरं-आश्चर्यम्। जीवा० २७७।

अच्छेरगा-आश्चर्याणि, अद्भुतानि। ठाणा० ५२३।

अच्छेरियं-आश्चर्यम्, आश्चर्यवस्तु। दश० ५५।

अच्छो-अच्छः, स्वच्छः। सूर्य० ७८। ऋक्षः। जीवा० ३८। नाखरविशेषः। प्रश्न० ७।

अच्छोड-आच्छोटनम्। ओघ० १३३।

अछिन्नछेयनयाइं-अच्छिन्नच्छेदनयिका-सूत्रविशेषः। सम० १२८।

अजगर-अजगरः, शयुपर्यायः, उरःपरिसर्पविशेषः। प्रश्न० ७। सम०। १३५।

अजज्जो-अजय्यः, जेतुमशक्यः। उत्त० १६९।

अजताभासविवज्जी-अयताभाषाविवर्जी, दुष्टवाक्परि-हर्त्ता। आव० ७७५।

Jain Education International 2010_05   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

अजयं-अयतम्, अनुपदेशेन। दश० १५६। अणुवएसेण। दश० चू० ७०।

अजय-अयतः, अयत्नपरः। ओघ० ३७। तत्तत्पापस्थानेभ्योऽनुपरतः। उत्त० १९४।

अजरणं-अजीर्णम्। आव० १३१।

अजवणिज्जोदए-अयापनीयोदकाः, अयापनीयं-न यापनाप्रयोजनमुदकं येषां ते। भग० ३०६।

अजसो-छायाघातः। बृ० तृ० ९९ अ।

अजहण्णमणुक्कोसे-अजघन्योत्कृष्टः, अजघन्योत्कृष्टस्थितिः। आव० ३३५।

अजाकृपाणीयम्-अवितर्कितसम्भवो न्यायविशेषः। आचा० १८।

अजाणंतिया-अजानती पर्षत् जे होइ पगयसुद्धा। बृ० प्र० ५८ अ।

अजाणू-अज्ञस्य अज्ञानात् वा व्यावृत्तिः। ठाणा० १७४।

अजाता-उत्तरगुणैश्चाधाकर्मादिभिरशुद्धा। ओघ० १९३।

अजायकप्पिओ-अजातकल्पिको, अगीतार्थः। बृ० प्र० ११२ आ।

अजाया-अजाता, याऽतिरिक्तनिरवद्याहारपरित्यागविषया। आव० ६४१।

अजिओ-अजितः, परीषहोपसर्गादिभिर्न जितः, द्वितीयजिनः, यस्मिन् गर्भे सति माता राज्ञाऽजिताऽतः। आव० ५०२।

अजिणं-अजिनं, चर्म। सूत्र० ३०७, आचा० ७१।

अजिण्णओ-अजीर्णम्। आव० ३५२।

अजिम्हं-अमन्दम्। प्रश्न० ८४।

अजिम्ह-अमन्दे, भद्रभावतया निर्विकारचपले। जं० प्र० ११५।

अजियसंतित्थयं-अजितशान्तिस्तवः। आव० ६३८।

अजियसेणं-ऐरवतावसर्पिणीतीर्थकरः। सम० १५३।

अजियसेणे-अजितसेनः, अज्ञातोदाहरणे कौशाम्बीराजा। आव० ६३९। अतीतोत्सर्पिणीकुलकरः। सम० १५०। अलोभोदाहरणे श्रावस्त्यामाचार्यः। आव० ७०१। वसंतपुरे नृपः खड्गप्रमादिसैनिकशिक्षकः। प्रज्ञा० ४४१।

अजियं-अपराजितां (आज्ञां)। आव० ५९६।

अजिया-अभिनन्दनजिनप्रवर्तिनीनाम। सम० १५२।

अजिरं-अङ्गणम्। प्रश्न० १३८।

अजीरं-अजरणम्। ओघ० ६३।

अजीरगं-अजीर्णत्वम्। आव० ६५५।

अजीरय-अजीर्णम्। भग० १९७।

अजीर्णम्-रोगविशेषः। जीवा० २८४।

अजीव-अजीवाः, जीवविपरीतस्वरूपाः। प्रज्ञा० ७।

अजीवअपच्चक्खाणकिरिया - यदजीवेषु-मद्यादिष्व-प्रत्याख्यानात् कर्मबन्धनं सा अजीवाप्रत्याख्यानक्रिया। ठाणा० ४१।

अजीवकरणं-अजीवभावकरणं, परप्रयोगमन्तरेणाभ्रादेर्नानावर्णान्तरगमनम्। आव० ४६४।

अजीवकिरिया -अजीवक्रिया, अजीवस्य-पुद्गलसमुदायस्य यत्कर्म्मतया परिणमनं सा अजीवक्रिया। ठाणा० ४०।

अजीवणेसत्थिया-अजीवनैसृष्टिकी, यत्तु काण्डादीनां धनुरादिभिः निसर्जनम्। ठाणा० ४३।

अजीवपाउसिया-अजीवप्राद्वेषिकी, अजीवस्योपरि प्रद्वेषाद्या क्रिया प्रद्वेषकरणमेव वा। भग० १८२। अजीवे-पाषाणादौ स्खलितस्य प्रद्वेषात्। ठाणा० ४१।

अजीवपाओगिअं-अजीवप्रायोगिकम्, अजीवप्रयोगेन निर्वृत्तं, जीवप्रायोगिकद्वितीयभेदः। आव० ४५७।

अजीवपारिग्गहिया-अजीवपारिग्रहिकी, पारिग्रहिकीक्रियाया द्वितीयो भेदः। आव० ६१२।

अजीवमिस्सिया-अजीवमिश्रिता, प्रभूतेषु मृतेषु स्तोकेषु जीवत्सु एकत्र राशीकृतेषु-अहो महानयं मृतो जीवराशिरिति भाषा। प्रज्ञा० २५६।

अजीवमीसए-अजीवानाश्रित्य मिश्रमजीवमिश्रं। ठाणा० ४९०।

अजीवमीसग-अजीवमिश्रा, सत्यामृषाभाषाभेदः। दश० २०९।

अजीववेयारणिया - पुरुषादिविप्रतारणबुद्ध्यैव वाऽजीवं भणत्येतादृशमेतदिति। ठाणा० ४३।

अजीवसामंतोवणिवाइया - अजीवसामन्तोपनिपातिकी, सामन्तोपनिपातिकीक्रियाया द्वितीयो भेदः। आव० ६१३।

अजीवसाहत्थिया-यच्च स्वहस्तगृहीतेनैवाजीवेन-खड्गादिना जीवं मारयति सा अजीवस्वाहस्तिकी। ठाणा० ४२।

अजीवारंभिया - जीवकडेवराणि पिष्टादिमयजीवाकृतींश्च-वस्त्रादीन् वा आरभमाणस्य सा अजीवारंभिकी। ठाणा० ४१।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अजुतं-अयुतम्, चतुरशीतिरयुताङ्गशतसहस्राणि। जीवा० ३४५।

अजुतंगं - अयुताङ्गम्, चतुरशीतिरर्थनिकुरशतसहस्राणि। जीवा० ३४५।

अजुत्तं-अयुक्तम्, अनुपपत्तिक्षमम्, सूत्रदोषविशेषः। आव० ३७५।

अजुत्तो-अनुपयुक्तः। बृ० तृ० ६ आ।

अजुरणया-शरीरापचयकारिशोकानुत्पादनेन। भग० ३०५।

अजो-अजः, छगलको द्विखुरश्चतुष्पदः। जीवा० ३८।

अजोगवं-अयोगवम्, वैश्याशूद्राभ्यां जातो वर्णः। आचा० ८।

अजोगी-अयोगी, निरुद्धयोगः, शैलेश्यां गतो ह्रस्वपञ्चाक्षरोद्गिरणमात्रकालं यावत्, भूतग्रामस्य चतुर्दशं गुणस्थानम्। आव० ६५०।

अयोनिभूतम्-(अजोणिब्भूए), विध्वस्तयोनि, प्ररोहासमर्थम्। दश० १४०।

अजोसिया-अजुष्टा, असेविता, क्षयं वा अवसायलक्षणमतीता। सूत्र० ७०।

अज्जहिज्जो-अद्यश्वः। आव० ७१५।

अज्ज-अद्य, आरब्धः, आर्यः। उत्त० ३६३। आर्यः-आरात्सर्वहेयधर्मेभ्यो यातः-प्राप्तो गुणैरित्यार्यः। प्रज्ञा० ५। भावाराधनयोगादाराद्यातः सर्वहेयधर्मेभ्य इत्यार्यः। दश० २८४। आर्या-प्रशान्तरूपा चण्डिका। भग० १६४। अद्य-साम्प्रतम्। जं० प्र० २४६, आचा० १५८। आर्यः-(गौतमः)। आचा० १५८। पापकर्मबहिर्भूतत्वेनापापः (क्षेत्रादिभेदेन नवधा)। ठाणा० २०८।

अज्जए-हरितविशेषः। प्रज्ञा० ३३।

अज्जकण्हा-आर्यकृष्णाः, आचार्याः। उत्त० १७८।

अज्जकण्हो-आर्यकृष्णः, आचार्यः। आव० ३२३।

अज्जकालका-नाम आयरिया। बृ० प्र० ३९ अ।

अज्जकालगायरिए-चतुर्थीप्रवर्तको युगप्रधानः। नि० चू० प्र० ३३९ आ।

अज्जकालगो-आर्यकालकः। आव० ३६९।

अज्जकालय-प्रज्ञादृष्टान्तः। (मर०)

अज्जखउडो-विद्यासिद्ध आचार्यः। नि० चू० प्र० ३०४ अ, नि० चू० प्र० २७६ अ, नि० चू० प्र० १६ अ। आर्यखपुटः, विद्यासिद्ध आचार्यविशेषः। आव० ४११।

अज्जगो-आर्यकः, वनस्पतिविशेषः लोके आजओ। जं० प्र० ४२४। प्रत्येकवनस्पतिविशेषः। नि० चू० द्वि० ६० अ।

अज्जगोविंदो-आर्यगोविन्दः, मिथ्योपस्थितायामुदाहरणम्। आव० ८६१।

अज्जचंदणा-आर्यचन्दना, आर्याविशेषः, यस्याः पार्श्वे मृगावत्याः केवलोत्पत्तिः। आव० ४८५, नि० चू० तृ० १३४ आ।

अज्जत्ताए-आर्यतया, पापकर्मबहिर्भूतया अद्यतया वा अधुनातनतया वर्तमानकालतया। भग० ६५६।

अज्जपयं-आर्यपदम्, शुद्धधर्मपदम्। दश० २६९।

अज्जप्पभिई - अद्यप्रभृति, सम्यक्त्वप्रतिपत्तिकालादारभ्याद्य यावत्। आव० ८११।

अज्जभावे-आर्यभावः क्षायिकादिज्ञानादियुक्तः। ठाणा० २०९।

अज्जमंगू-आर्यमङ्गुः, ऋद्धिरससातगौरवदृष्टान्ते मथुरायामाचार्यः। आव० ५७९। अवसन्नाचार्यः। नि० चू० प्र० ३५१ अ। आचार्यातिसेवकः दुर्बलाऽऽचार्यः। व्य० द्वि० १७४ आ।

अज्जमणग-आर्यमणकः, आर्यश्चासौ मणकश्चेति विग्रहः, षण्मासैर्दशवैकालिकस्याध्येता। दश० २८४।

अज्जमहागिरि-स्थूलभद्रदत्तगणधारकाचार्यः। नि० चू० प्र० २४३ अ।

अज्जमहागिरी-आयरिओ। नि० चू० तृ० ४४ आ।

अज्जमूलं-आर्यमूलम्, मातामहपादमूलम्। आव० ६८४।

अज्जय-आर्यकः, पिता। उत्त० ९८। आव० ३०५। भग० ४७०। आव० ३५७।

अज्जयमंजरी-आर्यमञ्जरी। आव० १२५।

अज्जरक्खितो-मातृकानुज्ञाकृदाचार्यः। नि० चू० द्वि० १०९ अ।

अज्जरक्खिय-गोष्ठामाहिलप्रेषकाचार्यः। नि० चू० प्र० ३३५ आ, १०१ आ। उज्जयिन्यामचेलकत्वे। (मर०)। आर्यरक्षितः। विशे० १००२। आचार्यविशेषः। व्य० द्वि० ३१९ अ।

अज्जव-आर्जवम्, परस्मिन्निकृतिपरेऽपि मायापरित्यागः। दश० २६३।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अज्जवइरसामि–आर्यरक्षितविद्यागुरुः। नि० चू० प्र० १०१ आ।

अज्जवइरा–आर्यवैरा। विशे० ९२८। आर्यवज्रः, वात्सल्योदाहरणे आर्यः। दश० १०३।

अज्जवइरो–आर्यवैरः। आव० २८५। आर्यवज्रः, युगप्रधानः। आव० ३०२। आर्यवैरः, चैत्यभक्तिद्वारे आचार्यः। आव० ५३६।

अज्जवट्ठाणा–आर्जवम्, संवरभेदाः। ठाणा ३०२।

अज्जवे–आर्जवम्, ऋजुता योगसङ्ग्रहे दशमो योगः। आव० ६६४।

अज्जसमिओ–आर्यसमितः, सुनन्दाभ्राता। आव० २८९। आर्यसमितः। उत्त० ३३३।

अज्जसमिया–आर्यसमिताः, वज्रस्वामिनो मातुलाः। आव० ४१२।

अज्जसमुद्दा–आचार्यातिशेषानतिसेवि। व्य० द्वि० १४७ अ। नि० चू० प्र० १५१ अ।

(अज्जसा)–अंजसा, प्रगुणेन न्यायेन। विशे० ७७९।

अज्जसामस्स–आरात्सर्वहेयधर्मेभ्यो यातः-प्राप्तो गुणैरित्यार्यः स चासौ श्यामश्च आर्यश्यामः, तस्मै। प्रज्ञा० ५।

अज्जसुनन्दा–आर्यसुनन्दा। उत्त० ३२१।

अज्जसुहत्थी–आर्यसुहस्ती, योगसंग्रहेऽनिश्रितोपधानदृष्टान्ते आर्यस्थूलभद्रस्य लघुः शिष्यः। आव० ६६८। स्थूलभद्रदत्तगणधारकाचार्यः। नि० चू० प्र० २४३ अ। आयरिओ। नि० चू० तृ० ४४, बृ० द्वि० १५३ आ।

अज्जसुहम्मे–आर्यसुधर्मा, महावीरस्यान्तेवासी स्थविरः। प्रश्न० १।

अज्जहिज्जो–अद्यश्वः (श्वः)। आव० ६९२।

अज्जा–तुलसीसमो वनस्पतिविशेषः। भग० ८०२। मुनिसुव्रतजिनप्रवर्तिनीनाम। १५२। आर्या, सप्तचतुःकलगणादिव्यवस्थानिबद्धा मात्राछन्दोरूपा। जं० प्र० १३८।

अज्जाकल्पं–आर्यानीतम्। (गच्छ०)

अज्जाघरे–आर्यागृहे। ठाणा० ३७२।

अज्जावेयव्वा–आज्ञापयितव्याः। आचा० १७८।

अज्जासाढो–आर्याषाढः, स्थिरीकरणोदाहरणे उज्जयिन्यामार्याषाढः। दश० १०३। वत्सभूम्यामाचार्यविशेषः। उत्त० १३३। आचार्यः। आव० ३१५।

अज्जिए–आर्जिका, आर्यिका मातुः पितुर्वा माता। दश० २१६।

अज्जिया–पितामही मातामही वा। बृ० द्वि० ५८ आ। माउ पिउ वा जा माता सा। दश० चू० १०९।

अज्जिया–आर्यिका। आव० ७९३।

अज्जियालाभो–आर्यिकालाभः, आर्यिकाभ्यो लाभः। आव० ५३५।

अज्जुण–अर्जुन, वृक्षविशेषः। प्रज्ञा० ३२। अर्जुनाभिधानं यत्पाण्डुरस्वर्णम्। जं० प्र० २४२। बहुबीजविशेषः। भग० ८०३। चौरविशेषः। व्य० द्वि० १७० आ। तृणविशेषः। प्रज्ञा० ३३।

अज्जुणए–अर्जुनकः, राजगृहे मालाकारविशेषः। अन्त० १८।

अज्जुणओ–अर्जुनकः, राजगृहे मालाकारः। उत्त० ११२।

अज्जुणगस्स–अर्जुनकः, गोशालपरावर्तिस्थानम्। भग० ६७४।

अज्जुणमालार–अर्जुनमालाकारः, आक्रोशसहः। (मर०)

अज्जुणसुवण्णं–अर्जुनसुवर्णं, श्वेतकाञ्चनम्। औप० ११५।

अज्जुणस्स–गौतमगोत्रो गोशालगृहीतत्यक्तशरीरः। भग० ६७३।

अज्जुण्णो–अर्जुनः, सुघोषनगरनृपतिः। विपा० ९५।

अज्जुन्ने–गोशालकदिशाचरः। भग० ६५९।

अज्जे–आर्यः। उत्त० २८६। अद्य, आर्य, स्वामिन्। भग० १७६।

अज्जो–आर्यः, पितामहः, तीर्थकराणाम् प्रथमः। आव० १६८। आर्यः। आव० ७९३। श्रीवर्द्धमानस्वामी। जं० प्र० ५४१।

अज्जोत्ति–आरात्पापकर्मभ्यो याता आर्यास्तदामन्त्रणं हे आर्या। ठाणा० १३५।

अज्जोरुह–हरितविशेषः। प्रज्ञा० ३३।

अज्झत्त–अध्यात्मम्, चेतः। दश० १६।

अज्झत्थं–अध्यात्मम्, सुखदुःखादि। आचा० ७६। आत्मविषयः। जीवा० २४२। आत्मस्था मिथ्यात्वादयः। उत्त० ४०२। अन्तःकरणम्। आचा० २९०। अध्यात्मम्। आचा० २०८। अध्यात्मक्रिया-यस्केनापि कथञ्चनाप्यपरिभूतस्य दौर्मनस्यकरणम्। ठाणा० ३१६। अध्यात्मः-परिणामः। व्य० प्र० १८१आ। अध्यात्मम्-मनः। ठाणा० ५।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अज्झत्थदंडे-अध्यात्मदण्डः, शोकाद्यभिभवः। प्रश्न० १४३।

अज्झत्थनिप्फन्नं-अध्यात्मनिष्पन्नम्, अध्यवसानोद्गतम्। दश० २२६।

अज्झत्थवयणं-अध्यात्मवचनम्, अभिप्रेतमर्थं गोपयितुकामस्य सहसा तस्यैव भणनम्। प्रश्न० ११८। यदन्यच्चेतसि निधाय विप्रतारकबुद्धयाऽन्यद् बिभणिषुरपि सहसा यच्चेतसि तदेव ब्रूते तत्। प्रज्ञा० २६७, आचा० ३८७।

अज्झत्थिए-अध्यात्मिकः, अभ्यर्थितः। विपा० ३८। अध्यात्मिकः-आत्माश्रितः। भग० ४६३। आध्यात्मिकः-क्रियास्थानविशेषः। सम० २५।

अज्झत्थिओ-आध्यात्मिकः, आत्मविषयः, सङ्कल्पविशेषः। जीवा० २४२।

अज्झत्थियं-अध्यवसितं, सङ्कल्पम्। आव० ६६९। आध्यात्मिकं-अन्तःकरणोद्भवम्। सूत्र० ३११।

अज्झत्थीओ-अध्यात्मस्थः। आव० ६४९।

अज्झत्थेव-अध्यात्मन्येव, ब्रह्मचर्ये व्यवस्थितः। आचा० २०८।

अज्झत्थो - आध्यात्मिकः, आत्मन्यध्यध्यात्मं - तत्रभवः दण्डविशेषः। सूत्र० ३०६।

अज्झप्पं-अध्यात्मं, सद्भावनारूढं चित्तमेव। प्रश्न० १३४। आध्यात्मिकं, आत्मन्यधीत्यध्यात्मं तत्र भवम्। आन्तरशक्तिजनितं सात्त्विकं। सूत्र० १६७। आत्मानमधिकृत्यात्मालम्बनम्। प्रश्न० १२८। मनः। सूत्र० ६५। अधि आत्मनि वर्त्तत इति अध्यात्मं-ध्यानम्। आव० ७७४। रूढितो मनः। उत्त० ७। आत्मनि। उत्त० ६१८। चेतः। आव० ५२५। धर्मध्यानादिकम्। सूत्र० २६९। मनः। आचा० २१९। आत्मनि। उत्त० ४६५। मनः। उत्त० ५९१।

अज्झप्पजोग-अध्यात्मयोगः। (महाप्र०)

अज्झप्पजोगसाहणजुत्ते - अध्यात्मयोगसाधनयुक्तः, अध्यात्मं-मनस्तस्य योगा - व्यापारा धर्मध्यानादयस्तेषां साधनानि एकाग्रतादीनि तैर्युक्तः। उत्त० ५९१।

अज्झप्पज्झाणं-अध्यात्मध्यानं, अमुकोऽहं अमुककुले अमुगसिस्से अमुगधम्मट्ठाणठिइए न य तव्विराहणेत्यादिरूपम्। प्रश्न० १२८।

अज्झप्परए-अध्यात्मरतः, प्रशस्तध्यानासक्तः। दश० २६७।

अज्झप्पसंवुडे-अध्यात्मसंवृतः, स्त्रीभोगादत्तमनाः सूत्रार्थोपयुक्तनिरुद्धमनोयोगः। आचा० २१९।

अज्झप्पे-अध्यात्मनि, आन्तरम्। सूत्र० २३०।

अज्झयणं-अध्ययनम्, विशिष्टार्थध्वनिसन्दर्भरूपम्। जीवा० ४। ठाणा० ६। पाठः। आव० ७३२, विशे० ४५०। सज्झाओ। दश० चू० १२५। स्वस्वभावे आनीयतेऽनेनेति आनयनं प्रस्तावादात्मनः, निरुक्तविधिना। उत्त० ६। निरुक्तविधिनाऽर्थनिर्देशपरत्वाद्वाऽस्य अयतेरेतेर्वाऽधिपूर्वस्य। उत्त० ७। नाम। सूर्य० ९, १४६। आव० ७१५। अध्यात्मानयनाच्चेतसो विशुद्धयापादनात्। दश० १३८। अनेन करणभूतेन साधुर्बोधसंयममोक्षान् प्रत्यधिकं गच्छति यस्मादेवं तस्मादध्ययनम्। दश० १६। अध्यात्मानयनं, अधिगम्यन्ते परिच्छिद्यन्ते वा अर्था अनेनेत्यधिगमनमेव प्राकृतशैल्या तथाविधार्थप्रदर्शकत्वाच्चास्य वचसोऽध्ययनमिति, अधिकं नयनमधिकनयनं चाध्ययनम्। दश० १६। अध्यात्मानयनं-अध्ययनश्रुतनाम। दश० १६। शास्त्रम्। दश० २८४।

अज्झयणछक्कं-अध्ययनषट्कं। विशे० ४१५।

अज्झल-म्लेच्छविशेषः। प्रज्ञा० ५५।

अज्झवसाए-अध्यवसायः, सूक्ष्मो मनःपरिणामसमुत्थः। आचा० ६८। सूक्ष्म आत्मनः परिणामविशेषः। आचा० ३१।

अज्झवसाणं-अध्यवसानं, अन्तःकरणप्रवृत्तिः। सूत्र० ३४०। मनोविशेषः। औप० ९९। जीवा० १३०। अन्तःकरणसव्यपेक्षम्। आव० १८४। रागस्नेहभयभेदानि अध्यवसानानि। आव० २७२। अध्यवसायाः। प्रज्ञा० ५४३। श्रवणविधिक्रियाप्रयत्नविशेषरूपम्। औप० ६०। मन एकाग्रतालम्बनम्। आव० ५८३। रागस्नेहभयात्मकोऽध्यवसायः। ठाणा० ४००। विशे० ८४२।

अज्झवसाणावरणिज्जाणं-भावचारित्रावरणीयानि। भग० ४३३।

अज्झवसाणेहिं-अध्यवसानैः, मनःपरिणामैः। जं० प्र० २७९।

अज्झवसिए-अध्यवसितम्, परिभोगक्रियासंपादनविषयम्। भग० ८९। अध्यवसानम्, प्रयत्नविशेषः। भग० ८९।

अज्झवसियं-अध्यवसितं, क्रियासंपादनविषयम्। औप० ६०

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अज्झवस्संति-अध्यवस्यतः। दश० ३५।

अज्झाइतं-अधीतम्। आव० ३४७।

अज्झाय-अध्ययनम्। विशे० ५०६। अध्यायः। भग० ४। कुबुद्धीनां मनःपीडानां वा आयः। भग० ४। पाठः। उत्त० ७१३। शास्त्रोंऽशविशेषः। आव० ६८। अध्ययनानि। उत्त० ७१२।

अज्झारुहो-अध्यारुहः, वृक्षयोनिकेषु वृक्षेषु कर्मोपादाननिष्पादितेषु उपर्युपरि अध्यारोहतीति, वृक्षोपरिजातो वृक्षः, वल्लीवृक्षाभिधानः कामवृक्षाभिधानो वा वृक्षः। सूत्र० ३५२।

अज्झावसित्त-अध्युष्येति। ठाणा० ३५१।

अज्झियगं-उपयाचितकं। बृ० तृ० ७४ आ।

अज्झीणं-अक्षीणम्। विशे० ४५०। अक्षीणश्रुतनाम। दश० १६। यद्दीयमानं न क्षीयते स्मः तद् अक्षीणम्। ठाणा० ६।

अज्झुववातो-अगमगमणासवणे वि (आसक्तिः)। नि० चू० द्वि० ७१ आ।

अज्झुसिरं-अशुषिरम्-अगंथिला दशिका निषद्या च। ओघ० २१४।

अज्झुसिरे-तृणादिच्छन्नं न। ओघ० १२३।

अज्झुसिरो-गृहिसीवनिकारहितः प्रतिथिग्गलरहितो वा। बृ० द्वि० २५२ आ।

अज्झोअर-अध्यवपूरकम्, स्वार्थमूलाद्दहणप्रक्षेपरूपम्। दश० १७४। नि० चू० प्र० १४२ आ।

अज्झोयरए इ-भोजनदोषः। भग० ४६६। स्वार्थमूलाद्दहणे साध्वाद्यर्थं कणप्रक्षेपणमध्यवपूरकः। ठाणा० ४६०।

अज्झोवगमियाए-आभ्युपगमिकी, प्रव्रज्याप्रतिपत्तितो ब्रह्मचर्यभूमिशयनकेशलुञ्चनादीनामङ्गीकारेण निर्वृता वेदना। भग० ६५।

अज्झोववज्जंति-अध्युपपद्यन्ते-तदेकचित्ता भवन्तीति तदर्जनाय वाधिक्येनोपपद्यन्ते उपपन्ना घटमानाः। ठाणा० २९२।

अज्झोववज्जणं-अध्युपपादनं, क्वचिदिन्द्रियार्थेऽध्युपपत्तिरभिष्वङ्गः। ठाणा० १७४।

अज्झोववज्जिज्ज-अभ्युपपद्येत, अभिष्वङ्गं कुर्यात्। दश० ४५।

अज्झोववण्णं-अध्युपपन्नः, विषयपरिभोगायत्तजीवितः। आचा० ७८।

अज्झोववण्णो-अध्युपपन्नः, आसक्तः। ओघ० १९४। अध्युपपन्नः। आव० ३५९, ९२।

अज्झोववन्नं-अध्युपपन्नः, आसक्तः। दश० ४५। अप्राप्ताहारचिन्तामाधिक्येनोपपन्नः। भग० ६५०।

अज्झोववन्ने-अध्युपपन्नः, तदेकाग्रतां गतः। भग० २९२। मूर्च्छितः। विपा० ३८।

अज्झोववन्नो-अध्युपपन्नः। आव० ३९९।

अज्झोववाय-अध्युपपातः, ग्रहणैकाग्रचित्तता। प्रश्न० १५३।

अज्झोवात-अध्युपपातः-श्रद्धा। व्य० प्र० २१७ आ।

अझंझपत्ते-अझञ्झाप्राप्तः, अकलहप्राप्तः सम्यग्दृष्टिर्वा। सूत्र० २३४। वीतरागः। सूत्र० २३५।

अज्ञातोञ्छवृत्ति-(अन्नाउञ्छवित्ती), कुले कुले भिक्षणम्। उत्त० ४०४।

अज्ञानम्-अनाभोगः, अननुस्मरणं वा। दश० १७९।

अट्टं-आर्त्तम्, संक्लिष्टाध्यवसायः। दश० चू० १४। ऋतस्य पीडितस्येदं वचनमिति कृत्वा। अधर्मद्वारस्य षोडशनाम। प्रश्न० २६। आर्त्तध्यानं-शोकाक्रन्दनविलपनादिलक्षणं ध्यानम्। आव० ५८२।

अट्टट्टहासं-अट्टाट्टहास्यम्। आव० १९१।

अट्टट्टहासो-अट्टट्टहासः। आव० ८३०।

अट्टणसाला-व्यायामशाला। भग० ५४२। अट्टनशाला। औप० ६५।

अट्टणे-अट्टनः, योगसङ्ग्रहे आलोचनादृष्टान्ते उज्जयिन्यां मल्लविशेषः। आव० ६६४।

अट्टणो-अट्टनः, उज्जयिन्यां जितशत्रुराजमल्लः। उत्त० १९२।

अट्टदुहट्टवसट्टे-आर्त्तदुःखार्त्तवशार्त्तः। उत्त० ३३१।

अट्टदुहट्टा-आर्त्तदुःखस्थिताः, आर्त्तदुःखार्त्ताः। आव० ३९५।

अट्टदुहट्टो-आर्त्तदुःखार्त्तः। आव० २८८।

अट्टनियट्टियचित्ता-आर्त्तनिर्वर्त्तितचित्ताः, आर्त्तं निर्वर्त्तितं चित्तं यैस्ते तथा, आर्त्ताद्वा निर्वर्त्तितं चित्तं यैस्ते। भग० १२१।

अट्टमगा-अभिमारकाः। नि० चू० द्वि० ११ अ।

अट्टमट्टाइ-अर्द्धवितर्द। उप० गा० ४८६।

अट्टवसट्टा-आर्त्तवशार्त्ताः। आव० ३८८।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अट्टहासं-अट्टट्टहासम्। आव० ६३४।

अट्टा-आर्ताः, दुखिनः रागद्वेषोदयेन। आचा० १८३।

अट्टाल-प्राकारसम्बन्धिन्यट्टालादौ। आचा० ४११।

अट्टालकं-प्राकारकोष्ठकोपरिवर्त्ति आयोधनस्थानम्। उत्त० ३११।

अट्टालक-अट्टालकः, प्राकारस्योपरि भृत्याश्रयविशेषः। जीवा० १५९।

अट्टालका-प्राकारस्योपर्याश्रयविशेषाः। सम० १३७।

अट्टालगं-अट्टालकं। जीवा० १६९।

अट्टालग-अट्टालकः, प्राकारोपरिवर्त्ती आश्रयविशेषः। प्रश्न० ८। अट्टालकम्, प्राकारोपर्याश्रयविशेषः। भग० २३८।

अट्टालगा-पागारस्स अहे अट्टहत्थो मग्गो। नि० चू० प्र० २६५ अ।

अट्टालगो-अट्टालकः, प्राकारस्योपरि भृत्याश्रयविशेषः। जीवा० २५८।

अट्टालयं-अट्टालकं। आव० ६७५।

अट्टालय-अट्टालकाः, प्राकारस्योपरिवर्त्याश्रयविशेषाः। जं० प्र० ७६, १०६। औप ३। प्राकारस्योपरि भृत्याश्रयविशेषाः। प्रज्ञा० ८६। प्राकारस्योपर्याश्रयविशेषः। जीवा० २७९।

अट्टालयसंठिओ-अट्टालकसंस्थितः। जीवा० २७९।

अट्टे झाणे-ध्यानस्य प्रथमो भेदः। भग० ९२३।

अट्टो-आर्त्तः, मनसा। विपा० ४१।

अट्ठं-अर्थः। आव० ७९३।

अट्ठ-अर्थान्, वर्णादीन्। जं० प्र० ९८। अर्थाय। उत्त० ३६०।

अट्ठकरणं-अर्थकरणं, अर्थाभिनिर्वर्त्तकमधिकरण्यादि येन द्रम्मादि निष्पाद्यते। अर्थार्थं वा करणं, यत्र राज्ञोऽर्थाश्चिन्त्यन्ते। अर्थ एव वा तैस्तैरुपायैः क्रियत इति। उत्त० १९५।

अट्ठखंभसतसंनिविट्ठा-अष्टोत्तरस्तम्भशतसन्निविष्टा, सभाविशेषः। आव० ३४२।

अट्ठग-अष्टकः। ओघ० १४४। अष्टकम्-चतुर्विंशत्यधिकशतसतकभागाष्टकप्रमाणम्। सूर्य० २३८।

अट्ठगुणाए-अष्टगुणया। आव० ६३।

अट्ठगुणे-अष्टगुणाः। ठाणा० ३९४।

अट्ठजायं-अर्थकार्यां अर्थिकार्यां अर्थप्रयोजनां वा। बृ० तृ० २४२ अ।

अट्ठजुत्तं-अर्थयुक्तं-अर्थते-गम्यत इत्यर्थस्तेन युक्तमन्वितम्। उत्त० ४६।

अट्ठट्ठमियं-अष्टाष्टमिका, भिक्षुप्रतिमाविशेषः। अन्त० २९।

अट्ठट्ठमिया-अष्टावष्टमानि। सम० ७७। अष्टावष्टमम्। ठाणा० ४४०।

अट्ठपयंति-अनुभागसंक्रमस्वरूपनिर्द्धारणम्। ठाणा० २२२।

अट्ठपिट्ठपुट्ठा(निट्ठिया)-अष्टवारपिष्टप्रदाननिष्पन्ना। जीवा० ३५१।

अट्ठपिट्ठणिट्ठिया-अष्टपिष्टनिष्ठिता, अष्टभिः शास्त्रप्रसिद्धैः पिष्टैर्निष्ठिता। प्रज्ञा० ३६४।

अट्ठफास-अष्टस्पर्शम्, बादरपरिणामम्। भग० ९६।

अट्ठभाइया-अष्टमभागमात्रो मानविशेषः। भग० ३१३।

अट्ठट्ठमंगलए-अष्टमङ्गलकानि, अष्टेति संख्याशब्दः, अष्टमङ्गलकानीति चाखण्डः संज्ञाशब्दः। जं० प्र० १९२।

अट्ठमभत्तं-अष्टमभक्तम्, त्रिरात्रोपवासः। आव० २२८। समयपरिभाषयोपवासत्रयं, यद्वाऽष्टमभक्तमिति सान्वयं नाम, तच्चैवम्-एकैकस्मिन् दिने द्विवारभोजनौचित्येन दिनत्रयस्य षण्णां भक्तानामुत्तरपारणकदिनयोरेकैकस्य भक्तस्य च त्यागेनाष्टमं भक्तं त्याज्यं यत्र। जं० प्र० १९७। उपवासत्रयस्य संज्ञा। जं० प्र० ११८।

अट्ठमभत्तिआ-अष्टमभक्तिका, दिनत्रयमनाहारिणः। जं० प्र० २३९।

अट्ठमेणं-अष्टमेन, उपवासत्रयलक्षणेन। जं० प्र० १५१।

अट्ठय-तलं। आव० ६४३।

अट्ठरससंपउत्त-अष्टभी रसैः शृङ्गारादिभिः सम्यक् प्रकर्षेण युक्तम्। जं० प्र० ३९।

अट्ठसइआहिं-अर्थशतानि यासु सन्ति ता अर्थशतिकास्ताभिः, अथवा अर्थानां-इष्टकार्याणां शतानि याभ्यस्ता अर्थशतास्ता एवार्थशतिकाः। जं० प्र० १४३, भग० ४८२।

अट्ठसते-अष्टशतं। आव० ३४२।

अट्ठसयं-अष्टाधिकं शतम्। जं० प्र० ६०।

अट्ठसयंसिओ-अष्टशतांस्त्रिकः। आव० ३४२।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अट्ठसहस्सं–अष्टसहस्रम्, अष्टोत्तरं सहस्रम्। जं० प्र० ४१०।

अट्ठसहस्सवरकंचणसलागा–अष्टौ सहस्राणि–अष्ट सहस्रसङ्ख्याका वरकाञ्चनशलाका–वरकाञ्चनमय्यः शलाका येषु तानि। जं० प्र० ५९।

अट्ठसिरे–अष्टशिराः, अष्टकोणः। औप० १०।

अट्ठसोवण्णिअं–अष्टसुवर्णा मानमस्येत्यष्टसौवर्णिकं, सुवर्णमानमिदम्–चत्वारि मधुरतृणफलान्येकः श्वेतसर्षपः, षोडश श्वेतसर्षपा एकं धान्यमाषफलं, द्वे धान्यमाषफले एका गुञ्जा, पञ्च गुञ्जा एकः कर्ममाषकः, षोडश कर्ममाषकाः एकः सुवर्णः। जं० प्र० २२६।

अट्ठा–अर्थक्रिया, अर्थाय यत्करणम्, क्रियायाः प्रथमो भेदः। आव० ६४८।

अट्ठाणं–अस्थानम्, अयुक्तं, असाम्प्रतं वा। सूत्र० १६०। शब्दप्रतिबद्धावसतिः। बृ० तृ० १९७ आ।

अट्ठाणट्ठवणा–अस्थानस्थापना–गुर्ववग्रहादिके अस्थाने प्रत्युपेक्षितोपधेः स्थापनं–निक्षेपः। ठाणा० ३६२।

अट्ठादंडे–अर्थाय–शरीरस्वजनधर्मादिप्रयोजनाय दण्डः–त्रसस्थावरहिंसा। सम० २५।

अट्ठावय–(अष्टापदः) पर्वतविशेषः। आव० ८२७।

अट्ठापदं–अर्थात्पदम्। आव० ३५२।

अट्ठारसवंको – अष्टादशवङ्कः, अष्टादशसरिको हारः। आव० ६८१।

अट्ठारसवंजणाउलं–अष्टादशव्यञ्जनाकुलम्। सूर्य० २९३। ठाणा० ११७।

अट्ठावए–अष्टापदम्, द्युतम्, अर्थपदं वा। दश० ११७।

अट्ठावओ–पर्वतविशेषः। आव० १४८।

अट्ठावयं–अष्टापदम्। जीवा० २७६। अर्थपदम्। आव० ४१२। शारिफलकद्यूतं तद्विषयकलाम्। जं० प्र० १३७। द्यूतफलकम्। प्रश्न० ८४। पर्वतविशेषः। आव० १५१। द्यूतक्रीडाविशेषः। सूत्र० १८१। द्यूतफलकं, कैलाशः पर्वतविशेषो वा। प्रश्न० ७०। अष्टापदः, पर्वतविशेषः। आव० ८२७। द्यूतफलकम्। जं० प्र० ११४।

अट्ठावयसेलसिहरंसि – अष्टापदशैलशिखरे। जं० प्र० १५८।

अट्ठाहिअं–अष्टाहिकाम्, अष्टानामह्नां–दिवसानां समाहारोऽष्टाहं तदस्ति यस्यां महिमायां सा अष्टाहिका ताम्। जं० प्र० १६३।

अट्ठाहिया–अष्टाहिका, महामहिमाविशेषः। जीवा० ३६५। जं० प्र० ४२३।

अट्ठि–अस्थि, कीकशम्। प्रश्न० ८, भग० १२५।

अट्ठिकच्छभा–ये अस्थिबहुलाः कच्छपास्ते अस्थिकच्छपाः। प्रज्ञा० ४४।

अट्ठिकच्छभो–अस्थिकच्छपः, कच्छपविशेषः। जीवा० ३६।

अट्ठिकरकम्–तन्दुलोदकम्। दश० १७७।

अट्ठिखंडं–अस्थिखण्डं। आव० ३६९।

अट्ठिग–अस्थिकम्–कीकसम्। भग० ३०८।

अट्ठिचम्मावणद्धे–अस्थिचर्मावनद्धम्, अस्थीनि चर्मावनद्धानि यस्य। भग० १२५।

अट्ठिज्झामे – अस्थिध्यामम्, अस्थि च तद्ध्यामं च–अग्निना ध्यामलीकृतं–आपादितपर्यायान्तरम्। भग० २१३।

अट्ठितग्गामं–अस्थिकग्रामम्, पूर्वं वर्द्धमानकनामकम्। आव० १८९।

अट्ठिभंजणं–अस्थिभञ्जनम्, कीकसामर्द्दनम्। प्रश्न० २२।

अट्ठिमिंज–अस्थिमिञ्जः–त्रीन्द्रियजीवविशेषः। उत्त० ६९५।

अट्ठिमिंजा–अस्थिमिञ्जा, अस्थिमध्यम्। सूत्र० ४०८। भग० ५२६।

अट्ठिय–आर्थिकः, अर्यत इत्यर्थः–मोक्षः, स प्रयोजनमस्येति अर्थः स एव प्रयोजनरूपोऽस्यास्तीति। उत्त० ६५।

अट्ठियकट्ठुट्ठियं–अस्थिकाष्ठोत्थितम्। उत्त० ३२९।

अट्ठियगामं–अस्थिकग्रामं – श्रीवीरस्य प्रथमचातुर्मासग्रामः। भग० ६६१।

अट्ठिलग्गो–मुष्टिं कृत्वा। आव० ६९०।

अट्ठिल्लगो–अस्थि (बीजम्)। नि० चू० प्र० ५६ आ।

अट्ठिसरक्खा–अस्थिसरजस्का–कापालिकाः। व्य० द्वि० २७३ आ।

अट्ठिसेणा–वत्सगोत्रान्तर्गतं गोत्रम्। ठाणा० ३९०।

अट्ठि–अस्थि–मज्जा। अनुत्त० ५। एट्ठसरक्खा। नि० चू० द्वि० १७२ अ।

अट्ठुप्पत्ती–ववहारो। नि० चू० तृ० १०१ अ।

अट्ठे–अर्थः, भावः। भग० ३४।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अट्टेति-निवसति । नि० चू० द्वि० ६२ आ ।

अट्ठो-अर्थित्वं च धर्मः । आव० ३४१ । अर्थः-विज्ञानम् । सूत्र० ३९८ । अर्यत इत्यर्थो मोक्षः । उत्त० ६५ ।

अट्ठियकप्पा-मध्यमजिनानां महाविदेहजिनानां वा साधवः । बृ० तृ० २५४ आ ।

अडंडिमकुदंडिमं-अदण्डिमकुदण्डिममम्, दण्डो निग्रहस्तेन निर्वृत्तं राजदेयतया व्यवस्थापितं दण्डिमं, कुदण्डः-असम्यग्निग्रहस्तेन निर्वृत्तं द्रव्यं कुदण्डिमं, ते अविद्यमाने यत्र प्रमोदे सः । विपा० ६३ ।

अडडं - चतुरशीतिरडडाङ्गशतसहस्राणि । जीवा० ३४५ ।

अडडंगं-अडडाङ्ग, चतुरशीतित्रुटितशतसहस्राणि । जीवा० ३४६ । संख्याविशेषः । ठाणा ८६ । भग० ८८८ । अडडाङ्गः, संख्याविशेषः । सूर्य० ९१ ।

अडडाति-संख्याविशेषः । ठाणा० ८६ ।

अडडे-अडडः, संख्याविशेषः । सूर्य० ९१ । भग० २१०, २७५, ८८८ ।

अडयालं-अष्टचत्वारिंशत्, प्रशस्तं वा । जीवा० १६० । अडयालशब्दो देशीवचनत्वात् प्रशंसावाची । प्रज्ञा० ८६ । देशीशब्दः प्रशंसावाची अष्टचत्वारिंशद्भेदभिन्नविच्छित्तयः कृता वनमाला येषु तानि । जं० प्र० ७६ ।

अडयालकोट्ठगरइय - अष्टचत्वारिंशद्भेदभिन्नविचित्रच्छन्दगोपुररचितानि । सम० १३८ ।

अडयालकोट्ठरइयं-अष्टचत्वारिंशतकोष्ठकरचितम्, अष्टचत्वारिंशद्भेदभिन्नविच्छित्तिकलिताः कोष्ठकाः - अपवरका रचिताः-स्वयमेव रचनां प्राप्ता येषु तत् । प्रशस्तकोष्ठकरचितं वा । जीवा० १६० ।

अडयालिय (ल)-शब्दः किल प्रशंसावाचकः । सम० १३८ ।

अडविंगतो-देसं देसेण हिंडइ । व्य० प्र० १६२ अ ।

अडविणीहुत्तं - अटवीनिःसृतम्, अरण्यान्निष्क्रान्तम् । उत्त० ३७५ ।

अडविमिगी-अटवीमृगी । आव० ३९२ ।

अडवी - अटवी, अटव्यो-दूरतरजननिवासस्थाना भूमयः । जं० प्र० ६६ ।

अडिला-चर्मपक्षिविशेषः । जीवा० ४१ । अडिल्ला, चर्मपक्षिविशेषः । प्रज्ञा० ४९ ।

अडुयालित्ता-आश्रित्य, बलात्कारं कृत्वा । दश० ३८ ।

अडेइ-चढापयति, लगयति । आव० ६९० ।

अडो-लोमपक्षिविशेषः । जीवा० ४१ ।

अडोलिया-यवोनाम राजा तस्य दुहिता । बृ० प्र० १९१ अ । उंदोइयाए । बृ० प्र० १९१ अ ।

अड्डु-तिर्यग्वलितम् । जीवा० २०७ । तिर्यक् । आव० ३६० ।

अड्डुपल्लाणं-लाटविषये प्रसिद्धम्, यदन्यविषये थिल्लीरिति रूढम् । जीवा० २८२ ।

अड्डुया-कंबिका । नि० चू० प्र० १६७ अ । थिल्ली । भग० ३९९ ।

अड्डुवियड्डुं-अर्दवितर्दम्-क्रमहीनम् । ओघ० १७७ । विप्रकीर्णम् । नि० चू० तृ० १३ अ ।

अड्डुवियड्डा-अक्रमम् । ओघ० १७६ ।

अड्डिया-अड्डिका, द्वात्रिंशत्, लौकिकमबद्धकरणम् । आव० ४६५ ।

अड्ढ-आढ्यम्, परिपूर्णम् । औप० १०१ ।

अड्ढ-आढ्यः, धनधान्यादिभिः परिपूर्णः । भग० १३४ ।

अड्ढग-आढ्यः, सम्पन्नः । आव० २६४ ।

अड्ढरत्त-अर्द्धरात्रः, निशीथः । दश० १०४ । आर्धरात्रिकः । व्य० द्वि० २५५ आ ।

अड्ढाइं-धनवन्ति । ठाणा० ४२१ ।

अड्ढाइज्जा-अर्द्धतृतीयानि । आव० ३९ ।

अड्ढायति-आद्रियते । आव० ८४८ ।

अड्ढेऊण-अवष्टभ्य । आव० ६२० ।

अड्ढेज्ज - आढ्यत्वं-धनपतित्वं सुखकारणत्वात्सुखं अथवा आढ्यैः क्रियमाणा इज्या-पूज्या आढ्येज्या । ठाणा० ४८८ ।

अड्ढोकंति-अर्धापक्रान्त्या । नि० चू० प्र० ११७ आ ।

अड्ढोकंती-अर्धापक्रान्तिः । बृ० द्वि० १९ अ ।

अड्ढोरुगो-कटिविभागाच्छादकं निर्ग्रन्थ्युपकरणम् । ओघ० २०९ । निर्ग्रन्थ्युपकरणविशेषः । नि० चू० प्र० १७९ आ ।

अणं-कम्मं । दश० चू० १४५ । पापम् । विशे० ११०९ । अणं-अणति-गच्छति तासु तासु जीवो योनिष्वनेनेति पापम्, सावद्ययोगं वा । आव० ३७३ । कर्म्म । आचा० १४७ । ऋणम्, कर्म्म । दश० २३२ ।

अणंगकीडा-अनङ्गक्रीडा, अनङ्गं-कुचकक्षोरुवदनादि, मोहोदयोद्भूतस्तीव्रो मैथुनाध्यवसायाख्यः कामो वा, तेन तस्मिन्

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वा क्रीडा कृतकृत्यस्यापि स्वलिङ्गेनाहार्यैः काष्ठफलपुस्तमृत्तिकाचर्मादिघटितप्रजननैर्योषिदवाच्यप्रदेशासेवनम् । आव० ८२५ । कुचकक्षोरूवदनादिमोहोदयोद्भूतस्तीव्रो मैथुनाध्यवसायाख्यः कामः । आव० ८२५ । मैथुनादावर्थक्रियासम्प्राप्तकामस्य चतुर्दशो भेदः । दश० १९४ ।

अणंगपडिसेवणी-मैथुने प्रधानमङ्गं मेहनं भगश्च तत्प्रतिषेधोऽनङ्गं तेनानङ्गेनाहार्यलिंगादिना अनङ्गे वा-मुखादौ प्रतिसेवाऽस्ति यस्याः अनङ्गं वा-कामममपरापरपुरुषसंपर्कतोऽतिशयेन प्रतिषेवत इत्येवंशीलाऽनङ्गप्रतिषेविणी । ठाणा० ३१३ ।

अणंगसेण-सुवण्णगारो भद्रविमर्शे दृष्टान्तः । नि० चू० तृ० ५ अ ।

अणंगसेणा-अनङ्गसेना, गणिकामुख्या । अन्त० २ ।

अणंगसेणो-चम्पावास्तव्यः स्वर्णकृत्, हासाप्रहासालुब्धः । बृ० द्वि० ४४ अ ।

अणंगरति-अनङ्गक्रीडा । बृ० तृ० १०७ आ ।

अणंतं-अनन्तम् । विशे० ३९६ । केवलात्मनाऽनन्तत्वात् । जीवा० २५६ । अनन्तः, अनन्तार्थविषयज्ञानस्वरूपत्वादन्तरहितः । भग० ७, सम० ५ । अपरिमाणम् । भग० ६६ । अनन्तकर्मपुद्गलनिर्वृत्तत्वात्तदनन्तमिति अनन्तानां वा भवानां हेतुर्यत्तदनन्तम् । ओघ० १२८ ।

अणंतकायं-मूलकादिकम् । प्रज्ञा० २५९ ।

अणंतकिरिया-अनन्तक्रिया, परम्परामुक्तिफला । उत्त० ५८३ ।

अणंतखुत्तो-अनन्तकृत्वः, अनन्तवारान् । भग० १३० ।

अणंतगं-कम्बलादिवस्त्रम् । ओघ० ३४ ।

अणंतगमजुत्त-अनन्ता-अपर्यवसिता गम्यते वस्तुस्वरूपमेभिरिति गमा-वस्तुपरिच्छेदप्रकाराः नामादयस्तैर्युक्तानि-अन्वितान्यनन्तगमयुक्तानि । उत्त० ३४२ ।

अणंतगुणपरिहाणीए – अनन्तगुणपरिहाणिः, अनन्तगुणानां परिहाणिः । जं० प्र० १२९ ।

अणंतगुणविसिट्ठतरा – अनन्तगुणविशिष्टतरा । सूर्य० २९४ ।

अणंतघाई-अनन्तघानि । -अनन्ते ज्ञानदर्शने हन्तुं शीलं येषां ते । उत्त० ५८० ।

अणंतजिणेण-रागद्वेषजेता, ज्ञानी नित्यश्च । आचा० ४३० ।

अणंतजीविया-अनंतजीविका-पनकादयः । ठाणा० १२२ ।

अणंतणाणी-अनन्तज्ञानी, केवली । आव० ६६२ ।

अणंतते-अनन्तकम्-एकश्रेणिकं क्षेत्रम् । ठाणा० १४७ ।

अणंतमिस्सिया – अनन्तमिश्रिता, मूलकादिकमनन्तकायं तस्यैव सत्कैः परिपाण्डुपत्रैरन्येन वा केनचित्प्रत्येकवनस्पतिना मिश्रमवलोक्य सर्वोऽप्येषोऽनन्तकायिक इति वदतो भाषा । प्रज्ञा० २५९ । ठाणा० ४९० ।

अणंतमीसग-अनन्तमिश्रा, सत्यामृषाभाषाभेदः । दश० २०९ ।

अणंतयं-अनंतकम्-जिनम् । सम० १५३ ।

अणंतरं-अनन्तरम्, बहिर्भूतम् । सूर्य० ३४ । सम० १२८ ।

अणंतरगढिया-अनन्तरग्रथिता, अनन्तरं व्यवस्थापितैः ग्रन्थिभिः सह ग्रथिता (जालिका) । भग० २१४

अणंतरपज्जता-अनन्तरपर्याप्तकाः-प्रथमसमयपर्याप्तकाः । ठाणा० ५१४ ।

अणंतरपुरक्खडे-अनन्तरपुरस्कृतः, अनन्तरं-अव्यवधानेन पुरस्कृतः-अग्रेकृतो यः सः । सूर्य० ९० ।

अणंतरबंधे-येषां पुद्गलानां बद्धानां सतामनन्तरः समयो वर्तते तेषामनन्तरबन्धः । भग० ७९१ ।

अणंतरहिता-अंते ठिता-अंता न अंता-अनंता सचित्ता । नि० चू० प्र० २५५ आ । नि० चू० द्वि० ८२ आ ।

अणंतरहियाए – अनन्तर्हि(रहि)तया – अव्यवहितया । आचा० ३३७ ।

अणंतरा-अनन्तरौ, एष्यातीतौ । आव० ७६९ ।

अणंतरिया-अनन्तरिका, अन्तरस्य विच्छेदस्य करणम् । भग० २२० ।

अणंतरो-अनन्तरः-वर्तमानः समयः । ठाणा० ५१४ ।

अणंतरोगाढं-अनन्तरावगाढम्, येषु प्रदेशेष्वात्मावगाढस्तेष्वेव यदवगाढं तदन्तराभावेनावगाढत्वादनन्तरावगाढम् । भग० २१ । अव्यवधानेनावगाढम् । जीवा० २० ।

अणंतरोगाढे-उत्पत्त्यनन्तरसमयावगाढत्वम् । भग० ९३७ ।

अणंतरोववण्णगा-उपप(त्प)त्तिप्रथमसमयवर्तिनः । प्रज्ञा० ३०४ ।

अणंतवत्तियाणुप्पेहा – अनन्तवर्तितानुप्रेक्षा । ठाणा० १९२ । भवसन्तानस्यानन्तवृत्तितानुचिन्तनम् । औप० ४५ ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अणंतविजए-आगामिन्यां उत्सर्पिण्यां भरते चतुर्विंशे जिननाम। सम० १५४। ऐरवते भविष्यज्जिनः। सम० १५४।

अणंतवीरिय-अनन्तवीर्यः। आव० ३९२।

अणंतसंजयं-एकेन्द्रियादिषु सम्यग् यतः। आचा० ४२९।

अणंतसंसारा-अपर्यवसितसंसारा अभव्याः। उत्त० ७१३।

अणंतसंसारवड्डणा-अनन्तससारवर्द्धनः। उत्त० ३३०।

अणंतसेणे – अनन्तसेनः, अन्तकृद्दशानां तृतीयवर्गस्य द्वितीयाध्ययनम्। अन्त० ३। भरतेऽतीतोत्सर्पिणीकुलकरः। सम० १५०। ठाणा० ५१८।

अणंतसो-अनन्तशः, अविच्छेदेन। सूत्र० ३४।

अणंतहिअ-अनन्तहितम्-मोक्षः। दश० २५०।

अणंता-तित्थकरा। बृ० प्र० २२४ आ।

अणंताणुबंधी-अनन्तानुबन्धी, अनन्तं संसारमनुबध्नन्ती-त्येवंशीलः। प्रज्ञा० ४६८। षोडशकषाये प्रथमो भेदः। सम० ३१, आचा० ९१। अनन्तं भवं अविच्छिन्नं करोति, अनन्तो वाऽनुबन्धो यस्य। ठाणा० १९४।

अणंतियं-अनन्तिकम्, नञोऽल्पार्थत्वान्नात्यन्तमन्तिकम-दूरासन्नमित्यर्थः। भग० २१७। अनासन्नम्। भग० २१७।

अणंतेहिं-अनादित्वात् अनन्ताः। भग० ६१०।

अणंतो – अनन्तः अनन्तकर्मांशजयात्, अनन्तानि वा ज्ञानादीन्यस्येति, चतुर्दशो जिनः, रत्नखचितमनन्तं दाम-स्वप्ने जनन्या दृष्टमतः। आव० ५०४। अपर्यवसितः। उत्त० २१३। अनन्तानामेकैकं शरीरम्। ओघ० ३४।

अणंधो-राजविशेषः। नि० चू० द्वि० ४२ आ।

अणंबिलं-अनाम्लम्-स्वस्वादादचलितम्। आचा० ३४६।

अण-अणाः, अणन्ति-शब्दयन्ति अविकलहेतुत्वेनासातवेद्यं नारकाद्यायुष्कमिति, अनन्तानुबन्धिनः क्रोधादयो वा। आव० ८१। नारकाद्यायुष्कं च शब्दयन्त्याकारयन्तीत्यणाः, अनाः। विशे० ५६१।

अणइक्कमणाइ – अनतिक्रमणं, संयमयोगानामनुल्लङ्घनम्। उत्त० ५४३।

अणइक्खा-अनाख्याता। (गणि०)

अणइवत्तियं – अनतिपत्य-यथावस्थितं वस्त्वागमाभिहितं तथाऽनतिक्रम्य। आचा० २५६।

अणइवरं-अनतिवरं, अविद्यमानह्रासतया प्रधानं न विद्यतेऽतिवरं यस्मात्तत्। औप० ५४।

अणईइपत्तो- अनीतिपत्रः, न विद्यते ईतिः-गड्डरिकादिरूपेति रहितपत्रः। जीवा० १८८।

अणकरो – ऋणकरः, ऋणं-पापं करोतीति, प्राणवधस्य चतुर्विंशतितमः पर्यायः। प्रश्न० ६।

अणक्को-अणक्कः. चिलातदेशवासी म्लेच्छविशेषः। प्रश्न० १४।

अणक्खित-परीक्षितः। नि० चू० द्वि० ८१ आ।

अणगार-अनगारः, सूत्रकृताङ्गे पञ्चममध्ययनम्। आव० ६५८। साधुः। दश० ६२। सूत्रकृताङ्गस्यैकविंशमध्ययनम्। उत्त० ६१६। चतुर्दशशतके नवमोद्देशकः। भग० ६३०। द्रव्यतो भावतश्चाविद्यमानागारः। दश० १५९। न विद्यतेऽगारं गृहमेषामित्यनगाराः-यतयः। आचा० ३६। तीर्थिक-प्रव्रजिताः। आचा० ३०९। अनगारी-यतिः। उत्त० ५७८। साधुः। आव० ३२९।

अणगारमग्गे-उत्तराध्ययने पञ्चत्रिंशत्तमाध्ययनम्। सम० ६४।

अणगारसुयं-सूत्रकृताङ्गे एकविंशतितमाध्ययनम्। सम० ४२।

अणगारस्सभिक्खू-अनगारास्वभिक्षुः, अस्वेषु भिक्षुरस्व-भिक्षुः-जात्याद्यनाजीवनाद्नात्मीकृतत्वेनानात्मीयानेव गृहि-णोऽन्नादि भिक्षत इतिकृत्वा, स च यतिरेव, ततोऽनगा-रश्चासावस्वभिक्षुश्च। उत्त० १९।

अणगारियं-अनगारिकं (अनगारितं वा), अनगारेषु-भाव-भिक्षुषु भवं अनुष्ठानम्। उत्त० ३३९।

अणगारे-अनगारः, न विद्यते अगारं-गृहं यस्यासौ साधुः। जीवा० १४२। भावितात्मा लब्धिसामर्थ्यात्। भग० ५९६। न विद्यते अगारं-गृहं द्रव्यतो भावतश्च यस्यासौ संयत इति। प्रज्ञा० ३०३। न विद्यते अगारं-गृहं यस्य सः। सूर्य० ४। अगाः-वृक्षास्तैर्निष्पन्नमगारं तन्न विद्यते त्यक्तगृ-हपाशः। आचा० ४०३।

अणगारो-ऋणकारः, ऋणमिव कालान्तरक्लेशानुभवहेतु-तया ऋणम्-अष्टप्रकारं कर्म तत् करोतीति, तथा तथा गुरुवचनविपरीतप्रवृत्तिभिरुपचिनोतीति। उत्त० २०।

अणगालो-दुष्कालः। बृ० तृ० २३ अ।

अणघा-गिरोगा। नि० चू० प्र० ८० अ।

अणज्झाविअं-अनर्त्तायितम्। ओघ० १०९।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अणच्चावितं-वस्त्रमात्मा वा यत्र न नर्तितः। ठाणा० ३६१। प्रस्फोटनं प्रमार्जनं वा। उत्त० ५४०।

अणच्चासादणाविणए-आशातना तन्निषेधरूपो विनयोऽनत्याशातनाविनयः। भग० ९२२।

अणज्जं - अनार्यम्, अनार्यवचनत्वात्, अधर्मद्वारस्य तृतीयं नाम। प्रश्न० २६।

अणज्जधम्मे-अनार्यधर्मः, क्रूरकर्मकारी। सूत्र० १५८।

अणज्जभावे-अनार्यभावः क्रोधादिमान्। ठाणा० २०९।

अणज्जे-अन्याय्यः, न न्यायोपेतः। प्रश्न० ५।

अणज्जो-अनार्यः, म्लेच्छचेष्टितः। दश० २७५। पापकर्मा। प्रश्न० ४०।

अणज्झाए-अकाले, अस्वाध्यायिके वा। नि० चू० प्र० १० आ।

अणट्टा-अनार्तः-आर्तध्यानविकलः। उत्त० ४४८। सकलदोषविगमतोऽबाधिता। उत्त० ४४९।

अणट्ठा-अनर्थक्रिया, अनर्थाय यत्करणम्, क्रियाया द्वितीयो भेदः। आव० ६४८।

अणट्ठादंडे-अर्थविलक्षणो दण्डः। सम० २५।

अणणुगामी-अननुगामुकः-स्थितप्रदीपवत्। आव० ४२।

अणण्णं-अनन्यः-ज्ञानादिकः। आचा० १६३।

अणण्हकर - 'स्नु-प्रश्रवण' इति वचनात् आस्नवः-आश्रवः कर्मोपादानं तत्करणशील आस्नवकरस्तन्निषेधादनास्नवकरः-प्राणातिपा...श्रववर्जित इत्यर्थः। ठाणा० ४०९।

अणण्हय-अनाश्रवः। आव० २८०।

अणण्हयत्तं-अनंहस्कत्वम्-अविद्यमानकर्मत्वं। उत्त० ५८६।

अणण्हयफले-अनाश्रवफलः, संयमः। भग० १३८।

अणति-प्रज्ञापयति। उत्त० १२८। शब्दयति। आव० ७८८। आदत्ते-गृण्हाति। नि० चू० द्वि० ९ आ।

अणतिक्कमणिज्ज-अनतिक्रमणीयम्, अचालनीयम्। भग० १३५।

अणत्तट्ठिए-अनात्मार्थिकः, नात्मार्थ एव यस्यास्त्यसौ परमार्थकारी। प्रश्न० १११।

अणत्तट्ठियं-अस्वीकृतम्। आचा० ३२५।

अणत्तपन्ने-अनात्मप्रज्ञाः-नात्मने हिता प्रज्ञा येषां ते। आचा० २३४।

अणत्ते-ऋणपीडितः। ठाणा० १६५।

अणत्थको-अनर्थकः, परमार्थवृत्त्या निरर्थकः, परिग्रहस्याष्टाविंशतितमं नाम। प्रश्न० ९३।

अणत्थदंडे-अनर्थदण्डः, अप्रयोजनदण्डः। आव० ८३०।

अणत्थमियसंकप्पे - सूर्यानस्तसमयभोजनसंकल्पवान्। बृ० तृ० १७९ अ।

अणत्थो-अनर्थः अपायः। प्रश्न० ६२। अनर्थहेतुत्वात् परिग्रहस्यैकविंशतितमं नाम। प्रश्न० ९२।

अणदिट्ठं-अनादिष्टं-अविशेषितम्। बृ० तृ० ६६ अ।

अणन्नदंसी-अनन्यदर्शी-यथावस्थितपदार्थद्रष्टा, भगवदुपदेशादन्यत्र न रमते। आचा० १४५।

अणन्नपरमं-अनन्यपरमः-संयमः। आचा० १६६।

अणन्नारामे - अनन्यारामो-मोक्षमार्गादन्यत्र न रमते। आचा० १४५।

अणपज्झो-अजाणमाणो। नि० चू० प्र० ११९ अ।

अणपन्निय-अवान्तरव्यन्तरभेदः। जीवा० १७२

अणप्पगंथो-अनल्पग्रन्थः (अनर्प्यग्रन्थः) बाह्यागमः अविद्यमानो वाऽऽत्मनः सम्बन्धी ग्रन्थो-हिरण्यादिर्यस्य सः। भावधनयुक्तः। औप० ३७।

अणप्पज्झ-(देशी) अनात्मवशः। बृ० द्वि० २०९ अ।

अणप्पज्झो-अनात्मवशः। बृ० तृ० २५८ अ।

अणप्पियं-अनर्पितविषयविभागम्। बृ० तृ० ११० अ। अविशेषितम्। ठाणा० ४८१।

अणप्फिडंतं-अचलत्। नि० चू० द्वि० २२ अ।

अणबलो-ऋणबलः, बलवानुत्तमर्णः। प्रश्न० ३०।

अणब्भुवगओ-अनभ्युपगतः, श्रुतसम्पदाऽनुपसम्पन्नोऽनिवेदितात्मेत्यर्थः। विशे० ६२५।

अणभञ्जकः-ऋणं-देयं द्रव्य भनक्ति-न ददाति यः सः। प्रश्न० ४६।

अणभिक्कंत-अनभिक्रान्तः, अनतिलङ्घितः। आचा० १९३। नाभिक्रान्ता जीवितादनभिक्रान्ता सचेतनेत्यर्थः। आचा० ३२३।

अणभिगताणं-अपरिणता...। बृ० प्र० १३० अ।

अणभिग्गहिओ - अविद्यमानमभीति-आभिमुख्येन गृहीतं ग्रहणं-ज्ञानमस्येत्यनभिगृहीतः - अनभिज्ञः। उत्त० ५६५ अनङ्गीकृता। उत्त० ५६५।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अणभिग्गहिय – न विद्यते आभिमुख्येनोपादेयतया गृहीतं-ग्रहणमस्येत्यनभिगृहीतः। प्रज्ञा० ६०। अनिश्चितमशिवादिभिर्निर्गमभावात्। ठाणा० ३०९।

अणभिग्गहियमिच्छादंसणवत्तिया – अनभिगृहीतमिथ्यादर्शनप्रत्ययिकी, जेहिं न किंचि कुतित्थियमयं पडिवण्णं। आव० ६१२।

अणभिग्गहिया–अनभिगृहीता, अनभिग्रहा यत्र न प्रतिनियतार्थावधारणं सा भाषा। प्रज्ञा० २५६। असत्यमृषाभाषाभेदः। दश० २१०। अर्थानभिग्रहेण योच्यते। भग० ५००।

अणभिजोए–अनभियोगः, इच्छा। आव० ६६८।

अणभिहियं–अनभिहितं, अनुपदिष्टं स्वसिद्धान्ते सूत्रदोषविशेषः। आव० ३७५।

अणभिज्झय–अच्छिद्रे, अभिन्ने। (मर०)

अणराए–रण्णो कालगते–णिब्भए वि जाव णो राया ठविज्जति। नि० चू० तृ० ७१ अ।

अणरायं–राजयुवराजोभयाभिषेकरहितं राज्यम्। बृ० द्वि० ८२ अ। मते रायाणे जाव मूलराया युवराया य एते दोवि अणभिसित्ता। नि० चू० द्वि० १० आ।

अणलगिरि–अनलगिरिः। आव० २९९।

अणला – अपर्याप्ताः, दीक्षापालनेऽसमर्थाः। बृ० द्वि० २८७ आ।

अणलो–अनलः, असमर्थः। आव० २५९। वेयावच्चं प्रति सुत्ते अत्थे अभिगमे परिहरणं। नि० चू० द्वि० ४९ आ।

अणल्लिअंता–अनाश्रयन्तः। ओघ० ९७।

अणवः–स्वल्पाः। उत्त० ४२०।

अणवं–ऋणवान्। सूर्य० १४६। जं० प्र० ४९१।

अणवकंखवत्तिया–अनवकाङ्क्षाप्रत्ययिकी, विंशतिक्रियामध्ये पञ्चदशी। आव० ६१२। अनवकांक्षा–स्वशरीराद्यनपेक्षत्वं सैव प्रत्ययो यस्याः सा। ठाणा० ४३। इहलोकपरलोकापायानपेक्षस्येति। ठाणा०। ३१७।

अणवगल्ल–अनवकल्पः, जरसा अनभिभूतः। भग० २७६। जं० प्र० ९०।

अणवज्जं – अनवद्यम्, सामायिकदशमपर्यायः। आव० ४७४। सामायिकम्। आव० ३६४। पापानुबन्धरहितम्। दश० ११५।

अणवज्जय–अणवर्ज्यता, पापवर्ज्यता। आव० ३७३।

अणवज्जुत्तो–तत्रस्थः, अपृथग्भूतः। आव० ७५८।

अणवट्टप्पा–अनवस्थाप्यः–नावस्थाप्यते-नाधिक्रियते। ठाणा० १६४। कृततपसो व्रतारोपणम्। भग० ९२०।

अणवट्टप्पारिहे–कृततपसो व्रतारोपणम्। भग० ९२०।

अणवट्ठया–अनवस्थाप्यता, हस्ततालादिप्रदानदोषाद्दुष्टतरपरिणामत्वाद् व्रतेषु नावस्थाप्यते इति अनवस्थाप्यः, तद्भावः। आव० ७६४। ठाणा० २००।

अणवट्ठिओ–अनवस्थितः। बृ० प्र० १२५ अ।

अणवट्ठियं–अनवस्थितं, सन्ततम्। जीवा० ३४५। अनियतप्रमाणम्। सूर्य० ८७।

अणवट्ठिया–नावश्यंभाविनः। ठाणा० ३७४।

अणवट्ठिया–अनवस्थिता–येन पुनः प्रतिसेवितेनोत्थापनाया अप्ययोग्यः सन् कंचित्कालं न व्रतेषु स्थाप्यते यावत्साधापि विशिष्टं तपश्चीर्णं भवति पश्चाच्च चीर्णतपास्तद्दोषोपरतो व्रतेषु स्थाप्यते। व्य० प्र० १४ आ।

अणवत्था – अनवस्था, ययकार्यसमाचरणात्प्रायश्चित्तं न दीयते क्रियते वा सा। ओघ० २२७।

अणवदग्गं–अनवदग्रम्, अनन्तम्। प्रश्न० ६३। ठाणा० १२०। औप० ४८। अपर्यवसानम्। सूत्र० ३७२।

अणवन्निय – अणपन्निकाः, व्यन्तरनिकायानामुपरिवर्त्तिनो व्यन्तरजातिविशेषाः। प्रश्न० ६९। वाणमन्तरविशेषः। प्रज्ञा० ९५।

अणवयक्खित्ता–अनवेक्ष्य पश्चाद्भागमनवलोक्य। भग० ३१२।

अणवयग्गं–अनवनताग्रं–अपर्यन्तम्। ठाणा० ४४। अनन्तं, अपारं, अनवनताग्रं–अनवनतं–अनासन्नं अग्रं–अन्तो यस्य तत्। अनवगताग्रं–अनवगतं–अपरिच्छिन्नं अग्रं–परिमाणं यस्य तत्। भग० ३५। कालतोऽपरिमाणम्। व्य० प्र० २५५ अ।

अणवयग्ग–अनवदत्, अनपगच्छत्। उत्त० ५८५।

अणविक्खया–अप्रेक्षणा (गणि०)

अणसणं–अनशनं, भोजननिवृत्तिः। औप० ३७। बाह्यतपोऽशः। उत्त० ६००।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अणसण-अनशनम्, आहारत्यागः। दश० २६। भग० ९२१।

अणसणा-अनशनम्, व्रतविशेषः, उपवासः। भग० १२८।

अणसायणा-अनाशातना, अहीलना। दश० २४१। मनोवाक्कायैरप्रतीपप्रवर्तनम्। उत्त० १७।

अणसिओ-अनशितः, न अशितः-भिक्षाप्रदानानभिज्ञेन लोकेनाभ्यर्हितः। आव० १४४।

अणहं-अनघं, अक्षतम्। सूर्य० २९२। अणहशब्दोऽक्षतपर्यायो देश्यस्तेनाणहं-अक्षतं। जं० प्र० २२१।

अणहवीया-अविणट्ठवीया। नि० चू० प्र० ८० अ।

अणहारए-ऋणधारकः। विपा० ७२।

अणहारेणं-स्वदेशजाहाराभावेनेति। ठाणा० ५४।

अणहिअपरमत्था-अनधिगतपरमार्थाः। (गणि०)

अणहिकडा-अनधिकृता-तल्लक्षणायोगतस्तत्रानन्तभाविनी। प्रज्ञा० २४८।

अणहियासिया-अनध्यासिनी। आव० ४२८।

अणहियासी-अनधिकासिकाः, सञ्ज्ञावेगोत्पीडितः सन् या याति सा। ओघ० २००।

अणहे-अनघः, नास्याघमस्तीति, निरवद्यानुष्ठायी। सूत्र० ६९।

अणहो-अनघः, अक्षतशरीरः। प्रश्न० ११५।

अणाइण्णं-पणगपरिहाणीक्कमेण पत्तं। नि० चू० द्वि० १५७ अ।

अणाइण्णा-अणासेविय। नि० चू० द्वि० १४४ आ।

अणाइन्नं-अनाकीर्णः-असंकुलः। उत्त० ४२८।

अणाइयं-अणातीतं, अनादिकं, अज्ञातिकं, ऋणातीतं अणातीतं वा, अविद्यमानादिकं, अविद्यमानस्वजनं, ऋणं वाऽतीतं ऋणजन्यदुःस्थतातिक्रान्तम्, दुस्थतानिमित्ततयेति ऋणातीतं, अणं वा अणकं-पापमतिशयेनेतं-गतमणातीतम्। भग० ३५। आ-समन्तादतीव इतो-गतोऽनाद्यनन्ते संसारे आतीतः, न आतीतः अनातीतः, अनादत्तो वा संसारो येन स तथा, संसारार्णवपारगामी। आचा० २८६।

अणाइत्तो-अनुपयुक्तः। (महाप्र०)

अणाइयंतो-विवादानतिक्रामन्। व्य० प्र० १० अ।

अणाइले-अनाविलः, अदीनस्य चतुर्थं नाम। अन्त० २२। अकलुषः। प्रश्न० १११। अकलुषः, शुद्धस्वभावः। प्रश्न० १३६।

अणाइसेसि-अनतिशयी, अवध्याद्यतिशयरहितः। आव० २४०।

अणाई-अनादिः, नास्यादिरस्तीति संसारः। सूत्र० ३४१।

अणाउट्टी-अनाकुट्टिः। आव० ३७३।

अणाउत्तं-असावधानता। औप० ४२। अनुपयुक्तः। ठाणा० ४३।

अणाउत्तआइयणया-अनायुक्तवस्त्रादिग्रहणता। ठाणा० ४३।

अणाउत्तपमज्जणया-अनायुक्तपात्रादिप्रमार्जनता। ठाणा० ४३।

अणाउत्तो-अनाकुलः-अक्षणिकता। बृ० तृ० ४४ आ।

अणाउल-अनाकुलः, क्रोधादिरहितः। दश० १६६।

अणाउले-अनाकुलः। आचा० ४२४।

अणाउलो-अनाकुलः। आव० ४०४।

अणाए-अनया। आव० ३९९।

अणाएसे-अनादेशः, न आदेशः, सामान्यम्। उत्त० ३२।

अणागई-अनागतिः, सिद्धिः, अशेषकर्मच्युतिरूपा लोकाग्राकाशदेशस्थानरूपा वा। सूत्र० २२३।

अणागतं-अनागतम्, अनागतकरणात्, पर्युषणादावाचार्यादिवैयावृत्त्यकरणान्तरायसद्भावादारत एव तत्तपःकरणम्। आव० ८४०, ठाणा० ४९८।

अणागमणधम्मिणो-अनागमनधर्म्माणः-यस्मिन् मनुष्यलोके अनागमनं धर्मो येषां ते, न पुनर्गृहं प्रत्यागमनेप्सवः। आचा० २४३।

अणागमो-अनागमः-अनवसरः। आचा० १२२।

अणागयं-अनागतम्, एष्यत्कालम्। आव० ५०९।

अणागय-अनागताम्-आयत्याम्। आव० ५०९। अनागतं, अनागतकरणादनागतम्। भग० २९६।

अणागलिय-अनिर्गलितः-अनिवारितोऽनाकलितः। भग० ६७३।

अणागारं-अनाकारम्, अविद्यमानाकारम्। आव० ८४०। ठाणा० ४९८। अविद्यमानाकारं-यद्विशिष्टप्रयोजनसम्भवाभावे कान्तारदुर्भिक्षादौ महत्तराद्याकारमनुच्चार्यद्भिर्विधीयते तदनाकारम्। भग० २९६।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अणागारपासणया–अनाकारपश्यत्ता-चिन्त्यमानायां प्रकृष्टं परिस्फुटरूपमीक्षणमवसेयम् । प्रज्ञा० ५३० ।

अणागारो–अनाकारः, यथोक्ताकारविकलः । जीवा० १८ । सामान्यग्राही । भग० ७३ ।

अणाजीवी–अनाशंसी । नि० चू० प्र० १८ अ । अनाजीविको–निःस्पृहः । दश० १०६ ।

अणाडिया–अनादृतिः । आव० ९५ । अपराधः । बृ० प्र० ३० आ ।

अणाढायमाणे–अनाद्रियमाणः–संखडिमनादरयन् । आचा० ३२९ ।

अणाढिअस्स–अनादृतनाम्नः जम्बूद्वीपाधिपतेः । जं० प्र० ३३४, जीवा० ३२६ ।

अणाढिउ–जम्बूवृक्षस्थो देवः । ठाणा० ६९ ।

अणाढियं – अनादृतम् , अनादरं सम्भ्रमरहितम् , कृतिकर्मणि प्रथमदोषः । आव० ५४३ ।

अणाढिय–अनादृतः, जम्बूद्वीपाधिपतिर्व्यन्तरसुरः । उत्त० ३५२ । अनादृताद्–अनादराया सा अनादृता, शिथिलस्य या सा । ठाणा० ४७४ ।

अणाणत्ता – अनानात्वाः–नानात्ववर्जिता येष्वेवाधारभूताकाशप्रदेशेष्वेके तेष्वेवेतरेऽपि । भग० ९६१ । नानात्ववर्जिताः देशभेदेनालक्षितनानात्वाः । प्रज्ञा० ७४ ।

अणाणाए–अनाज्ञया, स्वैरिण्या बुद्ध्या । आचा० ११३ । स्वमनीषिकाचरितोऽनाचारः । आचा० २२७ ।

अणाणुकित्ती–जो एवं ण कथयति । नि० चू० प्र० ३३३ आ ।

अणाणुगामिते–अवधिज्ञानस्य द्वितीयो भेदः । ठाणा ३७० ।

अणाणुगामियत्ताते–अननुगामिकत्वाय–अशुभानुबन्धाय । ठाणा० १४९, ३५८ ।

अणाणुपुव्वी–अनानुपूर्वी, यत्र पूर्वपश्चाद्विभागो नास्ति । भग० ८० । अत्थग्गहणाईए पदे अप्पत्तो । नि० चू० द्वि० ५३ अ । अनियतक्रमानुपूर्वी । ठाणा० ४ । यथोक्तप्रकारद्वयातिरिक्तस्वरूपा । अनु० ७३ ।

अणाणुबंधि–न विद्यतेऽनुबन्धः–सातत्यप्रस्फोटकादीनां यत्र तदननुबन्धि । ठाणा० ३६१ ।

अणादिट्ठी–अनादृष्टिः, अन्तकृद्दशानां तृतीयवर्गस्य त्रयोदशमध्ययनम् । अन्त० ३ ।

अणादीओ–अणादिकः, अणं–पापं कर्म आदिः–कारणं यस्य सः । ऋणातीतः, ऋणं–अधर्मेण न देयं द्रव्यं तदतीतोऽतिदुरन्तत्वेनातिक्रान्तः । प्रश्न० ४ । अनादिकः, प्रवाहापेक्षयाऽऽदिविरहितः । प्रश्न० ४ ।

अणादीयं–नास्त्यादिरस्येत्यनादिकं । ठाणा० ४४ ।

अणादेज्ज–अनादेयम्–यदुदयवशादुपपन्नमपि ब्रुवाणो नोपादेयवचनो भवति, नाप्युपक्रियमाणोऽपि जनस्तस्याभ्युत्थानादि समाचरति । प्रज्ञा० ४७५ ।

अणापुच्छा–अनापृच्छा । आव० १९८ ।

अणाबाहं–अनाबाधकत्वं वेदनाभावत्ववत् । उत्त० ५१० ।

अणाबाहि–अनाबाधः–मोक्षसुखम् । ठाणा० ४८८ ।

अणाभिगता–अगहियसुत्तत्था । नि० चू० तृ० १४३ अ ।

अणाभिडंतो–अस्पृशन् । नि० चू० प्र० १८७ अ ।

अणाभोगं–अनाभोगम् , अतिचारविशेषः । आव० ५६४ । विस्मृतिः । ठाणा० ४८५ ।

अणाभोगनिव्वत्तिए – अनाभोगनिर्वर्तितः, यदा त्वेवमेव तथाविधमुहूर्त्तवशाद्गुणदोषविचारणाशून्यः परवशीभूय कोपं कुरुते तदा सकोपः । प्रज्ञा० २९१ ।

अणाभोगबकुसो – अनाभोगबकुशः, योऽनाभोगेनाजानन् करोति सः, बकुशस्य द्वितीयो भेदः । उत्त० २५६ । सहसाकारी । ठाणा० ३३७ ।

अणाभोगवत्तिया – अनाभोगप्रत्ययिकी, विंशतिक्रियामध्ये चतुर्दशी । आव० ६१२ । अनाभोगेन पात्राद्याददतो निक्षिपतो वा । ठाणा० ३१७ । अनाभोग–अज्ञानं प्रत्ययो–निमित्तं यस्याः सा । ठाणा० ४३ ।

अणाभोगे–अनाभोग–अज्ञानम् । भग० ९१९ । एकान्तविस्मरणम् । व्य० द्वि० ३३२ आ ।

अणाभोगो–अनाभोगः, अत्यन्तविस्मृतिः । आव० ८५० । नि० चू० प्र० २९ आ । अज्ञानं । नि० चू० प्र० १४७ आ । विस्मृतिः । आव० ८४८ ।

अणायगे–अनायकः, अन्यो न विद्यते नायकोऽस्येति अनायकः–स्वयम्प्रभुश्चक्रवर्त्यादिः । सूत्र० ६१ । अविद्यमाननायको राजा । सम० ५३ ।

अणायण–अनायतनम् , विरुद्धस्थानम् । दश० २२६ । अस्थानम् , वेश्यासामन्तादि । दश० १६५ ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अणायतणं-अनायतनं, साधूनामनाश्रयः। प्रश्न० १३८। नि० चू० प्र० ११६ अ। स्त्रीपशुपण्डकसंसक्त स्थानम्। ओघ० १२।

अणाययणं-पशुपक्षिमद्गृहं। बृ० तृ० १९५ आ।

अणाययण - स्त्रीपशुपण्डकसंसक्तगृहवज्जणं। नि० चू० तृ० २५ आ।

अणायरिया-अनार्या-अर्द्धषड्विंशजनपदबाह्यानि। आचा० ३७७।

अणायवेतियं-छायायाम्। नि० चू० द्वि० ७६ आ।

अणाया-अनात्मा घटादिपदार्थः। सम० ५।

अणायार-अनाचारः, सावद्ययोगः। दश० २३३।

अणायारो-अनाचारः। आव० ७७८। गिलिते सति आधाकर्मणि दोषविशेषः, यावल्लम्बनोत्क्षेपोत्तरकालम्। आव० ५७६। व्यभिचारः। आव० ५७८। आचारस्य साध्वाचारस्याभावः परिभोगतो ध्वंसः। व्य० प्र० ९० अ।

अणारद्धं-अनारब्धम्, अनाचीर्णम्। आचा० १४८।

अणारिओ-अनार्यः म्लेच्छादिः। प्रश्न० ५। क्रूरकर्म्माणः। आचा० १८६।

अणारिय-आचार्यं मुक्त्वा। बृ० प्र० २४५ अ। म्लेच्छाः। ठाणा० ३०९।

अणारिया-कामकहा। नि० चू० प्र० २५८ अ। अनार्यः-क्षेत्रभाषाकर्मभिर्बहिष्कृतः। सूत्र० ३९३। उत्त० ३५८। अनार्यः-न आर्यः, अज्ञानावृतत्वादसदनुष्ठायी। सूत्र० ३३।

अणारोहए-अनारोहकः, योधवर्जितः। भग० ३२२।

अणालावे-अनालापः-कुत्सित आलापः। ठाणा० ४०७।

अणालिओ-अचेष्टा। आव० ३७०।

अणावडंतो-अस्पृशन्। नि० चू० प्र० १८७ अ।

अणावसं-अवशम्। (मर०)

अणावाय-अनापातः। आचा० ३३५। अनापात-आपातादिरहिता उच्चारभूमी। दश० २३१। उत्त० ५१८। विजनम्। आचा० ३३९। स्त्र्याद्यापातरहितः। उत्त० ६०८।

अणावायमसंलोए-अनापातासंलोकम्। ओघ० १२२।

अणावाहो-मोक्खो। दश० चू० १३।

अणासगं-परिज्ञा। नि० चू० प्र० ३५२ आ। अनशनं। नि० चू० प्र० २५८ अ।

अणासए-अनश्वः, अश्वरहितः। भग० ३२२।

अणासन्नं-अनासन्नं, यद्द्रव्यासन्नं भावासन्नं वा न भवति। ओघ० १२३।

अणासवो - अनाश्रवः, मध्यस्थो रागद्वेषरहितः। सूत्र० २४४। कर्मबन्धनिरोधोपायत्वात्, अहिंसायाः पञ्चत्रिंशत्तमं नाम। प्रश्न० ९९। अनास्रवा-व्रतविशेषाः। आचा० १८२।

अणासायणाविणअ - अनाशातनाविनयः, उपचारविनयभेदः। दश० २४९।

अणासेवियं-अनास्वादितम्। आचा० ३२५।

अणाहपव्वज्जा-उत्तराध्ययनस्य विंशतितमाध्ययननाम। सम० ६४।

अणाहप्पाओ-अनाथात्मानौ। आव० ७१।

अणाहसाला - अनाथशाला-आरोग्यशाला। व्य० द्वि० ५७ आ। नि० चू० द्वि० ३८ आ।

अणाहसालालओ-अनाथशालालयः। आचा० ११९।

अणाहारो-अनिष्टं शोभनमपि न रोचते परि अणाहारो भवति। नि० चू० द्वि० ५१ अ।

अणाहूय - अनाहूतः, अनित्यपिण्डः, अनभ्याहृतो वा, स्पर्धारहितः। भग० २९३। भग० २९४।

अणिंगालं-रागपरिहारेणेत्यर्थः। प्रश्न० ११२।

अणिंत-अनिर्गच्छन्। नि० चू० प्र० २५८ आ।

अणिंदियं-अनिन्दितं-शिष्टनिन्द्येन - स्वपरप्रशंसादिहेतुनाऽनुत्पादितम्। उत्त० ६६७।

अणिंदिआ-अनिन्दिता, अष्टमी दिक्कुमारी। जं० प्र० ३८३।

अणिंदिया - अनिन्दिता, अधोलोकवास्तव्या दिक्कुमारी। आव० १२१।

अणिंदिया - अनिन्द्रियाः अपर्याप्ताः, केवलिनः, सिद्धाः उपयोगतः। ठाणा० ३५५, ५१९।

अणिगणा-अनग्ना, अनग्ना नाम द्रुमगणाः। जं० प्र० ९९।

अणिगामसुक्खा-अनिकामसौख्याः-अप्रकृष्टसुखाः। उत्त० ४००।

अणिगिण- अनग्नत्वम्, सवस्त्रत्वं तद्धेतुत्वादनग्ना इति। सम० १८।

अणिगूहंतो-अनिगूहन्, प्रकटयन्। आव० ५३४।

अणिगूहियबलविरिए - अनिगूहितबलवीर्यः, न निगूहिते बलवीर्ये येन सः बलं-शारीरं वीर्यं-आन्तरः शक्तिविशेषः। आव० २५९।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अणिग्गहो-अनिग्रहः, अनिषेधो मनसो विषयेषु प्रवर्त्तमानस्य, अब्रह्मण एकादशं नाम। प्रश्न० ६६। स्वैरः। प्रश्न० ३१।

अणिच्चं-अनित्यम्, न नित्यमस्थिरत्वात्। प्रश्न० ९६।

अणिच्चमावासं-अनित्यावासः-मनुष्यादिभवस्तच्छरीरम्। आचा० ४२९।

अणिच्चाणुप्पेहा – अनित्यानुप्रेक्षा – जीवितादेरनित्यस्यानुप्रेक्षा। ठाणा० १९०।

अणिच्चेऊण-अ(न)र्चयित्वा। आव० १४६।

अणिच्छियत्ता-अनीप्सितता, आप्तुमनिष्टता। भग० २३। प्राप्तुमनभिवाञ्छितत्वम्। भग० २५३। प्रज्ञा० ५०४।

अणिच्छियव्वो-अनेष्टव्यः, मनागपि मनसाऽपि न प्रार्थनीयः। आव० ५७२, ७७८।

अणिज्जिण्णा-अनिर्जीणः, सामस्त्येनात्मप्रदेशेभ्योऽपरिशाटितः। प्रज्ञा० ६०२।

अणिज्जुहियाअंसी-अनिर्यूढा-कृतविभागापि नान्यत्र नीतांशिका। बृ० द्वि० १९९ आ।

अणिज्झापत्ता-अनिर्ध्याय, चक्षुरव्यापार्य। भग० ३१२।

अणिट्ठं-अनिष्टम्, सतामनभिलषणीयम्। आव० ५८९।

अणिट्ठत्ता-अनिष्टता, इष्टा-मनसा इच्छाविषयीकृता तद्विपरीता अनिष्टा तस्या भावः। प्रज्ञा० ५०४। अनिष्टता, इच्छाया अविषयता। भग० २५३।

अणिण्हवणं-अनपलापः। नि० चू० प्र० ९ अ।

अणितणा-वस्त्रदायिनः। ठाणा० ५१७।

अणितिए-अनितिकः-अविद्यमाननियतस्वरूपः। भग० ४६९।

अणित्थंत्थं – अनित्थंस्थम्, इतीदंप्रकारमापन्नमित्थं, इत्थं तिष्ठतीति इत्थंस्थं, न इत्थंस्थं अनित्थंस्थमिति, केनचित्प्रकारेण लौकिकेनास्थितमिति। आव० ४४५। नेत्थं तिष्ठतीति, अनियताकारम्। जीवा० २५।

अणित्थंथे-अनित्थंस्थं परिमण्डलादिव्यतिरिक्तम्। भग० ८५८, ८५९।

अणिदा-अनिदा-अनिर्द्धारणा। भग० ४४। चित्तविकला सम्यग्विवेकविकला वा। प्रज्ञा० ५५७।

अणिदाणो-अनिदानः, देवेन्द्राद्यैश्वर्याप्रार्थकः। प्रश्न० १४७।

अणिद्देसं-अनिर्देश्यं। विशे० १५५।

अणिधत्तियं-(अणिज्जंतं) कम्मं ण कारविज्जति। नि० चू० द्वि० १०६ अ।

अणिमिसच्छो-अनिमेषाक्षः, निश्चलनयनः। आव० ७८४।

अणिमिसनयणे-अनिमिषनयनम्, विकसितं नयनम्। भग० १७१।

अणिमिसा-अनिमेषा। आव० १२४।

अणिमिसे-अनिमिषाः, मत्स्याः। दश० १०२।

अणियं-अणिकं, अग्रम्-तुण्डम्। प्रश्न० ११५। अनीकं-कटकम्। उत्त० ४३८।

अणियट्ट-अनिवर्त्तः, मोक्षः। आचा० १९३।

अणियट्टिबायरो-अनिवृत्तिबादरः, निवृत्तिबादरादूर्ध्वं लोभाणुवेदनं यावत् भूतग्रामस्य नवमं गुणस्थानम्। आव० ६५०।

अणिअट्टी-भरते भविष्यजिनः। सम० १५४।

अणियण-अनग्नकारणत्वादनग्ना-विशिष्टवस्त्रदायिनः, संज्ञाशब्दो वाऽयमिति। ठाणा० ३९९।

अणियणो-अनग्नः। आव० १११।

अणियतो-अनियतः, अनियमवान्, अनवस्थितः। प्रश्न० २८।

अणियत्तो-अनिवृत्तः। आव० ८२३।

अणियद्दरिसणं -हयगजरथपदात्यनीकदर्शनम्। नि० चू० द्वि० ७१ अ।

अणियया-अनियता-अनिर्धारिता। प्रज्ञा० ३३९।

अणिया-अनिदा, अकारणम्। आचा० ३४। मेधाधारणेन्द्रियपाटवदेहायुर्वर्धनकारी। नि० चू० प्र० २५४ अ। अनाभोगतः। सम० १४६।

अणियाणे-प्रार्थनारहितः। भग० १२३।

अणियाहिवई – अनीकाधिपतयः-गजादिसैन्यप्रधाना ऐरावतादयः। ठाणा० ११७।

अणिलामयी-वातरोगिणी। बृ० द्वि० २१९ अ।

अणिलो-निलओ जस्स नत्थि। दश० चू० ९८।

अणिवारिए-अनिवारितः, निषेधकरहितः। विपा० ५२।

अणिविद्धं-कम्मं ण कारविज्जति। नि० चू० द्वि० १०६ अ।

अणिव्वणं-सचित्तं। नि० चू० प्र० ४३ आ।

अणिसिट्ठं-अनिसृष्टं, बहुसाधारणं सत यदेक एव ददाति। प्रश्न० १५५। परिहारिकम्। नि० चू० प्र० १६१ आ। मृदु-

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कर्तव्यं। ओघ० २१४। ठाणा० ४६०। भग० ४६६। नि० चू० तृ० १६ अ, ४८ आ। तत्स्वामिनाऽनुत्संकलितम्। आचा० ३२५। दोषविशेषः। आचा० ३२९। साधारणं बहूनामेकादिना अननुज्ञातं दीयमानम्। ठाणा० ४६७। दोषविशेषः। प्रश्न० १४४।

अणिसिद्धो-अनिषिद्धः, अनुपयुक्तः। आव० २६७।

अणिस्सि(म्भि)अप्पा-अनिभृतात्मा, अनिदानः। आव० ८४३।

अणिस्सिए-अनिश्रितः, द्रव्यभावनिश्रारहितः प्रतिबन्धविमुक्तः। दश० २२३।

अणिस्सिओवहाणे-अनिश्रितोपधानं, ऐहिकामुष्मिकापेक्षाविकलं तपः, योगसंग्रहे चतुर्थो योगः। आव० ६६४। अनिश्रितं तपः। प्रश्न० १४६।

अणिस्सितं-अनिश्रितम्। आव० ३५८। सर्वाशंसारहितः। भग० ३८५।

अणिस्सियं-अनिश्रितम्, कीर्त्यादिनिरपेक्षम्। प्रश्न० १२६।

अणिस्सिय - अनिश्रितम्, कुलादिष्वप्रतिबद्धम्। दश० ७२।

अणिस्सेयस - अनिश्रेयसः-अमोक्षाय। ठाणा० १४९। अकल्याणाय, अमोक्षाय। ठाणा० २९२। अकल्याणाय। ठाणा० ३५८।

अणिस्सो-अनिश्रः-कस्यचित्संबन्धिनाऽवष्टम्भेन रहितः। उत्त० ६३३।

अणिहय-अनिहतः, अन्तकृद्दशानां तृतीयवर्गस्य तृतीयमध्ययनम्। अन्त० ३।

अणिहे-अनिभः, अमायः। दश० २६८। अनिहः, परीषहोपसर्गैर्निहन्यत इति निहः, न निहः अनिहः-उपसर्गैरपराजित इति। सूत्र० ६९। अस्निहः-अष्टकर्म्मरहितः, अरागः-रागद्वेषरहितः, भावरिपुभिरनिहतः। आचा० १९०। स्निह्यत इति स्निहः, न स्निहः अस्निहः-सर्वत्र ममत्वरहित इति। सूत्र० ६९। अकुट्टिले। दश० चू० १५१।

अणीए-अनीकम्, सैन्यम्। भग० ८९।

अणीयजसे - अनीकयशाः, नागस्य गाथापतेः कुमारः अन्त० ४।

अणीयसे - अन्तकृद्दशानां तृतीयवर्गस्य प्रथममध्ययनम्। अन्त० ३।

अणीसट्ठं-हस्तमानावग्रहादरिक्तटितम्। बृ० द्वि० २३९ अ।

अणीहारि-अनिर्हारि, तपोभेदः। उत्त० ६००।

अणीहारिमे-अनिर्हरणाद् गिरिकन्दरादौ अनशनम्। ठाणा० ९४। जइ बहिं पडिवज्जइ। नि० चू० द्वि० ५८ अ।

अणु - अनु-प्रतिदिवसम्। सूर्य० १३६, १३३। थेवे। दश० चू० ८९। स्तोकप्रदेशम्। प्रज्ञा० २६३। पश्चाद्भावे स्तोके च। बृ० प्र० ३३अ,। स्तोकम्। प्रज्ञा ५०२। प्रमाणतो वज्रादि। दश० १४७। लघुः, हीनः। सूर्य० २६१। जं० प्र० ५२२।

अणुअतणुअ-अनुकतनुकानां-अतिसूक्ष्माणाम्। जं० प्र० २३७।

अणुओग - अनुयोगः, अर्थकथनम् सूत्रादनु-पश्चादर्थस्य योगोऽनुयोगः सूत्राध्ययनात्पश्चादर्थकथनम्। अणोर्वा लघीयसः सूत्रस्य महताऽर्थेन योगोऽनुयोगः। आचा० २। व्याख्यानः। ओघ० ७१।

अणुओगत्थो-अनुयोगार्थः, व्याख्यानभूतोऽर्थः। आचा० ७।

अणुओगदारं - अनुयोगद्वारम्, सूत्रविशेषः। आव० ७४०। अस्वाध्याये परिहर्तव्यसूत्रविशेषः। नि० चू० तृ० ७१ आ०।

अणुओगदारे-अनुयोगद्वारम्, अनुयोगद्वारसूत्रम्। भग० २२१।

अणुओगस्स-अनुयोगस्य। विशे० ५९३।

अणुओगो - अनुयोगः, सूत्रस्यार्थेनानुयोजनम्, अभिधेये व्यापारः सूत्रस्य योगो वा, अनुकूलोऽनुरूपो वा योगः। आव० ८६, ठाणा० ४८१। निजेनाभिधेयेनार्थेनानुयोजनं-सम्बन्धनम्। विशे० ५९३। सूत्रपाठानन्तरमनु-पश्चात्सूत्रस्यार्थेन सह योगो-घटना। जीवा० २। अनुकूलः-अविरोधी सूत्रस्यार्थेन सह योगो वा। जीवा० २। सूत्रस्यार्थेन सह सम्बन्धनं, अनुरूपोऽनुकूलो वा योगो व्यापारः सूत्रस्यार्थप्रतिपादनरूपः। अणोः-लघोः पश्चाज्जाततया वाऽनुशब्दवाच्यस्य योऽभिधेयो योगो-व्यापारस्तत्सम्बन्धो वाऽणुयोगो अनुयोगो वा। जं० प्र० ४। दृष्टिवादचतुर्थो भेदः। सम० १२८। नियोगः। आव० ६९४। अनुयोजनम्, अनुकूलो वा योगः। अणु-सूत्रं, महान्

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अर्थस्ततो महतोऽर्थस्याणुना सूत्रेण योगो वा। ओघ० ४। विचारः। ठाणा० ४८१, ४९५। अनुरूपोऽनुकूलो वा योगः। सम० १३१। अध्ययनार्थः। आव० ५४। सूत्रस्पर्शकनिर्युक्तिः सूत्रानुगमश्च। आव० ८६। परीक्षा। आव० १५७।

अणुकंपं-अनुकम्पां-उपष्टम्भम्। ठाणा० १७०।

अणुकंपओ-अनुकम्पकः-अनुरूपक्रियाप्रवृत्तिः। उत्त० ३५९।

अणुकंपा-अनुकम्पा, अनुग्रहः। दश० ६७। भक्तिः। ओघ० १९६। आव० ३४८। सम्यक्त्वगुणविशेषः। आव० ५९१। अनुक्रोशः। सम० १२७। दीनानाथविषयं दानम्। ठाणा० ४९६।

अणुकंपाए-अनुकम्पया-अनुग्रहेण। व्य० द्वि० १७२ आ।

अणुकंपे-अनुकम्पते, उपकुरुते। उत्त० ४१९।

अणुकड्ढइ-अनुकर्षयति। आव० २१८।

अणुकुप्पति-प्रच्छादयति, अणुक्षिप्ता। नि० चू० प्र० १८० अ।

अणुकुयितं-अश्लथम्। बृ० द्वि० २५२ अ।

अणुकूला-संजमविग्घकरा (राज्यार्पणादिकाः)। नि० चू० प्र० १९४ आ।

अणुक्कंतो-अनुक्रान्तः-अनुचीर्णः। आचा० ३०६।

अणुक्कमं-अनुक्रमः। आव० ३४२। पारम्पर्यम्। उत्त० १४७।

अणुक्कमंतो-अनुक्रम्यमाणः, प्रेर्यमाणः। सूत्र० १३६।

अणुक्कसाई-अनुत्कशायी, अणुकषायी, उत्कण्ठितः सत्कारादिषु शेत इत्येवं शील उत्कषायी, न तथा। यो न सत्कारादिकमकुर्वते कुप्यति, तत्सम्पत्तौ वा नाहङ्कारवान् भवति सः। उत्त० १२४। अणवः-स्वल्पाः संज्वलननामान इतियावत् कषायाः-क्रोधादयो यस्य। उत्त० ४२०।

अणुगच्छइ-अनुगच्छति, आसन्नो भवति। जं० प्र० १८७।

अणुगच्छण-अनुगमनम्, आगच्छतः प्रत्युद्गमनम्। दश० २४१।

अणुगच्छमाणो-अनुगच्छन्-अवगच्छन्-बुद्ध्यमानः सन्। आचा० २२२।

अणुगम-अनुगमः, अनुगमनमनेनास्मादस्मिन्निति वा अर्थकथनम्। आचा० ३। अन्वयः। विशे० ९६४।

अणुगमणं-अनुगमनम्, आगच्छतः प्रत्युद्गमनम्। उत्त० १७।

अणुगमिओ-अनुगमितः, अनुनीतः। आव० ५५।

अणुगमो-अनुगमः, सूत्रार्थयोरनुरूपसंबंधकरणम्। विशे० ४३१। निक्षिप्तसूत्रस्यानुकूलः परिच्छेदोऽर्थकथनम्। जं० प्र० ५।

अणुगयं-अनुगतं, अनवच्छिन्नम्। प्रश्न० ६६। युक्तम्। दश० २०७। अभिप्रायानुवर्तिनमात्मानम्। उत्त० ३२२। युक्तः। उत्त० ६३१।

अणुगामं-अनुग्रामः, ग्राममार्गानुकूलः लघुर्वा ग्रामः, रुढित एकस्माद्वा ग्रामादन्यो ग्रामः। उत्त० ९९।

अणुगामियत्ताए-अनुगामिकता-परम्परया शुभानुबन्धसुखाय भविष्यति। जीवा० २४२।

अणुगीया-अनुगीता तीर्थकरादिभ्यः श्रुत्वा प्रतिपादिता। उत्त० ३८५।

अणुग्गह-अनुग्रहः, अनुग्रहपरिहरणा अक्खोडभंगपरिहरणा, (अकृष्टभूशुल्कपरिहारः) आव० ५५२। ज्ञानाद्युपकारः। ठाणा० १५५।

अणुग्गहकसिणं-छण्हं मासाणं आरोवियाणं छद्दिवसा गता, ताहे अण्णो छम्मासो आवण्णो, ताहे जं तेण अद्धवूढं तं ज्झोसितं जं पच्छा आवण्णं छम्मासितं तं वहति, एत्थ पंचमासा चउव्वीसं च दिवसा जेग ज्झोसिया। नि० चू० तृ० १३५ अ।

अणुग्गहत्थं – अनुग्रहार्थं-अनुग्रहः – उपकारोऽभिधीयते, अर्थशब्दः प्रयोजनवचनः। ओघ० ४।

अणुग्गहपरिहारो-अनुग्रहपरिहारः-राजकृतानुग्रहवशेन एकद्वित्र्यादिवर्षमर्यादया यथोक्तरूपं खोटादिभंजनं एकं द्वे त्रीणि वर्षाणि यावत् वसति, यावन्तं वा कालं राज्ञानुग्रहः कृतस्तावन्तं कालं वसति, न च हिरण्यादि प्रददाति, नापि वेष्टिं करोति, न चापि चारभटादीनां भोजनादि प्रदानं विधत्ते, एष खोटादिभंगो। व्य० प्र० ४५ अ। तत्तियं कालं सो दव्वादिसु परिहरिज्जति तावत्कालं न दण्ड्येतेत्यर्थः। नि० चू० तृ० ८९ आ।

अणुग्गहो-अनुग्रहः, उपकारः। ओघ० ४।

अणुग्गामो-अनुग्रामः, विवक्षितग्रामानन्तरो ग्रामः। औप० २२।

अणुग्घाई-अनुद्घातिकं-यत्र गुरुमासादि प्रायश्चित्तं वर्ण्यते। प्रश्न० १४५।

अणुग्घाडिया-अनुद्घाटिता, अस्पृष्टा। दश० ४१।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अणुग्घाता गुरवः। नि० चू० प्र० ८७ अ।
अणुग्घातियं-जं णिरंतरं वहति गुरुं। नि० चू० प्र० ३०५ आ। गुरुगं। नि० चू० प्र० २५७ अ।
अणुग्घायं-आचारप्रकल्पस्य सप्तविंशतितमो भेदः। आव० ६६०।
अणुग्घायकसिणं-जं कालगं जहा मासगुरुगादि अहवा जं णिरंतरं दागं एस मासलहुगादिंपि णिरंतरं दिज्जमाणं अणुग्घातं भवति। नि० चू० तृ० १३५ आ।
अणुग्घायण-अणोद्घातन-अणत्यनेन जन्तुगणश्चतुर्गतिकं संसारमित्यणं-कर्म्म तस्योत्-प्राबल्येन घातनम्-अपनयनम्। आचा० १४७।
अणुग्घायाणि-गुरूणि प्रायश्चित्तानि। बृ० तृ० ६७ अ।
अणुघट्टंता-अतृप्यन्तः। ओघ० ७८।
अणुघाइयं-अनुद्घातं, न विद्यते उद्घातो--लघुकरणलक्षणो यस्य तपोविशेषस्य तत् यथाश्रुतदानं, तद्येषां प्रतिषेवाविशेषतोऽस्ति ते। ठाणा० ३११।
अणुचरिया-चरिका, नगरप्राकारयोरपान्तराले। बृ० तृ० ५३ अ।
अणुचिण्णो-अनुचीर्णम्, आचरितम्। आव० २२७। अनुष्ठितः। ओघ० १०३।
अणुचिंतणं-अनुचिन्तनम्, पर्यालोचनम्। आव० ५८९।
अणुचिन्नं--अनुचीर्णम्, सम्यक् तदर्थावगमासंगशक्तिगर्भानिवर्तकसमभावप्राप्त्या धर्ममेघनामकसमाधिरूपेण परिणमितम्। जीवा० ४। अनुचीर्णाः-कायसंगमागताः सम्पातिमादयः। आचा० २१७।
अणुचिय-अनुचितः-भावितः शैक्षो वा। बृ० द्वि० २३८ अ।
अणुजत्तं-अनुयात्रम्। उत्त० ३०४। अनुयात्रा, राजपाटिका। आव० ७२०।
अणुजत्ता-अनुयात्रा। आव० ३६५।
अणुजाए-अनुजातः, सदृशः। सूर्य० २३३।
अणुजाणं-रथयात्रा। बृ० द्वि० १५५ अ। बृ० प्र० २५८ आ। व्य० द्वि० १७ आ।
अणुजाणपेक्खओ-अनुयानप्रेक्षकः। आव० ५७७।
अणुजाणे-अनुजानन्। उत्त० २९३।
अणुजाते-पितृसमः। ठाणा० १८४।
अणुजायं-अनुयातं, भृतम्। जं० प्र० २१२।
अणुजीवंति-अनुजीवन्ति-तदुपार्जितवित्ताद्युपभोगतः उपजीवन्ति। उत्त० ४४१।
अणुजोगगत – तीर्थंकरादिपूर्वभवादिव्याख्यानग्रंथो गण्डिकानुयोगश्च भरतनरपतिवंशजानां निर्वाणगमनानुत्तरविमानवक्तव्यताव्याख्यानग्रन्थ इति द्विरूपेऽनुयोगे गतोऽनयोगगतः। ठाणा० ४९१।
अणुजोगी – अनुयोगी-अनुयोगो-व्याख्यानं प्ररूपणं वा। ठाणा० ३७५।
अणुजोगो-अणोः-लघोः पश्चाज्जाततया वा अनुशब्दवाच्यस्य सूत्रस्य योऽभिधेये योगो-व्यापारस्तेन सम्बन्धो वा सोऽणुयोगोऽनुयोगो वेति। ठाणा० ३। अणु-पच्छाभावओ य थेवे य। बृ० प्र० ३३ अ। विचारः। सम० ५०। सूत्रस्यार्थेन सह सम्बन्धनम्, सूत्रस्यार्थप्रतिपादनरूपः। ठाणा० ३।
अणुज्जंगी-अनवद्याङ्गी, शिवादेवीविशेषणम्। उत्त० ४९६। श्रीमहावीरस्वामिनः सुता जमालेर्भार्या, प्रियदर्शनाऽपरनाम। उत्त० १५३।
अणुज्जइज्जमाणाई-एकं स्वरूपतोऽनृजूनि अपरं च तेषां कचित्कार्येऽनुपयोगात्केनचिदनृजूक्रियमाणानि। उत्त० ५४९।
अणुज्जता-ऋजुभावविरहितः। नि० चू० प्र० २८९ आ।
अणुज्जा-अनवद्याङ्गी, श्रीमहावीरस्वामिनो ज्येष्ठा भगिनी, सुदर्शनाऽपरनाम। उत्त० १५३। महावीरस्वामिनः पुत्रीनाम। आचा० ४२२।
अणुज्झियत्तं-वराकत्वम्। बृ० तृ० २ आ।
अणुज्जुए – अनृजुकः, कश्चिद्दजूकर्त्तुमशक्यतया। उत्त० ६५६।
अणुज्जुकं-अनृजुकम्, वक्रम्, अधर्मद्वारस्य नवमं नाम। प्रश्न० २६।
अणुट्ठाणे-अनुत्थाने। ठाणा० ३३०।
अणुट्ठिएसु-अनुत्थितेषु-श्रावकादिषु। आचा० २५६।
अणुट्ठिया-अनुत्थिता, निविष्टा। आव० ७२७।
अणुट्ठिहंतो-अनुत्तिष्ठन्तः। बृ० तृ० ४ अ।
अणुण्णवण-अनुज्ञापयति। ओघ० १९९।
अणुण्णवणाजयणा – वसत्याद्यनुज्ञापनदोषगुणाः। नि० चू० तृ० १२ आ।
अणुण्णवेंति-अनुज्ञापयन्ति। आव० ११७।
अणुण्णासं-नासिकाविनिर्गतस्वरानुगतम्। जं० प्र० ४०।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अणुण्णेत्ता–अनुनीय–प्राप्य ध्यात्वा । सम० १२३ ।

अणुतडियभेय–अनुतटिकाभेदः, अवटतटभेदवद् यो भेदः । भग० २२४ ।

अणुतडियाभेदे–अनुतटिकाभेदः, इक्षुत्वगादिकः । प्रज्ञा० २६७ ।

अणुत्तपत्तो–लज्जनीय । नि० चू० प्र० २६६ आ ।

अणुत्तरं–अनुत्तरम् , सम्यक् । दश० १५९ । अनन्यसदृशः । आव० ६० । अनुत्तरं–सर्वसंयमस्थानोपरिवर्त्तिनं । उत्त० ३९३ । अनुत्तरां–सर्वलोकाकाशोपरिवर्त्तिनीमतिप्रधानां वा । उत्त० ३९३ ।

अणुत्तर–अनुत्तरम् , वृद्धिरहितम् । आचा० १४ ।

अणुत्तरणवासो-अनुत्तरणपाशः, आत्मनः पारतन्त्र्यहेतुतया पाशवत्पाशः, अनुत्तरणश्चासौ पाशश्च । उत्त० ४३ । अनुत्तरणवासः–न विद्यते उत्तरणं–पारगमनमस्मिन् सतीत्यनुत्तरणः, स चासौ वासश्च–अवस्थानम् । उत्त० ४३ ।

अणुत्तरनाणी–केवलज्ञानवान् । उत्त० २७० ।

अणुत्तरधरे–न विद्यते उत्तरमन्यत्प्रधानमेषामिति । उत्त० ३५७ ।

अणुत्तरधरो–अनुत्तरधरः, न विद्यते उत्तरं–अन्यत्प्रधानमेषामित्यनुत्तराः, ते च प्रक्रमात्प्रकर्षप्राप्ता ज्ञानादय एव गुणास्तान् धारयतीति । अनुत्तरान् गुणान् धारयतीति वा । उत्त० ३५७ ।

अणुत्तरविमाणे–नैषामन्यान्युत्तराणि विमानानि सन्ति इति अनुत्तरविमानानि । अनु० ९२ ।

अणुत्तरे – स्थित्यादिभिः सकलनरकज्येष्ठेऽप्रतिष्ठान इति । उत्त० ३९२ ।

अणुत्तरो–अनुत्तरः–न विद्यन्ते उत्तराः–प्रधानाः स्थितिप्रभावसुखद्युतिलेश्यादिभिरेभ्योऽन्ये देवाः । उत्त० ७०२ ।

अणुत्तरो–अनुत्तरः, कृष्णवासुदेवागमनम् । आव० १६३ । अचल १ विजयभद्र २ बलदेवत्रयागमनम् । आव० १६३ ।

अणुत्तरोववाइय–अनत्तरोपपातिकम् । भग० २२२ ।

अणुत्तरोववाइया–अनुत्तरोपपातिकाः । प्रज्ञा० ६९ ।

अणुदिन्नं–(अनुदीर्णम्) । भग० ५८ ।

अणुदिसा–अनुदिशः, प्रतिदिशः । दश० २०१ । एकप्रदेशा अनुत्तराः (दिक्कोणाः) । ठाणा० १३३ ।

अणुद्दिट्ठो–अनुद्दिष्टः,यावन्तिकादिभेदवर्जितः । प्रश्न० १०८ ।

अणुद्धरी–अनुद्धरी, आत्मदोषोपसंहारविषये द्वारवत्यामर्हमित्रश्रेष्ठिभार्या । आव० ७१४ ।

अणुद्धुअ – अनुद्धूताम् , आनुरूप्येण यथामार्दङ्गिकविधि उद्धूता–वादनार्थमुत्क्षिप्ता । जं० प्र० १९४ ।

अणुधम्मो–अनुधर्मः । सूत्र० ३९९ ।

अणुनई–अनुनदि, नदीं नदीं प्रति । आव० ४५३ ।

अणुनवनं–अनुज्ञातम् । ओघ० १६० ।

अणुनाओ–अनुज्ञातः । ओघ० २१५ ।

अणुनासं–सानुनासिकं नासिकाकृतस्वरम् । ठाणा० ३९६ ।

अणुन्नया–अनुन्नया–नोर्ध्वमुखा । व्य० द्वि० २३७ आ ।

अणुन्नवणा–अनुज्ञापना, वन्दनके द्वितीयं स्थानम् । आव० ५४८ ।

अणुन्नविय – अनुज्ञापितः । आचा० ४२६ । अनुज्ञाप्य–याचित्वा । आचा० ३३८ ।

अणुन्नवेमाण – तत्स्वजनादींस्तत्परिष्ठापनायानुज्ञापयन्तः । ठाणा० ३५४ ।

अणुन्ना–अनुज्ञा, अनुमोदनम् । सूत्र० ३२९ । सूत्रार्थयोरन्यप्रदानम् । व्य० प्र० २६ अ । अधिकारदानं । ठाणा० १३९ ।

अणुन्नायं–अनुज्ञातम् , भोग्यतयैव वितीर्णम् । प्रश्न० १०२ ।

अणुपभु – जुवराया, सेणावति । नि० चू० प्र० १७४ आ । सेनाधिपतिः । बृ० प्र० ९०आ ।

अणुपरियन्ति–अनुपरियन्ति, सातत्येन पर्यटन्ति । उत्त० २९६ ।

अणुपरिवट्टइ – अनुपरिवर्त्तयते, आत्मनश्चावयते । सूर्य० १०७ ।

अणुपरिवट्टिय – अनुपरिवर्त्य, प्रादक्षिण्येन परिभ्रम्य । जीवा० ३७५, ३९९ ।

अणुपरिहारी–जतो जतो परिहारी गच्छति ततो ततो अणुपिट्ठतो गच्छति । अणु–थोवं पडिलेहणादि साहेज्जं करेतीति । नि० चू० तृ० १३२ आ ।

अणुपविट्ठे-अनुप्रविष्टः–तदुदयवर्ती । ठाणा० २१९ ।

अणुपस्सओ–अनुपश्यतः–पर्यालोचयतः । उत्त० ३१० ।

अणुपात्तं–कम्मं ण कारविज्जतित्ति । नि० चू० द्वि० १०६ अ ।

अणुपालइत्ता–अनुपाल्य–सततमासेव्य । उत्त० ५७२ ।

Jain Education International 2010_05   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

अणुपालणा-अनुपालना, अनु० विशुद्धिः, प्रत्याख्यान-शुद्धयाः पञ्चमो भेदः । आव० ८४७ ।

अणुपालणासुद्धं-अनुपालनाशुद्धं-कान्तारादिषु न भग्नं यत्प्रत्याख्यानम् । ठाणा० ३४९ ।

अणुपालियं-अनुपालितं, पूर्वकालसाधुभिः पालितत्वाद्विवक्षितसाधुभिश्चानु-पश्चात्पालितमिति । प्रश्न० ११३ ।

अणुपालिया-आत्मसंयमानुकूलतया पालिता । ठाणा० ४४० ।

अणुपालेइ-अनुपालयति । भग० १२१ ।

अणुपालेमि अनुपालियामि, पौनःपुन्यकरणेन । आव० ७६१ ।

अणुपिट्ठिं-आनुपूर्व्या । सम० ६८ ।

अणुपुव्वसोअनुपूर्वतः, क्रमेण । उत्त० २१२ । आनुपूर्व्या० क्रमेण । उत्त० ५१८ ।

अणुपुव्वि-अनुपूर्वी, मूलादिपरिपाटी । जं० प्र० २९ । शास्त्रीयोपक्रमभेदः । आचा० ३ ।

अणुपुव्विविहारीणं -- अनुपूर्वविहारिणां-प्रतिपालितदीर्घसंयमानां शास्त्रार्थग्रहणप्रतिपादनोत्तरकालमवसीदत् संयमाध्ययनाध्यापनक्रियाणां निष्पादितशिष्याणामुत्सर्गतः द्वादशसंवत्सरसंलेखनाक्रमसंलिखितदेहानां । आचा० २६० ।

अणुपुव्वेणं-आनुपूर्व्या-यथेष्टकालावश्यकक्रियारूपया चतुर्थषष्ठाचाम्लादिकया । आचा० २८४ । अनुक्रमेण-परिपाट्या यौगपद्येन । आचा० २४१ ।

अणुपुव्वो-अनुपूर्वः, पूर्वस्याः पूर्वस्या अनु । जीवा० २७० ।

अणुपेहा-अनुप्रेक्षा, अनु-पश्चाद्भावे प्रेक्षा प्रेक्षा, स्मृतिः, ध्यानाद्भ्रष्टस्य चित्तचेष्टा । आचा० ५८३ ।

अणुपेहे-अनुगुणनं करोति । ओघ० ८४ ।

अणुप्प-अनर्प्यः-अनर्पणीयः, अढौकनीयः । ठाणा० ४६५ ।

अणुप्पगंथे- अनूरूपत्तया-औचित्येन विरतेर्नत्वपुण्योदयादणुरपि वा-सूक्ष्मोऽप्यल्पोऽपि प्रगतो ग्रन्थो-धनादिर्यस्य यस्माद्वा । ठाणा० ४६५ ।

अणुप्पयाउं-अनुप्रदातुं-परंपरकेण प्रदातुम् । व्य० प्र० २१७ आ ।

अणुप्पवाए-अनूप्रवादः पूर्वविशेषः । उत्त० १६३, विशे० ९६१ ।

अणुप्पवादपुव्वं-अनुप्रवादपूर्वम् । आव० ३१६ ।

अणुप्पविसे-अनुप्रविशेत्, मनसि लब्धास्पदो भवेत् । उत्त० ९९ ।

अणुप्पसूयाइं-अनुप्रसूता-आश्रिता । आचा० ३४८ ।

अणुप्पियं अनुमतम् । बृ० द्वि० ३ अ ।

अणुप्पेच्छा-अविह्वला । उप० मा० १४० ।

अणुप्पेह-- धर्म्मध्यानस्य पश्चात्प्रेक्षणानि-पर्यालोचनान्यनूप्रेक्षा । भग० ९२६ ।

अणुप्पेहा-मनसा । बृ० द्वि० ५४ आ । अनुप्रेक्षा, अर्हद्गुणानां मुहुर्मुहुः सततमनूचिन्तना । आव० ७८६ । यो मनसा परिवर्त्तयति, न वाचा । दश० ३२ । ध्यानोपरमकालभाविनी अनित्यत्वाद्यालोचनारूपा । आव० ५९० । सूत्रार्थानुस्मरणं ध्यानस्य पश्चात् पर्यालोचनानि, भावना । ठाणा० १९० । सूत्रवदर्थेऽपि सम्भवति विस्मरणमतः सोऽपि परिभावनीय इत्यनुप्रेक्षणं, चिन्तनिका । ठाणा० ३४९ । ग्रंथार्थयोः चिन्तनम् । ओघ० १८९ ।

अणुफासे अनुस्पर्शः, अनुभावः । दश० १९८ ।

अणुफासो-अणुभत्रो । दश० चू० ९६ ।

अणुबंध अनुबन्धः, निरन्तरम् । ओघ० १०८ । सन्तानभावेन प्रवृत्तिः । जं० प्र० १२५ ।

अणुबंधो- विवक्षितपर्यायेणाव्यवच्छिन्नेनावस्थानम् । भग० ८०८ । सातत्येन भवनं तन्मरणानाम् । उत्त० २३९ ।

अणुबद्धं-अनुबद्धम् सन्ततम् । आव० २२८ । ठाणा० ४३० ।

अणुबद्धरोसपसरो-अनुबद्धः-सन्ततः, कोऽर्थ ?-अव्यवच्छिन्नो रोषस्य-क्रोधस्य प्रसरो-विस्तारोऽस्येति अनुबद्धरोषप्रसरः । उत्त० ७११ ।

अणुबद्धा-सन्ततमालिंगिता । सम० १२६ ।

अणुबलं-अनुबलम् । उत्त० १७८ ।

अणुब्भडो-अनुद्भटः, अनुल्बणः । जीवा० २७५ । उत्त० ५८७ ।

अणुभवणसण्णा-अनुभवनसंज्ञाः, आहाराद्याः । आचा० १२ ।

अनुभवो-अनुभवः, स्वेन स्वेन रूपेण प्रकृतिनां विपाकतो वेदनानुभवः । विशे० १००६ ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अणुभाग – अनुभागः, आयुर्द्रव्याणामेव विपाकः। भग० २८०। अचिन्त्या शक्तिर्वैक्रियकरणादिका। ठाणा० ६९, १४४।

अणुभागकम्मे – अनुभागकर्म-कर्मप्रदेशानां संवेद्यमानताविषयो रसस्तद्रूपं कर्म। भग० ६५।

अणुभागो–अनुभागः, विशिष्टवैक्रियादिकरणविषयाऽचिन्त्या शक्तिः। जीवा० १०९। सामर्थ्यम्। प्रज्ञा० ८८।

अणुभावकम्मे–यथाबद्धरसो वेद्यते तदनुभावतो वेद्यं कर्मानुभावकर्मेति। ठाणा० ६६।

अणुभावनामनिहत्ताउए – अनुभावनामनिधत्तायुः–अनुभावः–प्रकर्षप्राप्तो विपाकः, तत्प्रधानं नाम, यद्यस्मिन् भवे तीव्रविपाकं नामकर्मानुभूयते त(य)था नारकायुषि अशुभवर्णगन्धरसस्पर्शोपघातानादेयदुःस्वरायशःकीर्त्यादिनामानि तदनुभावनाम तेन सह निधत्तमायुरनुभावनामनिधत्तायुः। प्रज्ञा० २१८।

अणुभावे–अनुभावः, विपाको रसविशेषः। भग० ३५। तीव्रतमदुःखादिः। आव० ४९६। अनुभावः। सूर्य० २७९। विपाक उदयो रस इत्यर्थः। ठाणा० ४१४।

अणुभावो–अनुभावः, माहात्म्यम्। सूत्र० १२६। विपाकः। प्रज्ञा० २१८। स्वभावः, स्वरूपम्। जं० प्र० २९९। तीव्रादिभेदो रसः। सम० १०। शापानुग्रहसामर्थ्यम्। उत्त० ३६५। प्रभावः। जं० प्र० २४६। रसः, विपाकः। विशे० ५६५। कारणम्। जीवा० ३३९। विपाकोदयः। जीवा० १३०। सामर्थ्यादिलक्षणः। आव० ५९६। विपाकः। आव० ५९८। रसः। उत्त० २३०।

अणुभासइ–अणुभाषते। आव० ३११।

अणुभासणा–अनुभाषणा, प्रत्याख्यानशुद्धिः। आव० ८४७।

अणुभासमाण–अनुभाषमाण। विशे० १००५।

अणुमए–अनुमतम्, मानितम्। भग० १२२। कार्य्यव्याघातस्य पश्चादपि मतः। भग० ४६८।

अणुमओ–अनुमतः, अभिष्टो मोक्षाङ्गता। आव० ३२६। अभिप्रेता। बृ० प्र० २८९ आ।

अणुमगा–शीघ्रम्। (आउ०)

अणुमतं–अनुमतं, वैगुण्यदर्शनस्यापि पश्चान्मतम्। औप० ९६।

अणुमन्ना–अनुमतिः। बृ० तृ० १२८ अ।

अणुमयं–अनुमतम्, अभिरुचितम्। ओघ० ६४। अनुमतः–सम्मतः। जीवा० २७६।

अणुमया–अनुमता, अनुज्ञाता। प्रज्ञा० २५७। विप्रियदर्शनस्य पश्चादपि मता। विपा० ४२।

अणुमहत्तरो – मूलमहत्तरे असण्णिहिते जो पुच्छिज्जो धुरे ठायति सो। नि० चू० प्र० १५८ आ।

अणुमहयरो–मूलमहत्तराभावे प्रष्टव्यः पुरःस्थानश्च। बृ० द्वि० १९० आ।

अणुमाणं–अनुमानम्, स्वार्थम्। आव० ४२७। दृष्टान्तः। दश० १३०, १२६।

अणुमाणइत्ता–लघुतरापराधनिवेदनेन मृदुदण्डादित्वमाचार्यस्याकलय्य यदालोचनम्। भग० ९१९। अनुमानं कृत्वा। ठाणा० ४८४।

अणुमाणे–अनुमानम्, अनु–लिङ्गग्रहणसम्बन्धस्मरणादेः पश्चान्मीयतेऽनेनेत्यनुमानम्। भग० २२२। अन्विति–लिगदर्शनसम्बन्धानुस्मरणयोः पश्चान्मानं – ज्ञानमनुमानम्। ठाणा० २५४।

अणुमाणेउं – अनुमान्य, सम्यक् क्षमयित्वा। व्य० प्र० २५४ अ।

अणुमोदणे–साइज्जणाभेओ। नि० चू० प्र० १०३ आ।

अणुम्मुअंतो–अनुन्मुञ्चन्, अपरित्यजन्। आव० ४०७।

अणुयत्तंतं–अनुवर्त्तयन्। आव० ३०५।

अणुया–अणुकाः। दश० १९३।

अणुयाणं–रथयात्रा। बृ० तृ० ६१ आ। पडिमातिमहिमा। नि० चू० प्र० २३९ आ।

अणुयोगं–अनुयोगो, व्याख्यानं विधिप्रतिषेधाभ्यामर्थप्ररूपणम्। विशे० २।

अणुरंगा–गड्डीए। नि० चू० प्र० ३२४ अ। घंसिका, यानविशेषः। बृ० द्वि० १२५ आ।

अणुरंगिणी–अनुरङ्गिनी, अनुरज्यते–अनुकारं विदधातीत्येवंशीला। जं० प्र० ५१८। सूर्य० १३६।

अणुरंगो–घंसिओ। नि० चू० तृ० ३७ आ।

अणुरत्ता–अनुरागः – भावतः प्रतिबन्धः। उत्त० ३९४। आन्तरप्रतियोगतः परस्परस्नेहवन्तौ। उत्त० ५२१। अनुरक्ताः–सततं प्रतिबद्धाः। उत्त० ७०८।

अणुराओ–अनुरागः। आव० ३०४।

अणुरागयं–अन्वागतम्, अनुरूपमागमनम्। भग० ११७

अणुराधा–अनुराधा, नक्षत्रविशेषः। सूर्य १३०।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अणुराहा–नक्षत्रविशेषः । ठाणा० ७७ ।

अणुलिंपइ–अनुलिम्पति । जीवा० २५४ ।

अणुलिंपणं–अनुलिम्पनं–सकृल्लिप्ताया भूमेः पुनर्लेपनम् । प्रश्न० १२७ ।

अणुलिहंतं – अनुलिखत्, अभिलङ्घयत् । सूर्य० २६४, जीवा० ३७९, जं० प्र० २९७ । अनुलिखत्–अतिलङ्घयत् । प्रज्ञा० ९९ ।

अणुलिहंति–अनुलिखति, अभिलङ्घयति । जीवा० २०९ ।

अणुलेवणं – अनुलेपनम्, सकृल्लिप्तस्य पुनः पुनरुपलेपनम् । प्रज्ञा० ८० ।

अणुलोमं–अनुलोमम्, अनुकूलमनुगुणं वा । जीवा० ३ । अनुकूलकरणम्० । ठाणा० ३७६ ।

अणुलोमछाया–अनुलोमच्छाया, सूर्यच्छायाविशेषः । सूर्य० ९५ ।

अणुलोमणा–अनुलोमना–प्रज्ञापना । बृ० तृ० १२३ आ ।

अणुलोमवाउवेगो – अनुलोमवायुवेगः । अनुलोमः–अनुकूलो वायुवेगः, शरीरान्तवर्त्तिवातजवो यस्य सः । वायुगुल्मरहितोदरमध्यप्रदेशः । जीवा० २७७ ।

अणुलोमिअ–अनुलोमम्, मनोहारि । दश० २२३ ।

अणुलोमियं–कडुगफरिसादिदोसवज्जियं जं भासमाणो अभासओ लभइ । दश० चू० ११५ ।

अणुल्लय–द्वीन्द्रियविशेषः । उत्त० ६९५ ।

अणुल्लसिओ–असिच्यमानः । आव० ६२१ ।

अणुल्लावे–अनुलाप–पौनःपुन्यभाषणम् । ठाणा० ४०८ ।

अणुवउत्तो – अनुपयुक्तः, सार्धुं प्रत्यदत्तावधानः । ओघ० २३ ।

अणुवकयं–अनुपकृतम्, परैरवर्तितम् । आव० ५९७ ।

अणुवघाइए – अनुपघातिके–उपघातश्च यत्र न भवति उड्डाहादि तस्मिन् । ओघ० १२२ ।

अणुवघाइया – आचारप्रकल्पस्य षड्विंशतितमो भेदः । सम० ४७ ।

अणुवचओ – अनुपचयः, अनुपचीयमानता, अनुपादानमिति । उत्त० ६ ।

अणुवट्टंते – अनुपतिष्ठति, अरुह्यमाणे अरुज्झंते । ओघ० १४५ ।

अणुवट्टावणीया–अनुवर्तनीया । ओघ० १३४ ।

अणुवट्टेति–करोति । भग० ३२० ।

अणुवत्त–अनुवृत्तः–भूयः प्रवृत्तो वारद्वयं प्रवृत्तः । व्य० द्वि० ४४१ अ ।

अणुवत्तइ–अनुवर्त्तते । आव० ५६१ ।

अणुवत्ति–अनुवृत्तिः–सर्वेषु अर्थेषु अप्रतिकूलता । बृ० प्र० ४३ अ ।

अणुवत्तिओ–अनुवर्त्तितः । आव० १११ । परिगृहीतो महाजनेन । व्य० द्वि० ४४१ आ ।

अणुवत्तिया–परिवेष्टिता । नि० चू० प्र० १८४ आ ।

अणुवत्ती–अनुवृत्तिः । आव० ५१५ ।

अणुवत्ते–अनुवर्तमानः–साम्प्रतकालभावी । दश० ६२ ।

अणुवदिट्ठं – जं नो आयरियपरंपरागयं मुत्कलव्याकरणवत् । नि० चू० द्वि० २३ आ ।

अणुवदेसा–अनुपदेशः–गुरुणाऽनुक्तः । ओघ० १५१ ।

अणुवभुज्जो – संसक्तासवपिशितादिराहारः, शुषिरतृणवल्कलादिरुपधिः । बृ० तृ० ४७ अ ।

अणुवमा–अनुपमा । जीवा० २७८ ।

अणुवयमाणा–अनुवदतः–अनु–पश्चाद्वदतः पृष्ठतो वदतोऽन्येन वा मिथ्यादृष्ट्यादिना कुशीला इत्येवमुक्तः । आचा० २५१ ।

अणुवयारं–निठुरं । नि० चू० प्र० २७८ अ ।

अणुवरय–अनुपरतम्, अविरतम् । भग० १८१ ।

अणुवरयकाइया – अनुपरतकायिकी–देशतः सर्वतो वा सावद्ययोगाद्विरतः नोपरतोऽनुपरतः कुतश्चिदप्यनिवृत्त इत्यर्थः तस्य कायिकी । प्रज्ञा० ४३६ ।

अणुवरयकायकिरिया–अनुपरतस्य–अविरतस्य सावद्यात् मिथ्यादृष्टेः सम्यग्दृष्टेर्वा कायक्रिया–उत्क्षेपादिलक्षणा कर्म्मबन्धनिबन्धनम् । ठाणा० ४१ ।

अणुवसंते–अनुपशान्तः, उदयावस्थः । प्रज्ञा० २९१ ।

अणुवसंपज्जमाणगती – अनुपसम्पद्यमानगतिः, परस्परमुपष्टम्भरहितानां पथि गमनं, विहायोगतेश्चतुर्थो भेदः । प्रज्ञा० ३२७ ।

अणुवसु–अनुवसु–सरागः श्रावकश्च । आचा० २४० ।

अणुवाए–अनुपातः, अनुसारः । प्रज्ञा० १४४ । अनुगमनं–अनुरागः उत्त० ६३१ ।

अणुवायगइए–अनुपातगतिः–अनुसारगतिः । सूर्य० १६

Jain Education International 2010_05   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

अणुवालए-गोशालकश्रावकविशेषः । भग० ३७० ।
अणुवासग-अनुपासकः मिथ्यादृष्टिः । नि० चू० द्वि० २५ अ ।
अणुवासणा-अनुवासना, अपानेन जठरे तलप्रवेशनम् । विपा० ४१ ।
अणुवित्तिबुद्धि-अनुवृत्तिबुद्धि-अनुगताकारबुद्धिः । विशे० ८९८ ।
अणुविद्धं-अनुविद्धं-मिश्राः व्याप्ताः । जं० प्र० १९३ ।
अणुवीइ-अनुवीचि, आनुकूल्यम्, मैथुनाभिलाषम् । सूत्र० १११ । अनुचिन्त्य, विचार्य सम्यग्निश्चित्य । आचा० ३८६ । आलोच्य । दश० २२१ ।
अणुवीइनिट्ठाभासि - अनुविचिन्त्य निष्ठाभाषी-विचार्य निश्चितभाषकः । आचा० ३९२ ।
अणुवीइभासए-अनुविचिन्त्यभाषकः, पर्यालोच्य भाषकः, द्वितीयव्रतस्य द्वितीया भावना । आव० ६५८ ।
अणुवीति-चितेऊण । नि० चू० प्र० १०० अ ।
अणुवीयि-पुव्वि बुद्धीए अणुचितियं । दश० चू० ११५ ।
अणुवूहेसा-अनवंहयिता-परेण स्वस्य क्रियमाणस्य तस्यानुमोदयिता, तद्भावे हर्षकारी । ठाणा० ३८९ ।
अणुवेलंधर-लवणसमुद्रशिखारक्षकः । सम० ३३ ।
अणुवेलंधरराया-अनुवेलन्धरराजा, भुजगेन्द्रः । जीवा० ३१२ ।
अणुवेलंधरनागरातीणं-अनुवेलंधरनागराजा-नागजातिविशेषः । ठाणा० २२८ ।
अणुवेहसलागा- शस्त्रकोशविशेषः । नि० चू० द्वि० १८ अ ।
अणुव्वट्टे-अनुद्वर्त्तयन, तत्रस्थ एव । आव० ३३९ ।
अणुव्वणो-अगर्वितः । बृ० तृ० ४ अ ।
अणुव्वतं-अनुव्रतम् । आव० ८२१ ।
अणुव्वत्ता-अनूव्रतानि-अनू-महाव्रतकथनस्य पश्चात्तदप्रतिपत्तौ यानि व्रतानि कथ्यन्ते तानि, अथवा सर्वविरतापेक्षया अणोः-लघोर्गुणिनो व्रतानि । ठाणा० १९१ ।
अणुव्वय - अनूवर्तिनी, परिणामिकीबुद्धिदृष्टान्ते भार्या-आव० ४३६ । अन्विति-कुलानुरूपं व्रतम्-आरोऽस्या अनुव्रता पतिव्रता इति, वयोऽनुरूपा वा । उत्त० ४७६ । अनुव्रतं-स्थूलप्राणातिपातनिवृत्तिः दश० १९२ ।
अणुव्हाणं-अनाव्या(स्या)नं-स्निग्धम् । ओघ० १७१ ।

अणुव्विग्गो-अनुद्विग्नः-प्रशान्तः परीषहादिभ्योऽबिभ्यत् । दश० १६३, १७९ ।
अणुसंचरे - अनुसञ्चरेः, अन्विति-लक्षीकृत्य सञ्चरेः-त्वं सम्यक् संयमाध्वनि यायाः । उत्त० ४४६ ।
अणुसंसरइ-अनुसंसरति, दिग्विदिशां गमनं भावदिगागमनं वा स्मरति वा । आचा० २० ।
अणुसजइ-अनुसजति, सन्तानेनानुवर्त्तते । जीवा० २८४ ।
अणुसज्जणा-अनुसर्जना । आव० १५७ । अव्यवच्छेदं करोति । उत्त० ५८४ । अनुवर्त्तना । बृ० प्र० २८९ अ ।
अणुसज्जमाणा-अनुसजतः, सन्तानेनानुवर्तमाना । जं० प्र० ३५५ ।
अणुसज्जित्था-अनुसक्तवन्तः, पूर्वकालात्कालान्तरमनुवृत्तवन्तः । भग० २७८ ।
अणुसज्जित्था - अनुसक्तवन्तः, कालात्कालान्तरमनुवृत्तवन्तः सन्ततिभावेन भवन्ति स्म । जं० प्र० १२८ ।
अणुसट्ठं-अनुशिष्टं-उत्कलनम् । व्य० प्र० १९९ अ ।
अणुसट्ठि - अनुशासनम्-अनुशास्तिः सद्गुणोत्कीर्तनेनोपबृंहणम् । दश० ४६ । धम्मकहा । नि० चू० द्वि० १७० अ ।
अणुसट्ठी-उवदेसपदाणं, थुतिकरणं वा । नि० चू० तृ० १३४ आ । सद्भावपुरस्सरं प्रज्ञापना । बृ० द्वि० ८७आ । उवदेसो । नि० चू० प्र० २०७ आ । ५१ अ । इहलोकापायदर्शनम् । बृ० द्वि० १०३ अ । अनुशालनम् । ठाणा० १५५ ।
अणुसम-अनुसमा-अनुरूपा, अविषमा । ठाणा० ४५० ।
अणुसमयं-समयमाश्रित्य । उत्त० २३१ । अनुसमयं प्रतिक्षणम् । सूर्य० ८० । भग० २० । सततम् । उत्त० ३३९ ।
अणुसया -अनुशयः-पश्चात्तापः । जं० प्र० १२३ ।
अणुसारं-अनुस्मारवदननुस्वारम् । विशे० २७४ । अनक्षरमपि यदनुस्वारवदुच्चार्यते हुंकारकरगादिवत् तत् । आव० २५ । अलाक्षणिकः सुखमुखोच्चारणार्थः । दश० ८६ ।
अणुसासणाणि - अनूशासनानि-दुःस्थस्य सुस्थतासंपादनानि । सम० ११८ । शिक्षणम् । उत्त० २६७ ।
अणुसासम्मि-अनूशासित । उत्त० ५५२ ।
अणुसासिज्जंतो-अनूशास्यमानः, तत्र तत्र चोद्यमानः । दश० २५६ ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अणुसिट्ठी-अनुशासनमनुशास्तिः-सद्गुणोत्कीर्त्तनेनोपबृंहणं सा विधेयेति यत्रोपदिश्यते सा। ठाणा० २५३। **अनुशिष्टिः**-उपदेशप्रदानम्। व्य० प्र० ११५ अ। शिक्षाम्। उत्त० ३२३। धर्मकथाम्। ओघ० ७३।

अणुसूयगा - अनुसूचकाः-नगराभ्यंतरे चारमुपलभन्ते, सर्वमनुसूचकेभ्यः कथयंति। व्य० प्र० १७० आ।

अणुसूयत्तं-अपरशरीराश्रितता, परनिश्रा। सूत्र० ३५७। अनुस्यूतत्वं-परनिश्रया कृम्यादित्वम्। सूत्र० ३५७।

अणुसोयचारी - अनुश्रोतश्चारि-प्रतिश्रयादारभ्य भिक्षाचारी। ठाणा० ३४२। नद्यादिप्रवाहगामी। ठाणा० २७२।

अणुस्सासिय-अनुच्छ्वसत्। दश० ११।

अणुस्सियत्त-अनुत्सिक्तत्वम्-अनुद्धतत्वम्। उत्त० ५९१।

अणुस्सुयं-अनुश्रुतम्-अवधारितम्। उत्त० २४७।

अणुस्सुयत्तं-अनुत्सुकत्वम्-विषयसुखं प्रति निःस्पृहत्वम्। उत्त० ५८६।

अणूया-अनूपः, सजलप्रदेशः। विशे० ७२७।

अणेगचित्ते-अनेकचित्तः, अनेकानि चित्तानि कृषिवाणिज्यावलगनादीनि यस्यासौ, खलुरवधारणे, संसारसुखाभिलाष्यनेकचित्त एव भवति। आचा० १६३। अनेकसंख्यानि चञ्चलतया चित्तानि-मनांसि यासां सा। उत्त० २९७।

अणेगगुणा-अनेकगुणाः-अनेकप्रकाराः। बृ० प्र० ७५ अ।

अणेगतालाचराणुचरियं-नानाविधप्रेक्षाचारिसेवितम्। भग० ५४४।

अणेगदव्वो-अनेकद्रव्यः। विशे० ४२४।

अणेगपत्ती-अनेकपत्नी। आव० ९५।

अणेगरूवधुणा-बहूनि वस्त्राणि एकीकृत्य धुनाति। ओघ० ११०।

अणेगरूवधुणे - अनेकरूपा चासौ सङ्ख्यात्रयातिक्रमणतो युगपदनेकवस्त्रग्रहणतो वा धूनना च प्रकम्पनात्मिका अनेकरूपधूनना। उत्त० ५४२।

अणेगवासानउयं-अनेकवर्षनयुतं, अनेकवर्षाणां-असङ्ख्येयवत्सराणां नयुतं-सङ्ख्याविशेषम्। उत्त० २७७।

अणेगावाती-परस्परविलक्षणा एव भावाः इति वादिनः। ठाणा० ४२५।

अणेलिसं-अनीदृशं-अनन्यसदृशम्। आचा० ४२९।

अणेव्वाणी - जाहे ताणि सुरादीणि ण लब्भंति ताहे तेसिं अभावे परमं दुक्खं समुप्पज्जतित्ति, मोक्खऽभावो वा। दश० चू० ८८।

अणेसणा-अनेषणा-भिक्षादोषविशेषः। आव० ५७५।

अणेसणिज्जं-अनेषणीयम्-आधाकर्मादिदोषदुष्टम्। आचा० ३२१।

अणोक्कंता-अनुपक्रान्ता-अनिराकृता। औप० ३४।

अणोग्घसिअ-अनिर्माजनम्। जं० प्र० ५७।

अणोज्जा-अनवद्या, स्वामिदुहिता। आव० ३१२।

अणोतप्पया-अलज्जनीयता। बृ० प्र० ३०९ आ।

अणोदरया-अपारा (सं०)

अणोमदंसी-अवमं-हीनं मिथ्यादर्शनाविरत्यादि तद्विपर्यस्तमनवमं तद्द्रष्टुं शीलमस्येत्यनवमदर्शी, सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रवान्। आचा० १६४।

अणोमाणं-अपमानं अनादरकृतं न भवति। ओघ० १०३।

अणोरपारं-अनर्वाक्पारम्-विस्तीर्णस्वरूपम्। प्रश्न० ६२। अनाद्यपर्यवसितम्। आव० ६०१। अर्वाग्भागपरभागवर्जितमनाद्यनन्तम्। सूत्र० ४०३। अनर्वाक्पारमिव महत्त्वादनर्वाक्पारम्। प्रश्न० ५१। देशीवचनं, प्रचुरार्थे, आराद्भागपरभागरहिते। आव० ३४५। (भक्त०)

अणोल्हविज्जंतो-अविध्यापितः। आव० ३८४।

अणोवणिहिआ - अनौपनिधिकी-वक्ष्यमाणपूर्वानुपूर्व्यादिक्रमेणाविरचनं प्रयोजनं यस्या इति। अनु० ५२।

अणोवमा-अनुपमा। प्रज्ञा० ३६४।

अणोवमाइ-खाद्यविशेषः। जं० प्र० ११८।

अणोहट्टं-अजाजियं, कोंटलाति उवकारेण विरहियं। नि० चू० प्र० १८३ अ।

अणोहंतरा-संसारतरणासमर्थाः। आचा० १२३।

अणोहट्टिए-अनपघट्टकः, यो बलाद्धस्तादौ गृहीत्वा प्रवर्त्तमानं निवारयति सोऽपघट्टकस्तदभावात्। विपा० ५२।

अणोहियं - अविद्यमानजलौघिकामतिगहनत्वेनाविद्यमानोहां वा। भग० ६७२।

अण्णउत्थिए - अन्ययूथिकाः अन्ययूथं-विवक्षितसंघादपरः संघस्तदस्ति येषां तेऽन्ययूथिकाः तीर्थान्तरीयाः। भग० ९८। अन्यतीर्थिकाः। जीवा० १४३।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अण्णउत्थिया – तच्चण्णियादि बंभणा खत्तिया गारत्था। नि० चू० द्वि०।

अण्णओमुहो-अन्यतोमुखः। आव० ६४०।

अण्णओहुत्तं-अन्यतोभूतम्। आव० २०५।

अण्णगच्छेल्लय-अन्यगच्छीयः। आव० ३२३।

अण्णगिलायं-अन्नग्लानः-पर्युषितमन्नं मया भोक्तव्यमित्येवं प्रतिपन्नाभिग्रहः। बृ० प्र० ३१२ अ।

अण्णगिलायए-अन्नग्लायकः। औप० ३९। बृ० प्र० ११२ आ।

अण्णतित्थियपवत्ताणुजोगे-अन्यतीर्थिकेभ्यः-कपिलादिभ्यः सकाशाद्यः प्रवृत्तः-स्वकीयाचारवस्तुतत्त्वानामनुयोगो-विचारः तत्पुरस्करणार्थः शास्त्रसंदर्भ इत्यर्थः सोऽन्यतीर्थिकप्रवृत्तानुयोगः। सम० ४९।

अण्णतित्थिया – रक्तपटादयः। नि० चू० प्र० ७६ अ। अन्यतीर्थिका – चरकपरिव्राजकशाक्याजीवकवृद्धश्रावकप्रभृतयः। नि० चू० प्र० १४७ आ।

अण्णत्थ-अन्यत्र, परिवर्जनार्थे। आव० ८५०।

अण्णत्थे-अन्वर्थे-अनुगतः संबद्धः परमैश्वर्यादिकोऽर्थो यत्र सः। विशे० २२।

अण्णदत्तहरे-अन्यदत्तहरः-अन्येभ्यो दत्तं-राजादिना वितीर्णं हरति अपान्तराल एवाच्छिनत्ति। उत्त० २७४। अन्यादत्तहरः-ग्रामनगरादिषु चौर्यकृत्। उत्त० २७४।

अण्णमण्णघडत्ता-अन्योऽन्यघटता, अन्योऽन्यं घटा-समुदायरचना यत्र तदन्योऽन्यघटं तद्भावस्तत्ता, जालिका। भग० २१५।

अण्णवं-अर्णवः-अर्णो-जलं विद्यते यत्रासावर्णवः। उत्त० २४१।

अण्णसंभोइय-अन्यसाम्भोगिकः। आव० ८४७।

अण्णहम्मिणी-परतीर्थिका अगारस्था अविरतिका। बृ० तृ० ४७ आ।

अण्णाइट्ठसरीरं-अन्याविष्टशरीरम्,व्यन्तराधिष्ठितशरीरम्। आव० ६३३।

अण्णाइट्ठो-अन्याविष्टः, परायत्तः, यक्षाविष्टो वा। उत्त० ११३। आविष्टः। अन्त २०।

अण्णाइत्तो-अपराद्धः। नि० चू० तृ० १०१ अ।

अण्णाएसि-अज्ञातैषी, अज्ञातो जातिश्रुतादिभिः एषति-उञ्छति पिण्डादीति। उत्त० १२४।

अण्णाणं-अज्ञानम्, चतुर्थः कुडङ्गः। आव० ८५६। एकविंशतितमः परीषहः, कर्मविपाकजाद्ज्ञानान्नोद्विजेत। आव० ६५७।

अण्णाणदोसे-अज्ञानदोषः। औप० ४४।

अण्णाणिय-अज्ञानिकः, कुत्सितं ज्ञानमस्यास्तीति। आव० ८१७।

अण्णाणियवाई – सप्तषष्टिभेदा अज्ञानवादिनः। सम० १११।

अण्णाणो-अज्ञानः, कुदृष्टिमोहितः। आव० ३४६।

अण्णातचज्जा-अज्ञातचर्या। आव० ८२२।

अण्णातपिंडे-अज्ञातपिण्डः, अन्तप्रान्तः, अज्ञातेभ्यो वा-पूर्वापरासंस्तुतेभ्यो वा पिण्डोऽज्ञातोञ्छवृत्त्या लब्धः। सूत्र० १६४।

अण्णायं-अज्ञातोञ्छं। बृ० द्वि० १८६ आ।

अण्णाय-अज्ञातम्, अनुमानतः अज्ञातम्। भग० १९७, २००।

अण्णायया-अज्ञानता, तपसोऽप्रकाशनम्। प्रश्न० १४६। अज्ञातता, तपस्यज्ञातता, योगसङ्ग्रहे सप्तमो योगः। आव० ६६४।

अण्णावदेसो-अदंसियभावो। नि० चू० प्र० ७२ आ।

अण्णियपुत्तो-अर्णिकापुत्रः। नि० चू० प्र० १९४ आ।

अण्णिया अर्णिका, दक्षिणमथुरायां वणिक्पुत्री। आव० ६८८।

अण्णियापुत्ते-अर्णिकापुत्रः। बृ० तृ० २३५ आ।

अण्णोयत्ता-ईषदवनता। व्य० द्वि० १२४ आ।

अण्हयंति-क्षरति (तं०)

अण्हय-आस्रवः, आ-अभिविधिना स्नौति-श्रवति कर्म यस्मात् स आश्रवः प्राणातिपातादिः। प्रश्न० २।

अण्हयकरं-आश्रवकरं। औप० ४२।

अण्हयकरिं-कर्माश्रवकरीं। आचा० ३८८।

अण्हयकरे-कर्माश्रवकारी। आचा० ४२५।

अण्हाणं-अस्नानम्। आव० १५४।

अण्हायगो-अस्नायकः। आव० ८३१।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अतज्जाय-अतज्जातपारिस्थापनिकी, पारिस्थापनिक्या द्वितीयो भेदः । आव० ६१९ ।

अतज्जायं-अतज्जातीयं, भिन्नजातीयम् । आव० ६२३ ।

अतडं-अतीर्थं, अन्यतीर्थं वा । बृ० द्वि० ३१ अ । अतित्थं । नि० चू० तृ० १७ अ ।

अतति-सततमवगच्छति । ठाणा० १० ।

अतन्त्रम्-शास्त्रलक्षणरहितम् । आव० १२० ।

अतरं-तरीतुमशक्यं, विषयगणं भवं वा । उत्त० २९२ ।

अतरंतं-ग्लानम् । बृ० प्र० २२९ आ । अतरन्त-अतिग्लानः । ओघ० १८३ ।

अतरंत-ग्लानाः । ठाणा० १३८ ।

अतरंते-अतरत्-असहः । व्य० द्वि० ३७ अ ।

अतरंतो-अतरन्, अशक्नुवन् । आव० ८४७ । अशक्नुवन्-असमर्थः । दश० ८९ । अशक्नुवान् । आव० ६३७ । ग्लानः । ओघ० ४५ । यदाऽऽकाशव्यवस्थिताभ्यां पादाभ्यां न शक्नोति स्थातुं तदा । ओघ० ८४ । गिलाणो । नि० चू० प्र० ४३ अ, ३० आ, ३६० अ । ग्लानः । बृ० तृ० ५ आ, नि० चू० प्र० ८४ अ ।

अतरण-अतरणः, अशक्तः, ग्लानः । ओघ० ६७, बृ० प्र० २३४ आ ।

अतरो-ग्लानः । बृ० द्वि० २२४ अ । रत्नाकरः । बृ० प्र० ३७ अ ।

अतसी-अयसी, धान्यविशेषः । ठाणा० ४०६ । गुच्छविशेषः । प्रज्ञा० ३२ । धान्यविशेषः । नि० चू० प्र० १४४ आ ।

अतहणाणे-अतथाज्ञानम् । ठाणा० ४८१ ।

अतारं-अतारम्, तरितुमशक्यम् । भग० ८२ ।

अतारिमा-दुस्तराः । सूत्र० ८६ ।

अतिः-अतिशयवान् । ठाणा० ४७३ ।

अतिंति-प्रविशन्ति । नि० चू० प्र० २०३ अ ।

अतिंतिणः-अतिन्तिणः, अलाभेऽपि नेषद्यत्किञ्चनभाषी । दश० २३३ । अतिन्तिनः, न सकृत्किञ्चिदुक्तः सन्नसूयया भूयो भूयो वक्ता, प्रतिपूर्णः सूत्रादिना । दश० २५८ ।

अतिअत्तिय - आदियात्रिकाः, सार्थरक्षकाः । बृ० द्वि० १२५ अ ।

अतिउच्चाओ-अतिश्रान्तः, प्राघूर्णकादिः । ओघ० १८६ ।

अतिउव्वरिए-अत्युद्वरिते । ओघ० १३८ ।

अतिकाए-महोरगेन्द्रः । ठाणा० ८५ । अतिकायः-महोरगभेदविशेषः । प्रज्ञा० ७० ।

अतिक्कमा - अतिक्रमः-अतिलङ्घनं, विनाशः । आचा० १३५ । प्रतिश्रवणतो मर्यादाया उल्लंघनम् । व्य० प्र० ९० अ ।

अतिक्कीलावासो - अतिक्रीडावासः, सुस्थितलवणाधिपस्य भौमेयविहारविशेषः । जीवा० ३१५ ।

अतिक्खतुंडो - अतीक्ष्णतुण्डम्-अतीक्ष्णमुखम् । आव० ७६४ ।

अतिक्कान्ता-अतीता । आचा० १७८ ।

अतिखद्धं-प्रभूतम् । बृ० द्वि० १८७ अ ।

अतिखद्ध - गुरोरालोके भोक्तव्यम्, अतिप्रचूरं भक्षयेत । ओघ० १८२ ।

अतिगए-अतिगतः । आव० १७३ ।

अतिगओ-अतिगतः । दश० ४१ ।

अतिगता-प्रविष्टाः । बृ० द्वि० १८४ अ ।

अतिगमणं-प्रवेशः । बृ० द्वि० १६३ आ । अतिगमनं, प्रवेशनम् । बृ० प्र० २७५ आ ।

अतिगुपिल-अतिगूढम् । आव० २९६ ।

अतिगुलिका-(अइगुलिया)-कुक्कुसा । बृ० तृ० १९५ अ ।

अतिघरं-संजतिपडिस्सतो । नि० चू० प्र० २३७ आ ।

अतिचारो-व्यतिकमः स्खलनपर्यायः । तत्त्वा० ७-१८ ।

अतिच्छिए- अतिक्रान्तायाम् । ओघ० १५२ ।

अतिजाति-पविसति । नि० चू० प्र० ३४ आ ।

अतिजाते-समृद्धतरः । ठाणा० १८४ ।

अतिज्जाणं-अतियानम् । आव० ३६६ ।

अतिज्जाहि-अतियास्यति-प्रवेक्ष्यति । ठाणा० ४६३ ।

अतिणिओ-आनीतः । आव० २०४ ।

अतिणीओ-अतिनीतः, प्रापितः । आव० ८०० ।

अतिणेउं-प्रवेश्य । बृ० तृ० ७४ आ ।

अतिण्णो-ग्लानः । बृ० प्र० २८८ आ ।

अतितणित-आगच्छद्गच्छत् । नि० चू० प्र० १२० आ ।

अतिताणकहा-अतियानकथा-नगरादौ प्रवेशकथा । ठाणा० २१० ।

अतिताणगिहाति-अतियानगृहाणि-नगरादिप्रवेशे यानि गृहाणि । ठाणा० ८६ ।

अतितेया-अतितेजा, रात्रिनामविशेषः । सूर्य० १४७ ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अतित्थ – अतीर्थम्, तीर्थस्याभावोऽतीर्थम्, तीर्थस्याभावश्चानुत्पादोऽपान्तराले व्यवच्छेदो वा। प्रज्ञा० १९।

अतित्थसिद्धा–अतीर्थे–तीर्थान्तरे साधुव्यवच्छेदे जातिस्मरणादिना प्राप्तापवर्गमार्गा मरुदेवीवत् सिद्धा अतीर्थसिद्धाः। ठाणा० ३३।

अतित्थाविते–प्रत्याख्यातः, निषिद्धः। नि० चू० प्र० १८५ अ।

अतित्थिओ–अस्तमितो। नि० चू० प्र० ३१२ अ। समाप्तेत्यर्थः। नि० चू० तृ० १२६ अ।

अतिथिसंविभाग–न्यायागतानां कल्पनीयानामन्नपानादीनां द्रव्याणां देशकालश्रद्धासत्कारक्रमोपेतं परया आत्मानुग्रहबुद्धया संयतेभ्यो दानम्। तत्त्वा० ७–१६।

अतिद्दाति–(अइए) प्रकरोति अतिगच्छति वेति। ठाणा० २९८।

अतिधाडिय–अतिधाडितः–भ्रामितः। प्रश्न० ५३।

अतिपरिणामकं–अपवादैकमतिः। बृ० प्र० १३२ अ।

अतिपरिणामा–अतिपरिणामाः, अतिव्याप्त्याऽपवाददृष्टयोऽतिपरिणामाः। विशे० ९३१। अतिव्याप्त्या परिणामो यथोक्तस्वरूपो यस्य सः। व्य० प्र० ७२ अ।

अतिपात–प्राणिनः विभ्रंशः। ठाणा० २१०।

अतिपातनम्–प्राणवता सह वियोजनम्। ठाणा० २६।

अतिपासं – अतिपार्श्वे–ऐरवतावसर्पिणीतीर्थंकरः। सम० १५३।

अतिपुरुषः–किंपुरुषभेदविशेषः। प्रज्ञा० ७०।

अतिप्पणया – अश्रुलालादिक्षरणकारणशोकानुत्पादनेन। भग० ३०५।

अतिबलराया–अतिबलराजा। आव० ११६।

अतिमन्द्रः–गम्भीरः। जं० प्र० ५२९।

अतिम(मु)त्तकुमारो–राजर्षिनाम। नि० चू० द्वि० २७ आ।

अतिमुक्तकः–षड्वर्षप्रव्रजितः। भग० ५८६। अतिमुक्तकः–नालबद्धपुष्पविशेषः। प्रज्ञा० ३७।

अतिमुक्तकचन्द्र–(अइमुत्तचंदए) पुष्पविशेषदलम्। भग० १३१।

अतिमुत्तग–अतिमुक्तकलता–लताविशेषः। जीवा० १८२।

अतिमुत्ते–अतिमुक्तः, कुमारश्रमणः। अन्त० ६। विजयराज्ञः श्रीदेव्याः सुतः। अन्त० २३।

अतियाण–अतियानं–नगरप्रवेशः। ठाणा० १७३। प्रवेशः। नि० चू० प्र० २७३ अ।

अतियातो–अतियातः, गतः। उत्त० ४८१।

अतियारे–अतिचारः–अतिचरणं ग्रहणतो व्रतस्यातिक्रमणम्। व्य० प्र० ९० अ।

अतिराउले–स्वामिकुलम्। प्रज्ञा० २५३।

अतिरायितं–अताडितम्। ओघ० ११०

अतिरिच्छच्छिन्नं – अतिरश्चीनच्छिन्नं–तिरश्चीनमपाटितं। आचा० ४०५।

अतिरित्तं – अतिरिक्तम्, कुक्षिपूराहारप्रमाणातिक्रान्तम्। प्रश्न० १५४।

अतिरित्तसज्जासणिए–अतिरिक्ता–अतिप्रमाणा शय्या–वसतिरासनानि च पीठकादीनि यस्य सन्ति सोऽतिरिक्तशय्यासनिकः। सम० ३७।

अतिरित्ता–घंघशाला। नि० चू० प्र० १०६ आ।

अतिरूपः–भूतभेदविशेषः। प्रज्ञा० ७०।

अतिरेगं–अतिरेकः, आधिक्यम्। भग० १८६। अतिरेकम्–अत्यर्थम्। ओघ० २२७।

अतिलोलुपः–अतीव रसलम्पटः। उत्त० ३४५।

अतिवट्टमाणे – अतिवर्तमानः–सर्वबाह्यात् सर्वाभ्यन्तरं प्रतिगच्छन्। सम० ९७।

अतिवट्टिय–अतिवर्त्तितः–भ्रामितः। प्रश्न० ५६।

अतिवतित्ताणं – अतिव्रज्य–अतिशयेन गत्वा। प्रज्ञा० ५१०।

अतिवयती–अतिव्रजति, बाहुल्येन गच्छति। जीवा० १२९।

अतिवासा–अतिवर्षा, अतिशयवर्षा वेगवद्वर्षणम्। भग० १९९।

अतिवाहयति–प्रेरयति, विनयति च। प्रश्न० ६४।

अतिविज्जे–अतिविद्यः, तत्त्वपरिच्छेत्री विद्या यस्य। आचा० १५९।

अतिविद्वान्–विदितागमसद्भावः सन्। आचा० १९२।

अतिवेगो–अतिवेगः–अतिक्रान्ताशेषवेगः। प्रश्न० ५१।

अतिशुक्लो–शुक्लशुक्लो। ठाणा० ३७४।

अतिसेसे–शेषाण्यतिक्रान्तं सातिशयम्। ठाणा० ३८४। अतिशेषाः–अतिशयाः। ठाणा० ३२९। अतिशेषे–अतिशये। उत्त० २८७।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अतिसंधेइ-अतिसन्दधाति । आव० ११० ।

अतिसओ-मनःपर्यवावधिज्ञाने अतिशयवन्त्यध्ययनानि च । नि० चू० प्र० १६ अ ।

अतिसाहसिकः-आत्मवत् प्रसाधितमखिलोकं यः प्रत्याचक्षीत सः । आचा० ५२ ।

अतिसेसि-स्फीतानि । ओघ० ९६ । मनःपर्यवायतिशयवान् । नि० चू० प्र० १६ अ । अतिसयदव्वा उक्कोसा । नि० चू० प्र० २०० अ ।

अतिसेसी-पात्रभूतः, प्रवचनाधारः । बृ० द्वि० २१ आ ।

अतिस्निग्धमधुरम्-वाण्यतिशयः । सम० ६३ ।

अतिहिपूआ-अतिथिपूजा आहारादिदानेन । दश० २४० ।

अतिहिवणीमते-भोजनकालोपस्थायी प्राघूर्णकोऽतिथिस्तद्दानप्रशंसनेन तद्भक्तात् यो लिप्सति सोऽतिथिमाश्रित्य वनीपकोऽतिथिवनीपकः । ठाणा० ३४१ ।

अतिहिसंविभागो – अतिथिसंविभागः – साधुसंविभागः । आव० ८३७ ।

अतिही-अतिथिः-भोजनार्थं भोजनकालोपस्थायी, आत्मार्थं निष्पादिताहारस्य गृहव्रतिनः मुख्यः साधुरेव । आव० ८३७ । निःस्पृहोऽभ्यागतः । आचा० ११५ । भोजनकालोपस्थाय्यपूर्वो वा । आचा० ३२५ । आगन्तुकम् । आचा० ३१४, भग० ५२० । विशिष्टतिथ्यभावे । बृ० प्र० ९० अ ।

अतीओ-आगतः । आव० १४५ ।

अतीय-अतीतम्-उत्तीर्णम् । भग० २९३ ।

अतीति-एति । उत्त० ३०२ ।

अतीमि-अटामि । आव० २२० ।

अतीरंगमा-अतीरङ्गमाः, तीरं गच्छन्तीति तीरङ्गमाः, न तीरङ्गमा अतीरङ्गमाः । आचा० १२४ ।

अतुक्कोसे-आत्मनः परेभ्यः सकाशाद्गुणैरुत्कर्षणम्-उत्कृष्टताभिधानम् । भग० ५७२ ।

अतुरियं-अत्वरितम्, कायिकत्वरारहितम् । भग० १४० । स्तिमितम् । ओघ० १०८ ।

अतुरियगति-अत्वरितगतिः-मन्दगतिः । उत्त० ७११ ।

अतुरियभासी-अत्वरितभाषी । आचा० ३९२ ।

अतोया-शीतोदकविरहिताः संयत्यः काञ्जिकेनाचामनकारिणी । बृ० द्वि० १८० अ ।

अत्त-आत्मा, सिद्धिः । उत्त० १०४ । आप्तः, अप्रतारकः । दश० ७५ ।

अत्तए-आत्मजः-पुत्रः । भग० ४६० ।

अत्तगवेसए-आत्मगवेषकः-आत्मानं गवेषयति-कथं मयाऽऽत्मा भवान्निस्तारणीयः इत्यन्वेषयते । उत्त० १०४ । आत्मानं-चारित्रात्मानं गवेषयति-मार्गयति । उत्त० १२० ।

अत्तगवेसी – आत्मगवेषी, आत्महितान्वेषणपरः । दश० २३७ ।

अत्तचिंतओ – अभ्युद्यतजिनकल्पयथालन्दकल्पानामेकतरं विहारं प्रतिपत्स्य इत्यात्मचिन्तकः, गणे वा तिष्ठन् न वहति तत्तिमन्येषां साधूनाम् । व्य० प्र० २३२ आ ।

अत्तट्ठागुरुओ-आत्मार्थगुरुः, आत्मार्थ एव जघन्यो गुरुः-पापप्रधानो यस्य सः । दश० १८७ ।

अत्तट्ठियं-स्वीकृतम् । आचा० ३२५ ।

अत्तट्ठेति-आत्मार्थयन्ति-परिभुञ्जते । बृ० द्वि० २७८ अ ।

अत्तट्ठो-अप्पणो अट्ठो भत्तादिउ । नि० चू० तृ० १३२ आ ।

अत्तणा-आत्मना कृतं । ठाणा० ४९२ ।

अत्तणिस्सेसकारए-आत्मनिःशेषकारकः, आत्मनो निःशेषमिति-शेषाभावं क्रमात् कर्मणः करोति-विधत्त इत्यात्मनिःशेषकारकः । उत्त० ३०५ ।

अत्तणोउवन्नासं-आत्मन उपन्यासः । दश० ५२ ।

अत्तते-आत्मजः । ठाणा० ५१६ ।

अत्तत्ता – आत्मता – जीवास्तितता स्वकृतकर्मपरिणतिर्वा । आचा० २३८ ।

अत्तत्तासंवुड-आत्मात्मसंवृतः आत्मन्यात्मना संवृतः-प्रतिसंलीनः । भग० १८४ ।

अत्तदोस-आत्मापराधम् । ठाणा० ४२४ ।

अत्तदोसोवसंहार-आत्मदोषोपसंहारः, योगसङ्ग्रहे एकविंशतितमो योगः । आव० ६६४ ।

अत्तपण्हहा-आत्मनि प्रश्नः आत्मप्रश्नस्तं हन्त्यात्मप्रश्नहा । उत्त० ४३४ ।

अत्तभासिओ – अण्णस्स संतियलाभं णो भुंजति । नि० चू० प्र० ३३४ अ ।

अत्तमाया-आत्मना आदाय । भग० २८६ ।

अत्त(त)रंतस्स-अशक्नुवतः ग्लानादेः । ओघ० १२७ ।

अत्तलद्धिउ-यदात्मना लभते तदाहारयति । ओव० १५० ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अत्तवं-आत्मवान् , सचेतनः। दश० २३६।

अत्तसंपग्गहिए-आत्मसम्प्रगृहीतः, आत्मैव सम्यक् प्रकर्षेण गृहीतो येन। दश० २५६।

अत्तसमाहिए-आत्मसमाहितः, आत्मना समाहितः ज्ञानदर्शनचारित्रोपयोगेन सदोपयुक्त इत्यर्थः। आत्मा वा समाहितोऽस्येत्यात्मसमाहितः। सदा शुभव्यापारवानित्यर्थः। आचा० १९१।

अत्तसरिसो-आत्मसदृशः, कुलानुरूपः। उत्त० ४०।

अत्तहिय-आत्महितः, मोक्षः। दश० १५०। मोक्खो। दश० चू० ६८।

अत्ता-आत्मा। आव० २९८। मोक्षः, संयमो वा। सूत्र० ९०। आत्ताः-गृहीताः, स्वीकृताः। ठाणा० ६३। आ-अभिविधिना त्रायन्ते-दुःखात् संरक्षन्ति सुखं चोत्पादयन्तीति आत्राः आप्ता वा-एकान्तहिताः। भग० ६५६। आर्ताः-क्षुत्तृड्भ्यां पीडिताः, आप्ताः-रागद्वेषरहिताः, आत्ताः-गीतार्थाः। बृ० द्वि० १४३ अ।

अत्ताणओ-अत्राणः। आव० २११।

अत्ताणा-यष्टिद्वितीयाः पान्थाः, कार्पटिकाः, संयता वा। बृ० द्वि० ८२ आ।

अत्ताणो-अत्राणः, अनर्थप्रतिघातवर्जितः। प्रश्न० १९। त्राणरहितः, अनर्थप्रतिघातकाभावात्। प्रश्न० ११। गवादिहारिणो। नि० चू० द्वि० ११ अ।

अत्ताहिट्ठिय-आत्माधिष्ठितः। ओघ० १५०।

अत्ति(ति)मुत्तय-अतिमुक्तकः, पुष्पप्रधानवनस्पतिविशेषः। जं० प्र० ४६।

अत्तुक्कोसे-आत्मोत्कर्षः। सम० ७१। आत्मगुणाभिमानः। ठाणा० २७५।

अत्तेय-आत्रेय ऋषिनाम। आव० ३७२।

अत्तो-आप्तः, मोक्षमार्गः, प्रक्षीणदोषः, सर्वज्ञः। सूत्र० १९५। रागादिरहितः। दश० १२८।

अत्तोवणीए-आत्मैवोपनीतः-तथा निवेदितो-नियोजितो यस्मिन्। ठाणा० २५९।

अत्थं-अस्त्रम् , नाराचादि क्षेप्यायुधम्। प्रश्न० ११६। अर्थः, विषयः। आव० २८३। अर्थः-ज्ञेयत्वात् सर्व्वमेव वस्तु, अभिधेयः। उत्त० ३६८। अभिधेयः, जीवादितत्त्वरूपो वा। उत्त० ३८५। अर्थ्यत इत्यर्थः-स्वर्गापवर्गादिः। उत्त० ४४८। व्याख्यानं। ठाणा० ५२। सूत्रस्य व्याख्यानं। ठाणा० १७०। विशे० ५९२।

अत्थंगओ-अत्थे पव्वए गतो, अचक्खुविसयपंथे वा गतो। दश० चू० ११३।

अत्थंतमयम्मि-अस्तमयति। उत्त० ४३५।

अत्थंतरं-अर्थान्तरम् , पृथग्भूतम्। आव० ६०१।

अत्थंतरभावे-अर्थान्तरभावः-भेदः। आव० ४७६।

अत्थ-अर्थः, शब्दादिविषयभावेन परिणतद्रव्यसमूहः। विशे० १६२।

अत्थ-(अत्थपुरिसे) अर्थपुरुषः, अर्थार्जनपरः। आव० २७७। अर्थः, निरुपमसुखरूपमोक्षः। दश० १८९। अर्थनम् , असम्प्राप्तकामभेदः, तदभिप्रायमात्रम्। दश० १९४। अस्तः, अस्तपर्वतः अदर्शनं वा। दश० २३२। आदेशः। बृ० प्र० २२ आ।

अत्थअवगमो-अर्थावगमः, अर्थपरिच्छेदः। दश० १२५।

अत्थई-गुच्छविशेषः। प्रज्ञा० ३२।

अत्थकंखिया-प्राप्तेऽप्यर्थेऽविच्छिन्नेच्छाः। भग० ६७१।

अत्थकरो-अर्थकरः, विद्यार्थकरणशीलः, भाण्डकरविशेष। आव० ४९९।

अत्थकहा-अर्थकथा, विद्या शिल्पमुपायोऽनिर्वेदः सञ्चयश्च दक्षत्वं साम दण्डो भेद उपप्रदानम्। दश० १०७।

अत्थक्के-अकाण्डः-अनवसरः। दश० ९३।

अत्थगवेसणया-अर्थगवेषणया, अर्थगवेषणनिमित्तम्। सूर्य० २९२।

अत्थग्घं-अस्ताघः। ओघ० ३२। अस्ताघम्। आव० ४१९।

अत्थजुत्ती-अर्थयुक्तिः, हेयेतररूपा अर्थयोजना। दश० १६२।

अत्थजुत्तो-अर्थयुक्तः, अर्थसारः, अपुनरुक्तो, महार्थत्तः। जीवा० २५५।

अत्थदूसणं-अर्थदूषणव्यसनम्। अर्थोत्पत्तिहेतवो ये सामाद्युपायचतुष्टयप्रभृतयः प्रकारास्तेषां दूषणम्। व्य० प्र० १५७ अ।

अत्थधम्मगई-अर्थश्च धर्मश्चार्थधर्मौ यदि वाऽर्थ्यते-हितार्थिभिरभिलष्यते, गतिः-गत्यर्थानां ज्ञानार्थतया हिताहितलक्षणा स्वरूपपरिच्छित्तिः। उत्त० ४७२।

अत्थनिउरंगे-संख्याविशेषः। सूर्य० ९१।

अत्थनिउरे-संख्याविशेषः। सूर्य० ९१।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अत्थनिकुरं-अर्थनिकुरं, चतुरशीतिरर्थनिकुराङ्गशतसहस्राणि । जीवा० ३४५ ।

अत्थनिकुरंगं - अर्थनिकुराङ्गम् , चतुरशीतिर्नलिनशतसहस्राणि । जीवा० ३४५ ।

अत्थपज्जाया-अर्थपर्यायाः, ये तु तेषामेव वाचकशब्दानामभिधेयार्थस्यात्मभूता भेदाः, यथा कनकस्य कटककेयूरादयः, ते सर्वेऽप्यर्थपर्याया भण्यन्ते। विशे० २२८। ये तु तदेकदेशमभिदधति तेऽर्थैकदेशप्रतिपादकाः पर्याया अर्थपर्याया उच्यन्ते। विशे० २२७ ।

अत्थपयं-अर्थपदम् , युक्तिर्हेतुर्वा। सूत्र० १५३ ।

अत्थपलिमंथो-अर्थपरिमन्थः । विशे० ६२८ ।

अत्थपिवासिय - अप्राप्तार्थविषयसंजाततृष्णाः । भग० ६७१ ।

अत्थपुहुत्त-अर्थपृथक्त्व-श्रुताभिधेयोऽर्थः तस्मात् सूत्रं पृथक्, अर्थेन वा पृथु अर्थपृथु तद्भावः अर्थपृथुत्वं। आव० ६१। अर्थात् पृथक्त्वं कथञ्चिद्भेदो यस्य, विस्तीर्णमर्थपृथु। विशे० ४९२ ।

अत्थमणमुहुत्तं - अस्तमनमुहूर्त्तम् , अस्तोपलक्षितं मुहूर्तम् । जं० प्र० ४५९ ।

अत्थमंत-अर्थवताम् , प्रयोजनवताम् । भक्षणाद्यर्हाणाम् । जं० प्र० २४३ ।

अत्थमंतमेत्त - अस्तमयति मित्रे-सूर्ये, सायम् । जं० प्र० २४३ ।

अत्थरणं-आस्तरणम् , आस्तरणं करोति । ओघ० ४१ ।

अत्थरय - आच्छादनम् । जं० प्र० ५५। आस्तरकेण, अस्तरजसा वा । भग० ५४२ ।

अत्थलोला-अर्थे लोलाः-अर्थलोलाः-लम्पटाः-चौरादयः । उत्त० ५९० ।

अत्थविगप्पणा-अर्थविकल्पना । आव० ४८४ ।

अत्थविणिच्छय-अर्थविनिश्चयः-अपायरक्षकं कल्याणावहं वा अर्थातिनिश्चयभावम्। दश० २३५ ।

अत्थसंजुत्तं-सद्भावसंजुत्तं । दश० चू० ८९ ।

अत्थसंपयाणं-सांवत्सरिकार्थदानम् । आचा० ४२२ ।

अत्थसत्थं-अर्थशास्त्रम् । आव० ४२२ । अर्थोपायप्रतिपादनं शास्त्रम् । प्रश्न० ९७। नीतिशास्त्रादि। जं० प्र० २१९।

अत्थसिद्धे - अर्थसिद्धः, शास्त्रीयदशमदिवसनाम । सूर्य० १४७, जं० प्र० ४९०।

अत्थस्स-अस्तो मेरुर्यतस्तेनान्तरितो रविरस्तं गत इति व्यपदिश्यते तस्य पर्वतराजस्य गिरिप्रधानस्य । सम० ६५।

अत्था-अर्थाः, द्रव्याणि। उत्त० ३८४। अर्थ्याः, प्रार्थनीया वा । उत्त० ३८४ । अर्यन्त - गम्यन्त इत्यर्थाः । ओघ० ५। शब्दादयः | ठाणा० २५३, आचा० २०१। फलानि, वस्तूनि। ठाणा० ३३। अर्थ्यन्ते-अभिलष्यन्ते क्रियार्थिभिरर्यन्ते वा अधिगम्यन्ते । ठाणा० ३३५। निर्युक्तिभाष्यसंग्रहणिवृत्तिचूर्णिपञ्जिकादिरूपाः । सम० १११।

अत्थाणं-देशविशेषः। भग० ६८०।

अत्थाणमंडविया-आस्थानमण्डपिका। आव० ८९।

अत्थाणि-आस्थानिका। उत्त० ११५।

अत्थाणिमंडवो-आस्थानमण्डपः। नि० चू० प्र० २७४ आ।

अत्थाणियं-आस्थानम्। उत्त० १४६।

अत्थाणियमंडविया - आस्थानमण्डपिका । बृ० प्र० २७ आ ।

अत्थाणी-आस्थानी। आव० ६७२। आस्थानिका । आव० १४५, २९८ ।

अत्थाणीवरगओ-आस्थानीवरगतः। आव० २१६।

अत्थादाणं-अष्टाङ्गनिमित्तं प्रयोगः। बृ० तृ० ८६ अ।

अत्थामा - अस्थामानः, सामान्यतः शक्तिविकलाः | जं० प्र० २३९। अस्थामा, सामान्यतः शक्तिविकलः। भग० ३२३ ।

अत्थायणयं-आस्थानिका। आव० ३४२।

अत्थायाणं-अर्थादानं-द्रव्योपादानकारणमष्टांगनिमित्तं तद्दत्-प्रयुञ्जानः। ठाणा० १६४।

अत्थावत्ती-सामर्थ्यगम्या। बृ० द्वि० १२१ आ।

अत्थावत्तीदोसो-अर्थापत्तिदोषः, यत्रार्थादनिष्टापत्तिः, सूत्रदोषविशेषः। आव० ३७४।

अत्थाहं-अस्ताघम् , अविद्यमानस्ताघम् , अगाधम्। भग० ८२। अस्ताधः-निरस्ताधस्तलम्। भग० ८२। अप्रमाणम् । आव० ३७४।

अत्थि-येन येन यदा यदा प्रयोजनं तत्तत्तदा तदाऽस्ति-भवति जायते इति सुखमानन्दहेतुत्वादिति। ठाणा० ४८८। अस्ति, विद्यन्ते, सन्तीत्यर्थः, अथवाऽस्ति अयं पक्षो यदुत।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भग० ३२। प्रदेशः। भग० १४९, जीवा० ६। अस्ति, निपातः सर्वलिङ्गवचनः। प्रज्ञा० ५६३। प्रदेशः। आव० ६००। त्रिकालवचनो निपातः। अभूत्, भवति, भविष्यति च। आव० ७६८। अस्तिद्वारम्, अस्त्यन्यश्चैतन्यरूपः। दश० १२५। स्वामी। विशे० ६७२।

अत्थिकाए-अस्तिकायः प्रदेशराशिः। भग० ३२४।

अत्थिकाय-अस्तिकायः, प्रदेशराशिः, अस्तीति सन्ति आसन् भविष्यन्ति च ये कायाः प्रदेशराशयस्ते अस्तिकायाः। भग० १४८। प्रदेशसङ्घातः। जीवा० ६। धर्मास्तिकायादिः। दश० १३४।

अत्थिकायउद्देसए-भगवतीद्वितीयशतकस्य दशमोद्देशकनाम। भग० ६०८।

अत्थिकायधम्म-अस्तिकायधर्मः। दश० २१।

अत्थिकायधम्मे-अस्तयः-प्रदेशास्तेषां कायो-राशिरस्तिकायः स एव धर्मो-गतिपर्याये जीवपुद्गलयोर्द्धारणात्। ठाणा० ५१५।

अत्थिक्क-आस्तिक्यम्-जीवस्यास्तित्वनित्यत्वकर्तृत्वभोक्तृत्वमोक्षतत्साधनश्रद्धानम्। आव० ५९१।

अत्थिनत्थि-अस्तिनास्तिनामपूर्वः। ठाणा० १९९।

अत्थिय-अस्थिक-बहुबीजवृक्षविशेषः। प्रज्ञा० ३२। अस्तिकायः। भग० ८१। अत्थिकम्, अस्थिकवृक्षफलम्। दश० १७६।

अत्थिया-बहुबीजकवृक्षः। भग० ८०३।

अत्थी-अर्थज्ञाता। बृ० प्र० ११२ अ।

अत्थीनत्थिपवायं-यद्यथा लोके अस्ति नास्ति च तद्यत्र तथोच्यते चतुर्थपूर्वनाम। सम० २६।

अत्थुआ-आस्तृता। आव० १७३।

अत्थुरणं-पाउरणं। नि० चू० द्वि० ६१ अ।

अत्थुव्वइ-(अत्थुरइ) आस्तीर्यते। ओघ० ८३।

अत्थे-अनेन ह्यन्तरितः सूर्यादिरस्त इत्यभिधीयते। मेरुनाम। जं० प्र० ३७५।

अत्थेगइया-सन्त्येकके। प्रज्ञा० ५४५।

अत्थो-अर्थः, अभिधेयः, प्रयोजनं वा। प्रश्न० ११५। कारणं, तात्त्विकः पदार्थो वा। जीवा० ९८। अर्यते-गम्यत इति। आव० १०। पव्वओ, अचक्खुविसयपयत्थो वा। दश० चू० १२३। अर्थः-यः सूत्रस्याभिप्रायः। विशे० ५८८। अर्यत इति, विवृतं प्रबोधितं विकचकल्पम्। आव० ८६। अभिप्रेतपदार्थः। आव० ४१५। द्रव्यम्। आव० ६०७। अर्थ्यत इति। उत्त० ६८। विद्यादिः। दश० ११४।

अत्थोग्गहणं-फलनिश्चयम्। भग० ५४१।

अत्थोग्गहे-अर्थावग्रहः, अर्थस्यावग्रहणम्, अनिर्देश्यसामान्यरूपाद्यर्थग्रहणम्। व्यञ्जनावग्रहोत्तरकालमेकसामायिकमनिर्देश्यं सामान्यमात्रार्थग्रहणम्। प्रज्ञा० ३११। अर्थस्य-सामान्यनिर्देश्यस्वरूपस्य शब्दादेः अवेति-प्रथमं व्यञ्जनावग्रहानन्तरं ग्रहणं-परिच्छेदनमर्थावग्रहः। सम० १२। भग० ३४४। व्यञ्जनावग्रहचरमसमयोपात्तशब्दाद्यर्थावग्रहणलक्षणः। आव० १०। अर्यते-अधिगम्यतेऽर्थ्यते वा अन्विष्यत इत्यर्थः-सामान्यरूपादेः प्रथमपरिच्छेदनमर्थावग्रहः। ठाणा० ५१।

अत्थोभं-अस्तोभकं, वैहिहकारादिपदच्छिद्रपूरणस्तोभकनिपातशून्यम्, सूत्रगुणः। आव० ३७६।

अथंडिलं-सचित्तभूमी। नि० चू० प्र० ३८ आ।

अथ-अथशब्दः प्रक्रियाप्रश्नानन्तर्यमङ्गलोपन्यासप्रतिवचनसमुच्चयेष्वित्यानन्तर्यार्थः। ठाणा० ४९५। वाक्योपन्यासार्थः परिप्रश्नार्थो वा। भग० १४। प्रक्रियाप्रश्नानन्तर्यमङ्गलोपन्यासप्रतिवचनसमुच्चयेषु। प्रज्ञा० २४७।

अथक्क-अप्रस्तावः। बृ० प्र० ५५ आ।

अथक्कागओ-अकाण्डागतः। आव० ८००।

अथक्को-अविश्रान्तः। आव० १०२।

अथालंदोग्गहो-यथालन्दिकावग्रहः। नि० चू० प्र० २३९ अ।

अथाहं-जत्थ पुण बुड्डति नासिया तं। नि० चू० द्वि० ७८ आ।

अथिरो-अस्थिरः, क्षणावस्थायी। सूत्र० ६।

अदंडे-अदण्डः, प्रशस्तयोगत्रयमहिंसामात्रं वा। सम० ५।

अदंसणो-अन्धः। ठाणा० १६५।

अदक्खु-अदक्षः, अनिपुणः। सूत्र० ७४। अदृष्टः, अर्वाग्दर्शनः। सूत्र० ७४।

अदक्खुदंसणो-अचक्षुर्दर्शनः अचक्षुर्दर्शनमस्यास्ती, केवलदर्शनः, सर्वज्ञः। सूत्र० ७४।

अदक्खेयव्वं-ग्राह्यम्। ओघ० १६३।

अदट्ठुमेव-अदृष्ट्वैव। उत्त० २१३।

अदढो-विणावि गेलण्णएण जो दुब्बलो। नि० चू० प्र० १९८ अ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अद्दणा-विषादीकृता। नि० चू० प्र० ३२१ अ।
अदत्तं-अदत्तम्, अदत्तद्रव्यग्रहणम्। प्रश्न० ४। अवितीर्णम्, अधर्मद्वारस्य तृतीयं नाम। प्रश्न० ४३।
अदन्न-आत्मरक्षणपरा। बृ० प्र० १९० आ।
अदसा-अदशा-दशिकारहिता क्षौमा। ओघ० २१७।
अदसी-अलसी। आव० ८५४।
अदिच्छाविज्जिहिह-अदित्सिष्येथे, निषेत्स्येथे। दश० १०।
अदिट्ठ-अदृष्टम्, प्रत्यक्षापेक्षया अदृष्टम्। भग० ११७, २००।
अदिट्ठलाभिय – अदृष्टिलाभिकः, योऽदृष्टपूर्वेण दीयमानं गृह्णाति सः। प्रश्न० १०६।
अदिट्ठहडा-अदृष्टाहृता, अदृष्टोत्क्षेपमानीता, प्राभृतिका। आव० ५७६।
अदिट्ठि-अदृष्टे-तिरोहिते। ओघ० १६७।
अदिण्णे – अदत्तादानक्रिया, अदत्तादानाय यत्करणम्, क्रियायाः सप्तमो भेदः। आव० ६४८।
अदिन्नादाणवत्तिए-अदत्तादानप्रत्ययः। सम० २५।
अदिन्ने-अदत्तादानक्रिया-आत्माद्यर्थमदत्तग्रहणम्। ठाणा० ३१६।
अदिस्समाणे – अदृश्यमानः, अनपदिश्यमानः। आचा० १३१।
अदीणवं-अदीनवन्तम्, अदीनं, दैन्यरहितम्। उत्त० २८२।
अदीणसत्तु-नमिनाथपूर्वभवनाम। सम० १५१।
अदीणसत्तू – अदीनशत्रुः, हस्तिशीर्षनगरनृपतिः। विपा० ८९। ठाणा० ४०१, ४०२।
अदीणो-पसण्णमणो। नि० चू० प्र० १८९ अ। अदीनः, अविक्लवः। उत्त० १२०। अदीनाकारयुक्तः। अनुत्त० ४। शोकाभावः। अन्त० २२।
अदु-अथ, 'अतः' इत्यर्थे। सूत्र० ६१। अथवा। उत्त० २९५।
अदुअक्खरिय-जुगुप्सिता, अद्वयक्षरिका। नि० चू० तृ० १८ अ।
अदुआलिआ-मथिका, मन्थनकारिणी। दश० ६०।
अदुक्खणया-अदुःखनता, दुःखस्य करणं दुःखनं तदविद्यमानं यस्यासावदुःखनः, तद्भावस्तत्ता अदुःखकरणमित्यर्थः। भग० ३०५।
अदुगुंछिअं-अजुगुप्सनीयम्, सामायिकाष्टमपर्यायः। आव० ४७४।
अदुट्ठो-अद्विष्टः अदुष्टो वा दायके आहारे वा। प्रश्न० १०९।
अदुतं-अद्रुतं, अनुत्सुकम्। प्रश्न० ११२।
अदुत्तरं-अथोत्तरम्, अथापरम्। भग० १५५, ३०६। अथान्यत्। जीवा० १६६। अथापरं। औप० ३७।
अदुयं-अशीघ्रम्। भग० २९४।
अ(अं)दुयबंधणं-अन्दुकबन्धनम्। सूत्र० ३२८।
अदुवं-अथवा। उत्त० ११०।
अदुव-अथवा। भग० १३०।
अदुवा-अथवा, पक्षान्तरोपन्यासद्वारेणाभ्युच्चयोपदर्शनार्थः। आचा० ४७।
अदूयालियं-उन्मिश्रितम्। उत्त० १४६।
अदूरं-प्रत्यासन्नम्। आव० २३२।
अदूरसामंते – अदूरसामन्तम्, नातिदूरे नातिनिकटे। सूर्य० ५।
अदेसकालप्पलावी-जहा भायणं पडिक्कमियं अट्टकरणंपि से कयं लेवितं, रूढं ततो पमाणतं भग्गं ताहे सो अदेसकालप्पलावी मए पुव्वं चेव णायं एयं भजिहिति। नि० चू० तृ० ८० आ। अदेशकालप्रलापी, अतीते कार्ये यो वक्ति-यदिदं तत्र देशे काले वाऽकरिष्यत ततः सुन्दरमभविष्यदिति। उत्त० ३४७।
अद्द-आर्द्रम्, सरसम्। प्रज्ञा० ९१। सूत्रकृताङ्गस्य षष्ठमध्ययनम्। उत्त० ६१६। आव० ६५८। गुच्छविशेषः। प्रज्ञा० ३२।
अद्दइज्जं-आर्द्रकीयम्, सूत्रकृताङ्गस्य षष्ठमध्ययनम्। सूत्र० ३८५। सूत्रकृताङ्गाध्ययननामविशेषः। सम० ४२।
अद्दए-आर्द्रकम्, अनन्तकायभेदः। भग० ३००।
अद्दकुमारिज्जं-आर्द्रककुमारीयम् (महाध्ययनम्)। ठाणा० ३८७।
अद्दक्खु-अद्राक्षु, दृष्टवन्तः। भग० २१९।
अद्दण्णो-पीडितः। आव० ७००। अधृतिमापन्नः, कातरः। आव० ८००। अधृतिमुपगतः। आव० ४१६। अधृतिमापन्नः। दश० ४८। अक्षणिकः। बृ० द्वि० ४६ अ अधृतिमुपगतः। आव० १९०।
अद्द(ट्ट)न-मल्लविशेषनाम। व्य० द्वि० ३५७ अ।
अद्दन्ना-आकुलीभूताः। बृ० प्र० २९० आ।
अद्दपुरं-आर्द्रपुरं, आर्द्रकराजधानी। सूत्र० ३८५।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अद्दया–आर्द्रका, हरिद्रा। उत्त० २१८।
अद्दवद्दं–आर्द्रवद्रवम्, निगालितम्। आव० ८५४।
अद्दसुतो–आर्द्रसुतः, आर्द्रकराजकुमारः। सूत्र० ३८५।
अद्दहिज्जति–आद्रहति। नि० चू० प्र० ३१७ अ।
अद्दहिया–आद्रहणम्। आव० ८५४।
अद्दा–आद्रानामनक्षत्रम्। ठाणा० ७७।
अद्दाए–आदर्शः। नि० चू० प्र० ३४७ अ।
अद्दाओ–आदर्शः। आव० २९८, ४१६।
अद्दागं–आर्द्रकं। ओघ० १७२। दर्पणः। बृ० प्र० १३६ आ। आदर्शः। ठाणा० २४३, सम० १२४। ओघ० १४८।
अद्दागो–आदर्शः। ठाणा० ५१२।
अद्दाणक्खत्ते–आर्द्रानक्षत्रम्। सूर्य० १३०।
अद्दामलगमेत्तं–आर्द्रामलकमात्रं। आव० ८५७।
अद्दायं–आदर्शः। आव० ६५।
अद्दाय–आदर्शः। प्रज्ञा० २९३।
अद्दारिट्ठे–आर्द्रारिष्टः, कोमलकाकः। जं० प्र० ३२।
अद्दिज्जमाणेहिं–आर्द्रैः–पुत्रकलत्राद्यनुषङ्गजनितस्नेहादार्द्रीक्रियमाणैः। आचा० २१२।
अद्दी–अर्दिः, याञ्चा। प्रश्न० ९३।
अद्दीण–अदीनः, अक्षुभितः। प्रश्न० १०९।
अद्दीणमाणसे–अदीनमनसा। आचा० ४२४।
अद्दीणा–अदीनाः, कथं वयममुत्र भविष्याम इति वैक्लव्यरहिताः परीषहोपसर्गादिसम्भवे वा न दैन्यभाजः। उत्त० २८२।
अद्ध–अर्द्धम्। सूत्र० १६।
अद्धंसं–उत्तरासङ्गः। बृ० तृ० २५४ अ। नि० चू० प्र० १९१ अ।
अद्ध– अद्धाकालः–चन्द्रसूर्यादिक्रियाविशिष्टोऽर्द्धतृतीयद्वीपसमुद्रान्तर्वर्त्ती समयादिलक्षणः। आव० २५७। कालो। नि० चू० प्र० ३३७ अ। अर्द्धम्, भागमात्रा। भग० २०८। तिर्यग्वलितम्। जं० प्र० ५२।
अद्धकविट्ठगसंठाणसंठिते– अर्द्धकपित्थसंस्थानसंस्थितम्, चन्द्रविमानस्वरूपम्। सूर्य० २६२।
अद्धकवित्थसंठाणसंठियं – अर्द्धकपित्थसंस्थानसंस्थितम्, उत्तानीकृतमर्द्धकपित्थं तस्येव यत्स्थानं तेन संस्थितम्। जीवा० ३७८।
अद्धकायसमाणा–आलोककव्यन्तरादिकायार्धप्रमाणा। जं० प्र० ५७।
अद्धखलुया–पादार्धाच्छादकं चर्म। बृ० द्वि० २२२ आ।
अद्धखल्ला–अद्धं जाव खल्लया जीए उवाणहा। नि० चू० प्र० १३६ आ।
अद्धखित्तं – अर्द्धक्षेत्रम्। यदहोरात्रप्रमितस्य क्षेत्रस्यार्द्धं चन्द्रेण सह योगमश्नुते तन्नक्षत्रम्। सूर्य० १७७। जं० प्र० ४७८।
अद्धचंदं–अर्द्धचन्द्रः, बाणविशेषः। आव० ६९७।
अद्धचंदा–अर्द्धचन्द्राः, खण्डचन्द्रप्रतिबिम्बानि चित्ररूपाणि। जं० प्र० २०१।
अद्धचंदो – अर्द्धचन्द्रः, सोपानविशेषः। प्रश्न० ८। द्वारादिषु रत्नमयशिरोविशेषः। प्रज्ञा० ९९, सूर्य० २६४। आव० ४२५, जीवा० १७५।
अद्धचक्कवाला–चक्रवालार्धरूपा। भग० ८६६। अर्धवलयाकारः। ठाणा० ४०७।
अद्धजंघा–जङ्घार्धपिधायि चर्म। बृ० द्वि० २२२ आ।
अद्धजंघमेत्तो–अद्धजङ्घा। नि० चू० द्वि० ७९ आ।
अद्धद्धामीसग – अद्धद्धमिश्रा, सत्यामृषाभाषाभेदः। दश० २०९।
अद्धद्धामीसए–अद्धद्धामिश्रकं, अद्धा–दिवसो रजनी वा तदेकदेशः प्रहरादिः अद्धद्धा तद्विषयं मिश्रकं–सत्यासत्यं। ठाणा० ४९१। अद्धाद्धा, दिवसस्य रात्रेर्वा एकदेशः। प्रज्ञा० २५९। अद्धद्धा, दिवसरजन्येकदेशः। दश० २०९।
अद्धद्धामिस्सिया–अद्धाद्धामिश्रिता, दिवसस्य रात्रेर्वा एकदेशोऽद्धाद्धा सा मिश्रिता यया सा भाषा। प्रज्ञा० २५६।
अद्धनारायं–अर्द्धनाराचम्, यत्रैकपार्श्वे मर्कटबन्धो द्वितीये च पार्श्वे कीलिका तत्। जीवा० १५, ४२। प्रज्ञा० ४७२।
अद्धपत्थए–मानविशेषः। भग० ३१३।
अद्धपलितंका – अर्द्धपर्यङ्का – ऊरावेकपादनिवेशनलक्षणा। ठाणा० २९९, ३०२।
अद्धपलियंकसंठिते–अर्द्धपल्यङ्कसंस्थितम्। सूर्य० १३०।
अद्धपलंका–एकं जानुमुत्पाट्योपवेशनम्। बृ० तृ० २०० अ।
अद्धपेडा–गोचरचर्याभिग्रहविशेषः। उत्त० ६०५। ठाणा० ३६६।
अद्धपेला–गोचरचर्याभिग्रहविशेषः। नि० चू० तृ० १२ अ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अद्धमंडलं-अर्द्धमण्डलम्। जं० प्र० ४७८।

अद्धमंडलसंठिती - अर्द्धमण्डलसंस्थितिः, अर्द्धमण्डलव्यवस्था। सूर्य० १६।

अद्धमागहविब्भमं-अर्द्धमागधविभ्रमम्, गृहविशेषः। जीवा० २६९। जं० प्र० १०७।

अद्धमागहा - अर्द्धमागधी, अर्द्धं मागध्या इत्यर्द्धमागधी भाषा। भग० २२१। मागधभाषालक्षणं किञ्चित्किञ्चिच्च प्राकृतभाषालक्षणं यस्यां सा, अर्द्धं मागध्या इत्यर्द्धमागधी। भग० २२१। मगहद्धविसयभासानिबद्धं, अट्ठारसदेसीभासाणियतं। नि० चू० द्वि० ३६ अ।

अद्धमासिपसु-अर्धमासिका। आचा० ३२७।

अद्धरत्तकालसमओ-अर्द्धरात्रकालसमयः। आव० १२१।

अद्धसंकासा-अर्द्धसङ्काशा, सर्वकामविरक्तताविषये देवलासुतराजस्य तापसावस्थायामुत्पन्ना पुत्री। आव० ७१४।

अद्धसम-अर्द्धसमम्, पद्यविशेषः। दश० ८८। एकतरसमम्। ठाणा० ३९७।

अद्धसेलसुत्थियं-अर्द्धशैलसुस्थितम्। जीवा० २६९।

अद्धहारा-अर्धहारा, नवसरिकः। जं० प्र० २४, १०५।

अद्धहारभद्दो-अर्धहारभद्रः, अर्द्धहारे द्वीपे पूर्वार्द्धाधिपतिर्देवः। जीवा० ३६९।

अद्धहारमहाभद्दो-अर्द्धहारमहाभद्रः, अर्द्धहारे द्वीपेऽपरार्द्धाधिपतिर्देवः। जीवा० ३६९।

अद्धहारमहावरो - अर्द्धहारमहावरः, अर्द्धहारे समुद्रेऽपरार्द्धाधिपतिर्देवः। जीवा० ३६९।

अद्धहारवरभद्दो - अर्द्धहारवरभद्रः, अर्द्धहारवरे द्वीपे पूर्वार्द्धाधिपतिर्देवः। जीवा० ३६९।

अद्धहारवरमहाभद्दो-अर्द्धहारवरमहाभद्रः अर्द्धहारवरे द्वीपेऽपरार्द्धाधिपतिर्देवः। जीवा० ३६९।

अद्धहारवरमहावरो - अर्द्धहारवरमहावरः, अर्द्धहारवरे समुद्रेऽपरार्द्धाधिपतिर्देवः। जीवा० ३६९।

अद्धहारवरावभासभद्दो-अर्द्धहारवरावभासभद्रः, अर्द्धहारावभासे द्वीपे पूर्वार्द्धाधिपतिर्देवः। जीवा० ३६९।

अद्धहारवरावभासमहाभद्दो- अर्द्धहारवरावभासमहाभद्रः, अर्द्धहारावभासे द्वीपेऽपरार्द्धाधिपतिर्देवः। जीवा० ३६९।

अद्धहारवरावभासमहावरो - अर्द्धहारवरावभासमहावरः, अर्द्धहारवरावभासे समुद्रेऽपरार्द्धाधिपतिर्देवः। जीवा० ३६९।

अद्धहारवरावभासवरो-अर्द्धहारवरावभासवरः, अर्द्धहारवरावभासे समुद्रे पूर्वार्द्धाधिपतिर्देवः। जीवा० ३६९।

अद्धहारवरावभासो - अर्द्धहारवरावभासः, द्वीपविशेषः समुद्रविशेषश्च। जीवा० ३६९।

अद्धहारवरो-अर्द्धहारवरः, अर्द्धहारवरे समुद्रे पूर्वार्द्धाधिपतिर्देवः। जीवा० ३६९। द्वीपविशेषः, समुद्रविशेषश्च। जीवा० ३६८।

अद्धहारो-अर्द्धहारः, नवसरिकः। औप० ५५। जीवा० १८१। भूषणविधिविशेषः। जीवा० २६८। द्वीपविशेषः, समुद्रविशेषश्च। जीवा० ३६८। प्रज्ञा० ३०७।

अद्धा-अध्वा, पन्थाः। आव० ६६२। समयः। विशे० ९६१। कालः, अर्धतृतीयद्वीपसमुद्रान्तर्वर्ती समयादिलक्षणः। विशे० ८३७। कालम्। ठाणा० ४४। कालस्याख्या। प्रज्ञा० ९। अवधिलब्धिकालः। आव० ४३। अध्वा-मार्गः। आव० ६१७। कालः। आव० ८४०। दिवसो रात्रिर्वा। प्रज्ञा० २५९। अद्धा, षट्षष्ट्यधिकरात्रिन्दिवशतत्रयपरिमाणा। सूर्य० ११। जङ्घाए अद्धं जाव कोसो। नि० चू० प्र० १३६ आ।

अद्धाउए - अद्धा-कालः तत्प्रधानमायुः-कर्मविशेषोऽद्धायुः, भवात्ययेऽपि कालान्तरानुगामी। ठाणा० ६६।

अद्धाए-कालस्य पौरुष्यादिकालमानमाश्रित्य इति। ठाणा० ४९८। काले अर्थादागामिन्याम्। उत्त० २८०।

अद्धाकालः-अद्धैव कालः, कालशब्दो हि वर्णप्रमाणकालादिष्वपि वर्त्तते, ततोऽद्धाशब्देन विशिष्यत इति। ठाणा० २०१। चन्द्रसूर्यादिक्रियाविशिष्टोऽर्द्धतृतीयद्वीपसमुद्रान्तर्वर्त्त्यद्धाकालः। दश० ९।

अद्धाकाले-चन्द्रसूर्यादिक्रियाविशिष्टोऽर्द्धतृतीयद्वीपसमुद्रान्तवर्त्ती समयादिः। भग० ५३३।

अद्धाढए-अर्द्धाढकः, मानविशेषः। भग० ३१३।

अद्धाणं-पहो। नि० चू० प्र० ५१ आ। महदरण्यं। बृ० द्वि० १७४ आ। अध्वा-पन्थाः। बृ० द्वि० १२२ अ। महंता अडवी। नि० चू० प्र० ५० आ। छिन्नापातं महदरण्यम्। बृ० द्वि० २१ आ। उत्पत्तिप्रलयरूपम्। उत्त० २६८।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अद्धाण-अध्वनः । आव० ५३५ । अध्वा-विप्रकृष्टो मार्गः । बृ० प्र० २३८ आ ।

अद्धाणतेणो-पंथे मुसंतो । नि० चू० द्वि० ३८ आ ।

अद्धाणपडिवन्ने-अध्वप्रतिपन्नः, मार्गप्रतिपन्नः । भग० ११६ ।

अद्धाणपरिस्संतो-अद्धानपरिश्रान्तः । ओघ० १०७ ।

अद्धाणपवण्णगो-अध्वप्रपन्नकः । आव० ५७८ ।

अद्धाणसीसए-यतः परं समुदायेन गन्तव्यं सम्यग्मार्गावहनात् । बृ० तृ० ६१ आ ।

अद्धाणसुत्ते-अद्धाणविहिजयणाविदंसणसुत्तगं । नि० चू० द्वि० १४८ अ ।

अद्धामिस्सिया-अद्धामिश्रिता, अद्धा-कालः स चेह प्रस्तावाद्दिवसो रात्रिर्वा, स मिश्रितो यया सा भाषा । प्रज्ञा० २५६ ।

अद्धामीसए-कालविषयं सत्यासत्यम् । ठाणा० ४९० ।

अद्धामीसग-अद्धामिश्रा, सत्यामृषाभेदः । दश० २०९ ।

अद्धासमय-कालसमयः, अद्धाया निर्विभागो भागो वा । जीवा० ६ ।

अद्धिती-अधृतिः । आव० ३५३ ।

अद्धुट्ठाई-अर्द्धचतुर्थानि । आव० ३९ ।

अद्धुट्ठाण-अध्युष्टानाम्, अर्द्धाधिकतिसृणाम् । प्रश्न० ७३ ।

अद्धोवमिए-अद्धौपमिकम् - यत्कालप्रमाणमनतिशयिना ग्रहीतुं न शक्यते तत् । ठाणा० ९० ।

अद्भुतम्-वाण्यतिशयः । सम० ६३ ।

अधम्मजुत्ते-येन उक्तेन प्रतिपाद्यस्याधर्म्मबुद्धिरुपजन्यते तदधर्म्मयुक्तम् । ठाणा० २५३ ।

अधम्मपलज्जणो-अधर्मप्ररक्तः, अधर्मप्रायेषु कर्मसु प्रकर्षेण रज्यत इति । सूत्र० ३२९ ।

अधम्मपलोई-अधर्मप्रलोकी, अधर्मानेव-परसम्बन्धिदोषानेव प्रलोकयति-प्रेक्षते इत्येवंशीलः । विपा० ४८ ।

अधम्मो - अधर्मः, अचारित्ररूपत्वात् । अब्रह्मणः षोडशं नाम । प्रश्न० ६६ । अधर्मास्तिकायः स्थित्युपष्टम्भगुणः । ठाणा० ४० । अधर्म्मे-श्रुतलक्षणविहीनत्वादनागमे अपौरुषेयादौ । ठाणा० ४८७ । अधर्मास्तिकायः । सम० ६ । अविद्यमानसदाचारः । उत्त० ४३४ ।

अधरं-आत्यन्तिकं कारणम् । बृ० तृ० १९ अ ।

अधरफाणू-पार्ष्णिका । व्य० द्वि० २९९ अ ।

अधरिमं - अविद्यमानधारणीयद्रव्याम् ऋणमुत्कलनात् । भग० ५४४ ।

अधरो-अधरः, अधस्तनौष्ठः । प्रश्न० १४० । अधीरः । उत्त० १५३ ।

अधरोट्ठा-अधरोष्ठः, अधस्तनो दन्तच्छदः । जं० प्र० ११२ । प्रश्न० ८१ ।

अधस्तनकाय-पादपाणिशिरोग्रीवमुच्यते । ठाणा० ३५७ ।

अधस्तारका-पिशाचभेदविशेषः । प्रज्ञा० ७० ।

अधारणिज्जं-अधारणीयं, धारयितुमशक्यम्, स्थातुं वाऽशक्यम् । विपा० ६२ । अविद्यमानाधमर्णम् । विपा० ६३ । अप्रशस्तप्रदेशखञ्जनादिकलङ्काङ्कितत्वात् । आचा० ३९६ ।

अधिकरणं-अधिकं-अतिरिक्तं उत्सूत्रं करणं, अवरा अधमा जघन्या गतिः तामात्मानं ग्राहयति । कषायभावः । नि० चू० प्र० २९४ अ । अधोकरणं, अधितिकरणं, अबुद्धिकरणम् । नि० चू० प्र० २१३ आ । कलहो । नि० चू० प्र० ३४४ आ, २३९ अ ।

अधिकरणनिर्वर्त्तिनी - खड्गादिनिर्वर्त्तिनी, अधिकरणिकीक्रियाया द्वितीयो भेदः । आव० ६११ ।

अधिकरणप्रवर्त्तिनी-चक्रमहःपशुबन्धादिप्रवर्त्तिनी क्रिया, अधिकरणिकीक्रियायाः प्रथमो भेदः । आव० ६११ ।

अधिकरणसाला-अधिकरणशाला, लोहपरिकर्मगृहम् । भग० ६९७ ।

अधिकरणाणं-अधिकरणानां-कलहानां यन्त्रादीनां वोत्पादयिता । सम० ३७ ।

अधिकरणिखोडी-अधिकरणिखोडी-यत्र काष्ठेऽधिकरणी निवेश्यते । भग० ६९७ ।

अधिकरणिसंठिते-अधिकरणीसंस्थितम् । ठाणा० ४३४ ।

अधिकरणीतो-चुल्ली । नि० चू० द्वि० १०१ अ ।

अधिकासिका-याः सञ्ज्ञावेगेनापीडितः सुखेनैव गन्तुं शक्नोति ताः । ओघ० १९९ ।

अधिके-अर्गले । उत्त० ६६० ।

अधिक्खाउ-अधिकतरं खाए सो । नि० चू० प्र० १५१ अ ।

अधिगमजं-दर्शनभेदः । आव० ५२७ ।

अधिगरणं-अधिकरणं, अधिक्रियते-स्थाप्यते-नरकादिष्वात्माऽनेनेति, अनुष्ठानविशेषः । प्रज्ञा० ४३५ ।

अधिगरणंसि-विरोधे । ठाणा० ४४१ ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अधिगरणिया-आधिकरणिकी, अधिकरणेन निर्वृत्ता। प्रज्ञा०

अधिगारो-अधिकारः, नियोगः। प्रश्न० ६६। [४३५।

अधिघटिकया-कपिलदरिद्रदृष्टान्तविशेषः। आचा० १६३।

अधिट्ठणं-संगिसेज्जवेढिए चेव उपवेसणं। नि० चू० प्र० २४६ आ।

अधिट्ठाणं-अधिष्ठानम्। ओघ० १४८।

अधिट्ठिज्जा-अधितिष्ठेत्-योन्याकर्षणेन संगृह्णीयात्। ठाणा० ३१३।

अधिट्ठेति-परिभुञ्जति। नि० चू० प्र० २२५ आ।

अधिमरगा-अहिवत् अनपकृतेऽप्यपकारे मारका। नि० चू० द्वि० ११ अ।

अधियं-अधिकम्, वर्णादिभिरभ्यधिकं, सूत्रदोषविशेषः। आव० ३७४।

अधियासितो-अध्यासितः, अधिवासितः। आव० ३४३।

अधिशय-आश्रयतः। आचा० २५५।

अधिष्ठानम्-गुदास्थानम्। दश० ११८।

अधीकारो-प्रयोजनम्। बृ० द्वि० २२५ अ।

अधीकारवशः-प्रसङ्गः। आचा० २४१।

अधीता-अधीता, श्रुतनिबद्धा सती पठिता। प्रश्न० १०५।

अधीतान्वीक्षिकीकस्य-दुर्गृहीतहेतुदृष्टान्तलेशस्य। आचा० २२३।

अधुवं-अध्रुवं-नावश्यभाविनम्। प्रश्न० ९६। प्रातिहारिकम्। नि० चू० द्वि० ११७ आ।

अधुववग्गणा-अध्रुववर्गणा, इतश्चोर्ध्वमित्थमेवैकोत्तरवृद्धिक्रमेण वर्द्धमाना ध्रुववर्गणाभ्य इतरा अनन्ता भवन्ति। विशे० ३३१।

अधुवे-न ध्रुवः, सूर्योदयवन्न प्रतिनियतकालेऽवश्यंभावी। भग० ४६९। अध्रुवं-स्वल्पकालानुज्ञापनात्। आचा० ३९६। नित्यो न। उत्त० २८९।

अधो-भूमौ। ओघ० १६२।

अधेणू-सुक्का वञ्झा वा। नि० चू० प्र० ३२७ अ।

अधोघट्टना-अधो भुवं घट्टयति। ओघ० १०९।

अधोणता-गजदंतवत् अवनता। नि० चू० द्वि० ४९ आ।

अधोदृष्टिता-दोषविशेषः। उत्त० ४९०।

अधोभागा-भूमिभागः। जं० प्र० ३२१।

अधोभावो-अधोभावः, तिरस्कारबुद्धिः। आव० ६९९।

अधोविवृतम्-अनाच्छादितममालगृहम्। ठाणा० १५७।

अधोवेदिका-जानुनोरधो हस्तयोर्निवेशः। ठाणा० ३६२।

अध्यसनं-अजीर्णे भोजनम्। ठाणा० ४४७।

अध्यास्यन्ते-सह्यन्ते। प्रज्ञा० ८०।

अध्याहार-व्याख्याङ्गम्। आचा० ५५।

अध्येषणा-यदृच्छया। सम० ३७।

अध्वर-यज्ञः। उत्त० ५२५।

अनंगप्रविष्टं-गणधरानन्तराद्याचार्यदृब्धम्। तत्त्वा० १-२०।

अनक्कभिन्नेहिं-अनस्तितैः। भग० ३७२।

अनग्गओ-अनग्नकः, द्रुमविशेषः। जीवा० २६९।

अनङ्गसेन-चंपावासिसुवर्णकारः। बृ० तृ० १०८ आ।

अनतिचारम्-छेदोपस्थापनीयभेदविशेषः। ठाणा० ३२३।

अनतिविलम्बितम्-वाण्यतिशयविशेषः। सम० ६३।

अनध्यवसायः-संशयो विपर्ययो वा। आचा० १५०।

अनानुक्रमाद्-पश्चानुपूर्व्या। विशे० २८४।

अनन्तकम्-समयभाषया वस्त्रमिति। ठाणा० ३४६।

अनन्तगुणितम्-अनन्तगुणितं, अनन्तशो गुणितम्। विशे० २६८।

अनन्तरवल्ली-माम्राद्यः षट्। बृ० तृ० ४२ आ।

अनन्यत्वद्रव्यशुद्धिः-आदेशतो द्रव्यशुद्धेर्भेदः, यथा शुद्धदन्तः। दश० २११।

अनपनीतम्-वाण्यतिशयविशेषः। सम० ६३।

अनब्भुवगओ-अनभ्युपगतः, श्रुतोपसम्पदानुपसम्पन्नः। आव० १००।

अनभिग्रहिकः-मिथ्यात्वविशेषः। ठाणा० २७।

अनममाणे-अनममानान्, निर्घृणतया सावद्यानुष्ठायिनः। आचा० २५४।

अनर्गलितकपाटम्-उद्घाटकपाटम्। ओघ० १६६।

अनर्थकम्-अर्थशून्यम्। आव० ५१।

अनलं-अनलम्-अभिष्टकार्यासमर्थं हीनादित्वात्। आचा० ३९६। न अलो अनलः-अपचलः। नि० चू० द्वि० २५ आ।

अनलगिरी-अनलगिरिः, प्रद्योतस्य हस्ती, तृतीयं रत्नम्। आव० ६७३।

अनलसा-उत्साहवन्तः। ओघ० १८०।

अनवत्राप्यता-अविद्यमानमवत्राप्यं-अवत्रपणं लज्जनं यस्य सः, अवत्रापयितुं-लज्जयितुमर्हः, शक्यो वाऽवत्राप्यो लज्जनीयः न तथा तद्भावः। उत्त० ३९।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनवगतानि-असङ्कल्पितान्यनालोचितानि। विशे० १४५।
अनवद्याङ्गी-महावीरभगवद्दुहिता। विशे० ९३५।
अनवयग्ग-अनवदग्रम्, अनन्तम्। भग० २४८।
अनवसर-अनागमः। आचा० १२२।
अनाकारा-सामान्यांशग्रहणशक्तिः। भग० ७३।
अनाघात-(अणघायं), अमारिघोषणा। आचा० २६०।
अनाचारश्रुतम्-सूत्रकृताङ्गस्य पञ्चममध्ययननाम। ठाणा० ३८७।
अनाचीर्णम्-अनारब्धम्। आचा० १४८।
अनायुक्ता-(अणाजुत्ता)-लोपकृता। ओघ० १८६।
अनाद्यन्तं-आद्यन्तरहितम्। ठाणा० १२०।
अनानुगामिकः-अनानुगामिकः-शृङ्खलाप्रतिबद्धदीप इव यो गच्छन्तं पुरुषं नानुगच्छति। प्रज्ञा० ५३९।
अनाभवद्व्यवहार-अस्वामित्वव्यवहार। आव० ८२१।
अनाभोगिक-मिथ्यात्वविशेषः। ठाणा० २७।
अनालीढं-(अणालीढं)-अनवबुद्धः। ओघ० २२७।
अनालोचितानि-असङ्कल्पितान्यनवगतानि। विशे० १४५।
अनाहो-अनाथः, नाथरहितः, योगक्षेमकारिनायकाभावात्। प्रश्न० ११। योगक्षेमकारिविरहितः। प्रश्न० १९।
अनिंदं-अनिन्द्यम्, सामायिकसप्तमपर्यायः। आव० ४७४।
अनिन्द्रियं-मनः। बृ० प्र० ९आ।
अनिकामं-परिमितम्। बृ० द्वि० ४ अ।
अनिन्दितः-किन्नरभेदविशेषः। प्रज्ञा० ७०।
अनिउणमई-अनिपुणमतिः। आव० ४९२।
अनिग्गहे-अनिग्रहः-न विद्यते इन्द्रियनिग्रहः-इन्द्रियनियमात्मकोऽस्येति। उत्त० ३४४।
अनिज्जूहित्ता-अदत्त्वा। भग० ७०१।
अनिट्ठं-अनिष्टम्, इष्यन्ते स्मेतीष्टास्तन्निषेधादनिष्टाः। भग० ७२।
अनिट्ठता-अनिष्टता, अवल्लभता। भग० २३।
अनिट्ठुभओ-अनिष्ठीवकः, मुखश्लेष्मणोऽपरिष्ठापकः। प्रश्न० १०७।
अनित्थंत्थं-अनित्थंस्थं, इदंप्रकारमापन्नमित्थं, इत्थं तिष्ठतीति इत्थंस्थं, न इत्थंस्थं अनित्थंस्थं-वदनादिशुषिरप्रतिपूरणेन पूर्वाकारान्यथाभावतोऽनियताकारमिति। प्रज्ञा० १०९।
अनित्यत्वम्-अतादवस्थ्यम्। जं० प्र० २६।
अनिद्देस-अनिर्देशदोषः, यत्रोद्देश्यपदानामेकवाक्यभावो न क्रियते, एतादृशः सूत्रदोषविशेषः। आव० ३७४।
अनिभृता-निष्ठुरवक्रोक्त्यादिरूपा। बृ० प्र० २१३ अ।
अनिदोज्जं-अनिर्भयं, अस्वस्थम्। व्य० द्वि० २४३ आ।
अनियट्टि-अनिवृत्ति-शुक्लध्यानचतुर्थभेदरूपम्। उत्त० ५८९। आ सम्यग्दर्शनलाभाद् न निवर्तते। विशे० ५३५।
अनियट्टी-ग्रहविशेषः। ठाणा० ७९। जं० प्र० ५३५।
अनियओ-अनियतः, अनियतवृत्तिः। उत्त० २६९।
अनियतवृत्ति-अनियतविहाररूपा। उत्त० ३९। अनियतविहारः। ठाणा० ४२३।
अनियाओ-अनियता। ओघ० ७३।
अनियाणे-अनिदानः, न विद्यते निदानमस्येति निराकाङ्क्षोऽशेषकर्मक्षयार्थी संयमानुष्ठाने प्रवर्तेत। सूत्र० २६४।
अनिरक्खिय-क्षिप्तः। आव० ६८१।
अनिरुद्धे-अनिरुद्धः, अन्तकृद्दशानां चतुर्थवर्गस्याष्टमाध्ययनम्। अन्त० १४।
अनिरुद्धो-अनिरुद्धः, कृष्णवासुदेवापत्यनाम। प्रश्न० ७३।
अनिर्विष्ट-न दत्तफलम्। बृ० प्र० ५० आ।
अनिव्वुइ-अनिर्वृतिः, अस्वास्थ्यनिबन्धना कायादिचेष्टा। आव० ४९९।
अनिलः-अनिलनरेन्द्रः यवराजर्षिपिता। बृ० प्र० १९० आ।
अनिलसुओ-अनिलसुतः यवराजा। बृ० प्र० १९१ अ।
अनिलुंछिएहिं-अवर्द्धितकैः। भग० ३७२।
अनिवृत्तिकरण-सम्यक्त्वप्राप्तौ करणविशेषः। ठाणा० ३१। अनिवृत्तिकरणं, न निवर्त्तनशीलम्। आव० ७५।
अनिवृत्तिबादरः-दर्शनसप्तकलोभोपशमयोरन्तरम्। आव० ८२।
अनिव्वाणि-अनिर्वाणिः-असुखम्। व्य० प्र० ६२ अ। खेदः (गणि०)
अनिव्वुइकरो-अनिवृतिकरः, अस्वास्थ्यनिबन्धनकायादिचेष्टाकरः। आव० ४९९।
अनिव्वुडं-अचित्तभोजी त्रिदण्डोद्वृत्तभोजी। दश० चू० ५१।
अनिश्रितवचनता-रागाद्यकलुषितवचनता। उत्त० ३९।
अनिष्पन्नातापना-(अणिप्फण्णायावणा)-आतापनाया भेदः। औप० ४०।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनिसाइ-अनिशादी। सम० २०।
अनिसीहं-अनिशीथम्, निशीथाद्विपरीतम्। उत्त० २०४। बद्धश्रुतम्। आव० ४६४।
अनिहुआ-त्रिदण्डिनः। बृ० द्वि० २३५ आ। कन्दर्पबहुला मायिनश्च। बृ० तृ० १९५ आ।
अनिहो-अनिहः-अमायः, न निहन्यत इति वा परीषहैरपीडितः, अस्निहः-स्नेहरूपबन्धनरहितः। सूत्र० ४००।
अनीकाधिपतयः-दंडनायकस्थानीयाः। तत्त्वा० ४-४।
अनीहडं-अनिर्गतम्। आचा० ३२५।
अनीहारिमे-अनिर्हारितम्। अटव्यादिकृतमनशनम्। भग० १२०। गिरिकन्दरादौ अनशनम्। ठाणा० ९४। भग० ६२५।
अनु-पश्चात्। आव० २४२। सातत्यम्। उत्त० ६२७।
अनुकूलं-अनुगुणं, अनुलोमं च। जीवा० ३।
अनुगमः-सूत्रस्य न्यासानुकूलः परिच्छेदः। ठाणा० ४। संहितादिव्याख्यानप्रकाररूपः, उद्देशनिर्देशनिर्गमादिद्वारकलापात्मको वा। सम० ११५। अनुगमनम्, अनुगतः। उत्त० ६३१।
अनुगामि-यन्मोक्षाय अनुगच्छति। व्य० द्वि० ३९८ अ।
अनुगामिकता-परम्परया शुभानुबन्धसुखम्। जीवा० २४२।
अनुगुणं-अनुकूलमनुलोमं च। जीवा० ३।
अनुग्गहे-अनुग्रहकृत्स्नं, यत् षण्णां मासानामारोपितं षट् दिवसा गतास्तदनन्तरमन्यत् षण्मासान् आपन्नस्ततो यत् अव्यूढं तत्समस्तं झोषितं पश्चात् यदन्यत् षाण्मासिकमापन्नं तद्वहति। व्य० प्र० ११८ आ।
अनुज्येष्ठ-पश्चाद्वृत्त्यङ्कः। विशे० ४४३।
अनुज्ञा-विधिः। आव० ७१३।
अनुज्ञातभक्तादिभोजनम् - अदत्तादानविरमणचतुर्थभावना। प्रश्न० १२८।
अनुज्ञातसंस्तारकग्रहणम् - अदत्तादानविरमणद्वितीयभावना। प्रश्न० १२७।
अनुज्ञापनाय-अनुमत्यै। आव० ५४२।
अनुतटभेदः-वंशवत् तटभेदः। ठाणा० ४७५।
अनुत्संकलितम्-अवितीर्णम्। आचा० ३६।
अनुदिशं-उपाध्यायप्रवर्त्तिनीलक्षणम्। व्य० द्वि० २०० अ। अनुदिक्। व्य० द्वि० १९६ आ। व्य० द्वि० २०४ आ।
अनुद्धातकृत्स्न - कालगुरु निरन्तरं वा। व्य० प्र० ११८ आ।
अनुद्धरिः-कुन्थुविशेषः, त्रीन्द्रियजीवभेदः। उत्त० ६९५। चलन्नेव कुन्थुः स विभाव्यते। ठाणा० ४३०।
अनुनादि-वाण्यतिशयविशेषः। सम० ६३।
अनुपथ-मार्गमध्यः। आचा० २६५।
अनुपरतम्-उत्सन्नं, बाहुल्येन। आव० ५९०।
अनुपरिहारकाः-पारिहारकवैयावृत्यकराः। ठाणा० ३२४।
अनुप्रवाचयति-(अनुपयाएइ), अनु-परिपाट्या प्रकर्षेण विशिष्टार्थावगमरूपेण वाचयति। जीवा० २५४।
अनुप्रास-अलङ्कारविशेषः। जं० प्र० १४३।
अनुप्रेक्षा-मनसा ग्रन्थार्थयोरभ्यासः। तत्त्वा० ९-२५।
अनुप्रेक्षितम्-ध्यातम्। ठाणा० १७३।
अनुभवसञ्ज्ञा-स्वकृतासातवेदनीयादिकर्मविपाकोदयसमुत्था। जीवा० १५।
अनुभूयते-लक्ष्यते। विशे० १७६।
अनुमतं-कामम्। आव० ५२७।
अनुमानं - साधनधर्म्ममात्रात् साध्यमात्रनिर्णयात्मकम्। ठाणा० ४९२।
अनुयोगद्वाराणि-व्याख्याङ्गानि। आचा० ३।
अनुलिखन्-अभिलङ्घयन्। जीवा० १७५।
अनुलेपनेन-सकृल्लिप्तस्य पुनः पुनरुपलेपनेन। सम० ११६।
अनुलोम-उत्सर्गः। ओघ० ६५।
अनुलोमवचनसहितत्वं-प्रतिरूपविनयविशेषः। व्य० प्र० २२ अ।
अनुल्वण-अनुद्भटः। जीवा० २७५।
अनुपातनम्-उच्चारणम्। आव० ८३५।
अनृतम्-असत्यम्। ठाणा० ५००।
अनेकजातिसंश्रयाद्विचित्रम्-वाण्यतिशयविशेषः। सम० ६३।
अनैकान्तिकः-हेतुदोषविशेषः। ठाणा० ४९३।
अनुशयः-क्रोधः। उत्त० ३७७।
अनुश्रेणि-ऋजुश्रेणिः। उत्त० ५९७।
अनुष्ठानं-(अणुट्ठाणं)-विहितम्। आव० ६१९।
अनुसारगतिः-अनुपातगतिः। सूर्य० १६।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अन्नं-अन्यत्। उत्त० ११७। मण्डकखण्डखाद्यादिसमस्तमपि भोजनम्। उत्त० ३६९।

अन्नंति-अनुयन्ति, आगच्छन्ति। ओघ० १२६।

अन्नंदाइं-असूया, अन्यामिदानीं वा। आव० ५०९।

अन्न-अन्यः। भग० ३१७। अन्न-भर्त्तः। दश० २१६।

अन्नइलाय-अन्नतिलाए, दोषान्नभोजी। प्रश्न० १०६।

अन्नइलायए-अन्नं विना ग्लानो भवति। भग० ७०५।

अन्नइलायचरए-अन्नग्लानको दोषान्नभुगिति, अथवा अन्नं विना ग्लायकः-समुत्पन्नवेदनादिकारण एव, अन्यस्मै वा ग्लायकाय भोजनार्थं चरतीति अन्नग्लानकचरकोऽन्न-ग्लायकचरकोऽन्यग्लायकचरको वा। ठाणा० २९८।

अन्नउत्थिए - अन्यतीर्थिकः, चरकपरिव्राजकभिक्षुभौतादिकः। आव० ८११।

अन्नउत्थिता-अन्ययूथिकाः-अन्यतीर्थिकाः। ठाणा० १३५।

अन्नउत्थिय-अन्ययूथिकः, अन्यतीर्थिकः, चरकादिकः। जीवा० १४३।

अन्नकाले-अन्नकालः, सूत्रार्थपौरुष्युत्तरकालं भिक्षाकालः। सूत्र० ३०१।

अन्नकिच्चकरो-अन्यतृप्तिकरः। आव० ७२०।

अन्नगिलाय-पर्युषितम्। आचा० ३१३।

अन्नत्थ-अन्यत्र, परिवर्जनार्थे। प्रज्ञा० २५३। व्य० प्र० १६४ आ।

अन्नधम्मिय-अन्यधार्मिकः, मिथ्यादृष्टिः। ओघ० २८।

अन्नपर-अन्यपरं-अन्यरूपतया परमन्यत्। आचा० ४१५।

अन्नपाणं-अन्नपानम्, ओदनकाञ्जिकादि। उत्त० ३६३।

अन्नभयं-परचक्रभयं। नि० चू० द्वि० २१ अ।

अन्नभावेणं-अन्यभावः-योऽसौ गन्ता सोऽन्यभावः, उन्नि-ष्क्रमितुकामः। ओघ० २२।

अन्नमन्नं-अन्योऽन्यं-परस्परं। ठाणा० १६२।

अन्नमन्नओगाढाइं-एकक्षेत्राश्रितानि। भग० ७५८।

अन्नमन्नगढिया - अन्योऽन्यग्रथिता, परस्परगुम्फिता। भग० २१५।

अन्नमन्नगुरुयत्ता - अन्योऽन्यगुरुकता, अन्योऽन्येन ग्रन्थनाद्गुरुकता-विस्तीर्णता। भग० २१५।

अन्नमन्नगुरुयसंभारियत्ता - अन्योऽन्यगुरुकसम्भारिकता, अन्योऽन्येन गुरुकं यत्सम्भारिकं तद्भावस्तत्ता। भग० २१५।

अन्नमन्नघडत्ताए-परस्परसमुदायता। भग० ७५८।

अन्नमन्नपुट्ठाइं-आगाढाश्लेषतः। भग० ७५८।

अन्नमन्नबद्धाइं-गाढाश्लेषतः। भग० ७५८।

अन्नमन्नभारित्ता-अन्योऽन्यभारिकता, अन्योऽन्यस्य यो भारः स विद्यते यत्र तदन्योऽन्यभारिकं तद्भावस्तत्ता। भग० २१५।

अन्नयरंसत्थं-अन्यतरत् शस्त्रम्: सर्वशस्त्रम्, एकधारादि-शस्त्रव्यवच्छेदेन सर्वतोधारशस्त्रकल्पम्। दश० २०१।

अन्नयर-अन्यतरम्, स्तोकम्। दश० १९८। प्रतिकूलम्। आचा० ३४२।

अन्नयरायम्मि-अन्यतरस्मिन्। उत्त० ५४३।

अन्न भण-अन्येनाकृष्यमाणः। ओघ० १६५।

अन्नलिंगे-अन्यलिङ्गम्, साधुलिङ्गम्। आव० १३४।

अन्नवत्थुवन्नास-अन्यवस्तूपन्यासः, उपन्यासस्य द्वितीयो भेदः। दश० ५५।

अन्नवालए-अन्यपालः-अन्ययूथिकः। भग० ३२३।

अन्नवेल-तत्रान्यस्यां - भोजनकालापेक्षयाऽऽद्यावसानरूपायां वेलायां-समये चरतीति। ठाणा० २९८।

अन्नहाभावो-अन्यथाभावः। बृ० द्वि० २८९ अ। उन्निष्क्रमणाभिप्रायः। ओघ० ८१।

अन्नाइट्ठे-अन्याविष्टः-अभिव्याप्तः। भग० ६८३।

अन्नाओ-अन्यस्मात्, अन्येन द्वारेण। उत्त० २१९।

अन्नाणं-अज्ञानम्, मिथ्याज्ञानम्। उत्त० १५१। मिथ्यात्वतिमिरोपप्लुतदृष्टेर्जीवस्य विपर्ययः। विशे० ८७३। द्रव्य-पर्यायविषयबोधाभावः। ठाणा० १५४। लौकिकश्रुतम्। ठाणा० ४५१।

अन्नाणतावादा-अज्ञानमेव श्रेय इत्येवंप्रतिज्ञाः। ठाणा० २६८।

अन्नाणकिरिया - अज्ञानात् वा चेष्टा कर्म वा सा। ठाणा० १५३।

अन्नाणदोसे - अज्ञानदोषः-अज्ञानात् - कुशास्त्रसंस्कारात् हिंसादिष्वधर्मस्वरूपेषु नरकादिकारणेषु धर्मबुद्ध्याऽभ्युदयार्थं वा प्रवृत्तिस्तल्लक्षणो दोषः, अज्ञानमेव दोषः। ठाणा० १९०।

अन्नाणियवाइ-कुत्सितं ज्ञानमज्ञानं तदेषामस्ति तेऽज्ञानिकास्ते च ते वादिनश्चेत्यज्ञानिकवादिनः। भग० ९४४।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अन्नाणी-अज्ञानी, मिथ्याज्ञानः। जीवा० ४३९। ज्ञाननिह्नववादी। सूत्र० २०८।

अन्नाणमूढा-जो सक्कादिमता अन्नाणा णाणबुद्धीए गेह्णति, णो जतिणं हेउसएहिं दंसियं घडमाणमत्थंपि गिह्णंति। नि० चू० द्वि० ४३ अ।

अन्नातचरते-अज्ञातः-अनुपदर्शितस्वाजन्यर्द्धिमत्प्रव्रजितादिभावः सन् चरति-भिक्षार्थमटतीत्यज्ञातचरकः। ठाणा० २९८।

अन्नायउंछं - अज्ञातोञ्छम्, विशुद्धोपकरणग्रहणविषयम्। दश० २८०।

अन्नायएसी - अज्ञातैषी-अज्ञातः-तपस्वितादिभिर्गुणैरनवगतः एषयते-ग्रासादिकं गवेषयति। उत्त० ४१४।

अन्नि-अन्यदीयम्। सूत्र० ३०८।

अन्निआपुत्तो-गङ्गाप्राप्तकेवल आचार्यः। (सं०)

अन्निकापुत्रिक-आचार्यविशेषनाम। व्य० प्र० १९२ आ।

अन्नितो-अन्वितः-युक्तः। उत्त० ४४८।

अन्नियपुत्ता-अर्णिकापुत्राः, वैनयिक्यामाचार्याः। आव० ४२९।

अन्नियपुत्तो-अन्निकापुत्रः, आर्यिकालाभद्वारे आर्यिकाऽऽनीताहारभोक्ता आचार्यः। आव० ५३७।

अन्ने - नानादेशापेक्षया गौरवकुत्सादिगर्भमामन्त्रणवचनमिदम्। दश० २१६।

अन्नेसमाण-अन्वेषमाणः, भगवदाज्ञामनुपालयन्। दश० १८७।

अन्नेसिं-अन्वेषयेत्-गवेषयेत्। आचा० ७७।

अन्नो-अन्यदीयम्। सूत्र० ३०८।

अन्नोन्नं-अन्यदन्यद्। ओघ० १४३।

अन्नोन्नकारणं-परस्परवैयावृत्यकरणम्। बृ० द्वि० २९२ अ।

अन्नोन्नघडत्ता - अन्योऽन्यघटता, परस्परसम्बद्धता। जीवा० ९३।

अन्यत्वम् - अनगारद्वयसम्बन्धिनो ये पुद्गलास्तेषां भेदः। भग० ७४१।

अन्यत्वद्रव्यशुद्धि-अन्यद्रव्यशुद्धिः, आदेशतो द्रव्यशुद्धेर्भेदः, यथा शुद्धवासा। दश० २११।

अन्यद्रव्यनानाता-परमाणोद्व्यणुकादिभेदभिन्नता। आव० २८१।

अन्यपुष्टः (अण्णपुट्ठ)-कोकिलः। उत्त० ६५३।

अन्योऽन्यक्रियासप्तैकक-सप्तमसप्तकम्। ठाणा० ३८७।

अन्योऽन्यप्रगृहीतम्-वाण्यतिशयविशेषः। सम० ६३।

अन्योऽन्याविभागसम्बद्ध-क्षीरनीरादिकसम्बद्धम्। आव० ३२२।

अन्वीक्षिष्यामि-अन्वेषयिष्यामि। आचा० २८२।

अन्वेषयेत्-प्रार्थयेत्। आचा० २९०।

अन्यतीर्थिकः-सरजस्कादयः। आचा० ३२४। अन्यानि च तान्यर्हत्प्रणीततीर्थादन्यत्वेन तीर्थानि च-निजनिजाभिप्रायेण भवजलधेस्तरणं प्रति करणतया विकल्पितत्वेनान्यतीर्थानि तेषु भवाः, ते च शाक्यसरजस्कादयः। उत्त० २९९।

अपइट्ठाणे-अप्रतिष्ठानः, सप्तम्यां नरकावासविशेषः। प्रज्ञा० ८३।

अपकर्षणं-ह्रासः। ठाणा० २२२।

अपकसंती-परिहसन्ती नीयमाना वा। ठाणा० ३२८।

अपकिट्ठ-अपकृष्टम्। किञ्चिदूनम्। भग० २९२।

अपक्खग्गाही-अपक्षग्राही, न पक्षं शास्त्रबाधितं गृह्णाति इति। ठाणा० ४४१।

अपक्खो-कालपक्खो। नि० चू० द्वि० ३३ आ।

अपचयद्रव्यमन्दः- कृशशरीरतया प्रवासं न कर्तुमीष्टे। बृ० प्र० ११३ अ।

अपचयभावमन्दः-बुद्धेरभावेन हिताहितप्रवृत्ति-निवृत्ती न कर्तुमीशः। बृ० प्र० ११३ अ।

अपच्चक्खाणकसाए-देशविरतिप्रतिबन्धको मोहः। सम० ३१।

अपच्चक्खाणकिरिआ-सूत्रकृताङ्गे द्वितीयश्रुतस्कन्धाध्ययनविशेषः। सम० ४२।

अपच्चक्खाणकिरिया-अप्रत्याख्यानक्रिया, विंशतिक्रियामध्ये पञ्चमीक्रिया। आव० ६१२। अविरतिस्तन्निमित्तः कर्मबन्धः। ठाणा० ४१। निवृत्त्यभावेन क्रिया-कर्मबन्धकारणम्, सम्यग्दृष्टेश्चतुर्थी क्रिया। प्रज्ञा० ३३४। प्रत्याख्यानक्रियाया अभावः, अप्रत्याख्यानजन्यः कर्मबन्धो वा। भग० १०१।

अपच्चक्खाणा-अप्रत्याख्यानः। प्रज्ञा० ४६८। कषाया एव। आव० ७७। देशविरत्यावारकः। ठाणा० १९४।

Jain Education International 2010_05　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

अपञ्चलो–अपचलः, असमर्थः। आव० ५३७। अयोग्यः। नि० चू० द्वि० २५ आ।

अपच्छिमं–अपश्चिमम्, चरमम्। आव० ५४४। पश्चात्कालभाविन्यः। सम० १२०।

अपच्छिमा–अपश्चिमा। आव० ८३९। पश्चिमैवामङ्गलपरिहारार्थमपश्चिमा। ठाणा० ५७।

अपज्जत्तं–अपर्याप्तम्–अशक्तः। उत्त० ४०८।

अपज्जत्ता–अपर्याप्ता, पर्याप्तभाषाविपरीतो भाषाभेदः। दश० २१०।

अपज्जत्तिया–अपर्याप्तिका, या मिश्रतया उभयप्रतिषेधात्मकतया वा न प्रतिनियतरूपतयाऽवधारयितुं शक्यते सा, भाषाया द्वितीयो भेदः। प्रज्ञा० २५५।

अपज्जोसवण–अपत्ते अतीते वा जो पज्जोसवति। नि० चू० प्र० ३३६ अ।

अपडिकम्म–शरीरप्रतिकर्मवर्जितम्। भग० ६२६।

अपडिण्णे–अप्रतिज्ञः, नास्य प्रतिज्ञा विद्यते। आचा० १३२। अनिदानो, वसुदेववत् संयमानुष्ठानं कुर्वन् निदानं न करोति। आचा० १३३। यदि वा स्याद्वादप्रधानत्वान्मौनीन्द्रागमस्यैकपक्षावधारणं प्रतिज्ञा तद् रहितः। आचा० १३३। अनिदानः। आचा० ३०६।

अपडिबद्धया–अप्रतिबद्धता, स्वजनादिषु स्नेहाभावः। भग० ९७।

अपडिभाणी–अप्रतिभाषी। आचा० ३०६।

अपडिरूवा–अप्रतिरूपा। उत्त० ११३।

अपडिलेह–अल्पार्थे नञ्, ततोऽप्रत्युपेक्षित इति अल्पोपकरणत्वादल्पप्रत्युपेक्षः। उत्त० ५९०।

अपडिवाती–अवधिज्ञानभेदः। ठाणा० ३७०।

अपढमसमयनियंठो–अप्रथमसमयनिर्ग्रन्थः, यः शेषेषु समयेषु वर्त्तमानः सः। उत्त० २५७।

अपतिट्ठिए–अप्रतिष्ठितः – आक्रोशादिकारणनिरपेक्षः केवलं क्रोधवेदनीयोदयाद् यो भवति सः। ठाणा० १९३।

अपत्तं–अपात्रं–अभाजनम्। नि० चू० तृ० ८० अ।

अपत्तपडिच्छण–अप्राप्तामपि वेलाम् प्रतिपालयति। ओघ० ४९।

अपत्ति–अप्रीतिः। आव० २०१।

अपत्तियं–अप्रीतिकम्। आव० २७३। अपात्रिकाम्–अविद्यमानाधाराम्। भग० ७०५।

अपत्तियंते–अप्रत्येति। बृ० द्वि० २२८ आ।

अपत्थं–अपथ्यं–अहितम्। उत्त० २७६।

अपत्थिअपत्थिआ–अप्रार्थितप्रार्थकः। आव० १९२।

अपत्थियपत्थए–अप्रार्थितं प्रार्थयते यः सः। भग० १७४।

अपदंसो–पित्तारुअं। नि० चू० प्र० ११७ अ।

अपदपतितं। जीवा० १९९।

अपद्रापयेत्–जीविताद्व्यपरोपयेत्। आचा० ४२८।

अपदलम्–अपशदं द्रव्यं (दलं) कारणभूतं मृत्तिकादि यस्यासावपदलः, अवदलति वा दीर्यत इत्यवदलः आमपक्वतयाऽसार इत्यर्थः। ठाणा० २७९।

अपद्रावन्ति–प्राणान्मुञ्चन्ति। आचा० ५५।

अपद्वारं–कुत्सितद्वारम्। ठाणा० ४०२।

अपद्वारिका–(अवदारिआ)–स्थानविशेषः। बृ० द्वि० २७२ आ।

अपध्यानम्–विस्रोतसिका। आव० ६०२।

अपनीतः–विधूतः प्रकम्पितो वा। आव० ५०७।

अपनीता–विनाशिता। ओघ० ४६।

अपभ्रंशः–तत्तद्देशेषु शुद्धं भाषितम्। जं० प्र० २५९।

अपमज्जियं–अप्रमार्जितम्, द्वितीयासमाधिस्थानम्। आव० ६५३।

अपमज्जियचारि–अप्रमार्जितचारी, असमाधिस्थाने द्वितीयो भेदः। सम० ३७।

अपमज्जियदुप्पमज्जियसिज्जासंथारए–अप्रमार्जितदुष्प्रमार्जितशय्यासंस्तारकः, शय्यादेश्चक्षुषा न प्रत्युपेक्षणं, शय्यादेरुद्भ्रान्तचेतसा प्रत्युपेक्षणं दुष्प्रत्युपेक्षणं यस्य सः। आव० ८३५।

अपमत्ते–अप्रमत्तः–निद्रादिप्रमादरहितः। आचा० ३०७।

अपमानभीरु–भिक्षां भ्रमन्नपि न यस्य तस्यैव वेश्मनि प्रवेष्टुमिच्छति, यदि वा 'ओमाणं' ति प्रवेशः, स च स्वपक्षपरपक्षयोस्तद्भीरुर्गृहिप्रतिबन्धेन मा मां प्रविशन्तमवलोक्यान्ये साधवः सौगतादयो वाऽत्र प्रवेक्ष्यन्तीति। उत्त० ५५२।

अपमित्यकः–षष्ठः शबलदोषः। प्रश्न० १४४।

अपयं–अपदम्, पद्यविधौ पद्ये विधातव्येऽन्यच्छन्दोऽभिधानम्। सूत्रदोषविशेषः। आव० ३७४। न विद्यते पदम्–अवस्थाविशेषो यस्य स। आचा० २३१।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अपयाण-अपादानं-मर्यादया दानं (खण्डनं)। आव० २७८।

अपया-लोमसीआदि। नि० चू० प्र० ३ आ।

अपर-संयमः। आचा० १६७।

अपरच्छं-अपराक्षम्, असमक्षं, अधर्मद्वारस्य त्रिंशत्तमं नाम। प्रश्न० ४३।

अपरद्धो-अपराद्धः, व्याप्तः। आव० १०८।

अपरमं-दुक्खम्। दश० चू० ६२।

अपरमविद्धम्-वाण्यतिशयविशेषः। सम० ६३।

अपराइआ-वप्रावतीविजये अपराजिता राजधानी। जं० प्र० ३५७।

अपराइए-प्रतिवासुदेवनाम। सम० १५४।

अपराइय-पद्मबलदेवस्य पूर्वभवनाम। सम० १५३।

अपराजिअ-अपराजितः, अरजिनप्रथमभिक्षादाता। आव० १४७।

अपराजिआ - अपराजिता, राजधानीनाम। जं० प्र० ३५२। पौरस्त्यरुचकवास्तव्याऽष्टमी दिक्कुमारी। जं० प्र० ३९१। रात्रिनाम। जं० प्र० ४९१। चन्द्रस्याग्रमहिषीनाम। जं० प्र० ५३२। पञ्चबलदेवमाता। आव० १६२।

अपराजिए-ग्रहविशेषः। ठाणा० ७९।

अपराजित-जगतीद्वारनामविशेषः। सम० ८८।

अपराजिता - अपराजिता, अञ्जनपर्वते पुष्करणीविशेषः। ठाणा० २३१। अनुत्तरोपपातिकविमानविशेषः। प्रज्ञा० ६९।

अपराजिते-जगतीद्वारनामविशेषः। ठाणा० २२५।

अपराजिय-कुन्थुजिनप्रथमभिक्षादाता। सम० १५१।

अपराजिया - अपराजिता-सैद्धान्तिकरात्रिनाम। सूर्य० १४७। अष्टमबलदेवमाता। सम० १५२। अङ्गारकमहाग्रहस्याग्रमहिषी। भग० ५०५, ठाणा० २०४। सुविधिनाथदीक्षाशिबिका। सम० १५१। विदेहेषु राजधानीविशेषनाम। ठाणा० ८०। राजधानीविशेषः। ठाणा० ८०।

अपराधालोचना-आलोचनाभेदः। व्य० प्र० ४८ आ।

अपरिआविआ - अपरितापिताः, स्वतः परतो वाऽनुपजातकायमनःपरितापाः। जं० प्र० १२६।

अपरिकम्म-अपरिकर्म-व्याघाते गिरिभित्तिपतनाभिघातादिरूपे संलेखनामविधायैव भक्तप्रत्याख्यानादि क्रियते तत्। उत्त० ६०३।

अपरिक्खिउ-अनालोच्य। नि० चू० प्र० ९८ आ।

अपरिखेदित्तं-वाण्यतिशयविशेषः। सम० ६३।

अपरिग्गहियागमणे - अपरिगृहीतागमनम्, वेश्या अन्यसत्कगृहीतभाटी कुलाङ्गना अनाथा वा तस्या गमनं-मैथुनासेवनम्। आव० ८२५।

अपरिग्गहो-अपरिग्रहः, धर्मोपकरणवर्जपरिग्राह्यवस्तुधर्मोपकरणमूर्च्छावर्जितः। प्रश्न० १४२। न विद्यते धर्मोपकरणादृते शरीरोपभोगाय स्वल्पोऽपि परिग्रहो यस्य सः। सूत्र० ४९। अगीतार्थः तदायत्ताश्च। व्य० प्र० २३३ अ।

अपरिणत-अमार्गस्थः। आव० ८५१।

अपरिणते-भोजनपरिणत्यभावः। ओघ० २३।

अपरिणय-स्नेहप्रायः। ओघ० ८९। कालग्रहणभावोऽपगतोऽन्यचित्तो वा जातः। ओघ० २०३। अपरिणतः-एषणादोषविशेषः। आचा० ३४५। अविश्वस्तः। आचा० ३४८।

अपरिणामा - अपरिणामाः, अपरिणतजिनवचनरहस्या। विशे० ९३१। अपरिणामिकः। व्य० प्र० ७२ अ।

अपरितंतजोगी - अपरितान्तयोगी, अविश्रान्तसमाधिः। अन्त० २३, अनुत्त० ४। अपरितान्ताः-अश्रान्ताः योगाः-मनःप्रभृतयः सदनुष्ठानेषु यस्य सः। प्रश्न० १०९।

अपरितंतो-वैयावृत्त्यादौ अनिर्वेदी। बृ० तृ० ९२ आ। अनिर्विण्णो। बृ० प्र० २२१ अ।

अपरिताविय-अपरितापितः, स्वतः परतो वाऽनुपजातकायमनःपरितापः। जीवा० २८४।

अपरिपुण्णं-अपरिपूर्णम्, सद्गुणविरहात्तुच्छम्। सूत्र० ३२६।

अपरिभुत्तं-अपरिभुक्तम्। आचा० ३२५।

अपरिभुत्त-अपरिभुक्तः, अनाक्रान्तः। ओघ० ५७।

अपरिमाण-अपरिमाणः-अनन्तः। आचा० २४१।

अपरिमितम्-अमितम्। आव० ५९५।

अपरिमियपरिग्गहं-अपरिमितपरिग्रहः। आव० ८२५।

अपरिमियमणंता - अपरिमितानन्ताः - अत्यन्तानन्ताः। प्रश्न० ९२।

अपरियाइत्ता-अपर्यादाय-समन्तादगृहीत्वा। ठाणा० ९०। अपर्यादाय-अगृहीत्वा। भग० ६४३। जीवा० ३७५। ठाणा० ४६।

अपरियाणित्ता-अपरिज्ञाय। ठाणा० ४६।

अपरियावणया-शरीरपरितापानुत्पादनेन। भग० ३०५।

अपरिसाडिं-अनवयवोज्झनम्। भग० २९४।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अपरिसाडि-अपरिशाटि, परिशाटिवर्जितम् । प्रश्न० ११२ ।

अपरिसाडी-वंसकंषिमादी । नि० चू० प्र० १६८ अ ।

अपरिसुद्धं-अपरिशुद्धम्, अयुक्तियुक्तम् । आव० ५७६ ।

अपरिस्साइ - न परिश्रवति-नालोचकदोषानुपश्रुत्यान्यस्मै प्रतिपादयति य एवंशीलः सोऽपरिश्रावीति । ठाणा० ४२४ ।

अपरिस्सावी-अपरिश्रावी-अबन्धको निरुद्धयोगः । भग० ८९१ । अङ्गरकः (आउ०)

अपरिहत्थो-अदक्षः । आव० ५६७ ।

अपरिहरित्ता - अपरिहृत्य - द्वित्रैर्मासैर्व्यवधानमकृत्वा । आचा० ३६६ ।

अपरिहारिया-अपरिहारिका-साधर्मिकाः । आचा० ३५२ ।

अपरीत्ता-साधारणशरीराः । ठाणा० १३२ ।

अपर्याप्ति-तत्परिणामयोग्यदलिकद्रव्यमात्मना नोपात्तं (सत्यपि तत्पुद्गलेषु स परिणामो रुध्यते) । तत्त्वा० ८-१२ ।

अपवरगो-अपवरकः । जीवा० २६९ । अपवरकम्, अन्तर्गृहम् । ओघ० १५३ ।

अपवरिका-अपवरकम् । व्य० द्वि० २०७ आ ।

अपवर्त्तनम्-कर्मणां स्थित्यादेरध्यवसायविशेषेण हीनताकरणम् । भग० २५ । उपक्रमैराशुष्कस्य शीघ्रः पाकः । तत्त्वा० २-५२ ।

अपवर्त्तना-हानिकरणम् । सूर्य० ११३ ।

अपवर्त्तयन्-तिरश्चीनं कुर्वन् । आचा० ३४३ ।

अपवादः-कारणं, विशेषवचनं च । जं० प्र० ५४१ । विभागः । नि० चू० तृ० १०५ आ ।

अपवादम्-प्रवचनरहस्यम् । बृ० प्र० १३१ अ ।

अपवादापवादरूपम्-शाक्यादीनां प्रयोजने रुद्राज्ञो विज्ञापनम् । ठाणा० ३१२ ।

अपव्वावितो-न प्रव्रजितः न मुंडितानि कृतानि । व्य० द्वि० २८ आ ।

अपसत्थविहायगति - अप्रशस्तविहायोगतिः - नामकर्मविशेषः । प्रज्ञा० ४७४ ।

अपसिणा-अप्रश्नाः-या पुनर्विद्या मंत्रविधिना जप्यमाना अपृष्टा एव शुभाशुभं कथयन्ति एताः । सम० १२४ ।

अपसू-अपशुः-द्विपदचतुष्पदादिरहितः । आचा० ४०३ ।

अपहार-मत्स्यः । ठाणा० ३०९ ।

अपहुप्पंते-अप्रभवति, अपूर्यमाणे । पिण्ड० ८८ ।

अपहृतान्योत्तरम्-वाण्यतिशयविशेषः । सम० ६३ ।

अपाईणवाए-अप्राचीनवातः, यः प्रतीच्या दिशः समागच्छति वातः स । प्रज्ञा० ३० ।

अपाचीनैः-अशुभैः । आचा० २५० ।

अपान्तरालम्-अबाधा । जीवा० ९४ ।

अपान्तरालसामान्यम्-वृक्षत्वगोत्वगजत्वादिकम् । विशे० ८९५ ।

अपायं-अपादम्, विशिष्टच्छन्दोरचनायोगात् पादवर्जितं गद्यगुणः । दश० ८८ ।

अपाय-सम्यगसम्यगिति गुणदोषविचारणाध्यवसायापनोदः । तत्त्वा० १-१५ ।

अपायतो-विश्लेषतः । ठाणा० ४२८ ।

अपारंगमा-अपारङ्गमाः, पारः-तटः परकूलं तद्गच्छन्तीति पारङ्गमाः न पारङ्गमाः अपारङ्गमाः । आचा० १२४ ।

अपावते-अपापकः-शुभचिन्तारूपः । ठाणा० ४०९ ।

अपावभाव-अपापभावः, शुद्धचित्तः । दश० २३ ।

अपाश्रयः-आधारः । विशे० ४१५ ।

अपिः - सम्भावनानिवृत्त्यपेक्षासमुच्चयगर्हाशिष्यामर्षणभूषणप्रश्नेष्विति । ठाणा० ४९५ । बाढम् । जीवा० १९८ । विद्यमानः । आव० ४५० । च । उत्त० १८२ । इति । ओघ० ३६ । यथाशब्दार्थः, समुच्चयार्थश्च । आचा० ६५ । पुनः । आचा० २८२ । बाढार्थे । जं० प्र० ४६ । एवकारार्थे । आव० ५८९ । अभ्युपगमवादसंसूचकः । आव० ५३१ । बाढम् । जं० प्र० ४१३ ।

अपिट्टणया-यष्ट्यादिताडनपरिहारेण । भग० ३०५ ।

अपियत्ता-अप्रियता, सर्वेषामेव द्वेष्यतया । भग० २३ ।

अपीओ-अपीतः, न पीतः । उत्त० ८७ ।

अपुज्जो-अपूज्यः, अवन्दनीयः । आव० ५१९ ।

अपुट्ठवागरणं-अपृष्टव्याकरणम्, अपृष्टे सति प्रतिपादनम् । भग० १५७ ।

अपुणरावत्तयं-अपुनरावर्त्तकम्ः, कर्मबीजाभावाद्भवावताररहितम् । भग० ७ ।

अपुणरावित्ति-अपुनरावर्तकम्-अविद्यमानपुनर्भवावतारम् । सम० ५ ।

अपुत्तो-अपुत्रः, स्वजनबन्धुरहितः, निर्मम इत्यर्थः । आचा० ४०३ ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अपुप्फिय–अपुष्पितं–तरिकारहितम्। ओघ० १२२। मच्छम्। बृ० प्र० ६८ अ।

अपुम–नपुंसकम्। ओघ० ९०।

अपुरिसंतरकडं – अपुरुषान्तरकृतं–तेनैव दात्रा कृतम्। आचा० ३२५।

अपुरिस–अपुरुषः, नपुंसकः। ठाणा० ३७२।

अपुव्वो–अपूर्वः, अननुभूतपूर्वोऽनुभूतपूर्वो वा। अनु० १३७।

अपुव्वं–अपूर्वम्, अपूर्वकरणम्। आव० ८५२।

अपूर्वश्रुतप्रत्याख्यानम्–आतुरप्रत्याख्यानादिकम्। आव० ४७९। अप्राप्तपूर्वं, स्थितिघात–रसाघाताद्यपूर्वार्थनिर्वर्तकम्। विशे० ५३५। अवृत्तपूर्वम्। आव० २३०, बृ० प्र० १९४अ।

अपुव्वकरणं–अपूर्वकरणं–असदृशाध्यवसायविशेषम्। भग० ४३६। अप्राप्तपूर्वम्। आव० ७५। सम्यक्त्वप्राप्तौ करणविशेषः। ठाणा० ३१।

अपुहुत्ते–अपृथक्त्वं, अपृथग्भावः, चरणधर्मसङ्ख्याद्रव्यानुयोगानां प्रतिसूत्रमविभागेन वर्तनम्। आव० २८५। अपृथक्त्वानुयोगः–एकस्मिन्नेव सूत्रे सर्व एव चरणादयः प्ररूप्यन्ते। दश० ४।

अपूरेंतो–अपूरयन्, अकुर्वन्। आव० २७१। अकुर्वन्, अनाचरन्। आव० २६३।

अपूर्वभक्तिकम्–अपूर्वरचनाकम्। ठाणा० ४०१।

अपेक्षाकारणम् – दिग्देशकालाकाशपुरुषचक्रादि। ठाणा० ४९४।

अपेज्जं–अपेयम्। जीवा० ३७०। अपेयम्–सुरादिकम्। व्य० प्र० ८ अ।

अपोद्धारः–साक्षादुक्तिः। आचा० ४९। निरासः। आव० ३०९।

अपोरसीय–अपौरुषेयम्, अपुरुषप्रमाणम्। भग० २९०।

अपोरुसियं–अपौरुषेयम्, पुरुषप्रमाणरहितम्। भग० ८२।

अपोह–अपोहः, पृथग्भावः। ओघ० १२। अपोहनं–निश्चयः। आव० १८। विपक्षनिरासः। भग० ४३३। अपोहनमपोहो–निश्चयः। विशे० २२६।

अपोहए–यदादिष्टं गुरुभिरेवं निश्चिनोति। विशे० ३०३।

अपोहते–एवमेतत् यदादिष्टमाचार्येणेति पुनस्तमर्थमागृहीतं धारयति करोति च सम्यक्तदुक्तमनुष्ठानमिति। आव० २६।

अप्पं–अल्पम्, मूल्यत एरण्डकाष्ठादि। दश० १४७। अभावः, स्तोकं वा। आव० ५८६।

अप्पइट्ठाणे–अप्रतिष्ठानः। सम० २। मोक्षः। आचा० २३१।

अप्पइट्ठिते – अप्रतिष्ठितः–निरालम्बन एव केवलक्रोधवेदनीयादुपजायते यः क्रोधः। प्रज्ञा० २९०।

अप्पईकारं–अप्रतीकारम्, सूतिकर्मादिरहितम्। प्रश्न० २२।

अप्पउलिओसहिभक्खणया–अपक्वौषधभक्षणता। आव० ८२८।

अप्पए–शरीरे। आव० ५५५।

अप्पकम्मपच्चायाते – अल्पकर्मप्रत्यायातः –अल्पैः–स्तोकैः कर्म्मभिः करणभूतैः प्रत्यायातः–प्रत्यागतो मानुषत्वमिति, अथवा एकत्र जनित्वा ततोऽल्पकर्मा सन् यः प्रत्यायातः स तथा लघुकर्मतयोत्पन्नः। ठाणा० १८०।

अप्पकिरियतराए –अल्पक्रियत्वम् – तथाविधकायिक्यादिकष्टक्रियाऽपेक्षम्। भग० ७६९।

अप्पकुक्कुई – अल्पकौत्कुचः, अल्पस्पन्दनः, अल्पं–असत् 'कुकुयं' कौत्कुचं–करचरणभ्रूभ्रमणाद्यसच्चेष्टात्मकमस्येति। उत्त० ५९।

अप्पक्खमं–आत्मक्षमां–आत्महिताम्। ओघ० १८९।

अप्पक्खरं–अल्पाक्षरम्, सूत्रगुणः। आव० ३७६।

अप्पग्घ–अल्पार्घम्, स्वल्पमूल्यम्। भग० १९९।

अप्पच्चओ–अप्रत्ययः, प्रत्ययाभावः। अधर्मद्वारस्य चतुर्विंशतितमं नाम। प्रश्न० २६। अप्रत्ययकारणत्वात्। अधर्मद्वारस्य सप्तदशं नाम। प्रश्न० ४३।

अप्पच्चक्खाण–अप्रत्याख्यानम्, सर्वप्रत्याख्यानं देशप्रत्याख्यानं च येषां उदये न लभ्यते। विशे० ५४४।

अप्पच्चक्खाय–अप्रत्याख्याय–अनिराकृत्य। उत्त० २६६।

अप्पच्छन्दमईओ–आत्मच्छन्दमतिः,आत्मच्छन्दा–स्वाभिप्रायकार्यकारी। आव० १००।

अप्पजूहिए–सिद्धेऽप्योदनादिके। आचा० ३३५।

अप्पउज्झं–आत्मवशं, स्वस्थचित्तम्। बृ० द्वि० २१० अ।

अप्पज्झाणं–आत्मध्यानम्, अमुकोऽहं अमुककुले अमुगसिस्से अमुगधम्मट्ठाणट्ठिइए न य तव्विराहणेत्यादिरूपम्। प्रश्न० १२८।

अप्पझंझे–अल्पझञ्झः, अविद्यमानकलहविशेषः। औप० ३९।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अप्पझंझा – अल्पझंझाः – विगततथाविधविप्रकीर्णवचनाः। ठाणा० ४४२।

अप्पडिकुट्ठाइं–अप्रतिकुष्टे–अनिवारिते। ठाणा० ९३।

अप्पडिबद्धे–अप्रतिबद्धः–मनसि निरभिष्वंगता। उत्त० ५८७।

अप्पडिबुज्झमाणे –अप्रतिबुद्धयमानः–शब्दान्तराण्यनवधारयन् अप्रत्युह्यमानो वा – अनपह्रियमाणमानसो। भग० ४८३।

अप्पडिरूवा–अप्रतिरूपा। आव० ६७५।

अप्पडिरूवे–अप्रतिरूपः, अविद्यमानं प्रतिरूपमतिप्रकर्षवत्त्वेनानन्यतुल्यमस्येति। उत्त० १८८।

अप्पडिलेहणा–अप्रत्युपेक्षणा, मूलत एव चक्षुषाऽनिरीक्षणा। आव० ५७६।

अप्पडिलेहियदुप्पडिलेहियउच्चारपासवणभूमि– अप्रतिलेखितदुष्प्रतिलेखितोच्चारप्रश्रवणभूमिः–पौषधेऽतिचारः। आव० ८३५।

अप्पडिलेहियदुप्पडिलेहियसिज्जासंथारए – अप्रतिलेखितदुष्प्रतिलेखितशय्यासंस्तारकः–पौषधेऽतिचारः। आव० ८३५।

अप्पडिलेहियदूसे–अप्रतिलेखितदूष्यः। ठाणा० २३४।

अप्पडिलेहियपणयं–अप्रतिलेखितदूष्यपञ्चकम्, दूष्यपञ्चकस्य प्रथमो भेदः, तूल्यु१पधानक२गण्डोपधाना३लिङ्गिनी४पोतमयमसूर५भेदभिन्नम्। आव० ६५२।

अप्पडिवाइ–अप्रतिपाति, अनुपरतस्वभावम्। आव० ६०८।

अप्पडिसुणणं–अप्रतिश्रवणम्, अप्रतिश्रोता। आव० ७२६।

अप्पडिसेवी–अप्रतिसेवी–न कुत्सितं कर्म आचरति। ओघ० १६५।

अप्पडिहओ–अप्रतिहतः, सौगन्धिकानगर्यधिपतिः। विपा० ९५।

अप्पडिहट्टु–अणप्पिणित्ता। नि० चू० प्र० १६९ अ।

अप्पडिहयं–अप्रतिहतं, अप्रतिस्खलितम्। जीवा० २५६।

अप्पडिहयपच्चक्खायपावकम्मे – अप्रतिहतप्रत्याख्यातपापकर्मा, न प्रतिहतं तपोविधानेन मरणकालादारात्क्षपितं प्रत्याख्यातं च मरणकालेऽप्याश्रवनिरोधेन पापकर्म येन सः। न प्रतिहतं सम्यग्दर्शनप्रतिपत्तितः प्रत्याख्यातं च सर्वविरत्यङ्गीकरणतः पापकर्म–ज्ञानावरणाद्यशुभं कर्म येन सः। भग० ३६।

अप्पडिहयवरनाणदंसणधरे – अप्रतिहतवरज्ञानदर्शनधरः, योऽप्रतिहते कटकुड्यादिभिरस्खलितेऽविसंवादके वा वरे–प्रधाने ज्ञानदर्शने–विशेषसामान्यबोधात्मके धारयति सः। भग० ७।

अप्पडिहो–अप्रतिघः (भक्त०)

अप्पणं–अर्पणं, प्राधान्येन विवक्षणम्। विशे० १२७७, ७७१।

अप्पणच्चिय–आत्मीयम्, स्वकीयम्। भग० १३२।

अप्पणट्ठा–आत्मार्थम्, आत्मनिमित्तम्। दश० २४९।

अप्पणियं–आत्मीयं। आव० १८९।

अप्पणिया–आत्मीया। आव० २१२।

अप्पतिट्ठाणं–अप्रतिष्ठानम्, नरकविशेषः। आव० ३४८।

अप्पतुमंतुमा – अल्पतुमन्तुमाः – विगतक्रोधकृतमनोविकारविशेषाः। ठाणा. ४४२।

अप्पतुमंतुमे–अल्पम्–अविद्यमानं त्वं त्वमिति स्वल्पापराधिन्यपि त्वमेवं पुराऽपि कृतवान् त्वमेवं सदा करोषीत्यादि पुनः पुनः प्रलपनं यस्य सः। उत्त० ५८९।

अप्पतेअं–अल्पतेजः–तेजशून्यः। दश० २७६।

अप्पत्तियं–अप्रीतिकम्। उत्त० ९०। दश० चू० १२५। पच्चामरिसकरणम्। नि० चू० प्र० ३१ अ। मनसः पीडां कुर्यात्। आचा० ४०५। क्रोधः। सूत्र० ३४। अप्रेम। भग० २९२। मनसः दुष्प्रणिधानम्। सूत्र० ३३१।

अप्पपरिकम्मं–तूननं, सन्धानं दशाछेदनं वा। बृ० द्वि० २०२ आ।

अप्पपाणं–अल्पप्राणम्, अल्पाः–अविद्यमानाः प्राणाः–प्राणिनो यस्मिंस्तत्, अवस्थितागन्तुकजन्तुविरहितम्। उत्त०६०।

अप्पपुण्णेहिं–अपुण्यैः–अनार्यैः पापाचारैः। आचा० ३०३।

अप्पभाए–अप्रभातः। आव० ३०१।

अप्पभक्खी–अल्पलघुभक्षी–अल्पानि–स्तोकानि लघूनि निःसाराणि निष्पावादीनि भक्षयितुं शीलमस्य। उत्त० ४२०।

अप्पभु–अप्रभवः–भृतकादयः। ओघ० १६३।

अप्पभूतं–अल्पभूतां–अल्पां। ठाणा० २९४।

अप्पमज्जणा–अप्रमार्जना, मूलत एव रजोहरणादिनाऽस्पर्शना। आव० ५७६।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अप्पमज्जियदुप्पमज्जियउच्चारपासवणभूमी – अप्रमार्जितदुष्प्रमार्जितोच्चारप्रश्रवणभूमिः–पौषधेऽतिचारः। आव० ८३५।

अप्पमत्तो–अप्रमत्तः, गुरुपारतन्त्र्यापहारिप्रमादपरिहर्त्ता। उत्त० २२३। अप्रमत्तसंयतग्रामः, भूतग्रामस्य सप्तमं गुणस्थानम्। आव० ६५०। आत्महितेषु जाग्रन्। आचा० १७२। प्रयत्नवान्। ओघ० २२१।

अप्पमाए–अप्रमादः, योगसङ्ग्रहे षड्विंशतितमो योगः। आव० ६६४। अकर्मकम्। सूत्र० १६९।

अप्पमाओ–अप्रमादः, उत्तराध्ययनेषु एकोनत्रिंशत्तममध्ययनम्। उत्त० ९। सम० ६४। उवओगपुव्वकरणक्रियालक्खणो। नि० चू० प्र० २९ अ।

अप्पमाणभोती – अप्रमाणभोजी, द्वात्रिंशत्कवलाधिकाहारभोक्ता। प्रश्न० १२५।

अप्पमातो–अप्रमादः प्रमादवर्जनम्, अहिंसाया एकोनपञ्चाशत्तमं नाम। प्रश्न० ९९।

अप्पयं–आत्मानम्। अल्पमेव वा। उत्त० ९०।

अप्पयाणयं–अप्रयाणम्। आव० ३८५।

अप्परए – अल्परतः, अल्पं–अविद्यमानं रतमिति क्रीडितं मोहनीयकर्मोदयजनितमस्येति, लवसप्तमादिः, अल्परजाः, प्रतनुबध्यमानकर्मा। उत्त० ६७।

अप्परिसाडियं–अपरिसाटिकम्, परिसाटविरहितम्। उत्त० ६१।

अप्परिहारिए– अपरिहारिकः-पार्श्वस्थावसन्नकुशीलसंसक्तयथाच्छन्दरूपः। आचा० ३२४।

अप्पलीयमाणा – अप्रलीयमानाः–अनभिषक्ताः। आचा० २४१।

अप्पलेवा–अल्पलेपा, निर्लेपा, चतुर्थी पिण्डैषणा। आव० ५७२। अप्पलेवा–जस्स दिज्जमाणस्स णिप्पावचणगादिगस्स लेवो ण भवति सा। नि० चू० तृ० १२ अ।

अप्पवणिज्जोदग–अपातव्यजला मेघाः। भग० ३०६।

अप्पवुट्ठिकाए– अल्पवृष्टिकायः, अल्पः–स्तोकोऽविद्यमानो वा वर्षणं वृष्टिः–अधःपतनं वृष्टिप्रधानः कायो–जीवनिकायो व्योमनि पतदप्काय इत्यर्थः, वर्षणधर्म्मयुक्तं वोदकं वृष्टिः, तस्याः कायो–राशिर्वृष्टिकायः अल्पश्चासौ वृष्टिकायश्चाल्पवृष्टिकायः। ठाणा० १४१।

अप्पसत्थाओ-अप्रशस्ताः-आश्रेयस्योऽनादेयाः। ठाणा० १७५।

अप्पसद्दा – अल्पशब्दाः–विगतराटीमहाध्वनयः। ठाणा० ४४२।

अप्पससरक्खं–अल्परजस्कम्। आचा० ३३७।

अप्पसागारियं–अल्पसागारिकम्। आव० १९५। अल्पगृहस्थम्। उत्त० ९०। आव० ३५८।

अप्पसावज्जं – अल्पसावद्यम्, अपापं, स्तोकपापं वा। आव० ५८६।

अप्पसाहणो–अल्पसाधनः, बलादिरहितः। आव० ७१२।

अप्पहाणो–अप्रधानः, लघुः। उत्त० १४९।

अप्पहिट्ठे–अप्रहृष्टम्, अहसन्। दश० १६६।

अप्पा–आत्मा, अभिहितरूपस्तदाधाररूपो वा देहः। उत्त० ५३। शरीरम्। प्रज्ञा० ३०५। अतति सन्ततं गच्छति शुद्धिसङ्क्लेशात्मकपरिणामान्तराणीति। उत्त० ५२। नि० चू० प्र० १५ अ। आत्मा–स्वभावः। ठाणा० ६१।

अप्पाइय–आप्यायितः। आव० ७१६।

अप्पाउरण–अप्रावरणः, अभिग्रहविशेषः। आव० ८५४।

अप्पाणं – आत्मानम्, अतीतसावद्ययोगकारिणमश्लाघ्यम्। अत्राणम्–अतीतसावद्ययोगत्राणविरहितम्। अतनम्–अतीतं सावद्ययोगं सततभवनप्रवृत्तं निवर्तयामि। आव० ४८६।

अप्पाणमेव–आत्मनैव। उत्त० ३१४। आत्मानं–अंतरात्मानम्। आचा० २८३।

अप्पायंक–अल्पातङ्कः, रोगरहितः। आव० ७९३। अरोगी। आचा० ३९३।

अप्पाहंति–सन्दिशन्ति। बृ० तृ० ४४ आ।

अप्पाहट्टु–आहृत्य, व्यवस्थाप्य, अपाहृत्य वा। सूत्र० २७४।

अप्पाहणया–सन्देशकस्तथैव दातव्यः। ओघ० १०२।

अप्पाहारं–अप्पधारणा, सामर्थ्यम्, अप्पाहारता जत्थ तं। नि० चू० तृ० ८२ आ।

अप्पाहार–अल्पाहारः, ऊनोदरतायाः प्रथमो भेदः। दश० २७। ठाणा० १४९।

अप्पाहारे–अल्पाधारः–तमेव पृष्ट्वा सूत्रार्थवाचनां ददाति। बृ० तृ० १३३ आ। अल्पाहारः, अष्टकवलाहारः। औप० ३८। भग० ९२१। स्तोकाहारः, साधुः। भग० २९२। स्तोकाशी, षष्ठाष्टमादिसंलेखनाक्रमायातं तपः कुर्वन् यत्रापि पारयेत्तत्राप्यल्पमित्यर्थः। आचा० २९०।

Jain Education International 2010_05　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

अप्पाहारो-जो आयरिओ संकियसुत्तत्थो तं चेव पुच्छिउं वायणं देति, तारिसं ति मोत्तुं ण गंतव्वं । नि० चू० तृ० ९३ आ ।

अप्पाहिंति-सन्दिशन्ति । बृ० द्वि० ११४ आ । सन्दिशतः । आव० ३०२ ।

अप्पाहिकरणे-अल्पाधिकरणं-निष्कलहं । ठाणा० ४१६ ।

अप्पाहितो-सन्दिष्टः । उत्त० २१९ ।

अप्पाहे-तद्गुरोस्तत्प्रवर्तिन्या वा एवं सन्दिशति-यथैतामात्मसकाशे कुरुत । ओघ० ४३ ।

अप्पाहेइ-सन्दिशति । दश० १०३ ।

अप्पाहेति-संदिसइ । नि० चू० प्र० २११ आ ।

अप्पाहेत्ता-सन्दिश्य । उत्त० १७३ । आव० ३१० ।

अप्पिच्छे-अल्पेच्छः, अल्पा-स्तोका, अल्पशब्दस्याभाववादित्वेनाविद्यमाना वा इच्छा-वाञ्छा वा यस्येति । उत्त० १२४ । न्यूनोदरतयाऽऽहारपरित्यागी । दश० २३१ ।

अप्पिणिच्चिया-आत्मीया । आव० २०२ ।

अप्पितणप्पिते-अर्पित-विशेषितं, अनर्पितं-अविशेषितम् । ठाणा० ४८३ ।

अप्पियं-अर्पितम्, आहितम् । भग० ८९ ।

अप्पिय-अप्रियम्, अनिष्टम् । भग० ७२ । अर्पितः, विशेषः । विशे० १३४६ ।

अप्पियणियं-अप्रीतिकम्, कलहः । उत्त० ३५५ ।

अप्पियत्ता-अप्रियता, अप्रेमहेतुता । भग० २५३ । प्रज्ञा० ५०४ ।

अप्पियवहा-अप्रियवधाः-अप्रियं-दुःखकारणम् तत् घ्नन्ति । आचा० १२२ ।

अप्पुणणकप्पिया-अपूर्णकलिका-अन्योन्यस्य सुखदुःखोपसंपदं प्रतिपद्यते । व्य० द्वि० ३७८ आ ।

अप्पुत्थायी - अल्पोत्थायी, अल्पमुत्थातुं शीलमस्येति । प्रयोजनेऽपि न पुनः पुनरुत्थानशीलः । उत्त० ५८ ।

अप्पुस्सुए-अल्पौत्सुक्यः । भग० १७४ । त्वरारहितः । भग० १२३ । अविमनस्कः । आचा० ३७९ ।

अप्पे-आप्यः, अपां प्रभवः ह्रदः । भग० १४१ ।

अप्पो-अल्पः, सर्वथाऽविद्यमानः । जीवा० १२१ । नास्ति किञ्चिदित्यर्थः । ओघ १७७ । निषद्याद्वयोपेतं रजोहरणं मुखवस्त्रिका चोलपट्टकाश्च । बृ० प्र० १५० आ ।

अप्पोदए-अल्पोदके-भौमान्तरिक्षोदकरहिते । आचा० २८५

अप्पोलं-दृढवेष्टनाद् घनवेष्टनात् । ओघ० २१४ ।

अप्पोवही - अल्पोपधिः, अनुल्बणयुक्तस्तोकोपधिः । दश० २८० ।

अप्पोसे - अल्पावश्याये - अधस्तनोपरितनावश्यायविप्रुड्वर्जिते । आचा० २८५ ।

अप्फंदणया - भाण्डोचितहस्तपादादिचेष्टाविकलता । व्य० प्र० २३६ अ ।

अप्फच्चितो-अइक्कंते । नि० चू० प्र० १४७ आ ।

अप्फालिया-शिक्षिताः-उपालब्धाः, उक्ताः । आव० ५५७ ।

अप्फालेइ - आस्फालयति, हस्तेनाऽऽताडयति-उत्तेजयति । औप० ६४ ।

अप्फिडिऊण-आस्फाल्य । आव० ३४४ ।

अप्फुण्णा-व्याप्ताः । बृ० तृ० ७० आ ।

अप्फुण्णे-आपूर्णः-परिपूर्णशरीरः । उत्त० ४८३ ।

अप्फुण्णो-व्याप्तः । आव० ३५४ ।

अप्फेया-वल्लीविशेषः । प्रज्ञा० ३२ ।

अप्फोआ-वनस्पतिविशेषः । जं० प्र० ४६ ।

अप्फोडेइ-आस्फोटयति, करास्फोटं करोति । भग० १७५ ।

अप्फोया-वनस्पतिविशेषः । जीवा० २०१ ।

अप्फोव-आस्तीर्णे, वृक्षगुच्छगुल्मलतासंछन्नः । उत्त० ४३८ ।

अप्रकीर्णप्रसृतं-वाण्यतिशयविशेषः । सम० ६३ ।

अप्रतिहत-(अप्पडिहय) -कटकुड्यपर्वतादिभिरस्खलिते, अविसंवादके वा । सम० ४ ।

अप्रत्याख्यानम्-द्वितियकषायचतुष्कम् । आचा० ९१ ।

अप्रमार्जितचारित्वम् - द्वितीयमसमाधिस्थानम् । प्रश्न० १४४ ।

अप्रोषितः-सामानिकः, सन्निहितः । विशे० १०६५ ।

अप्सरा-दक्षिणपश्चिमरतिकरपर्वतस्य दक्षिणस्यां भूतावतंसिकाराजधान्यधिष्ठात्री, शक्रदेवेन्द्रस्य द्वितीयाग्रमहिषी । जीवा० ३६५ । शक्रस्याग्रमहिषी । जं० प्र० १५९ ।

अफलवंतकी-अफलवान्, अप्राप्तिकः । प्रश्न० ६४ ।

अफव्वंता-अलभमानाः । नि० चू० प्र० १८३ आ ।

अफासुअ-अप्रासुकम्, सचित्तसम्मिश्रादि । दश० २३१ । सचित्तम् । आचा० ३२१ ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अफासुए-अप्रासुकम्, न प्रगता असवः-असुमन्तो यस्मात्तदप्रासुकम्-सजीवमित्यर्थः। भग० २२६।

अफुडिय-अस्फुटितः-राजीरहितः। आव० २३९।

अफुण्णे-आपूर्णम्। प्रज्ञा० ५९२।

अफुसं-अस्पृश्यम्, अबन्धनीयम्। भग० १०४।

अफुसमाणगतिपरिणामे-अस्पृशद्गतिपरिणामः, अस्पृशतो गतिपरिणामः। प्रज्ञा० २८९।

अफुसमाणगती-अस्पृशद्गतिः, यत्परमाण्वादिकमन्येन परमाण्वादिना सह परस्परसम्बन्धमननुभूय गच्छति सा, विहायोगतेर्द्वितीयो भेदः। प्रज्ञा० ३२७।

अबंधव-अबान्धवः, स्वजनरहितः। पश्न० १९।

अबंधवो-अबान्धवः, बान्धवरहितः, स्वजनसम्पाद्यकार्याभावात् कर्मनिगडबद्धः। प्रश्न० ११।

अबंधिउं-पात्रकबन्धग्रन्थिमदत्त्वा। ओघ० १४४।

अबंभं-अब्रह्म, अकुशलं कर्म, मैथुनम्। प्रश्न० ६५। अकुशलानुष्ठानम्, अब्रह्मगः प्रथमं नाम। प्रश्न० ६६। मैथुनम्। आव० ६५३। बस्त्यनियमलक्षणं। आव० ७६१।

अबंभ-अब्रह्मवर्जकः, श्रावकस्य षष्ठी प्रतिमा। आव० ६४६।

अबंभचारिणो-अब्रह्मचारिणः, मैथुनं आसेवितुं शीलं धर्मो वा येषां ते। उत्त० ३५८।

अबद्धिआ-अबद्धिकाः, अबद्धं सत्कर्म कंचुकवत्पार्श्वतः स्पृष्टमात्रं जीवं समनुगच्छन्तीत्येवं वदन्ति। औप० १०६।

अबद्धिगा-अबद्धिकाः, स्पृष्टकर्मविपाकप्ररूपकाः। आव० ३११। अबद्धिकः, बद्धं-जीवप्रदेशैरन्योऽन्याविभागेन सम्पृक्तं न बद्धं-अबद्धं, अर्थात्कर्म, तदभ्युपगमविषयमेषामस्तीति। उत्त० १५२।

अबद्धिता-अबद्धिकाः-स्पृष्टकर्मविपाकप्ररूपकाः। ठाणा० ४१०।

अबला-अबलाः, शारीरशक्तिविकलाः। जं० प्र० २३९।

अबले-अबलः, शरीरशक्तिवर्जितः। भग० ३२३।

अबहुस्सुए-अल्पश्रुताय-अवगाढस्तोकशास्त्राय। सूय० २९६।

अबहुस्सुतो-जेण आयारपगप्पो ण ज्झातितो। नि० चू० तृ० २५ अ।

अबहोड-अवखोटकः, बन्धविशेषः। उत्त० ११३।

अबाध-अन्तरालम्। विशे० ३७६।

अबाधाए-अबाधया अपान्तरालं। सूय० २६२।

अबाल-अष्टाधिकवर्षः। नि० चू० प्र० १७३ आ।

अबाहा-अबाधा, कर्मणो बन्धोदययोरन्तरम्। भग० २५५। अन्तरं, अन्तरालत्वाप्रतिघातरूपा। अव्यवधानेनान्तरम्। जं० प्र० ४३५। दूरवर्तित्वेनानाक्रमणमपान्तरालम्। जं० प्र० ६४। अन्तरं-व्यवधानम्। जं० प्र० ६५। अपान्तरालम्। जीवा० ९४, २०४। अन्तरालत्वाव्याघातरूपा। जीवा० ३०२। अन्तरालम्। ओघ० ९०। आव० ४६। विशे० ३७६। अन्तरं। जं० प्र० ४३५।

अबाहाए-अबाधया, व्यवधानेन कृत्वा। सम० २१। अबाधायां कृत्वा, अपान्तरालेषु मुक्त्वा। जीवा० २२२।

अबाहिरा-अबाह्यः, न बाह्य इति। आव० ४५।

अबितिज्जओ-अद्वितीयः, सहायो न भवति। प्रश्न० १२१।

अबुद्धा अबुद्धजागरियं-अबुद्धाः-केवलज्ञानाभावेन यथासंभवं शेषज्ञानसद्भावाच्च बुद्धसदृशास्ते चाबुद्धानां-छद्मस्थज्ञानवतां या जागरिका। भग० ५५४।

अबुहजण-अबुधजनः, अविपश्चिज्जनः-परिजनो यस्य सः, अकल्याणमित्रपरिजनः। दश० ८६।

अबोट-अनाक्रमणीय। ओघ० ९२।

अबोहि-अबोधिः, मिथ्यात्वकार्यम्। आव० ७६२। मिथ्यात्वसंहतिः। दश० २४४।

अबोहिअ-अबोधिकम्, मिथ्यात्वफलम्। दश० २०५।

अबोहिकलुसं-अबोधिकलुषः, मिथ्यादृष्टिः। दश० १५८।

अब्बहुलकाण्डम्-रत्नप्रभायां तृतीयकाण्डः। सम० ८८।

अब्बुयं-द्वितीयसप्ताहगर्भावस्था (तं०)

अब्भं-अभ्रम्, सामान्याकारेण प्रतीतम्। जीवा० २८३।

अब्भंगिपल्लय-स्नेहाभ्यक्तशरीरः। ओघ० ७४।

अब्भंगिओ-अभ्यङ्गितः। आव० ११७।

अब्भंगेति-थेवेण अब्भंगणं। नि० चू० प्र० ११६ आ।

अब्भंगो-थोवेण। नि० चू० प्र० १८८ अ।

अब्भंतरं-लोकेऽन्यैरनुगतम्। दश० चू० १४।

अब्भंतरकरणं - द्वयोः साध्वोः गच्छमेढीभूतयोरभ्यन्तरे कुलादिकार्यनिमित्तं परस्परमुल्लपतोस्तृतीयस्योपशुश्रूषोः बहिःकरणं। व्य० प्र० २३८ अ।

अब्भंतरगे-अभ्यन्तरम्-अभ्यन्तः मध्ये भवं। ठाणा० ५५।

अब्भंतरे पोग्गले-भवधारणीयेनौदारिकेण वा शरीरेण ये क्षेत्रप्रदेशाः अवगाढास्तेष्वेव ये वर्तन्ते तेऽवसेयाः, विभूषापक्षे तु निष्ठीवनादयोऽभ्यंतरपुद्गलाः। ठाणा० १०५।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अब्भक्खाणं-अभ्याख्यानम्, परमभि असतां दोषाणामाख्यानम्, अधर्मद्वारस्य सप्तदशं नाम। प्रश्न० २६। असदभियोगः। सूत्र० २६२। असद्दूषणाभिधानम्। प्रश्न० ४१। असद्दोषारोपणम्। प्रज्ञा० ४३८। असंतभावुब्भावणं। नि० चू० तृ० २५ अ। असद्दोषाविष्करणम्। भग० ८०।
अब्भक्खाणे-अभ्याख्यानम्, आभिमुख्येनाख्यानं-दोषाविष्करणम्। भग० २३२।
अब्भडिओ-आस्फालितः, आहतः। आव० ४३१।
अब्भत्थं-अध्यात्मस्थम्, अभिप्रेतम्। उत्त० २६५। यद्यस्याभिमतं सुखम्। उत्त० २६५। अध्यात्ममात्मनि यद्वर्तते, मनः। उत्त० २६५। अध्यात्मकरणम्, क्रियाया अष्टमो भेदः। आव० ६४८।
अब्भत्थिए-अध्यात्मिकः, आत्मविषयः। भग० ११५।
अब्भत्थियं-अभ्यर्थितम्। आव० ३५९।
अब्भत्थे-अभ्यस्ते, अनवरतं दृष्टपूर्वे, विकल्पिते, भाषिते च विषये पुनः क्वचित् कदाचिदवलोकिते। विशे० १७५।
अब्भपडलं-अभ्रपटलम्, मेघवृन्दम्। औप० ६६। प्रज्ञा० २७। मणिभेदः, पृथिवीभेदः। आचा० २९। उत्त० ६८९।
अब्भपडलो-अभ्रपटलः। प्रज्ञा० २६६। जीवा० २३।
अब्भ(त)रया-अभ्यन्तरका-ये राजानमति प्रत्यासन्नीभूयावलगन्ति। व्य० द्वि० २८२ अ।
अब्भरहितो-आसन्नो। नि० चू० द्वि० १३ आ।
अब्भरुक्खो-अभ्रवृक्षः, अभ्रात्मको वृक्षः। भग० १९५। वृक्षाकारपरिणतमभ्रम्। जीवा० २८३।
अब्भरुह-अभ्यारुहः-वृक्षस्योपरिवृक्षः, वनस्पतिविशेषः।भग० ८०२।
अब्भवालुए-अभ्रवालुका, मणिभेदः, पृथिवीभेदः। आचा० २९।
अब्भवालुया-अभ्रवालुका, अभ्रपटलमिश्रा वालुका। प्रज्ञा० २७। उत्त० ६८९। जीवा० २३।
अब्भसंथडा-अभ्रसंस्थितानि, मेघैराकाशाच्छादनानीत्यर्थः। ठाणा० २८७।
अब्भा-अभ्राणि। भग० १९५।
अब्भाइक्खइ-अभ्याख्यासि-निराकरोति। आचा० ५२।
अब्भाइक्खिज्जा-अभ्याख्यानम्-असदभियोगः। आचा० ४४। प्रक्रमसद्दोषारोपणम्। ठाणा० २६।

अब्भावगासं-अङ्गणम्। नि० चू० प्र० १९२ अ।
अब्भावगासियं-आकाशम्। बृ० द्वि० १७९ अ।
अब्भासं-पच्चासण्णं। नि० चू० प्र० ६० अ। अभ्यासः-हेवाकः। ठाणा० २८५।
अब्भास-अदूरसामत्थे, अच्छेअव्वम्। दश० ३१।
अब्भासकरणं-जो धम्मच्चुओ तं पुणो धम्मे ठवेंतेण। नि० चू० प्र० २३८ अ।
अब्भासगं-अभ्यासकम्। ओघ० १५९।
अब्भासवत्ति-अभ्यासवर्त्ती-गुरोरभ्यासे-समीपे वर्तते इति शीलः, गुरुपादपीठिकाप्रत्यासन्नवर्ती। व्य० प्र० २० आ।
अब्भासवत्तियं-प्रत्यासत्तिवर्तित्वम्, श्रुतार्थिना हि आचार्यादिसमीपे आसितव्यम्। ठाणा० ४०९। अभ्यासो-गौरव्यस्य समीपं तत्र वर्तितुं शीलमस्येत्यभ्यासवर्ती तद्भावोऽभ्यासवर्तित्वं, अभ्यासे वा प्रीतिकं-प्रेम। भग० ९२५।
अब्भासवत्तिया-अभ्यासवृत्तिता, समीपवर्त्तित्वम्। औप० ४३।
अब्भासासन-अभ्यासासनं-उपचरणीयस्यान्तिकेऽवस्थानं। सम० ९५।
अब्भासिया-द्रविडादिदेशोद्भवाः। बृ० द्वि० २११ आ।
अब्भासे-अभ्यासः, अदूरासन्नम्। दश० ३१। आसन्ने। ओघ० ७८। समीपे। ओघ० १४०।
अब्भासो-अभ्यासः, आसेवनालक्षणः। आव० ५९१।
अब्भाहतो-अभ्याहतः, मत्तः। उत्त० ३००।
अब्भितरं-आभ्यन्तरम्, प्रायश्चित्तादि। प्रश्न० १५७।
अब्भितर-अभ्यन्तरावधिरुक्तः। विशे० ३६९। योऽवधिः सर्वासु दिक्षु स्वद्योत्यं क्षेत्रं प्रकाशयति। प्रज्ञा० ५३६। आभ्यंतर- चित्तनिरोधप्राधान्येन कर्मक्षपणहेतुस्तपः। सम० १२।
अब्भितरए-अभ्यंतरम् आन्तरस्यैव शरीरस्य तापनात्, सम्यग्दृष्टिभिरेव तपस्तया प्रतीयमानत्वाच्च। औप० ३७।
अब्भितरओ तवो - लौकिकैरनभिलक्ष्यत्वात्तन्त्रान्तरीयैश्च भावतोऽनासेव्यमानत्वान्मोक्षप्राप्त्यन्तरंगत्वाच्चाभ्यन्तरतपः। दश० ३२। ठाणा ३६५।
अब्भितरमलो-आभ्यन्तरमलः, मूत्रपुरीषादि। आव० ७५८।
अब्भितरलावणग - आभ्यन्तरलावणिकः, लवणसमुद्रे शिखाया अर्वाक्चारी चन्द्रः। जीवा० ३१८।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अब्भिंतरसंबुक्का-संखनाभिखेत्तोवमाए आगिइए अंतो आढवति बाहिरओ संणियट्टइ। उत्त० ६०५।

अब्भिंतरिया-अभ्यन्तरिका, नगरीविशेषः। आव० २००।

अब्भिंडिऊण-आस्फाल्य। उत्त० १४९।

अब्भुक्खेइ-अभ्युक्षति, अभिमुखं सिञ्चति। जीवा० २५६। अभ्युक्षति, सिञ्चति, स्नपयति। जं० प्र० १९२।

अब्भुक्खेंति-अभ्युक्षन्ति सिञ्चन्ति। जं० प्र० २७५।

अब्भुग्गए-अभ्युद्गतः, आभिमुख्येन सर्वतो विनिर्गतः। सूर्य० २६३।

अब्भुग्गओ-अभ्युद्गतः, आभिमुख्येन सर्वतो गतः। जीवा० १७५। अभ्रोद्गतः-यद्वा आकाशे उद्गता प्रबलतया सर्वतस्तिर्यक् प्रसृता। जं० प्र० २९७।

अब्भुग्गय-अभ्युद्गतः, आभिमुख्येन सर्वतो विनिर्गतः। प्रज्ञा० ९९। अभिमुखमुद्गतः, अग्रिमभागे मनाक् उन्नतः। जीवा० २०५। संजातः। सम० १३९।

अब्भुग्गयमूसिय-अभ्युद्गतोच्छ्रितः, अभ्युद्गतमभ्रोद्गतं वा यथाभवत्येवमुच्छ्रितः, अथवा मकारस्यागमिकत्वादभ्युद्गतश्चासावुच्छ्रितश्चेत्यभ्युद्गतोच्छ्रितः, अत्यर्थमुच्च इत्यर्थः। भग० १४५।

अब्भुग्गया-अभ्युद्गता, आभिमुख्येन सर्वतो विनिर्गता। जीवा० ३७९। अग्रिमभावे मनागुन्नता। जं० प्र० ५०। अभ्युद्गता, अतिरमणीयतया द्रष्टृणां प्रत्यभिमुखमुत्-प्राबल्येन स्थिता। जीवा० २२६।

अब्भुग्गयाओ-अभ्युद्गतान्यभ्रोद्गतानि वोच्चानि। भग० ६७२।

अब्भुग्गयुच्छितपभासियं-अभ्युद्गतोत्सृतप्रभासितं, अभ्युद्गता-आभिमुख्येन सर्वतो विनिर्गता उत्सृताः-प्रबलतया सर्वासु दिक्षु प्रसृता या प्रभा तया सितम्। जीवा० ३७९।

अब्भुज्जयं-अब्भुज्जतमरणेण अब्भुज्जयविहारेण वा। नि० चू० तृ० ३५ अ।

अब्भुज्जया-अभ्युद्यता, सुविहिता। अनुत्त० ३।

अब्भुज्जियविहारो-जिणकप्पादि। नि० चू० प्र० २६३ आ।

अब्भुट्ठाणं-अभ्युत्थानम्, आगच्छति गच्छति च दृष्टे गुरावासनमोचनम्। उत्त० १७। ससम्भ्रममासनमोचनम्। उत्त० १२४। अभीत्याभिमुख्येनोत्थानं-उद्यमनम्। उत्त० ५३५। विनयार्हस्य दर्शनादेवासनत्यजनं। ठाणा० ४०८। आसनत्यागः। सम० ९५। गौरवार्हदर्शने विष्टरत्यागः। भग० ६३७। जओ दीसइ तओ चेव कायव्वं। दश० ३०। आगतस्याभिमुखमुत्थानम्। दश० २४०।

अब्भुट्ठिज्ज-सिंहासनादभ्युत्तिष्ठेयुरिति। ठाणा० ११७।

अब्भुट्ठिओ-अब्भुट्ठिएत्ति सामाइयकडो पडिक्कंता व्रतारोपितः। नि० चू० तृ० ८४ आ।

अब्भुट्ठितो-वैयावृत्त्यकरणोद्यतः। नि० चू० प्र० ३३४ अ।

अब्भुट्ठित्तए-अभ्युत्थातुम्-अभ्युपगन्तुम्। ठाणा० ५७।

अब्भुट्ठियं-अभ्युत्थितम्-अभ्युद्यतं। उत्त० ३०७। अभ्युत्थापन-वंदनकप्रतीच्छनकादिकं। व्य० प्र० १७२ आ। अभ्युत्थित-उद्यतः। ओघ० १८०।

अब्भुट्ठेमि-अङ्गीकरोमि। भग० १२१।

अब्भुत्तरोमा-प्रदीप्तरोमाः। नि० चू० द्वि० ६१ अ।

अब्भुदए-अद्भुतकान्, आश्चर्यरूपान्। उत्त० ३१७।

अब्भुदओ-उत्सवविशेषः। बृ० द्वि० १९८ अ।

अब्भुन्नय-अभ्युन्नतः, अभिमुखमुन्नतः। जीवा० २७५।

अब्भुवगमिया-आभ्युपगमिकी, या स्वयमभ्युपगम्य वेद्यते (वेदना)। भग० ४९७।

अब्भुवगमे-स्वेच्छया अभ्युपगम्य वादकथा क्रियते। बृ० प्र० ३१ आ।

अब्भुवगमो-अभ्युपगमः, स्वयमङ्गीकारः। प्रज्ञा० ५५७। भग० ६८३।

अब्भे-आभिन्द्यात्, आच्छिन्द्यात्। आचा० ३८।

अब्भोवगमिया-आभ्युपगमिकी-केशोल्लुञ्चनातापनादिभिः शरीरपीडा। प्रज्ञा० ५५७। शिरोलोचब्रह्मचर्यादिनामभ्युपगमे भवा (वेदना)। ठाणा० २४७।

अब्रह्म-मैथुनम्। आचा० ३३१।

अभओ-अभयः। आव० ९५। अभयकुमारोऽष्टमकारी। अन्त० ९। व्यक्तिविशेषः। आव० ३६८। उदाहरणदोषे अभयकुमारः। दश० ५३। नामविशेषः। बृ० प्र० ४६ आ।

अभओ सव्वस्सवि-अभयं सर्वस्यापि प्राणिगणस्याभयम्। अहिंसाया द्विपञ्चाशत्तमं नाम। प्रश्न० ९९।

अभत्तार्थः-खमणः, क्षपणः। व्य० प्र० १८१ आ।

अभग्गं-अभग्नम्, अपीडितम्। आव० ७७२।

अभग्गजोगो-अभग्नयोगः। आव० ७९३।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अभग्गसेण-अभग्नसेनः, विजयस्य चौरसेनापतेः स्कन्दश्रीभार्यायाः पुत्रः। विपा० ५७। विजयस्य चौरसेनापतेः पुत्रः। विपा० ६०। अभग्नसेन, विपाकश्रुताध्ययनम्। ठाणा० ५०७।

अभग्गो-अभग्नः, अभग्नसेनः, विजयाभिधचौरसेनापतिपुत्रः, अन्तकृद्दशासु तृतीयाध्ययनम्। विपा० ३५।

अभञ्जियं-अभग्नाम्-अमर्दितामविराधिताम्। आचा० ३२३।

अभडप्पवेसं-अभटप्रवेशम्, कौटुम्बिकगेहेषु राजवर्णवतां भटानामविद्यमानप्रवेशम्। विपा० ६३।

अभत्तच्छंदो-अभक्तच्छन्दः, भक्तारुचिरूपः। उत्त० ७८।

अभत्तट्ठं-अभक्तार्थम्, उपवासः। आव० ८५२।

अभत्तट्ठो-अभक्तार्थः, न भक्तार्थः, उपवासः। आव० ८५३।

अभय-अभयः, श्रेणिकपुत्रनाम। सूत्र० १०३। दानविशेषः। प्रश्न० १३५। अभयः, संयमः। आचा० ६२। कुमारविशेषः। नि० चू० प्र० ७ आ, नि० चू० तृ० ३७ अ। वृक्षाधिष्ठायकव्यंतरदर्शी। व्य० प्र० १७ अ।

अभयकरा-मल्लिजिनदीक्षाशिबिका। सम० १५१।

अभयकरो-अभयकरः। आव० ४९९।

अभयकुमारः-प्रद्योतस्यापकारकः। सूत्र० ३१३। विशेषनाम। विशे० ६१२। औत्पातिकीबुद्धेर्दृष्टांतः। बृ० प्र० १८६ अ। आर्द्रकुमाराय प्रतिमाप्रेषकः। सूत्र० ३८५। प्रद्योतगणिकाभिर्धार्मिकवञ्चनया वञ्चितः। सूत्र० ३२९। कालसौकरिकसुतसुलससखा। सूत्र० १७८। संवरपूर्विकैहिकार्थसिद्धौ दृष्टान्तः। जं० प्र० १९७। रोहिणीयस्य लौकिकसूक्ष्मपरिनिर्वापणः। व्य० प्र० २०९ आ।

अभयकुमारो-दृष्टांतविशेषः। नि० चू० प्र० १९४ अ।

अभयदए - अभयदयः, प्राणापहरणरसिकेऽप्युपसर्गकारिणि प्राणिनि यो न भयं दयते ददाति, अभया सर्वप्राणिभयपरिहारवती वा दया-अनुकम्पा यस्य सः। भग० ७। अभयं-विशिष्टमात्मनः स्वास्थ्यं निःश्रेयसधर्म्मभूमिकानिबन्धनभूता परमा धृतिरितिभावः तदभयं ददति। जीवा० २५५।

अभयदयेणं-अभयदयः, न भयं दयते प्राणापहरणरसिकोपसर्गकारिण्यपि प्राणिनि ददातीत्यभयदयः। सम० ४। १ अभया वा-सर्वप्राणिभयपरिहारवती दया-घृणा यस्यासावभयदयः। सम० ४।

अभयसेण-अभयसेनः, संवेगोदाहरणे वारत्रकपुरे राजा। आव० ७०९।

अभयसेणो-वारत्तपुरं नगरं, तत्थ अभयसेणो राया। नि० चू० तृ० ५४ आ। वारत्रकपुरराजा। बृ० द्वि० २४९ आ।

अभयसेन-छर्दितदोषदृष्टान्ते राजा। पिंड० १६९।

अभयसेना-वापीनाम। जं० प्र० ३७०।

अभया-हरीतकी। आचा० १३०। नि० चू० द्वि० १४१ आ।

अभये-अभयः, अनुत्तरोपपातिकदशानां प्रथमवर्गस्य दशमाध्ययनम्। अनुत्त० १।

अभवसिद्धिय-अभवसिद्धिकः, अभव्यः। जीवा० ४४९। ठाणा० ३०।

अभविय-अभव्यः-अयोग्यः। उत्त० ७१३।

अभाग-अभाग्यः, अशोभनः। आव० ७०८।

अभावं - नञः कुत्सायामपि दर्शनादशोभनं भावं-सर्वतो निष्काशनलक्षणं पर्यायम्। उत्त० ४६।

अभाविआ-अगीतार्थाः। बृ० द्वि० १६६ आ।

अभाविओ-अभावितः। आव० १०१। अभावितः-अपरिणतजिनवचनस्तस्य निर्लेपनाभावे मा भूद् विपरिणामः। बृ० प्र० २७२ अ।

अभाविते-असंसर्गप्राप्तं प्राप्तसंसर्गं वा। ठाणा० ४८१।

अभावितो-कृताभ्यासः। नि० चू० तृ० १३१ आ।

अभावुक-नलस्तम्बः। ओघ २२३।

अभावो-असंभवः। दश० ३९। विनाशः। बृ० द्वि० ७२ आ।

अभासो-स्वदेशभाषाया अज्ञः। बृ० द्वि० १९ आ।

अभि-पृथग्। बृ० द्वि० १९५ अ।

अभिई-अभिजित्, नक्षत्रविशेषः। सूर्य० ११४। ठाणा० ७७।

अभिओग-अभियोगः, आज्ञाप्रदानलक्षणः। दश० २४९। विकुर्वणा। भग० १९१। बलात्कारः। उत्त० ३६५।

अभिओगकया-अभियोगकृता, या वशीकरणचूर्णमन्त्रयोः संयोजिता सा। ओघ० १९३।

अभिओगपावणं - अभियोगप्रापणं, हठाद्व्यापारवर्त्तनम्। प्रश्न० २२।

अभिओगिओ-आभियोगिकः। आव० १२४।

अभिओगे-अभियोगः, प्रेष्यकर्मणि व्यापार्यमाणत्वम्। जीवा० २४३।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अभिओगो-अभियोगः, पारवश्यम् । विपा० ५४ । गर्वः । आव० ७७२ । वशीकरणचूर्णो मन्त्रश्च । ओघ० १९३ ।

अभिओग्गो-अभियोग्यः, अभिमुखं कर्मसु युज्यते व्यापार्यत इति वा, तस्य भावः कर्म्म वा । जीवा० २८० ।

अभिकंख-अभिकाङ्क्ष्य-उद्दिश्य । आचा० २८१ । पर्यालोच्य । आचा० ३८८ ।

अभिकंखमाणो-अभिकाङ्क्षन्, मायारहितः । दश० २५२ ।

अभिकंता - अभिकान्ता-शय्यायास्तृतीयप्रकारः । बृ० प्र० ९३ अ ।

अभिक्कंतं-अभिक्रान्तम् , अभिक्रमणम् । प्रज्ञापकं, प्रत्यभिमुखं क्रमणम् । दश० १४१ ।

अभिक्कमंति-अभिलसंति । दश० चू० ६२ ।

अभिक्कममाणे-अभिक्रामन्-गच्छन् । आचा० २१७ ।

अभिक्खसेवा-पुणो पुणो गमनं । नि० चू० प्र० ३९ आ ।

अभिक्खं-अभिक्ष्णं-अनवरतं । आव० ११९ ।

अभिक्खणं-अभिक्ष्णं, अनवरतम् । भग० २२, ४१ । आचा० ३६५ । सूत्र० ११५ । उत्त० ३४३, २१४ । आव० ४०७ । अनुसमयम् । भग० ४३ । पुनः पुनः । उत्त० ३४४, ४२८, ठाणा० ३०१ ।

अभिक्खणं अभिक्खणं ओहारइत्ता - शबलदोषः । सम० ३७ ।

अभिक्खणंऽभिक्खमोहारी-अभीक्ष्णमभीक्ष्णमवधारकः, योऽभीक्ष्णमवधारिणीं भाषां भाषते, यथा दासस्त्वं चौरो वेति, यद्वा शङ्कितं तन्निःशङ्कितं भणति । एकादशममसमाधिस्थानम् । आव० ६५३, ६५४ ।

अभिगच्छंति-अभिगच्छन्ति, समीपमभिगच्छन्ति । भग० १३७ ।

अभिगता-अभिगताः, अभिगतजीवाजीवाः । आव० ३०४ ।

अभिगम-अभिगमः, ज्ञानम् । उत्त० ५९२ । बोधिलाभः । सम० १२० । मैथुनासेवना, गमनं च । आव० ८२५ । अभिगम्य, विज्ञाय, आसेव्य । दश० २५८ ।

अभिगमकुसले-अभिगमकुशलः, लोकप्राघूर्णकादिप्रतिपत्तिदक्षः । दश० २५५ ।

अभिगमणं - अभिगमनं, सर्वबाह्यान्मण्डलादभ्यन्तरप्रवेशनम् । जीवा० ३४५ । सूर्य० २४३ ।

अभिगमरुई - अभिगमरुचिः-यस्य श्रुतज्ञानमर्थतो दृष्टं स भवति । प्रज्ञा० ५६ । अभिगमो-ज्ञानं ततो रुचिर्यस्य स, येन ह्याचारादिकं श्रुतमर्थतोऽधिगतं भवति सः । ठाणा० ५०४ । अभिगमरुचिः-अभिगमो-ज्ञानं तेन रुचिर्यस्य सः । उत्त० ५६३ ।

अभिगमसड्ढे-अभिगमश्राद्धकः-यत्र कारणे आपन्ने प्रविश्यते । ओघ० १५६ ।

अभिगमसड्ढो-सम्मदिट्ठी-गिहीताणुव्वओ । नि० चू० प्र० १९९ आ ।

अभिगम - अभिगमः, विस्तरबोधः । भग० १०० । प्रतिपत्तिः । भग० १३७ ।

अभिगमो- अधिगमः, यथावस्थितपदार्थपरिच्छेदः । आव० ८३८ । साधूणमागयाणं जा विणयपडिवत्ती सा । दश० चू० १४१ ।

अभिगया-जीवाजीवादिपदार्थाभिगमोपेता श्राविकेत्यर्थः । बृ० तृ० १३९ आ ।

अभिगहियट्ठ- अभिगृहीतार्थम् , प्रश्नितार्थस्याभिगमनात् । भग० १३५ ।

अभिगाहइ-सेवते । आचा० ११४ । **अभिगाहन्ते**-सेवन्ते । आचा० १३३ ।

अभिगिज्झ-अभिगृह्य, आलोच्य । दश० २१६ । अङ्गीकृत्य, तदभिमुखीभूय । ठाणा० ५६ ।

अभिग्गह-अभिग्रहः, गुरुवियोगकरणाभिसन्धिः । दश० २४१ ।

अभिग्गहियमिच्छादंसणवत्तिया - अभिगृहीतमिथ्यादर्शनप्रत्ययिकी, मिथ्यादर्शनप्रत्ययिकीक्रियाया द्वितीयोभेदः । आव० ६१२ ।

अभिग्गहिया-अभिगृहीता, प्रतिनियतार्थावधारणम् । प्रज्ञा० २५६ । अभिग्रहिका-वस्त्राणि वा पात्राणि वा पूरणीयानि अपरेण वा येन प्रयोजनमिति प्रतिपन्नाभिग्रहाः । बृ० प्र० ९९ अ ।

अभिग्गहो-अभिग्रहः-प्रत्याख्यानविशेषः । आव० ८५२ । कुमतपरिग्रहः । ठाणा० ४९ । नियमः । भग० ६२ ।

अभिग्रहिकः-मिथ्यात्वविशेषः । ठाणा० २७ ।

अभिघट्टिज्जमाणस्स-अभिघट्ट्यमानस्य-वेगेन गच्छतः । जं० प्र० ३७ । जीवा १९३ ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अभिघातो-उवलओ वा वत्तिज्जति। नि० चू० प्र० १०५ आ।

अभिचंदे-अस्यामवसर्प्पिण्यां चतुर्थकुलकरः। सम० १०३, १५०। अभिचन्द्रः, अन्तकृद्दशानां द्वितीयवर्गस्याष्टमाध्ययनम्। अन्त० ३। अभिचन्द्रः-मुहूर्त्तविशेषः। सूर्य० १४६। जं० प्र० ४९१। कुलकरविशेषः। आव० १११। जं० प्र० १३२। अभिचन्द्रः-अमुष्यामवसर्प्पिण्यां चतुर्थकुलकरः। ठाणा० ३६८।

अभिचारकमन्त्रविद्यादि - अशिवपुररोधादौ तत्प्रशमनार्थं। ठाणा० १६४।

अभिचारुअं-चारकता। नि० चू० प्र० २७४ आ।

अभिचारुकं-वसीकरणं। नि० चू० प्र० १०१ आ।

अभिजाए-अभिजातः, शास्त्रीयद्वादशदिवसनाम। जं० प्र० ४९०। विनीतः। उत्त० १८८। कुलीनः। जं० प्र० १८२।

अभिजाओ-शिष्टः। बृ० द्वि० २५५ आ।

अभिजाणइ-अभिजानाति, विवेचयति। आचा० २०३।

अभिजातं-वाण्यतिशयविशेषः। सम० ६३।

अभिजाति-कुलीनता। उत्त० ३४७।

अभिजातिए - अभिजातिगः, अभिजातिः-कुलीनता तां गच्छति-उत्क्षिप्तभारनिर्वाहणादिनेति। उत्त० ३४७।

अभिजाते-अभिजातः, शास्त्रीयैकादशदिवसनाम। सूर्य० १४७।

अभिजाय-अभिजातम्-कुलीनम्। भग० ४६९।

अभिजायइ - अभिजायते, उपभोग्यतयाऽऽभिमुख्येनोत्पद्यते। उत्त० १८७।

अभिजित्-नक्षत्रदेवविशेषः। प्रश्न० ९५। उदायनपुत्रः। ठाणा० ४३१।

अभिजुंजंति-अभियुञ्जते, योजयन्ति। प्रश्न० ३६।

अभिजुंजित्तए - अभियोक्तुम्, विद्यादिसामर्थ्यतस्तदनुप्रवेशेन व्यापारयितुम्। भग० १९१।

अभिजुंजिया-अभियुज्य, व्यापार्य, स्मारयित्वा। सूत्र० १३९। योजयित्वा, अभियोगं ग्राहयित्वा, व्यापारयित्वा। आचा० १२३। आश्लिष्य-वशीकृत्य। ठाणा० १०६। सम्बन्धमुपगत्य, प्रतिस्पर्द्धयं। ठाणा० १७७।

अभिजाइंति - तिरस्कुर्वन्ति, निर्भर्त्सयन्ति। बृ० प्र० २८१ अ।

अभिजोययंति-वशीकुर्वन्ति। बृ० द्वि० २५५ अ।

अभिज्झं-अभेद्यं। उत्त० २०७।

अभिज्झा - अभिध्यानमभिध्येत्यस्य। सम० ७१। लोभः, अभिध्यानं वा। प्रश्न० ९७।

अभिज्झा-अभिध्या-अदृढाभिनिवेशः, चित्तलक्षणः। भग० ५७३। अभिध्या, अभिध्यानम्, अभिलाषः। प्रज्ञा० ५०४।

अभिज्झिअ-अभिध्यातम्, इष्टम्। दश० २७७।

अभिज्झियत्ता-अभिध्यितता, भिध्या-लोभः सा सञ्जाता यत्र सो भिध्यितो, न भिध्यितोऽभिध्यितस्तद्भावस्तत्ता। भग० २५३। अभिध्यितता, अभिध्यानमभिध्या-अभिलाषः, सा सञ्जाताऽस्मिन् तस्य भावः। प्रज्ञा० ५०४। अभिध्येयता-अहृद्यत्वं, अशुभत्वं। भग० २३।

अभिणए-अभिनयः, चतुर्भिराङ्गिकवाचिकसात्विकाहार्यभेदैः समुदितैरसमुदितैर्वाऽभिनेतव्यवस्तुभावप्रकटनम्। जं० प्र० ४१४।

अभिणंदणो - अभिनन्दनः, अभिनन्द्यते देवेन्द्रादिभिरिति, चतुर्थजिनः, गर्भात्प्रभृतिरभीक्ष्णं शक्रोऽभिनन्दितवानिति। आव० ५०२।

अभिणंदिए-अभिनन्दितः-लोकोत्तरप्रथममासनाम। जं० प्र० ४९०।

अभिणंदियाइओ-अभिनन्दितवान्। आव० ५०२।

अभिणंदे-अभिनन्दः, लोकोत्तरप्रथममासनाम। सूर्य० १५३।

अभिणिक्खंतो-अभिनिष्क्रान्तः। आव० ११७।

अभिणिबोहे-अभिनिबोधः, अर्थाभिमुखो नियतः प्रतिनियतस्वरूपो बोधो-बोधविशेषः, अभिबुध्यतेऽस्माद् अस्मिन् वेति। तदावरणकर्मक्षयोपशमः। प्रज्ञा० ५२६।

अभिणिवट्टमाणे - अभिनिवर्त्तमानः, पृथग्भवन्। सूत्र० ३५४।

अभिणिविट्ठं - अभिनिविष्टं, विशिष्टविशिष्टतराध्यवसायभावतोऽतितीव्रानुभावजनकतया व्यवस्थितम्। प्रज्ञा० ४०३।

अभिणिवेसे-अभिनिवेशः, चित्तावष्टम्भः। औप० १०६।

अभिणिव्वट्टित्ता-अभिनिर्वर्त्य, समाकृष्य। सूत्र० २७९।

अभिण्णाणं - अभिज्ञानं, चिह्नम्। उत्त० १४९। आव० ३४४।

अभिण्णाय-अभिज्ञातम्, अभिमतम्। भग० १९७।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अभितावयंति-अभितापयन्ति, अपनयन्ति । सूत्र० १३३ ।
अभितुर-अभि-आभिमुख्येन त्वरस्व-शीघ्रो भव । उत्त० ३४० ।
अभितोसइज्जा-अभितोषयति, येन वा तेन वा यापयति । दश० २५३ ।
अभिदुग्गा-अभिदुर्गा, आभिमुख्येन दुर्गा-दुःखोत्पादिका । सूत्र० १२९ ।
अभिद्दवं-अभिद्रवन्ति । आचा० ४२९ ।
अभिद्दुय-अभिद्रुतः, सर्वात्मना व्याप्तः । जीवा० १३० ।
अभिधानं-वचनपर्यायः । आव० २९ ।
अभिधारए-अभिधारयेत्-यायात् । दश० १८६ । किमेते उपसर्गा ममाचलितचेतसः कर्तुमलमिति चिन्तयेत् । उत्त० १०९ । अभिधारयेयुः-अन्तर्भावितेव । उत्त० १०९ ।
अभिधारणा - धारणा, विचारणा, संकल्पः । व्य० द्वि० ३७३ आ ।
अभिधारयामो-गर्हणाबुद्धयोद्‌घट्टयामः । सूत्र० ३९२ ।
अभिधारेमाणे-अभिसन्धारयतः-गच्छतः । आचा० ३२९ ।
अभिधास्ये-कीर्तयिष्ये । आचा० ४ ।
अभिनंदिज्जा-अभिनन्देत्, अनुमन्येत । उत्त० १२० ।
अभिनयिका-नृत्यकलाभेदः । सम० ८४ ।
अभिनव-विशिष्टवर्णादिगुणोपेतः । जीवा० १२१ ।
अभिनवम्-नवम् । सूर्य० १८ ।
अभिनिक्खमणं-अभिनिष्क्रमणं-दीक्षा । आचा० ४२२ ।
अभिनिक्खमति-अभिनिष्क्रामति-धर्माभिमुख्येन गृहस्थ-पर्यायान्निर्गच्छति । उत्त० ३०६ ।
अभिनिचरिका-आभिमुख्येन नियता चरिका सूत्रोपदेशेन बहिर्व्रजिकादिषु दुर्बलानामाप्यायननिमित्तं पूर्वाह्णकाले समुत्कृष्टं समुदानं लब्धुं गमनं । व्य० द्वि० ६९ अ ।
अभिनिदुवारं-अनेकद्वारम् । बृ० द्वि० १२ आ ।
अभिनिबोध-अर्थाभिमुखोऽविपर्ययरूपत्वान्नियतोऽसंशयरूपत्वाद् बोधः-संवेदनम् । ठाणा० ३४७ ।
अभिनिपयाए-अभिनिप्रजा-अभि-प्रत्येकं नियता-विविक्ता प्रजा चुल्ली । व्य० द्वि० ३३९ अ ।
अभिनिवर्त्तनम्-क्रिया । उत्त० ५८१ ।
अभिनिविट्ठा-अभिनिर्वृत्ता । आव० २२७ ।
अभिनिविट्ठं-अभिनिविष्टम् । तीव्रानुभावतया निविष्टम् । भग० ९० ।
अभिनिविट्ठाइं-अभि-अभिविधिना निविष्टानि-सर्वाण्यपि जीवे लग्नानि । भग० ५६९ ।
अभिनिवुडच्चे-अभिनिर्वृत्तार्चः-शरीरसंतापरहितः । आचा० २८८ ।
अभिनिवेशिकः-मिथ्यात्वविशेषः । ठाणा० २७ ।
अभिनिवेसए-अभिनिवेशयेत्, कुर्यात । दश० २३२ ।
अभिनिवेसं-अभिनिवेशः । आव० ३११ । आग्रहः । भग० ४८९ ।
अभिनिव्वट्टित्ता-अभिनिर्वर्त्त्य, विधाय । भग० २२४ ।
अभिनिव्विगड-विष्वक् अपवरकः । व्य० द्वि० १९० आ ।
अभिनिव्वगडा-अभिनिर्व्याकृत-पृथग्विभिन्नद्वारायां वसतौ । व्य० प्र० ४० आ ।
अभिनिव्वगडाए-अभि-प्रत्येकं नियतो वगडः-परिक्षेपो यस्यां सा अभिनिव्वगडा । व्य० द्वि० १८१ अ ।
अभिनिसिज्जा-अभिनिषद्या-रात्रिस्वाध्यायभूमिः, अभिनैषेधिकी-सामान्यस्वाध्यायभूमिः । व्य० प्र० १२७ अ ।
अभिनिसिट्ठो - अभिनिसृष्टः, अभिमुखं - बहिर्भागाभिमुखं निसृष्टः । जीवा० ३६१, २०६ ।
अभिनिस्सवति-अभिनिःश्रवति, जिघ्रतामभिमुखं निस्सरति । जीवा० १९२ ।
अभिन्नं-अव्यपगतजीवं । बृ० प्र० ३५ आ ।
अभिन्नाय-अभिधाय-ज्ञात्वा । आचा० ३०४ ।
अभिप्पाओ-अभिप्रायः, बुद्धिः । आव० ४१४ ।
अभिप्पेय-अभिप्रेतः, कामयन् । दश० १९५ । अभिप्रेते-अभिरुचिते । उत्त० २५४ ।
अभिभवे-अभिभवकायोत्सर्गः - उपसर्गाभियोजने द्वितीयः । आव० ७७१ । विशे० ६१२ ।
अभिभूतः-आकुलः । आव० ५८९ । प्रारब्धः, अपराद्धो वा । प्रश्न० ६० ।
अभिभूय-तिरस्कृत्य । आचा० ३०८ । सर्वथा तत्सामर्थ्यमुपहत्य । उत्त० ८१ । पराजित्य । सूत्र० १४५ । अभिव्याप्य । सूत्र० २८५ ।
अभिमरए-अभिमरकः । आव० ८१९ ।
अभिमरा-अभिमरा । उत्त० १६२ । आव० ३१६ ।
अभिमुखं-अभिमुखं । व्य० प्र० ९९ अ ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अभिमुखनामगोत्रः – (अभिमुहनामगोत्तं), नोआगमतो द्रव्यद्रुमस्य तृतीयः प्रकारः । दश० १७ । अभिमुखे–संमुखे जघन्योत्कर्षाभ्यां समयान्तर्मुहूर्त्तानन्तरभावितया नामगोत्रे इन्द्रसम्बन्धिनी यस्य स तथा । ठाणा० १०३ ।

अभिमुखनामगोत्रा – ये पुनर्बादरापर्याप्ततेजःकायिकायुर्नामगोत्राणि पूर्वभवमोचनानन्तरं साक्षाद्वेदयन्ते तेऽभिमुखनामगोत्राः । प्रज्ञा० ७६ ।

अभिमुह–पव्वजाभिमुहो, संपट्ठितो । नि० चू० प्र० १०४ अ ।

अभिमुहो–अभिमुखः, उद्युक्तः । दश० २४५ । अभि–भगवन्तं प्रति मुखमस्य । सूर्य० ६ ।

अभियोग–आज्ञा । ठाणा० ५२१ । ग्रहणप्रवणः, अर्थबलाऽऽयातत्वेन तन्नान्तरीयकोद्भवः । विशे० ५३ । कार्मणं कुर्यात् । बृ० प्र० ९९ आ ।

अभियोग–आभियोग्यः, अभियोगार्ह आदेशकारी देवः । प्रश्न० १२१ ।

अभियोगो–वशीकरणं । व्य० द्वि० ३१५ आ ।

अभियोजनम् – विद्यामन्त्रादिभिः परेषां वशीकरणादि । प्रज्ञा० ४०६ ।

अभिरई–अभिरतिः, आभिमुख्येन रतिः । आव० ४५१ ।

अभिरामयंति–अभिरमयन्ति, आभिमुख्येन विनयादिषु युञ्जते । दश० २५६ ।

अभिरू–मध्यमग्रामस्य सप्तममूर्छनानाम । ठाणा० ३९३ ।

अभिरूइए–स्वादुभावमिवोपगतः । भग० ४६७ ।

अभिरूप–अभिमुखमतीवोत्करूपं आकारो यस्य सः । सूर्य० २ ।

अभिरूवं–अभिरूपं, अभि–सर्वेषां द्रष्टृणां मनःप्रसादानुकूलतयाऽभिमुखं रूपं यस्य तत्, अत्यन्तकमनीयमिति । जीवा० १६१ । प्रज्ञा० ८७ ।

अभिरूवा–अभिरूपाणि, कमनीयानि । सम० १३८ । अभि–सर्वेषां द्रष्टृणां मनःप्रसादानुकूलतया अभिमुखं रूपं यस्यः सा, अत्यन्तकमनीया । जं० प्र० २१ । अभिरूपाः–कमनीयाः । ठाणा० २३२ ।

अभिलंघमाण–अभिलङ्घयत्, अनुलिखत् । जं० प्र० २९७ ।

अभिलसंति–अभिलषन्ति । औप० २४ ।

अभिलसइ–अभिलषति, अभिलषणं-तल्लालसतया वाञ्छनम् । उत्त० ५८७ ।

अभिलावपुरिसे – अभिलापपुरुषः पुँल्लिङ्गाभिधानमात्रम् । आव० २७७ । ठाणा० ११३ ।

अभिलाषः–तीव्रलोभोदयप्रभव आत्मपरिणामः । आव० ५८० ।

अभिलोयणं–अभिलोकनम्, अभिलोक्यते यत्रस्थैस्तत्, उन्नतस्थानम् । प्रश्न० १३८ ।

अभिवंदओ–अभिवन्दकः, अभिवन्दिष्यत इति । आव० १६७ ।

अभिवंदिऊण–अभिवन्द्य, अभिमुखं वन्दित्वा–प्रणम्य । प्रज्ञा० ३ ।

अभिवड्ढिए–अभिवर्द्धितः, तृतीयः पञ्चमश्च युगे संवत्सरौ । सूर्य० १५४ । ठाणा० ३४४ ।

अभिवड्ढिए णं मासे–अभिवर्द्धितसंवत्सरस्य चतुश्चत्वारिंशदहोरात्रद्विषष्टिभागाधिकत्र्यशीत्यधिकशतत्रयरूपस्य द्वादशो भागः । सम० ५६ । अभिवर्द्धितमासः, अभिवर्द्धितो नाम मुख्यतस्त्रयोदशचन्द्रमासप्रमाणसंवत्सरः । बृ० प्र० १८६ आ ।

अभिवड्ढियवरिसं–जत्थ अधिकमासगो पडिति वरिसे तं । नि० चू० प्र० ३३९ अ ।

अभिवड्ढियसंवच्छरे–अभिवर्द्धितसंवत्सरः । सूर्य० १६९, १७१ ।

अभिभवंति–अभिभवन्ति–न्यक्कुर्वन्ति । ठाणा० १७७ ।

अभिवड्ढी–अभिवृद्धिः, उत्तराभाद्रपदाया देवता । जं० प्र० ४९९ ।

अभिवयणा–'अभी'त्यभिधायकानि वचनानि–शब्दा अभिवचनानि, पर्यायशब्दाः । भग० ७७६ ।

अभिवादणं – अभिवादनम्, शिरोनमनचरणस्पर्शनादिपूर्वमभिवादये इत्यादि वचनम् । उत्त० १२४ ।

अभिवायण-अभिवादनं-नमोक्काराइकरणं । दश० चू० १६३ ।

अभिवाहारो – अभिव्याहारः, आचार्यशिष्ययोर्वचनप्रतिवचनेऽभिव्याहरणम् । आव० ४७१ ।

अभिविधग्गहणं–पर्यापन्नपरिष्ठापितादेर्ग्रहणम् । बृ० द्वि० २४ अ ।

अभिवुड्ढित्ता–अभिवर्ध्य । सूर्य० १२ ।

अभिवुड्ढेमाणे–अभिवर्द्धयन् । सूर्य० १२ ।

अभिव्यज्यते–अनन्तपरिणामस्य द्रव्यस्य तत्तत्सहकारिकारणसन्निधाने तत्तद्रूपम् । ठाणा० ४९० ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अभिशंसनम् – असदध्यारोपणं, अभ्याख्यानं च । आव० ८२१ ।

अभिसंधारिज्जा–अभिसन्धारयेत्, पर्यालोचयेत । आचा० ३२९ ।

अभिसन्धि–आलोचनम् । प्रज्ञा० ५०० ।

अभिसंभूया–अभिसम्भूताः, प्रादुर्भूताः । आचा० ३७६ ।

अभिसमण्णागए–तद्भोगापेक्षया । भग० १५९ । गवेषयता लब्धं । भग० २२८ ।

अभिसमन्नागच्छामि – अभिसमागच्छामि, अभिविधिना साङ्गत्येन चावगच्छामि–सर्वैः परिच्छित्तिप्रकारैः परिच्छिनद्मि । भग० ७२५ ।

अभिसमन्नागयं – परिणमयितुमारब्धम् । भग० २२४ । उदयाभिमुखीभूतम् । भग० ९० । अभिसमन्वागतम्–उदयाभिमुखीभूतम् । प्रज्ञा० ४०३ । विशेषतः परिच्छिन्नम् । भग० २२३ ।

अभिसमन्नागया–अभिसमन्वागताः, अभिः–आभिमुख्येन सम्यग्–इष्टानिष्टावधारणतयाऽन्विति–शब्दादिस्वरूपावगमात्पश्चादागताः ज्ञाताः–परिच्छिन्ना यस्य । आचा० १५३ । भोग्यावस्थां गताः । ठाणा० २४५ ।

अभिसमन्नागयाइं–अभिविधिना सवर्णितयर्थैः समन्वागतानि–सम्प्राप्तानि । भग० ५६९ ।

अभिसमागच्छति–अभिसमागच्छति, साध्यसिद्धौ व्यापारणतः सम्यक् प्राप्नोति । भग० २३९ ।

अभिसमागम – अभिसमागमः, वस्तुपरिच्छेदः । ठाणा० १७२ ।

अभिसमेच्चा – आभिमुख्येन सम्यगित्वा–ज्ञात्वा । आचा० ४४ ।

अभिसित्त–अभिषिक्तः, दीक्षासंस्कृतः । दश० २४५ ।

अभिसेअ–अभिषेकः, श्रियोऽभिषेकः । आव० १७८ ।

अभिसेअसिला – अभिषेकशिला, अभिषेकाय–जिनजन्मस्नात्राय शिला । जं० प्र० ३७१ ।

अभिसेआ–पर्वत्तिणी । नि० चू० प्र० १३२ आ ।

अभिसेए–आचार्यपदस्थापनार्हः, सूत्रार्थतदुभयोपेतः । बृ० द्वि० २८३ आ ।

अभिसेपण–अभिषेकेण,शुक्रशोणितनिषेकादिक्रमेणेति। आचा० २३९ ।

अभिसेओ–अभिषेकः–सूत्रार्थतदुभयोपेत आचार्यपदस्थापनार्हः । व्य० प्र० १४१ आ । जीवा० २७६ ।

अभिसेक्कभंडे–अभिषेकभाण्डम्, अभिषेकोपस्करः । जीवा० २३६ ।

अभिसेग–अभिषेकः, अभिषिक्तः । बृ० प्र० १७७ आ ।

अभिसेगपत्ता – अभिषेकप्राप्ता–प्रवर्त्तिनीपदयोग्या । बृ० द्वि० २२ आ ।

अभिसेगसिलाओ – अभिषेकशिलाः, तीर्थकराणामभिषेकार्थाः शिलाः । ठाणा० २२५ ।

अभिसेज्जं–अभिशय्या, अभिनिषद्या । व्य० प्र० १२८ अ ।

अभिसेज्जा–अभिशय्या, द्वितीयवसतिः । विशे० १३०९ ।

अभिसेय–अभिषेकः–उपाध्यायः । व्य० द्वि० १६५ अ ।

अभिसेयसभा–अभिषेकसभा । जीवा० २३६ ।

अभिसेयसभा–अभिषेकसभा, यस्यां राज्याभिषेकेणाभिषिच्यते । ठाणा० ३५२ । अभिषेकभवनविमानभाविनी सभा । प्रश्न० १३५ ।

अभिहआ–अभिहताः, अभिमुखेन हताः, चरणेन घट्टिताः, उत्क्षिप्य क्षिप्ता वा । आव० ५७३ ।

अभिहड – अभ्याहृतम्, स्वग्रामादेः साधुनिमित्तमभिमुखमानीतम् । दश० ११६ । गृहस्थेनानीतं । आचा० ३२५ । निष्पन्नमेवान्यतः समानीतम् । आचा० ३६१ । अभ्याहृतं–स्वग्रामादिभ्य आहृत्य यद्ददाति । ठाणा० ४६० । भग० ४६७ ।

अभिहणंति – अभिघ्नन्ति, अभिमुखमागच्छन्तो घ्नन्ति । प्रज्ञा० ५९२ ।

अभिहणह–आभिमुख्येन हथ । भग० ३८१ ।

अभिहणिज्ज – अभिहन्यात्, पादेन ताडयेत् । आचा० ४२८ ।

अभीक्ष्णमवधारकत्वम्–शङ्कितस्याप्यर्थस्यावधारकत्वम् । प्रश्न० १४४ ।

अभीति–अभिचिः, उदायननृपपुत्रः । भग० ६१८ ।

अभीयी–अभिजित्, नक्षत्रविशेषः । सूर्य० १२९ ।

अभीरू–सत्त्वसम्पन्नः । ओघ० २०२ ।

अभु(ब्भु)ज्जियमरणं–परिण्णादि । नि० चू० प्र० २६३ आ ।

अभुत्त–अभुक्तः, यः कुमार एव प्रव्रजितः । ओघ० ९१

अभूइभाव–अभूतिभावः, असम्पद्भावः । दश० २४३ ।

Jain Education International 2010_05   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

अभूपणं-अभूतेन, असद्भुतेन। सम० ५२।
अभूतोद्भावनम्-यथा सर्वगत आत्मा। ठाणा० २६।
अभूतिभावो-विणासभावो। दश० चू० १३१।
अभेज्ज-अभिध्या, रौद्रध्यानम्। प्रश्न० ४२।
अभेज्जलोभो - अभिध्यालोभः, रौद्रध्यानान्विता मूर्च्छा। प्रश्न० ४२।
अभेत्सुः-कणिकाकारं कुर्युः। आचा० ३४३।
अभ्यंतरं तप-संवरनिर्जराद्वारा निर्वाणप्रापकं। तत्त्वा० ९-४६।
अभ्यन्तरशम्बूका - यस्यां क्षेत्रमध्यभागाच्छङ्खवद्वृत्तया परिभ्रमणभङ्ग्या भिक्षां गृह्णन् क्षेत्रबहिर्भागमागच्छति। बृ० प्र० २५७ अ।
अभ्यन्तरान्-अवगाहक्षेत्रस्थान्। ठाणा० २८४।
अभ्यन्तरानिर्वृति-बाह्यनिर्वृतेः खङ्गधारासमानायाः स्वच्छतरपुद्गलसमूहात्मिका। प्रज्ञा० २९४।
अभ्यस्तः-जित उचितो वा। आव० ५९४।
अभ्यस्तम्-कृतं, निर्वर्तितम्। आव० ५९३।
अभ्यागत-अतिथिः। उत्त० ३८१।
अभ्यासगुणे-(अब्भासगुणे), भोजनादिविषयः। आचा० ८६।
अभ्यासराशि-गुणकारः। सम० ९१।
अभ्युद्यतविहारेण-जिनकल्पादिना। बृ० प्र० २१० आ।
अमंडलिउवजीवो-अमण्डल्युपजीवकः-तत्र योऽमण्डल्युपजीवकः स साधुर्गुरुसकाशं गत्वा तमेव गुरुं भणति-यथा हे आचार्याः! संदिशत-ददत यूयमिदं भोजनं प्राघूर्णकक्षपक-अतरन्तबालवृद्धशिक्षकेभ्यः-साधुभ्य इति। ओघ० १७८।
अमंथरम्-अविलम्बितम्। ओघ० १८७।
अमओ-अमयः, न किम्मयोऽपि। दश० १३३।
अमग्गो-अमार्गः, मिथ्यात्वादिः। आव० ७६२।
अमच्च-अमात्यः, राज्याधिष्ठायकः। भग० ३१८। सचिवः। दश० १०७।
अमच्चा-अमात्याः, राज्याधिष्ठायकाः। भग० २६४।
अमच्चो-अमात्यः। आव० ११६। राज्यचिन्तकः। प्रश्न० ७९, ९६। राज्याधिष्ठायकः। औप० १४। राजमन्त्री। बृ० तृ० ३३ अ। यो राज्ञोऽपि शिक्षां प्रयच्छति सो। व्य० प्र० १६९ आ। उत्त० ३८०।

अमच्छरी-अमत्सरी, परगुणग्राही। प्रश्न० ७४।
अमण-अवसानम्। विशे० १३०७।
अमणाम-अमनोऽमम्, न मनसा अन्तः संगम्यन्ते, पुनः पुनः स्मरणगम्यम्। भग० ७२।
अमणामत्ता-अमनोऽम्यता, अमनोगम्यता। भग० २३। न मनसा अम्यते-गम्यते संस्मरणतोऽमनोऽम्यस्तद्भावस्तत्ता, प्राप्तुमवाञ्छितत्वम्। भग० २५३। भोज्यतया मन आप्नुवन्तीति मनआपाः प्राकृतत्वाच्च पकारस्य मकारत्वे मणाम इति सूत्रे निर्देशः, न मनआपा अमनआपाः। प्रज्ञा० ५०४।
अमणुण्ण-अमनोज्ञम्, न मनसा:-अन्तःसंवेदनेन शुभतया ज्ञायन्ते। भग० ७२। अमनोज्ञः-रटनशीलः। ओघ० १५३। अमनोज्ञः-असंविग्नः। ओघ० १२०।
अमणुण्णसंपओगसंपउत्ते - अमनोज्ञसम्प्रयोगसम्प्रयुक्तः-अमनोज्ञः-अनिष्टो यः शब्दादिस्तस्य यः संप्रयोगो-योगस्तेन संप्रयुक्तो यः स। औप० ४३।
अमणुण्णा-असाम्भोगिकाः। बृ० द्वि० १८ आ।
अमणुन्नत्ता-अमनोज्ञता, न मनोज्ञा अमनोज्ञाः, विपाककाले दुःखजनकतया न मनःप्रह्लादहेतुः। प्रज्ञा० ५०४। न मनसा ज्ञायते सुन्दरता। भग० ३५३। कथयाऽप्यमनोरमतया। भग० २३।
अमणुन्ने - अमनोज्ञो-न कश्चित् प्रतिभाति रटनशीलत्वात्तश्चैकाकी हिण्डते। ओघ० १५०। सर्वेषामप्यनिष्टः। बृ० प्र० २६६ अ।
अमणो-अमनस्कः, मनोरहितः-सम्मूर्च्छजः। ओघ० २२१।
अमत-अमृतम्-क्षीरोदधिजलम्। जीवा० २१०।
अमम-अममः, ममकाररहितः। भग० २७६। द्वादशोऽर्हन्। ठाणा० ४३४। जातिवाचकः शब्दः। जं० प्र० १२८, ३१३। भरते वर्षे ,मनुष्यभेदविशेषः। जं० प्र० १२८।
अममायमाणे-अममीकुर्वन्-अस्वीकुर्वन्। आचा० १३२।
अममे-जिनविशेषनाम। सम० १५३। शतद्वारे द्वादशोऽर्हन्। अन्त० १६। अममः, पञ्चविंशतितमो मुहूर्त्तः। जं० प्र० ४९१। मुहूर्तनामविशेषः। सूर्य० १४६।
अमम्मणा-अनपखञ्च्यमानता। औप० ७८।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अमयं-अमतं, अशोभनं मतम्, नास्तिकादिदर्शनम्, अमृतं वा, अमृतमिवामृतं, आत्मनि परमानन्दोत्पादकतया धनम्। उत्त० २०६। अमृतस्य-क्षीरोदधिजलस्य। जं० प्र० ५५।

अमयघोसो-चंडवेगच्छिन्नो मुनिः। (सं०)

अमयमेहे - अमृतमेघः-यथार्थनामा महामेघः। जं० प्र० १७४।

अमयरसरसोवमं-अमृतरसरसोपमम्, परमान्नम्। आव० १४४।

अमर-अमरः-देवः। आव० ६०। मयूरः, अमरो वा। प्रश्न० ८४।

अमरकङ्का-घातकीखंडपूर्वभरते पद्मनाभराजधानी। प्रश्न० ८७।

अमरवइ-अमरपतिः-इन्द्रः। भग० १५८।

अमरसोवमं-आम्ररसोपमम्। नि० चू० प्र० ३४७ अ।

अमरिसं-अमर्षः, असहिष्णुता। दश० ३८।

अमरिसणा - अमसृणाः, प्रयोजनेष्वनलसा अमर्षणा वा, अपराधेष्वपि कृतक्षमाः। सम० १५७। अमर्षणा, अपराधासहिष्णवः अमसृणा वा कार्येष्वनलसाः। प्रश्न० ७४।

अमरिसिओ-अमर्षितः,। आव० ५६५। अमर्षः-मत्सरविशेषः। आव० २४१।

अमरिसो-अमर्षः, अत्यन्ताभिनिवेशः। उत्त० ६५६।

अमर्षाध्मातः-मत्सरपूरितः। आव० २४१।

अमला-शक्रदेवेन्द्रस्याग्रमहिषीनाम। जं० प्र० १५९। भग० ५०५। दक्षिणपश्चिमरतिकरपर्वतस्य पूर्वस्यां भूताराजधान्यधिष्ठात्री, शक्रदेवेन्द्रस्य प्रथमाऽग्रमहिषी। जीवा० ३६५।

अमलाते-शक्रस्याग्रमहिष्या राजधानीविशेषः। ठाणा० २३१।

अमाइ-अमायी, यः शाठ्येन शिष्यान्न वाहयेत् सः। दश० ५।

अमाघाओ-अमाघातः, अमारिः, अहिंसायास्त्रिपञ्चाशत्तमं नाम। प्रश्न० ९९।

अमात्यः-राजमन्त्री। आव० ५५। अमात्यः। ठाणा० १५५।

अमायपुत्ते-अमातापुत्रः-रौद्रे नगरविनाशे स्वस्वजीवितरक्षणाक्षणिकतया यत्र माता पुत्रं न स्मरति। बृ० प्र० ३०४ अ।

अमावासासंगुणं-अमावास्यासंगुणम्, याममावास्यां ज्ञातुमिच्छसि तत्सङ्ख्यया गुणितम्। सूर्य० ११३।

अमिअतित्तो - अमृततृप्तः, आबाधारहितत्वात्। आव० ४४७।

अमिए-अमितः, भवनपतीन्द्रविशेषः। जीवा० १७०।

अमिज्जं-(अमेयं), विक्रयप्रतिषेधादेवाविद्यमानमातव्यां, अविद्यमानमायां वा। भग० ५४४।

अमितकौतुकाः-(कोउगामिगा), कौतुकान्मृगा इव मृगा अज्ञत्वात्प्राकृतत्वादमितकौतुकाः। उत्त० ५०१।

अमितगति-भवनपतीन्द्रविशेषः। ठाणा० २०५।

अमितवाहणे-उत्तरदिग्वर्ती वायुकुमारेन्द्रः। ठाणा० ८४।

अमितवाहन-भवनपतीन्द्रविशेषः। ठाणा० २०५।

अमितसेणे-भरतेऽतीतोत्सर्पिणीकुलकरः। ठाणा० ५१८।

अमित्रक्रिया-यन्मातापितृस्वजनादीनामल्पेऽप्यपराधे तीव्रदण्डस्य दहनाङ्कनताडनादिकस्य करणम्। ठाणा० ३१६।

अमियं-अमृतम्, अमितम्, मृष्टां पथ्यां वा, सार्थिकां अपरिमितम्। आव० ५९५। अमितम्, अनेकभवोपात्तमनन्तम्। आव० ६१०। अमितः-प्रमाणाभ्यधिकः। ओघ० १४२। अमितः-दिक्कुमाराणामधिपतिः। प्रज्ञा० ९४। (अमितः), अष्टमो दक्षिणनिकायेन्द्रः। भग० १५७।

अमियगती-वायुकुमारेन्द्रविशेषः। ठाणा० ८४।

अमियणाणि-अमितज्ञानी, जिनः। सम० १५३।

अमियवाहण-अमितवाहनः, भवनपतीन्द्रविशेषः। जीवा० १७१।

अमियवाहणे-अमितवाहनः, दिक्कुमाराणामधिपतिः। प्रज्ञा० ९४। उत्तरनिकाये अष्टम इन्द्रः। भग० १५७।

अमिल-अमिलम्, ऊर्णावस्त्रम्। दश० ११३।

अमिला-उरभ्राः। ओघ० १३५। उन्निया। दश० चू० ९२। वस्त्राणि। नि० चू० प्र० १४४ आ। रोमेसु कया। नि० चू० प्र० २५५ अ। नमिजिनप्रवर्तिनीनाम। सम० १५२। अम्लान (अव्यादि)। ठाणा० ३४०।

अमिलाणि--महाधनमूल्यानि वस्त्राणि। आचा० ३९३।

अमिलाया-अम्लाना (तं०)।

अमिलियं-अमिलितम्। विशे० ४०६।

अमुगिच्चगं-अमुकदेशोद्भवम्। बृ० प्र० ९८ आ।

अमुच्छ-(अमूर्च्छा) उपघावसंरक्षणानुबन्धः। भग० ९७।

अमुणिओ-अमुनयः, गृहस्थाः। आचा० १५२।

अमुणी-अमुनयः, मिथ्यादृष्टयः। आचा० १५२।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अमुत्ती – अमुक्तिः, सलोभता, परिग्रहस्य षड्विंशतितमं नाम । प्रश्न० ९२ ।

अमुय–अस्मृतम् , मनोऽपेक्षया अस्मृतम् । भग० १९७।

अमुहं–अमुखं, निरुत्तरम् । व्य० द्वि० १६० अ ।

अमुहा–अमुखाः, निर्वाचः । भग० ३७६ ।

अमूढ–अमूढः, अविप्लुतः । दश० २६६ ।

अमूढदिट्ठी–अमूढदृष्टिः, बालतपस्वितपोविद्यातिशयदर्शनैर्न मूढाः स्वभावाच्चलिता दृष्टिः–सम्यग्दर्शनरूपा यस्यासावमूढदृष्टिः । प्रज्ञा० ५६ । अचलितसम्यग्दृष्टिः । दश० १०२। ऋद्धिमत्कुतीर्थिकदर्शनेऽप्यनवगीतमेवास्मद्दर्शनमिति मोहविरहिता सा चासौ दृष्टिश्च–बुद्धिरूपा । उत्त० ५६७ ।

अमूढलक्खो – अमूढलक्षः, सर्वज्ञेयाविपरीतवेत्ता । आव० २३४ ।

अमृतरसा–वापीनाम । जं० प्र० ३७१ ।

अमेज्झं–अमेध्यम् । आव० २१३ ।

अमोसलिं–न विद्यते मोसली यत्र तदमोसलि । ठाणा० ३६१ ।

अमोहं–अमोघम् , अन्तरिक्षम् । सूत्र० ३१८ । अवन्ध्यम् । दश० २३३ । जूवगो । नि० चू० तृ० ७०आ ।

अमोहदंसणं–अमोघदर्शनम् , पुरिमताले उद्यानम् । विपा० ५५ ।

अमोहदंसि–अमोहदर्शी, योऽमोहं–यथावत्पश्यति । दश० २०७ ।

अमोहदंसी – अमोघदर्शी, पुरिमतालनगरेऽमोघदर्शनोद्याने यक्षः । विपा० ५५ ।

अमोहपहारी – अमोघप्रहारी, जितशत्रो राज्ञो रथिकः । उत्त० २१४।

अमोहरहो–अमोघरथः, जितशत्रो राज्ञो रथिकः । उत्त० २१३ ।

अमोहमत्थं–अमोघशस्त्रम् । आव० ४०७ ।

अमोहा – अमोघा, पूर्वदिग्भागञ्जनपर्वतस्य दक्षिणस्यां दिशि पुष्करिणीविशेषः । जीवा० ३६४ । ठाणा० २३० । अनिष्फला, जम्ब्वाः सुदर्शनाया द्वितीयं नाम । जीवा० २९९ । सफला । जं० प्र० ३३६ । अमोघाः, आदित्योदयास्तमययोरादित्यकिरणविकारजनिता दण्डाः । भग० १९६ । सिद्धशिलानाम । (दे०) । सूर्यबिम्बस्याधःकदाचिदुपलभ्यमानशकटोर्द्धिसंस्थिता श्यामादिरेखा । जीवा० २८३ ।

अमोहे–अमोहः, वैश्रमणस्य पुत्रस्थानीयो देवः । भग० २०० । ग्रैवेयकविमानप्रस्तटनामविशेषः । ठाणा० ४५३ ।

अमोहो–अमोघः । उत्त० ४०३ । अमोघः, आदित्यकिरणविकारजनित आदित्योद्गमनास्तमयने आताम्रः कृष्णश्यामो वा शकटोर्द्धिसंस्थितो दण्डः, यूपकः । आव० ७३६ । अमोहः, शाहजनीनगर्या देवरमणोद्याने यक्षः । विपा० ६५ ।

अम्मड–(अम्मडः), परिव्राजकः । भग० ६५३ ।

अम्मधाई–धात्री । उत्त० ३३१ ।

अम्मया–अम्बा, पुरुषसिंहवासुदेवमाता । आव० १६२ । अम्बा । आव० ८१६ ।

अम्माहिती – पञ्चमवासुदेवमाता । सम० १५२ । व्य० द्वि० प्र० १८० आ ।

अम्मि(ब्भि)ओ–अभ्यागतः । आव० ५६० ।

अम्मो–अम्बा । आव० २७२ ।

अम्मोगइया–अहंपूर्विका । आव० २९३ ।

अम्मोगतिया–अभिमुखः । आव० ३०० ।

अम्लः–(अंबिले), आम्रवणक्लेदनकृत् । ठाणा० २६ । अम्लम्–(अंबिलं), काञ्जिकम् । ठाणा० ४९२। रसविशेषः। प्रज्ञा० ४७३ ।

अम्लवेतस–अम्लरसपरिणताः । प्रज्ञा० १० ।

अम्हएहिं–अस्मदीयम् । आव० ८१३ ।

अम्हच्चयं–अस्मदीयम् , अस्मत्सम्बन्धि । दश० ११२ ।

अम्हच्चय–अस्माकीनः । आव० २९५ ।

अम्हे–अस्माकम् । पउ० २८-४६ ।

अयं–अयं, प्रत्यक्षगोचरीभूतः संसारी । आचा० १६३ । इष्टफलं, कर्म । जीवा० ३२ । लोहं । भग० ६९७ । इष्टफलम् । भग० ४ ।

अयंतिय–अयन्त्रितः, अनियमितः । उत्त० ४७८ ।

अयंते–(अइंते), पुनः कायिकां व्युत्सृज्य वसतिं प्रविशतः । ओघ० ८१ ।

अयंपिर–अजल्पनशीला, नोच्चैर्लग्नविलग्ना । दश० २३६ ।

अयंपुले – वरुणस्य पुत्रस्थानीयो देवः । भग० १९९ । मत्स्यबन्धविशेषः । विपा० ८१ । गोशालकश्रावकः । भग० ६८० ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अयंबुले-आजीवकोपासकविशेषः। भग० ३७०।

अय-अयः, लोहः। प्रज्ञा० २७। पृथिवीभेदः। आचा० २९।

अयआकरो-लोहाकरः, यत्र लोहं ध्मायते। ठाणा० ४१९।

अयकक्करभोई-अजकर्करभोजी, अजः-छागस्तस्य कर्करं-यच्चनकवद्भक्ष्यमाणं कर्करायते तच्चेह प्रस्तावान्मेदोदन्तुरमतिपक्वं वा मांसं तद्भोजी वा। उत्त० २७४।

अयकरए-अजकरकः, ग्रहविशेषः। ठाणा० ७८। जं० प्र० ५३४।

अयकोट्ठंसि-लोहप्रतापनार्थे कुशूले। भग० ६९७।

अयकोट्ठसंठितो-अयःकोष्ठसंस्थितः, अयःकोष्ठः, लोहमयः कोष्ठस्तद्वत्संस्थिताः। जीवा० १०५।

अयगरा-अजगराः, उरःपरिसर्पभेदविशेषाः। प्रज्ञा० ४५।

अयगरो-अजगरः, उरःपरिसर्पविशेषः। जीवा० ३९।

अयगोलो-बालो गिद्धम्मो वा। नि० चू० प्र० ६२ अ।

अयणं-अयनं, त्रय ऋतवः। जीवा० ३४४। सूर्य० ९१। अतनं-सातत्यभवनप्रवृत्तं। विशे० १३४३।

अयणाति-अयनानि-ऋतुत्रयमानानि। ठाणा० ८६।

अयणे-(अयनं), त्रय ऋतवः। भग० ८८८।

अयतं-(अजयं), अयतनया। ओघ० २१९।

अयथार्थम्-पलाशाभिधानवत्। आव० ५१।

अयमाणे-आददानः, प्रवर्त्तमानः। सूर्य० १२। आयान-आगच्छन्। सम० ९४।

अयमाणे (अयमीणे)-अददानः। जं० प्र० ४४२।

अयराइं-अतराणि, सागरोपमाणि। विशे० १२७१।

अयरामरं - अजरामरम्, अविद्यमानौ जरामरौ यस्मिन् तत्। आव० ८१।

अयलं-अचलं स्वाभाविकप्रायोगिकचलनक्रियाव्यपोहात्। जीवा० २५६। अचलः-स्वाभाविकप्रायोगिकचलनहेत्वभावात् निश्चलः। भग० ७।

अयलपुरं-अचलपुरं, नगरविशेषः। उत्त० ९९। पिंड० १४४।

अयलभाया-अचलभ्राता, नवमगणधरः। आव० २४०।

अयले-अचलः, प्रथमबलदेवः। आव० १५९, १७४। सम० ८८। अन्तकृद्दशानां प्रथमवर्गस्य षष्ठाध्ययनम्। अन्त० १।

अयलो-अचलः, उज्जयिन्यां वणिग्दारकः। उत्त० २१८।

स्वाभाविकप्रायोगिकचलनहेत्वभावात्। सम० ५।

अयवीही-अजवीथी, शुक्रमहाग्रहस्य सप्तमी वीथी। ठाणा०। ४६८।

अयशःकीर्त्तिनाम-(अजसोकित्तिणाम), यदुदयवशात् मध्यस्थस्यापि जनस्याप्रशस्यो भवति तद्। प्रज्ञा० ४७५।

अयशोभयम्-अश्लाघाभयम्। आव० ६४६।

अयसि-अतसी, धान्यविशेषः। दश० १९३। भग० ८०२, ८०३। भङ्गी, धान्यविशेषः। भग० २७४। अतसीपुष्पम्। उत्त० ४६०। कुसुंभिआ। ओघ० १४६।

अयसिकुसुमं-अतसीकुसुमम्,। प्रज्ञा० ३६०।

अयसिवणं-अतसीवनम्। आव० १८६।

अयसिवणे-(अतसीवनम्)। भग० ३६।

अयसी-औषधिविशेषः। प्रज्ञा० ३३। धान्यविशेषः। उत्त० ६५३।

अया-द्विखुरविशेषः। प्रज्ञा० ४५।

अयागरं-अयआकरः, यस्मिन् निरन्तरं महामूषास्वयोदलं प्रक्षिप्याऽय उत्पाद्यते सः। जीवा० १२३। लोहाकरः-यत्र लोहं ध्मायते। भग० १९९।

अयि-अयि!, कोमलामन्त्रेण प्रयुज्यमानः शब्दः। दश० ४९।

अयोगी-न सन्ति योगा यस्य स, न योगीति वा योऽसावयोगी, शैलेशीकरणव्यवस्थितः। ठाणा० ५०।

अयोग्य:-(अजोग्गो), अनलः, अपच्चलः। नि० चू० द्वि० २५ आ।

अयोध्या-दशरथराजधानी। प्रश्न० ८७। भरतसगरादिचक्रवर्तिनां नगरी। प्रज्ञा० ३००। कोशला। जं० प्र० १३६।

अयोमुहा-अयोमुखः, एकादशमान्तरद्वीपः। प्रज्ञा० ५०।

अव्यापारोपेक्षाः-मृतकस्वजनादिभिस्तं सत्क्रियमाणमुपेक्षमाणास्तत्रोदासीनाः। ठाणा० ३५३।

अव्याहतपौर्वापर्यम्-वाण्यतिशयविशेषः। सम० ६३।

अरंजर - अरजरम्, उदकुम्भो, अलञ्जरम्। ठाणा० २८३, २२८।

अरइ-अरतिः, मोहनीयोदयाच्चित्तोद्वेगः। भग० ८०।

अरइकम्मं - अरतिकर्म, यदुदयेन तेष्वेवारतिरुत्पद्यते तत्। ठाणा० ४६९।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अरइमोहणिज्जं-अरतिमोहनीयम्-यदुदयवशात् पुनर्बाह्याभ्यन्तरेषु वस्तुषु अप्रीतिं करोति तत्। प्रज्ञा० ४६९।

अरइयं-अरतितो जं ण पचति। नि० चू० प्र० १८९ अ।

अरई – अरतिः, इष्टाप्राप्तिविनाशोत्थो मानसो विकारः। आचा० १६८। वातादिजनितश्चित्तोद्वेगः। उत्त० ३३८।

अरए-अरजाः, ग्रहविशेषः। जं० प्र० ५३५। ठाणा० ७९।

अरक्खुरी-आरक्षुरीम्, संवेगोदाहरणे मित्रप्रभस्य प्रत्यन्तनगरम्। आव० ७१०।

अरगंतरं-अरकान्तरम्। आव० ३४४।

अरगाउत्तासिया-आरकोत्तासिता, अरकैरायुक्ता-अभिविधिनाऽन्विता अरकायुक्ता, 'सिय'त्ति स्यात्-भवेत्, अथवाऽऽरकाउत्तासिता-आस्फालिता यस्यां सा। भग० १५४।

अरघट्टघटीनिवहादिः। उत्त० ५९९।

अरजा-अरजपूः। जं० प्र० ३५७।

अरणी-काष्ठविशेषः। प्रज्ञा० २९।

अरण्णं-अरण्यम्, काननम्। दश० १४७।

अरण्णवडिंसगं-विमानविशेषः। सम० ३९।

अरण्णानी-अरण्यम्। उत्त० ३८१।

अरति – अरतिः, मोहनीयोदयजश्चित्तविकार उद्वेगलक्षणः। ठाणा० २६।

अरते – अरजा, ब्रह्मलोके विमानप्रथमप्रस्तटनाम। ठाणा० ३६७।

अरय-अरजांसि स्वाभाविकरजोरहितत्वात्। सम० १४०।

अरयं-अरतं, रतस्याभावरूपः, अरजो-रजसोऽभावरूपः। अरसं-शृङ्गारादिरसाभावम्। उत्त० ४४८।

अरविंद-अरविन्द, प्रत्येकवनस्पतिविशेषः। प्रज्ञा० ३७। जलरुहविशेषः। प्रज्ञा० ३३।

अरसं-अरसम्, हिङ्ग्वादिभिरसंस्कृतम्, प्रश्न० १०६। प्रश्न० ६३। अविद्यमानाहार्यरसम्। हिङ्ग्वादिभिरसंस्कृतमिति। प्रश्न० १६३। असंप्राप्तरसम्। दश० चू० ८३। असम्प्राप्तरसम्, हिङ्ग्वादिभिरसंस्कृतम्। दश० १८०।

अरसजीवी – अरसेन जीवितुं शीलमाजन्मापि यस्य स। ठाणा० २९६।

अरसमेहं-अरसमेघः, अमनोज्ञमेघः। भग० ३०६।

अरसाहारे – अरसाहारः, अरसं-हिङ्ग्वादिभिरसंस्कृतमाहारयतीति, अरसो वाऽऽहारो यस्यासावरसाहारः। ठाणा० २९८।

अरसाहिं-प्रहरणविशेषैः। उत्त० ४६०।

अरसिया-अर्शांसि। उत्त० १२१।

अरसेहि-अविद्यमानरसैः। भग० ४८४।

अरसो-अरसः, हिङ्ग्वादिभिरसंस्कृतः। औप० ४०।

अरहंत-अर्हन्तः, अशोकाद्यष्टमहाप्रातिहार्यादिरूपां पूजामर्हन्तीति। दश० ६२।

अरहंतघरं-अर्हद्गृहम्। आव० २९५।

अरहंता -अर्हन्, अमरवरविनिर्मिताशोकादिमहाप्रातिहार्यरूपां पूजामर्हतीति। भग० ३। अरहोऽन्तः-अविद्यमानं रहः-एकान्तदेशोऽन्तो-मध्यं गिरिगुहादीनां सर्ववेदितया येषां ते। भग० ३। अरथान्तः-अविद्यमानो रथः-स्यन्दनः सकलपरिग्रहोपलक्षणभूतः अन्तः-विनाशो जराद्युपलक्षणभूतो येषां ते। भग० ३। अरहन्तः-क्वचिदप्यासक्तिमगच्छन्तः। भग० ३। अरहयन्-प्रकृष्टरागादिहेतुभूतमनोज्ञेतरविषयसम्पर्केऽपि वीतरागत्वादिकं स्वं स्वभावमत्यजन्। भग० ३। अर्हाः-अर्हन्तः। आव० ४०६। प्रज्ञा० ५५। अशोकाद्यष्टमहाप्रातिहार्यादिपूजामर्हतीति तीर्थकरः। आव० ४८। अर्हत्ता। ठाणा० ३२२।

अरहंतुवएसो-अर्हदुपदेशः, आगमः। आव० ४५१।

अरह-अर्हन्, अष्टविधमहाप्रातिहार्यरूपपूजायोगात् ठाणा० ४६५। अर्हः-पूजार्हः। भग० ६७।

अरहट्टं-अरघटिक। (आउ०)।

अरहट्टो-अरघट्टः। ओघ० १५८।

अरहण्णए-मुनिविशेषः। (मर०)।

अरहण्णओ-अर्हन्नकः, ईर्यासमितौ यस्य देवतया पादश्छिन्नः। आव० ६१६।

अरहण्णग – तगरायामुष्णाभिहतः (मर०)। अर्हन्नकः, सद्व्यवहारकाचार्यः। व्य० प्र० २५६ आ।

अरहदत्ता – अर्हद्दत्ता, अप्रतिहतराजकुमारमहाचन्द्रभार्या। विपा० ९५।

अरहन्नओ-अर्हन्नकः। आव० ३८८। उत्त० ९०।

अरहन्नग-अरहन्नकः, मुनिविशेषः। बृ० द्वि० ४९ अ।

अरहमित्तो-अर्हमित्रः, आत्मदोषोपसंहारविषये द्वारवत्यां श्रेष्ठिविशेषः। आव० ७१४। अर्हन्मित्रः। आव० ३८८।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अरहया-अर्हत्ता, तीर्थकरता। आव० २३५।
अरहस्सं - अतीवरहस्यभूतं छेदशास्त्रार्थतत्त्वम्। बृ० तृ० २६५ आ।
अरहसिज्जा-अर्हच्छय्या, अर्हद्भवनम्। व्य० प्र० २५ आ।
अरहा-देवादिकृतां पूजामर्हन्तीति अर्हन्तः, अरहसः अथवा नास्ति रहः-प्रच्छन्नं किञ्चिदपि येषां प्रत्यक्षज्ञानित्वात्ते। ठाणा० १७४। जिनः। सम० १५३। अर्हन्-पूजामर्हतीति। अरहाः, नास्य रहस्यं विद्यत इति वा। उत्त० २५७।
अरहितं-समपादेनेक्षणं लेष्टुकारोहेण वा साधुसाध्व्योः परस्परं दृष्टिबन्धो वा। बृ० द्वि० १४ अ।
अरातिः-व्याधिः। विशे० ७७९।
अरायाणि-अराजानि, यत्र राजा मृतः। आचा० ३७८।
अरि-अरिः, सामान्यतः शत्रुः। जं० प्र० १२०।
अरिक्को-अरिक्तः। ओघ० १९९।
अरिट्ठ-अरिष्टः, पिचुमन्दः वृक्षविशेषः। प्रज्ञा० ३१।
अरिट्ठनेमि-अरिष्टनेमिः। आव० २७३, ५१५। दश० ३६, ९६। तीर्थंकरविशेषः। बृ० प्र० ३० आ। अन्त० २, ५। समुद्रविजयसुतः। उत्त० ४८९। समुद्रविजयस्य प्रथमः पुत्रः। उत्त० ४९६।
अरिट्ठयं-अरिष्टकं, फलविशेषः। पज्ञा० ३६०।
अरिट्ठा-मंडवगोत्रस्य नामविशेषः। ठाणा० ३९०।
अरिट्ठ-धर्मजिनप्रथमशिष्यः। सम० १५२।
अरिणो-अरयः, इन्द्रियविषयकषायपरीषहवेदनोपसर्गरूपाः। आव० ४०६।
अरिदमन-अरिदमणो, अभयप्रदानप्राधान्ये वसन्तपुरे राजा। सूत्र० १५०।
अरिमर्दन-संवासदृष्टान्ते वसन्तपुरे राजा। पिंड० ४८।
अरिष्टनगरम्-राममातुलहिरण्यनाभराजधानी। प्रश्न० ८८।
अरिष्टपुरम्-रुधिरराजधानी। प्रश्न० ९०।
अरिस-अर्शांसि, रोगविशेषः। विपा० ४०। नि० चू० प्र० १८९ अ। नि० चू० द्वि० ६२ आ। अर्शः, गुदाङ्कुरः। जं० प्र० १२५।
अरिहंत-अर्हन्तः, अरुहन्तः-न रुहन्तीति। दश० ७९। अशोकाद्यष्टमहाप्रातिहार्यादिरूपां पूजामर्हन्तीति अर्हन्तः-शास्तारः। आव० ११९।
अरिहंतचेइयं-अर्हच्चैत्यम्, तीर्थकरप्रतिमा। आव० ७८६।
अरिहंता-अरिहन्ता, कर्मारिविनाशकः। भग० ३। कर्मारिहन्ता। भग० ३। अरिहन्तारः, इन्द्रियविषयकषायपरीषहवेदनोपसर्गशम(नाश)काः। आव० ४०६। अरिहन्तारः, रजोहन्तारः। आव० ४०६।
अरिहमित्तो-अर्हन्मित्रः। उत्त० ९०।
अरिहा-अर्हाः। आव० ३८७।
अरिहो-अर्हः, अर्घः। प्रश्न० ७६।
अरी-अरिः, शत्रुः। जीवा० २८०।
अरुअ-अरुः, व्रणं। बृ० द्वि० ११ आ। अरुः-व्रणं। बृ० तृ० २०८ आ।
अरुगं-अरुकं, व्रणः। बृ० द्वि० २५४ अ।
अरुज्झंते-अरुह्यमाणे-एतस्मिन् पात्रके। ओघ० १४५।
अरुण-अरुणः, नन्दीश्वरसमुद्रानन्तरं द्वीपः, तदनन्तरं समुद्रोऽपि। प्रज्ञा० ३०७। सप्तमहाकुष्ठेषु प्रथमभेदः। आचा० २३५।
अरुणुत्तरवडिंसगं-ब्रह्मलोककल्पे विमानविशेषः। सम० १४
अरुणप्पभ-शीतलनाथदीक्षाशिबिका। सम० १५१।
अरुणप्पभो-अरुणप्रभः, चतुर्थोऽनुवेलन्धरनागराजः तस्यैवावासपर्वतश्च। जीवा० ३१३। ठाणा० २२६।
अरुणमहावरो-अरुणमहावरः, अरुणवरोदे समुद्रेऽपरार्द्धाधिपतिर्देवः। जीवा० ३६७।
अरुणवर-अरुणवरः, अरुणसमुद्रानन्तरं द्वीपः, तदनन्तरं समुद्रोऽपि। प्रज्ञा० ३०७। द्वीपविशेषः। ठाणा० २१७।
अरुणवरभद्दो-अरुणवरभद्रः, अरुणवरद्वीपे पूर्वार्द्धाधिपतिर्देवः। जीवा० ३६७।
अरुणवरमहाभद्दो-अरुणवरमहाभद्रः, अरुणवरद्वीपेऽपरार्द्धाधिपतिर्देवः। जीवा० ३६७।
अरुणवरावभासः-अरुणवरसमुद्रानन्तरं द्वीपः तदनन्तरं समुद्रोऽपि। प्रज्ञा० ३०७।
अरुणवरावभासभद्दो-अरुणवरावभासभद्रः, अरुणवरावभासद्वीपे पूर्वार्द्धाधिपतिर्देवः। जीवा० ३६७।
अरुणवरावभासमहाभद्दो - अरुणवरावभासमहाभद्रः, अरुणवरावभासद्वीपेऽपरार्द्धाधिपतिर्देवः। जीवा० ३६७।
अरुणवरावभासवरो - अरुणवरावभासवरः, अरुणवरावभाससमुद्रे पूर्वार्द्धाधिपतिर्देवः। जीवा० ३६७।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अरुणवरावभासो – अरुणवरावभासः, अरुणवरोदसमुद्रसत्को द्वीपः। जीवा० ३६७।

अरुणवरो–अरुणवरः, अरुणोदसमुद्रसत्को द्वीपः। जीवा० ३६७। अरुणवरोदे समुद्रे पूर्वार्द्धाधिपतिर्देवः। जीवा० ३६७।

अरुणवरोए – अरुणवरोदः, अरुणवरद्वीपसत्कः समुद्रः। जीवा० ३६७।

अरुणा–शिखरिपर्वतवासिदेवनाम। ठाणा० ८०।

अरुणाभं–ब्रह्मलोककल्पे विमानविशेषः। सम० १४।

अरुणाभे–अरुणाभः, राहुप्रलापीमते कृष्णपुद्गलविशेषः। सूर्य० २८७। सौधर्मकल्पे विमानः। भग० ५५१।

अरुणावभासो – अरुणावभासः, अरुणावभासद्वीपसत्कः समुद्रः। जीवा० ३६७।

अरुणे–ग्रहविशेषः। ठाणा० ७९।

अरुणो–अरुणः – लोकान्तिकदेवविशेषः। आव० १३५। महाकुष्ठस्य प्रथमो भेदः। प्रश्न० १६१। ग्रहविशेषः। जं० प्र० ५३५। द्वीपविशेषः, यो देवप्रभया पर्वतादिगतवज्ररत्नप्रभया चारुण इति। जीवा० ३६७। देवः। जं० प्र० ३०५।

अरुणोए–अरुणोदः, अरुणद्वीपसत्कः समुद्रः, सुभद्रसुमनोभद्रदेवाभरणद्युत्याऽरुणम्–आरक्तमुदकं यस्यासौ। जीवा० ३६७।

अरुणोदए–अरुणोदकः, अन्धकारं, तमस्कायस्य नामं। भग० २७०।

अरुणोद–समुद्रविशेषः। ठाणा० २१७।

अरुणोपपात–सूत्रविशेषः। बृ० प्र० ६२ आ।

अरुणोववाते–अरुणोपपात,ः इहारुणो नामदेवस्तत्समयनिबद्धो ग्रन्थस्तदुपपातहेतुः, अध्ययननाम। ठाणा० ५१३।

अरुयं – अरुक्, अविद्यमानरोगः। भग० ९। अरुः–व्रणः। सूत्र० ९२। अरुजं, शरीरमनसोरभावेनाधिव्याधिरहितम्। जीवा० २५३। अरुजम्–अविद्यमानरोगं शरीरमनसोरभावात्। सम० ५।

अरुयं–अरुः। आव० ८२०।

अरुह–न रुहोऽरुहः अपुनर्भावी। आचा० २३१।

अरुहंत–अरोहन्, क्षीणकर्मबीजत्वादनुपजायमानः। भग० ३। अरोहन्, अनुपजायमानः क्षीणकर्मबीजत्वात्। भग० ३।

अरुहय–अर्हता। विशे० ८६१।

अरूपिणः–अमूर्ताः। ठाणा० १९३।

अरूवी–अरूपि, अमूर्त्तम्। भग० १५०।

अरेण–आरतः। आव० २८५।

अरो–अरः, तीर्थकृच्चक्रवर्त्तिविशेषः। उत्त० ४४८। सप्तमचक्रवर्त्ती। आव० १५९। सम० १५२। सर्वोत्तमे कुले वृद्धिकरो जायतेऽतः, अष्टादशो जिनः, यस्मिन् गर्भगते माता स्वप्ने सर्वरत्नमयोऽतिसुन्दरोऽतिप्रमाणश्चारको दृष्टोऽतः। आव० ५०५।

अरोगी–अरोगी–रोगविप्रमुक्तः। दश० २०५।

अरोस–अरोषः, चिलातदेशनिवासी म्लेच्छविशेषः। प्रश्न० १४।

अर्कतूलम्–उत्त० ६७७। प्रज्ञा० १०।

अर्गलम्–अधिकम्। उत्त० ६६०।

अर्गलपाशका–अग्गलपासगाणि, यत्रार्गलाऽग्राणि निक्षिपन्ते। आचा० ३३७।

अर्गला–(अग्गल), उपकरणभेदः। आचा० ६०। परिघः। उत्त० ३११।

अर्घति–(अग्घइ), अर्हति। उत्त० ३१६।

अर्चा – (अच्चे) लेश्या, शरीरं, क्रोधाद्यध्यवसायात्मिका ज्वाला। आचा० २८४।

अर्चि–(अच्ची), अच्छिन्नमूलः। ठाणा० ३३६। अर्चिः–मूलप्रतिबद्धा ज्वलनशिखा। उत्त० ६९४।

अर्चिषा–(अच्चीए), शरीरनिर्गततेजोज्वाला। ठाणा० ४२१।

अर्जितदुःखा–अर्जितं- उपार्जितं दुःखं यैस्ते। उत्त० २६३।

अर्जुन–तृणविशेषः। प्रज्ञा० ३०। उत्त० ६९२। जीवा० २६। जं० प्र० १३।

अर्जुनसुवर्णकम्–(अज्जुणसुवन्नग), अर्जुन-शुक्लं तच्च तत्सुवर्णकम्। उत्त० ६८५।

अर्जुनसुवर्णमयी–सर्वात्मना कनकमयी। जं० प्र० ३७३।

अर्त्तिः–(अट्ट), शारीरमानसी पीडा तत्र भवा। आचा० १३९।

अर्थ–अर्यते-गम्यते, परिच्छिद्यत इति। आव० १० आज्ञा। आव० ६०४। सिद्धशब्दपर्यायः। ठाणा० २५।

अर्थम्–निमित्तम्। उत्त० ४७३।

अर्थकर–(अट्ठकर), मन्त्री, नैमित्तिकः। ठाणा० २४१।

अर्थजाता–(अट्ठजायं) अर्थः–कार्यमुत्प्रव्राजनतः स्वकीयपरिणेत्रादेर्जातं यया सा, पतिचौरादिना संयमाच्चाल्यमानेत्यर्थस्तां वा। ठाणा० ३२९।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अर्थदण्डः–(अट्ठादंडे), दण्डयतेऽऽत्माऽन्यो वा प्राणी येन स दण्डः। ठाणा० ३१६।

अर्थधर्माभ्यासानपेतम्–वाण्यतिशयविशेषः। सम० ६३।

अर्थनिर्यापणा – अर्थस्य पूर्वापरसाङ्गत्येन गमनिकेत्यर्थः। ठाणा० ४२३। अर्थः–सूत्राभिधेयं वस्तु तस्य निरिति–भृशं यापना–निर्वाहणा पूर्वापरसाङ्गत्येन स्वयं ज्ञानतोऽन्येषां च कथनतो निर्गमना। उत्त० ३९।

अर्थपदम्। भग० २०२।

अर्थपदानि–(अट्ठपदा) अर्थप्रधानानि पदानि। उत्त० ३४१।

अर्थशास्त्रं–धनुर्वेदादि। बृ० प्र० १३० आ।

अर्थाश्रया – पुनरभिनिवेशतोऽन्यथा प्ररूपणादिलक्षणया। सम० १३२।

अर्थात्–(अट्ठ), निमित्तात्। उत्त० ४९१।

अर्थाधिकारः–(अत्थाहिगारो), शास्त्रीयोपक्रमस्य पञ्चमभेदः। आचा० ३। ठाणा० ४। वक्तव्यताविशेष एव, स चैकत्वविशिष्टात्मादिपदार्थप्ररूपणलक्षण इति। ठाणा० ५। आव० ५६। अध्ययनसमुदायार्थः। आव० ५८।

अर्थान्तराभिधानम् – गामश्वमित्याद्यन्यार्थप्रतिपादनम्। आव० ५८८।

अर्थान्तरोक्ति–मृषावादविशेषः। ठाणा० २९०।

अर्दवितर्दी–विह्वला। जं० प्र० १७०।

अर्द्धचन्द्र–अद्धचंद। सम० ३०, १३९।

अर्द्धतृतीया–अर्द्ध तृतीयं येषां ते। प्रज्ञा० ४७।

अर्द्धपेटा–यस्यां तु साधुः क्षेत्रं पेटावच्चतुरस्रं विभज्य मध्यवर्त्तीनि गृहाणि मुक्त्वा चतसृष्वपि दिक्षु समश्रेण्या भिक्षामटति सा पेटा, एवमेव, नवरमर्द्धपेटासदृशसंस्थानयोर्दिग्द्वयसम्बद्धयोर्गृहश्रेण्योरत्र पर्यटति। बृ० प्र० २५७ अ।

अर्द्धभारम्–पलसहस्रात्मकम्। जं० प्र० २५३।

अर्द्धमागधभाषा–भाषाविशेषः। जं० प्र० १४।

अर्द्धसन्यासम्–उत्तरासंगरूपम्। बृ० प्र० १२५ अ।

अर्धापक्रान्ति – (अद्धापक्कंतीए), एतदेवार्धापक्रान्त्या शिशिरे कुर्वन्ति, तत्रार्धस्यासमप्रविभागरूपस्यैकदेशस्य वैकादिपदात्मकस्यापक्रमणमवस्थानम्, शेषस्य तु द्वयादिपदसङ्घातरूपस्यैकदेशस्योर्ध्वं गमनं यस्यां रचनायां सा समयपरिभाषया अर्धापक्रान्तिरुच्यते। विशे० ५५८।

अर्वाक्–अधः। आव० ८२७।

अर्हन्–सातिशयरूपसम्पत्समन्वितः। आचा० ४१२।

अलं–अलम्, अत्यर्थम्। दश० २३८।

अलंकार–अलंकारः। नि० चू० प्र० २७६ आ। अलङ्कारान्, वस्त्रादीन्। जं० प्र० १४५। आव० १८२।

अलंकारियसभा–अलङ्कारसभा। जीवा० २३६। अलङ्कारभवनविमानभाविनी सभा। प्रश्न० १३५।

अलंकारित–अलङ्कारिका, यस्यामलङ्क्रियते। ठाणा० २५२।

अलंकियं–अलङ्कृतम्, उपमादिभिरूपेतम्। सूत्रगुणविशेषः। आव० ३७६। अन्योऽन्यस्फुटशुभस्वरविशेषाणां करणात्। जं० प्र० ४०। मुकुटादिभिर्विभूषितम्। भग० ११९। काव्यालङ्कारयुक्तम्। ठाणा० ३९७। अन्यान्यस्वरविशेषाणां स्फुटशुभानां करणात्। ठाणा० ३९६। अलंकृतं। जं० प्र० ४२७।

अलंगारो–अलङ्कारः, आभरणम्। जीवा० २४५।

अलंदं। नि० चू० द्वि० ९१ आ।

अलंदकं–वंसीमूलम्। बृ० द्वि० १७९ अ।

अलंबुसा–अलम्बुषा, उत्तररुचकवास्तव्या दिक्कुमारी। आव० १२२। उत्तररुचकवास्तव्या प्रथमा दिक्कुमारी महत्तरिका। जं० प्र० ३९१।

अलकम्–ललाटम्। जीवा० २७३।

अलकापुरी–अलकापुरी, लौकिकशास्त्रे धनदपुरी। जं० प्र० १८१। वैश्रमणयक्षपुरी। अन्त० १।

अलका–सविषश्वा। (भक्त०)।

अलक्खं–अलक्षम्, गुप्तम्। आव० ४२१।

अलक्खणया – अलक्षणता–असमञ्जसा, अभिधायिता। विशे० २०५।

अलक्खे–अलक्ष्यः, वाणारस्यां राजा। अन्त० २५। अन्तकृद्दशानां षष्ठमवर्गस्य षोडशाध्ययनम्। अन्त० १८।

अलत्त–अलक्तकः। उत्त० ६५३।

अलत्तगपहो – जंमेत्तं अलत्तगेण पादो रज्जति तंमेत्तो कद्दमो जंमि पहे सो अलत्तगपहो। नि० चू० ७९आ।

अलत्तगा–रंगविशेषः। नि० चू० प्र० १८८ अ।

अलब्धमध्यमः–गम्भीरः। उत्त० ५५४।

अलमंथु–समयभाषया समर्थोऽभिधीयते। ठाणा० २१६।

अलमत्थु–अलमस्तु, पर्याप्तं भवतु। भग० ६७। निषेधो भवतु, निषेधकः। ठाणा० २१६।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अलल्ल-अलल्ला, व्यक्ता भाषा। दश० २३५।
अलवो-अलपः, मौनव्रतिको निष्ठितयोगः, गुडिकादियुक्तो वा। सूत्र० ३९३।
अलसंडविसयवासी-अलसण्डविषयवासिनः, म्लेच्छविशेषाः। जं० प्र० २२०।
अलस-अलसः, अन्येन सह प्रभूतं पर्यटितुमसमर्थः। ओघ० १५०। गण्डूलकः। प्रश्न० २४।
अलसगे-हस्तपादादिस्तम्भः श्वयथुर्वा। आवा० ३६२।
अलसा-अलसाः, प्रयत्नरहिताः। ओघ० २२२। द्वीन्द्रियजीवभेदः। उत्त० ६९५।
अलाउ-अलाबु, अलाबुतुम्बयोर्लम्बत्ववृत्तत्वकृतभेदः। जं० प्र० २४४। अलातं-उल्मुकम्। ओघ० १७।
अलाउय-अलाबुकं। आचा० ४००।
अलाते-अलातम्, उल्मुकम्। जीवा० २९, १०७। प्रज्ञा० २९। ओघ० १७। ठाणा० ३३६। दश० १६९।
अलातद्रव्यम् - वक्रतयाऽवभासमानमेकान्तवाद्यभ्युपगतं वा वस्तु। ठाणा० ४८२।
अलाबुकं। ओघ० १४५।
अलाभ-अलाभः, याचितभिक्षाद्यलाभः, पञ्चदशः परीषहः। आव० ६५७। अभिलषितविषयाप्राप्तिः। उत्त० ८३।
अलायं-अलातम्, उल्मुकम्। उत्त० ८३। दश० २२८, १५४।
अलायचक्कं-अलातचक्रं, कालभेदेन दिक्षु भ्रमत्। विशे० ९७५।
अलाहि-अलम्। आव० ११६, ७०२। भग० ४७०। ओघ० १५९।
अलिंजरम्-कूप्यम्। दश० २६०।
अलिंद-कुण्डकम्। ओघ० १६६।
अलिंदट्ठिओ-अलिन्दकस्थितः। उत्त० ३५५।
अलिंदाति। नि० चू० प्र० १६२ अ।
अलिंदेण-अलिन्देन-कुण्डकेन। ओघ० १६७।
अलिंदो-दोषविशेषः। बृ० द्वि० ६२ अ। नट इव। व्य० प्र० १६४ अ।
अलिए-अलीकम्, भूतनिह्नवरूपं, असत्यं वा। भग० २३२।
अलित्तय-अलित्रम्। आचा० ३३।
अलिय-अलीकं, मृषावादः। प्रश्न० ९५। मिथ्या, अधर्मद्वारस्य प्रथमं नाम। प्रश्न० २६। सद्भूतार्थनिह्नवरूपम्। प्रश्न० १२१। अनृतं-अभूतोद्भावनं भूतनिह्नवश्च, सूत्रदोषविशेषः। आव० ३७४। विशे० ४६४। शुभफलापेक्षया निष्फलः। प्रश्न० २७।
अलियवयणे-अलीकवचनम्। ठाणा० ३७०।
अलिया-अलिका, पक्षिविशेषः। अनुत्त० ४।
अलियाण-अलीकाज्ञः, अलीका आज्ञा-आगमो यस्य सः। प्रश्न० ४०।
अलिसिंदा-चवलगारा। नि० चू० प्र० १४४ आ।
अलुद्धो-अलुब्धः। आव० ८५९।
अलेप-म्रक्षणेन सर्पिषा-घृतेन वसया च निर्वृत्तो लेपोऽलेपो ज्ञातव्यः। बृ० प्र० ८२ आ।
अलेभडो-अस्थिरः, अनाहारः। आव० २१२।
अलोए-अलोकः-केवलाकाशरूपः। औप० ७९।
अलोला-इंदियविसयणिग्गहकारी, एसणं ण पेल्लेति। नि० चू० प्र० ३३२ आ।
अलोलुओ-अप्पडिबद्धो। दश० चू० १४०।
अलोहे-अलोभः, योगसङ्ग्रहेऽष्टमो योगः। आव० ६६४। स्वल्पलोभः। जं० प्र० १४८।
अलौकिकत्वम्-असाधारणम्। दश० १६७।
अल्पगृहभिक्षादः। आचा० ३३६।
अल्पझञ्झ-अविद्यमानवाक्कलहः। उत्त० ५८९।
अल्पपरिकर्माणि-यानि कश्चिन्मनाक् तूर्णितानि। ओघ० १३२।
अल्पलेपा-चतुर्थी पिण्डैषणा। आचा० ३५७।
अल्पार्थके- ठाणा० ३३०।
अल्लइ-वृक्षविशेषः। भग० ८०३।
अल्लइकुसुमं-अल्लकीकुसुमम्, लोके प्रतीतम्। प्रज्ञा० ३६१। जं० प्र० ३४।
अल्लगं-आर्द्रकम्, कन्दविशेषः। आव० ८२८। आर्द्रं आर्द्रकं च। आव० ८२८।
अल्लचम्मे। नि० चू० प्र० १९० अ।
अल्लपल्लो-अली, वृश्चिकपुच्छाकृतिः। विपा० ७१।
अल्लय-आर्द्रं (सं०)
अल्लिउं-अभिद्रोतुम्, आश्रयितुं वा। आव० ४३७।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अलिए-आश्रयेत्। (गणि०)
अलितो-अर्पितः। आव० ४३४।
अलियंतुं-उपसर्प्तुम्। आव० ६५।
अलियंतो-आश्रयन्। आव० ४००।
अलियइ-आश्रयति। आव० ६९५।
अलियउ-अलगीत्। आव० १११।
अलियस्सह-आश्रयत। उत्त० ३९६।
अलियह - आलीयेताम्- आश्रयताम्। उत्त० ३९४। ओघ० १५९।
अलियावं-प्रवेशम्। आव० ३४१।
अलियावणबंधे-अल्लियावणं-द्रव्यस्य द्रव्यान्तरेण श्लेषादिनाऽऽलीनस्य यत्करणं तद्रूपो यो बन्धः स। भग० ३९५।
अलियावो-प्रवेशः, आश्रयणम्। उत्त० १४५।
अलिविओ-अर्पितः। आव० ४२१।
अलिवेई-अर्पयति, ददाति। आव० ५६०।
अल्लीण-आलीनम्, सुश्लिष्टम्। जं० प्र० ५२९। आलीनः-मस्तकभित्तौ किञ्चिल्लग्नौ न तु टप्परौ। जं० प्र० ११३। मनोवाक्कायगुप्तावाश्रितौ वा, यद्वा अलीनौ-पृथगवस्थानेन परस्परमश्लिष्टौ। उत्त० ४९९। गुरुजनमाश्रितः। अनुशासनेऽपि न गुरुषु द्वेषमापद्यन्ते, अथवा आ-समन्तात्सर्वासु क्रियासु लीना-गुप्ता नोल्वणचेष्टाकारिणः। जं० प्र० ११७। जीवा० २७८। गुरुमाश्रितः। औप० ८८। इषल्लीनः। आव० १९७। आलीनः। आव० ६३। आश्रितः (आउ०)। आ-समन्तात् लीना आलीना। व्य० द्वि० ४४० आ।
अलेसेहिं-अश्लेषैः। आव० ६३।
अवं-(अवाङ्), अधस्तात्। आचा० ६३।
अवंगाओ-अपाङ्गाः, नयनप्रान्तम्। जं० प्र० ५२।
अवंगुअ-अप्रावृतम्। नि० चू० प्र० २०४ अ।
अवंगुदुवारे - अप्रावृत्तद्वारः-कपाटादिभिरस्थगितगृहद्वारः। औप० १००।
अवंगुय-अप्रावृतम्, न स्थगयति। बृ० द्वि० २५ आ, १६४ अ।
अवंगुतंमि-उद्घाटिते। बृ० द्वि० २५० आ।
अवंगुयदुवारो-अप्रावृतद्वारः, अप्रावृतं द्वारं येन सः, उद्घाटितद्वारः। सूत्र० ३२५।
अवंगो-अपाङ्गः, नयनोपान्तम्। जीवा० २०६।
अवंझ-अवन्ध्यं, एकादशपूर्वनाम। ठाणा० १९९।
अवंझपुव्वं-अवन्ध्यपूर्वं-यत्र सम्यग्ज्ञानादयोऽवंध्याः-सफला वर्ण्यन्ते तत्, एकादशपूर्वनाम। सम० २६।
अवंतिवद्धण-अवन्तीवर्धनः, अज्ञातोदाहरणे प्रद्योतात्मजपालकसुतः। आव० ६९९।
अवंतिसुकुमार-प्राणिनः आहारविमोचने दृष्टांतः। आचा० २९१।
अवंतिसुकुमालो-अवन्तिसुकुमालः, योगसङ्ग्रहेऽनिश्रितोपधानदृष्टान्ते उज्जयिन्यां सुभद्रापुत्रः। आव० ६७०। वंशकुडंगेऽनशनी (मर०)। शृगालीभक्षितः (भक्त०)।
अवंतिसेण - अवन्तीषेणः, अज्ञातोदाहरणे धारिणीपुत्रः। आव० ६९९।
अवंती - देशविशेषः। बृ० तृ० २१८ अ। उत्त० ४९।
अवंतीजणवए - अवन्तीजनपदः, देशविशेषः। आव० २८९। उत्त० ४९। नि० चू० प्र० ६४ आ।
अवंतीजणवय-देशविशेषः। व्य० प्र० १४९ आ।
अवंतीसुकुमार-नामविशेषः, उदाहरणविशेषः। बृ० द्वि० २२४ अ।
अवंतीसुकुमालो-वंशकुडंगेऽनशनी (मर०)। शृगालीभक्षितः (भक्त०)
अवंतीसुत-शृगालीभक्षितो मुनिः। (सं०)
अवंतीसोमालो। नि० चू० प्र० १३७ आ।
अव-अपृथक्त्वम्। आव० २७८। अधः। प्रज्ञा० ५२६। उत्त० ५५७। मर्यादया एतावत्क्षेत्रं पश्यन्। विशे० ५४।
अवइद्धो - अपविद्धः, तोमरादिना सम्यग्विद्धः। प्रश्न० ४९।
अवइन्नगो-अवकीर्णकः। आव० ७१८।
अवउज्झिअ-अधोऽवनम्य। आचा० ३४४।
अवउज्झत्ति-परित्यज्यते। आव० ७६५।
अवउज्झियथोवमाहारो - उज्झितस्तोकाहारः, उज्झितधर्मा स्तोकः-स्वल्प आहारो यस्य सः। आव० ५६८।
अवउडगं - अवकोटनम्, ग्रीवायाः पश्चाद्भागनयनम्। विपा० ५३। अवकोटकः, कृकाटिकाया अधोनयनम्। विपा० ४७।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अवप-अवकम्, अनन्तजीववनस्पतिभेदः। आचा० ५९। जलरुहविशेषः। प्रज्ञा० ३१, ३३। साधारणबादरवनस्पतिकायविशेषः। जीवा० २६। प्रज्ञा० ३४। साधारणवनस्पतिविशेषः। प्रज्ञा० ४०।

अवपडुए-तापिकाहस्तकान्। भग० ५४८।

अवओडयबंधणयं – अवमोटनतोऽवकोटनतो वा पृष्ठदेशे बाहुशिरसा संयमनेन बन्धनं यस्य सः। अन्त० १९।

अवकंखइ – अवकाङ्क्षति, अपेक्षते, अनुकम्पते। भग० १०२।

अवकरिसो-अपकर्षः-अभावः। प्रश्न० ६२।

अवकारं-अपकरणम्, अङ्गारोपरिक्षेपः। प्रश्न० ४०।

अवकिण्णतो-अवकीर्णकः, करकण्डोः प्रथमं नाम। उत्त० ३०१।

अवकिरति-उत्सृजति। आव० ७७१।

अवकिरियव्वं-अवकरणीयम्, विक्षेपणीयम्, त्याज्यम्। प्रश्न० ९६।

अवकुंडिय-अवगाढ-व्याप्त। (मर०)

अवकुज्जियं-उट्टाए तिरियहुत्तकरणं। नि० चू० तृ० ५९ अ।

अवकोडकबंधणं-अवकोटकबन्धनम्, बाहुशिरसां पृष्ठदेशबन्धनम्। प्रश्न० १४।

अवकोडयं-अवकोटकम्, कोटायाः-ग्रीवाया अधोनयनम्। प्रश्न० ५६।

अवक्कंत-अपक्रान्तः, सर्वेशुभभावेभ्योऽपगतः-भ्रष्टः, अपक्रान्तः-अकमनीयः। ठाणा० ३६६। आव० ५०४। अवक्रान्तः-अवस्थितः। उत्त० १५६।

अवक्कमइ-अपक्रामति, च्यवते। जीवा० ११०। गच्छति। जीवा० २४३, ३०६, ३२२, ४००। अपक्रामति। आव० १९६। अपक्राम्यति। उत्त० १५७।

अवक्कमिज्जा-अपक्रामेद्-गच्छेत्। आचा० ३८५।

अवक्कमित्ता-अवक्रम्य, गत्वा। दश० १७८।

अवक्कमेज्ज – अपक्रामेत्, अपसर्पेत्, उत्तमगुणस्थानकाद् हीनतरं गच्छेदित्यर्थः। भग० ६४।

अवक्कासे-अपकर्षणं, अवकर्षणं, अप्रकाशो वा। भग० ५७२। अपकर्षः। सम० ७१।

अवक्कियं-असक्क। दश० चू० ११३।

अवक्कम्य-विनिर्गत्य। व्य० प्र० १४६ आ।

अवक्खारणं-अपक्षारणम्, अपशब्दं क्षारायमाणं वचनं, अपक्षकरणम्-सानिध्याकरणम्। प्रश्न० ४१।

अवक्खित्तो-आक्षिप्तः। उत्त० ११७।

अवगति-बुद्धिः। उत्त० ३९२।

अवगम-संज्ञा। आचा० १२।

अवगाढ-अवस्थिताः। ठाणा० ५१४।

अवगाढगाढ – गाढावगाढम्, अतिगाढम्, प्राकृतत्वादेवं रूपम्। भग० ३७।

अवगाढा-आश्रिताः। ठाणा० ५२७।

अवगाढाअवगाढं – अवगाढावगाढम्-अत्यन्तव्याप्तिदर्शनम्। भग० १५३।

अवगायति-परिभवति। आचा० १०६।

अवगासो-अवकाशः, यद्यस्योत्पत्तिस्थानम्। सूत्र० ३५०। अवस्थानम्। विशे० ७७१। गमनादिचेष्टास्थानम्। आव० ८३५। अवस्थानमवतारो। ठाणा० २३७। बहूनां विवक्षितद्रव्याणामवस्थानयोग्यं क्षेत्रम्। भग० ६०५।

अवगाहणा-आश्रयभावः। भग० ६०९। अवस्थानरूपा। विशे० ८६२।

अवगीत-वाङ्मात्रेणापि केनचिदप्यननुवर्त्यमानः। आचा० १०६।

अवगीतम्-निन्दितम्। भग० ११।

अवगुणंति-अपावृण्वन्ति। भग० ६८३।

अवगूहितो-अवगूहितः। आव० ३४४।

अवगुण्ठ्यते-लिप्यते। आचा० १४७।

अवग्गहो-अवग्रहः, अव इति-प्रथमतो, ग्रहणं-परिच्छेदनम्। ठाणा० २८३। अवष्टम्भः। ओघ० २११। सामान्यार्थस्याशेषविशेषनिरपेक्षानिर्देश्यस्य रूपादेरवग्रहणम्। आव० ९।

अवग्रह-ओगाह, अव्यक्तं यथास्वमिन्द्रियैर्विषयाणामालोचनावधारणं। तत्त्वा० १-१५।

अवग्रहावधि-कारणे आपन्ने संयमार्थं यो गृह्यते। ओघ० २०८।

अवघाटनप्रायश्चित्तं-शेषप्रायश्चित्तानि शोधयति। व्य० प्र० ९३ आ।

अवघाडो। नि० चू० प्र० १२६ अ।

अवच-जघन्यः। सूत्र० १९२।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अवचए-अपचयः, ह्रासः, शरीरेभ्यः पुद्गलानां विचटनम्। प्रज्ञा० ४३२। देशतोऽपगमः। भग० ५४०।

अवचयो-अपचयः-हीनत्वम्। सूर्य० १६।

अवचनम्-त्रिविधवचनप्रतिषेधः। ठाणा० १४१।

अवचुलकम्। बृ० प्र० २९८ आ।

अवचूल-अवचूलम्। भग० ३१८।

अवच्चलेणसारक्खणा - अपत्यलयनसंरक्षणा। आव० ४०५।

अवच्चे-अपत्ये। आव० १९९।

अवच्छेए-अवच्छेदः, देशः। ठाणा० २०५।

अवजाते-अपजातः-अप-हीनः, जातोऽपजातः, पितुः सकाशादीषद्धीनगुणः। ठाणा० १८४।

अवज्जं-अवद्यम्, पापं। विशे० १३१७। आव० ३६४।

अवज्जपडिच्छन्नो - अवद्यप्रतिच्छन्नः, पापप्रच्छादितः। आव० ५३७।

अवज्जभीरू-अवद्यभीरुः, साधुः। ओघ० २२४।

अवज्जुत्तं-पृथग्भूतम्। आव० ७५८।

अवज्झा-अवध्या, गन्धिलविजयराजधानी। जं० प्र० ३५७।

अवज्झाओ। ठाणा० ८०।

अवज्झाणायरिए - अपध्यानाचरितः, अप्रशस्तध्यानाचरितः। आव० ८३०।

अवट्ठिए-अवस्थितः, नित्यः। भग० ७६०। एवमुभयरूपतया। ठाणा० ३३३। निश्चलत्वात्। ठाणा० ३३३। अवस्थितानि-शाश्वतानि। ठाणा० १४६। अवधेः पञ्चमभेदः। प्रज्ञा० ५४३। आव० २८।

अवट्ठिय-अवस्थितः, स्थितम्। भग० ११९। अवर्द्धिष्णु। जीवा० २७२। अवस्थिता-स्वप्रमाणावस्थिता। जीवा० ९९। स्वप्रमाणेऽवस्थिता मानुषोत्तरपर्वताद्बहिः समुद्रवत्। जं० प्र० २७।

अवट्ठिया कप्पा-अवस्थिताः कल्पाः-सामायिकसाधूनामवश्यंभविनः। ठाणा० ३७४।

अवडिंसगभूयं - अवतंसकभूतम्, शेखरकल्पम्, प्रधानमित्यर्थः। प्रश्न० १३७।

अवडेंसग-अवतंसकः, शेखरकः। भग० ३२२।

अवडुं-कृकाटिकाम्। भग० ६७९।

अवड्ढं-अपार्द्धम्, अर्धमात्रम्। सूर्य० ३०, १०४। अर्द्धध्रुवमात्रम्। ओघ० ८६।

अवड्ढक्खेत्ता-अपार्द्धक्षेत्रम्, अपार्द्ध-समक्षेत्रापेक्षया अर्द्धमेव क्षेत्रम्। ठाणा० ३६७।

अवड्ढखेत्तं-अपार्द्धक्षेत्रम्, अर्धमात्रक्षेत्रम्। सूर्य० १०४। पञ्चदशमुहूर्त्तभोग्यं नक्षत्रं अभिचिर्वा, पञ्चदशमुहूर्त्तभोग्यानि भरणी आर्द्रा अश्लेषा स्वातिर्ज्येष्ठा च। बृ० तृ० १४८ आ।

अवड्ढगोलावलिच्छाया-अपार्द्धगोलावलिच्छाया, गोलानामावलिर्गोलावलिस्तस्या छाया गोलावलिच्छाया अपार्द्धायाः-अपार्द्धमात्राया गोलावलेश्छाया। सूर्य० ९५।

अवड्ढचंदो-अपार्धचंद्रः-अर्धचंद्रः। बृ० प्र० १०९ अ।

अवड्ढवाविसंठित-अपार्द्धवापीसंस्थितः। सूर्य० १३०।

अवड्ढा-अपार्द्धा। ठाणा० १४९।

अवड्ढो-अर्द्धं। नि० चू० प्र० १४२ आ।

अवड्ढोमोअरिआ-उपार्द्धावमोदरिका, द्वात्रिंशतोऽर्द्धं षोडश, एवं च द्वादशानामर्द्धसमीपवर्त्तित्वादुपार्द्धावमोदरिका द्वादशभिरिति। औप० ३८। भग० २९२।

अवणए-अपनयः-पूजासत्कारादेरपनयनम्। ठाणा० ४१८।

अवणयं-एकान्ते स्थापनम्। बृ० द्वि० २६३ अ।

अवणिज्जंतु-अपनीयन्ताम्। आव० ४३६।

अवणितमूलो-अपनीतमूलः, अपनीतमूलत्रिभागः, त्रिभागनिर्वाटितवाटः, ऊर्ध्वभागादपि त्रिभागहीन इति। जीवा० ३५५।

अवणीओवणीयवयणं - अपनीतोपनीतवचनम्, यन्निन्दित्वा प्रशंसति। प्रज्ञा० २६७।

अवणीयं-अपनीतम्, स्थानान्तरस्थापितं निराकृतगुणं वा। औप० ३९।

अवणीयवयणं-अपनीतवचनम्, निन्दावचनम्। प्रज्ञा० २६७। गुणापनयनरूपम्। प्रश्न० ११८। निंदावचनम्। आचा० ३८७।

अवणीयोवणीयवयणं - अपनीतोपनीतवचनम्, यत्रैकं गुणमपनीय गुणान्तरमुपनीयते। प्रश्न० ११८। अरूपवती स्त्री किन्तु सद्वृत्ता। आचा० ३८७।

अवणेति-महामर्गं प्रकाशयति। नि० चू० प्र० ११६ आ।

अवणेज्जा-अपनयेत्, परित्यजेत्। दश० १५६।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अवण्ण-अवर्णः, अवज्ञा वा, अनादरः, वर्णनाया अकरणम्। औप० १०५। अश्लाघात्मकः। उत्त० ७१०। निन्दा। आव० १०३।

अवण्हाणं-अपस्नानम्, तथाविधद्रव्यसंस्कृतजलेन स्नानम्। विपा० ४१।

अवतंसो-पुरुषव्याधिनामको रोगः। बृ० तृ० २४९ अ।

अवतासण-बाहाहिं अवतासिता। नि० चू० प्र० ११३ अ।

अवत्त - अप्राप्तम्-अस्पृष्टम्। भग० १२७। अव्यक्तः, अष्टानां वर्षाणामधो बालः। ओघ० १६२।

अवत्तदंसणे - अव्यक्तदर्शनः-अव्यक्तं-अस्पष्टं दर्शनं-अनुभवः। भग० ७०९।

अवत्तमय-अव्यक्तमताः, संयतासंयतायवगमे संदिग्धबुद्धयः। विशे० ९३३।

अवत्तव्वं-अवक्तव्यम्। प्रज्ञा० २३४। यच्चरमशब्देनाचरमशब्देन वा स्वस्वनिमित्तशून्यतया वक्तुमशक्यं तत्। प्रज्ञा० २३५। अनन्तगुणं। दश० २२१।

अवत्तव्वगसंचिता-अव्यक्तव्यकसंचिता-समये समये एकतयोत्पन्नाः। ठाणा० १०५।

अवत्ता - छगणमट्टियाए पाणिएण य। नि० चू० प्र० २३२ अ।

अवत्तिता-अव्यक्तिकाः, अव्यक्तं-अस्फुटं वस्तु अभ्युपगमतो विद्यते येषां ते। ठाणा० ४१०।

अवत्तो-सोलसवरिसारेण वयसा। नि० चू० प्र० २९० आ।

अवत्थयं-अपार्थकम्, पौर्वापर्यायोगादप्रतिसम्बद्धार्थं, चतुर्थसूत्रदोषः। आव० ३७४। असंबद्धार्थम्। विशे० ४६४। अनु० २६१।

अवदारं-अपद्वारम्। आव० ३०६।

अवदारियं-अवदारितम्, उद्घाटम्। आव० ६८७।

अवदाल-पादादिन्यासेऽधोगमनम्। भग० ५४०।

अवदालिओ-अवदारितः। आव० १७५।

अवदालियं-अवदालितम्, रविकरैर्विकाशितम्। औप० १७। रविकिरणैर्विकासितम्। जीवा० २७३। सञ्जातावदलनं-विकसितम्। प्रश्न० ८२।

अवदाली-अवदारयति-शकटं स्वस्वामिनं विनाशयतीत्येवंशीलः। उत्त० ५४८।

अवदालेइ-अवदालयति, उत्पाटयति। प्रज्ञा० ६००।

अवद्दू-कृकाटिका। विपा० ७२।

अवद्दहणा-दम्भनम्। विपा० ४१।

अवद्दारं-अपद्वारम्। आव० ३०६।

अवड्ढगाढलगोलछाया-अपार्द्धगाढलगोलच्छाया। सूर्य० ९५।

अवड्ढगोलच्छाया-अपार्द्धगोलच्छाया। सूर्य० ९५।

अवड्ढगोलपुंजछाया-अपार्द्धगोलपुञ्जच्छाया। सूर्य० ९५।

अवड्ढचंद-अपकृष्टमर्द्धं चन्द्रस्यापार्द्धचन्द्रः। ठाणा० ७१।

अवड्ढजवरासिसंठाणसंठिए - अपार्द्धयवराशिसंस्थानसंस्थितः, अपगतमर्द्धं यस्य सः, स चासौ यवश्च राशिश्च अपार्द्धयवराशी तयोरिव यत्संस्थानं यस्य तेन संस्थितः। जीवा० ३४३।

अवड्ढपोरिसी - उपार्द्धपौरुषी, अपगतमर्द्धं यस्याः सा अपार्द्धा सा चासौ पौरुषी। सूर्य० ९५।

अवद्धं-मिथ्यात्वकषायनोकषायलक्षणम्। आव०।

अवद्राय-मृत्वा। जीवा० २६२।

अवधारियं-तात्पर्यग्रहणतो हृदये विश्रामितं। व्य० प्र० २५७ अ।

अवधिकेवली - केवलिद्वितीयभेदः। नि० चू० द्वि० १३९ आ।

अवधिजिनः-विशिष्टावधिधरः। आव० ५०१।

अवधिज्ञानम्-ज्ञानस्य तृतीयभेदः। ठाणा० ३३२।

अवधिज्ञानजिनाः-विशुद्धावधिज्ञानाः। व्य० प्र० ८५ अ।

अवधीरयेत्-उपेक्षेत। उत्त० ११२।

अवधीरितः-परिभूतः। आचा० १०६।

अवधूतम्-अवज्ञातम्। ओघ० १५।

अवन्नं-अवर्णम्, निन्दा। आव० ६६२। अश्लाघामवज्ञां। ठाणा० ३६०।

अवन्ना-अवज्ञा, परिभवः। ओघ० १८६।

अवपंगुरे-अपवृणुयात्, उद्घाटयेत्। दश० १६७।

अवपात - पर्वतविशेषाः, येषु वैमानिका देवा अवपतन्ति अवपत्य च मनुष्यक्षेत्रादावागच्छन्ति। प्रश्न० ९६।

अवपीलइ-अवपीडयति, जलेन प्लावयति। जीवा० ३२६।

अवबोह-अवबोधः, मतिः। आचा० १२।

अवभासियं-अपभासितं, दुष्टभाषणं, विरूपं भाषते। व्य० प्र० २० अ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अवमंथित-अवाङ्मुखीकृतः। बृ० प्र० ८० आ।
अवमः-लघुः पर्यायेण। ठाणा० २४२।
अवमण्णइ-अवमन्यते, अवज्ञाऽऽस्पदं मन्यते। भग० १६६।
अवमण्णह - उचितप्रतिपत्त्यकरणेन। भग० २१९।
अवमद्-अवमद्। जं० प्र० १०१।
अवमद्दं-अपमर्दम्, उपमर्दनम्। प्रश्न० ३७।
अवमप्रतिजागरणम्-गुणविशेषः। आव० ५२४।
अवमा-हीना। आचा० ३३२।
अवमाणणं-अपमाननम्, विनयभ्रंशः। प्रश्न० ९७। अनभ्युत्थानादिकरणम्। भग० २२७। मानहरणम्। प्रश्न० ४१। अपमानम्, अपूजनम्। औप० ४६।
अवमाणो-अपमानः, दैन्यम्। प्रश्न० १३८।
अवमानं-हस्तादि। ठाणा० १९८।
अवमारियं-अपस्मारः-अपगतः स्मारः स्मरणं यस्मात् सः अपस्मारः, तस्मिन् सति तद् रोगिणः सर्वविषया स्मृतिः नश्यति। आचा० २३३।
अवमोदरः-अवमं-ऊनमुदरं-जठरं यस्य सः। ठाणा० १४८।
अवम्मो-अवाम्यः। आव० १०१।
अवयक्काओ-अवपाक्यास्तापिकाः। भग० ५४८।
अवयक्खंत-अपेक्षमाणः (भक्त०)। पृष्ठतोऽभिमुखं निरूपनयन्। ओघ० १२७।
अवयक्खमाणस्स-अवकाङ्क्षतोऽपेक्षमाणस्य वा। भग० ४९६।
अवयग्गं - अन्तः, अन्तवाचको देशीवचनोऽयं शब्दः। भग० ३५। अवदग्रम्-पर्यन्तम्। ठाणा० ४४।
अवयणं-अवचनम्। आव० ३४३।
अवयव-अवयवाः, प्रतिज्ञादयः। दश० ७५। अवयवः-प्रमाणाङ्गलक्षणः। दश० ७७। अवयवाः तथाविधविचित्रपरिणामापेक्षया। ठाणा० ११।
अवयविद्रव्यता-तथाविधैकपरिणामिता। ठाणा० ११।
अवयवी - अवयवानां तथारूपः सङ्घातपरिणामविशेषः। जीवा० ६।
अवयाणं-तैलविशेषः। बृ० द्वि० २२१ आ।
अवयानी-अनुश्रोतोगामिनी। व्य० प्र० २५ आ।
अवयारो-अवतारः, प्रस्तावः। व्य० द्वि० २५ आ।
अवयासं-आलिङ्गनम्। ओघ० १६४।
अवयासणं-वृक्षादीनामालिङ्गापनम्। बृ० प्र० २१५ अ।
अवयासिं-आलिङ्गनम्। बृ० तृ० २६ आ।
अवयासिज्जमाणे - अपत्रास्यमानः, अप्रयास्यमानो वा। औप० १०२।
अवयासित्ता-अवकाश्य। आव० ३५७।
अवयासेउं-निवारयितुं, निरोद्धुम्। आव० ४३८।
अवरं-अपरं, पश्चात्कालभावी। आचा० १६७।
अवरज्झियाउ - अपराद्धवान्। आव ८३५।
अवरकंका-अपरकङ्का, ज्ञातायां षोडशाध्ययनम् आव० ६५३। षष्ठाङ्गे षोडशं ज्ञातम्। उत्त० ६१४। सम० ३६।
अवरगज्जभो-अपरगर्जभः। आव० ३८७।
अवरज्झइ-अपराध्यति, अपराधमाप्नोति। दश० १९६।
अवरण्हसंखडी दिया गहियं रायो भुत्तं, राईभोयणस्स बितियभङ्गो। नि० चू० द्वि० १५ अ।
अवरओ-अवरतः, जघन्यतः। विशे० ५३०।
अवरत्त - अपरात्रः, अपकृष्टा रात्रिः, पश्चिमस्तद्भागः। भग० १२७। रत्तीए पच्छिमजामो। दश० चू० १६४।
अवरदक्खिणा-अपरदक्षिणा। आव० ६३०।
अवरदारिता - अपरद्वारिकानि, अपरस्यां दिशि गम्यन्ते येषु। ठाणा० ४१४।
अवरद्धं-अपराद्धम्, दष्टम्। उत्त० १४३।
अवरद्धिगा-लूता फोडिआ, तस्यां लूतास्फोटिकायामुत्थितायां दाहोपशमार्थमचेतनेन पृथिवीकायेन परिषेकः क्रियते। ओघ० १३०। सर्पदंशस्तस्मिन् परिषेकादि क्रियते। ओघ० १३०।
अवरभू-अवरभूः, अधोभूः। सूर्य० ४६।
अवररायं-अपररात्रं-रात्रेः पाश्चात्यः यामः। आचा० २१०।
अवरविदेहकूडे-अपरविदेहकूटम्, निषधे अष्टमकूटः। जं० प्र० ३०८। अपरविदेहाधिपकूटम्। जं० प्र० ३५७।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अवरविदेहे-अपरविदेहः, मेरोर्जम्बूद्वीपगतः पश्चिमविदेहः। जं० प्र० ३१०। महाविदेहापरभागः। ठाणा० ६८। निषधे कूटविशेषः। ठाणा० ७२। नीले कूटविशेषः। ठाणा० ७२।

अवरवीयावो-अपरबीजापः। आव० ३८७।

अवरा-अपरा। आव० ६३०।

अवराइअ-अपराजितः, पद्मबलदेवपूर्वभवनाम। आव० १६३।

अवराइआ-अपराजिता, शङ्खविजये नगरी। जं० प्र० ३५७।

अवराओ। ठाणा० ८०।

अवराजिआ-अपराजिता, पूर्वदिग्रुचकवास्तव्या दिक्कुमारी। आव० १२२।

अवराजिया-अपराजिता, उत्तरदिग्भाव्यञ्जनपर्वतस्योत्तरस्यां पुष्करिणी। जीवा० ३६४।

अवराह-अपराधः, गुरुविनयलङ्घनरूपः। आव० ५४१।

अवराहखामणा-अपराधक्षामणा, वन्दनके षष्ठं स्थानम्। आव० ५४८।

अवरुंडिओ-आलिङ्गितः। आव० २७४।

अवरुज्ञय। आव० ६३८।

अवरुत्तरा-अपरोत्तरा। आव० ६३०।

अवरुद्धो-अवरुद्धः, अन्तर्भूतः। विशे० ११६७।

अवरेय-अवरेकः, रिक्तता। उत्त० ३०५।

अवरेण-अपरेण-जन्मादिना सार्द्धम्। आचा० १६७।

अवरो-अववादो। नि० चू० तृ० १४६ अ।

अवरोप्परमसंबद्ध-परस्परमसम्बद्धः। आव० ६३५।

अवण्णे-अवर्णः, अश्लाघा। असद्दोषोद्भट्टनम्। ठाणा० २७५। अयशः, सर्वदिग्गामिन्यप्रसिद्धिः। ठाणा० ४१८।

अवन्न-अवर्णः अप्रसिद्धमात्रम्। भग० ४८९। अश्लाघा। ओघ० १२१। अयशः। ओघ० १२५।

अवलंबण-अवलंबिज्जतित्ति अवलंबणं, सो पुण वेतिता मत्तावलंबो वा। नि० चू० प्र० ११९ अ। बाह्वादिमात्रैकदेशग्रहणम्। बृ० तृ० २३० अ। अवतरतामुत्तरतामवलम्बनहेतुभूताः। जं० प्र० ४३। अवलम्बनः, अवतरतामुत्तरतां चालम्बने हेतुभूतः। जीवा० १९८। अवलम्बनं देशे ग्रहणम्। ठाणा० ३२७।

अवलंबणबाहा-अवलम्बनबाहा, उभयोरुभयोः पार्श्वयोरवलम्बनाश्रयभूता भित्तिः। जीवा० १९८।

अवलंबनीयम्-लम्बयितव्यं रज्ज्वादिनिबद्धं हस्तादिना धरणीयम्। भग० ४७।

अवलंबमाणे-अवलम्बयन् हस्तवस्त्राञ्चलादौ गृहीत्वा। ठाणा० ३५३।

अवलंबमाने-अवलम्बमानः, पतन्तीं बाह्वादौ गृहीत्वा धारयन्। ठाणा० ३२७।

अवलगका-सेवकाः। भग० ४६४।

अवलगनं-सेवा। आचा० १३२।

अवलद्ध-अपलब्धः न्यक्कारपूर्वकतया। ठाणा० ४६६। ईषल्लब्धः, अलब्धो वा। प्रश्न० १३८।

अवलद्धि-अपलब्धिः, अलाभोऽपरिपूर्णलाभो वा। भग० १०१।

अवलम्बए-अवलम्बेत-अवष्टम्भादिकां क्रियां कुर्यात्। आचा० २९३।

अवलिंबाति। ठाणा० ८६।

अवलितं-वस्त्रं शरीरं वा न वलितं कृतं तत्। ठाणा० ३६१। यथाऽऽत्मनो वस्त्रस्य च वलितमिति मोटनं न भवति। उत्त० ५४१।

अवलियं-अवलितम्। ओघ० १०९।

अवलुएण। आचा० ३७८।

अवलेहणिया-वासासु कद्दमफेडणी। नि० चू० प्र० १२४ अ।

अवलेखकं-मायायाः लक्षणम्। आचा० १७०।

अवलोकनम्-गवाक्षः। बृ० प्र० २०७ अ।

अवलोवो-अपलोपः, वस्तुसद्भावप्रच्छादनम्। अधर्मद्वारस्य त्रिंशत्तमं नाम। प्रश्न० २७।

अवलगन। आचा० १०६।

अवल्लु-गोणी। आव० ६६५।

अवल्लुखेवा-सविलबाः क्षेपाः। नि० चू० द्वि० ७८ अ।

अवल्लगं। ओघ० ३३। निर्यामकाः (मर०)।

अववं-अववम्, चतुरशीतिरववाङ्गशतसहस्राणि। जीवा० ३४५।

अववंगं-अववाङ्गम्, चतुरशीतिरडडशतसहस्राणि। जीवा० ३४५। भग० ८८८।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अववंगाति। ठाणा० ८६।

अववरय-अपवरकः, गृहान्तर्भागः। दश० ४२।

अववाइयं-आपवादिकं यद्द्रव्यक्षेत्राद्यपेक्षम्। उप० मा० गा० ४००।

अववाओ - अपवादः, द्वितीयपदम्। नि० चू० द्वि० ९२ अ।

अववाडणं-अवपाटनम्, विदारणम्। भग० १२०।

अववाति। ठाणा० ८६।

अववाय-अपवादः, परदूषणाभिधानम्। प्रश्न० ११६।

अववायसुत्तं-तिण्हमन्नयरागस्स इत्यादि। बृ० प्र० २०१ आ। नि० चू० तृ० ११ अ।

अववायाववाओ-अववाए पुण अन्नो अववाओ। नि० चू० द्वि० ६५ आ।

अववायाववातियं। नि० चू० प्र० २२५ आ।

अवविहे-आजीविकोपासकविशेषः। भग० ३६९।

अववे-कालविशेषः। भग० २१०, २७५, ८८८। सूर्य० ९१।

अवश्रावणम्-आयामम्। ओघ० १३३।

अवष्टम्भम्-उपग्रहः। ओघ० १५४। उत्त० ५५।

अवष्टब्धाः-आक्रान्ताः। आचा० २५८।

अवसण्णा-अवसन्नाः। आव० ६७५। खग्गूडप्रायाः। ओघ० १५६।

अवसद्दो-अपशब्दः। आव० ४०१।

अवसरो-अवसरः, उपयोगकालः। सूत्र० ११। विभागः, पर्यायः, देशः, प्रस्तावः। विशे० ८३७।

अवसर्पणं। आचा० ३६४।

अवसाणं - अवसानम्। आव० ३८४। अन्तः। प्रज्ञा० ३९७।

अवसायः-निश्चयः। प्रश्न० १०४।

अवसावणं-अवश्रावणम्, काञ्जिकम्। बृ० द्वि० १२९ आ।

अवसिओ-अवसितः, जितः। विशे० ९९४।

अवसिद्धंतो-अपसिद्धान्तः। आव० ३२०।

अवसोहिय - अवशोध्य, अपसार्य, पृथक्कृत्य, परिहृत्य। उत्त० ३४०।

अवसेसं-अवशेषम्, उद्धरितम्। उत्त० ५९६। भिक्षाप्रक्रमात्पात्रनिर्योगोद्धरितम्, यद्वाऽपगतं शेषमपशेषम्। उत्त० ५४४।

अवस्कन्दः-शिबिरः। आचा० १४०।

अवस्थानम्-संस्थितिः। सूर्य० ७।

अवस्सं-अवश्यम्, नियोगतः। आव० २६५।

अवस्सकरणिज्जं - अवश्यकरणीयम्, आवश्यकपर्याये द्वितीयनाम। विशे० ४१५।

अवह-अव्याप्रियमाणः। बृ० द्वि० २७ आ।

अवहट्टण-त्यागः। (मर०)

अवहट्टु - अपहृत्य, त्यक्त्वा। भग० १००। परिहृत्य। औप० २४। परित्यज्य। ओघ० ११४। आहृत्य-निष्कृष्य, त्यक्त्वा। आचा० ४००।

अवहट्टुअसंजमे-अपहृत्यासंयमः-अविधिनोच्चारादीनां परिष्ठापनतो यः सः। सम० ३३।

अवहट्टुसंजमो - अपहृत्यसंयमः-प्राणिभिः संसक्तं भक्तपानमथवाऽविशुद्धमुपकरणं पात्रादि यद्वाऽतिरिक्तं भवेत् तत्परिष्ठापनं विधिना। आव० ६५३।

अवहडे-अपहृतम्। भग० २७७।

अवहन्न-उदूखलम्। बृ० द्वि० ६० अ।

अवहारइ-अवधार्यते, प्रथमतया स्थाप्यते। सूर्य० ११३

अवहारवं-अवधारणावान्। ठाणा० ४८४।

अवहाराइ-अपहृतवन्तः-गृहीतवन्तः। आचा० ३३७।

अवहारो - अपहारः, अधर्मद्वारस्य दशमं नाम। प्रश्न० ४३। जलचरविशेषः। प्रश्न० ६२। अवधार्यः-ध्रुवराशिः। सूर्य० ११३। जं० प्र० ५०७।

अवहितचित्तः-एकाग्रमनाः। उत्त० ५९९।

अवहीयं - अपधीकम्, अपसदा-निन्द्या धीर्यस्मिंस्तत्। अधर्मद्वारस्याष्टाविंशतितमं नाम। प्रश्न० २६।

अवहीयए-अवधीयते, अवशब्दस्याव्ययत्वेनानेकार्थत्वादधोऽधोविस्तृतं धीयते-परिच्छिद्यते रूपिवस्तु तेन ज्ञानेनेत्यवधिः, अथवा अव-मर्यादया एतावत्क्षेत्रं पश्यन्, एतावन्ति द्रव्याणि, एतावन्तं कालं पश्यतीत्यादिपरस्परनियमितक्षेत्रादिलक्षणया धीयते-परिच्छिद्यते। विशे० ५४।

अवहेडयं-अर्द्धशिरोरोगम्। उत्त० १४३।

अवहेडियं-अवहेठितम्, अवेलधो, हेठितं-बाधितं अधोनामितमिति। उत्त० ३६७।

अवाअ-अपायः, उदाहरणस्य प्रथमो भेदः। दश० ३५।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अवाईण-अवाचीनम्, अधोमुखम्। औप० ७। अवातीनानि, न वातोपहतानि, न वातेन पातितानि। जं० प्र० २९।

अवाईणपत्ता-अवाचीनपत्राः, अधोमुखपर्णाः, अधोमुखपलाशा वा। औप० ७। अवातीनपत्राः-अवातोपहतबर्हाः। औप० ९।

अवाउड - अप्रावृतम्, प्रावरणरहितम्। दश० ११९। अप्रावृता। ओघ० १६७। प्रावरणाभावः। भग० १२५।

अवाउडय - अप्रावृतकः, प्रावरणवर्जकः। औप० ४०। न विद्यते प्रावरणकम्। ठाणा० २९९।

अवाउडिय-अप्रावृतिक, सकलां रात्रिं यावद् अप्रावरणाभिग्रहवान्। बृ० द्वि० २९२ अ।

अवाए-अवायः, अवधारणात्मको निर्णयः। प्रज्ञा० ३१०। अपायः-अवग्रहज्ञानेन ईहितस्यार्थस्य निर्णयरूपो योऽध्यवसायः। प्रज्ञा० ३१०।

अवाओ - अवायः-प्रक्रान्तार्थविनिश्चयः। भग० ३४४। ईहार्थविशेषनिश्चयः। आव० ९।

अवाघाय - अव्याघातः, प्रव्रज्यासूत्रार्थग्रहणादिकयाऽऽनुपूर्व्या विपक्त्रिमम्मायुष्कक्षयमनुभवतो यो भवति सोऽव्याघातः। आचा० २६२।

अवाच्यप्रदेशः-गुह्यम्। प्रज्ञा० ४३०।

अवातदंसी-अपायदर्शी। ठाणा० ४८४।

अवातीणपत्तो-अवातीनपत्रः, न वातोपहतं पत्रं, वातेनापातितं पत्रम्। जीवा० १८७।

अवाते-अपायः-अनर्थः। ठाणा० २५३।

अवादाणे-अपादानः-विश्लेषतो मर्यादया दीयते, खण्ड्यते, गृह्यते, अवधिमात्रम्। ठाणा० ४२८।

अवाय-अपायः, विवेकः। विशे० ८७३।

अवायदंसी-आणालोएंतस्स पलिउंचंतस्स पच्छित्तं अकरेंतस्स संसारे जम्मणमरणादीदुल्लभबोहीयत्तं च परलोगावाए दरिसेति इहलोगे च ओमासिवादी सो अवायदंसी। नि० चू० तृ० १२८ आ। सातिचारस्य पारलौकिकापायदर्शीति। ठाणा० ४८६। अपायान्-अनर्थान् शिष्यचित्तभङ्गानिर्वाहादीन् दुर्भिक्षदौर्बल्यादिकृतान् पश्यतीत्येवंशीलः सम्यगनालोचनायां वा दुर्लभबोधिकत्वादीन् अपायान् शिष्यस्य दर्शयति। ठाणा० ४२४।

अवायाणुप्पेहा - अपायानुप्रेक्षा, आश्रवाणामपायानामनुप्रेक्षा। ठाणा० १८८।

अवालुयाखिल्ल-अवारितश्लेष्म। (तं०)

अवावारे-अव्यापारः, इन्द्रियाव्यापारः। आव० ६५२।

अवाहाणं-देशविशेषः। भग० ६८०।

अविंदंतो-अलभमानः। आव० ५३५।

अविंधणं-आव्यधनम्, मन्त्रावेशनम्। प्रश्न० ३८।

अवि-अपि, अपिशब्दः पद्यबन्धत्वेन पादपूरणार्थं एवाकारार्थो वा। जं० प्र० २४५। प्रकारवाची। नि० चू० प्र० १६८ आ।

अविअ-अपिच, अभ्युच्चये। ओघ० ३६।

अविअत्तो-अव्यक्तः, मुग्धः-सहजसद्विवेकविकलः। सूत्र० ३४।

अविइ-समन्ताद् वीचय इव वीचयः। उत्त० २३१।

अविउट्टमाणो-पीड्यमानः। सूत्र० ५१४।

अविउप्पकड-अविद्वत्प्रकृता, अव्युत्प्रकटा वा न विशेषत उत्-प्राबल्यतश्च प्रकटाः। भग० ३२५। अपिशब्दः सम्भावनार्थः उत्-प्राबल्येन च प्रकृता-प्रस्तुता प्रकटा वा उत्प्रकृतोत्प्रकटः वा। भग० ७५३।

अविउस्सिया-अव्युत्सृज्य, अपरित्यज्य। सूत्र० ३९४।

अविओगिओ - अवियोगिकः, वियोगासहिष्णुः। आव० ४३६।

अविओगो - अवियोगः, धनादेरत्यजनम्। परिग्रहस्य पञ्चविंशतितमं नाम। प्रश्न० ९२।

अविओसित - अव्यवसितम्, अनुपशान्तम्। ठाणा० १६६।

अविकत्थण-अविकत्थनः-न बहुभाषी। दश० ५। अविकत्थनम्-हितमितभाषणम्। आचा० २।

अविकप्पं-अविकल्पः, निश्चयः। आव० २६४।

अविकलकुल-अविकलकुलाः, ऋद्धिपरिपूर्णकुलाः। भग० ४६९।

अविकोविओ-जो वा भणिओ अज्जो! जइ भुज्जो भुज्जो से विहिसि तो ते छेदं मूलं वा दाहामो, एसो विकोविदो, एतेसि चेव विवरीता जो य पढमताए पच्छित्तं पडिवज्जति ते अकोविआ भण्णंति। नि० चू० तृ० १२१ अ।

अविक्कडिय-अविकटित, अखंडित। व्य० द्वि० ५३ आ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अविक्कयेण-अविक्रयेण-भाटकेन। व्य० प्र० २३८ आ।
अविक्किअ - असंस्कृतम्, सुलभमीदृशमन्यत्रापि। दश० २२१।
अविक्कीवो-आसायमाणो। दश० चू० १२३।
अविकूलं-अपूतिकूलं। (मर०)
अविगणिया-अविमता। आव० ६९२।
अविगियवयणो-अविकृतवदनः, नात्यन्तनिर्घाटितमुखः। ओघ० १८२।
अविगीत-अविप्रतिपन्नः। व्य० प्र० १९२ अ।
अविगुह-अवारित। (मर०)
अविग्गहगइसमावन्नग - अविग्रहगतिसमापन्नः, ऋजुगतिकः, स्थितो वा। भग० ८५। विग्रहगतिनिषेधादृजुगतिकः अवस्थितश्च। भग० ८७७।
अविग्गहमणे-अविग्रहमनाः, अकलहचेताः अव्युद्ग्रहमना वा, अविद्यमानासदभिनिवेशः। प्रश्न० १११।
अविघाटा-अप्रकटा। व्य० द्वि० २०३ अ।
अविघुट्ठं-विक्रोशनमिव यन्न विस्वरम्। ठाणा० ३९६। विक्रोशनमिव यद्विस्वरं न भवति तत्। जं० प्र० ४०।
अविचिंतियं-अविचिन्तितम्, अविवक्षितम्। विशे० ७३।
अविच्चुति-धारणाभेदः। दश० १२५।
अविज्जा-अविद्या, न विद्या-मिथ्यात्वोपहतकुत्सितज्ञानात्मिका। उत्त० २६२।
अविज्जापुरिसा - अविद्यापुरुषाः, अविद्या-मिथ्यात्वोपहतकुत्सितज्ञानात्मिका तत्प्रधानाः पुरुषाः अविद्यमाना वा विद्या-प्रभूतश्रुतं येषां ते। उत्त० २६२।
अविज्ञोपचितम्-अविज्ञानमविज्ञा तयोपचितं, अनाभोगकृतमिति। सूत्र० ११।
अविणए-अविनयः। आव० ७९३।
अविणासी - अविनाशी, क्षणापेक्षयाऽपि न निरन्वयनाशधर्मा। दश० १२९।
अविणीअप्पा-अविनीतात्मा, भवान्तरेऽकृतविनयः। दश० २४९। विनयरहिता अनात्मज्ञाः। दश० २४८।
अविणीओ - अविनीतः, सूत्रार्थदातुर्वन्दनादिविनयरहितः। ठाणा० १६५। अविनीताः, ये बहुशोऽपि प्रतिनोद्यमानाः प्रमाद्यन्ति, ते च छन्देऽवर्तमाना भण्यन्ते। बृ० प्र० २०९ अ।
अविण्णाय-अविज्ञातम्, अवध्यपेक्षया अज्ञातम्। भग० १९७, २००।
अवितथभावः-अर्थविनिश्चयः। दश० २३५।
अवितहं - अवितथम्, सत्यम्। आव० ७६१। भग० १२१।
अवितहमेयं-अवितथमेतत्-न कालान्तरेऽपि विगताभिमतप्रकारम्। भग० ४६७।
अविदलकडाओ-अद्विदलकृताः, न द्विदलकृता अद्विदलकृताः, अनूर्ध्वपाटिताः। आचा० ३२३।
अविद्दवंतो-अविद्रवन्। उत्त० २७९।
अविद्धकन्नए-अविद्धकर्णः, अव्युत्पन्नम्। भग० ६७७।
अविद्धत्थ-अविध्वस्तः, प्ररोहसमर्थः। दश० १४०।
अविद्यमानम्-मांसलतयाऽनुपलक्ष्यमाणम्। जीवा० २७१।
अविधिभिन्न - उर्ध्वफालिरूपाः पेश्यः कृतं तदृजुकभिन्नं, यत्पुनस्तिर्यक्बृहत्कत्तलिकाकृतं तच्च कलिकाभिन्नमेते द्वे। बृ० प्र० १७५ अ।
अविधो-कुच्छितो। नि० चू० प्र० २७७ अ।
अविनेया - ग्रहणधारणविज्ञानेहापोहवियुक्ताः महामोहाभिभूताः दुष्टावग्राहिताश्च। तत्त्वा० ७-६।
अविपक्कदोसा-कषायेन्द्रियनिग्रहेऽसमर्था, अकोविदा वा। बृ० द्वि० १४१ अ।
अविपरीतदर्शनः-साम्प्रतेक्षी। सूत्र० ३९४।
अविपु(घु)ट्ठं-अविपु(घु)ष्टम्, न विस्वरं क्रोशतीव। जीवा० १९४।
अविप्पकड - अविप्रकटा, आनुकूल्येन प्रकृता-प्रकान्ता, अथवा न विशेषेण प्रकटा अविप्रकटा। भग० ३२५।
अविप्पणासो-अविप्रणाशः, शाश्वतं, सिद्धानां नमस्कारार्हत्वे हेतुः। आव० ३८३।
अविप्पणणं। नि० चू० द्वि० ३१ आ।
अविबंधणो - अविबन्धनः, अविद्यमानमन्त्रादिनियन्त्रणः। उत्त० ४७९।
अविभागा-अविभागाः, अनुभागाः। ठाणा० २२२।
अविभागपलिच्छेदो - अविभागपरिच्छेदः, केवलिप्रज्ञाछेदेनाविभागम्। बृ० तृ० १५ आ।
अविमणे - अविमनाः, न शून्यचित्तः, अदीनस्य द्वितीयं नाम। अन्त० २२।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अविमोत्ति–अविमुक्ती, गृद्धिः। नि० चू० प्र० १५५ अ।
अवियं–उच्छिष्टम्। बृ० प्र० २७१ आ।
अवियत्तकुलं–जत्थ बहुणावि कालेण भिक्खा न लब्भइ। दश० चू० ७७।
अवियद्धो–अविदाधः, अतृप्तः। (महाप्र०)
अवियाइं–इत्येवमादीनुद्दिश्य। आचा० ३५३।
अवियाउरी–अप्रसविनी। आव० २१२।
अवियाणओ – अविजानन्, हिताहितप्राप्तिपरिहारशून्यमनाः। आचा० ७०।
अवियारं–अपराक्रममप्रभवति काले। (भक्त०)
अवियार–अविचारम्, चेष्टात्मकविचारविरहितमरणानशनतपः। उत्त० ६०२। अविकारा–गीतादिविकाररहिताः। बृ० प्र० ३१० आ।
अवियोगज्झवसाणं – अवियोगाध्यवसानम्, अविप्रयोगदृढाध्यवसायः। आव० ५८५।
अविरइ–अविरतिः, इच्छाया अनिवृत्तिः। भग० १०१।
अविरइय – अविरतिकः। आव० २१८, ६२०, ६४०, ४०४, ५६०। दश० ८९। गृहस्थी। ओघ० १९४।
अविरए – अविरतः, प्राणातिपातादिविरतिरहितः, विशेषेण वा तपसि रतो यो न भवति सः। भग० ३६।
अविरओ–अविरतः, न विरतः, सावद्यव्यापारादनिवृत्तमनाः। प्रज्ञा० २६८।
अविरतओ–अविरतः। आव० ३९६।
अविरतकायिकी–कायिकीक्रियायाः प्रथमो भेदः। मिथ्यादृष्टेरविरतसम्यग्दृष्टेश्च उत्क्षेपणादिलक्षणा क्रिया कर्मबन्धनिबन्धना। आव० ६११।
अविरति – अविरतिः, अब्रह्म। ठाणा० ३७२। अप्रत्याख्यानमथवा अविरतिरूपो भावः, शस्त्रम्। ठाणा० ४९२। अविरतिः। आव० ९३।
अविरतिया – अविरतिका, न विद्यते विरतिर्यस्याः सा। ठाणा० ३७२। अविरतिका। आव० ३९६।
अविरत्ताए–अविरक्तया विप्रियकरणे। भग० ५७९।
अविरत्तो–अविरक्तः। औप० १३।
अविरय–अविरतः, अनिवृत्तः। प्रश्न० ३०। मिथ्यादृष्टिः सम्यग्दृष्टिश्च। आव० ५८८।
अविरयसम्मदिट्ठी–अविरतसम्यग्दृष्टिः, देशविरतिरहितः सम्यग्दृष्टिः, भूतग्रामस्य चतुर्थं गुणस्थानम्। आव० ६५०।
अविरलं–परस्परासन्नम्। प्रश्न० ८३।
अविरलपत्तो–अविरलपत्रः। जीवा० १८७।
अविरहिए–अविरहितम्–चूकस्खलितन्यायादपि न विरहितः, अथवा प्रदीर्घकालोपभोग्याहारस्य सकृद्ग्रहणेऽपि भोगोऽनुसमयं स्यादतो ग्रहणस्यापि सातत्यप्रतिपादनार्थम्। भग० २०।
अविरहिय–अविरहितः, अविमुक्तः। आव० ५३२।
अविरहो–अविरहः, सातत्येनावस्थानम्। आचा० ६९।
अविराहणं–अविराधना। भग० ८९८।
अविराहियसंजम–अविराधितसंयमः, प्रव्रज्याकालादारभ्याभग्नचारित्रपरिणामः, सञ्ज्वलनकषायसामर्थ्यात्प्रमत्तगुणस्थानकसामर्थ्याद्वा स्वल्पमायादिदोषसम्भवेऽप्यनाचरितचरणोपघातः। भग० ५०।
अविरिक्का–अविरक्ता, अविभक्तारिक्था। बृ० तृ० २४३ अ।
अविरेकः–रोषः। व्य० द्वि० १३७ अ।
अविरुद्धो–अविरुद्धः, वैनयिकः। औप० ९०।
अविलं – लोगपसिद्धं। दश० चू० ६। गड्डुलमाकुलं वा। सम० ५३।
अविलंबियं–अविलम्बितम्, नातिमन्थरम्। भग० २९४। अमन्थरम्। ओघ० १८७। अनतिमन्दम्। प्रश्न० ११२।
अविवज्जओ–अविपर्ययः। विशे० ६४१।
अविशुद्धकोटि। आचा० २७१।
अविवन्न–अविपन्नः, अप्राप्तविपत् मन्त्रादिभिरनियन्त्रितः। उत्त० ४७९।
अविसेस–अविशेषः, विशेषरहितः। भग० ९६१। प्रज्ञा० ७४।
अविसंधि–प्रवाहेणाव्यवच्छिन्नम्। भग० ४७१। अव्यवच्छिन्नम्। आव० ७६१।
अविसंवावण–अविसंवादनम्, पराविप्रतारणम्। उत्त० ५९१।
अविसंवायणाजोगे–अविसंवादनायोगः। ठाणा० १९६।
अविसादी–अविषादी, चिन्तारहितः, अदीनस्य पञ्चमं नाम। अन्तः २२।
अविसारओ–अविशारदः। प्रज्ञा० ६०।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अविसुद्धलेस्से – अविशुद्धलेश्यः, कृष्णादिलेश्यः। जीवा० १४२। विभंगज्ञानः। भग० २८४।

अविसुद्धो – पासत्थादी तेसिं मज्झातो जो आगतो विहाराभिमुहो तस्स जो पुव्वोवही सो अविसुद्धो। नि० चू० द्वि० ११३ अ।

अविसेसियं–अविशेषितम्, विशेषरहितम्। जं० प्र० ८८।

अविसोहिकोडी–अविशोधिकोटिः। दश० १६२।

अविहडं–बालकः (देश्याम्)। बृ० प्र०।

अविहम्ममाण – विविधं परीषहोपसर्गैर्हन्यमानो विहन्यमानः, न विहन्यमानोऽविहन्यमानः, न निर्विण्णः सन् वैहानसं गार्द्धपृष्ठमन्यद्वा बालमरणं प्रतिपद्यत इति। आचा० २५९।

अविहाड–अप्रगल्भः। व्य० द्वि० ३७९ अ।

अविहाव–अविभाव्य, अविभावनीयस्वरूपः। प्रश्न० १९।

अविहि – अविधिः। आव० ५२। अयतना। बृ० द्वि० १५ अ।

अविहिगहिअं – अविधिग्रहणम्, अशुद्धस्य–उद्गमादिदोषान्वितस्य यद् ग्रहणं, अथवा गुडादेर्द्रव्यस्य मण्डकादिना प्रच्छाद्य यदेकत्र पात्रकदेशे स्थापनं तत्। ओघ० १९२।

अविहिपरिट्ठावणिया – अविधिपरिष्ठापनिकी। आव० ६३८।

अविहेडए–अविहेठकः, न क्वचिदुचितेऽनादरवान्। दश० २६६।

अवीइ–अवीचिः, वीचिः–विच्छेदस्तदभावात्। उत्त० २३१।

अवीरिए–अवीर्यः, उत्थानादिक्रियाविकलः। भग० ९५। मानसशक्तिवर्जितः। भग० ३२३।

अवीरिय–अवीर्यः, सिद्धः। भग० ९५।

अवीसंभो – अविश्रम्भः, अविश्वासः, प्राणवधस्य तृतीयः पर्यायः। प्रश्न० ५।

अवीहीपुच्छण–अविधिपृच्छा, वस्त्रपात्राद्युपकरणं विहारार्थमुद्ग्राह्य पृच्छन्ति। बृ० प्र० २४१ अ।

अवुन्नं–अपुण्यम्। उत्त० २१०।

अवृत्तपूर्वम्। आव० २३०।

अवेइअ–अवेदितः, मनसाऽप्यनालोचितः। आव० ४१५।

अवोच्छिन्ना–अव्युच्छिन्ना यावदेकोऽपि तिष्ठति तावत्। आव० ७२७।

अव्युच्छेदम्–वाण्यतिशयविशेषः, विवेक्षितार्थानां सम्यक्सिद्धिं यावदनवच्छिन्नवचनप्रमेयम्। सम० ६३।

अव्वइओ। दश० चू० २७।

अव्वए–अव्ययम्, व्ययरहितम्। भग० ११९।

अव्वओ–अव्ययः, अव्ययशब्दवाच्यः। जीवा० १८३।

अव्वते–अव्ययः पर्यायापगमेऽप्यनन्तपर्यायतया। ठाणा० ३३३। अवयवापेक्षया। ठाणा० ३३३। व्ययाभावः। भग० ७६०।

अवत्तं–अव्यक्तः, अव्यक्तमतं, अस्फुटमतं, संयतावगमे सन्दिग्धबुद्धिः। आव० ३११। अव्यक्तम्। औप० १०६। शब्दोल्लेखरहितं, अनिर्देश्यम्। विशे० १५५। अगीतार्थस्य गुरोः सकाशे यदालोचनं तत्। ठाणा० ४८४।

अव्वत्तगसंचिया–अवक्तव्यसञ्चिताः, द्वयादिसङ्ख्याव्यवहारतः शीर्षप्रहेलिकायाः परतोऽसङ्ख्यातव्यवहारतश्च सङ्ख्यातत्वेनासङ्ख्यातत्वेन च वक्तुं न शक्यतेऽसाववक्तव्यः स चैककस्तेनावक्तव्येन–एककेन एकत्वोत्पादेन सञ्चिताः। भग० ७९६।

अव्वत्तलिंगो – अव्यक्तलिङ्गः। आव० ३५२। अप्रत्यक्षलिङ्गः। आव० ५६५।

अव्वत्तस्स–अव्यक्तस्य–अगीतार्थस्य सूत्रार्थापरिनिष्ठितस्य। आचा० १९६।

अव्वत्तो – जाव कक्खादिसु रोमसंभवो ण भवति, ताव अहवा जाव सोलसवरिसो ताव अव्वत्तो। नि० चू० तृ० ८२ अ। श्रुतेऽगीतार्थः, वयसि अर्वाक् षोडशभ्यः। बृ० तृ० १३२ अ। अगीयट्ठो। नि० चू० प्र० १७३ आ।

अव्वया – अव्यया। जीवा० ९९। अव्ययशब्दवाच्या, मनागपि स्वरूपचलनस्य जातुचिदप्यसम्भवात्। जं० प्र० २७। तदारम्भकप्रदेशापरिहाणेः। जं० प्र० २५७।

अव्ववसितस्स–अव्यवसितस्य–अनिश्चयवतोऽपराक्रमवतो वा। ठाणा० १७६।

अव्वहिओ–अव्यथितः, परेणानापादितदुःखः। जं० प्र० १२६। जीवा० ९९। आचा० ४२४। अदीनमनाः। दश० २३२। अदीणो। दश० चू० १२३।

अव्वहे–अव्यथम्, देवादिकृतोपसर्गादिजनितं भयं चलनं वा व्यथा तस्या अभावो अव्यथम्। ठाणा० १९२।

अव्वाणं–आस्यानं, उद्वानं, उद्वानम्। ओघ० १७१।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अव्वाबाधं,०हं-अव्याबाधम्, केनापि विबाधयितुमशक्यत्वात्। जीवा० २५६। वन्दनके तृतीयं स्थानम्। आव० ५४८। अव्याबाधः, परेषां पीडाकारित्वाभावाद्विनष्टबाधः। भग० ७। अव्याबाधम्-उपरतसकलपीडं मौक्तम्। उत्त० ५७८।

अव्वाबाह-शुक्राभविमानवासी सप्तमो लोकान्तिकदेवः। भग० २७१। ठाणा० ४३२। अव्याबाधः सप्तमलोकान्तिकदेवः। आव० १३५। अपीडाकारित्वम्। सम० ५।

अव्वायडा-अव्याकृता, अस्पष्टा अप्रकटार्था, असत्यामृषाभाषाभेदः। दश० २१०।

अव्वावारपोसहे-अव्यापारपौषधः। आव० ८३५।

अव्वाहयं - अव्याहतम्, एकान्तिकमिहपरलोकाविरुद्धं फलान्तराबाधितं वा। आव० ४१५।

अव्वाहितो-अव्याहितः, अनाहूतः। जीवा० १६६।

अव्वितिगिट्ठ - अव्यतिकृष्टे, उद्घाटायां पौरुष्यामित्यर्थः। व्य० द्वि० २२७ आ।

अव्वुक्कंताइं - अव्युत्क्रान्ताः, अविध्वस्तपर्यायाः। आचा० ३४८।

अव्वुच्छित्तिनयट्ठया-अव्युच्छित्तिनयार्थता, द्रव्यास्तिकनयमतम्। सूर्य० २८६।

अव्वुच्छिन्ननयट्ठता-अव्यवच्छिन्ननयार्थता, द्रव्यास्तिकनयमतम्। सूर्य० २५८।

अव्वो-संबोधने, अहम्। व्य० द्वि० २०३ आ।

अव्वोगडं-अव्याकृतम्, गुरुभिर्विशेषतोऽनाख्यातम्। भग० १००। दायादादिभिरविभक्तं अननुज्ञातं वा। बृ० तृ० ५० अ। अव्याकृतं नाम दायिनां सामान्यं न पुनस्तैर्विभक्तं, यदिविकृतं न केनापि विकारमापादितं, यद् भवेत् पूर्वराजेन संदिष्टं, वंशस्य परम्परया समागतम्। व्य० द्वि० २७९ आ। अविभक्तम्। व्य० द्वि० २७९ अ। अव्यक्तोऽपरिस्फुटः। आचा० ३२०।

अव्वोगडा-अव्याकृता, अविसंस्ता। आव० ७२७। कृतेऽपि भागे निर्देशहीना अंशिका। बृ० द्वि० १९९ आ। अतिगम्भीरशब्दार्था, अव्यक्ताक्षरप्रयुक्ता वा असत्यामृषाद्वादशभेदः। प्रज्ञा० २५६।

अव्वोच्छित्तिणए - अव्यवच्छित्तिनयः, द्रव्यास्तिकनयः। उत्त० १५।

अव्वोच्छित्तिणयट्ठया-अव्यवच्छित्तिनयार्थता, अव्यवच्छित्तिप्रधानो नयोऽव्यवच्छित्तिनयस्तस्यार्थो-द्रव्यमव्यवच्छित्तिनयार्थस्तद्भावस्तत्ता। भग० ३०२।

अव्वोच्छिन्न-अव्यवच्छिन्नम्, अखण्डितम्। आचा० ४०५। अव्यवच्छिन्नाः, अनवरतम्। ओघ० १२६।

अव्वोच्छिन्ना-कृतेऽपि भागे मूलराशेरव्यवच्छेदो यावत्। बृ० द्वि० १९९ आ।

अव्वोच्छिन्नाओ-अव्यवच्छिन्नाः, व्यवच्छिन्ना-जीवरहिता न व्यवच्छिन्ना अव्यवच्छिन्नाः। आचा० ३२३।

अव्वोयडा-अव्याकृताः, गम्भीरशब्दार्था मन्मनाक्षरप्रयुक्ता वाऽनाविर्भावितार्थाः। भग० ५००।

अशरणानुप्रेक्षा - अशरणस्य-अत्राणस्यात्मनोऽनुपेक्षा। ठाणा० १९०।

अशुषिरे-अजुसिरे, तृणपर्णाद्यनाकीर्णे। उत्त० ५१८।

अशून्यान्तरा-न शून्यानि अन्तराणि यासां ता। आव० ३५।

अशोकपल्लवप्रविभक्तिः - विंशतितमो नाट्यविधिः। जीवा० २४७।

अशोकलता-लताविशेषः। आचा० ३०।

अश्रयः-(अंस), कोणाः, कोट्यः। ठाणा० ४३५। चतुर्दिग्विभागोपलक्षिताः शरीरावयवाः पर्यङ्कासनोपविष्टस्य जानुनोरन्तरं, आसनस्य ललाटोपरिभागस्य चान्तरम्, दक्षिणस्कन्धस्य जानुनश्चान्तरम्, वामस्कन्धस्य दक्षिणजानुनश्चान्तरमिति। जं० प्र० १५। चतुर्दिग्विभागोपलक्षिताः शरीरावयवाः। ठाणा० ३५७।

अश्रुतनिश्रितम्-यत्पुनः पूर्वं तदपरिकर्मितमतेः क्षयोपशमपटीयस्त्वादौत्पत्तिक्यादिलक्षणमुपजायते तत्। आव० ९।

अश्वंदमः-वाहकः। उत्त० ६२।

अश्विनी-प्रथमं नक्षत्रम्। दश० २३६।

अष्टभाग-अट्ठभागो-अष्टमो भागः। भग० ८३२।

अष्टमीपौषध-अट्ठमीपोसहो - अष्टम्यां पौषधः-उपवासादिकोऽष्टमीपौषधः। आचा० ३२७।

अष्टमीपौषधिका - अट्ठमीपोसहिया-उत्सवाः। आचा० ३२७।

अष्टापदम्-अट्ठावय, तीर्थविशेषः। आचा० ४१८। आव० २८७। बृ० तृ० ५२ अ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अष्टाष्टकिका-चतुःषष्टिः । व्य० द्वि० ३४७ आ ।
अष्ठीवती-जानुनी । प्रश्न० ८० ।
अष्ठीवान्-जानु । जीवा० २७० ।
असंकप्पिय-असंकल्पित, असङ्कल्पितानि च तानि शब्दादि-विषयभावेन परिणतद्रव्यरूपाणि । विशे० १४५ ।
असंकमणो-अशङ्कमनाः, न विद्यते शङ्का यस्य मनसस्तदशङ्कम्, अशङ्कं मनो यस्य स । आचा० १२२ ।
असंकिया-अशङ्किता । आव० ५६१ ।
असंकिलिट्ठ-असङ्क्लिष्टम्, निर्दूषणम् । औप० ४९ । विशुद्धयमानपरिणामवान् । प्रश्न० ११० ।
असंक्षेपकालः । ठाणा० ३७८ ।
असंखडं-कलहः, वैरं वा । बृ० तृ० ४८ अ । बृ० प्र० ८६ अ । नि० चू० प्र० ३१ अ । कलहः । (गणि०) । ओघ ८० ।
असंखडबोलो-कलहबोलः । आव० ६५४ ।
असंखडि । आव० ६३० ।
असंखडिओ-असङ्खडिकः, कलहकारकः । ओघ० १५१ ।
असंखयं-असंस्कृतम् । दश० १०५ । उत्तराध्ययनेषु चतुर्थमध्ययनम् । उत्त० ९ । सम० ६४ ।
असंखया-असङ्ख्यकाः, सङ्ख्याविरहिताः । उत्त० ३१६ ।
असंखेज्जजीविया - असङ्ख्यातजीविकाः वृक्षविशेषाः । भग० ३६४ । यथा निम्बाम्रादीनां मूलकन्दस्कन्धत्वक्छाखाप्रवालाः । ठाणा० १२२ ।
असंखेज्जवित्थडे-असङ्ख्येयविस्तृतः, असंङ्ख्येयं विस्तृतं यस्य सः । जीवा० १०६ ।
असंखेप्पद्धा - असङ्क्षेप्याद्धा, त्रिभागादिना प्रकारेण या सङ्क्षेप्तुं न शक्यते सा चासौ अद्धा च । प्रज्ञा० ४८९ ।
असङ्ख्येयकः । अनु० २४० ।
असंगहरुई-असङ्ग्रहरुचिः, गच्छोपग्रहकरस्य-पीठादिकस्योपकरणस्यैषणा दोषविमुक्तस्य लभ्यमानस्यात्मंभरित्वेन न विद्यते सङ्ग्रहे रुचिर्यस्यासौ । प्रश्न० १२५ ।
असंगे - असङ्गः, वैश्रमणस्य पुत्रस्थानीयो देवः । भग० २०० ।
असंघयणो - आदिल्लेहिं तिहिं संघयणेहिं वज्जितो । नि० चू० तृ० १३२ अ ।
असंघातिमो-एगंगिओ । नि० चू० द्वि० ७९ अ ।

असंचइआ-असंचयिताः-ये मासिके द्वैमासिके त्रैमासिके चतुर्मासिके पञ्चमासिके षण्मासिके वा प्रायश्चित्ते वर्त्तन्ते ते । व्य० प्र० ९७ आ ।
असंचेअयओ-असंचेतयतः, अजानानस्य । ओघ० २२० ।
असंजअ-असंयतः, गृहस्थः । आचा० ३४२ । अप्रशस्ताध्यवसायवान् । विशे० १०२७ ।
असंजगविसओ - भगवया पडिसिद्धो । नि० चू० द्वि० १८ अ ।
असंजण-असंगो, अगेही । नि० चू० प्र० ८१ अ ।
असंजमो-असंयमः, प्राणवधस्य चतुर्दशपर्यायः । प्रश्न० ५ । अधर्मद्वारस्य षष्ठं नाम । प्रश्न० ४३ ।
असंजय - असंयतः चरणपरिणामशून्यः । भग० ४९ । गृहस्थः । दश० २२२ । असंयमवान् । प्रश्न० ३० ।
असंजलं - जम्बूद्वीपैरवते पञ्चदशतीर्थकरनाम । सम० १५३ ।
असंजातकिणस्कन्धः । आचा० ८७ ।
असंजोगरया-असंयोगरताः-संयोगः-सम्बन्धः पुत्रकलत्रमित्रादिजनितस्तत्र रताः संयोगरतास्तद्विपर्ययेणैकत्वभावनाभाविता असंयोगरताः । आचा० १८० ।
असंजोगिमे - असंयोगिमः, संयोगिमाद्विपरीत आदित्यबिम्बादिः । उत्त० २१२ ।
असज्झा-असन्ध्या, विगतसन्ध्या । ओघ० २०२ ।
असण्णी-असंज्ञी-अविदितपूर्वमूदातम् । व्य० द्वि० ३७७ आ ।
असंतई-असन्तानः, असत्ता वा । बृ० प्र० । असन्ततिः (त्ता) परिणामविशेषः । आव० ८४८ ।
असंतकं-असत्कम्, असदर्थाभिधानरूपत्वात्, द्वितीयाधर्मद्वारस्य पञ्चमं नाम । प्रश्न० २६ ।
असंतगं-असत्, असद्भूतार्थम् । अशान्तं-अनुपशमप्रधानम्, अशोभनं वा । प्रश्न० १२१ । असत्कं-अविद्यमानार्थम्, असत्यमिति । प्रश्न० ३६ ।
असंतती-भायणवोच्छेदो अभाव इत्यर्थः । नि० चू० द्वि० ११६ आ ।
असंतय - अशान्तकः, अनुपशान्तः, असत्-अशोभनम् । प्रश्न० ४१ ।
असंतरणए-असंस्तरणे । ओघ० १४३ ।
असंतासंते-मार्गितस्याप्यलाभः । बृ० द्वि० २७२ आ ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

असंते-असत्, नाभाववचनः शब्दोऽयम्। आचा० ७४। अविद्यमानः। उत्त० ६१७।

असंतोसो-असन्तोषः, परिग्रहस्य त्रिंशत्तमं नाम। प्रश्न० ९३।

असंथडाइं - असंस्तृतानि, बीजादिभिरव्याप्तानि। उत्त० ४८७।

असंथडो-छट्ठऽट्ठमादिणा तवेण किलंतो असंथडो, गेलण्णेण वा दुब्बलशरीरो, दीहठाणेण वा पज्जंतं अलभंतो। नि० चू० प्र० ३१३ अ।

असंथरताणं-अणुघट्टंताणं। ओघ० ७८।

असंथरमाणा-असंस्तरमाणाः, अतृप्ताः। ओघ० ७८।

असंथरे-असंस्तरताम्। ओघ० १५४।

असंथुओ-इय वइरित्तो संणायगो अनायगो वा। नि० चू० द्वि० १२१ आ।

असंदिग्धम् - वाण्यतिशयविशेषः, असंशयकारिता। सम० ६३।

असंदिग्धवचनता-परिस्फुटवचनता। उत्त० ३९।

असंदिद्धं - असन्दिग्धां, स्पष्टाम्। दश० २१३। असन्दिग्धम्-सूत्रस्य द्वितीयगुणः, सैन्धवशब्दवल्लवणघोटकाद्यनेकार्थसंशयकारि न भवति। आव० ३७६। सन्देहवर्जितम्। भग० १२१।

असंदीणो - असन्दीनः, सन्दीनादितरः जलप्लावनात् न क्षयमाप्नोति। उत्त० २१२। आदित्यचन्द्रमण्यादिः। आचा० २४७। प्रचुरेन्धनतया विवक्षितकालावस्थायि। आचा० २४७। कषतापच्छेदनिर्घटितोऽसन्दीनः। आचा० २४८। कुतर्काप्रधृष्यतयाऽसन्दीनः अक्षोभ्यः, प्राणिनां त्राणायाश्वासभूमिः। आचा० २४८।

असंधिए-असन्धितः, असंयोजितः। उत्त० २१२।

असंधिया-पोरवज्जिता। नि० चू० प्र० १६१ अ।

असंनिहिसंचय-असन्निधिसञ्चयः, न विद्यते सन्निधिरूपः सञ्चयो यस्य सः। जीवा० २७८।

असंपओगचिंता - कथञ्चिदभावे सत्यसम्प्रयोगचिन्ता। आव० ५८५।

असंपओगाणुसरणं - सति वियोगे सम्प्रयोगानुस्मरणम्-चिन्तनम्। आव० ५८४।

असंपग्गहिया-असंप्रग्रहिता-संप्रग्रहरहितता। व्य० द्वि० ३९१ अ।

असंपत्त-असम्प्राप्तः। दश० १९४। असंलग्नम्। जीवा० १८१। विशिष्टान् वर्णादीननुपगतः। जीवा० २३।

असंप्रग्रहः-आत्मनो जात्याद्युत्सेकरूपग्राहवर्जनमिति भावः। ठाणा० ४२३।

असंप्रग्रहता-असम्प्रग्रहः, समन्तात्प्रकर्षेण जात्यादिप्रकृष्टतालक्षणेन ग्रहणम्-आत्मनोऽवधारणं सम्प्रग्रहस्तदभावः। जात्याद्यनुत्सिक्ततेति। उत्त० ३९।

असंफुरो-असंवृतः। बृ० तृ० ३ आ, बृ० द्वि० २२४ आ। सङ्कुचितपादो, ग्लानः। बृ० द्वि० २२९ अ।

असंबद्धं-असम्बद्धम्, स्वशरीरात्पृथग्भूतम्। जीवा० १२०।

असंभंते-असम्भ्रान्तम्, असम्भ्रान्तज्ञानः। भग० १४०।

असंभवंता-असम्भवन्तः, ते गौरवत्रिकान्यतरदोषाज्ज्ञानादिके मोक्षमार्गे न सम्यग्भवन्तः-नोपदेशे वर्त्तमानाः। आचा० २५०।

असंभासो-असम्भाष्यः। आव० २२१।

असंभम-असम्भ्रमः, न भयं कर्त्तव्यम्। ओघ० ५२।

असंमत्त-असम्यक्त्वम्, द्वाविंशतितमः परीषहः। आव० ६५७।

असंलोए - असंलोके, न विद्यते संलोको-दूरस्थितस्यापि स्वपक्षादेरालोको यस्मिँस्तत्। उत्त० ५१८। आचा० ३३५।

असंववहारिए - असांव्यवहारिकः, अनादिकालादारभ्य निगोदावस्थामुपगता एवावतिष्ठन्ते ते व्यवहारपथातीतत्वात्। प्रज्ञा० ३८०।

असंविग्गा-पासत्थोसण्णो कुसीलो संसत्तो अहछंदो। नि० चू० तृ० ३३ अ।

असंविभागी-संविभजति-गुरुग्लानबालादिभ्य उचितमशनादि यच्छतीत्येवंशीलः संविभागी, न तथा य आत्मपोषकत्वेनैव सः। उत्त० ४३४। आचार्यग्लानादीनामेषणागुणविशुद्धिलब्धं सन्न विभजतेऽसौ। प्रश्न० १२५।

असंवुडणं। नि० चू० प्र० २१६ आ।

असंवुडबउसो - असंवृतबकुशः, यो मूलगुणादिष्वसंवृतः सन् करोति, बकुशस्य चतुर्थो भेदः। उत्त० २५६। भग० ८९०। प्रकटकारी। ठाणा० ३३७।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

असंवुडे-असंवृतः, प्रमत्तः । भग० ३१५ ।
असंगुद्धम्-सङ्कीर्णम् । आव० ७६० ।
असंसट्ठा-दायगो असंसट्ठेहिं हत्थमत्तेहिं देतित्ति । नि० चू० तृ० १२ अ । असंसृष्टा-अक्खरडिय । ठाणा० ३८६ ।
असंसारसमावण्णा-असंसारसमापन्नाः, मुक्ताः । प्रज्ञा० १८ ।
असंसारो-असंसारः, संसारप्रतिपक्षभूतो मोक्षः । जीवा० ८ । न संसारोऽसंसारः, मोक्षः । प्रज्ञा० १८ ।
असंहनन-असंघयण, आदिमानां त्रयाणां संहननानामन्यतमेनापि संहननेन विकलः । व्य० प्र० ११४ अ ।
अस-अशनरूपाणि । व्य० द्वि० १२९ आ ।
असइं-असकृद्, अनेकधा । उत्त० ३१३ ।
असइ-अशतिः, अवाङ्मुखहस्ततलरूपा मुष्टिः । जं० प्र० २४४ ।
असई-असती । ओघ० १४६ । संस्तरणाभावे । बृ० द्वि० १९३ आ ।
असईपोसणया-असतीपोषणता, असतीः पोषयति । आव० ८२९ ।
असक्कओ-असंस्कृतः, स्वभावसम्पन्नः । आव० ११४ ।
असक्कय-असंस्कृतः, न विद्यते संस्कृतं-संस्कारो यस्य सः । असत्कृतः-अविद्यमानसत्कारः । प्रश्न० ४१ ।
असक्कयमसक्कय-असंस्कृतासत्कृतः, अविद्यमानसंस्कारसत्कारः । न विद्यते संस्कृतं-संस्कारो यस्य सोऽसंस्कृतः, असत्कृतः-अविद्यमानसत्कारः । प्रश्न० ४१ ।
असगडतातो-ज्ञानासहनः । (मर०)
असगडपिया-अशकटपिता, अशकटायाः पिता । उत्त० १३० । नामविशेषः । व्य० प्र० १८ अ । नि० चू० प्र० १५ अ ।
असगडा-अशकटा । उत्त० १२९, १३० । एतन्नाम्नी आभीरपुत्री । दश० १०५ ।
असगडाताए-अशकटापिता । व्य० प्र० १८ अ ।
असच्चसंधत्तणं - असत्यसन्धत्वम् , असत्यं-अलीकं सन्दधाति अच्छिन्नं करोतीति, तद्भावः । द्वितीयाधर्मद्वारस्य षड्विंशतितमं नाम । प्रश्न० २६ ।
असच्चो-असत्यः, सद्भ्योऽहितः । प्रश्न० ३० ।
असज्झं(ब्भं)-ग्राम्यवचनं, कर्कशं, कटुकं, निष्ठुरं, जकारादिकं वा । नि० चू० तृ० ८० आ ।
असज्झाइयं - अस्वाध्यायिकम् , अशोभन आध्याय एव, रुधिरादि कारणे कार्योपचारात् । आव० ७३१ ।
असढ-शठभावरहितः । ओघ० २२० ।
असढकारणो-'सढ' च्छादने, जो अप्पाणं मायाए ठातिअसढो होऊणं करणं करेति । नि० चू० तृ० १४९ अ ।
असढत्तणं-अशठत्वम् । आव० ५२ ।
असण-अशनम् , घृतपूर्णादि । आव० ८११ । मण्डकौदनादि, आशु-शीघ्रं क्षुधां-बुभुक्षां शमयतीति । आव० ८५० । बीजकः । आव० १८६ । अश्यत इत्यशनम् , ओदनादि । दश० १४९ । अश्यते-भुज्यत इति अशेषाहाराभिधानम् । उत्त० ६०० ।
असणवण-अशनवनम् , बीजवनम् । आव० १८६ । वनविशेषः । भग० ३६ ।
असणि-अशनिः, वज्रम् । दश० १६४ । आकाशे पतदग्निमयः कणः । जीवा० २९ । प्रज्ञा० २९ । वइरोयणिंदस्स अग्गमहिसी । भग० ५०४ । ठाणा० २०४ ।
असणिमेहा-अशनिमेघाः, करकादिनिपातवन्तः, पर्वतादिदारणसमर्थजलत्वेन वज्रमेघाः । जं० प्र० १६८ । करकादिनिपातवन्तः पर्वतादिदारणसमर्थजलत्वेन वा वज्रमेघाः । भग० ३०६ ।
असणे-अशन, वृक्षविशेषः । प्रज्ञा० ३१ । बीयकः । उत्त० ६५३ ।
असण्णातय-असज्ञातीय । आव० ८४६ ।
असतिं-असकृत्, अनेकवारम् । जीवा० १२८ ।
असतिणिवेसणे । नि० चू० प्र० १६२ अ ।
असतिवाडगा । नि० चू० प्र० १६२ अ ।
असतिसाहीओ । नि० चू० प्र० १६२ अ ।
असत्थ-अशस्त्रम् , सप्तदशभेदः संयमः । आचा० ५३ ।
असत्थस्स-अशस्त्रस्य, निरवद्यानुष्ठानरूपस्य संयमस्य । आचा० १५६ ।
असदभ्यारोपणम्-आव० ८२१ ।
असद्-अविद्यमानम् । उत्त० ३४७ ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

असद्दहंतो-अश्रद्दानः, अश्रद्दधानः। आव० १८१।

असद्दहणं-अश्रद्धानम्। आव० ५७३।

असद्भुतैः-साधोः कर्तुमयुक्तैः। आचा० २४२।

असनिरूवेण-ईतिरूपो हि पतङ्गादेरापात इति दश० १६४।

असनो-अशनः, बीयकः। आचा० ४११।

असन्निआउए-असंख्यायुः, असञ्ज्ञी सन् परभवयोग्यं बद्धमायुः। भग० ५१।

असन्निभूए-असञ्ज्ञिभूतः, असञ्ज्ञिभ्य उत्पन्नः। प्रज्ञा० ५५८।

असन्निभूय-असञ्ज्ञीभूता, असञ्ज्ञिनां या जायते सा। प्रज्ञा० ३३९।

असन्नी-असञ्ज्ञी, मिथ्यादृष्टिरमनस्को वा। प्रज्ञा० ३३९। यथोक्तमनोविज्ञानविकलः। प्रज्ञा० ५३३, ४०७।

असबलायारे-अशबलो यस्य सितासितवर्णोपेतबलीवर्द इव कर्बुर आचारो-विनयशिक्षाभाषागोचरादिकः। व्य० प्र० २३५ अ।

असबलो-अशबलः, एकान्तशुद्धः। उत्त० २५७।

असब्भं - असभ्यम्, अनुचितं जकारमकारादि। आव० ५८८।

असब्भावं-असद्भावम्, अविद्यमानाः सन्तः-परमार्थसन्तो भावा-जीवादयोऽभिधेयभूता यस्मिन् तत्। उत्त० १५१।

असब्भावगिहंतरं-गृहस्य पार्श्वतः पुरोहडेऽङ्गणे मध्ये वा। बृ० तृ० २३ आ।

असब्भावठवणा - एक एवाक्षः पिण्डकल्पनया बुद्धया कल्प्यते तत्। ओघ० १२९। असद्भावस्थापना, असद्भावकल्पना। जीवा० १२२।

असब्भावपट्ठवणा-असद्भावप्रस्थापना। आव० १५१।

असब्भावभावणा-असद्भावभावना। उत्त० १६५, २२३।

असब्भावुब्भावणा - असद्भावोद्भावना। उत्त० १५७। आव० ३१४।

असब्भावो-असद्भावः। आव० ३२०।

असब्भूए - असद्भूतम्, अभूतोद्भावनरूपमशोभनरूपं वा। भग० २३२।

असब्भूय-असद्भूतम्, अनृतम्। आव० ५८८।

असभ्यम्-अश्लीलम्। आव० ८३४। खरपरुषादि। उत्त० ३४७।

असमंजसं-अननुकूलम्। उत्त० २२६।

असमओ - असमयः, असम्यगाचारः, द्वितीयाधर्मद्वारस्य पञ्चविंशतितमं नाम। प्रश्न० २६।

असमणपाउग्गो-अश्रमणप्रायोग्यः। आव० ७७८।

असमणुन्न - असमनुज्ञः, आचाराङ्गेऽष्टमाध्ययनस्य प्रथमोद्देशकः। आचा० २६०। असमनोज्ञाः, असाम्भोगिकाः। ओघ० ५४।

असमर्था-अतिभारेण न शक्नुवन्ति फलानि धारयितुम्। आचा० ३९१।

असमाणो-असमानः, न विद्यते समानोऽस्य गृहिष्वाश्रयामूर्च्छितत्वेनान्यतीर्थिकेषु वाऽनियतविहारादिनेति, असदृशः समानो वा साहङ्कारो न तथेति। उत्त० १०७।

असमारभमाणस्स - असमारभमाणस्य, सङ्घट्टादीनामविषयीकुर्वतः। ठाणा० ३२४।

असमासदोसो-असमासदोषः, समासव्यत्ययः सूत्रदोषविशेषः। आव० ३७४।

असमाहडा-असमाहृता, अनङ्गीकृता। सूत्र० ३१४।

असमाहडाए-अशुद्धया लेश्यया-उद्गमादिदोषदुष्टमिदमित्येवं चित्तविप्लुत्या। आचा० ३३२।

असमाहि-असमाधिः, अस्वास्थ्यनिबन्धना कायादिचेष्टा। आव० ४९९। समाधिः-समाधानं-ज्ञानादिषु चित्तैकाग्र्यं, न समाधिः। उत्त० ६१४। चित्तोद्वेगरूपम्। उत्त० ५५१।

असमाहिकरो-असमाधिकरः, अस्वास्थ्यनिबन्धनकरः। आव० ४९९।

असमाहिठाणा - असमाधिस्थानानि, न चित्तस्वास्थ्यस्याश्रयाः। प्रश्न० १४४। सम० ३७।

असमिक्खियप्पलावी - बुद्धीए अणूहियं पुव्वावरं इहपरलोयगुणदोसं वा जो सहसा भणइ। नि० चू० तृ० ८० आ। असमीक्षितप्रलापी, अपर्यालोचितानर्थकवादी। प्रश्न० ३६।

असमित्त-अश्वमित्रः। विशे० ९३४।

असमीक्ष्य-अनालोच्य। उत्त० ३४७।

असमोहएणं-अनुपयुक्तेनात्मना। भग० २८९।

असमोहयावि-दण्डादुपरता असमुद्धाता वा। भग० ७६४।

असम्मोहे - असम्मोहः, देवादिकृतमायाजनितस्य सूक्ष्म-

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पदार्थविषयस्य च सम्मोहस्य मूढताया निषेधात्। ठाणा० १९२।

असरण-अशरणः, शरणरहितः, अर्थप्रापकाभावात्। प्रश्न० ११। अर्थकारकविरहितः। प्रश्न० १९। गृहं नात्र शरणमस्तीत्यशरणः संयमः। आचा० ३०३। शरणमनालम्बमानोऽदीनमनस्कः। आचा० ३०६।

असहीण-असत्। बृ० द्वि० १८७ अ। अस्वाधीनः, परायत्तः। आचा० १५२।

असहु-सुकुमारो राजपुत्रादिप्रव्रजितः। ठाणा० १३८। अशक्तिष्टः। नि० चू० प्र० ३६० अ। असहिष्णुः। ओघ० १४३। सुकुमारशरीरं। उप० मा० गा० ४०३। असमर्थः-राजपुत्रादिः। ओघ० १३८।

असहू-असमर्थः-क्षुत्पीडितः। ओघ० ४४। राजादिदीक्षितः। बृ० द्वि० २२४ अ। रायाजुवराया सेट्ठि अमच्चपुरोहिया य एते असहू। नि० चू० प्र० १०१ अ। भिक्षावेलां प्रतिपालयितुमशक्तः। ओघ० ८६। असहिष्णुः। आव० ८५८। असमर्थः। ओघ० १९५।

असांव्यवहारिकः-छेकः। आव० ५२७।

असाए-असातः, असातोदयकलितः। जीवा० १३०।

असाढभूई-आसाढभूतिः, मायापिण्डोदाहरणे धर्मरुचिशिष्यः। पिण्ड० १३७।

असाढए-तृणविशेषः। प्रज्ञा० ३३।

असाढा-अषाढा, पूर्वोत्तराषाढानक्षत्रविशेषः। आव० १२०।

असाधू-असाधवः, असंयताः। ठाणा० ३९९।

असामन्नं असामान्यम्, अनाचीर्णपूर्वम्। सूर्य० २३८।

असारजरढा-अकालवृद्धा। ओघ० २१८।

असारणा-अगवेषणा। बृ० प्र० १५६ अ।

असारवणा-अगवेसणा। नि० चू० द्वि० १३६ अ।

असारहिए-असारथिकः, सारथिरहितः। भग० ३२२।

असारिए-असागारिके। नि० चू० द्वि० ३१ आ।

असावज्जं-असावद्यम्, आयतनस्य प्रथमः पर्यायः। ओघ० २२२।

असासए-अशाश्वतम्, प्रतिक्षणमावीचीमरणेन मरणम्। आचा० ६६। क्षणनश्वरत्वम्। भग० ४६९।

असासयं-अशाश्वतम्, प्रतिक्षणं विशरारुत्वम्-अनित्यम्। प्रश्न० ९६।

असाहुया-असाधुता, द्रोहस्वभावता। उत्त० ११४।

असाहू-असाधुः, अपगतभावसाधुत्वः। उत्त० ५८।

असि-असिः, खड्गः। जीवा० ११७। भग० १८२। प्रज्ञा० ९७। तलवारः। आव० ५८८, ४८७, ३६०। खड्गाभ्यासम्। प्रश्न० ९७। खड्गः-करवालः। भग० १९१। शस्त्रविशेषः। आव० ३६०।

असिअं-असितम्, कृष्णमशुभं च संसारानुबन्धित्वात्। आव० ४३९।

असिअएणं-दात्रेण। भग० ६५०।

असिए-असितः-अबद्धः-तैः सार्धं संगमकुर्वन् भिक्षुः। अचा० ४३०।

असिकच्छप-अस्थिकच्छपः, कच्छपविशेषः। सम० १३५।

असिक्खग-अशिक्षकः, चिरप्रव्रजितः। दश० ३९।

असिखेडगं-असिखेटकम्, असिना सह फलकम्। प्रश्न० २१।

असिचम्मपायं-असिचर्मपात्रम्-स्फुरकः, अथवा असिः-खड्गश्चर्मपात्रं च-स्फुरकः, खड्गकोशको वा। भग० १९१।

असिचम्मपायहत्थकिच्चगए-असिचर्मपात्रहस्तकृत्वाकृतः, असिचर्मपात्रं हस्ते यस्य स तथा कृत्यं-सङ्घादिप्रयोजनं गतः-आश्रितः कृत्यगतस्ततः कर्मधारयः, अथवाऽसिचर्मपात्रं कृत्वा हस्ते कृतं येनासौ असिचर्मपात्रहस्तकृत्वाकृतः, प्राकृत्वाच्चैवं समासः, अथवाऽसिचर्मपात्रस्य हस्तकृत्यां-हस्तकरणं गतः-प्राप्तो यः स तथा। भग० १९१।

असिट्ठो-अशिष्टः, अप्रतिपादितः। प्रश्न० १११। अशिष्टः। आव० २१८।

असिणाइ-अन्ये श्रमणादयो येऽमुमग्रपिण्डमशितवन्तः। आचा० ३३७।

असिणाणए-अस्नानतया। आचा० ३६४।

असिता-गृहवासविमुक्ता। आचा० २२२।

असिद्ध-न सिद्धः, हेतुदोषविशेषः। ठाणा० ४९३। संसारी। जीवा० ४३६।

असिपंजरं-असिपञ्जरम्, शक्तिपञ्जरम्। प्रश्न० ११५।

असिपत्त-असिपत्रं, असीनां पत्रम्। विपा० ७१। खड्गपत्रम्। जीवा० १०६। असिः-खड्गः स एव पत्रम्। ठाणा० २७३। असयः-खड्गास्तद्वच्छेदकतया पत्राणि-पर्णानि यस्मिँस्तत। उत्त० ४६०। प्रज्ञा० ८०। परमा-

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

धार्मिकेषु नवमः। उत्त० ६१४। नवमः परमाधार्मिकः। आव० ६५०। सूत्र० १२४। सम० २९।

असिपुत्रिकः। उत्त० ४५।

असिय-असितः, कृष्णः। प्रज्ञा० ९१।

असियअं-दात्रम्। आव० २९५।

असियग-असियगम्, दात्रम्। आचा० ६१।

असिरयणं-असिरत्नम्, चक्रवर्त्तेरेकेन्द्रियपञ्चमरत्नम्। जं० प्र० २३८। ठाणा० ३९८।

असिलट्ठी-असियष्टिः, खड्गलता। विपा० ५६। असिः-खड्गः स एव यष्टिः-दण्डोऽसियष्टिः,अथवा असिश्च यष्टिश्च। जं० प्र० २६४।

असिलायं-विस्वरम्। बृ० तृ० २५ आ।

असिलिट्ठं-अश्लिष्टम्। आव० ९९।

असिलोगभते - अश्लोकभयम्, अकीर्त्तिभयम्। ठाणा० ३८९। अश्लाघाभयम्। आव० ४७२।

असिलोगो-अश्लाघा, अयशः। आव० ६४६।

असिव-अशिवम्, व्यन्तरकृतं व्यसनम्। आव० ६२६। उद्दाइयाए अभिद्दुतं। नि० चू० प्र० ९७ अ। नि० चू० प्र० ७५ अ। व्यन्तरकृत उपद्रवः। बृ० प्र० २३१ अ। देवतादिजनितो ज्वराद्युपद्रवः। ओघ० १३, १४।

असिवाइखेत्तं-अशिवादिक्षेत्रम्, अशिवादिप्रधानं क्षेत्रम्, आदिशब्दादूनोदरताराजद्विष्टादिपरिग्रहः। दश० ३९।

असिवुवसमणी-अशिवोपशमनी कृष्णस्य चतुर्थी भेरी। आव० ९७।

असिवोवसमणी-अशिवोपशमनी, कृष्णस्य चतुर्थी भेरी, षण्मासान् सर्वे रोगोपशमनी। बृ० प्र० ५६ अ।

असी-असिः, अस्युपलक्षितः सेवकपुरुषः। जीवा० २७९। हीरो। नि० चू० द्वि० १४१ अ। खड्गः, यमुपजीव्य जनः सुखवृत्तिको भवति, यद्वा साहचर्यलक्षणया असिशब्देन अत्र अस्युपलक्षिताः पुरुषा गृह्यन्ते। जं० प्र० १२२।

असील-अशीलः, अविद्यमानशीलः, सर्वथा विनष्टचारित्रधर्मः। उत्त० ३४५। अशीलाः-दुःशीलाः। ठाणा० १५३।

असीलया-अशीलता चारित्रवर्जितत्वात्। अब्रह्मणः सप्तदशं नाम। प्रश्न० ६६।

असुआ-असूया, अव्याजम्, ईर्ष्या। दश० २४३।

असुइ-अशुचिः अश्रुतिर्वा। प्रश्न० ६३। स्नानब्रह्मचर्यादिवर्जितत्वात् अशुचिः, शास्त्रवर्जितो वा अश्रुतिः। भग० ३०८। स्नानब्रह्मचर्यादिवर्जिताः, अश्रुतयः, शास्त्रवर्जिताः। जं० प्र० १७०। विगन्धं शरीरमलादि। जीवा० २८२।

असुण्णंतरा-अशून्यान्तराः, एकोत्तरवृद्धया सर्वदैवाशून्यान्यव्यवहितान्यन्तराणि यासां ता अशून्यान्तरा। विशे० ३३१।

असुति-अशुचीनि, अमेध्यानि मूत्रपुरीषाणि। ठाणा० ४७६।

असुद्ध-अशुद्धम्, आधाकर्मादि। ओघ० १७७।

असुन्नकाल-अशून्यकालः, नारकभवानुगसंसारावस्थानकालस्य द्वितीयभेदः। भग० ४७।

असुभ-अशुभकार्ये मृतकस्थापनादौ। व्य० प्र० १६९अ।

असुभजोग-अशुभयोगः, अनुपयुक्ततया प्रत्युपेक्षादिकरणम्। भग० ३२।

असुभणाम - अशुभनाम, यदुदयवशात् नाभेरधस्तनाः पादादयोऽवयवा अशुभा भवन्ति तत्। प्रज्ञा० ४७४।

असुभत्ता-अशुभता, न शुभता। प्रज्ञा० ५०४। अमङ्गल्यता। भग० २५३।

असुभाणुप्पेहा-अशुभानुप्रेक्षा, अशुभत्वं संसारस्यानुप्रेक्षणं-अनुस्मरणम्। ठाणा० १८८।

असुभाते-असुखाय-दुःखाय। ठाणा० १४९। अशुभाय, अपुण्यबन्धाय असुखाय वा। ठाणा० २९२। पापाय, असुखाय वा-दुःखाय। ठाणा० ३५८।

असुयंगं-अश्रुताङ्गम्, नोश्रुताङ्गम्। उत्त० १४४।

असुय-अश्रुतं परवचनद्वारेण। भग० २००, ११७।

असुर-रौद्रकर्मकारी। उत्त० २७६।

असुरकुमार-असुरकुमाराः, देवविशेषाः। भग० ११७। असुराश्च ते नवयौवनतया कुमारा इव कुमाराश्चेत्यसुरकुमाराः। ठाणा० २८। भवनपतिभेदविशेषः। प्रज्ञा० ६९।

असुरकुमारीओ-असुरकुमार्यः, देवीविशेषाः। भग० १९७।

असुरदारे-सिद्धायतनस्य द्वितीयं द्वारम्। ठाणा० २३०।

असुरसुरं-असुरसुरम्, अनुकरणशब्दोऽयम्। भग० २९४। सरडसरडं अकरिंतो। ओघ० १८७। एवंभूतशब्दरहितम्। प्रश्न० ११२।

असुरा - असुराः, न सुरा असुराः, भवनपतिव्यन्तराः। ठाणा० २२। भवनपतिविशेषाः, भवनपतिव्यन्तरा वा।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ठाणा० १०४। असुरकुमारः। भग० १३५। भवनपति-व्यन्तरलक्षणः। ठाणा० ४६६।

असुरो-असुरः, आसुरभावान्वितत्वाद् यक्षः। उत्त० ३६६। भवनवासी। बृ० द्वि० २६४ अ।

असुह-अशुभम्, अशुभस्वभावम्। भग० ७२। अशुभः-अतीवासातरूपः। जीवा० १०३।

असुहदुक्खभागी - असुखदुःखभागी, दुःखानुबन्धिदुःख-भागी। भग० ३०८।

असुहया-अशुभदा, असुखदा। आव० २३६।

असुहिय-असुखितः, अविद्यमानसुहृद् वा। प्रश्न० ४१।

असूइअ-असूचितम्, व्यञ्जनादिरहितम्। दश० १८१।

असूचया-साक्षात्। ठाणा० ३०४।

असूयपुत्तो-असूयपुत्रः। आव० २११।

असूया-अप्पणो दोसं भासति ण परस्स। नि० चू० प्र० २७८ अ। आतगता। नि० चू० प्र० २७८ अ।

असूचा-स्फुटमेव परदोषोद्घट्टनम्। बृ० प्र० १२८ अ।

असेयं-मुखं। नि० चू० प्र० ८८ आ।

असोंडो-अमजपाणो। नि० चू० द्वि० १४४ अ।

असोअ-अशोकः, सुप्रभबलदेवपूर्वभवनाम। आव० १६३। अरुणद्वीपे महर्द्धिको देवविशेषः। जीवा० ३६७। द्विसप्ततितमग्रहः। जं० प्र० ५३५। वृक्षविशेषः। जीवा० २२२। किन्नरव्यंतराणां चैत्यवृक्षः। ठाणा० ४४२। अशोकनामदेवः। जं० प्र० ३२०। लताविशेषः। प्रज्ञा० ३२। बिन्दुसारपुत्रः। बृ० प्र० ४७ अ। वृक्षविशेषः। भग० ८०३। एकास्थिकवृक्षविशेषः। प्रज्ञा० ३१। ठाणा० ७९। मल्लिनाथस्य चैत्यवृक्षः। सम० १५२। विजयपुरस्य नन्दनवनोद्याने यक्षः। विपा० ९५। बिंदुसारपुत्तो। नि० चू० प्र० २४३ अ।

असोगचंदो-अशोकचन्द्रः, योगसङ्ग्रहेषु शिक्षायां दृष्टान्तः। आव० ६७९।

असोगदत्तो-अशोकदत्तः, मायोदाहरणे साकेतपुरे समुद्रदत्तसागरदत्तपिता। आव० ३९४।

असोगललिए-चतुर्थबलदेवपूर्वभवनाम। सम० १५३।

असोगवण - अशोकवनम्। आव० १८६। पुष्करिण्यां वनम्। ठाणा० २३०। वनखण्डनाम। जं० प्र० ३२०। भग० ३७।

असोगसिरी - पाडलिपुत्ते असोगसिरी राया। नि० चू० तृ० ४४ आ। बृ० द्वि० १५३ आ। अशोकश्रीः, बिन्दुसारपुत्रः। विशे० ४०९।

असोगा-अशोका, नलिनविजयराजधानी। जं० प्र० ३५७। नागकुमारेन्द्रस्याग्रमहिषी। भग० ५०४। ठाणा० २०४।

असोच्चा-अश्रुत्वा। भग० ४२५। आगमानपेक्षम्। भग० ४५५।

असोणिअ-अशोणितम्, रक्तरहितम्। आव० ७६४।

असोत्थो-अश्वत्थः। आव० ४१७।

असोयणया-अशोचनता, दैन्यानुत्पादनेन। भग० ३५।

असोयलया-अशोकलता, लताविशेषः। भग० ३०६।

असोयवडेंसए। भग० १९४।

असोयाओ। ठाणा० ८०।

असोही-अशोधिः, प्रतिसेवना, स्खलना। ओघ० २२५।

अस्तमयनप्रविभक्तिः-नवमनाट्यभेदः। जं० प्र० ४१६।

अस्तान्ते-अत्थंतमि, अस्तमयपर्यन्ते। उत्त० ४३५।

अस्ति-अत्थि, प्रदेशः। ठाणा० १५, ५१६।

अस्तिकायः- अत्थिकाय, धर्म्मादिपञ्चविधास्तिकायमाश्रित्य कायः। आव० ७६७।

अस्तिकायधर्म - अत्थिकायधम्म, अस्तिशब्देन प्रदेशा उच्यन्ते, तेषां कायो-राशिरस्तिकायः स चासौ संज्ञया धर्म्मश्चेति, गत्युपष्टम्भलक्षणः धर्मास्तिकायः। ठाणा० १५४। योऽस्तिकायानां धर्मादीनां धर्मो-गत्युपष्टम्भादिः। उत्त०५६६।

अस्तिकायाः-अत्थिकाया, अस्तीत्ययं त्रिकालवचनो निपातः, अभूवन् भवन्ति भविष्यन्ति चेति भावना, अतोऽस्ति च ते प्रदेशानां कायाश्च राशय इति, अस्तिशब्देन प्रदेशाः क्वचिदुच्यते, ततश्च तेषां वा काया अस्तिकायाः। ठाणा० १९६। अस्तीनां-प्रदेशानां सङ्घातात्मकत्वात् कायः। ठाणा० १५।

अस्तिनास्तिप्रवादपूर्वम् - अत्थिनत्थिप्पवातपुव्वं, चतुर्थं पूर्वम्। ठाणा० ४८४। तत्र यद्वस्तु लोकेऽस्ति धर्मास्तिकायादि यच्च नास्ति खरशृङ्गादि तत् प्रवदति, सर्वं वस्तु स्वरूपेणास्ति पररूपेण नास्तीति प्रवदति। नंदी १४१।

अस्थानस्थापनम् - अठाणठवणं - अयोग्यतास्थापनम्। ओघ० १३१।

अस्थिका-अट्ठिग, कपालिकापर्यायः। व्य० प्र० २०६ अ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अस्थितकल्पिकः-साधुभेदविशेषः । भग० ४ ।

अस्थिमिंजा-अट्ठिमिंजा, अस्थिमध्यरसः । ठाणा० १७० ।

अस्थिमिंजानुसारि-अट्ठिमिंजाणुसारी । ठाणा० ३७५ ।

अस्थिरम्-अथिरं, जीर्णम् । आचा० ३९६ ।

अस्थिरणाम -(अथिरणाम), यदुदयवशाज्जिह्वादीनामवयवानामस्थिरता भवति तत् । प्रज्ञा० ४७४ ।

अस्निहः-(अणिह), स्निह्यते-श्लिष्यतेऽष्टप्रकारेण कर्म्मणेति स्निहः, न स्निहोऽस्निहः, यदि वा स्निह्यतीति स्निहो रागवान् यो न तथा सोऽस्निहः, उपलक्षणार्थत्वाच्चास्य रागद्वेषरहित इत्यर्थः । आचा० १९१ । स्नेहरहितः । आचा० २१० । स्निह्यतीति स्निहो, न स्निहोऽस्निहः-रागद्वेषरहितत्वात् अप्रतिबद्धः । आचा० २५८ ।

अस्पृशद्गति-समयप्रदेशान्तरमस्पृशती । आव० ४४१ ।

अस्फुटितम्-अफुडिआ, सर्वविराधनापरित्यागः । दश० १९६ ।

अस्संजए-असंयतः-गृहस्थः, स च श्रावकः प्रकृतिभद्रको वा । आचा० ३२९ । असंयताः-असंयमवन्तः, आरम्भपरिग्रहप्रसक्ताः, अब्रह्मचारिणः । ठाणा० ५२४ ।

अस्संजतो-गिहत्थो । नि० चू० प्र० ३० आ ।

अस्संजमो - असंयमः, प्राणातिपातादिलक्षणः । आव० ५१६ ।

अस्संपडियाए - न विद्यते स्वं-द्रव्यमस्य सोऽयमस्वो निर्ग्रन्थ इत्यर्थः, तत्प्रतिज्ञया । आचा० ३२५ ।

अस्सकण्णी - अश्वकर्णी, वनस्पतिविशेषः । आचा० ५७ । साधारणवनस्पतिकायिकभेदः । जीवा० २७ ।

अस्सक.न्न-साधारणबादरवनस्पतिकायविशेषः । प्रज्ञा० ३४ ।

अस्सकन्नी-अनन्तकायभेदः । भग० ३०० । भग० ८०४ । कन्दविशेषः । उत्त० ६९१ ।

अस्सतरो-अश्वतरः, खरतरः, एकखुरश्चतुष्पदः । जीवा० ३८ । एकखुरचतुष्पदः । प्रज्ञा० ४५ ।

अस्सपुरं-अश्वपुरम्, पुरुषसिंहपुरम् । आव० १६२ ।

अस्सपुरा - अश्वपुरी, पक्ष्मविजयराजधानी । जं० प्र० ३५७ ।

अस्सरोनिवाए - अप्सरोनिपातः, चप्पुटिका । जीवा० ३९९ ।

अस्सलालापेलवं । आचा० ४२३ ।

अस्सलेसा-नक्षत्रविशेषः । ठाणा० ७७ ।

अस्सवाणियओ-अश्ववणिक् । आव० २२० ।

अस्सवाहणिया-अश्ववाहनिका । उत्त० २७७ । आव० ५६ ।

अस्ससेणे-अश्वसेनः, सनत्कुमारपिता । आव० १६२ । पार्श्वपिता । आव० १६१ ।

अस्सादणसगोत्ते - आस्वादनसगोत्रम्, अश्विनीनक्षत्रगोत्रम् । सूर्य० १५० ।

अस्सामिणी-अस्वामिनी । आव० ३२४ ।

अस्सायणे-आश्वायनम्, अश्विनीगोत्रम् । जं० प्र० ५०० ।

अस्सासणे - अष्टाशीतिमहाग्रहे चतुर्दशमहाग्रहः । ठाणा० ७८ ।

अस्सासो - आश्वासः, प्राणिनामेव आश्वासनम्, अहिंसायाः पञ्चाशत्तमं नाम । प्रश्न० ९९ ।

अस्सि-अयम् । ठाणा० १३८ ।

अस्सिंपडियाए-एतत्प्रतिज्ञया एतान् साधून् प्रतिज्ञाय-उद्दिश्य । आचा० ३६१ ।

अस्सिंलोए-अयं लोकः, अयं मनुष्यलोकः । जीवा० ३४४ ।

अस्सिणि-अश्विनी, नक्षत्रविशेषः । सूर्य० १३० । ठाणा० ७७ । मेतार्यजन्मनक्षत्रम् । आव० २५५ ।

अस्सीइ-अश्विनी, नक्षत्रविशेषः । ठाणा० ४६९ ।

अस्सेसा-अश्लेषा । सूर्य० १३० ।

अस्सो-अश्वः, घोटकः, एकखुरश्चतुष्पदः । जीवा० ३८ । अर्शः । जीवा० २८४ । प्रज्ञा० ४५ ।

अहं-अधं-अधस्तात् । आचा० ६३ । अधः-बुध्ने । ओघ० १६८ ।

अह-एष । नि० चू० प्र० ११८ अ । व्य० प्र० १०७ आ । अयं । नि० चू० द्वि० ९२ आ ।

अहक्खाओ-यथास्थितः । (सं०)

अहक्खायं - अथाख्यातम्, अथशब्दो यथार्थे, आङ्-अभिविधौ, याथातथ्येनाभिविधिना वा यत् ख्यातं-कथितं अकषायं चारित्रम् । प्रज्ञा० ६८ । यथाख्यातम्-अकषायमित्यर्थः । विशे० ५४७ । यथाख्यातं-सूक्ष्मसम्परायानन्तरं सर्वत्र साधुजीवलोके ख्यातं-प्रसिद्धं, पञ्चमं सर्वविशुद्धं चारित्रम् । विशे० ५५५ । यथाख्यातं-यथैवाख्यातम्-अकषायम् । आव० ७८ । यथैवाख्यातं-यथाख्यातं प्रसिद्धं सर्वस्मिन् जीवलोके, अकषायचारित्रमिति । आव० ७९ ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अथशब्दो यथार्थः, आख्यातं-अभिहितं अथाख्यातम्। ठाणा० ३२४।

अहक्खित्तो । नि० चू० प्र० १६४ अ।

अहगुरु-येन प्रव्राजितो यस्य वा पार्श्वे अधीतः, रत्नाधिकतरकः। व्य० द्वि० ३९५ अ।

अहछंदो-यथाछन्दः, यथैच्छयैवागमनिरपेक्षं प्रवर्त्तते यः। आव० ५१८।

अहछंदिया-अथाछन्दिका, अव्यापारिता, स्वयं प्रवृत्ता। बृ० द्वि० २६१ अ।

अहण्णे-अधन्यः। उत्त० ३२९।

अहतहं-यथातथं, सूत्रकृताङ्गाद्यश्रुतस्कन्धे त्रयोदशमध्ययनम्। आव० ६५१। सूत्रकृताङ्गस्य त्रयोदशमध्ययनम्। उत्त० ६१४।

अहतानि । भग० ५०६।

अहत्ता-अधस्ता, गुरुपरिणामता। प्रज्ञा० ५०४। भग० २३। जघन्यता। भग० २५३।

अहत्थे-यथास्थान्, यथावस्थितान् यथार्थान् वा-यथाप्रयोजनान् भावान् जीवादीन्, यथा द्रव्यान्, पर्यायान्। ठाणा० ३५१।

अहप्पहाण-यथाप्रधानः। भग० ६७९, ६८३। यथाप्रधानः, यो यत्र ग्रामादौ प्रधानः। ओघ० ५९।

अहमं-अधमम्, जघन्यम्। आव० ५८५।

अहमंती-अहं अंता इति अन्तो-जात्यादिप्रकर्षपर्यन्तोऽस्यास्तीत्यन्तः अहमेव जात्यादिभिरुत्तमतया पर्यन्तवर्त्ती। ठाणा० ४७३।

अहमिंदा-अहमिन्द्राणि, अहं अहं इत्येवमिन्द्राः। सम० ४३।

अहमो-अधमः, मलाविलत्वाज्जुगुप्सितः। सूत्र० ८२।

अहम्म-अधर्मः, असंयमः। दश० २७१। धर्मविपक्षः-पापम्। उत्त० २७४। धर्मप्रतिपक्षः। उत्त० २४८। अधर्म्मः, अधर्मपोषकं दानं अधर्मकारणत्वात्। ठाणा० ४९६। भारहरामायणादिपावसुतं। नि० चू० द्वि० ४ आ। धर्मविपक्षं विषयासक्तिरूपम्। उत्त० २८५।

अहम्मक्खाई-अधर्माख्यायिनः, न धर्ममाख्यान्तीत्येवंशीलाः, न धर्मात् ख्यातिर्येषां ते। भग० ५६०।

अहम्मखाई-अधर्माख्यायी, अधर्मभाषणशीलः। अधर्मख्यातिः-अधार्मिकप्रसिद्धिको वा। विपा० ४८।

अहम्मजुत्तं-अधर्मयुक्तम्, पापसम्बद्धम्। दश० ५२।

अहम्मपलज्जणे-अधर्मप्ररञ्जनः, अधर्मे हिंसादौ प्ररज्यते अनुरागवान् भवतीति। विपा० ४८।

अहम्माणी-अहंमानी, अहमेव विद्वान् इति मानोऽस्येति। आव० २४१।

अहम्माणुए-अधर्मानुगः, अधर्मान्-पापलोकान् अनुगच्छतीति। विपा० ४८।

अहम्मिट्ठा-अधर्मीष्टा अधर्मिष्ठा वा-धर्म्मः-श्रुतरूप एवेष्टो-वल्लभः पूजितो वा येषां ते धर्मेष्टाः, धर्मिणां वेष्टा धर्मीष्टाः अतिशयेन वा धर्म्मिणो धर्मिष्ठाहतन्निषेधादधर्मेष्टाः अधर्मीष्टा अधर्मिष्ठा वा। भग० ५६०।

अहम्मिट्ठे-अधर्मिष्ठः, अतिशयेनाधर्मो-धर्मरहितः। विपा० ४८। अधर्मेष्टः, अधर्मो-धर्मविपक्षः-पापमिति स इष्टः-अभिलषितोऽस्येति, यद्वा अधर्मगुणयोगादधर्मः, अतिशयेनाधर्मः। उत्त० २७४।

अहम्मियं-आधार्मिकं-अधार्मिकाणामिदम्। प्रश्न ११०।

अहय-अहतम्, मलमूषिकादिभिरनुपदूषितं, प्रत्यग्रमिति। औप० ६६। अव्यवच्छिन्नम्। औप० ७४। अपरिमलितम्। जीवा० २५४। तंतुग्गतं। नि० चू० प्र० २५३ अ। आख्यानकप्रतिबद्धम्, अव्याहतं, नित्यं, नित्यानुबन्धि वा। जीवा० २१७। प्रज्ञा० ८९। जं० प्र० ६३। अव्याहतम्। भग० १५४। सूर्य० २६७। अपरिभुक्तम्। भग० २५४।

अहर-अधरम्, अधः-नरकतिर्यक्। दश० २७२। नरकः। आव० ५३२।

अहरगतिगमणं-अधरगतिगमनम्, अधोगतिगमनकारणम्। प्रज्ञा० ३६८।

अहराई-अहोरात्रिकी। आव० ६४८।

अहव-अथवा-अथार्थे। विशे० ११३०।

अहवण-अथवा। बृ० द्वि० १४ आ। विकल्पप्रदर्शने। नि० चू० प्र० २९० अ। विकल्पार्थो निपातः। बृ० द्वि० २४६ आ।

अहवा-अनन्तरम्। नि० चू० प्र० १८ आ। अयं निपातः। नि० चू० प्र० १६८ आ।

अहव्वणवेद-अथर्वणवेदः, चतुर्णां वेदानां चतुर्थः वेदः। भग० ११२।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अहसंथडं-निष्प्रकम्पं चम्पकपट्टादि। बृ० तृ० ३१ अ।
अहसिता-न सहेतुकमहेतुकं वा हसन्नेवास्ते। उत्त० ३४५।
अहसुद्धो-यथाशुद्धः, निर्दोषोपदेशदाता। बृ० तृ० ७१ आ।
अहस्सिरे-अहसनशीलः। उत्त० ३४५।
अहस्ससच्चे-अहास्यात्सत्यः, हास्यपरित्यागात्सत्यः, द्वितीयव्रतस्य प्रथमा भावना। आव० ६५८।
अहाअत्थं-यथार्थम्-निर्युक्त्यादिव्याख्यानानतिक्रमेणेत्यर्थः। ठाणा० ३८८। अर्थस्य निर्युक्त्यादेरनतिक्रमेण। ठाणा० ५१९।
अहाउअकाल-यथायुष्ककालः, देवाद्यायुष्कलक्षणः। दश० ९।
अहाउनिव्वत्तिकाले-यथायुर्निर्वृत्तिकालः, यथा-येन प्रकारेणायुषो निर्वृत्तिः-बन्धनं, तथा यः कालः-अवस्थितिरसौ। भग० ५३३।
अहाउयं-यथायुष्कम्, यथाबद्धमायुष्कम्। प्रश्न० १९। यथायुष्कम्। आव० ११५, २५८। यथायुः-आयुषोऽनतिक्रमेण। उत्त० १८८।
अहाकडं-यथाकृतम्, गृहस्थेन स्वार्थं निर्वर्त्तितम्। प्रश्न० १२७।
अहाकडा-आधाकृता, साधूनाधाय-सम्प्रधार्य कृता। बृ० प्र० ९२ अ।
अहाकप्पं-यथाकल्पम्, प्रतिमाकल्पानतिक्रमेण तत्कल्पवस्त्वनतिक्रमेण वा। भग० १२४। कल्पनीयानतिक्रमेण प्रतिमासमाचारानतिक्रमेण वा। ठाणा० ३८८।
अहाकम्मं-यथाकर्म, बद्धकर्मानतिक्रमेण। भग० ६५।
अहाकम्मिए। भग० ४६६।
अहागडा-प्राशुकानि, अल्पपरिकर्माणि। ओघ० ९२।
अहागडे-यथाकृतम्, आत्मार्थमभिनिर्वर्त्तितम्। दश० ७२।
अहाचरा-अधश्चराः-बिलवासित्वात्सर्पादयः। आचा० २९१।
अहाच्चयं-दृष्टिवादे सूत्रभेदः। सम० १२८।
अहाच्छंदे-यथाछन्दान्, स्वच्छन्दान्। ओघ० ५६।
अहाछंद-यथाछन्दाः-यथा कथञ्चिन्नागमपरतन्त्रतया छन्दः-अभिप्रायो-बोधः। भग० ५०२। यथा स्वाभिप्रेतं तथा प्रज्ञापयन्। नि० चू० द्वि० २३ आ।
अहाजातो-अप्पोवधी। नि० चू० द्वि १३१ आ।
अहाजायं-रजोहरणमुखवस्त्रिकाचोलपट्टयुतः रचितकरपुटश्च। बृ० तृ० १० आ।
अहाडं-यथाकृतम्, परिकर्मशून्यं। बृ० द्वि० २०२ आ।
अहाणी-असीयणं। नि० चू० प्र० ५ आ।
अहातच्चं-यथातत्त्वम्, तत्त्वानतिक्रमेण वर्त्तमानम्। भग० १२४। सप्तसप्तमिकेत्यभिधानार्थानतिक्रमेणान्वर्थसत्यापनेनेत्यर्थः। ठाणा० ३८८। शब्दार्थानतिक्रमेण। ठाणा० ५१९।
अहातच्चे-यथातथ्यो यथातत्त्वो वा, यथा-येन प्रकारेण तथ्यं-सत्यं तत्त्वं वा। भग० ७०९।
अहातच्चो-जहेव दिट्ठो तहेव जो भवति सो अहातच्चो भवति। नि० चू० द्वि० ८६ अ।
अहापज्जत्तं-यथापर्याप्तम्। भग० १३९।
अहापडिरूवं - यथाप्रतिरूपम्। आव० १९९। भग० ६६१।
अहापदं-यथापदम्। आव० ३५२।
अहापरिग्गहिए-यथाप्रतिगृहीतम्, यथाप्रतिपन्नम्। भग० १३६।
अहापरिन्नायं-यावन्मात्रं क्षेत्रमनुजानीषे तावन्मात्रं कालं तावन्मात्रं च क्षेत्रमाश्रित्य वयं वसाम इतियावत्। आचा० ४०३।
अहापवत्तं-यथाप्रवृत्तम्। आव० ११५।
अहाबायरा-यथाबादराः, यथोचितबादरा आहारपुद्गला इत्यर्थः। भग० १८९। यथाबादराणि, स्थूलतरस्कन्धान्यसाराणि। भग० २५१।
अहाबायरे-यथाबादरम्, स्थूलप्रकारम्। भग० २५१। असारम्। भग० १५४।
अहाभद्दगो-यथाभद्रकः। आव० ७३९।
अहाभद्दे-यथाभद्रः, शासनबहुमानवान्। बृ० प्र० ३३ अ।
अहाभद्दो-दाणरुयी। नि० चू० प्र० १९९ आ। दंसणविरहितो अरहंतेसु तस्सासणे साधू उभयभद्दसीलो। नि० चू० प्र० ३२५ अ।
अहाभावो - स्वपरिग्रहे धारणम्। बृ० द्वि० २४ आ। अधाप्रवृत्ति। नि० चू० प्र० २५१ आ। प्रतिस्वामितं-प्रतिगृहीतं न तु भुज्यते यत्पात्रादि। बृ० द्वि० २८६ आ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अहामग्गं-यथामार्गम्, ज्ञानादिमोक्षमार्गानतिक्रमेण क्षायोपशमिकभावानतिक्रमेण वा वर्त्तमानम्। भग० १२४। मार्गः-क्षायोपशमिको भावस्तदनतिक्रमेण। ठाणा० ३८८।

अहारिणो-मनसोऽनिष्टाः। आचा० २४२।

अहारियं-यथारीतम्, रीतं-रीतिः-स्वभावः, तस्यानतिक्रमेण वर्तते तत्, यथास्वभावमित्यर्थः। भग० २१२। यथाऽऽर्यम्। आचा० ३७९। यथाऋजु। आचा० ३८१।

अहालंदं - मध्यममष्टपौरुषीमानम्। बृ० तृ० ३५ आ। पोरिसी। नि० चू० तृ० १८ अ। जघन्येन तरुणीदकार्द्रकरशोषकालः, उत्कृष्टतः पूर्वकोटी। बृ० द्वि० ३२ आ। संजोगवर्जिते तृतीयभेदः। नि० चू० प्र० २३९ अ। यावन्मात्रं कालं भवाननुजानाति। आचा० ४०३।

अहालहुस्सए-स्तोकप्रायश्चित्तदानम्। बृ० तृ० २०९ आ।

अहालहुस्सगाइं-यथालघुस्वकानि, 'यथे'ति-यथोचितानि लघुस्वकानि-अमहास्वरूपाणि, महतां हि तेषां नेतुं गोपयितुं वाऽशक्यत्वादिति यथालघुस्वकानि, अथालघूनि-महान्ति वरिष्ठानीति वृद्धाः। भग०।

अहावच्चा-यथापत्यानि, पुत्रस्थानीयाः। भग० १९७।

अहासंथडं-णिप्पकंपं पट्टं। नि० चू० प्र० १७० अ।

अहासंथडा-अचला। नि० चू० प्र० १६० आ।

अहासच्चं-यथासत्यम्, इदं यन्मया कथितं कथ्यमानं च तद्यथासत्यम्, याथातथ्यम्। आचा० १८३।

अहासन्निहिआ-यथासन्निहिताः। आव० १७५।

अहासम्मं-यथासाम्यम्, समभावानतिक्रमेण वर्त्तमानम्। भग० १२४।

अहासुत्तं - यथासूत्रम्, सूत्रानतिक्रमेण। ठाणा० ३८८। सामान्यसूत्रानतिक्रमेण वर्त्तमानम्। भग० १२४।

अहासुहुमणियंठो -- यथासूक्ष्मनिर्ग्रन्थः, यथासूक्ष्म एतेषु सर्वेषु। उत्त० २५७।

अहासुयं-यथाश्रुतं यथासूत्रं वा। आचा० ३०१।

अहासुहुमकसायकुसील-कषायकुशीलस्य पञ्चमो भेदः। भग० ८९०।

अहासुहुमपुलाए-पुलाकस्य पञ्चमो भेदः। भग ८९०। यथासूक्ष्मपुलाकः, पुलाकस्य पञ्चमो भेदः। पञ्चस्वपि पुलाकेषु यः स्तोकं स्तोकं विराधयति सः। उत्त० २५६।

अहासुहुमबउस-बकुशस्य पञ्चमो भेदः। भग० ८९०। उत्त० २५६। यथासूक्ष्मबकुशः, योऽक्ष्णोः पुष्पिकामपनयति, शरीराद्वा धूल्यादिकमपनयति। उत्त० २५६।

अहासुहुमे-यथासूक्ष्मान् सारान्। भग० १५५।

अहि-सर्पः, पृथिव्याश्रितो जीवविशेषः। आचा० ५५। सर्पः। उत्त० ६९९। उरःपरिसर्पभेदः। सम० १३५। परिसर्पविशेषः। प्रज्ञा० ४५।

अहिंडंतओ-अहिण्डमानः, असहिष्णोर्द्वितीयभेदः। आव० ८५८।

अहिंसा-अनुकम्पा। प्रश्न० १०३। प्राणातिपातविरतिः। दश० २१।

अहिअ-अधिकम्, अहितम्, अपथ्यम्। जं० प्र० १६७।

अहिअगामिणिं - अहितगामिनीम्, उभयलोकविरुद्धाम्। दश० २३५।

अहिउत्थ-अभ्युषितः। उत्त० १२०।

अहिकरणं-अधिकरणम्, गन्त्रीयन्त्रकादिः। भग० १३५।

अहिकरणकरो - अधिकरणकरः, योऽन्येषां कलहयति, द्वादशमसमाधिस्थानम्। आव० ६५३।

अहिकरणोईरण-अधिकरणोदीरणः, योऽन्येषां यन्त्रादीन्युदीरयति, त्रयोदशमसमाधिस्थानम्। आव० ६५३।

अहिकिच्च-अधिकृत्य-आश्रित्य। भग० २४।

अहिक्खेव-अधिक्षेपः, निन्दाविशेषः। प्रश्न० ४१।

अहिगमरुइ-अधिगमरुचिः, विशिष्टं परिज्ञानं तेन रुचिर्यस्यासौ। प्रज्ञा० ५८।

अहिगमास-अधिकमासः। दश० २७०।

अहिगमो-अधिगमः, विशिष्टं परिज्ञानम्। प्रज्ञा० ५०। ज्ञानम्। आव० ५३०। अभिगमः-सेवा। सम० ५३।

अहिगरणं-अधिकरणम्, कलहः। सूत्र० ६६। बृ० तृ० १५२ आ। कूटपाशरूपम्। भग० ९३। अधिक्रियते आत्मा नरकादिषु येन तदधिकरणं-अनुष्ठानं बाह्यं वा वस्तु चक्रमहादि। आव० ६११। कलहः यन्त्रादि वा। आव० ६५४। ज्योतिषादि। आव० ६६२। अनुष्ठानविशेषः, बाह्यं वा वस्तु चक्रखड्गादि। भग० १८१। अनुष्ठानं बाह्यं वा वस्तु। ठाणा० ४१। वास्तुदूषलशिलापुत्रकगोधूमयन्त्रकादि। आव० ८३१। रात्रिः। ओघ० १८२।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अहिगरणकिरिया – अधिकरणक्रिया, दुर्गतौ ययाऽधिक्रियन्ते प्राणिनः सा। प्रश्न० ३७।

अहिगरणि–अधिकरणिः, सुवर्णकारोपकरणम्। जं० प्र० २२६।

अहिगरणिए–अधिकरणकरं–कलहकरम्। आचा० ४२५।

अहिगरणिया–अधिकरणिकी–अधिक्रियते नरकादिष्वात्माऽनेनेति अधिकरणं–अनुष्ठानविशेषः बाह्यं वा वस्तु चक्रखड्गादि, तत्र भवा तेन वा निर्वृत्ता, क्रियाभेदविशेषः। भग० १८१। अधिक्रियत आत्मा नरकादिषु येन तदधिकरणम्–अनुष्ठानं बाह्यं वा वस्तु चक्रमहादि, तेन निर्वृत्ता क्रिया। आव० ६११। सम० १०।

अहिगरणी–अधिकरणी, यत्र लोहकारा अयोघनेन लोहानि कुट्टयन्ति। भग० २५१।

अहिगरणे–अधिकरणसिद्धान्तः। बृ० प्र० ३१ आ।

अहिगारनिउत्तो–अधिकारनियुक्तः। आव० ७३८।

अहिगारो–अधिकारः, प्रयोजनं, प्रस्तावः। आव० २७६। विशे० ८५९। ओघतः प्रपञ्चप्रस्तावरूपः। दश० २७८। आ–अध्ययनपरिसमाप्तेर्योऽनुवर्त्तते स। दश० १३। नियोगः। प्रश्न० ६६। प्रयोजनम्। दश० १३५। व्य० प्र० ४ अ। तृप्तिः। उप० मा० गा० ३७१।

अहिगरणिता – अधिकरणिकी–खड्गादिनिर्वर्त्तनी। ठाणा० ३१७।

अहिछत्ता – अहिच्छत्रा – नगरीविशेषः। उत्त० ३७९। पार्श्वनाथस्य धरणेन्द्रमहिमास्थानम्। आचा० ४१८। जङ्गलेषु जनपदेष्वार्यक्षेत्रम्। प्रज्ञा० ५५। सङ्गपरिहरणविषये पुरी। आव० ७२३।

अहिजुंजिय–अभियुज्य, वशीकृत्य, आश्लिष्य वा। भग० १३२।

अहिज्ज–अधील्य। उत्त० ३६२।

अहिज्जिउं–अध्येतुम्, पठितुम्, श्रोतुं, भावयितुम्। दश० १३८।

अहिट्ठए–अधिष्ठाता, तपःप्रभृतीनां कर्त्ता। दश० २३८। अधितिष्ठति यथावत् करोति। दश० २५६।

अहिट्ठग–अधिष्ठाता, कर्त्ता। दश० २०६।

अहिट्ठाणं–अधिष्ठानम्, अपानप्रदेशः। आव० ४१९।

अहिट्ठाणजुद्धं–अधिष्ठानयुद्धम्। आव० ९८।

अहिट्ठित्तए–अधिष्ठातुम्–परिभोक्तुम्। बृ० द्वि० २१८ अ।

अहिट्ठित्ता–अधिष्ठाय, आरोहणं कृत्वा। दश० ६१।

अहिठाणि–अधिष्ठाने, अपानप्रदेशे। ओघ० ६९।

अहित–अनुचितविधायी। बृ० प्र० २१४ अ। अपथ्यम्। उत्त० २७६।

अहितुंडए–आहितुण्डिकः, गारुडिकः। दश० ३७।

अहिनंदइ – अभिनन्दति, बहु मन्यते। आव० ५९०।

अहिन्नायदंसणे–अभिज्ञातदर्शने–सम्यक्त्वभावनया भावितः। आचा० ३०४।

अहिमडे–अहिमृतः, मृताहिदेहः। जीवा० १०६।

अहिमन्त्र–मन्त्रसाधनोपायशास्त्राणि। सम० ४९।

अहिमर–अभिमरः, अभिमुखमाकार्य मारयति म्रियते वेति। ओघ० १८। राजादिघातकः। विशे० ७४७। त्रिशे० ९७१। अभिमुखं परं मारयति यः सः। प्रश्न० ४६।

अहिमरका–घातकाः। बृ० द्वि० ८२ आ।

अहिमार–अभिमारः, वृक्षविशेषः। उत्त० १४३।

अहिमासयम्मि–अधिकमासे। आव० ५५७।

अहियं–अधिकं, अहितं वा अधिकं, अपथ्यं वा। भग० ३०६। अर्गलम्। उत्त० ६२३। अर्गलं, शीघ्रतरम्। उत्त० ७। अतिशयेन। जीवा० २२९। जीवा० ३५५। अहितम्, अश्रेयः। आचा० ३८।

अहियपिच्छणिज्जं–अधिकप्रेक्षणीयम्। आचा० ४२३।

अहियाते–अहिताय, अपथ्याय। ठाणा० १४९। अपायाय। ठाणा० २९२। अपथ्याय। ठाणा० ३५८।

अहियासपज्जा–अभिसहेत्, वर्त्तयेत्, पालयेत्। सूत्र० १६४।

अहियासणा–अभिसहना, उपसर्गसहनम्। आव० ६६०। अतिसहना। आव० ७९९।

अहियासेत्तए–अध्यासितुम्। दश० ९३।

अहियासेमि – अध्यासयामि–वेदनायामवस्थानं करोमि। ठाणा० २४७।

अहियोगो–अभियोगः, बलात्कारः। बृ० तृ० २७ अ।

अहिराया–अभिराजा, मौलः पृथिवीपतिः। बृ० तृ० ४ अ।

अहिरिक्कं–उत्त्रासनम्। व्य० प्र० १४९ अ।

अहिरीमाणा–अह्रीमनसः–अलज्जाकारिणः। आचा० २४१।

अहिर्बुध्न–उत्तरभाद्रपदादेवता। जं० प्र० ४९९।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अहिलाणं-मुखसंयमनम्। भग० ४८०, जं० प्र० २६५। औप० ७१। मुखसंयमनविशेषः। जं० प्र० २३५।
अहिलिंति-समागच्छन्ति। बृ० द्वि० १०८ अ।
अहिलोडिया - गोपालिकाख्यो हिंसकजीवः। बृ० तृ० १९० आ।
अहिल्लियाए-अहिल्लिका, मैथुने दृष्टान्तः। प्रश्न० ८९।
अहिवई-अधिपतिः-आचार्यः। ओघ० ७४।
अहिवास-अधिवासः-अवस्थानः। भग० ४७०।
अहिवासिऊण-अधिवास्य। आव० २६१।
अहिसंका-अभिशङ्का, तथ्यनिर्णयः। सूत्र० ३९३।
अहिसक्कणं-उस्सूरे आगच्छंति। नि० चू० प्र० १४२ आ। अभिष्वष्कणं-तस्यैव विवक्षितकालस्य संवर्द्धनं, परतः करणमित्यर्थः। बृ० प्र० २६८ आ।
अहिसरणेहिं-अग्गतो वा सरेति। नि० चू० द्वि० ४९ आ।
अहिसरिया-अभिसृता। आव० ३७२।
अहिसलागा-मुकुलि-अहिभेदविशेषः। प्रज्ञा० ४६।
अहिसेया-अभिसेका, गणावच्छेदिनी। बृ० द्वि० २६३ अ।
अही-अहिः, सर्पः, उरःपरिसर्पविशेषः। जीवा० ३९। प्रज्ञा० ४५। मुकुलि-अहिभेदविशेषः। प्रज्ञा० ४६। सामान्यतः सर्पः। जं० प्र० १२५।
अहीणपडिपुन्नपंचिंदियसरीरं-अहीनप्रतिपूर्णपञ्चेन्द्रियशरीरः, प्रतिपूर्णानि स्वकीयस्वकीयप्रमाणतः, प्रतिपुण्यानि वा-पवित्राणि पञ्चेन्द्रियाणि-करणानि यस्मिंस्तत्तथा, अहीनमङ्गोपाङ्गप्रमाणतः प्रतिपूर्णपञ्चेन्द्रियं प्रतिपुण्यपञ्चेन्द्रियं वा शरीरं। ठाणा० ४५८।
अहीणपुन्नपंचिंदियसरीरं-अहीनानि-स्वरूपतः पूर्णानि सङ्ख्यया, पुण्यानि वा-पूतानि पञ्चेन्द्रियाणि यत्र तत्तथा तदेवविधं शरीरं यस्य स। भग० ५४१।
अहीणो - अहीनः, प्रकृष्टः, अधीनो वा स्वायत्तः। प्रश्न० १३६।
अहीनग्रहणं-समग्रहणम्। व्य० प्र० ८६ आ।
अहीलणिज्जं - अहीलनीयम्, अवज्ञातुमनुचितम्। उत्त० ३६५।
अहुणुव्वासिय-अधुना यदुद्वसितम्। ओघ० ५७।
अहुणोत्तणो-अधुनातनः। आव० ४२१।
अहुणोववन्ने-अधुनोपपन्नः, अचिरोपपन्नः। ठाणा० १८७।
अहुमरेंतो-उपद्रवन्। आव० २७३।
अहे-अधः, आकाशः। सूर्य० ४५। अथशब्दार्थे। बृ० द्वि० १७९ अ। आमन्त्रणार्थो निपातः। भग० ४६०। अथ-आनन्तर्यार्थोऽयं शब्दः। भग० ८३, ८६। गर्त्तायाम्। उत्त० २१३। भूमितले। प्रज्ञा० ८०। अधः। ठाणा० १६२। अथेति परिप्रश्नार्थः। ठाणा० ४०६। अधः-अधस्तात् नीचैः। भग० २६९। अथशब्दश्चेह पदत्रयेऽपि त्रयाणामप्याश्रयाणां प्रतिमाप्रतिपन्नस्य साधोः कल्पनीयतया तुल्यताप्रतिपादनार्थः। ठाणा० १५७। यथार्थः। ठाणा० ३२४। अथशब्दार्थे। बृ० द्वि० १७९ अ। आधाकर्म। बृ० प्र० ८३ अ।
अहेपन्नगद्धरूवो-अधःपन्नगार्द्धरूपः, अधस्तनं यत्पन्नगस्यार्द्धं तस्येव रूपमाकारो यस्य सः, अधःपन्नगार्द्धवदतिसरलो दीर्घश्च। जीवा० २०६। अधः-अधस्तनं यत्पन्नगस्यार्द्धं तस्येव रूपम्-आकारो यस्य सः। जीवा० ३६१।
अहेऊहिं - अहेतुभिः, क्रियावाद्यादिपरिकल्पितकुहेतुभिः। उत्त० ४४९।
अहेवाए-अधोवातः, योऽध उद्गच्छन् वाति वातः सः। जीवा० २९।
अहेविगडे - अधोविकटे-अधः-कुड्यादिरहिते छन्नेऽप्युपरि तदभावेऽपि च। आचा० ३०९।
अहेवियडं-पार्श्वतोऽप्यावृतं गृहम्। बृ० द्वि० १८१ अ।
अहेसणिज्जे - यथाऽसावुद्गमादिदोषरहित एषणीयो भवति तथाभूतो दुर्लभः। आचा० ३७६। यथाऽसौ मूलोत्तरगुणदोषरहितत्वेनैषणीयो भवति, तथाभूतो दुर्लभ इति। आचा० ३६८।
अहेसि-अभूवम्। आव० १४६। अभूत्। उत्त० ४९६।
अहो-अधः, अर्वाक्। आव० ८२७। दीणभावे, विम्हए, आमंतणे य। दश० चू० ९६। उद्गश्रोतोऽनुकूलम्। नि० चू० तृ० ६३ आ।
अहोकायं-अधःकायः पादलक्षणः। आव० ५४७।
अहोत्था-अभूत्। उत्त० ४७५।
अहोधारं-अहतधारा वर्षा। आव० २९१।
अहोधिय - नियतक्षेत्रविषयोऽवधिस्तद्रूपं ज्ञानदर्शनम्। ठाणा० ४७३।
अहोरत्ता-अहोरात्राः-त्रिंशन्मुहूर्त्तप्रमाणाः। ठाणा० ८६।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अहोरत्ते-अहोरात्रम् । भग० ८८८ ।
अहोराइयाभिक्खुपडिमा – अहोरात्रप्रमाणा एकादश भिक्षुप्रतिमा । सम० २१ ।
अहोलोए-अधोलोकः, तिर्यग्लोकस्याधस्ताल्लोकः । प्रज्ञा० १४४ ।
अहोलोयतिरियलोए-अधोलोकतिर्यग्लोकः, यदधोलोकस्योपरितनमेकप्रादेशिकमाकाशप्रदेशप्रतरं यच्च तिर्यग्लोकस्य सर्वाधस्तनमेकप्रादेशिकमाकाशप्रदेशप्रतरम् , एतद्द्वयमपि । प्रज्ञा० १४४ ।
अहोवाए-अधोवातः, अध उद्गच्छन् यो वाति वातः स । प्रज्ञा० ३० ।
अहोविहारो-आश्चर्यभूतो विहारः । आचा० १०७ ।
अहोवेइया – अधोवेदिका, यत्र जान्वोरधो हस्तौ कृत्वा प्रतिलिख्यते सा । ओघ० ११० । जाणू हेट्ठाओ हत्थेसु पडिलेहेति । नि० चू० प्र० १८२ अ ।
अहोसिरा-अधःशिरसः, अधोमुखाः । जं० प्र० १५४ ।

आ

आंगुल-व्याक्षिप्तः । नि० चू० प्र० ३४७ अ ।
आंटरगमादि-वनस्पतिविशेषः । नि० चू० द्वि० १५७ अ ।
आइं-निपातः । भग० ६७५ । विस्मयतश्चर्यन्ते । ठाणा० ५२३ । वाक्यालङ्कारे । भग० १७६ । वाक्यालङ्कारार्थः । प्रश्न० ११७ । अलङ्कारे । प्रश्न० १२६ । वाक्यालङ्कारे, अवधारणे वा निपातः । उपा० २७ । आदिः-धर्मस्य प्रथमा प्रवृत्तिः । जीवा० २५५ । गणितप्रक्रियाया आदिः (अंगांकसंख्यान्यासः)। सूत्र० ९ । यस्मात्परमस्ति न पूर्वम् । अनु० ५४ । स्वभेदः । अनु० ३४ ।
आइंखिणिया-डोम्बी तस्याः कुलदैवतं घंटीकयक्षोनाम स प्रष्टः सन् करणे कथयति, सा च तेन शिष्टं कथितं सदन्यस्मै कथयति, घंटीय सिट्ठं परिकहेइ । बृ० प्र० २१५ अ ।
आइअत्ती-सार्थचिन्तकः । बृ० तृ० २४९ अ ।
आइक(ग)रे-आदिकरः, आदौ-प्रथमतः श्रुतधर्मम्-आचारादिग्रन्थात्मकं करोति-तदर्थप्रणायकत्वेन प्रणयतीत्येवंशीलः । भग० ७ ।
आइक्खंति-आख्यान्ति, सामान्यतः कथयन्ति । भग० ९८ । ईषद् भाषन्ते । ठाणा० १३६ । आचक्षते । आचा० १७८ ।
आइक्खगा-आख्यायकाः, शुभाशुभकथकाः । जं० प्र० १४२ । यः शुभाशुभमाख्याति । प्रश्न० १४१ ।
आइक्खणं-संहितोच्चारणम् । बृ० तृ० २५ अ ।
आइक्खिए-मातंगविद्या यदुपदेशादतीतादि कथयन्ति डोण्ब्यो बधिरा इति लोकप्रतीताः । ठाणा० ४५१ ।
आइगर-आदिकरः, ऋषभनामा भगवान् । उत्त० ६२० ।
आइच्च – आदित्यः, अर्चिमालिविमानवासी द्वितीयो लोकान्तिकदेवः । भग० २७१ । आदित्यमासो येन कालेनादित्यो राशिं भुंक्ते । सम० ५६ । आदित्यः । आव० १३५ । सूर्य० २९२ ।
आइच्चजसाई-आदित्ययशःप्रभृतिः । नन्दी २४२ ।
आइच्चजसे-आदित्ययशा, भरतचक्रिपुत्रः । ठाणा० ४३० ।
आइच्चपेढं-आदित्यपीठम् । आव० १४६ ।
आइच्चसंवच्छरे-आदित्यसंवत्सरः, युगभाविसंवत्सरविशेषः । सूर्य० १६८ । 'पुढविदगाण' मित्यादिलक्षणः संवत्सरविशेषः । सूर्य० १७१ ।
आइज्ज-आदेयः-रम्यः । प्रश्न० ८३ ।
आइज्जा-आदेया, दर्शनपथमुपगता, उपादेया सुभगा च । जीवा० २७१ ।
आइट्ठं-विशिष्टम् । बृ० तृ० ६६ अ । आविष्टा-अधिष्ठिता । ठाणा० ३२८ ।
आइ(य)ड्ढि – आत्मर्द्धिः, आत्मशक्तिः, आत्मलब्धिर्वा । भग० १०७, ४९२ ।
आइणग-चर्ममयं वस्त्रम् । जं० प्र० ३६ । मूषकादिचर्मनिष्पन्नानि । आचा० ३९४ ।
आजिनकं-चर्ममयो वस्त्रविशेषः । भग० ५४० ।
आइण्णं – आकीर्णम्, समन्तान्निक्षिप्तम् । भग० १५३ । सम्बाधनं स्त्रीस्पर्शादिदोषाः । ओघ० ४८ । आचीर्णम् । नि० चू० द्वि० १५७ अ । भावितकुलम् । बृ० प्र० २७० अ ।
आइण्णंतो-प्रोतयन् । आव० ४२७ ।
आइण्णपोग्गलं-जं काकसाणादीहिं अणिवारियविप्पकिण्ण (मांसं) भिज्जति । नि० चू० तृ० ७२ अ ।
आइण्णा-आकुला । नि० चू० प्र० १८६ अ । साधूण कप्पणिज्जा । नि० चू० प्र० १८६ अ । संकुला । आचा० ३३१ ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आइण्णे-षष्ठाङ्गे सप्तदशं ज्ञातम्। उत्त० ६१४। सम० ३६।

आइण्णो-आकीर्णः, गुणैर्व्याप्तः। जीवा० २७०। जात्यः। औप० ७१। खित्तमिव खलियं गुणेहिं जयविजयाईहिं आपूरिओ, अस्सो जातिरेव वा। दश० चू० १६५।

आइद्ध-आरब्धं। (मर०)। आदिग्धः, आलिङ्गितः। प्रश्न० ४१। आविद्धः, प्रेरितः। आव० ६०२।

आइन्नं – आचीर्णम्, आसेवितम्। आचा० ५। आयरियपरंपरएणं वालुंकलाओ आदिण्णं णिम्मीसोवक्खडं आसेवितं तं आइन्नं। नि० चू० द्वि० १५७ आ। आत्मीयात्मीयाऽऽवासमर्यादानुलंघनेन व्याप्ताः। भग० ३७। कल्प्यम्। पिण्ड० १६५। आकीर्णम्-राजकुलसङ्खड्यादि। दश० २८०।

आइन्नवर-जात्यप्रधानः। भग० ३२२, ४८१।

आइन्नसंलिक्खं-रूयादिचित्राकीर्णं। आचा० ३८१।

आइन्ना-आकीर्णानि, गुणवन्ति। जं० प्र० २३२।

आइन्ने-आकीर्णः, आकीर्यते-व्याप्यते विनयादिभिर्गुणैरिति जात्यादिगुणोपेतं। उत्त० ३४९। व्याप्तः। उत्त० ३४८।

आइन्नो-आकीर्णः, सङ्कीर्णः, गुणव्याप्तो मनुष्यजनः। औप० २। विनीतः। उत्त० ४८। आचार्यगुणैराचारश्रुतसंपदादिभिर्व्याप्तः-परिपूर्णः। उत्त० ५५०।

आइमउ-आदिमृदु, प्रथमतः कोमलम्। अनु० १३१।

आइमूलं-वृक्षादिमूलोत्पत्तावाद्यं कारणम्। आचा० ८७।

आइयणं-अदनं, भक्षणम्। आचा० ७२६। व्य० प्र० १८० अ। भोजनम्। बृ० द्वि० १२६ आ। समुद्देशनम्-भोजनम्। बृ० तृ० ४ आ। आपानम्। बृ० द्वि० ३४ अ। ठाणा० ३३१। भूयः प्रत्यापिबति। बृ० तृ० १८५ आ।

आइयंति-आददति, गृह्णन्ति, बध्नन्तीत्यर्थः। ठाणा० ३२०।

आइयति-आदत्ते। उत्त० १९८।

आइलं-आविलम्-गडुलम्। जीवा० ३७०।

आइलचंदसहिय-उद्दिष्टचन्द्रसहितः। सूर्य० २८०।

आइसुए – आदिश्रुतः, सामायिकादिश्रुतः। बृ० प्र० ३८ आ।

आइसुयं-पञ्चमङ्गलम्। बृ० तृ० २४९ आ।

आइस्सइ-आविश्यते-अधिष्ठीयते। भग० ७४९।

आई-आदिः, संसारः, धर्मकारणानां वाऽऽदिभूतं शरीरम्। सूत्र० १६२। सामीप्यम्, व्यवस्था, प्रकारः, अवयवश्च। प्रश्न० ७। निवेशः। औप० ५।

आईए-आतीतः, आ-समन्तादतीव इतो-गतोऽनाद्यनन्ते संसारे। आचा० २८५।

आईणं-आजिनकम्, चर्ममयं वस्त्रम्। जीवा० १९२।

आईणगं-आजिनकम्, चर्ममयं वस्त्रम्। जीवा० २१०। औप० ११। जं० प्र० ५५। जं० प्र० १०७। निरया० १।

आईय-आ-समन्तादतीव इतो-गतोऽनाद्यनन्ते संसारे भ्रमणम्। आचा० २८६।

आईयट्ठे-आ-समन्तादतीव इताः-ज्ञाताः परिच्छिन्ना जीवादयोऽर्था येन सोऽयमातीतार्थः आदत्तार्थो वा, यदिवाऽतीताः-सामस्त्येनातिकान्ता अर्थाः-प्रयोजनानि यस्य स तथा, उपरतव्यापारः। आचा० २८६।

आउ – वैद्यकम्। आव० ६६०। भवस्थितिहेतवः कर्म्मपुद्गलाः। आचा० १०२।

आउंटणं – आकुञ्चनम्, गात्रसङ्कोचलक्षणम्। आचा० ५७४।

आउंटणपसारणं-आकुञ्चनप्रसारणम्। आव० ८५३।

आउंटियं-संकोचितम्। भग० ६३१।

आउ-आयुः, स्थितिः। भग० २३६। उताहो। बृ० प्र० २५० अ। एति-उपक्रमहेतुभिरनपवर्त्यतया यथास्थित्यैवानुभवनीयतां गच्छतीति। उत्त० ३३५। जीवितं। ठाणा० १०८। आयुः, कर्म्मविशेषः। ठाणा० २२०।

आउकाए-अप्कायः, पूर्वसमुद्रः, पश्चिमसमुद्रो वा। सूर्य० ४७।

आउक्खएणं-आयुःक्षयेण, आयुःपूर्णीकरणेन। आचा० ४२१।

आउखेम – आयुःक्षेम-आयुषः सम्यक पालनं। आचा० २९०। जीवितं। आचा० २९१।

आउज्जं-आतोद्यम्, वादित्रं, मृदंगादि। आव० ५२८। पटहभेरीवंशवीणाझल्लर्यादीनि। आचा० ६१।

आउज्जंगं-आतोद्याङ्गम्, आतोद्यकारणम्। उत्त० १४३।

आउज्जिय-आयोगिकः, उपयोगवान्, ज्ञानी। भग० १४०।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आउज्जिया-आयोजिका, आ-मर्यादया केवलिदृष्टया योजनं-शुभानां योगानां व्यापारणम्। प्रज्ञा० ६०४।

आउज्जियाकरणं-आयोजिकाकरणम्। प्रज्ञा० ६०४।

आउज्जीकरणं-आवर्जीकरणम्, उदीरणावलिकायां कर्मप्रक्षेपव्यापाररूपम्। औप० ११०। आवर्जितकरणम्। प्रज्ञा० ६०४।

आउज्जो-आवर्जः, आत्मानं प्रति मोक्षस्याभिमुखीकरणं-आत्मनो मोक्षं प्रत्युपयोजनमिति, अथवा आवर्ज्यते-अभिमुखीक्रियते मोक्षोऽनेनेति वा-शुभमनोवाक्कायव्यापारविशेषः। प्रज्ञा० ६०४।

आउट्ट-आकुट्टम्, आलजालम्। उत्त० १४६। आवर्जितः। बृ० द्वि० ३४ आ।

आउट्टइ-आवर्त्तते, प्रवर्त्तते। भग० २८९।

आउट्टणं-आकम्पनम्। बृ० तृ० ८५ अ।

आउट्टणया-आवर्त्तना, आवर्त्तते-ईहातो निवृत्यापायभावं प्रत्यभिमुखो वर्त्तते येन बोधपरिणामेन सः, तद्भावः, अपायपर्यायः। नन्दी १७६।

आवट्टति-निवर्त्तते। सूत्र० १९०। आवर्त्तते-निवर्त्तते तमालोचयतीत्यर्थः। ठाणा० १३९। करोति। नि० चू० प्र० २५६ अ।

आउट्टा - आराधिता। बृ० द्वि० ११२ अ। आवर्जिता। ओघ० १५९।

आउट्टामो-प्रवर्त्तामहे। आचा० ३३१।

आउट्टावेज्ज-अभिमुखयेत्। आचा० ३६४।

आउट्टिआए-आकुट्या-उपेत्य। सम० ३९।

आउट्टिज्जमाणं -आकोट्यमानम्, सङ्कोच्यमानम्। सूत्र० २९८।

आउट्टि-उपेत्य। व्य० प्र० १६ आ।

आउट्टिय-ज्ञात्वा। आव० ७५८। उत्तमार्थकृतः आहारः। नि० चू० द्वि० ५७ आ।

आउट्टिया-आउट्टिया नाम आभोगो जानान इत्यर्थः। नि० चू० द्वि० ५९ आ। आवर्जिता। बृ० द्वि० १८६ आ।

आउट्टी-समाधानम्। बृ० तृ० ११३ आ।

आउट्टे - कर्तुमभिलषेत्। आचा० ४१७। निवर्त्तयेत्। आचा० १११। आवर्त्तयेत्-अनुकूलयेत्। व्य० द्वि० २८२ आ। आवृत्तः-व्यवस्थितः। आचा० २७९। समन्तात् व्यवस्थितः। आचा० २७९।

आउट्टेउं-आवर्ज्य। बृ० तृ० ३४ अ।

आउट्टो-व्यावृत्तः। उत्त० ३३२। आवर्जितः। हृष्टः। उत्त० ३३२। स्वस्थः। उत्त० ३५५। आव० २२०। उत्त० १०८। आवृत्तः। आव० ५७८, २९४, ५३६ २८७। उत्त० ३२४। आवर्जितः। आव० ४१२।

आउडिज्जमाण-'जुड' बन्धने, इतिवचनाद् 'आजोड्यमानेभ्यः' आसम्बध्यमानेभ्यो मुखहस्तदण्डादिना सह शङ्खपटहझल्लर्यादिभ्यो वाद्यविशेषेभ्य आकुट्यमानेभ्यो वा एभ्य एव ये जाताः शब्दास्ते, आजोड्यमाना आकुट्यमाना एव वोच्यन्ते, अतस्तानाजोड्यमानानाकुट्यमानान् वा शब्दान् शृणोति, इह च प्राकृतत्वेन शब्दशब्दस्य नपुंसकनिर्देशः, अथवा आकुट्यमानानि-परस्परेणाभिहन्यमानानि। भग० २१६।

आउडेइ-आजुडति, सम्बद्धं करोति, लिखति। जं० प्र० २५०। आकुट्टयति, ताडयति। जं० प्र० २२४। आकुट्टयति। भग० १७३।

आउत्त-आयुक्तम्, उपयोगपूर्वकम्। भग० १८४। सम्यक् प्रवचनमालिन्यादिरक्षणतया। प्रज्ञा० २६८। उपयुक्तः। ठाणा० ४०९। प्रयत्नपरो मरणाराधनयुक्तः। उपयुक्तः। ओघ० २०२। उपयोगतत्परम्। ओघ० १७६। आयुक्तः। व्य० द्वि० २६६ अ।

आउत्तगो-आवर्त्तकः। उत्त० ३०४।

आउत्तियं-आयुक्तिकम्। उत्त० ११९।

आउत्तो-आयुक्तः, व्यवस्थितः। दश० २२६।

आउय-आयुष्कम्, जीवितम्। आव० ३४१। आयुष्ककालः, देवाद्यायुष्कलक्षणः। आव० २५७।

आउयकम्मस्स गालणा-आयुःकर्मणो गालनं, प्राणवधस्य द्वादशः पर्यायः। प्रश्न० ५।

आउयकम्मस्स णिट्ठवणं-आयुःकर्मणो निष्ठापनम्, प्राणवधस्य द्वादशः पर्यायः। प्रश्न० ५।

आयुकम्मस्स भेय - आयुःकर्मणो भेदः, प्राणवधस्य द्वादशः पर्यायः। प्रश्न० ५।

आउयकम्मस्स संवट्टगो-आयुःकर्मणः संवर्त्तकः, प्राणवधस्य द्वादशः पर्यायः। प्रश्न० ५।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आउयकम्मस्सुवद्दवो-आयुःकर्मण उपद्रवः, प्राणवधस्य द्वादशः पर्यायः। प्रश्न० ५।

आउयबंधद्धा-आयुर्बन्धाद्धा। प्रज्ञा० ४८९।

आउयसंवट्टए-आयुःसंवर्तक-आयुरुपक्रमः। ठाणा० ६७।

आउर-आतुरः, शरीरसमुत्थेनागन्तुकेन वा व्रणेन ग्लानः। दश० २७०। क्षुधा पिपासया वा पीडितः। व्य० प्र० २३ आ। दृष्टान्तः। नि० चू० प्र० २०२ आ। आतुरः, क्वचिदपि स्वास्थ्यमलभमानः सन् आकुलः। जीवा० १२२। आतुरः-दुस्थः। भग० ७०५। ग्लाने सति प्रतिजागरणार्थं (प्रतिसेवा)। ठाणा० ४८४। अत्यन्ताकुलतनुः। उत्त० ८६। कामेच्छाऽन्धाः। आचा० २३८। प्रतिसेवनाभेदः। भग० ९१९। आतुरः, चिकित्साया अविषयभूतः। विपा० ७६। चिकित्साया अविषयभूतो रोगी। बृ० प्र० २८१ आ। मर्त्तुकामः। उत्त० २७३।

आउरपच्चक्खाण - नोपूर्वश्रुतप्रत्याख्यानभेदः। विशे० १३२०। प्रकीर्णकनाम। आव० ८०४। श्रुतप्रत्याख्यानम्। आव० ४७९। अस्वास्थ्यमनाः। आचा० ७२। आतुरः-चिकित्साक्रियाव्यपेतः तस्य प्रत्याख्यानवर्णनम्। नंदी २०६। अपूर्वश्रुतप्रत्याख्यानम्। आव० ४७९।

आउरसरणं-आरोग्यसाला। दश० चू० ५१।

आउरस्सरण-आतुरशरणम्, दोषातुराश्रयदानम्। दश० ११८। आतुरस्मरणम्, क्षुधाद्यातुराणां पूर्वोपभुक्तस्मरणं चानाचरितम्। दश० ११७।

आउरीभूएहिं-आकुलीभूतैः, आतुरीभूतैः। बृ० प्र० ३९अ।

आउल-आकुलम्। व्यग्रम्। आव० ५८५। प्रचुरम्। भग० ९१। आकुलः, स्कंधः। विशे० ४२६। गड्डुलं, आविलं वा। सम० ५३।

आउलगमणं-आकुलगमनं-एकत्र मिलिता गच्छन्ति। ओघ० १२६।

आउलमाउलं-आकुलाकुलम्, स्त्र्यादिपरिभोगविवाहयुद्धादिसंस्पर्शननानाप्रकारम्। आव० ५७४।

आउला-आकुला, त्वरमाणा। बृ० द्वि० ६५ अ।

आउलाकुल-आकुलाकुलः, अतिव्याकुलः। प्रश्न० ५०।

आउली-तडवडावृक्षः। जीवा० १९१।

आउलो-आकुलः, अभिभूतः। आव० ५८९।

आउसं - आयुः-जीवितं तत्संयमप्रधानतया प्रशस्तं प्रभूतं वा विद्यते यस्यासावायुष्ममांस्तस्यामन्त्रणम्। ठाणा० ७।

आउसंत-आयुष्मान्, चिरजीवी। दश० १३७। आवसन् गुरुमूलमावसन् वा। दश० १३७।

आउसंतेणं-आजुषमाणेन, श्रवणविधिमर्यादया गुरून् सेवमानेन। उत्त० ८०। भगवतेत्यस्य विशेषणमायुष्मता-चिरजीवितवता। सम० २। श्रवणविधिमर्यादया गुरूनासेवमानेन। ठाणा० ९। आयुष्मदन्ते, आयुष्मता। नंदी २१२। आजुषमाणेन-प्रीतिप्रवणमनसा। सम० २। हे आयुष्मन्। सम० २। नंदी २१२। आमृशता-गुरुक्रमयुगलं संस्पृशता। सम० २। गुरुमूलमावसता। दश० १३७। आवसता गुरुकुले। सम० २। आयुष्मन्, शिष्यामन्त्रणम्। उत्त० ८०।

आउसंवट्टणं आयुरुपक्रमः। नि० चू० प्र० २७४ अ।

आउसणाहिं - आक्रोशना मृतोऽसि त्वमित्यादिभिर्वचनैः। भग० ६८३।

आउसेइ-आक्रोशयति, शपति। भग० ६८३।

आउसो-आयुष्मन्, पुत्रादेरामन्त्रणम्। भग० १३५।

आउस्स-आक्रोशः, असभ्यवचनरूपः। सूत्र० ९३।

आउस्सियकरणं - आवश्यककरणम्, आवर्जिकरणम्। प्रज्ञा० ६०४।

आउहं-आयुधम्, क्षेप्यं शस्त्रम्। प्रश्न० ४७। अक्षेप्यम्। विपा० ४६। खेटकादि। जीवा० २५९। क्षेप्यास्त्रम्। भग० १९४। शस्त्रम्, अथवाऽऽयुधं-अक्षेप्यशस्त्रं खड्गादि। भग० ३१८।

आउहसाला-आयुधशाला-शस्त्रागारम्। आव० १४८।

आऊ-आयुः, एति-आगच्छति प्रतिबन्धकतां स्वकृतकर्मबद्धनरकादिकुगतेर्निष्क्रमितुमनसो जन्तोरिति। अथवा आ-समन्तादेति-गच्छति भवाद् भवान्तरसङ्क्रान्तौ विपाकोदयमिति वा। प्रज्ञा० ४५४।

आए-अनन्तकायः-कुहणविशेषः। प्रज्ञा० ३३। आत्मना। ठाणा १३९।

आएस-प्राघूर्णकः। ओघ० ६७। निर्देशः। नि० चू० प्र० १९ आ। प्राघूर्णक आयातः। ओघ० १०१। आज्ञा। नि० चू० प्र० २८५ आ। आदेश-कृत्रिमकृत-भ्रूकुटीभंगादयः। आचा० ९१। प्राघूर्णकः। आचा०

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१२९, ३५२। कर्मकरादिः। आचा० ४१५। व्यापारनियोजना। आचा० ३१८। दृष्टांतः। आचा० २६२। आदिश्यते इत्यादेशः आचार्यपारम्पर्यश्रुत्यायातो वृद्धवादो, यमैतिह्यमाचक्षते। आचा० २६२। वृद्धवादः। आचा० २६३। प्राघूर्णकः। ठाणा० १३८। उपचारो, व्यवहारः (देशे प्रधाने च)। ठाणा० २२३। एतद्भविष्यतीत्यादिनिर्णयः। उप० मा० गा० ११५। आदेशः, विशेषः, आङिति मर्यादया विशेषरूपानतिक्रमात्मिकया दिश्यते-कथ्यत इति। उत्त० ३२। प्राघूर्णकसाधुः। आव० २६३। प्राघूर्णकः। ओघ० १८३। आदेशः-प्रकारः सामान्यविशेषरूपस्तत्र चादेशेन-ओघतो द्रव्यमात्रतया न तु तद्गतसर्वविशेषापेक्षयेतिभावः, अथवा आदेशेन-श्रुतपरिकर्मिततया। भग० ३५७। आदेशः, कथनम्। उत्त० १४७। संखडिविषयो दृष्टान्तः। बृ० द्वि० १३५ आ। उपचारः। विशे० १३१५। प्राघूर्णकः। नि० चू० प्र० १४ आ। पाहुण्णकं। नि० चू० प्र० २९३ आ। प्राघूर्णकः। बृ० द्वि० १९५ अ। प्रायश्चितप्रकारः। बृ० द्वि० ९८ आ। सूत्रमुच्यते। विशे० २३१। आदेशो नाम ज्ञातवस्तुप्रकारः। स च द्विविधः-सामान्यप्रकारो विशेषप्रकारश्च। विशे० २३०। असत्यार्थादेशः। प्रश्न० १७। विध्यन्तरम्। दश० १३। व्यपदेशः। आचा० ७४। अभ्यर्हितः प्राहुणकम्। उत्त० २७२। अधिकारः। बृ० प्र० २७६ आ। प्रकारः। विशे० ९२२। अनुज्ञा। व्य० द्वि० ३४६ अ। उपचारः, व्यवहारः, स च बहुतरे प्रधाने वाऽऽदिश्यते। ठाणा० २२३। नयान्तरविकल्पः। व्य० द्वि० ३५४ आ। आदिश्यते-आज्ञाप्यत इत्यादेशः-कर्मकरादिः। आचा० ४१५।

आएसणं-आवेशनं, अयस्कारकुंभकारादिस्थानम्। औप० ६१।

आएसणाणि - आदेशनानि-लोहकारादिशालाः। आचा० ३६६।

आएसपर-आदेशः-कर्मकरादिः स चासौ परश्चादेशपरः। आचा० ४१५।

आएसा-आदेशः, प्रतिवचनमुत्पादव्ययध्रौव्यवाचकं पदत्रयम्। विशे० २९८।

आएसावि-आगमिष्याः। सूत्र० ७६।

आएसियं-आदेशम्, विभागौद्देशिकतृतीयभेदः। पिण्ड० ७९।

आओ-आयः, प्राप्तिः। विशे० ४५०। उताहो। बृ० द्वि० ७ अ। भागः। आव० ३४२। लाभः, उपादानं, हेतुः। विशे० ५४३। ज्ञानादिनामायहेतुत्वादध्ययनम्। ठाणा० ६। भूमिस्फोटकविशेषः। आचा० ५७।

आओग - आयोगः, द्विगुणादिवृद्धया अर्थप्रदानम्। भग० १३५। द्विगुणादिवृद्धयर्थं प्रदानम्। जं० प्र० २३२। अर्थलाभः। औप० १२। अर्थोपायः यानपात्रोष्ट्रमण्डलिकादिः। सूत्र० ४०७। परिकरः। औप० ६३।

आओगपओगसंपउत्ताई आयोगेन - द्विगुणादिलाभेन द्रव्यस्य प्रयोगः-अधमर्णानां दानं तत्र सम्प्रयुक्तानि-व्यापृतानि तेन वा सम्प्रयुक्तानि-सङ्गतानि तानि। ठाणा० ४२२। आयोगो-द्विगुणादिवृद्धयाऽर्थप्रदानं, प्रयोगश्च--फलान्तरं तौ संप्रयुक्तौ-व्यापारितौ यैस्ते। भग० १३५।

आओगपयोगसंपउत्ते -आयोगप्रयोगाः-द्रव्यार्जनोपायविशेषाः संप्रयुक्ताः-प्रवर्तिता येन। ठाणा० ४६३।

आओड़ावेइ-आखोट्यति, प्रवेशयति। विपा० ७२।

आओसे-प्रदोषे। ओघ० ७६।

आओसेज्जा-आक्रोशयेत्। उपा० ४२।

आओहणं-आयोधनम्, (युद्धम्)। ठाणा० ४०२।

आकंदियं-आक्रन्दितम्, ध्वनिविशेषकरणम्। प्रश्न० २०।

आकंपइत्ता-वैयावृत्त्यादिभिः आकम्प्य-आवर्ज्य। ठाणा० ४८४। यदालोचनाऽऽचार्यं वैयावृत्यकरणादिनावर्ज्य यदालोचनम्। भग० ९१९।

आकट्टविकट्टिं-आकर्षवैकर्षिकाम्। भग० ६८५।

आकट्टिं-आकृष्टिं। भग० ६८३।

आकड्डविकड्डिं करेइ-आकट्टविकट्टिं करोति, आकर्षविकर्षिकां करोति। भग० १६७।

आकरणम् - आगरणं, आह्वानम्। ओघ० २०४।

आकाशम् आङिति सर्वभावाभिव्याप्त्या काशत इति। उत्त० ६७२। सर्वभावावकाशनात्, आ-मर्यादया काशन्ते-दीप्यन्ते पदार्थसार्था यत्र तत्। आ-अभिविधिना काशन्ते--दीप्यन्ते पदार्था यत्र तत्। अनु० ७४। आङिति मर्यादया-स्वस्वभावापरित्यागरूपया काशन्ते-स्वरूपेणैः प्रतिभासन्ते तस्मिन्पदार्था इति। उत्त० ६७२। बृ० प्र० ९१ अ।

आकाशगाः - आगासगा, भूतविशेषाः। प्रज्ञा० ७०।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आकासाहि-आकर्षय । आचा० ३७८ ।
आकासिइ-खाद्यविशेषः । जं० प्र० ११८ ।
आकिण्णं-अतिकीर्णं । नि० चू० तृ० १३ अ ।
आकुट्टि-हिंसा । आचा० ३०५ ।
आकुट्टिय-उत्पेत्य । बृ० तृ० १२२ आ ।
आकुल-आकुलः, व्याप्तः । जं० प्र० १८८ ।
आकूतम्-अभिप्रेतम् । विशे० ८८५ ।
आकृष्टिविकृष्टि । व्य० प्र० ९४ आ ।
आकेवलिआ-आकेवलिकाः, न केवलं अकेवलम्, तत्र भवा आकेवलिकाः-सद्वन्द्वाः-सप्रतिपक्षा इतियावत् असम्पूर्णा वा । आचा० २४१ ।
आकोट्टिमं - आकुट्टिकं यथा रूप्यकोऽधस्तादपि उपर्यपि मुखं कृत्वाऽऽकुट्यते । दश० ८६ ।
आकोडनं-आकोटनम्, कुट्टनेनाङ्गे प्रवेशनम् । प्रश्न० ५७ ।
आकोडेमाणे - आउडेमाणे, आकुट्यमानम्, आहन्यमानम् । भग० २५१ ।
आकोसायंतं-आकोशायमानम्, विकचीभवत । जीवा० २७१ । जं० प्र० १११ ।
आक्षोधुका-क्षुधा रहिता । दश० १२७ ।
आख्यातिकम्-क्रियाप्रधानत्वात् धावतीति । अनु० ११३।
आख्यायिकास्थानानि - अक्खाइयठाणाणि, कथानकस्थानानि । आचा० ४१३ ।
आगंतागारं-गामपरिसट्ठाणं, आगंतागारं-बहिया वासो । नि० चू० प्र० १८३ अ । आगन्तुकानां कार्पटिकादीनामगारमागन्तागारम् । सूत्र० ३९३ । ग्रामादेर्बहिरागत्यागत्य पथिकादयस्तिष्ठन्ति । आचा० ३६५ ।
आगंतार-यत्रागारिण आगत्य तिष्ठन्ति तदागन्तुकागारम् । बृ० तृ० ४८ आ । प्रसङ्गायाता आगत्य वा यत्र तिष्ठन्ति तदागन्तारम्, तत्पुनर्ग्रामान्नगराद्वा बहिः स्थानं तत्र । आचा० ३०७ । आगन्तागारम् (धर्मशाला) । आचा० ३०६ । पत्तनाद्बहिर्गृहम् । आचा० ३४८ ।
आगंतु-आगन्तुकः-पथिकादिरगारस्थजनो यत्रागत्य सन्तिष्ठते । बृ० द्वि० १७९ आ ।
आगंतुओ-आगन्तुकः, कण्टकादिप्रभवः । आव० ७६४ ।
आगंतुगो-आगामुकः । आव० २७० । आगंतुएण सत्थातिणाकओ जो सो । नि० चू० प्र० १८८ आ ।

आगंतुय-आगन्तुकः । दश० १०८ ।
आगंतू-आगन्तुकः । उत्त० १९३ ।
आगंपिया-वशीकृता । नि० चू० द्वि० ९७ अ ।
आगइ-आगतिः, प्रत्यावृत्त्या-प्रातिकूल्येनागमनम् । आव० २८१ । प्रज्ञापकप्रत्यासन्नस्थाने आगमनम् । ठाणा० १३३ ।
आगम - आगमनम्-आगमः-आ-अभिविधिना मर्यादया वा गमः-परिच्छेद इति । आव० २६ । आचार्यपारम्पर्येणागतः, आप्तवचनं वा । अनु० ३८ । आगम्यन्ते-परिच्छिद्यन्ते अर्था अनेनेति, केवलमनःपर्यायावधिपूर्वचतुर्दशकदशकनवकरूपः । ठाणा० ३१७ । सूत्रार्थोभयरूपः । आव० ५२४ । आगम्यन्ते-परिच्छिद्यन्ते अर्था अनेन इति आगमः-आप्तवचनसम्पाद्यो विप्रकृष्टार्थप्रत्ययः । ठाणा० २६२ । गुरुपारम्पर्येणागच्छतीति आगमः, आ-समान्ताद्गम्यन्ते-ज्ञायन्ते जीवादयः पदार्था अनेनेति वा । अनु० २१९ । आप्तप्रणीतः । आचा० ४८ । (आगमसिद्धः) । ठाणा० २५ । सूत्रम् । आव० ६०४ । श्रुतपर्यायः । विशे० ४१६ । अध्ययनम् । आव० ३०० । आगमः, प्राप्तिः । दश० १६ । सङ्ग्रहम् । बृ० प्र० ३२ आ । अर्थपरिज्ञानम् । व्य० प्र० २५१ आ । आ-अभिविधिना सकलश्रुतविषयव्याप्तिरूपेण मर्यादया वा यथावस्थितप्ररूपणारूपया गम्यन्ते - परिच्छिद्यन्तेऽर्था येन सः । नंदी २४९ । आगच्छति गुरुपारम्पर्येणेत्यागमः । भग० २२२ । आगमः । विशे० ४३२ ।
आगमकुसला-आगमः-श्रुतिस्मृत्यादिरूपस्तस्मिन् कुशलावागमकुशलौ । उत्त० ५२१ ।
आगमणं-प्रयोजनपरिसमाप्तौ पुनर्वसतिं गमनम् । आव० ५७३ । आकसणं । नि० चू० तृ० ६३ आ ।
आगमणगिहं - सभाप्रपादेवकुलादिपथिकस्थानम् । बृ० द्वि० १७९ आ । आगमनगृहं-सभाप्रपादि, पथिकादीनामागमनेनोपेतं, तदर्थं वा गृहम् । ठाणा० १५७ ।
आगमतः-आगममाश्रित्य (ज्ञानापेक्षयेत्यर्थः) । अनु० १४ ।
आगममाणे - आगमयन्-आपादयन् । आचा० २७८ । २८३ । अवगमयन्, बुध्यमानः । आचा० २४५ ।
आगमववहारी-आगमववहारी,छव्विहे-केवलणाणी ओहीणाणी मणपज्जवणाणी चोद्दसपुव्वी अभिण्णदसपुव्वी णवपुव्वी य । नि० चू० तृ० १०० अ । आगमव्यवहारिणः,

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

व्यवहारपञ्चके प्रथमभेदः। व्य० प्र० ५ अ। प्रत्यक्षज्ञानिनः। व्य० प्र० ६३ अ।

आगमसत्थ-आगमशास्त्रम्, आ-अभिविधिना सकलश्रुतविषयव्याप्तिरूपेण मर्यादया वा यथावस्थितप्ररूपणारूपया गम्यन्ते-परिच्छिद्यन्तेऽर्था येन स आगमः, स चैवं व्युत्पत्त्या अवधिकेवलादिलक्षणोऽपि भवति ततस्तद्व्यवच्छेदार्थं विशेषणान्तरमाह-'शास्त्रे'ति शिष्यतेऽनेनेति शास्त्रमागमरूपं शास्त्रमागमशास्त्रम्। नंदी २४९।

आगमिपल्लगो-ज्ञातः। आव० ३१७।

आगमिओ-आगमितः, ज्ञातः। आव० ४३७।

आगमियं-ज्ञातम्। आव० ११६। ओघ० १०५। ज्ञातः। आव० ३१६।

आगमियाणि-प्राप्तानि, अधीतानि। आव० ४३३।

आगमिस्सं-आगमिष्यम्, आगामि। आचा० १६७।

आगमिस्सभद्दत्ताए - आगमिष्यदिति - आगामिकालभावि भद्रं-कल्याणं यस्मिँस्तथा तस्य भावस्तत्ता तया, यदि वाऽऽगमिष्यतीत्यागमः-आगामी कालस्तस्मिन् शश्वद्भद्रतया-अनवरतकल्याणतयोपलक्षितम्। उत्त० ५८५।

आगमिस्सा-आगामिकालः। आव० ५३२।

आगमेति-जानाति। विपा० ७३।

आगमेयव्वं-आगमयितव्यम्-ज्ञातव्यम्। बृ० प्र० १९२ अ।

आगमेसा-आगमिष्यन्ती। आव० १७४।

आगमेसिभद्दा-आगमिष्यत् भद्रा-द्वितीयभवे अन्तकृतः। उपा० २९।

आगमेस्संति - आगमिस्यामि-गृहीष्यामि। व्य० द्वि० ४१८ आ।

आगमेस्सा-भविष्यतः (मर०)।

आगमेस्साणं-आयत्याम्। आव० ३५८। भविष्यताम्। (महाप्र०)।

आगमोगं-आगमौकः, पथिकाद्यगारिणां स्थानं, तेषां आगमने वा यद् गृहं तत्। बृ० द्वि० १७९ आ।

आगयं-आगतम्-स्वीकृतम्। आचा० १८१।

आगया-आगताः-सिद्धाः। रागद्वेषाभावात् पुनरावृत्तिरहिताः सर्वज्ञाः। आचा० १६७।

आगयपण्हय - आयातप्रश्रवा पुत्रस्नेहादागतस्तनमुखस्तन्येत्यर्थः। भग० ४६०।

आगर - आकर, यत्र संनिवेशे लवणाद्युत्पद्यते। ठाणा० ४४९। उत्पत्तिस्थानम्। (मर०)। अन्त० ७। पृथिव्याद्याकरः। आव० ६२२। लोहाद्युत्पत्तिभूमिः। ठाणा० २९४, ७८६। आकरः, हिरण्याकरादि। प्रज्ञा० ४८। खानिः। प्रश्न० ३८। ओघ० ९। रत्नादीनामुत्पत्तिभूमिः। प्रश्न० १३४। उत्त० ६०५। हिरण्याकरादिकः। जीवा० २७९। लोहाद्युत्पत्तिस्थानम्। प्रश्न० १२७। अनु० १४२। आगत्य तस्मिन्कुर्वतीत्याकरः। आचा० ५। हिरण्याकरादिः। जीवा० ४०। लोहाद्युत्पत्तिस्थानम्। भग० ३६। भिल्लपल्ली भिल्लकोट्टं वा। नि० चू० तृ० ५२ अ। बृ० द्वि० २४६ अ। कुत्रिकापणादिः। बृ० द्वि० २४२ अ। जत्थ घरट्टादिसमीवेसु बहुं जव भुसुट्टं सो। नि० चू० प्र० ६२ अ। रूप्यसुवर्णाद्युत्पत्तिस्थानम्। नंदी २२८। सुवर्णादेरुत्पत्तिस्थानम्। ओघ० ९५। ताम्रादेरुत्पत्तिस्थानम्। आचा० ३२९। सुवर्णादिधातूनां खानिः। नि० चू० द्वि० ७० आ।

आगरमहेसु-आकरमहो-खानिमहोत्सवः। आचा० ३२८।

आगररूवं-आकररूपम्। भग० १९३।

आगरिस-आकर्षः-चारित्रस्य प्राप्तिः। भग० ९०५। आकर्षः-तथाविधेन प्रयत्नेन कर्मपुद्गलोपादानम्। प्रज्ञा० २१८। आकर्षणम्, प्रथमतया मुक्तस्य वा ग्रहणम्। आव० ३६३। एकानेकभवेषु ग्रहणानि। आव० १०५। आकर्षमाकर्षः-एकस्मिन्नानाभवेषु वा पुनः पुनः सामायिकस्य ग्रहणानि प्रतिपत्तये। अनु० २६०।

आगलणं-वैकल्पम्। व्य० प्र० १३२ आ।

आगलेंति-आकलयन्ति, जेष्याम इत्यध्यवस्यन्ति। भग० १७४।

आगलेइ-गृह्णाति। उप० मा० गा० ३१३।

आगल्लो-ग्लानः। बृ० तृ० १२२ आ।

आगसणं-आकृष्यत इति आगसणं तं च दविणं। नि० चू० प्र० १७४ आ।

आगाढं-कर्कशम्। बृ० द्वि० ७३ आ। तीव्रः। आव० ५८८। अत्यर्थम्। व्य० प्र० २५२ अ।

आगाढजोग-आगाढयोगः, गणियोगः। ओघ० १८१।

आगाढपण्ण-आगाढप्रज्ञः, आगाढा-अवगाढा परमार्थ-

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पर्यवसिता तत्त्वनिष्ठा प्रज्ञा-बुद्धिर्यस्यासौ। सूत्र० २३७। शास्त्राणि। व्य० प्र० २२६ अ।

आगाढो-आगाढतरा जम्मि जोगे जतणा सो। नि० चू० प्र० १९७ अ।

आगामिपहं-आगामिपथः, आगामिनो-लब्धव्यस्य वस्तुनः पन्थाः। ठाणा० ९८।

आगार-गृहम्। अनु० २४४। आकारः-आक्रियतेऽनेनाभिप्रेतं ज्ञायत इति, बाह्यचेष्टारूपः। आव० २८१। प्रत्याख्यानापवादहेतवोऽनाभोगादयः। आव० ८४०। आकारः-आक्रियत इत्याकारः-प्रत्याख्यानापवादहेतुर्महत्तराद्याकारः। भग० २९६। आकाराः-प्रत्याख्यानापवादहेतवोऽनाभोगादयः। ठाणा० ४९८। शरीरगता भावविशेषाः। व्य० प्र० ६४ आ। प्रतिनियतोऽर्थग्रहणरिणामः। प्रज्ञा० ५२६। तच्छायामात्रम्। प्रज्ञा० ३७१। प्रत्याख्यानापवादहेतुरनाभोगादिः। आव० ८४०। बाह्यचेष्टारूपः। विशे० ८८५। आकृतयः, स्वरूपाणि। अनु० १३१। ठाणां० ३९५। दिगवलोकनादि। बृ० प्र० ४३ अ। आकृतिः। जीवा० २०७। प्रभा। जीवा० २६५। प्रतिवस्तु प्रतिनियतो ग्रहणपरिणामः। जीवा० १८। मूर्त्तिः। जीवा० २७३। विशेषांशग्रहणशक्तिः। भग० ७३। स्थूलधीसंवेद्यः प्रस्थानादिभावाभिव्यञ्जको दिगवलोकनादिः। उत्त० ४४। सन्निवेशविशेषः। सूर्य० २९३।

आगारधम्मं - आगारधर्मः-द्वादशव्रतरूपो गृहस्थधर्मः।

आगारभाव-आकारभावः, स्वरूपविशेषः। जं० प्र० १८। जीवा० १७६। आकार एव भावः। आव० ३३८।

आगारभावपडोयारे-आकारभावप्रत्यवतारः, आकारस्य-आकृतेर्भावाः-पर्यायाः, अथवा आकाराश्च भावाश्च आकारभावास्तेषां प्रत्यवतारः-अवतरणमाविर्भावः। भग० २७७।

आगारभावमायाए-आकारभाव एव आकारभावमात्रं। आव० ३३८।

आगारभेय-आकारभेदः। प्रज्ञा० ५३१।

आगाल-आगालः, आगालनमागालः-समप्रदेशावस्थानम्। आचा० ५।

आगास - आकाशम्, अनावृतस्थानम्। प्रश्न० १३८। आकाशम्, सर्वद्रव्यस्वभावानाकाशयति-आदीपयति तेषां स्वभावलाभेऽवस्थानदानादिति, आङ्-मर्यादाऽभिविधिवाची, तत्र मर्यादायामाकाशे भवन्तोऽपि भावाः स्वात्मन्येवाऽऽसते नाकाशतां यान्तीत्येवं तेषामात्मसादकरणाद्, अभिविधौ तु सर्वभावव्यापनादाकाशमिति। ठाणा० ५५। 'आङ्' इति मर्यादया स्वस्वभावापरित्यागरूपया काशन्ते-स्वरूपेण प्रतिभासन्ते अस्मिन् व्यवस्थिताः पदार्था इत्याकाशम्, यदा त्वभिविधावाङ् तदा 'आङ्' इति सर्वभावाभिव्याप्त्या काशते इत्याकाशम्। प्रज्ञा० ९। आकाशम्-तृणादिरहितम्। बृ० प्र० ९१ अ। आ-मर्यादया अभिविधिना वा सर्वेऽर्थाः काशन्ते-स्वं स्वभावं लभंते यत्र तदाकाशम्। भग० ७७६। आङिति मर्यादया स्वस्वभावापरित्यागरूपया काशन्ते-स्वरूपेणैव प्रतिभासन्ते तस्मिन्पदार्था इत्याकाशं, यदा त्वभिविधावाङ् तदा आङिति-सर्वभावाभिव्याप्त्या काशत इति। उत्त० ६७२।

आगासगामितं-आकाशगामित्वम्। ठाणा० ३३२।

आगासगयं-आकाशगतं-व्योमवर्ति आकाशकं वा-प्रकाशमित्यर्थः। सम० ६१।

आगासतल-आकाशतलम्। जीवा० २६९। कटाद्यच्छन्नकुट्टिमम्। जं० प्र० १०६। आव० ६९५, ६९९।

आगासथिग्गलं - आकाशथिग्गलं, शरदि मेघापान्तरालवर्त्याकाशखण्डम्। प्रज्ञा० ३६०। शरदि मेघमुक्तमाकाशखण्डम्। जं० प्र० ३२।

आगासफलिहं-आकाशस्फटिकम्, अतिस्वच्छस्फटिकविशेषः। जीवा० २५३। जं० प्र० २७५। भग० १०।

आगासफलितोवमा-आकाशस्फटिकोपमा। प्रज्ञा० ३६४।

आगासफलोवमाइ-खाद्यविशेषः। जं० प्र० ११८।

आगासवासिणो - जातिजुंगितविशेषाः। नि० चू० द्वि० ४३ आ।

आगासाइवाई-आकाशादिवादिनः, अमूर्त्तानामपि पदार्थानां साधन(ने) समर्थवादिनः। औप० २९। आकाशातिपातिनः-आकाशं-व्योमातिपतन्ति-अतिक्रामन्ति आकाशगामिविद्याप्रभावात् पादलेपादिप्रभावाद्वा आकाशाद्वा हिरण्यवृष्ट्यादिकमिष्टमनिष्टं वाऽतिशयेन पातयन्तीत्येवंशीलाः। औप० २९।

आगासिया - आकाशिता, आकाशं-अम्बरमिता-प्राप्ता, आकर्षिता वा-आकृष्टा, उत्पाटितेति वा। औप० २२।

आघं-सूत्रकृतांगे प्रथमश्रुतस्कंधे दशमाध्ययननाम। सूत्र० १८६। आख्यातवान्। सूत्र० १८८।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आघंसणं-एतेहिं एक्कंसि आघंसणं । नि० चू० द्वि० ११९ अ। नि० चू० प्र० १९० अ।

आघवइत्ता - धर्म्ममाख्याय, आख्याय सामान्यतो यथा कार्यो धर्म्मः। ठाणा० ११९। आख्यायकः-प्रज्ञापकः। ठाणा० २६७।

आघवउ-आख्यातः, तस्मिन् क्षेत्रे प्रसिद्धः। आव० ५२४।

आघवणा-आख्याना। उपा० ४७।

आघविए - आख्यातः, सामान्यविशेषपर्यायाभिव्याप्तिकथनेन। उत्त० ५९८।

आघविज्जंति-प्राकृतशैल्या आख्यायन्ते-सामान्यविशेषाभ्यां कथ्यन्ते। सम० १०९। नंदी० २१२।

आघवियं- अर्घापितम्, अर्घः-पूजा तस्य आपः-प्राप्तिर्जाता यस्य तत्, अर्घं वा आपितं-प्रापितं यत्तत्। प्रश्न० ११३।

आघवेइ - आख्यापयति सामान्यविशेषरूपतः। ठाणा० ५०२। भग० ७११।

आघवेज्ज-आग्राहयेच्छिष्यान् अर्घापयेद् वा-प्रतिपादनतः पूजां प्रापयेत्। भग० ४३६।

आघाअ,०ए-आघातः। दश० २०१। मरणम्। सूत्र० १७८। तथाविधयतनयाऽन्यप्राणिनामात्मनश्च विधिवत् संलिखितशरीरतया यस्मिँस्तत्। उत्त० २४९।

आघातणं-आघातनम्, यत्र सङ्ग्रामे बहूनि मृतानि तत्। आव० ७४४।

आघातो-जावंतो भूतो अगणि समासमल्लियंते ते सव्वे घातयतीति। दश० चू० ९८।

आघादियं-कथयित्वा। नि० चू० द्वि० ७१ अ।

आघायठाणं-आघातस्थानम्, वधस्थानम्। आव० ७४१।

आघायणं-आघातनम्, वध्यभूमिमण्डलम्। प्रश्न० ५९। जत्थ (मूषकादि) हतो तं। नि० चू० तृ० ७२ अ।

आघायाय-आघातयन्, संलेखनादिभिरुपक्रमकारणैः समन्ताद्घातयन्-विनाशयन्। उत्त० २५४।

आचरियं-आचरितम्, कल्प्यम्। दश० ११६।

आचारः-(आयार), चक्रवालसामाचारीरूपः। बृ० प्र० २४९ आ। साध्वाचारप्रतिपादको ग्रन्थः। विशे० ६४८। शास्त्रविहितो व्यवहारः। उत्त० ७११। व्यवहारः। ठाणा० ६४। वेषधारणादिको बाह्यः क्रियाकलापः। उत्त० ४९९। पूर्वपुरुषाचरितो ज्ञानाद्यासेवनविधिः, तत्प्रतिपादको ग्रन्थः। नंदी २०९। चारित्रम्। उत्त० ५८३। आचरणमाचारः-उचितक्रिया विनय इतियावत्। उत्त० ३४४।

आचारप्रणिधिः-(आयारपणिही), दशवैकालिकस्याष्टममध्ययनम्। दश० २२४।

आचारवस्तु - (आयारवत्थू), नवमपूर्वगततृतीयवस्तु। उत्त० २५८।

आचारसम्पत्-(आयारसंपया), संयमध्रुवयोगयुक्ततादिचतुर्भेदभिन्ना सम्पत्। उत्त० ३९।

आचारिकम्- (आयरियं), निजनिजाचारभवमनुष्ठानम्। उत्त० २६६।

आचार्यपरिभाषित्वम् - (आयरियपरिभासित्तं), पञ्चमसमाधिस्थानम्। प्रश्न० १४४।

आचालो-आचालः, आचाल्यतेऽनेनातिनिविडं कर्मादीत्याचालः। आचा० ५।

आच्छिदणं - एक्कसि ईषद्वा छेदनम्। नि० चू० प्र० १८९ अ।

आजवंजवीभाव-पुनः पुनर्भ्रमणभावः। आचा० ७९। उत्त० ३३६।

आजवंजवे-अजवंजवी, पुनः पुनर्भ्रमणम्। आचा० १६३।

आजाइ-आजायन्ते तस्यामित्याजातिः, आचारपर्यायः। आचा० ६। आजाति-मनुष्यजन्म गर्हिता जात्यैश्वर्यरूपादिरहिततया। ठाणा० ४१९। सम्मूर्च्छनगर्भोपपाततो जन्म। ठाणा० ५१२। च्युतस्योद्वृत्तस्य वा कुमानुषत्वतिर्यक्त्वरूपा गर्हिता कुमानुषादिर्वादेव। ठाणा० १३२।

आजाइसहस्स-आजातिसहस्रम्, अनेकेषु देवादिजन्मसु प्रतिजीवं क्रमप्रवृत्तेषु अधिकरणभूतेषु बहून्यायुष्कसहस्राणि तत्स्वामिजीवानामाजातीनां च बहुशतसहस्रसङ्ख्यत्वात्। भग० २१५।

आजिणभद्दो-आजिनभद्रः, आजिने द्वीपे पूर्वार्द्धाधिपतिर्देवः। जीवा० ३६९

आजिणमहाभद्दो-आजिनमहाभद्रः, आजिने द्वीपेऽपरार्द्धाधिपतिर्देवः। जीवा० ३६९।

आजिणयं-आजिनकम्, चर्ममयं वस्त्रम्। जीवा० २६९।

आजिणवरभद्दो-आजिनवरभद्रः, आजिनवरे द्वीपे पूर्वार्द्धाधिपतिर्देवः। जीवा० ३६९।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आजिणवरमहाभद्दो – आजिनवरमहाभद्रः, आजिनवरे द्वीपेऽपरार्द्धाधिपतिर्देवः । जीवा० ३६९ ।

आजिणवरमहावरो--आजिनवरमहावरः, आजिने समुद्रे आजिनवरे समुद्रे चापरार्द्धाधिपतिर्देवः । जीवा० ३६९ ।

आजिणवरावभासभद्दो–आजिनवरावभासभद्रः, आजिनवरावभासे द्वीपे पूर्वार्द्धाधिपतिर्देवः । जीवा० ३६९ ।

आजिणवरावभासमहाभद्दो-आजिनवरावभासमहाभद्रः, आजिनवरावभासे द्वीपेऽपरार्द्धाधिपतिर्देवः । जीवा० ३६९ ।

आजिणवरावभासमहावरो–आजिनवरावभासमहावरः, आजिनवरावभासे समुद्रेऽपरार्द्धाधिपतिर्देवः । जीवा० ३६९ ।

आजिणवरावभासवरो–आजिनवरावभासवरः, आजिनवरावभासे समुद्रे पूर्वार्द्धाधिपतिर्देवः । जीवा० ३६९ ।

आजिणवरावभासो – आजिनवरावभासः, द्वीपविशेषः, समुद्रविशेषश्च । जीवा० ३६९ ।

आजिणवरो–आजिनवरः, आजिने समुद्रे, आजिनवरे समुद्रे च पूर्वार्द्धाधिपतिर्देवः । जीवा० ३६९ । द्वीपविशेषः, समुद्रविशेषश्च । जीवा० ३६८ ।

आजिणो – आजिनः, द्वीपविशेषः समुद्रविशेषश्च । जीवा० ३६८ ।

आजीव–आजीवः, आजीविका । पिण्ड० १२१ । आजीविकः । व्य० प्र० १६३ अ । भगवत्यष्टमशतकपंचमोद्देशकः । भग० ३२८ ।

आजीवक–निह्नवः । उप० मा० गा० ४५९ । (आजीवग) गोशालकमतानुसारी । दश० २२२ ।

आजीवगदिट्ठंतो – आजीवदृष्टान्तः, आ–सकलजगदभिव्याप्त्या जीवानां यो दृष्टान्तः–परिच्छेदः सः, सकलजीवदर्शनम् । जीवा० १३७ ।

आजीवगा–आजीविकाः पंडरभिक्खुआ । नि० चू० द्वि० ९८ अ ।

आजीवगो–आजीवगः, आ–समन्ताज्जीवन्त्यनेनेत्याजीवः–अर्थनिचयस्तं गच्छति–आश्रयत्यसौ, आजीवगः–अर्थमदः । सूत्र० २३७ ।

आजीववत्तिया – आजीववृत्तिता, जात्याद्याजीवनेनात्मपालना । दश० ११७ ।

आजीवणपिंडो–जातिमातिभावं उवजीवतित्ति आजीवणपिंडो । नि० चू० द्वि० ९७ आ ।

आजीवभयं–आजीविकाभयम्, निर्धनः कथं दुर्भिक्षादावात्मानं धारयिष्यामीति भयम् । आव० ६४६ । वृत्तिभयम् । प्रश्न० १४३ । दुर्जीविकाभयम् । आव० ४७२ ।

आजीवियसुत्तपरिवाडीए–आजीविकसूत्रपरिपाट्याम् गोशालकमतप्रतिबद्धसूत्रपद्धत्याम् । सम० ४२ ।

आजीविया – आजीविकाः, पाषण्डिविशेषाः, नाग्न्यधारिणः गोशालकशिष्याः, आजीवन्ति वा येऽविवेकिलोकतो लब्धिपूजाख्यात्यादिभिस्तपश्चरणादीनि ते आजीविकाऽस्तित्वेनाजीविकाः । भग० ५० । पाखण्डविशेषाः, गोशालमतानुसारिणः, आजीवंति येऽविवेकतो लब्धिपूजाख्यात्यादिभिश्चरणादीनि । प्रज्ञा० ४०६ । औप० १०६ । आजीविकाः–गोशालकशिष्याः । भग० ३६७ । ठाणा० २३२ । आजीविकाः गोशालकप्रवर्तिताः । सम० १३० ।

आजीवी–वेषविडम्बकः । उप० मा० गा० २९८ ।

आजोअणंतरं–आयोजनान्तरम्, योजनपरिमाणम् । आव० २३१ ।

आजोग–आयोगः, व्यापारणम् । उत्त० ७१० । आव० ६९४ ।

आजोजिया–आयोजिका, आयोजयति जीवं संसारे इति, क्रियाविशेषः । प्रज्ञा० ४४५ ।

आडंबरो–आडम्बरः, मातङ्गनामा यक्षः । आव० ७४३ । पटहः । ठाणा० ३९५ । अनु० १२९ । यक्षः । व्य० द्वि० ।

आडहइ–आदधाति, नियुङ्क्ते । औप० ६४ ।

आडा–लोमपक्षिविशेषः । प्रज्ञा० ४९ ।

आडासेतीय–आडासेतीकः, पक्षिविशेषः । प्रश्न० ८ ।

आडुआलित्तं–मिश्रितं, विलोडितम् । आव० ३४२ ।

आडोव–आटोपः, स्फारता । प्रश्न० ४८ । औप० ५३ ।

आडोवेइ–आटोपयेत्, वायुना पूरयेत् । भग० ८२ ।

आडोहिंतो–जलं विलोढयन् । बृ० द्वि० ७२ आ ।

आढइ–गुच्छविशेषः । प्रज्ञा० ३२ । आढकी, गुच्छविशेषः । आचा० ५७ ।

आढए--आढकः, मानविशेषः । भग० ३१३ ।

आढगं–आढकः, प्रस्थचतुष्टयनिष्पन्नः । अनु० १५१ । चतुःप्रस्थपरिमाणम् । आव० २३८ ।

आढगमो–आढककः, मानविशेषः । उत्त० १४३ ।

आढणं–आदरः । बृ० द्वि० ७६ आ ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आढत्तं-आरब्धम्। भग० २८२।
आढत्ता-आरब्धा। आव० २३७।
आढत्तो-आरब्धः। आव० १०३, ४१३, २६२। दश० ९७।
आढयं-आढकः, सेतिकाप्रमाणः। जं० प्र० २४४।
आढवेइ-आरभते। दश० ३८।
आढवेऊण-आरभ्य। आव० ३४१।
आढा-आदरः। बृ० द्वि० ६७ आ।
आढाति-आद्रियते। दश० ५९। आव० ९२, ८१२।
आढायमाणे-आद्रियमानः। आचा० २८४।
आणं-आज्ञां-योगेषु प्रवर्त्तनलक्षणाम्। ठाणा० ३३१। विधिविषयमादेशम्। ठाणा० ३८६।
आणंतरिए-आनन्तर्यम्-सातत्यमच्छेदनमविरहः। ठाणा० ३४६।
आणंद-आनन्दः, द्वितीयमासक्षपणे भिक्षादाता। आव० २००। उपासकदशांगाद्यध्ययनम्, तन्नाम श्रावकः। उपा० १। गाथापतिः। आव० २१५। नालंदबाहिरिकायां गाथापतिः। भग० ६६२। आनन्दः, षष्ठो बलदेवविशेषः। आव० १५९। श्रुतेन सामायिकाप्तौ दृष्टांतः। आव० ३४७। षोडशः मूहूर्तविशेषः। सूर्य० १४६। जं० प्र० ४९१। धरणेन्द्ररथानीकाधिपतिः। ठाणा० ३०२। षष्ठो बलदेवः। सम० १५४। शीतलजिनाद्यगणभृत्। सम० १५२। भगवान् महावीरशिष्यः। भग० ६६८। अवधिनिर्णयविषये श्रमणोपासकः। सूत्र० ९। प्रथमश्रावकनाम। आव० २१५।
आणंदकूडे-आनन्दनाम्नो देवस्य कूटमानन्दकूटम्। जं० प्र० ३१३।
आणंदपुरं-आनन्दपुरम्, इहलोकगुणविषये कच्छदेशे नगरम्। आव० ८२४। द्रव्यमूढोदाहरणे पुरं। नि० चू० द्वि० ४२ अ। स्थलपत्तनविशेषः। नि० चू० प्र० २२९अ। (मार्गोपसंपदि) नगरविशेषः। नि० चू० प्र० २४१ अ। नगरनिशेषः। नि० चू० द्वि० ७१ अ। क्षेत्रविपर्यासे नगरविशेषः। नि० चू० द्वि० ८ अ।
आणंदपुरे मूलचैत्यगृहे सर्वजनसमक्षं दिवसतः कल्पकर्षणं भवति। नि० चू० प्र० ३५५ अ।
आणंदरक्खिए-आनन्दरक्षितः, पार्श्वापत्यस्थविरनाम। भग० १३८।
आणंदा-आनन्दा, पूर्वदिग्रुचकवास्तव्या दिक्कुमारी। आव० १२२। दक्षिणदिग्भाव्यञ्जनपर्वतस्यापरस्यां पुष्करिणी। जीवा० ३६४। अंजनकपर्वते पुष्करिणी। ठाणा० २३०। पौरस्त्यरुचकवास्तव्या तृतीया दिक्कुमारी। जं० प्र० ३९१।
आणंदिए-आनन्दितः, तुष्टः, हृष्टः, ईषन्मुखसौम्यतादिभावैः समृद्धिमुपगतः। भग० ११९, ३१७।
आणंदियं-आनन्दितम्, स्फीतीभूतम्। जीवा० २४३।
आण-आज्ञा, श्रुतपर्यायः। विशे० ४२३।
आणइंति-आनयन्ति। बृ० द्वि० १०९ अ।
आणक्खिऊण-परीक्ष्य। आव० २९१।
आणक्खिस्सामि - अन्वीक्षिष्यामि - अन्वेषयिष्यामि। आचा० २८२।
आणक्खेउं-परीक्ष्य। ओघ० ३३। अनुमीय। बृ० तृ० १६४ आ।
आणक्खेऊण-ज्ञात्वा, निश्चित्य। नि० चू० प्र० ६ आ।
आणतं-एकोनविंशतिसागरोपमस्थितिकं विमानम्। सम० ३७।
आणत्तं-अन्यत्वम्-अनगारद्वयसम्बधिनो ये पुद्गलास्तेषां भेदः। भग० ७४१।
आणत्तिअं - आज्ञप्तिकाम्, आज्ञां प्रत्यर्पयत। जं० प्र० १६२।
आणत्तो-आज्ञप्तः। आव० ४१९।
आणपाण-आणप्राणः। सूर्य० २९२।
आणपाणकालो-आनपानकालः, उच्छ्वासनिःश्वासौ समुदितावेकः। जीवा० ३४४।
आणपाणलद्धी - अंतर्मुहूर्तेन चतुर्दशपूर्वपरावर्तनशक्तिः। ओघ० १७८।
आणमंति - आनन्ति। भग० १९। उच्छ्वसन्ति, अन्तःस्फुरन्तीमुच्छ्वासक्रियां कुर्वन्ति, आनमन्ति उच्छ्वसन्ति। प्रज्ञा० २१९। 'णमु प्रह्वत्वे' इत्येतस्यानेकार्थत्वेन श्वसनार्थत्वात्, आनन्ति इत्यनेनाध्यात्मक्रिया। भग० १९।
आणमणिया-आज्ञापनी, विंशतिक्रियामध्ये द्वादशी क्रिया। आव० ६१२। कार्ये परस्य प्रवर्त्तनं यथेदं कुर्विति भाषा। प्रज्ञा० २५६।
आणय-आनतः, नवमदेवलोकनाम। प्रज्ञा० ६९।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आणरुई – आज्ञारुचिः, आज्ञा–सर्वज्ञवचनात्मिका तस्या रुचिः–अभिलाषो यस्य स आज्ञारुचिः। जिनाज्ञैव मे तत्त्वं न शेषं युक्तिजातमिति योऽभिमन्यते स आज्ञारुचिः। प्रज्ञा० ५६।

आणरुती–आज्ञारुचिः-आज्ञा–सर्वज्ञवचनात्मिका तया रुचिर्यस्य स तथा, यो हि प्रतनुरागद्वेषमिथ्याज्ञानतयाऽऽचार्यादीनामाज्ञयैव कुग्रहाभावाज्जीवादि तथेति रोचते सः। ठाणा० ५०३।

आणवणप्पओगे–आनयनप्रयोगः। आव० ८३४। इह विशिष्टावधिके भूदेशाभिग्रहे परतः स्वयंगमनायोगाद्यदन्यः सचितादिद्रव्यानयने प्रयुज्यते सन्देशकप्रदानादिना त्वयेदमानेयम् इत्यानयनप्रयोगः (देशावकाशिके अतिचारः)। उपा० १०।

आणवणिया–अज्ञापनिका, जीवाजीवानानाययतः। ठाणा० ३१७। आज्ञापनस्य–आदेशनस्येयमाज्ञापनमेव वेत्याज्ञापनी सैवाज्ञापनिका, तज्जः कर्म्मबन्धः, आदेशनमेव वेति, आनायनं वा आनायनी। ठाणा० ४३।

आणवणी–आज्ञापनी, असत्यामृषाभाषाभेदः। दश० २१०। कार्ये परस्य प्रवर्तनी। भग० ५००।

आणवेस्सामि–आनायिष्यामि। आव० ४१०।

आणा–आज्ञा, मौनीन्द्रवचनम्। आचा० ४४। तीर्थकरगणधरोपदेशः। दश० २६५। ज्ञानाद्यासेवारूपजिनोपदेशः। भग० ५४। कर्त्तव्यमेवेदमित्याद्यादेशः। भग० १६७। दुवालसंगं गणिपिडगं। नि० चू० तृ० ४ अ। उपदेशः। सूत्र० १८३। अर्थः। आव० ६०४। आज्ञाप्यत–आज्ञा – हिताहितप्राप्तिपरिहाररूपतया सर्वज्ञोपदेश:। आचा० ११३। आज्ञया सूत्राज्ञया अभिनिवेशतोऽन्यथापाठादिलक्षणया अतीतकाले अनंता जीवाश्चतुरन्तं संसारकान्तारं-नारकतिर्यग्नरामरविविधवृक्षजालदुस्तरं भवाद्वीगहनमित्यर्थः, अनुपरावृत्तवन्तो जमालिवत् अर्थाज्ञया पुनराभिनिवेशतोऽन्यथाप्ररूपणादिलक्षणया गोष्ठामाहिलवत् उभयाज्ञया पुनः पंचविधाचारपरिज्ञानकरणोद्यतगुर्वादेशादेरन्यथाकरणलक्षणया गुरुप्रत्यनीकद्रव्यलिंगधार्यनेकश्रमणवत् सूत्रार्थोभयैर्विराध्येत्यर्थः, अथवा द्रव्यक्षेत्रकालभावापेक्षमागमोक्तानुष्ठानमेवाज्ञा तया तदकरणेनेत्यर्थः। सम० १३३। हे साधो! भवतेदं विधेयमित्येवंरूपामादिष्टिः। ठाणा० ३०१। गूढार्थपदैरगीतार्थस्य पुरतो देशान्तरस्थगीतार्थनिवेदनाय गीतार्थो यदतिचारनिवेदनं करोति सा। ठाणा० ३०१। यदगीतार्थस्य पुरतो गूढार्थपदैर्देशान्तरस्थगीतार्थनिवेदनायातिचारालोचनं इतरस्यापि तथैव शुद्धिदानं सा। भग० ३८४। ठाणा० ३१८। आदेशः। भग० १२२। जीवा० २४३। सर्वज्ञवचनात्मिका। प्रज्ञा० ५८। आङिति स्वस्वभावावस्थानात्मिकया मर्यादयाऽभिव्याप्त्या वा ज्ञायन्तेऽर्था अनयेति, भगवदभिहितागमरूपा। उत्त० ४४। आगमः। सूत्र० ४०५। आव० ८६२। उत्त० ४४९। अनुज्ञा। पिण्ड० १६९। गुरुनियोगात्मिका। उत्त० ५७२। यथोक्ताज्ञापरिपालना। नंदी २४८। द्वादशांगं सूत्रार्थोभयभेदेन त्रिविधं, द्वादशांगमेव चाज्ञा, आज्ञाप्यते जन्तुगणो हितप्रवृत्तौ यया साऽऽज्ञेति, अथवा पंचविधाचारपरिपालनशीलस्य परोपकारकरणैकतत्परस्य गुरोर्हितोपदेशवचनमाज्ञा। नंदी २४८। श्रुतस्य पर्यायः। विशे० ४१६।

आणाइणो–आज्ञादयः, आज्ञाभङ्गादयः। पिण्ड० ६९।

आणाइयं – आज्ञातिगं–आज्ञा–जिनादेशमतिगच्छति–अतिक्रामति यत्तत्, अधर्मद्वारस्य पाठान्तरेणाष्टाविंशतितमं नाम। प्रश्न० २७।

आणाईसरसेणावच्चं–आज्ञेश्वरसेनापत्यम्, आज्ञाप्रधानस्य सतो यत् सेनापत्यम्। भग० १५४। स्वस्वसैन्यं प्रत्यद्भुतमाज्ञाप्राधान्यम्। प्रज्ञा० ८९।

आणाकंखी–आज्ञाकांक्षी, आगमानुसारप्रवृतिकः। आचा० २१०।

आणानिद्देसयरे – आज्ञानिर्देशकरः, आज्ञा–'सौम्य! इदं कुरु इदं च मा कार्षीः' इति गुरुवचनं तस्या निर्देशः, इदमित्थमेव करोमीति निश्चयाभिधानं, तत्करः। उत्त० ४४। भगवदभिहितागमरूपया उत्सर्गापवादाभ्यां प्रतिपादनमाज्ञानिर्देशः इदमित्थं विधेयमिदमित्थं वेत्येवमात्मकः तत्करणशीलस्तदनुलोमानुष्ठानो वा। उत्त० ४४। आज्ञानिर्देशतरः-आज्ञानिर्देशेन वा तरति भवाम्भोधिमिति। उत्त० ४४।

आणानिद्देसे–आज्ञानिर्देशः, आज्ञा–भगवदभिहितागमरूपा तस्या निर्देशः–उत्सर्गापवादाभ्यां प्रतिपादनम्। उत्त० ४४।

आणापाण – आनप्राणः, उच्छ्वासनिःश्वासकालः। भग० २११।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आणापाणू-आनप्राणा – उच्छ्वासनिःश्वासकालः संख्यातावलिकाप्रमाणाः । ठाणा० ८५ ।

आणाफलं – आज्ञाफलम्–जनेन यथोदितवचनप्रतिपत्तिरूपा फलं प्रयोजनं अस्य । उत्त० ५८० ।

आणामं-(अननम्–श्वसनम्) । भग० १०९ ।

आणामियं-आनामितम्, ईषन्नामितम् । प्रश्न० ८२ । आरोपितम् । जीवा० २७३ ।

आणाय-आज्ञाय, स्वरूपाभिव्याप्त्याऽवगम्य । उत्त० १०४ । आनायम्, जालम् । उत्त० ४०७ । प्रश्न० २२ ।

आणारुइ-आज्ञारुचिः, आज्ञा–सर्वज्ञवचनात्मिका तया रुचिर्यस्य सः । उत्त० ५६३ । आज्ञा–सूत्रव्याख्यानं निर्युक्त्यादिश्रद्धानम् । औप० ४४ । निर्युक्त्यादि तत्र तया वा रुचिः । ठाणा० १९० । भग० ९२६ ।

आणाविजए – आज्ञाविचयम्, आज्ञागुणानुचिन्तनम् । औप० ४४ । प्रवचनपर्यालोचनविषयमाज्ञालोचनविषयं धर्मध्यानम् । ठाणा० १९० । आणाविजय–आज्ञा–जिनप्रवचनं तस्या विचयो–निर्णयो यत्र तदाज्ञाविचयम् । भग० ९२६ । आज्ञा वा विजीयते अधिगमद्वारेण परिचिता क्रियते यस्मिन्निति । ठाणा० १९० । आ–अभिविधिना ज्ञायन्तेऽर्था यया साऽऽज्ञा–प्रवचनं सा विचीयते–निर्णीयते पर्यालोच्यते वा अस्मिंस्तत् । ठाणा० १९० ।

आणावियं-आनायितम् । आव० ४२२ ।

आणासापमाणे-अनाशयमानः, आशाविषयमकुर्वाणोऽनास्वादयन् वाऽभुञ्जानोऽतर्कयन्नस्पृहयन्नप्रार्थयमानोऽनभिलषन् । उत्त० ५८८ ।

आणितिल्लयं-आनीतः । आव० ५५८ ।

आणिमलो-अनलगिरिगजस्य विष्ठा । नि० चू० प्र० ३४९ अ ।

आणुकंपिए-अनुकम्पितः, कृपावान् । भग० १६९ ।

आणुग-अनूपः–नद्यादिपानीयबहूलः । बृ० प्र० १७५ आ ।

आणुगामिए-देशान्तरगतमपि ज्ञानिनं यदनुगच्छति लोचनवदिति तदेवानुगामिकम् । ठाणा० ३७० । धूमादिहेतुरनुगामि ततो जातमानुगामिकम्–अनुमानं तद्रूपो व्यवसायः । ठाणा० १५१ ।

आणुगामियं-आनुगामिकम् । औप० ५८ । आनुगामुकः–अनुगमनशीलः । आव० २८ ।

आणुगामियत्ताए-आनुगामिकत्वाय, शुभानुबन्धायेत्यर्थः । भग० ४५९ । भवपरम्परानुबन्धसुखाय । भग० ११५ ।

आणुपुव्वी-आनुपूर्वी, शिष्यप्रशिष्यपरम्परात्मिका । उत्त० ८ । कमेण मरणकालं पत्तस्स आणुपुव्वी । नि० चू० द्वि० ५३ अ । वृषभनासिकान्यस्तरज्जूसंस्थानीया, यया कर्म्मपुद्गलसंहत्या विशिष्टं स्थानं प्राप्यतेऽसौ, यया वोर्ध्वोत्तमाङ्गाधश्चरणादिरूपो नियमतः शरीरविशेषो भवति सा । आव० ८४ । यथाऽऽसन्नम् । भग० २१ । मूलादिपरिपाटी । जीवा० १८७ । आव० ८०३ । क्रमेण यथाऽऽसन्नम् । जं० प्र० ४६१ । शास्त्रीयोपक्रमाद्यभेदः । ठाणा० ४ । आव० ५६ । यदुदयादन्तरालगतौ जीवो याति तदानुपूर्वीनाम । सम० ६७ । उत्त० ६४१ । आनुपूर्वी–यथासन्नम् । जीवा० २० ।

आणुपुव्विगढिया-आनुपूर्व्या–परिपाट्या ग्रथिता–गुम्फिता इति आनुपूर्वीग्रथिता । भग० २१४ ।

आणुपुव्वो-आनुपूर्वः, क्रमेण नीचैर्नीचैस्तरभावरूपः । जीवा० १९८ ।

आणू-उस्सासो । दश० चू० ५४ ।

आतंतमे – आत्मतमः–आत्मानं तमयति–खेदयति इति आत्मतमः–आचार्यादिः । आत्मनि तमः–अज्ञानं क्रोधो वा यस्य स आत्मतमाः । ठाणा० २१४ ।

आत-(आय)–अप्पा । नि० चू० प्र० ३२ अ ।

आतवेतावच्चकरे – आत्मवैयावृत्यकरः, अलसो विसम्भोगिको वा । ठाणा० २४१ । आत्मवैयावृत्त्यकरः–यस्मात् स तपसा पूर्वसंचितकर्ममलं शोधयन्नात्मन एवोपकारे वर्तते ततः सः । व्य० प्र० १४८ आ ।

आतसरीरसंवेगणी – आत्मशरीरसंवेगनी – यदेतदस्मदीयं शरीरमेतदशुचि अशुचिकारणजातमशुचिद्वारविनिर्गतमिति न प्रतिबन्धस्थानमित्यादिकथनरूपा । ठाणा० २१२ ।

आतानवितानं-(आयाणवियाण), तन्तुषु वेमादिक्रिया । विशे० ८६९ ।

आतावणा-आतापना । प्रश्न० १०७ ।

आतावते – आतापयति–आतापनां शीतातपादिसहनरूपां करोति इति आतापकः । ठाणा० २९९ ।

आतियं-आचितम्, रचितम् । प्रश्न० ४७ ।

आतियणो-अदने–भक्षणे । व्य० प्र० १८० अ ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आतियाणे-भुंजणवेलाए ठाति। नि० चू० तृ० ३८ आ।

आतुरीभूः। नंदी १५४।

आतूलुगा-साधारणबादरवनस्पतिकायविशेषः। प्रज्ञा० ३४।

आतो-आयः। उत्त०१४७। आहोस्वित। उत्त० ३२३।

आतो(उ)ज्जं-आतोद्यम्, वाद्यम्। प्रश्न० ८। पटहादिः। ठाणा० ६३।

आत्तपणं-आदत्तेन-गृहीतेन, आत्मीयेन वा। अनु० २२।

आत्ततरः-दृढतरः, अयमनयोरतिशयेनात्तो-गृहीतो यत्नेनाध्यवसित इत्यर्थः। आचा० २९४।

आत्तप्रज्ञाहा-(अत्तपण्णहा), आत्तां-सिद्धान्तादिश्रवणतो गृहीतामाप्तां वा-इहपरलोकयोः सद्बोधरूपतया हितां प्रज्ञाम्-आत्मनोऽन्येषां वा बुद्धिं कुतर्कव्याकुलीकरणतो हन्ति यः स। उत्त० ४३५।

आत्मछन्दाः-आत्मनैव उपधेरानयनाय छन्दोऽभिप्रायो विद्यते येषां ते आत्मछन्दसः। व्य० द्वि० २१ आ।

आत्मरक्षा-शिरोरक्षस्थानीयाः। तत्त्वा० ४-४।

आत्मरक्षी - विषयाभिलाषविगमान्निर्निदानः सन् आत्मानं रक्षत्यपायेभ्यः - कुगतिगमनादिभ्य इत्येवंशीलः। उत्त० २२५।

आत्मवादी-अस्त्यात्मा स्वतो नित्य इति वादी। आव० ८१६।

आत्मसमीपे-आत्मोत्सङ्गे। ओघ० ११८।

आत्मसंवेदनीय-आत्मना क्रियत इति। आव० ४०५।

आत्मागम-अत्तागम, गुरूपदेशमन्तरेणात्मन एव आगमः। अनु० २१९।

आत्माधिष्ठितयोगी - अत्ताहिट्ठियजोगी, आत्माधिष्ठितेन-लब्धेन भक्तादिना युज्यत इति, अत्तलद्धिओ। ओघ० १५१।

आत्मार्थ-अत्तट्ठे, अर्थ्यमानतया स्वर्गादिः, यद्वा आत्मैवार्थः। उत्त० २८४। विशोधनम्। व्य० प्र० ११५ अ।

आत्मार्थिकम्-अत्तट्ठियं, आत्मनोऽर्थः, आत्मार्थस्तस्मिन् भवम्। उत्त० ३६०।

आदंसग-आदर्शकः-दर्पणः। उत्त० ६५०।

आदंसगहत्थिआ-आदर्शहस्ता। आव० १२२।

आदंसिआइ-खाद्यविशेषः। जं० प्र० ११८।

आदण्ण-खिन्नः। आव० ९४, ३५५।

आददति-विदधति। प्रश्न० १०७।

आदर्शकगृहं-भरतकेवलज्ञानस्थानम्। प्रज्ञा० २०।

आदर्शसमानः-(अद्दागसमाण), आदर्शसमानो, यो हि साधुभिः प्रज्ञाप्यमानानुत्सर्गापवादादीनागमिकान् भावान् यथावत्प्रतिपद्यते सन्निहितार्थानादर्शकवत् स आदर्शसमानः। ठाणा० २४३।

आदाण - आदानम्, आदीयते-स्वीक्रियतेऽष्टप्रकारं कर्म येन तत्, कषायाः, परिग्रहः, सावद्यानुष्ठानं वा। सूत्र० २६४। (बहिद्धादाणं)-बहिर्द्धा-मैथुनम् आदानं च-परिग्रहः, परिग्राह्यं वा वस्तु धर्मोपकरणाद् बहिः। ठाणा० २०२। मोक्षार्थिनाऽऽदीयते-गृह्यत इति, संयमः। सूत्र० २२९। कारणम्। नि० चू० प्र० ११६ अ। प्रभवः, प्रसूतिः। नि० चू० प्र० ११६ अ। ग्रहणम्। आव० ८२२। आदीयत इति, धनम्। आव० ६४६। नि० चू० प्र० ३१७ अ। आदानः, अंशः। सूर्य० २०९।

आदाणणिक्खेवणासमिती-आदाननिक्षेपणासमितिः, जं वत्थपायसंथारगफलगपीढगकारणट्ठा गहनिक्खेवकरणं पडिलेहिय पमज्जिय सा। नि० चू० प्र० १७ अ।

आदाणनिक्खिवणअणाभोगकिरिया - आदाननिक्षेपानाभोगक्रिया, रजोहरणेनाप्रमार्ज्य पात्रचीवरादीनामादानं निक्षेपं वा करोति सा। आव० ६१४।

आदाणभयं-आदानभयम्, धनस्य चौरादिभ्यो यद्भयम्। आव० ६४६। धनहरणभयं। आव० ४७२। आदानं-धनं-तदर्थं चौरादिभ्यो यद्भयम्। ठाणा० ३८९। द्रव्यमाश्रित्य भयम्। प्रश्न० १४३।

आदाणभरियंसि-आद्रहणभृते। उपा० ३४।

आदाणिज्जं-आदानीयम्, सूत्रकृताङ्गस्य पञ्चदशाध्ययनम्। सूत्र० २५२।

आदाणियं-आदानीयम्, आदीयते-गृह्यते उपादीयत इति, पदमर्थो वा। सूत्र० ९।

आदाननिक्षेपणासमितिः-रजोहरणपात्रचीवरादीनां पीठफलकादीनां चावश्यकार्थं निरीक्ष्य प्रमृज्य चादाननिक्षेपौ। तत्त्वा० ९५।

आदाणीय-आदानीयः, उपादेयः। सम० ८१। ठाणा० ३६९। परमार्थतो भावादानीयं ज्ञानदर्शनचारित्ररूपं तत्। आचा० १४०।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आर्दितियमरण–यानि हि नरकाद्यायुष्कतया कर्मदलिकान्यनुभूय म्रियते मृतश्च न पुनस्तान्यनुभूय पुनर्मरिष्यत इत्येवं यन्मरणं। भग० ६२४।

आदि–आदिः, कारणम्। प्रश्न० ४।

आदिए–आददीत, गृह्णीयात्। उत्त० ५१७।

आदिकरः–आइगर, आदौ प्राथम्येन श्रुतधर्म्ममाचारादिग्रन्थात्मकं करोति – तदर्थप्रणायकत्वेन प्रणयतीत्येवंशील आदिकरः। सम० ३। प्रथमतया प्रवर्त्तनशीलः। व्य० द्वि० ३८५ अ।

आदिगरमंडलगं–आदिकरमण्डलम्। आव० १४६।

आदिच्चो–आदित्यः। जीवा० ३२१। सूर्यसंवत्सरः। सूर्य० १२।

आदिट्ठ–आदिष्टः, विशेषितः। भग० ४७।

आदिट्ठा–गृहीता। नि० चू० प्र० २०७ आ।

आदित्यमासः–त्रिंशदहोरात्राणि रात्रिन्दिवस्य चार्द्धं, दक्षिणायनस्योत्तरायणस्य वा षष्ठभागमानः। बृ० प्र० १८६ आ।

आदित्ययशा–भरतपुत्रनाम। व्य० द्वि० १२९ आ।

आदिमा भावा – आवश्यकादयः सूत्रकृताङ्गं यावद् ये आगमग्रन्थास्तेषु ये पदार्था अभिधेयास्ते। बृ० प्र० १२८ आ।

आदित्यरथः–वालिसुग्रीवपिता विद्याधरः। प्रश्न० ८९।

आदियणं – गहणं। नि० चू० प्र० १३४ अ। पिबंतस्स। नि० चू० तृ० ६५ आ।

आदियणआ–आदानम्, ग्रहणम्। आव० ६१४।

आदियणा–आदानम्, परधनस्य ग्रहणं, तृतीयाधर्मद्वारस्य पञ्चदशं नाम। प्रश्न० ४३।

आदिश्यते। जीवा० १४०।

आदीअदिट्ठभावे – आदौ–आवश्यकादिशास्त्रेषु वर्त्तमाना अदृष्टा भावा येन सः। बृ० प्र० १२६ आ।

आदेज्ज–आदेया, दर्शनपथमुपागता सती पुनः पुनराकाङ्क्षणीया। जं० प्र० १११। आदेयः, रम्यः। प्रश्न० ८३।

आदेज्जनाम–आदेयनाम, यदुदयवशात् यच्चेष्टते भाषते वा तत्सर्वं लोकः प्रमाणीकरोति दर्शनसमनन्तरमेव च जनोऽभ्युत्थानादि समाचरति तत्। प्रज्ञा० ४७५।

आदेयवचनता–सकलजनग्राह्यवाक्यता। उत्त० ३९।

आदेशकषाय–कैतवकृतभ्रुकुटिभंगुराकारः। आव० ३९०।

आदेशतः। नंदी ७०।

आदेशिकं–श्रमणानुद्दिश्यादेशम्। बृ० प्र० ८३ अ।

आदेसं–उद्दिट्ठं। नि० चू० प्र० २३० आ। विशेषं प्रतिनियतव्यक्त्यात्मकम्। उत्त० ६७३।

आदेसतिगं–आदेशत्रिकम्, मतत्रिकम्। पिण्ड० १०।

आदेसदव्वसुद्धी – आदेशद्रव्यशुद्धिः, द्रव्यशुद्धिभेदः। दश० २११।

आदेसफलं–आदेशफलम्। आव० ३४३।

आदेसा–पाहुणा। नि० चू० प्र० १११ अ। प्राघूर्णकाः। बृ० प्र० ८५ आ।

आदेसे – आदेशः, आदिश्यते यस्मिन्नागते सम्भ्रमेण परिजनस्तदासनदानादिव्यापारे सः, प्राघूर्णकः। सूत्र० ३००।

आदेसो–आदेशः, प्रकारः। जीवा० ५३। सुत्ताएसो। नि० चू० प्र० ७१ अ। अनुज्ञा। व्य० द्वि० ३४६ अ। नयान्तरविकल्पः। व्य० द्वि० ३५४ आ।

आद्यशब्द – तर्कणादोषादिप्रतिपादनः। नि० चू० प्र० २२५ अ।

आद्रहणम्–उच्छलदुष्णजलम्। दश० १७४। पिण्ड० ३५।

आधरिसितो–आधर्षितः। आव० ३७१।

आधत्त–आधत्तम्, ग्रहणके मुक्तम्। बृ० द्वि० १२० अ।

आधरिसेहिति–आधर्षिष्यति। आव० १०४।

आधाकम्मिए–आधाय–आश्रित्य साधून् कर्म्म–सचेतनस्याचेतनीकरणलक्षणा अचेतनस्य वा पाकलक्षणा क्रिया यत्र भक्तादौ तदाधाकर्म्म तदेवाधाकर्म्मिकम्। ठाणा० ४६०।

आधायणं–जत्थ वा महा संगामे मता। नि० चू० तृ० ७३ अ।

आधिः–मनःपीडा। भग० ४।

आधिदैविकम्–देवादिसत्कं दुःखम्। उत्त० २६६।

आधिभौतिकम्–अन्यभूतसत्कं दुःखम्। उत्त० २६६।

आधूय – भ्रमयित्वा, जलेन सदाहत्याहत्य। जं० प्र० २३०।

आधूयारुहकम्–हरितभेदः। आचा० ५७।

आध्यात्मिकम्–अज्झत्थियं, आत्मसत्कं दुःखम्। उत्त० २६६। आत्मनि क्रियमाणम्। आचा० ४१६।

आनगारिकम् – अनगारेषु–भावभिक्षुषु भवमानगारिकमनुष्ठानम्। उत्त० ३३९।

आनन्द–श्रुतसामायिकलाभे दृष्टान्तः। आव० ३४७।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आनन्दपुरम्–स्थलपत्तने नगरविशेषः । बृ० प्र० १८१ आ । जितारिराज्ञः राजधानी । बृ० तृ० १०७ आ । नगरविशेषः । व्य० प्र० १४६ अ, ४ आ । व्य० द्वि० २६६ अ ।

आनन्दविजयः–आचार्यनामविशेषः । जं० प्र० ५४५ ।

आनन्दविमलः–आचार्यनामविशेषः । जं० प्र० ५४३ ।

आनुगामिकः–आ–समन्तादनुगच्छतीत्येवंशीलमानुगामिकः, अनुगमः प्रयोजनं यस्य सः । प्रज्ञा० ५३९ । अनुगच्छति साध्याभावे न भवति यो धूमादिहेतुः सोऽनुगामी ततो जातमानुगामिकं, अनुमानं, तद्रूपो व्यवसायः । ठाणा १५१ ।

आनुपूर्वी–यथासन्नम् । प्रज्ञा० ५०३ । कूर्परलाङ्गलगोमूत्रिकाकारेण यथाक्रमं द्वित्रिचतुःसमयप्रमाणेन विग्रहेण भवान्तरोत्पत्तिस्थानं गच्छतो जीवस्यानुश्रेणिनियता गमनपरिपाटी । प्रज्ञा० ४७३ । अन्तर्गतौ गत्यन्तरमानुपूर्व्या प्रापणसामर्थ्यं, शरीराङ्गोपाङ्गानां विनिवेशक्रमनियामकं वा कर्म । तत्त्वा० ८-१२ ।

अनुक्रमः–अनुपरिपाटी । अनु० ५१ ।

आपणवीही–आपणवीथिः, रथ्याविशेषः । जं० प्र० ४१३ । आपणवीथिः । भग० ४७६ ।

आपन्नपरिहारः–मासिकं वा द्विमासिकं वा यावत् षण्मासिकं वा प्रायश्चित्तं । व्य० प्र० ४५ आ ।

आपाकः-भाण्डपचनस्थानम् । ठाणा० ४१९

आपागपत्तं – आपाकप्राप्तम्, ईषत् पाकाभिमुखीभूतम् । प्रज्ञा० ४५९ ।

आपाण्डु–आ–ईषच्छुभ्रत्वभाजः, पाण्डुः । उत्त० ६८९ ।

आपीडः–शेखरकः । जीवा० २७२ । आमेलकः–शेखरकः । जीवा० २०७, ३६१ ।

आपुच्छणा – आप्रच्छनमापृच्छा, विहारभूमिगमनादिप्रयोजनेषु गुरोः कार्या, समाचार्याः षष्ठभेदः । आव० २५९ । आपृच्छना । ओघ० १५१ । भग० ९२० । स्वकार्यप्रवृत्तावापृच्छनम् । बृ० प्र० २२२ अ । विहारभूमिगमनादिषु प्रयोजनेषु गुरोः पृच्छा । ठाणा० ४९९ ।

आपूपिकः । नंदी १६५ ।

आपूरितं – आपूर्यमाणम्, परिसंस्थिते पवने भूयो जलेन भ्रियमाणम् । जीवा० ३०८ ।

आपूरियं – आपूरितम्, व्याप्तं, भृतं, वासितम् । विशे० १५० ।

आप्त–अत्त, ज्ञानदर्शनचारित्राणि येनाप्तानि स, रागद्वेषप्रहीणः, इष्टाः शोध्यै शैधि विषये ये आप्ताः । व्य० द्वि० ३८९ आ ।

आप्तप्रज्ञाहा – सिद्धान्तादिश्रवणतो गृहीतामाप्तां वा इहपरलोकयोः सद्बोधरूपतया हितां–प्रज्ञाम्–आत्मनोऽन्येषां वा बुद्धिं कुतर्कव्याकुलीकरणतो हन्ति यः सः । उत्त० ४३५ ।

आप्नोति–आत्मवशतां नयति । प्रज्ञा० ३६२ ।

आप्रच्छना–भदन्त ! करोमीदमित्येवं गुरोः प्रच्छनमाप्रच्छना । अनु० १०३ । सम० १५८ ।

आप्फोडिऊण–आस्फोट्य । आव० १६८ ।

आबद्धसेओ–आबद्धस्वेदः । आव० ५१५ ।

आबद्धो–आबद्धः, आरब्धः । आव० ५१५ ।

आबाहा–आबाधा, ईषद्बाधा । भग० २१८ । जं० प्र० १२४ । जन्मजरामरणक्षुत्पिपासादिका आबाधा । ठाणा० ४८८ ।

आबाहाए–अन्तरे कृत्वेति शेषः । सम० १६ ।

आभंकरं – सनत्कुमारकल्पे त्रिसागरस्थितिकं विमानं । सम० ८ ।

आभंकरपभंकरं–आभंकरवत् । सम० ८ ।

आभंकरे–आभङ्करः, सप्ततितमग्रहनाम । ठाणा० ७९ । अष्टषष्टितमग्रहनाम । जं० प्र० ५३५ ।

आभट्टो–आभाषितः, संलप्तः । आव० २४१ ।

आभरण–आभरणानि, मुकुटादीनि । जं० प्र० १४५ ।

आभरणचङ्गेरी–देवछन्दके पूजोपकरणम् । जीवा० २३४ ।

आभरणपिया । नि० चू० तृ० ९ अ ।

आभरणवासा – आभरणवर्षा, आभूषणवर्षणम् । भग० १९९ ।

आभरणविचित्ताणि–आभरणविचित्राणि, गिरिविडकादिविभूषितानि । आचा० ३९४ । नि० चू० प्र० २५५ अ ।

आभरणविधी–हारऽद्धहारादिया आभरणविधी । नि० चू० प्र० २७६ आ । उपभोगविधिविशेषः । उपा० ३ ।

आभरणवुट्ठी–आभरणवृष्टिः । भग० १९९ ।

आभरणाणि – आभरणानि, अङ्गपरिधेयानि । जं० प्र० २२१ । आभरणप्रधानानि । आचा० ३९४ । नि० चू० प्र० २५५ अ ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आभवंतितो-आभवन्तिकः-व्यवहारः। व्य० द्वि० ३८१ आ।

आभवति-स्वं भवति। आव० ८२१।

आभव्वं-आभाव्यं, शैक्षः शैक्षिका वा। बृ० द्वि० ७० आ।

आभा-आभा, आकारः। प्रज्ञा० ८०। छायावर्णः। सम० १४०। प्रतिभासः। जीवा० ३११। वर्णस्वरूपम्। जीवा० १०३।

आभागी-भोक्ता। आव० ८१५।

आभासइ-आभासयति, समन्ततः सर्वासु दिक्षु अवभासयति। जीवा० ३१२।

आभासिआ-म्लेच्छविशेषः। प्रज्ञा० ५५।

आभासिता-लवणान्तरद्वीपनाम। ठाणा० २२५।

आभासितो-आभाषिकः, अन्तरद्वीपविशेषः। जीवा० १४४।

आभासियं-अभाषिकम्-विवक्षितभाषामजानानः। आव० ६१४।

आभासिय-आभाषिकः, म्लेच्छविशेषः। प्रश्न० १४।

आभासियदीवे-अन्तरद्वीपनाम। ठाणा० २२५।

आभिओग-आ - समन्तादाभिमुख्येन युज्यन्ते-प्रेष्यकर्मणि व्यापार्यन्ते इति आभियोग्याः-शक्रलोकपालप्रेष्यकर्मकारिणो व्यन्तरविशेषाः। जं० प्र० ७५। आभियोग्यम्-कर्मकरभावः। दश० २४८। अभियोग्यभावना-कुत्सितभावना। उत्त० ७०७। अभियोगभावनाजनितः। ठाणा० २७४।

आभिओगसेढीओ - आभियोग्याः-शक्रलोकपालप्रेष्यकर्मकारिणो व्यन्तरविशेषास्तेषामावासभूते श्रेण्यौ। जं० प्र० ७५।

आभिओगिए-आभियोगिकः अभियोगे-प्रेष्यकर्म्मणि व्यापार्यमाणत्वे नियुक्ताः। जीवा० २४३।

आभिओगिय-आभियोगिकः, वशीकरणाय मन्त्राभिसंस्कृतम्। आव० ६४२।

आभिओग्ग-आभियोग्यम्, वशीकरणादि द्रव्यतो द्रव्यसंयोगजनितं, भावतो विद्यामन्त्रादिजनितम्, बलात्कारो वा। प्रश्न० ३८। आभियोगः-कार्मणम्। बृ० तृ० १२२ आ।

आभिग्गहिओ-आभिग्रहिकः, अभिग्रहेण निर्वृत्तः, कायोत्सर्गः। आव० ७८३।

आभिचारुका-विद्याविशेषः। बृ० तृ० २०३ आ।

आभिट्टं-आपतितम्। पउ० ४-४२।

आभिडणं-आवडणम्। ओघ० २०४।

आभिणिबोहिय-आभिनिबोधिकम्, अभिमुखो-योग्यदेशावस्थितवस्त्वपेक्षया नियतः-स्वस्वविषयपरिच्छेदकतयाऽवबोधः-अवगमोऽभिनिबोधः, स एवाभिनिबोधिकम्। उत्त० ५५७। विशे० २२६। अर्थाभिमुखो नियतः-प्रतिनियतस्वरूपो बोधो-बोधविशेषः, अभिबुध्यतेऽस्माद् अस्मिन् वेति। प्रज्ञा० ५२६। आभिनिबोधिकम्-मतिज्ञानम्। आव० १८। आभिमुख्येन निश्चितत्वेनावबुध्यते-संवेदयते आत्मा तदिति, आभिनिबोधः, अवग्रहादिज्ञानं, अथवा आत्मा तेन प्रस्तुतज्ञानेन तदावरणक्षयोपशमेन वा करणभूतेन घटादि वस्त्वभिनिबुध्यते, तस्माद् वा प्रकृतज्ञानात् क्षयोपशमाद्वाऽभिनिबुध्यते, तस्मिन् वाऽधिकृतज्ञाने, क्षयोपशमे वा सत्यभिनिबुध्यतेऽवगच्छतीत्यभिनिबोधो ज्ञानम्, क्षयोपशमो वा, सो वा 'अभिणिबुज्झए'त्ति, अथवाऽभिनिबुध्यते वस्त्वभिगच्छतीत्यभिनिबोधः, स एवाभिनिबोधिकम्। विशे० ५३। अभीत्याभिमुख्ये नीति नैयत्ये, ततश्चाभिमुखो-वस्तुयोग्यदेशावस्थानापेक्षी नियत-इन्द्रियाण्याश्रित्य स्वस्वविषयापेक्षी बोधः, अभिनिबुध्यते आत्मना सः। अभिनिबुध्यते वस्त्वसौ इत्यभिनिबोधः स एवाभिनिबोधिकम्। अनु० २।

आभिणिबोहियनाण-अर्थाभिमुखोऽविपर्ययरूपत्वात् नियतोऽसंशयरूपत्वाद्बोधः-संवेदनमभिनिबोधः स एव स्वार्थिके कप्रत्ययोपादानादाभिनिबोधिकं ज्ञातिर्ज्ञायते वाऽनेनेति ज्ञानम् आभिनिबोधिकं च तज्ज्ञानं चेति आभिनिबोधिकज्ञानम्, इन्द्रियानिन्द्रियनिमित्तो बोध इति। भग० ३४३। इन्द्रियपञ्चकमनोनिमित्तो बोधः। अनु० २। अर्थाभिमुखो नियतो बोधः, अभिनिबोधे भवं तेन वा निर्वृत्तं तन्मयं तत्प्रयोजनं वा, अथवा अभिनिबुध्यते तत्, अथवा अभिनिबुध्यते ऽनेनास्माद्वा अस्मिन् वा तत् तदावरणकर्मक्षयोपशम इति भावार्थः। आव० ७। अभिनिबोधिकम्, आत्मैव वाऽभिनिबोधोपयोगपरिणामानन्यत्वाद् अभिनिबुध्यत इति वा। आव० ७।

आभियोगिक - अभियोगभावनाभावितत्वेनाभियोगिकदेवेषूत्पन्ना अभियोगवर्तिनः। भग० १९०।

आभियोगिय - आभियोगिकः, अभियोजनं-विद्यामन्त्रादिभिः परेषां वशीकरणादि येषां ते। प्रज्ञा० ४०६।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आभियोगी-अभिओगा- किङ्करस्थानीयदेवविशेषास्तेषामियमाभियोगी। बृ० प्र० २१२ आ। आभियोग्याः-आभिमुख्येन युज्यन्ते-प्रेष्यकर्म्मणि व्यापार्यन्त इत्याभियोग्याः, किङ्करस्थानीयदेवविशेषाः। बृ० प्र० २१२ आ।

आभिसेक्कं-आभिषेक्यम्, अभिषेकयोग्यं, राजपरिधेयम्। जं० प्र० २१६।

आभीरविसओ-आभीरविषयः, देशनाम। आव० ४१२। नि० चू० द्वि० १०२ आ।

आभोइत्ता-आभोगयित्वा, ज्ञात्वा। दश० १७९।

आभोईतो-आभोगितः। उत्त० १३३।

आभोएउं-आभोगयित्वा, उपयोगपूर्वकेनावधिना विज्ञाय। आव० १२८।

आभोएति-आभोगयति। आव० १२४।

आभोग - आभोगः, जानता योऽतिचारः कृतः। आव० ५६४। अभिसन्धिः। भग० २०। आलोचनमभिसन्धिः। प्रज्ञा० ५००। उपकरणम्। ओघ० ३३। उपयोगः। बृ० द्वि० २११ आ। ठाणा० ५०५। आभोगनमाभोगः, उपयोगविशेषः। आव० ६१९, ६२६। विस्तारः। विपा० ३९।

आभोगण-आभोगनम्, अर्थावग्रहसमनन्तरमेव सद्भूतार्थविषयाभिमुखमालोचनम्। १७६।

आभोगणिव्वत्तिय-यदा परस्यापराधं सम्यगवबुद्धय कोपकारणं च व्यवहारतः पुष्टमवलम्ब्य नान्यथाऽस्य शिक्षोपजायते इति आभोग्य कोपं विधत्ते तदा स कोप आभोगनिर्वर्त्तितः। प्रज्ञा० २९१। आभोगेन निर्वर्त्तितः-उत्पादित आभोगनिर्वर्त्तित आहारयामीतीच्छापूर्वं निर्मापितः। प्रज्ञा० ५००।

आभोगबउस-आभोगबकुशः, य आभोगेन जानन् करोति सः, बकुशस्य प्रथमो भेदः। उत्त० २५६। आभोगः-साधूनामकृत्यमेतच्छरीरोपकरणविभूषणमित्येवं ज्ञानं तत्प्रधानो बकुश आभोगबकुशः। भग० ८९०। शरीरोपकरणभूषयोः सञ्चिन्त्यकारी। ठाणा० ३३७।

आभोगिणी-यं परिजपिता सती मानसं परिच्छेदमुत्पादयति सा। बृ० तृ० ३३ अ। जा विज्जा जविता माणसं परिच्छेदमुप्पादयति सा। नि० चू० प्र० १७७ अ।

आमं-आमम्। दश० १७६। अपरिणतम्। पिण्ड० ६५। अविशोधिकोटिः। बृ० प्र० २०१ अ, ५१ अ। आमं णाम जं अपोलियं अग्गिणा ण पक्कंति, अण्णेण वा केणइ पगारेण न पक्कं-णिज्जीवं। नि० चू० द्वि० १५७ अ। असत्थपरिणयं। दश० चू० ५१। अनुमतार्थद्योतकमव्ययम्। बृ० द्वि० १६६ अ। सचित्तं। दश० चू० ८६। अपक्करसम्। प्रश्न० ६०। अनुमतौ सम्मतमेतदस्माकं सर्वमितिभावः। व्य० प्र० ७१ अ। अपक्कः। व्य० द्वि० १०६ आ। जओ तेहिं उग्गमादिदोसेहिं घेप्पमाणेहिं चारित्तं अविपक्कं अपज्जत्तं आमं भवति तेण ते आमं भण्णति, शब्दमात्रोच्चारणम् सरढीभूतं जो वरिससतायुपुरिसो वरिससतं अंतरे मरंतो आमो भण्णति। नि० चू० द्वि० १२६ अ। अपक्वम्। आव० १३०। स्वीकारेऽव्ययम्। आव० ६४। आव० १९४। आव० ४०८। अशस्त्रोपहतम्। आचा० ३४८। दश० २२९। अजीर्णम्। दश० २७०। आमाम्-असिद्धां, सचेतनाम्, अपरिणतं, अपक्काम्। दश० १८५। अपरिशुद्धम्। आचा० १३१।

आमंडे-आमलकम्, परिणामिकयां सप्तदशमोदाहरणम्। नंदी १६५। आम्लकम्-आमलकम्। आव० ४३६।

आमंतणी-आमन्त्रणी, असत्यामृषाभाषायाः प्रथमो भेदः। दश० २१०। हे देवदत्त! इत्यादिरूपा भाषा। प्रज्ञा० २५६। हे देवदत्त! इत्यादिका, असत्यामृषाभाषा। भग० ५००।

आमंतयामो-आमन्त्र्यावहे, पृच्छावः। उत्त० ३९८।

आमंतिओ-आमन्त्रितः, सम्भाषितः, पृष्टो वा। उत्त० ३९२।

आमंतेयव्वो-आपुच्छियव्वो। नि० चू० तृ० ९७ आ।

आमगं-अपक्वम्। भग० ६८४।

आमगंधि-आमगन्धयः, विश्राः। सम० १३६।

आमज्जति - अक्खिपत्तरोमे संठवेति। नि० चू० प्र० १९० अ। हत्थेण आमज्जति। नि० चू० प्र० १८७ आ।

आमज्जमाणे-आमर्जयन्, सकृद्धस्तादिना शोधयन्। आचा० ३४३।

आमज्जिज्ज-सकृदामृज्यात्। आचा० ३३७।

आमट्ठ-विपर्यासीकृतम्, परामट्ठं। ओघ० १९२। आमृष्टम्, तेजःप्रकर्षारोपणाय मनःशिलादिना समन्तात्परामृष्टम्। उत्त० ५२७।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आमडागं-आमपत्रम्, अरणिकतन्दुलीयकादि तच्चार्द्रपक्कमपक्कं वा। आचा० ३४८।

आममहुरे-आममधुरम्, ईषन्मधुरम्। ठाणा० १९६।

आमरणदोसो-आमरणदोषः, महदापद्गतोऽपि स्वतो महदापद्गतेऽपि च परे आमरणादसञ्जातानुतापः, अपि त्वसमाप्तानुतापानुशयपर इति। आव० ५९०।

आमरणंतदोसे-आमरणान्तदोषः-आमरणान्तमसंजातानुतापस्य हिंसादिषु प्रवृत्तिः सैव दोषः। ठाणा० १९०।

आमर्षौषधिः-ऋद्धिविशेषः। प्रज्ञा० ४२४।

आमलए-आमलकम्। आव० ८३१। आमरकः, सामस्त्येन मारिः। ठाणा० ५०८। फलविशेषः। पिण्ड० २२। दश० १००।

आमलकप्प-आमलकल्पा, नगरीविशेषः। आव० ३१४, ३१५, ७०७। उत्त० १५९। विशे० ९५०।

आमलग-आमलक, बहुबीजो वृक्षविशेषः। प्रज्ञा० ३२। भग० ८०३।

आमलगा-आमलकानि। अनु० १९२।

आमलपाणगं-फलविशेषप्रक्षालनजलं। आचा० ३४७।

आमाघाओ-अमाघातः, (अमारीपटहः)। आव० ४०१।

आमिस - आमिषः-मांसः। उत्त० ६३४। आमिषाद्-गृद्धिहेतोरभिलषितविषयादेः। उत्त० ४०९।

आमिसभोगगिद्ध - आमिषभोगगृद्धः, आमिषस्य-मांसादेर्भोगः-अभ्यवहारस्तत्र गृद्धः। उत्त० ६३४।

आमिसावत्ते-मांसाद्यर्थं परिभ्रमणम्। ठाणा० २८८।

आमुसंत - आमृशन्, स्पृशन्। दश० १३७। आचा० ११। आमृशन्, भगवत्पादारविन्दं भक्तितः करतलयुगादिना स्पृशन्। ठाणा० ९। उत्त० ८०।

आमुसिज्जा - आमर्षणम्, सकृदीषद्वा स्पर्शनम्। दश० १५३।

आमे-आमः, अविशोधिकोट्याख्यदोषः। सूत्र० १४५।

आमेड-आमेलः, आपीडः, शेखरकः। जीवा० १७२।

आमेडणा-आम्रेडना, विपर्यस्तीकरणम्। प्रश्न० ५६।

आमेल-आपीडः, शेखरकः। प्रज्ञा० ९६। भग० ४५९। पुष्पशेखरकः। औप० ५१।

आमेलओ-आमेलकः, आपीडः, शेखरकः। जीवा० ३६१। आमोडकः-पुष्पोन्मिश्रो वालवन्धविशेषः। उत्त० १४३।

आमेलग-आमेलकः, आपीडकः, शेखरः। जीवा० २७५। आपीडः, शेखरकः। जं० प्र० ५२। जीवा० २०७।

आमेलय-आमेलकः, चूडा। औप० ६३।

आमेलिय-आपीडिका, चूडा। भग० ३१८।

आमो-असत्थोवहतो। नि० चू० प्र० १९६ अ।

आमोअ - आमोदः, मानसे उत्सवः। आव० ७२१। आमोकः-कचवरपुञ्जः। आचा० ४११।

आमोक्ख-आमोक्षः, आमुच्यन्तेऽस्मिन्नित्यामोक्षणं वाऽऽमोक्षः। आचा० ६।

आमोडणं-हत्थेहि आमोडणं। नि० चू० प्र० २४५ अ।

आमोडेति-सीमन्तयति। नि० चू० द्वि० ३१ अ।

आमोद-गन्धः। उत्त० ३६९।

आमोयगो-आमोदकः। जीवा० २६८।

आमोसगा-आमोषकाः, चौराः। ठाणा० ३१५।

आमोसलि-आमर्शवर्त्तिर्यगूर्ध्वमधो वा कुड्यादिपरामर्शवद्यथा न भवति। उत्त० ५४१।

आमोसहि - आमर्षौषधिः, तत्रामर्षणमामर्षः-संस्पर्शनमित्यर्थः, स एवौषधिर्यस्यासावामर्षौषधिः, करादिसंस्पर्शमात्रादेव व्याध्यपनयनसमर्थो लब्धिलब्धिमतोरभेदोपचारात्साधुरेवामर्षौषधिः। विशे० ३७९। आचा० १७८। आमर्षौषधिः। ठाणा० ३३२। आमर्शणमामर्शः-संस्पर्शनमित्यर्थः, स एवौषधिः। आव० ४७। आमर्षणमामर्षः-हस्तादिसंस्पर्शः। औप० २८।

आमोसे-आमर्षणम् आमर्षः-अप्रमृज्य करेण स्पर्शनम्। आव० ५७४। आमोषाः-आ-समन्तान्मुष्णन्ति-स्तैन्यं कुर्वन्तीति। उत्त० ३१२।

आम्नाय-गुणनं, घोषविशुद्धं परिवर्त्तनं रूपादानं। तत्त्वा० ९-२५।

आम्रसालवनम् - आमलकल्पानगर्यां वनम्। विशे० ९५०।

आम्लखलिकायाम्। विशे० ६०६।

आम्लम्-चतुर्थरसम्। आव० ८५४। अंबिला। उत्त० ६७७।

आयं-तोसलिविसए सीयतलाए आयाणं खुरेसु सेवालतरिया लग्गंति, तत्थ वत्था कीरंति। नि० चू० प्र० २५४ आ। कर्माश्रवलक्षणम्। सूत्र० १८९। इष्टफलम्। भग० ४।

Jain Education International 2010_05   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

आयंकं-आतङ्कः, आशुघाती रोगः। आव० ७५९। सद्योघाती रोगः। दश० २७३। कृच्छ्रजीवनं दुःखं। आचा० ७५। आशुघाती शूलादिः। जं० प्र० १२५। भग० ४७१। सद्योघातिव्याधिः। भग० १२२। नरकादिदुःखम्। आचा० १६०। कृच्छ्रजीवितकारी, सद्योघातीत्यर्थः शूलादि। ठाणा० ११९। शूलविशूचिकादिः सद्योघाती। ठाणा० १५०। व्याधिः। भग० ६९०। आङिति सर्वात्मप्रदेशाभिव्याप्त्या तंकयन्ति – कृच्छ्रजीवितमात्मानं कुर्वन्ति इत्यातंकाः-सद्योघातिनो रोगविशेषाः। उत्त० ३३८। आतङ्कः, सद्योघातिनः। औप० ९६। आव० ५८५। ज्वरादि। पिण्ड० १७७। आचा० २९७। कृच्छ्रजीवितकारी ज्वरादिः। भग० ७०२। आतङ्कः, आशुकारी व्याधिविशेषः। दश० चू० १४। रोगः। उत्त० ४८६। ज्वरादि। आव० ८४८। ओघ० १९०। कष्टजीवितकारी। विपा० ४०। आशुजीवितापहारी शूलादिकः। सूत्र० २९२। आचा० २०५, ३३०, ३६२।

आयंकसंपओग – आतङ्कसम्प्रयोगः, आतङ्कः-रोगः तस्य योगः। औप० ४३।

आयंगुल-पुरुषात्मसम्बन्धि आत्माङ्गुलम्। अनु० १५६। अङ्गुलस्य प्रथमभेदः। प्रज्ञा० २९९।

आयंचणं – गोमुत्तं। नि० चू० तृ० १२७ अ। व्य० प्र० १०४ आ।

आयंचामि-लिंपामि, आसिञ्चामि। उपा० ३२।

आयंतकरे – आत्मनोऽन्तम्– अवसानं भवस्य करोतीति आत्मान्तकरः, धर्म्मदेशनानासेवकः प्रत्येकबुद्धादिः। ठाणा० २१३।

आयंति-आगच्छन्ति, उत्पद्यन्ते। आव० १७९।

आयंतियमरणे-यानि नारकाद्यायुष्कतया कर्मदलिकान्यनुभूय म्रियते मृतश्च न पुनस्तान्यनुभूय मरिष्यतीति। सम० ३३।

आयंती आयान्ती। आव० ३०७।

आयंते-आचान्तः, नवानामपि श्रोतसां शुद्धोदकप्रक्षालनेन गृहीताचमनः।' जीवा० २४३। कृतपानः। भग० १६४।

आयंदमे – आत्मदमः, आत्मानं दमयति–शमवन्तं करोति शिक्षयति वेति। ठाणा० २१४।

आयंबिलं-आयाम्लम्, ओदनकुल्माषादि। औप० ४०। आचाम्लम्। आव० ८५२। शुद्धौदनादि। अनुत्त० ३। सकुरा। आव० ८५५। पानकम्। ओघ० १३३।

आयंबिलपाउग्गं-आचाम्लप्रायोग्यम्, (कूरविहाणाणि)। आव० ८५५।

आयंबिलवड्ढमाणं-आचाम्लवर्द्धमानम्, तपोविशेषः। अन्त० ३२।

आयंबिलिए-आचाम्लिकः। ठाणा० २९८।

आयंभरे – आत्मानं बिभर्त्ति-पुष्णातीत्यात्मम्भरिः। ठाणा० २४८।

आयंस-आदर्शः, वृषभादिग्रीवाभरणम्। अनु० ४७। दर्पणः। जं० प्र० ३९२। आदर्शः। जं० प्र० ५१०।

आयंसघरं-आदर्शगृहम्। आव० १७०।

आयंसघरगं – आदर्शगृहकम्, आदर्शमयमिव गृहकम्। जीवा० २००। जं० प्र० ४५।

आयंसमुहदीवे-आदर्शमुखद्वीपः, अन्तरद्वीपनाम। ठाणा० २२६।

आयंसमुहा – आदर्शमुखनामा नवमोऽन्तरद्वीपः। प्रज्ञा० ५०। जीवा० १४४।

आयंसलिवी-ब्राह्मीलिपिपञ्चदशभेदः। प्रज्ञा० ५६।

आय-आयः, श्रुतनाम। दश० १६। लाभः। अनु० १५४। आत्मा-शरीरम्। उत्त० ४१५। जीवश्चित्तं वा। उत्त० ५०४। अतति-सततं गच्छति तानि तान्यध्यवसायस्थानान्तराणीति आत्मा–मनः। उत्त० ३१४।

आयइ-आयतिः-अनागतं, उत्तरकालम्। आव० ५०९।

आयकाय-अनंतकायविशेषः। भग० ८०४।

आयक्खाहि-आख्याहि, कथय, निवेदय। भग० ११२।

आयगय-आत्मनि गतः आत्मगतः, आत्मज्ञ इति। सूत्र० १२४।

आयगवेसए-आत्मगवेषकः, आत्मानं–कर्मविगमाच्छुद्धस्वरूपं गवेषयति–अन्वेषयते यः सः। आयगवेषकः-आयः–सम्यग्दर्शनादिलाभस्तं गवेषयतीति। आयतगवेषकः-सूत्रत्वादायतो वा-मोक्षस्तं गवेषयतीति वा। उत्त० ४१५।

आयगुत्ते – आत्मा-शरीरं तेन गुप्तः आत्मगुप्तः-न यतस्ततः करणचरणादिविक्षेपकृत्, गुप्तो-रक्षितोऽसंयमस्थानेभ्य आत्मा येन सः। उत्त० ४१५।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आयजोगे-आत्मयोगी, आत्मनो योगः-कुशलमनःप्रवृत्तिरूप आत्मयोगः, स यस्यास्ति स तथा, धर्मध्यानावस्थितः। सूत्र० ३४२।

आयट्ठं-आत्मनोऽर्थ आत्मार्थः, स च ज्ञानदर्शनचारित्रात्मकः, आत्मने हितं-प्रयोजनमात्मार्थं, चारित्रानुष्ठानमेव, आयतः-अपर्यवसानान्मोक्षः स एवार्थः। आयत्तः-मोक्षः, अर्थः-प्रयोजनं यस्य। आचा० ११०। आत्महितं। आचा० १०९। ज्ञानादिरूपं स्वकार्यम्। बृ० द्वि० ७१ अ।

आयट्ठी-आत्मार्थी, यो ह्यन्यमपायेभ्यो रक्षति सः, आत्मवान्। सूत्र० ३४२।

आयणाणं-आत्मज्ञानम्, वादादिव्यापारकाले किमसुं प्रतिवादिनं जेतुं मम शक्तिरस्ति न वा? इत्यालोचनम्। उत्त० ३९।

आयणीली-वल्लीविशेषः। प्रज्ञा० ३२।

आयण्णं-आकीर्णम्, स्थानविशेषः। ओघ० १५४।

आयतंगुली-एगापएसिणी। नि० चू० प्र० २०८ अ।

आयतगुत्ते-आत्मगुप्तः-सततोपयुक्तः। आचा० २७२।

आयतजोग-आयतयोगः-सुप्रणिहितं मनोवाक्कायात्मकम्। आचा० ३१४। ज्ञानचतुष्टयेन सम्यग्योगप्रणिधानं। आचा० ३१४।

आयतणं-आयतनम्, गुणानामाश्रयः, अहिंसायाः सप्तचत्वारिंशत्तमं नाम। प्रश्न० ९९। आविष्करणं कथनं, निर्णयनं वा। सूत्र० १८१। स्थानम्। ओघ० २२२। नि० चू० प्र० १९२ आ। देवकुलम्। नि० चू० द्वि० ६९ आ। दोषाणां स्थानं। आचा० ३२९। ज्ञानादित्रयम्। आचा० २०७।

आयतणा-आयतनानि-बन्धहेतवः। ठाणा० ४५१।

आयतणाइं-आयतनादीनि, दोषरहितस्थानानि, वसतिगतानि, संस्तारकगतानि च। आचा० ३७२। देवकुलपार्श्वापवरकाः। आचा० ३६६। कर्मोपादानानि। आचा० ४०७। उपभोगास्पदभूतानि। आचा० १२७। कर्मोपादानस्थानानि। आचा० ३५६। दोषस्थानानि। आचा० ३८६।

आयतरो-तवबलिओ। नि० चू० तृ० १२३ अ।

आयतसंठाण-आयतसंस्थानम्। प्रज्ञा० ११।

आयता-दीर्घा। जीवा० १६४।

आयती-सन्ततिः। बृ० द्वि० २१३ अ।

आयतीहितं-आगामिकालहितं, आत्मना हितं वा। दश० चू० १५७।

आयते-आयतः, संस्थानपञ्चमभेदः। प्रज्ञा० २४२। भग० ८५८।

आयतो-आयतः, मोक्षः। सूत्र० १७३। मोक्खो। दश० चू० ८८।

आयत्तं-आयत्तम्, सम्मिश्रम्। पिण्ड० ८१। आधिनीकृतम्। आव० ३६६।

आयत्ताए-आत्मत्वाय-आत्मीयकर्म्मानुभवाय। आचा० २३३।

आयपइट्ठिते-आत्मप्रतिष्ठितः, आत्मना वा परत्राक्रोशादिना प्रतिष्ठितो-जनित आत्मप्रतिष्ठितः। ठाणा० ९२। आत्मापराधेनैहिकामुष्मिकापायदर्शनादात्मविषयः। ठाणा० १९३।

आयपतिट्ठिए-आत्मप्रतिष्ठितः, आत्मन्येव प्रतिष्ठितः। प्रज्ञा० २९०।

आयपवायं-आत्मप्रवादं, सप्तमपूर्वम्। ठाणा० १९९।

आयप्पवाय-आत्मप्रवादः, यत्रात्मनः संसारिमुक्तायनेकभेदभिन्नस्य प्रवदनम्। दर्श० १२। आत्मानं-जीवमनेकधा नयमतभेदेन यत्प्रवदति तत्। नंदी २४१।

आयप्पवायपुव्वं-आत्मप्रवादनाम सप्तमपूर्वम्। सम० २६। विशे० ९४६।

आयभाव-आत्मभावः, स्वस्वरूपः। अनु० २२६। जीवसम्बन्धः। अनु० २२०। उत्थानशयनगमनभोजनादिरूप आत्मपरिणामविशेषः। भग० १४९। अनादिभवाभ्यस्तो मिथ्यात्वादिकः, विषयगृध्नुता वा। सूत्र० २४०।

आयभाववंकणया-आत्मभाववंकनता, आत्मभावस्याप्रशस्तस्य वङ्कनता-वक्रीकरणं प्रशस्तत्वोपदर्शनता। ठाणा० ४२।

आयभाववंचणा-आत्मभाववञ्चनता, मायाप्रत्ययिकीक्रियायाः प्रथमो भेदः। आव० ६१२।

आयभाववत्तव्वया-आत्मभाववक्तव्यता, अहंमानिता। भग० १३९।

आयमणं-आचमनम्, निर्लेपनादि। ओघ० १३७, १९०, १६२। आशातनायाः दशमभेदः। आव० ७२५। गण्डू-

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

षादिकरणम् । उत्त० ३७० । निर्लेपनम् । बृ० तृ० २०४ आ । णिल्लेवणं । नि० चू० प्र० २२० आ । पुरीषोत्सर्गानन्तरं शौचकरणम् । पिण्ड० ११ । आचमनम् । ठाणा० ३३९ ।

आयमाणे-आददानः, प्रवर्त्तमानः । सूर्य० १२ ।

आयमेज्जा-निर्लेपनं चापाने एवमेव कुर्यात् । ओघ० १२५ ।

आयय-आयतम्, प्रसारितम्, दीर्घम् । भग० २३० । आयतः – मोक्षः, आयतम्-अत्यन्तम् । दश० २५८ । आकृष्टं, दीर्घश्च । भग० ९३, ३३३ । मोक्षः । व्य० द्वि० १९७ अ । आत्मा । आचा० १२२ । मोक्षः संयमो वा । उत्त० ५८७ । संयतः । आचा० ३१४ । प्रयत्नवान् । भग० ९३ । दीर्घः सर्वकालभवनात् मोक्षः । सूत्र० ७५ ।

आययकण्णायत्तं-आयतकर्णायतम्, प्रयत्नवत्कर्णं यावदाकृष्टम् । भग० ९३ ।

आययचक्खू – आयतचक्षुः– दीर्घमैहिकामुष्मिकापायदर्शि चक्षुः–ज्ञानं यस्य स । आचा० १३६ ।

आययट्ठिए-आयतार्थिकः, मोक्षार्थी । दश० २५६ ।

आययट्ठिया-आयतार्थिकाः, आयतो–मोक्षः संयमो वा स एवार्थः प्रयोजनं विद्यते येषामिति । उत्त० ५८७ । आयतः–मोक्षस्तत्र स्थिता आयतस्थिता उद्यतविहारिणः संविग्ना इत्यर्थः । व्य० द्वि० १९७ अ ।

आययट्ठी-आयतार्थी, मोक्षार्थी । दश० १८७ ।

आययणं-आयतनम् । आव० २११ । आदानम् । अन्त० २४ । गमनम्, गृहम् । जीवा० २७९ । स्थानम् । जं० प्र० ७७ । दश० १९८ । आङ्-अभिविधौ समस्तपापारम्भेभ्यः आत्मा आयत्यते–आनियम्यते यस्मिन् कुशलानुष्ठाने वा यत्नवान् क्रियत इत्यायतनं–ज्ञानादित्रयम् । आचा० २०६ । उत्पत्तिस्थानम् । उत्त० ६२३ ।

आययतरे-आयततरः, आयमनयोरतिशयेनायत आयततरः । आचा० २९४ । यत्नेनाध्यवसितः । आचा० २९३ ।

आयरंति-आचरन्ति, आसेवन्ते । दश० १९८ ।

आयरंतो-आचरन्, व्यवहरन्, कुर्वन् वा । उत्त० ६४ ।

आयरक्खा-आत्मरक्षा, स्वाम्यात्मरक्षा । भग० १९४ । अंगरक्षा राज्ञाम् । ठाणा० ११७ ।

आयरक्खिए-आत्मरक्षितः, आत्मा रक्षितो दुर्गतिहेतोरपध्यानादेरनेनेति । उत्त० ९९ । आयरक्षितः–आयो वा–ज्ञानादिलाभो रक्षितोऽनेनेति । उत्त० ९९ । आत्मा रक्षितो दुर्गतिपतनात् त्रातोऽनेनेति, रक्षिता आयाः–सम्यग्दर्शनादिलाभा येनेति । उत्त० ४१४ ।

आयरणं-आचरणम्, अनुष्ठानम् । उत्त० ५३३ ।

आयरणया-आदरणं, अभ्युपगमं आचरणम् वा । भग० ५७३ ।

आयरणा-आचरणा, विधिः, मर्यादा, सीमा च । आव० ६३९ । ततियभङ्गविकप्पो । नि० चू० प्र० १९८ अ । चर्या । बृ० तृ० १२९ आ ।

आयरिअ-आचार्यः, शिल्पोपदेशदाता । भग० ३१७ । औप० ६२ । अनुयोगाचार्यः । उत्त० १७ । व्य० प्र० १३७ अ । अनुयोगधरः । आचा० ३५३ । सपरसिद्धंतपरूवगो । नि० चू० प्र० १६ अ । आयरिए–आचार्यः–प्रतिबोधकप्रव्राजकादिः अनुयोगाचार्यो वा । ठाणा० १४३, २४४ ।

आयरियं-आचरितम्, आसेवितं । आव० २६३ । आर्य्यः–आराद् यातः पापकर्म्मभ्य इति । भग० ९० । आचरणमाचरितं तत्तत्क्रियाकलापः । उत्त० २६६ । आरायातं सर्वकुयुक्तिभ्य इत्यार्य–तत्त्वं तत् । उत्त० २६६ । आर्यम्–आर्याणां कर्त्तव्यं आचार्यं वा, मुमुक्षुणा यदाचरणीयं ज्ञानदर्शनचारित्रम् । सूत्र० १८४ । पापकर्मभ्य आरायातमित्यार्यम् । ठाणा० ११९ ।

आयरिय-आचार्यः । प्रज्ञा० ३२७ । शिल्पी । जं० प्र० २१२ । आङ्भिविध्याप्त्या मर्यादया वा स्वयं पञ्चविधाचारं चरत्याचरयति वा परान्, आचर्यते वा, मुक्त्यर्थिभिरासेव्यत इति । उत्त० ३७ । आ–मर्यादया–तद्विषयविनयरूपया चर्यते–सेव्यते, जिनशासनार्थोपदेशकतया तदाकाङ्क्षिभिरिति, आचारः–ज्ञानाचारादिः, आ–मर्यादया वा चारो-विहार आचारः तत्र यः स्वयंकरणात्प्रभाषणात्प्रदर्शनाच्च साधुः सः, आ–ईषत्–अपरिपूर्णाः हेरिका ये ते चाराः–आचाराः–चारकल्पाः, युक्तायुक्तविभागनिरूपणनिपुणा विनेयाः शिष्यास्तेषु यो यथावच्छास्त्रार्थोपदेशकतया । भग० ३ ।

आयरियउवज्झाए – आचार्योपाध्यायः, आचार्येण सहोपाध्यायः । भग० २३२ । आचार्येवोपाध्यायः । नि० चू० प्र० १९६ आ ।

आयरियजणवय-देशविशेषः । नि० चू० प्र० ३४४ आ ।

आयरियत्ते – आचार्यकम्–तद्ग्रन्थव्याख्यातृत्वम् । व्य० प्र० १६६ अ ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आयरियव्वं-पढियव्वं। नि० चू० प्र० ५ आ।

आयवणाम-आतपनाम-यदुदयात् जन्तुशरीराणि स्वरूपेणानुष्णान्यपि उष्णप्रकाशलक्षणमातपं कुर्वन्ति तदातपनाम, तद्विपाकश्च भानुमण्डलगतेषु पृथिवीकायिकेष्वेव न वह्नौ, प्रवचनेऽपि निषेधात्, तत्रोष्णत्वमुष्णस्पर्शनामोदयात्, उत्कटलोहितवर्णनामोदयाच्च प्रकाशकत्वम्। प्रज्ञा० ४७३।

आयरिया-आचार्याः-प्राणाचार्या वैद्याः। उत्त० ४७५। व्य० प्र० १७१ अ।

आयरिसो-आदर्शः। आचा० ५।

आयरेणं-आदरेण, प्रयत्नेन। जं० प्र० १९२।

आयरो - आदरः, आद्रियते आदरणं वा, परिग्रहस्याष्टमं नाम। प्रश्न० ९२। सम्भ्रमः। बृ० तृ० ११ अ।

आर्य-अज्ज, पितामहः। व्य० प्र० १७१ अ। अजुगुप्सीत्कारी। व्य० प्र० १४ अ।

आयलयं-गृहम्। पउ० ३३-६६। पराधीनताम्। पउ० २४-१५।

आयवं-आतपवान्, चतुर्विंशतितममुहूर्त्तनामविशेषः। सूर्य० १४६। जं० प्र० ४९१। रविबिम्बजनित उष्णप्रकाशः। उत्त० ५६१। आतपः, आ-समन्तात्तपति सन्तापयति जगदिति। उत्त० ३८। घर्मं। उत्त० १२१।

आयवतत्तए-आतपतप्तं पयः। भग० ६८०।

आयवत्ताइं-आतपत्राणि, छत्राणि। जं० प्र० ८१।

आयवाइ-विश्वकारणात्मवादिनः। आव० ८१६।

आयवाई-आत्मवादिनः, क्रियावादिविशेषः। सम० ११०। 'पुरुष एवेदं ग्नि' मित्यादि प्रतिपत्तुरिति। ठाणा० २६८।

आयवाभा - आतपाभा, सूर्यस्य ज्योतिषेन्द्रस्य द्वितीया अग्रमहिषी। जीवा० ३८५। सूर्यस्य पत्नीनाम। भग० ५०५।

आयवी - आत्मवित्, आत्मानं श्वभ्रादिपतनरक्षणद्वारेण वेत्तीति। आचा० १५४।

आयवीरियं-वीर्यस्य पञ्चमभेदः। नि० चू० प्र० १९ अ।

आयसंचेयणिज्जा - आत्मना संचेत्यन्ते-क्रियन्त इति आत्मसंचेतनीया (घट्टन-पतन-स्तंभन-श्लेषजन्या उपसर्गाः)। ठाणा० २८०।

आयसंचेयतो-आत्मसंचेतनीयः-आत्मनैवात्मनो दुःखोत्पादनम्। व्य० प्र० १९६ अ।

आयसा-आत्मना। सूत्र० १०६।

आयसी-लोहमयी, दर्भमयी च। प्रश्न० १३।

आयसंवेणिज्जा-आत्मसंवेदनीया-आत्मना क्रियन्ते ये, उपसर्गाः। आव० ४०५।

आयसरीरसंवेयणी-आत्मशरीरसंवेजनी, संवेजनीकथायाः प्रथमोभेदः। दश० ११२।

आयसरीराणवकंखिया-स्वशरीरक्षतिकारिणी क्रिया। ठाणा० ४३।

आयसेण - आत्मसेनः, जंबूद्वीपैरवते अस्यामवसर्प्पिण्यां चतुर्थतीर्थकृत। सम० १५९।

आया - आत्मा, जीवः। आचा० १६। आत्मा। भग० १२२। आत्मा, रूपं। नंदी २१२। द्वादशशते आत्मभेदनिरूपणार्थो दशमोद्देशकः। भग० ५५२। अतति-सततमवगच्छति 'अत सातत्यगमन' इति वचनादतो धातोर्गत्यर्थत्वाद्गत्यर्थानां च ज्ञानार्थत्वादनवरतं जानातीति निपातनादात्मा-जीवः उपयोगलक्षणत्वादस्य सिद्धसंसार्यवस्थाद्वयेऽप्युपयोगभावेन सततावबोधभावात्, अतति-सततं गच्छति स्वकीयान् ज्ञानादिपर्यायानित्यात्मा, संसार्यपेक्षया नानागतिषु सततगमनात् मुक्तापेक्षया च भूततद्भावत्वादात्मेति। ठाणा० १०।

आयाए-आत्मविराधनादोषः। ओघ० ७९।

आयाणं-आदानम्, ईप्सितार्थग्रहणम्। औप० १८। अर्गलास्थानं वा। औप० १८। दुष्प्रणिहितमिन्द्रियं। आचा० ३०४। कर्मादानम्। आचा० ३३७। आदीयते-स्वीक्रियते प्राप्यते वा मोक्षो येन तत्, ज्ञानदर्शनचारित्रत्रयम्। सूत्र० ५२। डगलगा। नि० चू० प्र० २२० आ। गहणं, जेण मग्गेण गंतूण दगमट्टियहरियादीणि घेप्पंति तं दगमट्टियं। दश० चू० ७८। कुचादिग्रहणम्, सम्प्राप्तकामस्यैकादशो भेदः। दश० १९४। आदानः-आदीयतेऽनेनेत्यादानो-मार्गः। दश० १६८। इन्द्रियम्, करणम्। भग० २८६। आदीयते-द्वारस्थगनार्थं गृह्यत इत्यादानः। जं० प्र० १११। आदीयते- गृह्यते आत्मप्रदेशैः सह श्लिष्यतेऽष्टप्रकारं कर्म्म येन तदादानम्, हिंसाद्याश्रवद्वारमष्टादशपापस्थानरूपं वा। आचा० १७०। संयमानुष्ठानं। आचा० १२८। कर्म्मोपादानं। आचा० २४३, ३३०। आदीयते-सावद्यानुष्ठानेन स्वीक्रियते। आचा० १९३। आदिः। व्य०प्र० २१८

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आ। हिंसायाश्रवद्वारमष्टादशपापस्थानरूपं वा तत्स्थितेर्निमित्तत्वात्कषाया वा। आचा० १७१। आदीयत इति, धनधान्यादि। उत्त० २६५। आदीयत इति आदिः–प्रथमम्। उत्त० ५७०। आदीयन्ते–गृह्यन्ते शब्दादयोऽर्था एभिरिति आदानानि–इन्द्रियाणि। बृ० प्र० २११ आ। आदीयते–सद्विवेकैर्गृह्यत इति, चारित्रधर्मः। उत्त० ३३८। आदीयते गृह्यतेऽर्थः अनेनेत्यादानम्–इन्द्रियम्। भग० २२४। आदानः, आदेयो रम्यः। प्रश्न० ८१। आदीयते–स्वीक्रियते आत्महितमनेनेति–संयमः। उत्त० २२५। सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्ररूपम्। सूत्र० ४०५।

आयाणपएण – आदीयते–प्रथममेव गृह्यत इत्यादानं तच्च तत्पदं चादानपदं तेन आदानपदेन। आचा० १९६।

आयाणपय – आदानपदम्, शास्त्रस्याध्ययनोद्देशकादेश्चादि पदम्। अनु० १४१।

आयाणपरिसाडे–आधानपरिसाटम्, गर्भाधानपरिसाटरूपमूलकर्मतृतीयभेदः। पिण्ड० १४२।

आयाणभंडमत्तनिक्खेवणासमिई – आदानभाण्डमात्रनिक्षेपणासमितिः, भाण्डमात्रे आदाननिक्षेपविषया समितिः–सुन्दरचेष्टा। आव० ६१६। आदाने–ग्रहणे भाण्डमात्राया:–वस्त्राद्युपकरणरूपपरिच्छदस्य, उपकरणस्य वा, भाण्डस्य–वस्त्रादेर्मृन्मयभाजनस्य वा मात्रस्य च–पात्रविशेषस्य निक्षेपणायां–विमोचने ये समिताः–सुप्रत्युपेक्षितादिक्रमेण सम्यक् प्रवृत्तास्ते। औप० ३५।

आयाणरक्खी – आदानरक्षी, आदीयते–स्वीक्रियते आत्महितमनेनेत्यादानः–संयमस्तद्रक्षी। उत्त० २२५।

आयाणसो–आदानशः–आदेरारभ्य। सूत्र० ४२४।

आयाणसोय – आदानस्रोतः, आदीयते – सावद्यानुष्ठानेन स्वीक्रियत इति आदानम्–कर्म्म संसारबीजभूतं तस्य स्रोतांसि–इन्द्रियविषया मिथ्यात्वाविरतिप्रमादकषाययोगा वा। आचा० १९२।

आयाणसोयगढिए – संसारबीजभूतेन्द्रियविषयः मिथ्यात्वादिगृद्धः–अभ्युपपन्नः। आचा० १९३।

आयाणिज्जं–आदानीयम्–श्रुतं। आचा० १२२। कर्म। आचा० २४२। आदातव्यं भोगाङ्गं, आदानीयं–कर्म आचा० १२२। ग्राह्यः, आदेयवचनश्च। आचा० १९१।

आयाणी–कचिद्देशविशेषेऽजाः सूक्ष्मरोमवत्यो भवन्ति, तत्पक्ष्मनिष्पन्नानि आजकानि भवन्ति। आचा० ३९४।

आयाणीय–आदानीयम्, ग्राह्यम्। आचा० ३८।

आयाती–आयातिः, गर्भान्निर्गमः। ठाणा० ६७।

आयापरिणामो – आज्ञया परिणामः। व्य० द्वि० ४५० अ।

आयाम – अवशायनम्। आव० ५४। दैर्घ्यम्। अनु० १८०, १७१। भग० ११९। ठाणा० ६९। आव० १८४ अवश्रावणम्। ओघ० १३३। पिण्ड० १७। आचामः। ठाणा० ३३९। अवसामणं। नि० चू० प्र० ४७ आ। आचाम्लम्। उत्त० ७०६। उच्चत्वम्। भग० २६९।

आयामगं–आयामकम्, अवश्रावणम्। उत्त० ४१९।

आयामणया–आकर्षणम्। भग० ९३।

आयामते–आयामकम्–अवश्रावणम्। ठाणा० १४७।

आयामविक्खंभो – आयामविष्कम्भः। आव० १५०।

आयामुसिणोदगं–अवश्रावणमुष्णोदकं च। ठाणा० ३३९।

आयामे–आयामः, दैर्घ्यम्। प्रज्ञा० ४२७।

आयामेति–ददाति। भग० ६६३।

आयामेत्ता–आयामेन समाकृष्य। सूत्र० ३०९। आयम्य, आकृष्य। भग० ९३।

आयामेत्था–भोजितवान्। भग० ६६२।

आयाय–आदाय, स्वीकृत्य, चरित्वा। उत्त० १२८। अवगम्य। आचा० ३३९। गृहीत्वा मयैतदर्थं यतितव्यमिति निश्चित्य बुद्ध्या सम्प्रधार्येतियावत्। उत्त० २६८। बुद्ध्या गृहीत्वाऽभ्युपगम्य। उत्त० २५३। गृहीत्वा, अवगम्य। आचा० ३३५। बुद्ध्या गृहीत्वा। उत्त० १०४।

आयार–स्वरूपम्। जं० प्र० १८। मूलगुणादिः। दश० २५६। लोचास्नानादिः। दश० ११०। आङ्–मर्यादायां चरणं चारः–मर्यादया कालनियमादिलक्षणया चार आचार इति। आव० ४४८। चतुर्थनिर्युक्तिः। आव० ६१। श्रुतज्ञानादिविषयमनुष्ठानं कालाध्ययनादि। भग० १२२। व्यवहारः। ठाणा० ६४। चारित्रम्। उत्त० ५८३। ज्ञानाचारादि। उत्त० ५८३।

आयारअक्खेवणी–आचाराक्षेपणी, आचारो–लोचास्नानादिस्तत्प्रकाशनेन आक्षेपणी। ठाणा० २१०।

आयारकहा। नि० चू० द्वि० ६५ अ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आयारकुसल-ज्ञानाद्याचारेण कर्मकुशानां लावकः। व्य० प्र० २३४। आचारे ज्ञातव्ये-प्रयोक्तव्ये वा दक्षः, अभ्युत्थानासनप्रदानाद्युपहितान्तगुणानामाकरो वा। व्य० प्र० २३६।

आयारक्खी-आत्मरक्षी, आत्मानं रक्षत्यपायेभ्यः कुगतिगमनादिभ्य इत्येवंशीलः। उत्त० २२५।

आयारगोअर - आचारगोचरः, क्रियाकलापः । दश० १९१। आचारः - मोक्षार्थमनुष्ठानविशेषस्तस्य गोचरः। आचा० २६६।

आयारग्ग-चूलिका। आचा० ७।

आयारतेणे-आचारस्तेनः, विशिष्टाचारवत्तुल्यरूपः इति। दश० १९०।

आयारदंसणं-आचारदर्शनम्, प्रत्युपेक्षणादिक्रियादर्शनम्। आव० ४४८।

आयारदोसो-आचारदोषः। आव० ६५४।

आयारपकप्प -आचारप्रकल्पः, आयरणं आयारो सो य पञ्चविहो-णाणदंसणचरित्ततववीरियायारो य, तस्स पकरिसेणं कप्पणा-सप्तभेदप्ररूपणेत्यर्थः। नि० चू० प्र० ४ आ। आचार-प्रथमाङ्गं तस्य प्रकल्पः-अध्ययनविशेषो निशीथमित्यपराभिधानं, आचारस्य वा-साध्वाचारस्य ज्ञानादिविषयस्य प्रकल्पो व्यवस्थापनमित्याचारप्रकल्पः। सम० ४८। उत्त० ६१६। (निशीथः) आचार एव। आव० ६६०। प्रत्याख्यानपूर्वस्य विंशतितमं प्राभृतं। आचा० ३१९, ३२०। निशीथाध्ययनम्। ठाणा० ३३५।

आयारपभासणं-कालनियमाद्याचारव्याख्यानम्। आव० ४४८।

आयारफल-आचारफलम्, मुक्तिलक्षणम्। उत्त० ५८३।

आयारभंडए-आचारभाण्डम्। अनुत० १।

आयारभंडग-आचारभाण्डकं-पात्रकम्। ओघ० १५१।

आयारभाव-विशिष्टाचारः। दश० १९०।

आयारमंतरे-आचारान्तरे। आव० ७९३।

आयारवं-पंचविहं आयारं जो मुणइ आयरइ वा सम्मं सो। नि० चू० तृ० १२८ आ। ज्ञानादिपञ्चप्रकाराचारवान्। ठाणा० ४२४, ४८४।

आयारवंतं-आकारवत्, सुन्दराकारं, आकारचित्रं वा। औप० २।

आयारसमाही-आचारसमाधिः, चतुर्थं विनयसमाधिस्थानम्। दश० ३५५।

आयारे-आचारः। नि० चू० तृ० १४८ आ। ज्ञानादिविषयाऽऽसेवा। ठाणा० ३२५। आचार्यणां नमस्कारार्हत्वे तृतीयहेतुः, तानाचारवत आचाराख्यापकांश्च प्राप्य प्राणिन आचारपरिज्ञानानुष्ठानाय प्रभवन्ति। आव० ३८३।

आयारो-आचारः, साधुसामाचारी। प्रश्न० १२५। आचार्यते आसेव्यत इत्याचारः। आचा० ५। आचारः। व्य० द्वि० ३९१ अ।

आयावए-आतापनाकारी। प्रश्न० १०७।

आयावगा-असुरकुमारविशेषः। भग० ६२०।

आयावणा-आतापनास्थानम्। आव० ३९१।

आयावादी-आत्मवादी। आचा० २२।

आयावतं-सकृदीषद्वा तापनमातापनम्। दश० १६३।

आयावितो-आतापयन्। आव० ३७१।

आयास-पीडा। ओघ० १५७। लोहमयम्। भग० ३१९। मनःप्रभृतीनां खेदः, परिग्रहस्य चतुर्विंशतितमं नाम। प्रश्न० ९२।

आयासकर-आदेशितः आदेशः, आदेशत इति आदेशः। व्य० द्वि० ३३६ आ।

आयाहिणंपयाहिणं - आदक्षिणप्रदक्षिणः, आदक्षिणात्-दक्षिणहस्तादारभ्य प्रदक्षिणः-परितो भ्राम्यतो दक्षिण एव। सूर्य० ६। आव० १२४। जं० प्र० १७। भग० ११४।

आयाहिण-आदाहिणा, आदक्षिणाप्रदक्षिणा। आव० २३२।

आयुःकर्मानुभूतिः - स्थितिर्जीवनमिति। प्रज्ञा० १६९।

आयुःक्षेमस्य-जीवितस्य। आचा० २९१। आयुषः क्षेमः-सम्यक्पालनं तस्य। आचा० २९०।

आयुर्वेदः-वेदकशास्त्रम्। विपा० ७५।

आयो-लाभः। भग० ९। गमनं, वेदनम्। ठाणा० ३४८।

आयोगठाणं - आभोगस्थानम्, मेलनस्थानम्। आव० ८२३।

आयोग्गहो-आयपमाणं खेत्तं। नि० चू० प्र० २४६ आ।

आयोधनस्थानम्-अट्टालकम्। उत्त० ३११।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आरं-आरः, संसारः। बृ० प्र० ५१ अ, २०१ अ। इहभवः, गृहस्थत्वम्, संसारो वा। सूत्र० ५६। इहलोकाख्यं मनुष्यलोकं वा। सूत्र० १५२।

आरंभ - आरम्भः, जीवोपघातः, उपद्रवणं, सामान्येन वाऽऽश्रवद्वारप्रवृत्तिः। भग० ३१। श्रावकस्याष्टमी प्रतिमा। आव० ६४६। आरम्भ्य। आव० ६८८। सावद्यानुष्ठानम्। आचा० ७८। जीवोपघातः। भग० ७३५। पृथिव्याद्युपमर्दनं। ठाणा० १०८। सावद्यक्रियानुष्ठानम्। आचा० १५६। आरम्भणमारम्भः, शरीरधारणायान्नपानाद्यन्वेषणा। आचा० २९०। प्राणिवधः। तत्त्वा० ६-९। द्रव्योत्पादनव्यापाराः। उत्त० ४५६। पृथिव्याद्युपमर्दनम्। प्रज्ञा० ३३५। जीवः, कृष्यादिव्यापारः, जीवानामुपद्रवणं वा। प्रश्न० ६। नि० चू० प्र० ३३ आ। व्यापारः। प्रश्न० ६३। हलदन्तालखननः। आव० ८१८।

आरंभइ-आरभते-पृथिव्यादीनुपद्रवयति। भग० १८३।

आरंभओ - आरम्भजः, आरम्भात्-हलदन्तालखननाजायते सः। आव० ८१८।

आरंभकहा-आरंभकथा, छागतित्तिरमहिषारण्यकादिका हता अत्रेति प्रशंसनं द्वेषणं वा। भक्तकथायास्तृतीयभेदः। आव० ५८१। तित्तिराद्युपयोगकथा। ठाणा० २०९।

आरंभपरिण्णाए-आरम्भः-पृथिव्याद्युपमर्दनलक्षणः परिज्ञातः-तथैव प्रत्याख्यातो येनासावारम्भप्रतिज्ञातः, श्रमणोपासकाष्टमी प्रतिमा। सम० १९।

आरंभसमारंभो-आरंभसमारंभः, आरंभा-जीवास्तेषां समारंभः-उपमर्दः, अथवा आरंभः-कृष्यादिव्यापारस्तेन समारंभो जीवोपमर्दः, अथवा आरंभो-जीवानामुपद्रवणं तेन सह समारंभः, परितापनमिति वा, प्राणवधस्यैकादशपर्यायः। प्रश्न० ५।

आरंभिया- आरंभिकी, आरंभः-पृथिव्याद्युपमर्दनं स प्रयोजनं-कारणं यस्याः सा, सम्यग्दृष्टेः प्रथमक्रिया। प्रज्ञा० ३३४। विंशतिक्रियामध्ये प्रथमा। आव० ६१२। आरम्भणमारम्भः तत्र भवा आरम्भिकी। ठाणा० ४१।

आरक्खि-आरक्षकः चौरग्राहकः। बृ० द्वि० १०७ अ। आरक्षिकः। ओघ० ८९।

आरक्खिगो-दंडवासिगो। नि० चू० तृ० ३० आ।

आरक्खितो-कोट्टवालो। नि० चू० प्र० २६२ अ।

आरक्खिय - आरक्षकः। उत्त० १६५। दण्डनायकः। दश० १६६। आव० ६३३। ओघ० १०६। आरक्षिकाणामप्युपरि स्थायिनो हिंडिका आरक्षिकाः, पुररक्षिकाः। व्य० प्र० १३५ अ।

आरक्खियपुरिसो-आरक्षकपुरुषः। आव० ३५१।

आरगय - आराद्गतम्-आराद्भागस्थितमिन्द्रियगोचरमागतमित्यर्थः। भग० २१७।

आरघट्टिकम्। उत्त० ३८२।

आरटन्ती-रुदन्ती। नंदी १५४।

आरणं-संशब्दनम्। ओघ० ८१।

आरणा - आरणाः, कल्पोपगैकादशवैमानिकभेदः। प्रज्ञा० ६९।

आरण्ण-आरण्यः, तापसादिः। अनु० २४४।

आरण्णगतणं-श्यामाकादितृणम्। बृ० द्वि० २२० अ।

आरण्णिय-आरण्यकः, अरण्ये भवः, तीर्थिकविशेषः। सूत्र० ४२२।

आरण्यकम्-लौकिकश्रुतम्। आव० ४६५।

आरतः-अत्र इतो वा। उत्त० ५४०।

आरत्तं-आरक्तम्, ईषद्रक्तम्। आचा० १२१।

आरद्धो-आरब्धः। विशे० ९८१।

आरनालं-कञ्जियं (देसीभासाए)। नि० चू० प्र० ४७ अ।

आरनिबद्धा-आरकनिबद्धा, गन्त्री। पिण्ड० १०२।

आरन्निय-अरण्ये वसतीति आरण्यकः। सूत्र० ३१५।

आरबके - आरबदेशोद्भवान्, म्लेच्छविशेषान्। जं० प्र० २२०।

आरबदेशजा-आरब्यः। जं० प्र० १९१।

आरबी-आरबदेशवासिनी स्त्री। भग० ४६०।

आरबो-आरबः, चिलातदेशवासी म्लेच्छः। प्रश्न० १४।

आरभंती-आरभमाणा, षट्कायान् विनाशयन्ती। पिण्ड० १५७।

आरभटभसोलः-त्रिंशत्तमो नाट्यविधिः। जीवा० २४७।

आरभड - आरभटम्, नृत्यविशेषः। जं० प्र० ४१२। नि० चू० तृ० १ अ। जहाभिहितविधाणतो विवरीयं, अहवा तुरियं अण्णंमि वा दरपडिलेहंति अण्णं आढवेंति। नि० चू० प्र० १८१ आ। वितथकरणरूपा, त्वरितं सर्वमारभमाणस्य, अर्द्धप्रत्युपेक्षित एवैकत्र यदन्यान्यवस्त्रग्रहणं सा। ठाणा०

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३६१। विपरीता प्रत्युपेक्षणा, आकुलं यदन्यान्यवस्त्रग्रहणं तद्वा। ओघ० १०९। सोत्साहः सुभटः तेषामिदम्। जं० प्र० ४१७। अष्टाविंशतितमो नाट्यविधिः। जीवा० २४७। जं० प्र० १४७।

आरयं – आरतं, उपरतम्। सूत्र० १०५। अभिविधिना आसक्तं। प्रश्न० १३८।

आरसिउं–आरस्य, रुदित्वा। आव० ५०४।

आरसियं–आरसितम्, शब्दितं। आव० २२७।

आरा – आरा, प्रवणदण्डान्तर्वर्त्तिनी लोहशलाका। प्रश्न० २२। तुट्टोवाणहसिव्वणट्ठा। नि० चू० द्वि० १८ अ।

आराडी–आराटी, आरसनम्। आव० ६७७।

आरादण्डः – प्रतोदः। दश० २५०।

आराम–तत्र रमणीयतातिशयेन स्त्रीपुरुषमिथुनानि यत्र आरमन्ति स विविधपुष्पजात्युपशोभित आरामः। अनु० २४। विविधपुष्पजात्युपशोभितः। ठाणा० ३१२। रतिः। आचा० २२९। आरामः–आरमन्ति यस्मिन्माधवीलतादिके दम्पत्यादीनि स आरामः। भग० २३८। आरामाः–दम्पत्यादीनि येष्वारमन्ति ते। अनु० १४९। वाटिका। प्रश्न० ८। आरमन्ति–यस्मिन् माधवीलतागृहादौ दम्पत्यादीनि क्रीडन्तीति। औप० ३। पुष्पप्रधानवनम्। औप० ४१। दम्पत्योर्नगरासन्नरतिस्थानम्। जं० प्र० ३८८। आगत्य रमन्तेऽत्र माधवीलतागृहादिषु दम्पत्य इति सः। जीवा० २५८। दम्पतिरमणस्थानभूतमाधवीलतादिगृहयुक्तः। प्रश्न १२७। दम्पतिरतिस्थानलतागृहोपेतवनविशेषः। प्रश्न० ७३। माधवीलताद्युपेतो दम्पतिरमणाश्रयो वनविशेषः। प्रश्न० १२६।

आरामाइ–विविधवृक्षलतोपशोभिताः कदल्यादिप्रच्छन्नगृहेषु स्त्रीसहितानां पुंसां रमणस्थानभूताः। ठाणा० ८६।

आरामागार–आराममध्यवर्तिगृहम्। औप० ६१। उद्यानगृहम्। आचा० ३६५। आचा० ३०६।

आरामिओ–आरामिकः। आव० ३९०।

आराहइत्ता–आराध्य, उत्सूत्रप्ररूपणादिपरिहारेणाबाधयित्वा। उत्त० ५७२। यथावदुत्सर्गापवादकुशलतया यावज्जीवं तदर्थासेवनेन। उत्त० ५७२।

आराहए – आराधयति, प्रगुणीकरोति। दश० २२४। आराधकः–निरतिचारपालनाकृत्। उत्त० ५७८।

आराहओ–आराधकः, अविराधकः। ओघ० ११२।

आराहगा–आराधकाः–आराधयन्ति–अविकलतया निष्पादयन्ति सम्यग्दर्शनादीनि इत्याराधकाः। उत्त० २३३। आवर्जकाः। उत्त० ३६१।

आराहण–आराधनम्, अखण्डकालकरणम्। भग० २९७।

आराहणा–आराधना, सम्यगासेवना। उत्त० ५८६। अनुष्ठानम्। उत्त० ५९१। ज्ञानाद्याराधनात्मिका। उत्त० ५८२। आवर्जनार्थम्। उत्त० ५९१। अखण्डकालस्य करणम्। आव० ८४०। चरमकाले निर्यापणारूपा। दश० २६२। मोक्षमार्गाखण्डना। आव० ५६२। आवश्यकस्य पर्यायः। विशे० ४१५। अष्टमशते दशमोद्देशकः। भग० ३२८। अखण्डकालकरणम्। उपा० १२। मोक्षाराधनाहेतुत्वात्। अनु० ३१। निरतिचारज्ञानाद्यासेवा। ठाणा० ९८।

आराहणामरणंते–आराधनामरणान्ते, मरणकाले आराधना, योगसङ्ग्रहे द्वात्रिंशत्तमो योगः। आव० ६६४।

आराहणी–आराधनी, आराध्यते–परलोकापीडया यथावदभिधीयते वस्त्वनया, द्रव्यभावभाषाभेदः। दश० २०८।

आराहा–आरोहन्ति ते आराहा। नि० चू० प्र० २७७ अ।

आराहिय – आराधितम्, एभिरेव प्रकारैः सम्पूर्णैर्निष्ठां नीता। ठाणा० ३८८। सफलीकृतः। उत्त० २९८।

आराहियचरणया–आराधितचरणता, चरणप्रतिपत्तिसमयादारभ्य मरणान्तं यावन्निरतिचारतया तस्य पालना। भग० ६९५।

आराहेइ–आराधयति, साधयति। उत्त० ५८२।

आरिए–आर्याः, आराद् याताः सर्वहेयधर्म्मेभ्य इत्यार्याः–संसारार्णवतटवर्त्तिनः क्षीणघातिकर्म्मांशाः संसारोदरविवरवर्त्तिभावविदः तीर्थकृतः। आचा० ११६। ऋद्धिप्राप्ता अर्हदादयः, क्षेत्रजात्याद्यार्याः। सम० १३५। आर्यः–चारित्रार्हः। आचा० १३१।

आरिओ–आर्यः, आराद् यातः सर्वहेयधर्मेभ्य इति। सूत्र० ३३। आराद्यातः सर्वहेयधर्मेभ्य इति, मोक्षमार्गः सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रात्मकः। सूत्र० १७२।

आरियदंसी–आर्यं–प्रगुणं न्यायोपपन्नं पश्यति तच्छीलश्चेति आर्यदर्शी–पृथक्प्रहेणकश्यामाशनादिसंकल्परहितः। आचा० १३१।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आरियपदेसिए-आर्यप्रदेशितः-तीर्थकरप्रणितः । आचा० २४७ ।

आरियपन्ने - आर्यप्रज्ञः-श्रुतविशेषितशेमुषीकः । आचा० १३१ ।

आरिया-आर्याः, आराद्धेयधर्मेभ्यो याताः-प्राप्ता उपादेयधर्मैरिति । प्रज्ञा० ५५ ।

आरुग्ग-आरोग्यं-सिद्धत्वम् । आव० ५०७ ।

आरुग्गबोहिलाभो-आरोग्यबोधिलाभः, आरोगस्य भाव आरोग्यं-सिद्धत्वं, तदर्थं बोधिलाभः-प्रेत्य जिनधर्मप्राप्तिः । आरोग्याय बोधिलाभः । आव० ५०८ ।

आरुभिता-छायाया नवमभेदः । सूर्य० ९५ ।

आरुहयं-आर्हतम् । आव० ४६५ ।

आरुहेत् । आचा० ३७९ ।

आरुह्यते-अध्यास्यते । उत्त० ५१० ।

आरूढ-आरुढः, अध्यासितः । उत्त० ३४९ ।

आरूढे पाउयाहिं-आरुढः पादुकयोः-काष्ठमयोपानहोः, एषणायां नवमदायकदोषः । पिण्ड० १५७ ।

आरुवणा-आरोपणा, यत्रैकस्मिन्प्रायश्चित्तेऽन्यदप्यारोप्यते । प्रश्न० १४५ । आचारप्रकल्पस्याष्टाविंशतितमो भेदः । आव० ६६० । पर्यनुयोगः । विशे० ११५२ । पच्छित्तं । नि० चू० प्र० २३९ आ ।

आरे-पंकप्रभापक्रान्तमहानरकाः । ठाणा० ३६५ ।

आरेण-आरतः, प्रत्यूषसि । ओघ० १४८ । आरात् । सूत्र० ४२३ । समारभ्य । विशे० ९२८ ।

आरोगसाला-अगाहसाला । नि० चू० द्वि० ३८ आ ।

आरोग्गं-आरोग्यं, रोगाभावः । आव० ३४१ । नीरोगता । आव० ३४१ ।

आरोग्गा-अरोगाः-जरादिवर्जिताः । ठाणा० २४७ ।

आरोवणा - आरोपणा, आरोपणमेकापराधप्रायश्चित्ते पुनः पुन आसेवनेन विजातीयप्रायश्चित्ताध्यारोपणम् । ठाणा० २०० । प्ररूपणायाः प्रथमभेदः । आव० ३८२ । परस्परावधारणम् । आव० ३८३ । प्रायश्चित्तम् । बृ० प्र० ८५ आ । चडावना (मायाप्रत्ययमधिकप्रायश्चित्तम्) । ठाणा० ३२५ । चडावणा, अहवा जं दव्वादि पुरिसं विभागेण दाणं सा आरोवणा । नि० चू० तृ० ८५ अ । आचाराङ्गस्याष्टविंशतितममध्ययनम् । उत्त० ६१७ ।

आरोवणाकसिणं-आरोपणाकृत्स्नं, षाण्मासिकं ततः परस्य भगवतो वर्द्धमानस्वामिनस्तीर्थं आरोपणस्याभावात् । व्य० प्र० ११८ आ ।

आरोवणापायच्छित्तं-प्रायश्चित्तभेदः । व्य० प्र० ११ अ ।

आरोहकः । उत्त० ४८ ।

आरोहणा - आरोपणा-प्रायच्छित्तविशेषः । व्य० प्र० १२४ आ ।

आरोहपरिणाहयुक्तता-आरोहो-दैर्घ्यं परिणाहो-विस्तरस्ताभ्यां तुल्याभ्यां युक्तता, शरीरसम्पत्प्रथमभेदः । उत्त० ३९ ।

आरोहा-महामात्रा । विपा० ४६ ।

आरोहो-उस्सेहो । नि० चू० प्र० २६६ आ । नातिदैर्ध्यं नातिह्रस्वता शरीरोच्छ्रयो वा । बृ० प्र० ३०१ आ ।

आर्जिका-अज्जिए, आर्यिका, मातुः पितुर्वा माता । दश० २१६ ।

आर्जवम्-भावदोषवर्जनम् । तत्त्वा० ९-६ ।

आर्त्ताः-दुःखिनः रागद्वेषोदयेन । आचा० १८३ ।

आर्द्रकः-आर्द्रकनगराधिपतिः । सूत्र० ३६ । विशिष्टतपश्चरणफलवान् । सूत्र० २९९ । सचित्तं तरुशरीरम् । आव० ८२८ ।

आर्द्रकुमारः-प्रतिमादर्शने दृष्टान्तः । बृ० प्र० १८५ अ । सदाचारप्रयत्नवज्ज्ञातं । सूत्र० ३८५ ।

आर्यः-आरात्-सर्वहेयधर्मेभ्योऽर्वाग् यातः । नंदी ४९ ।

आर्यकम्-हरितम् । दश० १८५ ।

आर्यकृष्ण-अज्जकण्हे, आचार्यनाम । विशे० १०२० ।

आर्यखपुट-विद्याबले दृष्टान्तः । बृ० तृ० १५६ अ । विद्यासिद्धः, सिद्धमन्त्रः । दश० १०३ ।

आर्यगङ्गः-आचार्यनाम । विशे० ९२७ ।

आर्यमंगु-आचार्यनाम । बृ० प्र० २४ अ ।

आर्यरक्षित-अज्जरक्खिय, आचार्यनाम । विशे० ९२९, ९३०, १००२ ।

आर्यवचनम् - अज्जवयणं, आर्याणां-तीर्थकृतां वचनम्-आगमः । उत्त० ५२६ ।

आर्यवज्रः-कर्णाभ्यां श्रुते दृष्टान्तः । बृ० प्र० ६३ अ ।

आर्यवैरः-अज्जवेर, आचार्यनाम । विशे० ९२९ ।

आर्यश्यामः-आचार्यविशेषः । प्रज्ञा० ६०६ ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आर्यसमुद्रः-आचार्यविशेषः। बृ० प्र० २४ अ।

आर्यसुहस्ती-आचार्यविशेषः। बृ० प्र० २४ आ।

आर्या-अज्जा, प्रशान्तरूपा। अनु० २६। भिक्षुणी। ओघ० २०८।

आर्याषाढा-आचार्यनाम। विशे० ९५२।

आर्यासूत्रम्-अज्जासुत्तं, सूत्रभेदः। बृ० प्र० २०१ आ।

आर्यिका-आर्जिका, मातुः पितुर्वा माता। दश० २१६।

आर्यैः-तीर्थकृद्भिः। आचा० २७४। सकलहेयधर्मेभ्यो दूरं यातैस्तीर्थकरादिभिराचार्यैर्वा। उत्त० २९३।

आलंकारिअभंडं-आलङ्कारिकभाण्डम्, आभरणभृतभाजनम्। जं० प्र० २५५।

आलंकारियं-आलङ्कारिकम्, अलङ्कारयोग्यं भाण्डम्। जीवा० २३६।

आलंच-आलम्बः, द्रव्यस्य बहुत्वेतरादिभिर्लोके प्रतीतभेदः। प्रश्न० ५६।

आलंब-आलम्बः, प्रलम्बः। भग० १७५।

आलंबण-आलम्बनम्, प्रपततां साधारणस्थानम्। आव० ५३४। प्रवृत्तिनिमित्तं शुभमध्यवसानम्। आव० ५८६। ग्लानादि। उत्त० ५८७। रज्ज्वादिवदापद्गर्तादिनिस्तारकत्वादालम्बनम्। भग० ७३८, ७३९। आश्रयणीयं गच्छकुटुंबकादि। ठाणा० १५४।

आलंबणबाहा-अवलम्बनबाहाः, द्वयोः पार्श्वयोरवलम्बनाश्रयभूता भित्तयः। जं० प्र० २९२।

आलइअ-आलगितम्, आविद्धम्। आव० १८५। यथास्थानं स्थापितम्। जं० प्र० १६०। प्रज्ञा० १०१।

आलइयमालमउड-आगालितमालमुकुटम्, आगलितमालं मुकुटं यस्य सः। भग० १७४। आलगितमालमुकुटः। आचा० ४२३।

आलए-आलयः, आश्रयः। जीवा० २७९। उत्त० ४५४। जं० प्र० १८। वसतिः, सुप्रमार्जिताः स्त्रीपशुपण्डकविवर्जिता वा। आव० ५२९।

आलग्गो-अधृतिमापन्नः, कातरः। आव० ८००।

आलपाल-प्रलापः। आव० ६६९।

आलभिआ-आलंभिका नगरीविशेषः, वीरस्य सप्तमवर्षारात्रस्थानम्। आव० २०९, २२१।

आलभिया-आलंभिका, नगरीविशेषः। भग० ५५०। नगरीविशेषः। भग० ६७५।

आलय-आवासः। ओघ० १५६। आश्रयः। जीवा० १७६। जं० प्र० १२१।

आलयविन्नाणं-आलयविज्ञानं-ज्ञानसंततिः। सूत्र० २६।

आलयगुणेहिं-आलयगुणैः, बहिश्चेष्टाभिः प्रतिलेखनादिभिरुपशमगुणेन च। बृ० प्र० ६२ अ।

आलवंते-आलपन्, अत्यर्थं लपन्। अनु० १४२। आलपति, आङिति ईषल्लपति-वदति। उत्त० ५५।

आलविज्ज-इषत्सकृद्वा लपनमालपनम्। दश० २१६।

आलवित्तए-आलपनम्, सकृत्सम्भाषणम्। आव० ८११। आलपितुं-सकृत्सम्भाषितुम्। उपा० १३।

आलस्स-आलस्यम्, अनुद्यमस्वरूपम्। उत्त० १५१। अनुत्साहात्मा। उत्त० ३४५।

आला-विद्युत्कुमारीमहत्तरिका। ठाणा० ३६१।

आलापति-आलगयति। आव० १००।

आलानम्-हस्तिबन्धनस्तम्भम्। नंदी० १५३।

आलाव-आलापः, सकृज्जल्पः। भग० २२३। आलापः आङ ईषदर्थत्वादीषल्लपनम्। ठाणा० ४०७।

आलावगो-आलापकः। आव० २६०।

आलावणबंधे-आलापनबंधः-आलाप्यते-आलीनं क्रियत एभिरित्यालापनानि रज्ज्वादीनि तैर्बन्धस्तृणादीनाम्। भग० ३९५, ३९८।

आलावो-बहुमाणणेहभरितो सरभसं णमोक्खमासमणाणंतितो गुरुआलावो भण्णति। नि० चू० प्र० २३७ आ।

आलि-वनस्पतिविशेषः। जीवा० २००।

आलिंग-आलिङ्गः, यो वादकेन मुरज आलिङ्ग्य वाद्यते। जं० प्र० १०१। मुरजो वाद्यविशेषः। जं० प्र० ३१। मृन्मयो मुरजः। जीवा० १०५।

आलिंगकसंठित-आलिङ्गसंस्थितः, आवलिकाबाह्यस्य चतुर्दशं संस्थानम्। जीवा० १०४।

आलिंगण-आलिङ्गनम्, ईषत्स्पर्शनम्, सम्प्राप्तकामस्य दशमो भेदः। दश० १९४। स्पृशनम्। नि० चू० प्र० २५६ आ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आलिंगणवट्टि-आलिङ्गनवर्ती, शरीरप्रमाणमुपधानेन वर्त्तते यत्। जं० प्र० २८५। जीवा० २३२। सूर्य० २९३।

आलिंगणि - आलिङ्गिनी, अप्रतिलेखितदूष्यपञ्चके चतुर्थो भेदः। आव० ६५२।

आलिंगपुक्खरे - आलिङ्गपुष्करम्, मुरजमुखम्। भग० १४५।

आलिंगणी-पुरुषप्रमाणं पार्श्वमुपधानं। बृ० द्वि० २२० अ। जाणुकोप्परादिसु जा दिज्जति सा। नि० चू० द्वि० ६१ अ।

आलिंगिता - पुरिसेणित्थीस्तनादिषु स्पृष्टा। नि० चू० प्र० ११३ अ।

आलिंगो-आलिङ्ग्यः। जीवा० २६६। आलिङ्गः, मुरजो वाद्यविशेषः। जीवा० १८९।

आलिंपइ-सकृत् लिंपइ। नि० चू० द्वि० ७६ आ।

आलि-वनस्पतिविशेषः। जं० प्र० ४५। जीवा० २००। खलः। विशे० ६११। औषधविशेषः। प्रज्ञा० ३३

आलिखिज्जति-आलिख्यते। आव० ८५७।

आलिघरं -आलिगृहकम्, वनस्पतिविशेषस्तन्मयं गृहकम्। जीवा० २००।

आलिद्धमणालिद्धं-आलिष्टानाश्लिष्टम्, कृतिकर्मणि चतुर्भङ्ग-भिन्नः सप्तविंशतितमो दोषः। आव० ५४४।

आलित्त-अभिविधिना ज्वलितः। भग० १२१। आदीप्तः। अन्त० १७। आलित्र, नौवाहनोपकरणः। आचा० ३७८।

आलिद्धा - आदिग्धाः, शिलायां शिलापुत्रके वा लग्नाः। भग० ७६६।

आलिन्दकम्-अलिंदग, कुण्डुल्कम्। अनु० १५१।

आलिसंदग-चपलकाः। जं० प्र० १२४। चवलकप्रकाराः, चवलकाः। भग० २७४। धान्यविशेषः। भग० ८०२।

आलिसिंदया-चवलया। ठाणा० ३४४।

आलिहइ-आलिखति, विन्यस्यति। जं० प्र० १९२।

आलिहमाण-आलिखन्, ईषत् सकृद्वाऽऽकर्षन्। भग० ३६५।

आलिहाविज्जा-ईषत्सकृद्वाऽऽलेखनम्। दश० १५२।

आलिहित्ता - आलिख्य, आकारकरणेन कृत्वा अन्तर्वर्णकादिभरणेन पूर्णानि कृत्वा। जं० प्र० १९२।

आलीढं-आलीढम्, आक्रान्तम्। आव० ७०४। दक्षिणपादम-ग्रतो भूतं कृत्वा वामपादं पश्चात्कृत्यापसारयति, अन्तरं द्वयोरपि पादयोः पञ्च पादाः, लोकप्रवाहे प्रथमं स्थानम्। आव० ४६५। यत्र दक्षिणं पादमग्रतः कृत्वा वामपादं पृष्ठतः सारयति, अन्तरं द्वयोरपि पादयोः पञ्च पदानि तत्स्थानम्। उत्त० २०५। दक्षिणमूरुमग्रतो मुखं कृत्वा वाममूरुं पश्चात्मुख-मपसारयति, अन्तरा च द्वयोरपि पादयोः पञ्च पदाः ततो वामहस्तेन धनुर्गृहीत्वा दक्षिणहस्तेन प्रत्यञ्चामाकर्षति तत। व्य० प्र० ४६ आ। योधसंस्थानं। आचा० ८९। योध-स्थानम्। ठाणा० ३। वामूरुअं अग्गओ काउं दाहिणपि-ट्ठतो वामहत्थेण धणू घेत्तूणं दाहिणे एयं गच्छइ। नि० चू० तृ० ९० अ।

आलीणाणि-ईसिं लीणाणि। दश० चू० १२५।

आलीणे-आलीनः। जीवा० २७३। गुरुसमाश्रितः, संलीनो वा। भग० ८१।

आलीवग-आदीपिकः, गृहादिप्रदीपनककारी। प्रश्न० ४६।

आलीवणं-व्याकुललोकानां मोषणार्थं ग्रामादिप्रदीपनकम्। विपा० ३९।

आलीवण। नि० चू० द्वि० १७० अ।

आलुंचनं-आलुञ्चनं, ग्रहणम्। आव० ५६२।

आलुंपे - आलुम्पः, निर्लाञ्छनगलकर्तनचौर्यादिक्रियाकारी। आचा० १०२।

आलुए-आलुकः - अनन्तकायभेदः। भग० ३००। कन्द-विशेषः। उत्त० ६९१। आलुकम् - साधारणवनस्पति-कायिकभेदः। जीवा० २७। आलुका-कुण्डिका। अनुत्त० ५५।

आलुयं-आलुकम्, कन्दविशेषः। अनुत्त० ६। त्रयोविंशति-तमशतकाद्योद्देशकः। भग० ८०४। आर्द्रकम्। भग० ८०४।

आलेखः-विचित्रम्। जीवा० १९९।

आलेवणं-आलेपनम्। आव० ६२३। आचा० ३२।

आलेहो-आलेखः, चित्रम्। जं० प्र० ३२।

आलो-आलं, अशक्यक्रियम्। आव० ९४।

आलोअं-अवलोकः, निर्यूहकादिरूपः। दश० १६६। बहिः-प्रस्थानभाविनि शकुनानुकूल्यालोकेन। जं० प्र० २६३। सौरप्रकाशम्। प्रज्ञा० ५००।

आ(अव)लोअचलं-आ(अव)लोकचलम्, अवलोकनमालो-कस्तस्मिँश्चलं, दर्शनलालसम्। आव० ७८४।

आलोअणं-आलोकनम्, निरूपणम्। ओघ० ५२। अण्णेसिं आख्यानं। नि० चू० प्र० ३३४ अ। आलोक्यन्ते दिशोऽ-

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्मिन् स्थितैरिति। उत्त० ४५१। आलोचनम्-गुरुनिवेदनम्। ठाणा० १३७। प्रायश्चित्तभेदः। ठाणा० २००।

आलोअणा-आलोचना, आभिमुख्येन गुरोरात्मदोषप्रकाशनम्। आव० ४६९।

आलोअभायणं-आलोकभाजनम्, मक्षिकाद्यपोहाय प्रकाशप्रधानं भाजनम्। दश० १८०।

आलोइज्ज-आलोचयेत्-प्रकाशयेत्। उत्त० ५४४।

आलोइज्जा-आलोकयेत्-पश्येत्-ब्रुयात्। आचा० ३२८। अवलोकयेत्। आचा० ३९६।

आलोइता-आलोकिता, ईषद्दृष्टा। उत्त० ४२५। समन्ताद्दृष्टा। उत्त० ४२५।

आलोइत्तए-आलोचयितुम्, गुरवेऽपराधान्निवेदयितुमिति। ठाणा० ५६।

आलोइयं-आलोकितं-प्रत्युपेक्षितं। आचा० ४२८।

आलोइयपडिक्कंते-आलोचितप्रतिक्रान्तः, आलोचितं गुरूणां यदतिचारजातं तत्प्रतिक्रान्तम्-अकरणविषयीकृतं येनाथवाऽऽलोचितश्चासावालोचनादानात्प्रतिक्रान्तश्च मिथ्यादुष्कृतदानादालोचितप्रतिक्रान्तः। भग० १२८।

आलोए-आलोकः, दर्शनम्। भग० ३१८। दर्शनं, दृश्यमानता। जीवा० ३९१। आलोचयेत्-दत्तावधानो भवेत्। आचा० ३४२। चक्षुर्दर्शनपथे। ओघ० १८३।

आलोएइ-आलोचयति। आव० ७२५।

आलोएज्जा-आलोचनं-गुरुनिवेदनम्। ठाणा० १३७।

आलोएत्तो-आलोयणा। व्य० प्र० १०८ अ।

आलोको-आलोक्यत इति आलोकः-स्थानदिगादिनिरूपणम्। ओघ० १८१। अतिरिक्तप्रदीपशिखादिदर्शनम्। उत्त० ६३१। सावकाशं मुक्त्वाऽभ्यन्तरे स्वपन्ति। ओघ० १०७। आलोक्यन्ते दिशोऽस्मिन् स्थितैरिति। उत्त० ४५१।

आलोगे-आलोकम्, सौरप्रकाशम्। जं० प्र० २२९। चोपलपादी। दश० चू० ७६। समो भूभागः। ओघ० १९३। आलोकनमालोको यावद्दृष्टिप्रसरः। ओघ० २३।

आलोचनम्-प्रकटनं प्रकाशनमाख्यानं प्रादुष्करणम्। तत्त्वा० ९-२२।

आलोचयति-गणयति प्रेक्षते च। आव० ५३६।

आलोचयेत्। व्य० द्वि० ७१ अ।

आलोयं-आलोकम्। ओघ० ८४। दृष्टिपथम्। औप० ६९। स्थानदिक्प्रकाशादिसप्तधाऽऽलोकम्। बृ० तृ० १४० आ। प्रकाशः। आव० ६४२। आलोकस्थानं-गवाक्षादिकं। आचा० ३४१।

आलोयणं-आलोचनम्, यथागृहीतभक्तपाननिवेदनम्। प्रश्न० १११। आलोचना, प्रयोजनतो हस्तशताद्बहिर्गमनागमनादौ गुरोर्विकटना, मिथ्यादुष्कृतं च। आव० ७६४। एकादशी गुर्वाशातना। आव० ७२५। गुरोः पुरतो वचसा प्रकटीकरणम्। व्य० प्र० १४ अ। ठाणा० २००। अलवर्णं। व्य० द्वि० ३३५ अ। सकृत् अनेकशः प्रलोकनम्। नि० चू० प्र० २२२ अ।

आलोयणा-आलोचना, आङिति-सकलदोषाभिव्याप्त्या लोचना-आत्मदोषाणां गुरुपुरतः प्रकाशना। उत्त० ५७९। आलोचना। ओघ० २२५। योगसङ्ग्रहे प्रथमो योगः। आव० ६६३। परस्स पागडं करेइ। नि० चू० तृ० ८५ अ। व्य० प्र० १०७ आ।

आलोयणाणुलोमं-आलोचनानुलोम्यम्, पूर्वं लघवः आलोच्यन्ते पश्चाद् गुरवः। आव० ७८१।

आलोयणारिहे-आलोचना-निवेदना तल्लक्षणां शुद्धिं यदर्हत्यतिचारजातं तदालोचनार्हम्। भग० ९२०।

आलोयभायणं-आलोकभाजनम्, प्रकाशमुखे भाजने, अथवा आलोके-प्रकाशे नान्धकारे पिपीलिकावालादीनामनुपलम्भात्, तथा भाजने-पात्रे, पात्रं विना जलादिसम्पतितसत्त्वादर्शनादिति। प्रश्न० ११२।

आलोविअ-अलोपिकः। दश० ४४।

आलोवेइ-आलोचयति। आव० ७१०।

आवंति-आचारप्रकल्पे प्रथमश्रुतस्कन्धस्य पञ्चममध्ययनम्। प्रश्न० १४५। आचाराङ्गस्य पञ्चममध्ययनम्। उत्त० ६१६। आचारांगे प्रथमश्रुतस्कंधस्य पंचमाध्ययनम्। सम० ४४। आचा० १९६। यावन्तः। आचा० १८५। आचारप्रकल्पस्य पञ्चमो भेदः। आव० ६६०।

आवंती-लोकसारापराभिधं, आचारांगपंचमाध्ययनम्। ठाणा० ४४४।

आवइ-आगच्छत्यापतति। उत्त० २८०।

आवईसु दढधम्मया-आपत्सु दृढधर्मता, योगसङ्ग्रहे तृतीयो योगः। आव० ६६४।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आवकधाते-यावत्कथा-यावज्जीवम्। ठाणा० २३६।

आवकहियं-यावत्कथिकम्, प्रव्रज्याप्रतिपत्तिकालादारभ्या-प्राणोपरमात् तच्च भरतैरावतभाविमध्यद्वाविंशतितीर्थकरतीर्था-न्तरगतानां विदेहतीर्थान्तरगतानां च साधूनामवसेयम्। प्रज्ञा० ६३। सकृद्गृहीतं यावज्जीवमपि भावनीयम्। आव० ८३९। यावज्जीविकं व्रतादिलक्षणम्। आव० ५६३। यावज्जीविकं महाव्रतभक्तपरिज्ञादिरूपम्। ठाणा० ३८०। ये कल्पसमाप्त्यनन्तरमव्यवधानेन जिनकल्पं प्रतिपत्स्यन्ते ते यावत्कथिकाः। प्रज्ञा० ६८।

आवज्जणं-आवर्जनम्। ओघ० १६९।

आवज्जय-आवर्जकः, आराधकः। उत्त० ३६१।

आवज्जीकरणं - आवर्जीकरणम्, आवर्जितः-अभिमुखी-कृतः मोक्षगमनं प्रत्यभिमुखीकृतस्य करणं-क्रिया शुभयोग-व्यापारः। प्रज्ञा० ६०४। आवर्जीकरणम्-अन्तर्मौहूर्त्तिकं उदीरणावलिकायां कर्मप्रक्षेपव्यापाररूपम्। ठाणा० ४४२।

आवट्ट-आवर्त्तः शङ्खसत्कः। उत्त० ६०५। संसारः। आचा० ६२।

आवट्टजोणी - आवर्त्तयोनिः, आवर्त्तोपलक्षिता योनिः। उत्त० १८३।

आवट्टणं-आवर्त्तनम्, परिभ्रमणम्। सूर्य० २७६।

आवट्टती-आवर्त्यते, पीड्यते-दुःखभाग्भवति। सूत्र० १९०।

आवट्टितो-आवृत्तः। आव० ९५।

आवट्टो-आवर्त्तः, आवर्त्तयति-प्राणिनं भ्रामयतीति। सूत्र० ८६। उत्त० १८३। जीवा० २४३।

आवड-आवर्त्तः-मणीनां लक्षणः। जीवा० १८९।

आवडइ-आपतति, भवति। ओघ० ९०।

आवडण- अभिघातः, आपतनं वा। बृ० द्वि० ७७ आ। प्रस्फोटनम्। ओघ० १२२। आभिडणं। ओघ० २०४। पक्खलणं। नि० चू० प्र० ४९ अ। आपतनं-द्वारादौ शिरसो घट्टनम्। बृ० प्र० २९५ अ।

आवडणपडणादी-आपतनपतनादयः। ओघ० ९०।

आवडणा-उसूआदिसु पक्खलणा। नि० चू० तृ० २१ अ।

आवडिऊण-आपत्य। आव० १९६।

आवडिए - अवक्रोटितानि, अधस्तादामोटितानि। उत्त० ३६७।

आवडिओ - आपतितः। आव० ५७८। आस्फालितः। आव० १९६। आपतितम्। उत्त० १७०। आव० ३२०।

आवडिया-आपतितौ, प्राप्तौ। उत्त० ५३०।

आवण-आपणः, हट्टः। भग० २३८, १३६। प्रश्न० ८। वीथिः। दश० १७६। जं० प्र० १०७। अनु० १५९। आपणः, पण्यस्थानम्। प्रश्न० १२७।

आवणवीहि-आपणवीथिः, हट्टमार्गः, रथ्याविशेषः। जीवा० २४६।

आवणाइ-आयतनानि, आपतनानि वा उपभोगार्थमागम-नानि। जं० प्र० १२१।

आवण्ण-आपन्नपरिहारिकाः। बृ० तृ० २० अ।

आवण्णपरिहारो-आपन्नपरिहारिकः, जो मासियं वा जाव छम्मासियं वा पायच्छित्तं आवण्णो तेण सो सपच्छित्ती असुद्धो अ विसुद्धचरणेहिं साहूहिं परिहरिज्जति इह तेण अहिकारो। नि० चू० तृ० ८९ आ।

आवण्णसत्ता-आपन्नसत्त्वा, गर्भवती। उत्त० ५३।

आवती - प्रतिसेवनापंचमभेदः। भग० ९१९। आपत्यः-द्रव्यतः प्रासुकद्रव्यं दुर्लभं क्षेत्रतोऽध्वप्रतिपन्नता कालतो दुर्भिक्षं भावतो ग्लानत्वं। ठाणा० ४८४।

आवतीगंगा -गंगामहागंगासादीनगंगामृत्युगंगालोहितगंगातः सप्तगुणा आवतीगंगा। भग० ६७४।

आवत्त - आवर्त्तः, आवर्त्तनम्, प्रादक्षिण्येन परिभ्रमणम्। जं० प्र० १८७। षोडशसागरस्थितिकं महाशुक्रविमानम्। सम० ३२। आवर्तकः, पयसां भ्रमः। जं० प्र० १११। चिकुरसंस्थानविशेषः। जं० प्र० १८३। मणीनां लक्षणानि। जं० प्र० ३१। महाविदेहे विजयनाम। जं० प्र० ३४६। अप्राप्तम्-अस्पृष्टम्, आवत्त आवृत्तिरावर्त्तनं-परिभ्रमणम्। भग० १२८। आवर्त्तिका। जीवा० २४४।

आवत्तकूडे - आवर्तकूटम्, नलिनकूटे तृतीयकूटनाम। जं० प्र० ३४६।

आवत्तगा-एकखुरविशेषचतुष्पदः। प्रज्ञा० ४५।

आवत्तणपेढिया-आवर्तनपीठिका, यत्रेन्द्रकीलिका। जीवा० २०४। यत्रेन्द्रकीलको निवेशितः। जीवा० ३५९। यत्रे-न्द्रकीलो भवति। जं० प्र० ४८। अग्रद्वारम्। नि० चू० तृ० १९अ। आवर्तनम्-भक्तीभवनम्। व्य० प्र० २०३ आ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आवत्ता-आवर्ता, ग्रामविशेषः । आव० २०६ । आवर्त्तबहुलजला नदी । बृ० तृ० १६२ आ । धातकीखंडे तन्नाम महाविदेहगतो विजयः । ठाणा० ८० ।

आवत्ते-आवर्त्तः, विजयस्य नाम । जं० प्र० ३४६ । घोषव्यन्तरेन्द्रलोकपालः । ठाणा० १९८ ।

आवत्तो-आवर्तः, एकखुरविशेषः । प्रश्न० ७ । एकखुरश्चतुष्पदः । जीवा० ३८ । नाट्यविशेषः, भ्रमद्भ्रमरिकादानैर्त्तनम् । जं० प्र० ४१४ । जीवा० २४६ ।

आवपनम्-लोहमयं शकटोपकरणम् । पिण्ड० २२ ।

आवबहुले-अब्बहुलम्, जलबहुलं, रत्नप्रभापृथव्यास्तृतीयकाण्डः । जीवा० ८९ ।

आवयं-आवर्त्तः, अहोकायमित्यादि सूत्रगर्भो गुरुचरणन्यस्तहस्तशिरःस्थापनारूपः, सूत्राभिधानगर्भः कायचेष्टाविशेषः । आव० ५४२ ।

आवयइ-अतिपतति । आचा० २६५ ।

आवरणं-आवरणम्, स्फुरकादि । प्रश्न० १३ । आव्रियते आकाशमनेनेति, भवनप्रासादनगरादि तल्लक्षणशास्त्रम् । ठाणा० ४५१ । सन्नाहः । प्रश्न० ४९ । कवचादि । उत्त० १४३ । आव० ३४६ । कपाटं । बृ० द्वि० १११ अ । कवचः । भग० ९४ । आवरणे-प्रच्छादनपटे । जं० प्र० २३६ । फलकादि । आचा० ६० । स्फुरककण्टकादि । भग० ३१८ । आङो मर्यादेषदर्थवचनत्वात् ईषन्मर्यादया वाऽऽवृणवन्तीत्यावरणाः, ततश्च सर्वविरतिनिषेधार्थ एवायं वर्त्तते न देशविरतिनिषेधे खल्वावरणशब्दः । आव० ७८ । खेटकं सन्नाहं वा । जं० प्र० ३५९ । सन्नाहं । ठाणा० ४५० ।

आवरणप्रविभक्तिः-अष्टमनाट्यभेदः । जं० प्र० ४१६ ।

आवरिसणं-पाणिएण उप्फोसणं । नि० चू० प्र० १७२ आ ।

आवरेत्ता-आवृत्य-अवष्टभ्य । भग० ५७६ ।

आवर्जनम्-आराधना । उत्त० ५९१ । आवर्षणं गन्धोदकादिना । अनु० २६ ।

आवर्तना-आउट्टणा, आवर्जनं, निवेदनम् । बृ० प्र० ४७ आ ।

आवलगनादिकाः-क्रियाविशेषाः । आचा० १२४ ।

आवलणं-आवलनम्, मोटनं, अथवा गलकस्य बलादावलनं मारणं चेति । प्रश्न० २२ ।

आवलियपविट्ठो - आवलिकापविष्टः, श्रेणिव्यवस्थितः । जीवा० १०५ ।

आवलिया - आवलिका- असंख्यातसमयमाना । ठाणा० ८५ । आवलिका, श्रेणिः । जीवा० १०५ । असंख्येयसमयसंघातोपलक्षितः कालः । आव० ३१ । परंपरा । आव० ८५८ । असङ्ख्यातसमयात्मिका । भग० २११ । वंशः, प्रवाहः । जं० प्र० १६६ । तत्र या विच्छिन्ना एकांते भवति मण्डली सा आवलिका । व्य० द्वि० २१ अ । असङ्ख्येयसमयसमुदायिका । सूर्य० २९२ । वंशः, प्रवाहः । जं० प्र० २५८ ।

आवलियाठावगो-आवलिकास्थापकः आचार्यपारम्पर्यम् । आव० ३०७ ।

आवलियापविट्ठ-आवलिकाप्रविष्टम्, यत्पूर्वादिषु चतसृषु दिक्षु श्रेण्या व्यवस्थितम् । जीवा० ३९७ ।

आवलियाबाहिरं - आवलिकाबाह्यम्, यत्पुनरावलिकाऽऽविष्टानां प्राङ्गणप्रदेशे कुसुमप्रकर इव यतस्ततो विप्रकीर्णम् । जीवा० ३९७ ।

आवली-हारः । बृ० प्र० ४८ अ । पुद्गलानां दीर्घरूपा श्रेणिः । सूर्य० १३० । आवली, पङ्क्तिः । ओघ० ८२ ।

आवल्लिक-आवल्लिकः । विशे० १३५५ ।

आवल्लो-बलीवर्दः । आव० ६६५ । उत्त० १९२ ।

आवसंत-आवसन्, विवसन् । आचा० ११ । आङिति-गुरुदर्शितमर्यादया वासना । उत्त० ८० । ठाणा० ९ । मया गुरुकुले आमृशन् । सम० २ । आवसन्-सेवमानः । आचा० २१३ ।

आवसह - आवसथः, आश्रयः । उत्त० ६२६ । दश० २४५ । शेषभवनप्रकारः । उत्त० ३८५ । आवसथः, परिव्राजकस्थानम् । प्रश्न० १२६ । औप० ६१ । परिव्राजकाश्रयः । प्रश्न० ८ । उटजाकारं गृहम् । सूत्र० ३१५ ।

आवसहिय-आवसथिकः, तीर्थिकविशेषः । सूत्र० ४२२ ।

आवसिया-आवश्यिकी, अवश्यकर्त्तव्ययोगैर्निष्पन्ना । आव० २५९ ।

आवस्सए-आवश्यकम्, अवश्यकर्त्तव्यं संयमव्यापारनिष्पन्नम् । आव० ११९ । कायिकादिव्युत्सर्गम् । ओघ० १४७ ।

आवस्सग-आवश्यकम्, समन्तादात्मवश्यकारकम् । अनु० ११ । अवश्यं कर्तव्यं आवश्यकं-कायिकाव्युत्सर्गरूपम् । ओघ० १४९ । कायिकोच्चारादि । ओघ० ८७ । प्रतिक्रमणम् ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ओघ० ९३, ५८। सामायिकादि षडध्ययनकलापः। अनु० ७। आवश्यकम्, श्रमणादिभिरवश्यं क्रियत इति, ज्ञानादिगुणा मोक्षो वा आ–समन्ताद् वश्यः क्रियतेऽनेन इति, आ-समन्ताद्वश्या इन्द्रियकषायादिभावशत्रवो येषां ते तथा, तैरेव क्रियते यत् तत्। अनु० ३१। आवासकं वा समग्रगुणग्रामावासकं वा। अनु० ३१। दोषत्यागलक्षणमवनतादिकम्। आव० ५४५। गुणानां आ–समन्ताद्वश्यमात्मानं करोति। अनु० १०। श्रमणादिभिरहोरात्रमध्येऽवश्यंकरणात्। विशे० ४१५। नियमतः करणीयम्। आव० ५९४। अवश्यं कर्त्तव्यम्, सामायिकादिरूपम्, आ–समन्ताज्ज्ञानादिगुणैः शून्यं जीवं वासयति, तैर्युक्तं करोतीत्यावासकं–सामायिकादिरूपम्। विशे० २। भद्रम्। आव० ४२६। मूलगुणोत्तरगुणानुष्ठानलक्षणः। आव० २६७। आवर्त्तादिकम्। आव० ५११। कायिकाव्युत्सर्गलक्षणम्। ओघ० १५२। सामायिकादिषड्विधम्। ठाणा० ५१। अवश्यं कर्तव्यमावश्यकं, अथवा गुणानामावश्यमात्मानं करोतीत्यावश्यकं, यथा अन्तं करोतीत्यन्तकः, अथवा 'वस निवासे' इति गुणशून्यमात्मानमावासयति गुणैरित्यावासकम्। आव० ५१।

आवस्सय – अपाश्रयः–आधारः। विशे० ४१५। सञ्ज्ञा कायिकीलक्षणम्। बृ० द्वि० २६१ अ।

आवस्सयाइं – आवश्यकानि, शरीरचिंतादेवातर्चनादीनि। व्य० प्र० १६९ आ।

आवस्सिआ–आवश्यकी, कश्चिद्बहिर्गमनकाये समुत्पन्नेऽवश्यंगन्तव्यमितिभणनम्। बृ० प्र० २२२ अ। ज्ञानाद्यालम्बनेनोपाश्रयाद् बहिरवश्यंगमने समुपस्थितेऽवश्यं–कर्त्तव्यमिदमतो गच्छाम्यहमित्येवं गुरुं प्रति निवेदना। अनु० १०३।

आवस्सिता–चतुर्थी सामाचारी। ठाणा० ४९९।

आवस्सिया–आवश्यिकी, अवश्यकर्त्तव्यैश्चरणकरणयोगैर्निर्वृत्ता। आव० ५४७। बृ० द्वि० २२४ अ।

आवहो–दारकपक्षिणामावहः। व्य० द्वि० ३४२ आ।

आवाए–आपातः, अन्यतोऽन्यत आगमनात्मकः। उत्त० ८६।

आवाओ–आपाकः। विशे० ८७३। आपाकोतीर्णा–नूतना। विशे० ६३०।

आवागसीसाओ–आपाकशिरसः। नंदी० १७७।

आवागो–आपाकः, भ्राष्ट्रं। आव० १०१।

आवाडा–आपाता इति नाम्ना किराताः। जं० प्र० २३२।

आवातभद्दते – प्रथममीलके दर्शनालापादिना भद्रकारी। ठाणा० १९७।

आवाय–आपातः, तत्प्रथमतया संसर्गः। भग० ३२६। आभिमुख्येन समवायः। आव० ३२६। अभ्यागमः। ओघ० ११९।

आवारि–लघ्वापणम्, आस्पदम्। आव० ६७५।

आवावकहा–आवापकथा, इयद्द्रव्या शाकघृतादिश्चात्रोपयुक्ता इत्यादि प्रशंसनं द्वेषणं वा, भक्तकथायाः प्रथमभेदः। आव० ५८१। शाकघृतादीन्येतावन्ति तस्यां रसवत्यामुपयुज्यन्त इत्येवंरूपा कथा आवापकथा। ठाणा० २०९।

आवास – आवासः, देववासस्थानम्। जं० प्र० ३९७। आवश्यकम्–प्रतिक्रमणम्। आव० ७८४। ओघ० २००। प्रज्ञा० ६०६। निवासः। जीवा० १८०।

आवासग–आवासकम्, समन्ताद्वासयति गुणैरिति। अनु० ११। गुणशून्यमात्मानमावासयति गुणैरिति, गुणसान्निध्यमात्मनः करोतीति भावार्थः। आव० ५१। प्राभातिकवैकालिकप्रतिक्रमणलक्षणे। व्य० द्वि० १८२ अ।

आवासिय–आवासितः, स्थितः। दश० १०७।

आवासेंति–आवासयन्ति, वसन्ति। आव० ६५४।

आवाहं–सरीरवज्जा पीडा। नि० चू० प्र० ३३५ अ।

आवाह–आवाहः, विवाहात्पूर्वं ताम्बूलदानोत्सवः। जं० प्र० १२३। जीवा० २८१।

आवाहणं–आवाहनम्, गमनम्। प्रश्न० २०।

आवाहिओ–आहूतः। आव० ३६९, ३९३।

आवाहो–आवाहः, अभिनवपरिणतस्य वधूवरस्यानयनम्। प्रश्न० १३९। सुहं दिवसं। नि० चू० द्वि० ९२ आ। वध्वा वरगृहानयनम्। बृ० तृ० ४३ आ। आहूयन्ते स्वजनास्ताम्बूलदानाय यत्र सः। जीवा० २८१।

आविंध–परिधेहि। आव० ९९।

आवि–आविः, जनसमक्षं प्रकाशदेश इतियावत्। उत्त० ५४।

आविइ–अनुसमयम्–प्रतिक्षणम्। भग० ६२५।

आविइत्ता–अवनस्य दद्यात्। व्य० द्वि०

आविए–आपिव। उत्त० ३३९।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आविद्धं-परिहितम् । जं० प्र० १९०, २७८ । आलगितम् । प्रज्ञा० १०१ । व्याप्तम् । उत्त० ५४८ । समन्तात्ताडितः । उत्त० ४९५ । शिरस्यारोपणेन आविद्धः । भग० १९३ ।

आविद्धामो-परिदध्मः । आव० ६५ ।

आविर्भावः-प्रकाशः, प्रकटत्वम् । विशे० १०६२ ।

आविलं-आविलम्, सकालुष्यमाकुलं वा । प्रश्न० ५३ । अविमलमस्वच्छं प्रकृत्या । जीवा० ३०३ ।

आविष्टलिंगं । नंदी १ ।

आविसामि-आविशामि, निषेवे । विशे० १२४७ ।

आवी-गंगागामी नदीविशेषः । ठाणा० ४७७ ।

आवीईमरणे-आ-समन्ताद्वीचय इव वीचयः-आयुर्दलिकविच्युतिलक्षणाऽवस्था यस्मिंस्तदावीचि, अथवा वीचिः-विच्छेदस्तदभावादवीचि, दीर्घत्वं तु प्राकृतत्वात्तदेवंभूतं मरणमावीचिमरणं-प्रतिक्षणमायुर्द्रव्यविचटनलक्षणम् । सम० ३३ ।

आवीचिमरणं-आवीचिमरणं, सप्तदशमरणभेदे प्रथमः । उत्त० २३० ।

आवीचियमरणं - आ-समन्ताद्वीचयः-प्रतिसमयमनुभूयमानायुषोऽपरापरायुर्दलिकोदयात्पूर्वपूर्वायुर्दलिकविच्युतिलक्षणाऽवस्था यस्मिन् तदावीचिकं, अथवाऽविद्यमाना वीचिः-विच्छेदो यत्र तदवीचिकं अवीचिकमेवावीचिकं तच्च तन्मरणं चेत्यावीचिकमरणम् । भग० ६२४ ।

आवीलए-आङ् ईषदर्थे, ईषत्पीडयेद्-अविकृष्टेन तपसा शरीरकमापीडयेत्, एतच्च प्रथमप्रव्रज्याऽवसरे । आचा० १९२ ।

आवीलाविज्जा-आपीडनम्, सकृदीषद्वा पीडनम् । दश० १५३ ।

आवेउं-आपातुम्, भोक्तुम् । दश० ९६ ।

आवेढिओ-एगदुतिदिसिट्ठितेसु, अहवा एगपंतीए समंताठिएसु, आङ् मर्यादयाऽऽवेष्टितः । नि० चू० तृ० ४६ आ ।

आवेढियं-आवेष्टितम्, सकृदावेष्टितम् । ठाणा० ५०२ ।

आवेढियपरिवेढिए - आवेष्टितपरिवेष्टितः, गाढतरं संवेष्टितः । प्रज्ञा० ३०६ ।

आवेयणं - आवेदयति, निवेदयति कालमित्यर्थः । ओघ० २०४ ।

आवेलिज्ज-आपीडयेत्, गाढमवगाहयेत् । उत्त० ४७५ ।

आवेसणं - लोगसमवायट्ठाणं । नि० चू० द्वि० ६९ आ । आ-समन्ताद्विशन्ति यत्र तदावेशनम्-शून्यगृहम् । आचा० ३०७ ।

आशातनम्-आ-समन्तात् शातयति मुक्तिमार्गाद् भ्रंशयति । अनन्तानुबन्धिकषायवेदनम् । विशे० २८३ ।

आशाम्बराः-दिगम्बराः । प्रज्ञा० २० ।

आश्यानः । ओघ० ३२ ।

आश्रयं गच्छामि-भक्तिं करोमीत्यर्थः । आव० ५७१ ।

आश्रित्य-प्रतीत्य । जीवा० ५६ । उत्त० ६०२ ।

आसं-अश्वम्, मनः । प्रज्ञा० ६०० । आशां-भोगाकांक्षां । आचा० १२७ ।

आसंकलनम्-चयनम् । ठाणा० १७९ ।

आसंतर - अश्वतरः, वेगसरः, अजात्या घोटकः । दश० १९४ ।

आसंदओ-आसन्दकः । आव० ५५८ ।

आसंदग-कट्ठमओ । बृ० द्वि० २११अ । कट्ठमओ अज्झूसिरो । नि० चू० प्र० २०८ अ । पल्यङ्कः । आव० ३५८ ।

आसंदयं-आस्यन्दकम् । आव० ६९३ ।

आसंदी - मञ्चिका । पिण्ड० १०९ । उपवेशनयोग्या मञ्चिका । सूत्र० ११८ । दश० २०४ । उपवेशनार्हमासनम् । दश० ११७ । आसनविशेषः । सूत्र० १८२ । मञ्चकः । सूत्र० २७८ ।

आसंसइयं-असंशयितं, निःसंशयं मनःसंश्रितं वा । सूत्र० ३१० ।

आसंसपओगो-निदानकरणं । नि० चू० प्र० ३५ अ ।

आसंसा-आशंसा-अप्राप्तप्रापणाभिलाषः । आचा० ११५ ।

आस-अश्वः, वाल्हीकादिदेशोत्पन्नः, जात्यः । दश० १९४ । क्षेपः । आव० ३६४ ।

आसइ-आस्ते । आव० ३९६ ।

आसइत्तु-आसितुम्, उपवेष्टुम् । दश० २०४ ।

आसएण - आश्रयतीति आश्रयः-धूमबलकादिः । अनु० २१४ ।

आसकण्णो-अश्वकर्णः, सप्तदशान्तरद्वीपः । जीवा० १४४ ।

आसकन्नदीवे-अन्तरद्वीपनाम । ठाणा० २२६ ।

आसकन्ना-अश्वकर्णः, सप्तदशान्तरद्वीपः । प्रज्ञा० ५० ।

आसकरणं-आससिक्खावणं । नि० चू० द्वि० ७१ अ ।

आसकिसोरो-अश्वकिशोरः । आव० ३७०, ३६१ ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आसक्खंधसंठिते-अश्वस्कन्धसंस्थितम्, अश्विनीनक्षत्रसंस्थानः। सूर्य० १३०।

आसखंधसंठिओ-अश्वस्कन्धसंस्थितः, उभयोरपि पार्श्वयोः पञ्चनवतियोजनसहस्रपर्यन्तेऽश्वस्कन्धस्येवोन्नततया षोडशयोजनसहस्रप्रमाणोच्चैस्त्वयोः शिखायाभावात्। जीवा० ३२५।

आसगं-आस्यकम्, मुखम्। जीवा० ११९। आस्यके, पिठरादिमुखे। ठाणा० १४८।

आसग्गीव-अश्वग्रीवः, त्रिपृष्ठवासुदेवशत्रुः। आव० १५९। महामाण्डलिकराजा आव० १७४।

आसचडगर-अश्वसमूहः। आव० ३७०।

आसज्ज-आसाद्य-अंगीकृत्य। आचा० १५९।

आसण-आसनं, सिंहासनादि। प्रश्न० १६१। आधारलक्षणानि धर्मास्तिकायादीनां लोकाकाशादीनि, स्वस्वरूपाणि वा। आव० ५९९। पीठफलकादिकम्। आव० ६५४। स्थानम्। उत्त० १०९। पीठकादि। आव० ७९५। दश० २८१। अपवादगृहीतं पीठकादि। दश० २३१। दश० २२८। वसत्यादि। सूत्र० ६६। कट्टपीढगादि। दश० चू० १२६। विष्टरम्। प्रश्न० १३८। प्रश्न० ८। सिंहासनादि। जीवा० ४०६। आसन्दकादिविष्टरं, आस्यते-स्थीयतेऽस्मिन्निति वाऽऽसनं-शय्या। आचा० १३४। उपवेशनम्। उत्त० ६०९। अवस्थानम्। उत्त० ६२६। आसनं गोदोहिकोत्कुटुकासनवीरासनादिकः। आचा० ३१२। पादपीठपुञ्छनादि। उत्त० ४२३। सिंहासनादि। उत्त० २६२। पीठकादि। सम० ३८। शक्रादीनां सिंहासनम्। ठाणा० ११७। आसन्दकादि। दश० २१८। आचा० ६०। भग० २३८। आसण-आसनप्रदानं, गुर्वादीनां समागतानां पीठकाद्युपनयनम्। व्य० प्र० २३५ आ।

आसणअणुप्पदाणं-आसनानुप्रदानम्, स्थानात्स्थानं सञ्चारणम्। दश० ३०।

आसणअभिग्गहो-आसनाभिग्रहः, तिष्ठत एवासनानयनपूर्वकमुपविशतोऽत्रेतिभणनमिति। सम० ९५। ठाणा० ४०८।

आसणगाणि पंताणि-पांशूत्करशर्करालोष्टाद्युपचितानि काष्ठानि च दुर्घटितानि। आचा० ३१०।

आसणत्थ-आसनस्थं, निषद्यागतम्। आव० ५४१।

आसणदाणं - आसनदानम्, पीठकाद्युपनयनम्। दश० २४१। पीठादिदानम्। उत्त० ६०९।

आसणमणुप्पयाणं-आसनानुप्रदानम्, आसनस्य स्थानान्तरसञ्चारणम्। ठाणा० ४०८। सम० ९५।

आसणाणुप्पयाणं - आसनानुप्रदानं, गौरव्यमाश्रित्यासनस्य स्थानान्तरसंचारणम्। भग० ६३७।

आसणाभिग्गह-आसनाभिग्रहः-तिष्ठत एव गौरव्यस्यासनानयनपूर्वकमुपविशतेतिभणनम्। भग० ६३७। यत्र यत्रोपवेष्टुमिच्छति तत्र तत्रासननयनम्। औप० ४२। तिष्ठत एवादरेणासनानयनपूर्वकमुपविशताऽत्रेतिभणनम्। दश० ३०।

आसणेय-आश्वासनः। जं० प्र० ५३४।

आसतरगा-वेसरा। नि० चू० प्र० १४४ आ।

आसत्त-आसक्त, भूमौ लग्नः। जं० प्र० ७६। आ-अवाङ् अधोभूमौ सक्त आसक्तः, भूमौ लग्नः। प्रज्ञा० ८६। जीवा० १६०। जीवा० २२७। भूमौ सम्बद्धः। औप० ५।

आसत्तमल्लदामा-आसक्तमाल्यदामा। आव० १८४।

आसत्ती-आसक्तिः, धनादावासङ्गः, परिग्रहस्यैकोनत्रिंशत्तमं नाम। प्रश्न० ९३।

आसत्थ-पीप्पलकः। भग० ८०३। असुरकुमारचैत्यवृक्षः। ठाणा० ४८७। मनागाश्वासितः। ओघ० ५२। अनंतजिनचैत्यवृक्षविशेषः। सम० १५२। आश्वस्तः। आव० ३९०।

आसन्दकम्-आसनम्। दश० २१८। आचा० १३४।

आसन्नं-संमुखीनम्। निर० ८।

आसपुराओ-धातकीखंडे विदेहविशेषस्य राजधानी। ठाणा० ८०।

आसम-आश्रमः, तापसादिस्थानम्। भग० ३६। अनु० १४२। सूत्र० ३०९। तीर्थस्थानम्। आचा० ३२९। ठाणा० २९४। ठाणा० ८६। तापसावसथोपलक्षित आश्रयः। आचा० २८५। प्रथमतस्तापसादिभिरावासितः पश्चादपरोऽपि लोकः तत्र गत्वा वसति। बृ० प्र० १८१ आ। तापसावसथादिः, आ-समन्तात् श्राम्यन्ति-तपः कुर्वन्त्यस्मिन्निति। उत्त० ६०५। व्रतग्रहणादिरूपः। दश० २७९। आश्रमः, तापसादिनिवासः। प्रश्न० ५२। तापसावसथोपलक्षित आश्रयः। प्रज्ञा० ४८। जीवा० ४०। जीवा० २७९। तापसाद्यावासः। औप० ७४।

आसमडे-अश्वमृतः, मृताश्वदेहः। जीवा० १०६।

आसमपय-आश्रमपदम्, पार्श्वनाथदीक्षास्थानम्। आव० १३७। आ-समन्तात् श्राम्यन्ति-तपः कुर्वन्त्यस्मिन्नित्या-

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्रमः-तापसावसथादिस्तदुपलक्षितं पदं-स्थानम्। उत्त० ६०५।

आसममारी-मारीविशेषः। भग० १९७।

आसमरूवं-आश्रमरूपम्। भग० १९३।

आसमित्त-अश्वमित्रः, कौण्डिन्यशिष्यः। विशे० ९६०। आव० ३१६। उत्त० १६३। चतुर्थनिह्नवनाम। ठाणा० ४१०। यस्मात्सामुच्छेदा उत्पन्नाः। आव० ३११।

आसमुहदीवे-अंतरद्वीपभेदः। ठाणा० २२६।

आसमुहा-अश्वमुखनामा त्रयोदशान्तरद्वीपः। प्रज्ञा० ५०। जीवा० १४४।

आसय-आशयः, निदानम्। आव० ६१०।

आसयइ-आस्वादते-अभिलषति, आश्रयति वा। सम० ५५।

आसरयणे-अश्वरत्नम्। ठाणा० ३९८।

आसरह-अश्ववहनीयो रथः। भग० ३२२। अश्वरथः-नियुक्तोभयपार्श्वतुरङ्गमो रथ इत्यर्थः। जं० प्र० १९८।

आसल-आसलं, आस्वाद्यम्। जीवा० ३३१। जीवा० ३७०। आस्वादनीयः। जीवा० ३५१।

आसव-आसवः, मद्यम्। उत्त० ६१९। पत्रादिवासकद्रव्यभेदादनेकप्रकारः। जीवा० २६५। पुष्पप्रसवमद्यम्। उत्त० ६५४। आश्रवाः-उपादानहेतवो हिंसादयः। उत्त० ५९२। चन्द्रहासादिकम्। जीवा० १९८। चन्द्रहासादिपरमासवम्। जं० प्र० ४२। नि० चू० प्र० ३५ अ। आश्रवः-सूक्ष्मरन्ध्रम्। भग० ८३। आश्रवन्ति-प्रविशन्ति कर्म्माण्यात्मनीत्याश्रवः-कर्म्मबन्धहेतुरितिभावः, स चेन्द्रियकषायाव्रतक्रियायोगरूपः। ठाणा० १८। आश्रवं। प्रज्ञा० ५६।

आसवा-आस्रवाः-कर्मबन्धस्थानानि। आचा० १८१। पापोपादानस्थानानि। आचा० ४१३। बन्धकाः। आचा० १८२। पत्रादिविशेषेण व्यतिरिक्त आसवः। प्रज्ञा० ३६४। आश्रवः-आ-समन्तात् शृणोति-गुरुवचनमाकर्णयतीति। उत्त० ४९। कर्मबन्धहेतुर्मिथ्यात्वादिः। आव० ५९८। आश्रवः-इन्द्रियजयादिरूपः परमार्थपेशलः कायवाङ्मनोव्यापारः। दश० २७९। जलप्रवेशस्थानम्। व्य० प्र० १६७ आ। पापोपादानहेतुरारम्भादिः। जीवा० १२८। शुभाशुभकर्मादानहेतुः। ठाणा० ४४६।

आसवओ-आश्रावकः, बन्धकः। विशे० १०९३।

आसवदारं-आश्रवद्वारम्, कर्मबन्धद्वारम्। आव० ८५१। आश्रवणं-जीवतडागे कर्म्मजलस्य संगलनमाश्रवः-कर्म्मनिबन्धनमित्यर्थः, तस्य द्वाराणीव द्वाराणि-उपाया आश्रवद्वाराणीति। ठाणा० ३१६।

आसवपीतो-पीतासवः। उत्त० २६३।

आसववुच्छेओ-आश्रवव्यवच्छेदः-कर्मबन्धद्वारस्थगनेन संवरणेनेत्यर्थः। आव० ८५१।

आसवार-अश्ववारः, अश्वारूढपुरुषः। भग० ४८१।

आससणाय वसणं-आशसनाय-विनाशाय व्यसनम्, तृतीयाधर्मद्वारस्य षड्विंशतितमं नाम। प्रश्न० ४३।

आससप्पओगे-आशंसा-इच्छा तस्याः प्रयोगो-व्यापारणं करणं आशंसैव वा प्रयोगो-व्यापारः आशंसाप्रयोगः। ठाणा० ५१५।

आससा-आशंसा। विशे० १००८। आव० ३२२। अप्राप्तप्रार्थनम्। ठाणा० १४५।

आससाए-आशंसया, यद्यत्यन्तप्रवर्षणं भावि तदा स्थलेषु फलावाप्तिरथान्यथा तदा निम्नेष्वित्येवमभिलाषात्मिकया। उत्त० ३६१।

आससेण-अश्वसेनः, पार्श्वजिनपिता। सम० १५२। पंचमचक्रिपिता। सम० १५१।

आसा-अश्वाः। आव० २६१। आशा-इच्छाविशेषः। प्रश्न० ६४। औप० ४७।

आसाइज्जा-आशातयेत्-हीलयेत्, बाधयेत्। आचा० २५७।

आसाएज्जा-आस्वादयेत्-परिभुञ्जीत। आचा० ३९८।

आसाएमाणे-आस्वादयन्, ईषत्स्वादयन्। भग० १६३। आसादयेत्-संस्पृशेत्। आचा० ३८०।

आसाढ-आषाढः, निह्नवनाम। विशे० ९३४। यस्माद्व्यक्ता उत्पन्नाः। आव० ३११। तृतीयो निह्नवः। ठाणा० ४१०।

आसाढग-तृणभेदः। भग० ८०२।

आसाढबहुलं-आषाढबहुलं, आषाढकृष्णपक्षम्। आव०

आसाढभूई-आषाढभूतिः-देशभाषानेपथ्यादिविपर्ययकरणे दृष्टांतः। सूत्र० ३२९। दर्शनपरीषहभग्नः। (मर०)। व्य० प्र० १९६ अ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आसाढायरिया-चेल्लयमुरेण थिरीकया आयरिया। व्य० प्र० १९ अ।

आसायए-आशातयति, कदर्थयति। दश० २४४।

आसायण-आशातकपाराञ्चिकः। ठाणा० १६३।

आसायणसील-आशातनाशीलः, शातयति-विनाशयतीत्याशातना तस्यां शीलं-तत्करणस्वभावात्मकमस्येत्याशातनाशीलः। उत्त० ५७९।

आसायणा-आशातना, लघुतापादनरूपा अथवा स्वसम्यग्दर्शनादिभावापहासरूपा। दश० २४४। ज्ञानाद्यायस्य शातना। आव० ५४७। आशातना। प्रश्न० १४६। आ-सामस्त्येन शात्यन्ते-अपध्वस्यन्ते यकाभिस्ता आशातना-रत्नाधिकविषयाविनयरूपाः पुरतोगमनादिकाः। ठाणा० ५११। आयः-सम्यग्दर्शनाद्यवाप्तिलक्षणस्तस्य शातनाः-खण्डनं निरुक्तादाशातनाः। सम० ५९।

आसायणिज्जं - आस्वादनीयम्, सामान्येन स्वादनीयम्। जीवा० २७८।

आसालए-आशालकः, अवष्टम्भसमन्वित आसनविशेषः। दश० २०४।

आसालओ-ससावंगमं (सावष्टंभं) आसणं। दश० चू० ९९।

आसालिए-आसालिकः, उरःपरिसर्पभेदः। सम० १३५।

आसालिय-आसालिकः, उरःपरिसर्पविशेषः। प्रश्न० ८। जीवा० ३९। उरःपरिसर्पभेदविशेषः। प्रज्ञा० ४५।

आसास-आश्वासः, आश्वसन्त्यस्मिन्नित्याश्वासः। आचा० ५। आश्वासयति अत्यन्तमाकुलितानपि जनान् स्वस्थीकरोतीति। उत्त० २१२।

आसासग-अश्वस्यास्यं-मुखं, तत्र गतः फेन सोऽश्वास्यगतः। प्रज्ञा० ९५। आसासकः-बीयकाभिधानो वृक्षः। राज० ९।

आसासणय-आशंसनम्, मम पुत्रस्य शिष्यस्य वा इदमिदं च भूयादित्यादिरूपा आशीः। भग० ५७३।

आसासदीव - आश्वासद्वीपः, आकुलितजनस्वस्थकारको द्वीपविशेषः। उत्त० २१२। आश्वासनमाश्वासः, आश्वासाय द्वीप आश्वासद्वीपः। आचा० २४७। आश्वास्यतेऽस्मिन्नित्याश्वासः, आश्वासश्चासौ द्वीपश्चाश्वासद्वीपः। आव० २४७।

आसासय-आशासकः, वृक्षविशेषः। औप० ११।

आसासा-आश्वासाः-विश्रामाः। ठाणा० २३६।

आसासि-आश्वासय, स्वस्थीकुरु। उत्त० १२७।

आसासिआ-आश्वासिता। आव० २२२।

आसाहीणापहिं-दुर्दंतेहिं। दश० चू० ११६।

आसिआवणं-स्तैन्यम्। बृ० तृ० ८६ आ।

आसिज्ज-तिष्ठ। (मर०)।

आसित्ता-आस्वाद्य-भुक्त्वा। आचा० ३३०।

आसित्तो-आसिक्तः, सबीजः। बृ० तृ० ९७ आ। जस्स पुण अवच्चं उप्पज्जति सो। नि० चू० द्वि० ३१ अ।

आसियं-आसिक्तं, आसेचनं, ईषदुदकच्छटकः। प्रश्न० १२७। उदकच्छटम्। जीवा० २४६। निर्द्धाटनं, निष्काशनम्। बृ० द्वि० ६१ आ।

आसियावणं-हरणं। नि० चू० प्र० २६७ अ। अपहरणम्। बृ० प्र० ३०९ आ। हरति। नि० चू० द्वि० १३ आ।

आसिले - आसिलः, महर्षिविशेषः। सूत्र० ९५।

आसिवावितो-प्रव्राजितः। नि० चू० प्र० २८६ अ।

आसी-आश्यो-दंष्ट्राः। प्रज्ञा० ४७। विशे० ३८०। आव० ४८। आसीः-दंष्ट्रा। आव० ५६६।

आसीणे-आसीनः, आश्रितः। आचा० २९३।

आसीयावणा-निष्कषायितुमासादनम्। व्य० द्वि० ३६१ अ।

आसीविस-आशीविषः शङ्खविजये वृक्षस्कारः। जं० प्र० ३५७। नागः। प्रश्न० १०७। आश्यो-दंष्ट्रास्तासु विषं येषां ते। ठाणा० २६५। जीवा० ३९। सीतोदादक्षिणतः वक्षस्कारः। ठाणा० ३२६। उरःपरिसर्पविशेषः। जीवा० ३९। विशे० ३८०। उत्त० ३१८। आशीविषः-भुजङ्गः। आव० ५६७।

आसु-आशु, शीघ्रम्। उत्त० ६३८। जं० प्र० २०२।

आसुकारिणः-दुष्टाः। नि० चू० प्र० ७५ आ।

आसुकोहो-तक्खणमेव कोहो। दश० चू० १२५।

आसुक्कारो-आशु-शीघ्रं सजीवस्य निर्जीवीकरणम्, अहिविषविशूचिकादिः। बृ० तृ० १४७ अ। शीघ्रकारः, अहिविषविशूचिकादिकः। आव० ६२९।

आसुपन्ने-आशुप्रज्ञः, शीघ्रमुचितकर्त्तव्येषु यतितव्यमिति प्रज्ञा-बुद्धिरस्येति। उत्त० २१७। सततोपयुक्तः। आचा० २६८।

आसुर - असुरभावनाजनित आसुरः, भवनपतिविशेषस्यायमासुरः। ठाणा० २७४। कोहो। दश० चू० १२२।

Jain Education International 2010_05   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

आसुरत्तं-आसुरत्वम्, क्रोधभावम्। दश० २३१।
आसुरत्तभावणा-आसुरत्वभावना। उत्त० ७०७।
आसुरत्तो-क्रुद्धः। आव० ३८९।
आसुरिनामा-कपिलशिष्यः। आव० १७१।
आसुरिपत्तं। नि० चू० द्वि० ६० अ।
आसुरियं-असुरभावम्। प्रश्न० १२१। अविद्यमानसुर्याम्। उत्त० २७६। असुराणामियमासुरीया। उत्त० २७६।
आसुरी - असुरा-भवनपतिदेवविशेषास्तेषामियं आसुरी। बृ० प्र० २१२ आ।
आसुरुत्ते-आशुरुप्तः, आशु-शीघ्रं रुप्तः-कोपोदयादिमूढः स्फुरितकोपलिङ्गो वा। भग० ३२२। आशु-शीघ्रं रुप्तः-क्रोधेन विमोहितो यः सः। आसुरोक्तः-आसुरं वा-असुरसत्कं कोपेन दारुणत्वादुक्तं-भणितं यस्य सः। विपा० ५३। आसुरुत्तः-शीघ्रं कोपविमूढबुद्धिः, स्फुरितकोपचिह्नो वा। भग० १६७। क्रुद्धः। आव० ६५, १५२, ७११। आशु-शीघ्रं रुष्टः-क्रोधेन विमोहितो यः स आशुरुष्टः, आसुरं वा-असुरसत्कं कोपेन दारुणत्वात् उक्तं-भणितं यस्य स आसुरोक्तः। निर० ८।
आसुरे काए - असुराणामयमासुरस्तम् - असुरसम्बधिनं, चीयत इति कायस्तं, निकायमित्यर्थः। उत्त० १८२। असुरसम्बन्धिनि काये असुरनिकाये इत्यर्थः। उत्त० २९६।
आसूणि-आशूनिः, श्लाघा। सूत्र० १८०। येन घृतपानादिना आहारविशेषेण रसायनक्रियया वा अशूनः सन्, आ-समन्ताच्छूनीभवति-बलवानुपजायते तत्। सूत्र० १८०।
आसूणियं-आशूनितम्, ईषत्स्थूलीकृतम्। प्रश्न० ४९।
आसूय-आसूयम्, औपयाचितकम्। पिण्ड० १२०।
आसेवणसिक्खा - आसेवनशिक्षा, प्रत्युपेक्षणादिक्रियोपदेशः। विशे० ९। उत्त० ५४५। शिक्षाद्वितीयभेदः। नंदी २१०। सामाचारीशिक्षणम्। बृ० प्र० ६४ अ। प्रत्युपेक्षणादिक्रियारूपोऽभ्यासः। आव० ८३३।
आसेवियं-स्तोकं आस्वादितं, अनास्वादितं वा। आचा० ३२५।
आसो-जात्या आशुगमनशीलः अश्वः। जीवा० २८२। मनः। प्रज्ञा० ८८। य एकस्मिन् द्वित्रादीनर्थान् वक्ति यथा अश्नातीत्यश्वः, आशु धावति न च श्राम्यति। बृ० प्र० ३४ अ। चतुष्पदविशेषः। प्रज्ञा० ४५।
आसोकंता-मध्यमग्रामपंचमी मूर्च्छना। ठाणा० ३९३।
आसोट्ठे-अश्वत्थः। आचा० ३४८।
आसोठे-अश्वत्थः, बहुबीजवृक्षविशेषः। प्रज्ञा० ३२।
आसोत्थमंथु। आचा० ३४८।
आस्तिक्यम्-सम्यक्त्वस्य पञ्चमलक्षणम्। आव० ५९१।
आस्थानमण्डपः - उपस्थानगृहम्। भग० २००। नंदी ६१।
आस्फोटनम्-सकृदीषद्वा स्फोटनम्। दश० १५३।
आस्या-यत्रास्यते यथासुखेन स्वाध्यायपूर्वकम्। ओघ० ६९।
आस्रपः-मूलः। जं० प्र० ४९९।
आहंसु-आहुः, उक्तवन्तः। भग० ९८। आख्यातवान्। प्रश्न० २६।
आहच्च - आहत्य, कदाचित्। भग० ३०५, २२। उत्त० १८८, ४८। प्रज्ञा० ३३३। बृ० तृ० ११४ आ। कादाचित्कम्। आव० ५३०। सहसा। नि० चू० द्वि० १२० अ। कदाचित् सान्तरमित्यर्थः। भग० ४१। उपेत्य स्वतः एव, अत्यर्थं कदाचिद्वा। आचा० ५५। ढौकित्वा। आचा० २७२। उपेत्य। आचा० ३६२। सहसा। आचा० ३२२, ३५५। कदाचित् अनन्यगत्या। व्य० प्र० ८ आ। आहत्या-आहननं प्रहारः। भग० ६७३।
आहच्च गंथा-आहतग्रन्था-व्ययीकृतद्रव्या। आचा० २७२।
आहट्टु-आहत्य, उपेत्य। सूत्र० ३००। गृहीत्वा। आचा० २८२, ३४५।
आहट्टो-आडम्बरः (उपाधिः)। आव० ३४१।
आहडं - आहृतम्, स्वग्रामादेः साध्वर्थमानीतम्। प्रश्न० १५४। साध्वयोग्यमशनादि। दश० २०३।
आहणइ-आहन्ति, समीकरोति। आव० ३८५।
आहत्तहिए-सूत्रकृतांगे त्रयोदशाध्ययनम्। सम० ४२।
आहम्मिए जोगे-वशीकरणादीनि। आव० ६६२।
आहयंति-कथयन्ति। नि० चू० प्र० २७७ अ।
आहय - आहतं, लक्षणया लिखितम्। जं० प्र० २०३। आख्यानकप्रतिबद्धं यन्नाट्यं तेन युक्तं तद्गीतम्। ठाणा० ४२१। आहतं, आख्यानकप्रतिबद्धम्। सूर्य० २६७। जीवा० १६२। आव० २९८। आख्यानकप्रतिबद्धं, आस्फालितं वा। औप० ७४।
आहया-आख्यानकप्रतिबद्धानि। राज० १६।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आहरणं-आ-अभिविधिना ह्रियते-प्रतीतौ नीयते अप्रतीतोऽर्थोऽनेनेति । ठाणा० २५४ । साध्यसाधनान्वयव्यतिरेकप्रदर्शनं दृष्टान्तो वा । आव० ६२ ।

आहरणतद्देसे-आहारणतद्देशः, आहरणार्थस्य देशस्तद्देशः स चासावुपचारादाहरणं चेति प्राकृतत्वादाहरणशब्दस्य पूर्वनिपाते आहरणतद्देश इति यत्र दृष्टान्तार्थदेशेनैव दार्ष्टान्तिकार्थस्योपनयनम् क्रियते तत् । ठाणा० २५४ ।

आहरणतद्दोसे - आहारणतद्दोषः, आहारणस्य सम्बन्धी साक्षात्प्रसङ्गसम्पन्नो वा दोषस्तद्दोषः स चासौ धर्म्मे धर्म्मिणः उपचारादाहरणं चेति आहारणस्य दोषो यस्मिंस्तथा यत्साध्यविकलत्वादिदोषदुष्टं तद्दोषाहरणं । ठाणा० २५४ ।

आहरणा-घोरयति घोरणं करोति । ओघ० ५८ । ज्ञातविशेषः । ठाणा० २५३ । उदाहरणम् । दश० ३५ ।

आहरे-आहारयेत्-व्यवस्थापयेत् । आचा० २९२ ।

आहव्वणी-आथर्वणी, आथर्वणाभिधाना सद्योऽनर्थकारिणी विद्या । सूत्र० ३१९ ।

आहा-आधा । भग० १०२ । साधूनां मनस्याधानम् साधूनाश्रित्य । प्रश्न० १२७ । आधानम्, साधूनिमित्तं चेतसः प्रणिधानम् । पिण्ड० ३५ । अधस्तात् । नि० चू० प्र० २९४ आ । आधीयतेऽस्यामिति । पिण्ड० ३६ ।

आहाकम्म-आधाकर्म्म, आधाय-निमित्तत्वेनाश्रित्य पूर्वोक्तमष्टप्रकारमपि कर्म बध्यते, शब्दस्पर्शरसरूपगन्धादिकं । कर्मनिमित्तभूता मनोज्ञेतरशब्दादय एवाधाकर्म्म । आचा० ९८ । आधानं आधाकरणं तदुपलक्षितं कर्म । यथाकर्म वा तत्तद्गत्यनुरूपचेष्टितं वा । उत्त० १८२ । साधुप्रणिधानेन यत्सचेतनमचेतनं क्रियते अचेतनं वा पच्यते चीयते वा गृहादिकं व्यूयते वा वस्त्रादिकं तदाधाकर्म । भग० १०२ । प्रथम उद्गमदोषः । आधानं आधा तया आधया कर्म-पाकादिक्रिया, आधाय-साधुं चेतसि प्रणिधाय यत् क्रियते भक्तादि तत् । पिण्ड० ३४ । चतुर्थशबलदोषः । प्रश्न० १४४ । सम० ३९ ।

आहाकम्मियं-आधाकर्म, दोषविशेषः । आचा० ३२९ ।

आहाकम्मेहिं - आधाकर्मभिः, आधान-माधाकरणं आत्मनेतिगम्यते, तदुपलक्षितानि कर्माण्याधाकर्माणि, तैः-स्वकृतकर्मभिः । उत्त० २४७ ।

आहाण-आधानम् , विधानम् । विसे० ८४७ ।

आहार-आहारः, भोजनम् , जीवनम् । प्रश्न० १०६ । मनसा तथाविध पुद्गलोपादानरूपः । भग० ८६ । त्रयोदशशतके पंचमोद्देशकः । भग० ५९६ । अष्टाविंशतितममाहारप्रतिपादकत्वादाहारः । प्रज्ञा० ६ ।

आहारए - आहारकम् ; चतुर्दशपूर्वविदा कार्योत्पत्तौ योगबलेनाह्रियत इति । प्रज्ञा० २६८ । तथाविधकार्योत्पत्तौ चतुर्दशपूर्वविदा योगबलेनाह्रियत इति । ठाणा० २९५ । चतुर्दशपूर्वविदा तीर्थकरस्फातिदर्शनादिकतथाविधप्रयोजनोत्पत्तौ सत्यां विशिष्टलब्धिवशादाह्रियते-निर्वर्त्यते इति । जीवा० १४ । प्रज्ञा० ४०९ । तथाविधप्रयोजने चतुर्दशपूर्वविदा यदाह्रियते-गृह्यते तत् । आह्रियन्ते-गृह्यन्ते केवलिनः समीपे सूक्ष्मजीवादयः पदार्था अनेनेति वा । अनु० १९६ । आहारयति-आहारं गृह्णातीति । नंदी ९० ।

आहारएसणा--आहारैषणा । दश० १८ ।

आहारगं-आहारकम् , तृतीयं शरीरम् । प्रज्ञा० ४६९ ।

आहारगंगोवंगणाम-आहारकाङ्गोपाङ्गनाम, उपाङ्गनाम । प्रज्ञा० ४७० ।

आहारगत्तं - आहारकत्वं, आहारकशरीरकरणलब्धिः । ठाणा० ३३२ ।

आहारगबंधण-आहारकबन्धनम् , बन्धननाम । प्रज्ञा० ४७० ।

आहारगमो-आहारगमः, प्रज्ञापनाया अष्टाविंशतितमाहारपदोक्तसूत्रपद्धतिः । भग० १०९ ।

आहारगसंघायणाम-आहारकसङ्घातमाम, यदुदयवशादाहारकशरीररचनाऽनुकारिसङ्घातरूपा जायते तदाहारकसङ्घातनाम । प्रज्ञा० ४७० ।

आहारगसमुग्घात-आहारकसमुद्घातः, आहारके प्रारभ्यमाणे समुद्घातः । जीवा० १७ ।

आहारट्ठ-आहारार्थः, आहारप्रयोजनमाहारार्थित्वम् । भग० २० । आहारलक्षणं प्रयोजनं, आहाराभिलाषो वा । प्रज्ञा० ५०० ।

आहारट्ठि-आहारार्थी, आहारमर्थयते-प्रार्थयते इत्येवंशीलः, अर्थो वा-प्रयोजनमस्यास्तीत्यर्थी, आहारेण-भोजनेन अर्थी आहारार्थी, आहारस्य-भोजनस्य वाऽर्थी आहारार्थी । भग० २० ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आहारपच्चक्खाण-आहारप्रत्याख्यानम्, अनेषणीयभक्तपाननिराकरणरूपम्। उत्त० ५८८।

आहारपदे-प्रज्ञापनाया अष्टाविंशतितमपदम्। प्रज्ञा० २५। नंदी १०५।

आहारपयाइं-आहारपदानि, आहारग्रहणविषयकानि पदानि। जं० प्र० ४६१।

आहारपरिण्णा-आहारपरिज्ञा, सूत्रकृताङ्गे द्वितीयश्रुतस्कंधे तृतीयाध्ययनम्। आव० ६५८। ठाणा० ३८७। उत्त० ६१६।

आहारपर्याप्तिः-यया शक्त्या करणभूतया भुक्तमाहारं खलरसरूपतया करोति सा। बृ० प्र० १८४ आ। शरीरेन्द्रियवाङ्मनप्राणापानयोग्यदलिकद्रव्याहरणक्रियापरिसमाप्तिः। तत्त्वा० ८-१२।

आहारपोसहे-आहारपौषधः, आहारनिमित्तं पौषधः, आहारनिमित्तं धर्मपूरणं पर्वेति भावना। आव० ८३५।

आहारसण्णा-आहारसञ्ज्ञा, आहाराभिलाषः-क्षुद्वेदनीयोदयप्रभव आत्मपरिणामः। आव० ५८०।

आहारसन्ना-आहारसञ्ज्ञा, क्षुद्वेदनीयोदयाद् या कवलाद्याहारार्थं तथाविधपुद्गलोपादानक्रिया सा। प्रज्ञा० २२२। क्षुद्वेदनीयोदयात्कावलिकाद्याहारार्थं पुद्गलोपादानक्रियैव सञ्ज्ञायतेऽनया तद्वानित्याहारसञ्ज्ञा। भग० ३१४। आहाराभिलाषः-क्षुद्वेदनीयप्रभवः खलु आत्मपरिणामविशेषः। जीवा० १५।

आहारवं-आलोइज्जमाणं जो समेदं सव्वं अवधारति सो। नि० चू० तृ० १२८ आ। अ.लोचितापराधानां अवधारणावान्। भग० ९२०।

आहाराइणियाए-रत्नैः-ज्ञानादिभिर्व्यवहरतीति रात्निकः-बृहत्पर्यायो यो यो रात्निको यथारात्निकं तद्भावस्तत्ता तया यथारात्निकतया-यथाज्येष्ठं। ठाणा० ३०१।

आहारुद्देस-आहारोद्देशः, प्रज्ञापनाष्टाविंशतितमपदस्योद्देशकः। भग० २०।

आहारेंति-विशेषाहारापेक्षया सामान्याहारस्याविशिष्टशरीरबन्धनसमय एव कृतत्वात्। भग० ७६३।

आहारे-आहारः, चरमाचरमपदगतसूत्रम्। प्रज्ञा० २४६। आहारप्रतिपादकं प्रज्ञापनाया अष्टाविंशतितमं पदम्। प्रज्ञा० ६। आधारः। भग० ७३८। फलपत्रकिशलयमूलकन्दत्वगादिनिर्वर्त्यः। आचा० ६०।

आहारेत्ताइतो-आहृतवान्। आव० ३०८।

आहारे भोयणा-आहाराभोगता। प्रज्ञा० ५४३।

आहारो-आहारः, कूरादि एक्कं चेव खुधं णासेति पाणे तक्कखीरुदगमज्जादि एगंगिया तिसं णासेति, आहारकिच्चं च करेंति खाइमे एगंगिया फलमंसादि आहारकिच्चं च करेंति, साइमेऽवि मधुफाणिय तंबोलादिया एगंगिया खुहं णासेति। नि० चू० द्वि० ५० आ। मुक्खत्तो जं किंचिवि भुंजति सो सव्वो आहारो। नि० चू० द्वि० ५१ अ। आधार आधेयस्येव सर्वकार्येषु लोकानामुपकारित्वात। भग० ७३९।

आहारोवचया-आहारोपचयाः, आहारेणोपचयो येषां ते। आचा० २७५।

आहार्यः-अभिनयचतुर्थभेदः। जं० प्र० ४१४। काष्ठफलपुस्तमृत्तिकाचर्मादिघटितप्रजननैर्योषिदवाच्यप्रदेशासेवनमित्यर्थः। आव० ८२५। आहार्यं अन्धकाररहितत्वं। सम० १४०।

आहालंदिया-कल्पविशेषः। नि० चू० प्र० ३३८ आ।

आहावंति-आगच्छन्ति। बृ० द्वि० २१३ अ।

आहावणा-आभावना, उद्देशः। पिण्ड० ११६।

आहाविज्ज-आधावेत्। आव० ६३३।

आहासिया-आभासिकनामद्वितीयान्तरद्वीपः। प्रज्ञा० ५०।

आहिंडइल्ल। ओघ० ९६।

आहिंडओ-आहिण्डकः, दूरदेशविहारकर्ता। आव० ५३६।

आहिंडगा-विहरंता। नि० चू० प्र० ३१४ अ।

आहिंडा-सततं परिभ्रमणशीलाः। बृ० तृ० १८४ आ।

आहिंडिओ-आहिण्डकः, आहेटकः। आव० ४३२। अगीतार्थः, चक्रस्तूपादिदर्शमप्रवृत्तः। ओघ० ६०।

आहिंडितो-आहिण्डिकः। उत्त० १०८।

आहिंधइ-परिदधाति। आव० ३६०।

आहिअग्गि-आहिताग्निः, अग्निं गृहीत्वा स्वगृहे स्थापनात्। आव० १६९। ब्राह्मणः। दश० २५२। कृतावस्थादिर्ब्राह्मणः। दश० २४५। प्रतिपादितोऽनुष्ठितो वा। सूत्र० १७८।

आहिए-आहितः, जनितः। सूत्र० ६९। प्रथितः, प्रसिद्धिं गतः। सूत्र० ६९।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आहिज्जइ-आधीयते, व्यवस्थाप्यते, आख्यायते वा। सूत्र० ३३७। सम्बध्यते। सूत्र० ३०६। आख्यायते। सम० ११३।

आहितविशेषम्-आहितविशेषत्वं-वचनान्तरापेक्षया ढौकितविशेषता। एकत्रिंशत्तमवाणीगुणः। सम० ६३।

आहितुण्डिग-आहितुण्डिकः, गारुडिकः। दश० ३७।

आहितो-आख्यातः, कथितः। सूत्र० ११।

आहित्थं। जीवा० १९४।

आहियं-आहितम् ढौकितम्। सूत्र० ७१। आत्मनि व्यवस्थितं, आ-समन्तात् हितं वा। सूत्र० ६८। गृहीतम्। आव० ३७०।

आहियग्गी-बंभणो। दश० चू० १३२।

आहियडमरं-आहितडमरम्, शत्रुकृतविड्वरोऽधिकविड्वरो वा। औप० १२।

आहिया-आख्याता। ठाणा० ३९७।

आहियोग - आभियोगदेवेषूत्पन्ना आदेशवर्त्तिनः। भग० १९८।

आहिव्वण-आहित्यम्, अहितत्वं-शत्रुभावम्। प्रश्न० ३८।

आही-आधिः, मनःपीडा। प्रश्न० २५।

आहुइ-आहुतिः, अग्नौ घृतादिद्रव्यप्रक्षेपरूपा। दश० २४५।

आहुणिए-आधुनिकः। सूर्य० २९४। अष्टाशीतौ ग्रहेषु पंचमग्रहनाम। ठाणा० ७८। जं० प्र० ५३४।

आहुणिज्ज-आहवनीयं-सम्प्रदानभूतम्। औप० ५।

आहुणिय-आधूय। आव० १२१।

आहुस्स-आहोतुः, दातुः। औप० ५।

आहूए-संहृतः। आचा० ४२१।

आहूतो-उत्पन्नः। आव० ३४३। लग्नः, उत्पन्नः। उत्त० १४८।

आहूय - आहूतम्-आह्वानमामन्त्रणं नित्यं मद्गृहे पोषमात्रमन्नं ग्राह्यं इत्येवंरूपम्, कर्मकराद्याकारण वा साध्वर्थं स्थानान्तरादन्नाद्यानयनाय यत्र सः, स्पर्धा वा। भग० २९३। भग० २९४।

आहेडगो-मिगव्वं। नि० चू० द्वि० १३६ आ।

आहेणं-जमन्नगिहातो आणिज्जति तं अहवा जं वहुगिहातो वरगिहं णिज्जति तं। नि० चू० द्वि० २२ अ। यद्विवाहोत्तरकाले वधूप्रवेशे वरगृहे भोजनं क्रियते। आचा० ३३४।

आहेति-आधाय, कृत्वा। उत्त० २४७।

आहेवच्चं - आधिपत्यम्, अधिपतिकर्म। भग० १५४। अधिपतेः कर्म, रक्षा। जं० प्र० ६३। जीवा० २१७, १६२।

आहेवणं-आक्षेपम्, पुरक्षोभादिकरणम्। प्रश्न० ३८।

आहोपुरुषिका-आत्मशक्त्याविष्करणम्। सूत्र० ३४५।

आहोहिओ-आधोऽवधिकः, परमावधेरधस्ताद् योऽवधिस्तेन यो व्यवहरति सः परिमितक्षेत्रविषयावधिकः। भग० ६७।

आहोहियं-नियतक्षेत्रविषयावधयः। सम० ९६।

आहोही-यत्प्रकारोऽवधिरस्येति यथावधिः परमावधेर्वाऽधोवर्त्यवधिर्यस्य सोऽधोऽवधिः। ठाणा० ६१।

आह्निका-पिशाचे चतुर्थभेदः। प्रज्ञा० ७०।

आह्वियते-निर्वर्त्यते। जीवा० १४।

इ

इंखिणिका-कर्णमूले घण्टिकां चालयन्ति। आव० १३०।

इंखिणी - विज्जाभिमंतिया घंटिया कण्णमूले चालिज्जति, तत्थ देवता कहिंति कहेंतस्स पसिणापसिणं संभवति स एव इंखिणी भण्णति। नि० चू० द्वि० ८५ अ। निन्दा। सूत्र० ६१।

इंगना-इङ्गना, सञ्ज्ञा। नंदी १५।

इंगाल-अङ्गारः, दग्धेन्धनो विगतधूमज्वालः। आचा० ४९। चारित्रेन्धनमङ्गारमिव यः करोति भोजनविषयरागाग्निः सोऽङ्गारः। भग० २९१। अङ्गाराणामयमाङ्गारः। दश० १६४। ज्वालारहितोऽग्निः। दश० १५४, २२८। महाग्रहविशेषः। भग० ५०५। निर्ज्वलितेन्धनम्। भग० २१३। विगतधूमः। प्रज्ञा० २९। निर्धूमाग्निः। जीवा० १०७। विगतधूमज्वालो जाज्वल्यमानः खदिरादिः। जीवा० २८। अङ्गारः। आव० ४२२, ३१३। रागो। नि० चू० तृ० ४१ अ। ज्वालारहितो वह्निः, अग्नेस्तृतीयभेदः। पिण्ड० १५२।

इंगालए - अङ्गारकः, अष्टाशीतितममहाग्रहविशेषः। सूर्य० २९४। महाग्रहविशेषः। जं० प्र० ५३४। ठाणा० ७८।

इंगालकड्ढिणि-ईषद्वक्राग्रा लोहमययष्टिः। भग० ६९७।

इंगालकम्म - अङ्गारकर्म्म, अङ्गारकरणविक्रयक्रिया। आव० ८२९।

इंगालदाहओ-अङ्गारदाहकः। आव० १५१।

इंगालब्भूया-अङ्गारराशिना भूता। भग० १६६।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इंगालवडेंसए – अङ्गारावतंसकं, ज्योतिषविमानविशेषः। भग० ५०५।

इंगालसोल्लियं–अङ्गारैरिव पक्वम्। भग० ५१९। औप० ९१। निर० २६।

इंगाला–अणिंधणाणि ज्वाला। नि० चू० प्र० ५२ आ।

इंगिअ–इङ्गितम्, अन्यथा प्रवृत्तिलक्षणम्, निष्ठीवनादिलक्षणम्। दश० २५२। नयनादिचेष्टया। जं० प्र० २२३।

इंगिणि–इङ्गिनी, अनशनविशेषः। आव० ६७०।

इंगिणिमरणे–इङ्गिनीमरणम्, प्रतिनियतदेश एव चेष्टयतेऽस्यामनशनक्रियायाम्, सप्तदशमरणे षोडशः। सम० ३३। इङ्गिते प्रदेशे मरणं इङ्गितमरणम्। आचा० २६२। "इंगियदेसंमि सयं चउव्विहाहारचायनिप्फन्नं। उव्वत्तणाइजुत्तं नऽण्णेण उ इंगिणीमरणं"। ठाणा० ९६। यावत्कथिकानशनद्वितीयभेदः। ठाणा० ३६४।

इंगिणी–इङ्गिनीमरणम्, मरणस्य षोडशो भेदः। उत्त० २३०। इङ्गिनी, इङ्ग्यते–प्रतिनियतप्रदेश एव चेष्टते अस्यामनशनक्रियायामिति। उत्त० २३५। सम० ३५। विशे० १०।

इंगितं–सूक्ष्मबुद्धिगम्यचेष्टा। ठाणा० ४। सूक्ष्मचेष्टाविशेषः। बृ० प्र० ४३ अ।

इंगिनीमरणं – उक्तन्यायतः प्रतिपद्य शुद्धस्थण्डिलस्थाता एकाक्येव कृतचतुर्विधाहारप्रत्याख्यानस्ततस्थंडिलस्यान्तश्छायात उष्णमुष्णाच्च छायां स्वयं संक्रामति। उत्त० ६०२। नियतप्रदेशस्थायित्वेऽशनादित्यागः। आव० ५६३।

इंगियं–इङ्गितम्, ज्ञानविशेषः। आव० ७२४। नयनादिचेष्टाविशेषः। निर० ८। ज्ञाता० ४१। निपुणमतिगम्यं प्रवृत्तिनिवृत्तिसूचकमीषद्भ्रूशिरःकम्पादि। उत्त० ४४। अंगभंगादि। उत्त० ६२६।

इंगियपत्थिय–चेष्टितप्रार्थितः। (मर०)।

इंगियमरणं–इंगितमरणम्, इंगिते प्रदेशे मरणम्। दश० २७।

इंगियागारकुसलो–इंगिताकारकुशलः। आव० ५६।

इंगियागारसंपन्ने–इंगिताकारसम्प्रज्ञः, इंगितं–निपुणमतिगम्यं प्रवृत्तिनिवृत्तिसूचकं, आकारः–स्थूलधीसंवेद्यः प्रस्थानादिभावाभिव्यञ्जको दिगवलोकनादिः, द्वन्द्वे इंगिताकारौ, तौ अर्थाद्गुरुगतौ सम्यक् प्रकर्षेण जानातीति। उत्त० ४४। इंगिताकारसम्पन्नः– इंगिताकाराभ्यां गुरुगतभावपरिज्ञानमेवोक्तं तेन सम्पन्नः–युक्तः। उत्त० ४४।

इंग्यते–प्रतिनियतदेश एव चेष्टयते। सम० ३५।

इंतं–आयान्तम्। उत्त० ३२५, १३९।

इंती–एंति–आगच्छन्ति। ओघ० ७८।

इंतो–आयान्, आगच्छन्। दश० ३७। आव० ८०१। बृ० तृ० १७९ अ।

इंदं–एकोनविंशतिसागरोपमस्थितिकं विमानम्। सम० ३७।

इंद–इन्द्रः, सप्तमदिनस्य सैद्धान्तिकं नाम। सूर्य० १४७। ऐन्द्री–पूर्वदिक्सैद्धान्तिकनाम। ठाणा० १३३।

इंदकाइया–त्रीन्द्रियविशेषः। प्रज्ञा० ४२। त्रीन्द्रियजन्तुविशेषः। जीवा० ३२।

इंदकील–इन्द्रकीलः, गोपुरे कीलविशेषः। जीवा० ३५९, २०४। गोपुरकपाटयुगसन्धिनिवेशस्थानम्। जं० प्र० ४८। गोपुरावयवविशेषः। औप० ३। गोपुरकपाटयुगसन्धिनिवेशस्थानम्। भग० १७५। पुरमध्यस्थम्। नंदी १५०।

इंदकुंभ–कुम्भानामिन्द्रः–विजयदेवाभिषेककलशाः। जं० प्र० ५०।

इंदकुंभसमाणो – इन्द्रकुम्भसमानः, महाकुम्भप्रमाणकुम्भसदृशः। जीवा० ३६०।

इंदकुमारिया–इन्द्रकुमारिका। आव० ४३४।

इंदकेऊ–इन्द्रकेतुः, लोकमहनीयो ध्वजविशेषः। उत्त० ३०३।

इंदकेतू–इन्द्रकेतुः, रश्मिनियन्त्रिते वेन्द्रयष्टिः। प्रश्न० १३४।

इंदखीलो–इन्द्रकीलः। आव० ४१७।

इंदगाइ–त्रीन्द्रियजीवविशेषः। उत्त० ६९५।

इंदगाह–इन्द्रग्रहः, उन्मत्तताहेतुः। भग० १९८।

इंदगोवए–इन्द्रगोपकः, प्रावृट्प्रथमसमयभावी कीटविशेषः। प्रज्ञा० ३६१।

इंदगोवया–इन्द्रगोपकः, त्रीन्द्रियजन्तुविशेषः। जीवा० ३२। त्रीन्द्रियविशेषः। प्रज्ञा० ४२।

इंदगोवसमाइय–त्रीन्द्रियजीवभेदः। उत्त० ६९५।

इंदगोवेइ–इन्द्रगोपकः, प्रावृट्कालभावी कीटविशेषः। जं० प्र० ३४। आचा० ३७६।

इंदग्गहो–इन्द्रग्रहः। जीवा० २८।

इंदग्गी–इन्द्राग्निः, ग्रहविशेषः। ठाणा० ७९। जं० प्र० ५३५।

इंदजसा–इन्द्रयशा, ब्रह्मराजराज्ञी। उत्त० ३७७।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इंदजालिओ-इन्द्रजालिकः-भूतिलाभिधः। आव० २१९।

इंदज्झओ -इन्द्रध्वजः, शेषध्वजापेक्षयाऽतिमहत्त्वादिन्द्रश्चासौ ध्वजश्च इन्द्रध्वज इति विग्रहः, इन्द्रत्वसूचको ध्वज इति वा। सम० ६१।

इंदट्ठाणे - इन्द्रस्थानम्, यत्रेन्द्रयष्टिरूर्द्ध्वीक्रियते। अन्त० २३।

इंदणागो-इन्द्रनागः, येन बालतपसा सामायिकं लब्धम्। आव० ३५३। वसन्तपुरे दारको य एकपिण्डिको जातः। आव० ३५२।

इंददत्त-इन्द्रदत्तः, अभिनन्दनजिनप्रथमभिक्षादाता। आव० १४७। सम० १५१। इन्द्रपुरनगरनृपतिः। विपा० २२। व्य० द्वि० १५१ अ। व्य० द्वि० १७० आ। तितिक्षोदाहरणे इन्द्रपुरनगरनरेशः। आव० ७०२। मथुराक्षाद्धः पादच्छेदकः। (मर०)। वासुपूज्यपूर्वभवः। सम० १५१। इन्द्रपुरे राजा। आव० ३४३। मथुरायां पुरोहितविशेषः। उत्त० १२५। श्रावस्त्यां कपिलशिक्षको ब्राह्मणः। उत्त० २८६, २८७। इन्द्रपुरनृपतिः। उत्त० १४८।

इंदधणु-इन्द्रधनुः। जीवा० २८३। विविधवर्णमभ्रमण्डले जायमानं तेजोमण्डलम्। भग० १९५।

इंदनीले-इन्द्रनीलः, रत्नविशेषः। प्रज्ञा० २७। पृथिवीभेदः। आचा० २९। मणिभेदः। उत्त० ६८९।

इंदपयपव्वतो-गजाग्रपदपर्वतापरनामा पर्वतः, षड्दिग्क्षेत्रावग्रहस्थानम्। नि० चू० प्र० ३४१ अ।

इंदपाउया-इन्द्रपादुका, इन्द्रकुमारी। आव० ४३७।

इंदपुरं-इन्द्रपुरम्, नगरविशेषः। उत्त० ३८०। इन्द्रदत्तराजधानी। उत्त० १४८। तितिक्षोदाहरणे नगरविशेषः। आव० ७०२। नगरविशेषः। विपा० ५४, ९५। इन्द्रदत्तराजधानी। विपा० ८८। नगरविशेषः। आव० ३४३। व्य० द्वि० १५१ अ, १७० आ।

इंदभूई-इन्द्रभूतिः, प्रथमगणधरः। आव० २४०। श्रीवीरप्रथमगणधरः। सम० १५२।

इंदभूती-इन्द्रभूतिः इति मातृपितृकृतनामधेयः, महावीरस्वामिनः प्रथमशिष्यः। भग० ११। महावीरस्वामिनो ज्येष्ठः शिष्यः। भग० १३९। श्रीमहावीरप्रथमगणधरः। सूत्र० ४०७। रविप्रश्ननिर्णये चम्पानगर्यां पुण्यभद्रचैत्ये महावीरस्वामिनो गौतमगोत्रो ज्येष्ठः शिष्यः। भग० २०६।

इंदमह - इन्द्रमहः, इन्द्रोत्सवः। उत्त० २११। अश्वयुक्पौर्णमासी। ठाणा० २१४। लौकिकमहोत्सवः। आव० ३५८। उत्सवविशेषः। आव० ६९२। आचा० ३२८। यदश्वयुक्पूर्णिमायां भवति कार्त्तिके वा। आव० ७३६। इन्द्रोत्सवः। आव० ३५८। इन्द्रस्य-शक्रस्य महः-प्रतिनियतदिवसभावी उत्सवः। जीवा० २८१।

इंदमुद्धाभिसित्ते-इन्द्रमूर्द्धाभिषिक्तः, सप्तमदिनस्य सैद्धान्तिकनाम। जं० प्र० ४९०।

इंदसम्मो-इन्द्रशर्मा, गृहपतिविशेषः। आव० १९४। प्रतिचरकः। आव० १९०।

इंदसिरी-इन्द्रश्रीः, ब्रह्मराजराज्ञी। उत्त० ३७७।

इंदसेणा-रक्तवतीसंगमिका नदी। ठाणा० ४७९।

इंदा-ऐन्द्री, पूर्वदिक्। आव० २१५। भग० ४९३। नागकुमारेन्द्रस्य पञ्चमाग्रमहिषी। भग० ५०४। पञ्चमविद्युत्कुमारी महत्तरिका। ठाणा० ३६१। रक्तवतीसंगमिका नदी। ठाणा० ४७७।

इंदासणि-इन्द्राशनिः, इन्द्रवज्रम्। उत्त० ४७५।

इंदियं-इन्द्रियं, प्रज्ञापनायाः पञ्चदशं पदम्। प्रज्ञा० ६। इन्दनादिन्द्रः-जीवः, सर्वविषयोपलब्धिभोगलक्षणपरमैश्वर्ययोगात्तस्य लिङ्गं तेन दृष्टं सृष्टं जुष्टं दत्तमिति वा, श्रोत्रादि। ठाणा० ३३४। औदारिकादित्वार्थपरिच्छेदकत्वलक्षणधर्म्मद्वयोपेतम्। ठाणा० ३५६। इन्द्रलिंगदृष्टदिष्टादिरूपम्। तत्त्वा० २-१५।

इंदियउद्देसए - प्रज्ञापनायाः पंचदशपदस्य प्रथमोद्देशकः। भग० ४४०, ७७७, १३१। प्रज्ञा० ५४५।

इंदियकरणं-इन्द्रियकरणम्, इन्द्रियाणां--चक्षुरादीनां करणं अवस्थान्तरापादनम्। उत्त० १९८।

इंदियत्थ-औदारिकादित्वार्थपरिच्छेदकत्वलक्षणधर्म्मद्वयोपेतमिन्द्रियं, अर्थः-विषयो जीवादिः। ठाणा० ३५६।

इंदियत्थविकोवणयाते -इन्द्रियार्थविकोपनं-कामविकारः। ठाणा० ४४७।

इंदियत्था - इन्द्रियार्थाः इन्द्रियैरर्यन्ते-अधिगम्यन्त इति इन्द्रियार्थाः-शब्दादयः। ठाणा० २५३। इन्द्रियाणामर्थाः-तद्विषयाः-शब्दादयः। ठणा० ३३५।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इंदियनिग्गहो – इन्द्रियनिग्रहः, इन्द्रियाणां – श्रोतादीनां निग्रहः–इष्टेतरेषु शब्दादिषु रागद्वेषाकरणं, पञ्चैतेऽनगारगुणाः। आव० ६६०।

इंदियपच्चक्खे – इन्द्रियं–श्रोत्रादि तन्निमित्तं–सहकारिकारणं यस्योत्पित्सोस्तदलिंगिकं शब्दरूपरसगन्धस्पर्शविषयज्ञानमिन्द्रियप्रत्यक्षम्। अनु० २११।

इंदियपज्जत्ति–इन्द्रियपर्याप्तिः–यया धातुरूपतया परिणमिताद्दाहारादिन्द्रियप्रायोग्यद्रव्याण्युपादायैकद्वित्र्यादीन्द्रियरूपतया परिणमय्य स्पर्शादिविषयपरिज्ञानसमर्थो भवति सा। बृ० प्र० १८४ आ।

इंदियपडिपुण्णो–नोविगलिंदियो। नि० चू० प्र० २६६ आ।

इंदियबलं–इन्द्रियबलम्, चक्षुरादीन्द्रियाणां बलं–स्वस्वविषयग्रहणपाटवम्। जीवा० २६८।

इंदियमुंडा–न जितेन्द्रियाः। नि० चू० द्वि० ३७ अ।

इंदियलद्धी–इन्द्रियलब्धिः, पञ्चेन्द्रियप्राप्तिः। उत्त० १४५। इन्द्रियाणाम्–स्पर्शादीनां मतिज्ञानावरणक्षयोपशमसम्भूतानामेकेन्द्रियादिजातिनामकर्मोदयनियमितक्रमाणां पर्याप्तकनामकर्मादिसामर्थ्यसिद्धानां द्रव्यभावरूपाणां लब्धिरात्मनीतीन्द्रियलब्धिः। भग० ३५०।

इंदियलाघवं – इंद्रियलाघवं, इंद्रियाणि तस्य वशे वर्त्तते। व्य० द्वि० १०२ आ।

इंदियाइं–इन्द्रियाणि–नयननासिकादीनि। उत्त० ४२५।

इंदियाईणं–इन्द्रियादीनाम्, पृथ्व्याद्येकेन्द्रियाणाम्। विशे० २६०।

इंदियाणि–इन्द्रियाणि–नयननाशावंशादीनि। सम० १६।

इंदीवरे–हरितविशेषः। प्रज्ञा० ३३।

इंदुत्तरवडिंसगं–एकोनविंशतिसागरोपमस्थितिकं विमानम्। सम० ३७।

इंदुवसु–इन्दुवसुः, ब्रह्मराजराज्ञी। उत्त० ३७७।

इंदे–इन्द्रः। ठाणा० २९२। मल्लिनाथप्रथमशिष्यः। सम० १५२।

इंदो–इन्द्रः, अधिपतिः। प्रज्ञा० १०५। इन्दनाद्–इन्द्रः–आत्मा। प्रज्ञा० २८५। जीवा० १६। इन्दनात्–इन्द्रः, सर्वोपलब्धिभोगपरमैश्वर्यसम्बन्धाज्जीवः। आव० ३९८। जीवः–सर्वविषयोपलब्धिभोगलक्षणपरमैश्वर्ययोगात्। ठाणा० ३३४। परमैश्वर्ययोगात्प्रभुर्महान्। ठाणा० १९८। भवनवास्याद्यधिपाः। तत्त्वा० ४–४।

इंदोकंतं–एकोनविंशतिसागरोपमस्थितिकं विमानम्। सम० ३७।

इंधणपलिआमं – जहा कोद्दवपलालेणं अंबगादि फलाणि वेढेत्ता पाविज्जंति आदिग्गहणेणं सालिपलालेग वितत्थ जे ण पक्का फला ते इंधणपलियामं भणणति। नि० चू० द्वि० १५२ आ।

इंधणपलियामं–इंधनपर्यायामं–कोद्रवपलालादिना वेष्टयित्वा पाच्यानि फलानि। बृ० प्र० १४२ आ।

इंधणसाला–जत्थ तणाकरिसभारा अच्छंति। नि० चू० तृ० २१ आ। तृणकरीषकचवरस्थानम्। बृ० द्वि० १७५ अ।

इइकट्टु–इतिकृत्वा, निश्चित्य। जं० प्र० ३८६। इतिकृत्वा–यस्मात् कारणात्। अनु० १६।

इइकम्मं–इतिकर्म्म, इति–सांसारिकं दुःखं कर्म–अष्टप्रकारकर्मकृतम्। आचा० १४५।

इइहास–इतिहासः–पुराणम्। औप० ९३। भग० ११२। निर० २३।

इक–देशीवचनम्। विशे० ११३४।

इक्कडं–कठिनं तृणविशेषः। बृ० तृ० ५२ आ। ढंढणसदृशं तृणविशेषम्। प्रश्न० १२८। तृणविशेषः। भग० ८०२।

इक्कडदासो–इक्कडदासः। उत्त० २८६।

इक्कडा–लाडदेसे वणस्सतिभेओ। नि० चू० प्र० १३४ आ। वनस्पतिविशेषाः। सूत्र० ३०७।

इक्कमिक्क–एकैकम्–परस्परम्। उत्त० ३८२।

इक्काई–राष्ट्रकूटविशेषः। विपा० ३९।

इक्कारसालंकारं – एकादशालङ्काराः, स्वरप्राभृतकथितालंकाराः। जं० प्र० ३९।

इक्खाग–इक्ष्वाकुः, कुलविशेषः। आव० १७९।

इक्खागकुलो–इक्ष्वाकुकुलः, कुलविशेषः। नि० चू० प्र० २९० अ। आव० १०९।

इक्खागभूमि–इक्ष्वाकुभूमिः, ऋषभजन्मभूमिः। आव० १६०।

इक्खागा–इक्ष्वाकवः, नाभेयवंशजाः। भग० ४८१। औप० ५८। कुलार्यभेदविशेषः। प्रज्ञा० ५६। प्रथमप्रजापतिवंशजाः। ठाणा० ३५८। ऋषभस्वामिवंशिकाः। आचा० ३२७।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इक्खु-इक्षुः। भग० ३०६। दश० १८३।

इक्खुगारा-इषुकाराः, धातकीखण्डपुष्करवरद्वीपार्द्धयोः भेदकारिणो दक्षिणोत्तरायताः पर्वतविशेषाः। प्रश्न० ९५।

इक्खुवाडिया-इक्ष्वादीनां मूलवर्गः (वंशवर्गवत्)। भग० ८०२।

इक्खुवाडि-पर्वगविशेषाः। प्रज्ञा० ३३।

इक्षु-पर्वगविशेषः। प्रज्ञा० ३०।

इक्षुरसा - वापीनाम, पंडकवन आग्नेयप्रासादवापिका। जं० प्र० ३७१।

इक्षुवरः-घृतोदसमुद्रानन्तरं द्वीपः, तदनन्तरं समुद्रोऽपि। प्रज्ञा० ३०७।

इगं-इकम्, देशीपदम्। आव० ४७४।

इच्छं-इच्छामि। आव० २६५।

इच्छया-बलाभियोगमन्तरेण। ठाणा० ५००।

इच्छसि-मृगयसे। आचा० १६८।

इच्छा-इच्छा, बलाभियोगः। ठाणा०। ४९९। इच्छा-प्रार्थना कामोऽभिलाषः कांक्षा गार्ध्यं मूर्च्छा। तत्त्वा० ७-१२। एकादशीरात्रिनाम। जं० प्र० ४९१। सूर्य० १४७। धनादिविषयाभिलाषः। ठाणा० २९१। चेतःप्रवृत्तिरभिप्रायः। आचा० १७५। अभिलाषमात्रम्। प्रश्न० ९७। अप्राप्तार्थाभिलाषरूपा। प्रश्न० ९२। वन्दनके प्रथमं स्थानम्। आव० ५४८।

इच्छाकामा-इच्छाकामाः, एषणमिच्छा सैव चित्ताभिलाषरूपत्वात्कामा इति। दश० ८५। मोहनीयभेदहास्यरत्युद्भवाः। आचा० १३५।

इच्छाकार-इदं मदीयं कार्यमिच्छया कुरुत न बलाभियोगेनेत्येवमिच्छया करणम्। बृ० प्र० २२२ अ। आज्ञाबलाभियोगरहितो व्यापारः। अनु० १०३। दशविधसामाचार्याः प्रथमभेदः। भग० ९२०। बलाभियोगमन्तरेण करणं इच्छाकारः-इच्छाक्रिया। आव० २५८।

इच्छाणुलोमा - यथा कश्चित्किञ्चित्कार्यमारभमाणः कञ्चन पृच्छति, स प्राह-करोतु भवान् ममाप्येतदभिप्रेतमित्येवंरूपा भाषा। प्रज्ञा० २५६। प्रतिपादयितुर्या इच्छा तदनुलोमा-तदनुकूला। भग० ५००। असत्यामृषाभाषाभेदः। दश० २१०।

इच्छाणुलोमियं-इच्छा-चेतःप्रवृत्तिरभिप्रायस्तस्यानुलोमम्-अनुकूलं तत्र भवमैच्छानुलोमिकम्। ठाणा० १७५।

इच्छापरिमाणं-इच्छायाः परिमाणम्। आव० ८२५।

इच्छापुन्निमा-इच्छापूर्णिमा। सूर्य० ११५।

इच्छामणं - इच्छामनः, कायपरिचारेच्छाप्रधानं मनः। प्रज्ञा० ५४९।

इच्छामुच्छा - इच्छामूर्च्छा, इच्छा-परधनं प्रत्यभिलाषः मूर्च्छा-तत्रैव गाढाभिष्वङ्गरूपेति, तृतीयाधर्मद्वारस्य सप्तविंशतितमं नाम। प्रश्न० ४३।

इच्छालोभ-इच्छारूपो लोभः इच्छालोभः-चक्रवर्तीन्द्रत्वाद्यभिलाषादिको निदानविशेषः। आचा० २९५। महालोभः। बृ० तृ० २४६ अ। ठाणा० ३७४।

इच्छियं - इष्टम्-ईप्सितम्। भग० १२१ इच्छितं-इष्टं-अनुमतम्। उत्त० ५०३। इच्छाविषयीकृतम्। जीवा० २७९।

इच्छियपडिच्छियं - इष्टप्रतीप्सितम्, युगपदिच्छाप्रतीप्साविषयं वा। भग० १२१। इच्छाया अवग्रहो नाम इच्छितप्रतीच्छितेन इच्छा संजाताऽस्येति इच्छितं, प्रतीच्छा संजाताऽस्येति प्रतीच्छितं, इच्छितं च तत् प्रतीच्छितं च इच्छितप्रतीच्छितम्। व्य० द्वि० ९३ अ।

इच्छियपडिच्छियववहारो- इच्छितप्रतीच्छितव्यवहारः, ईप्सितप्रतीप्सितव्यवहारः। आव० १००।

इज्जंजलि-इज्याञ्जलिः, यागविषयो जलाञ्जलिः। अनु० २९। मातुर्नमस्कारविधौ तद्भक्तः क्रियमाणः करकुड्मलमीलनलक्षणोऽञ्जलिः। अनु० २९। पूजायामञ्जलिः। अनु० २९।

इज्जंत-एज्जंत-आयान्तमागच्छन्तम्। उत्त० ३५८।

इज्जा-इज्या, पूजा। उत्त० ५३१। यजनम्। उत्त० ३५८। यजनं-यागः। अनु० २९। माता। अनु० २९। पूजा-गायत्र्यादिपाठपूर्वकं विप्राणां सन्ध्याऽर्चनम्। अनु० २९।

इज्जिसिया- इज्यैषिकाः, इज्यां-पूजामिच्छन्त्येषयन्ति वा ये त एव। भग० ४८२।

इट्टग-सेवकिका, मानोत्पत्तिकारणम्। पिण्ड० १३३।

इट्टाल-इष्टिकाखण्डः। दश० १७५। नि० चू० तृ० ७४ आ।

इट्ठं-इष्टम्। आव० २४०। वल्लभः-पूजितः। भग० ५६०।

इट्टगा-(क्षणविशेषः) इट्टगा सुत्ताउला (सेवतिका)। नि० चू० द्वि० १०० आ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इड्डर-गन्त्रीढक्कनकम्। भग० ३१३। गन्त्र्याः सम्बन्धि। ओघ० १६६, १६७।

इड्डरग-इड्डरकं-महत् पिटकम्। राज० १४१।

इड्डरिकादिः-पर्युषितकलनीकृताः अम्लरसा भवन्ति, आरनालस्थिताम्रफलादिर्वा। ठाणा० २२०।

इड्ढि-ऋद्धिः-आमर्षौषध्यादिः। दश० १०३। भवनपरिवारादिका। जं० प्र० ६२। उत्त० ३५०। आव० १७८। ठाणा० १३२।

इड्ढिपत्ता-ऋद्धिप्राप्ता आर्याः। प्रज्ञा० ५५। ऋद्धिप्राप्ता-आर्यप्रथमभेदः, अर्हदादयः। सम० १३५।

इड्ढिमं-इस्सरो। नि० चू० द्वि० १६६ आ।

इड्ढिमत-ऋद्धिमतः-विस्मयनीयवर्णादिसम्पत्तिमतः। उत्त० ४७३।

इड्ढिसिय-रूढिगम्याः। भग० ४८१।

इड्ढी-ऋद्धिः। प्रज्ञा० ४२४। इस्सरियं। नि० चू० प्र० १३ आ। आत्मशक्तिरूपा। प्रज्ञा० ४६७। भवनपरिवारादिका। जीवा० २१७। विभवैश्वर्यः। जीवा० २८०। विमानपरिवारादिका। सूर्य० २५८। ठाणा० ११६। औषधिविशेषः। उत्त० ४८०। कनकादिसमुदायः। उत्त० २८४। आमर्षौषध्यादिः। आचा० १७८। विमानवस्त्रभूषणादि। उपा० २६। दीनानाथदानादिका विभूतिः। उत्त० ४६५। श्रावकोपकरणादिसम्पदामर्षौषध्यादिरूपा। उत्त० ६६८।

इड्ढीगारवं- ऋद्धिगौरवम्, ऋद्धया-नरेन्द्रादिपूज्याचार्यादित्वाभिलाषलक्षणया गौरवं - ऋद्धिप्राप्त्याभिमानाप्राप्तिसम्प्रार्थनाद्वारेणात्मनोऽशुभभावगौरवम्। आव० ५७९। ऋद्धया-नरेन्द्रादिपूजालक्षणया आचार्यत्वादिलक्षणया वा अभिमानादिद्वारेण गौरवम्, ऋद्धिप्राप्त्यभिमानाप्राप्तप्रार्थनाद्वारेणात्मनोऽशुभभावो भावगौरवम्। ठाणा० १७३।

इणं-अयम्, अनन्तरोक्तत्वेन प्रत्यक्षः। भग० ३४।

इणमो-इदं, वक्ष्यमाणतया प्रत्यक्षासन्नम्। प्रश्न० २। नमः। पउ० ६-६३।

इणामेव-एवमेव। प्रज्ञा० ६००।

इणिंह-इदानीम्। आव० २७३।

इतः-स्थितः। २६९।

इतर- सामान्यसाधुभ्यो विशिष्टतरः। आचा० २४३। शय्यातरः। व्य० द्वि० २७६ अ। अन्तप्रान्तः कुलः। आचा० २४३।

इता-ज्ञाता। आचा० २८६।

इति-इतिः-प्रवृत्तिः। ठाणा० ३४३। उपदर्शने। सूर्य० २८६। प्रज्ञा० २५५। परिसमाप्तौ एवमर्थे वा। उत्त० ६७। उपप्रदर्शनार्थः। विशे० १५३। एवंप्रकारार्थः। ठाणा० ५०३। पूर्वप्रकान्तपरामर्शकः। आचा० १४५। इतिसद्दो वा अर्थे। नि० चू० द्वि० १३७ आ। आमंतणे परिसमत्तीए उवप्पदरिसणे वा। दश० चू० ६३। हेतौ। आचा। १००। उपप्रदर्शने। उत्त० ५७०। दश० ७६। आद्यर्थः। उत्त० ५६१। प्रत्येकं पर्यायस्वरूपनिर्देशार्थः। उत्त० ८। आद्यर्थे। आव० २८। प्रख्यातगुणानुवादनार्थः। भग० ६७। एवंप्रकाराः। ठाणा० ३५४।

इतिकत्तव्वं-इतिकर्त्तव्यं। आव० २१३। इतिकर्त्तव्यता-आदर्शनिक्षेपे संपूर्णकर्तव्यतार्थः। आचा० ५।

इत्तरं-इत्वरम्-अल्पकालीनम्। विशे० २४। स्वल्पः। नि० चू० प्र० १८९ अ। परिमितकालम्। दश० २६। चतुर्थादि षण्मासान्तमिदं तीर्थमाश्रित्य। ठाणा० ३६४। पादपोपगमनापेक्षया नियतदेशप्रचाराभ्युपगमादिङ्गितमरणम्। आचा० २८५।

इत्तरकं-इत्वरकम्, स्वल्पकालं, नियतकालावधिकं। उत्त० ६००।

इत्तरकालिकं-प्रथमपश्चिमतीर्थकरतीर्थेष्वनारोपितव्रतस्य इत्वरकालिकम्। ठाणा० ३२३। अल्पकालिकम्। भग० ९०९।

इत्तरा-इत्वरा, ये कल्पसमाप्त्यनन्तरं तमेव कल्पं गच्छं वा समुपयास्यन्ति ते इत्वराः। प्रज्ञा० ६८। स्वल्पकालभाविनी। अनु० १३। प्रस्तुतकल्पपरिसमाप्तौ ये भूयः स्थविरकल्पं प्रतिपद्यन्ते ते। बृ० प्र० २२७ आ।

इत्तरिए - अल्पकालीनं। भग० ९२१। नि० चू० प्र० २३९ अ।

इत्तरियं-इत्वरम्-स्वल्पकालभावीनि आव० ८३८। उत्तरगुणप्रत्याख्यानम्। आव० ८०४। अल्पकालिकं दैवसिकादि प्रतिक्रमणमेव। आव० ५६३।

इत्तरियं दिसं-इत्वरं दिशम्-आचार्यलक्षणाम्। व्य० द्वि० २०० अ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इत्तरिय – इत्वरं, भरतैरावतेषु प्रथमपश्चिमतीर्थकरतीर्थेष्वनारोपितमहाव्रतस्य शैक्षकस्य विज्ञेयम्। प्रज्ञा० ६३। अयनशीलम्–स्वल्पकालभावी। उत्त० ३३५। इत्वराः–प्रस्तुतकल्पपरिसमाप्तौ ये भूयः स्थविरकल्पं प्रतिपद्यन्ते ते। बृ० प्र० २२७ आ।

इत्तरियतवो – इत्वरतपः स्वल्पकालं अनशनरूपं तपः। उत्त० ६००।

इत्तरियपरिग्गहियागमणे–तत्रेत्वरकालपरिगृहीता कालशब्दलोपादित् इत्वरपरिगृहीतागमनम्, भाटीप्रदानेन कियन्तमपि कालं दिवसमासादिकं स्ववशीकृताया गमनं–मैथुनासेवनम्। आव० ८२५।

इत्तिरिउग्गहो – रुक्खातिहेट्ठठिताण वीसमणट्ठा इत्तरिओ उग्गहो भवति। नि० चू० प्र० २३९ आ।

इत्तिरियं–इत्वरं, स्वल्पकालिकं दैवसिकरात्रिकादि। ठाणा० ३८०। नि० चू० प्र० ३५४ आ।

इत्थंथं – इत्थं तिष्ठतीति इत्थंस्थं। प्रज्ञा० १०९। नारकादिव्यपदेशबीजं वर्णसंस्थानादि तत्। दश० २५८।

इत्थत्तं–अनेन प्रकारेणेत्थं तद्भाव इत्थत्वं, मनुष्यादित्वम्। भग० १११।

इत्थत्थं–इत्यर्थम्, एनमर्थम्–अनेकशस्तिर्यङ्नरनाकिनारकगतिगमनलक्षणम्। भग० १११।

इत्थिकहा–स्त्रीकथा–स्त्रीणां स्त्रीषु वा कथा, विकथायाश्चतुर्थभेदः। ठाणा० २०९। दश० ११४।

इत्थिपोसए–स्त्रीयं पोषयतीति स्त्रीपोषकः, अनुष्ठानविशेषः। सूत्र० १११।

इत्थिरयणे– स्त्रीरत्नम्, चक्रवर्तेः पञ्चमं पञ्चेन्द्रियरत्नम्। ठाणा० ३९८।

इत्थिलिंग – स्त्रीलिङ्गम्, स्त्रीत्वस्योपलक्षणमित्यर्थः। प्रज्ञा० २०।

इत्थिवऊ – स्त्रीवाक्, स्त्रीलिङ्गप्रतिपादिका भाषा। प्रज्ञा० २४९।

इत्थिवेए – स्त्रीवेदः, स्त्रियाः पुमांसं प्रत्यभिलाषः। प्रज्ञा० ४६८।

इत्थिवेदो – अंतो अणुसमय डाहो अणुवसंतो वि घट्टिज्जमाण दिप्पंतो फुंफुअग्गिसमाणो इत्थिवेदो। नि० चू० द्वि० ३१ अ।

इत्थिवेय–स्त्रीवेदः, स्त्रियाः पुंस्यभिलाषः। जीवा० १८।

इत्थिसंसग्गी–अक्खाइगउल्लावादि। दश० चू० १२७।

इत्थिसंसत्तो–स्त्रीसंसक्तः–स्त्रीसम्बन्धः। प्रश्न० १३८।

इत्थिसागारिए–स्त्रीजनः। नि० चू० तृ० १० अ।

इत्थिसागारियं। नि० चू० द्वि० ३४ अ।

इत्थी–स्त्री, पुरुषोत्तमवासुदेवनिदानकारणम्। आव० १६३।

इत्थीउ–स्त्रियः, अष्टमः परीषहः। आव० ६५६।

इत्थीणपुंसिया – इत्थिवेदो वि से नपुंसकवेदमपि वेदेति। नि० चू० द्वि० २५ आ।

इत्थीनामगोत्तं–स्त्रीनामगोत्रम्। आव० १२०।

इत्थीपण्हाइ–स्त्री उपलक्षणमेतत् पुरुषो वा प्रस्तौति प्रस्यंदते मिथुनकर्म्म समारभते इत्यर्थः। व्य० द्वि० १९५ आ।

इत्थीपरिण्णा–स्त्रीपरीज्ञाध्ययनम्, सूत्रकृताङ्गे प्रथमश्रुतस्कन्धे चतुर्थमध्ययनम्। सम० ३१।

इत्थीपसुविवज्जिअं–स्त्रीपशुविवर्जितमित्येकग्रहणे तज्जातीयग्रहणात् स्त्रीपशुपण्डकविवर्जितं रूपाद्यालोकनादिरहितम्। दश० २३७।

इत्थीरूवं – अणाभरणा इत्थीरूवं भण्णति। नि० चू० प्र० ७७ अ।

इत्थीविग्गह–स्त्रीविग्रहः, स्त्रीशरीरम्। दश० २३७।

इत्थीविपरियासो–स्त्रिया विपर्यासः स्त्रीविपर्यासः–अब्रह्मासेवनम्। आव० ५७५।

इत्थीवेदे–स्त्रीवेदः, स्त्रियं यथावस्थितस्वभावतस्तत्संबन्धविपाकतश्च वेदयति–ज्ञापयतीति, वैशिकादिकं स्त्रीस्वभावाविर्भावकं शास्त्रमिति। सूत्र० ११२।

इदुर–सम्बादिढक्कनकादि तदिदूरम्। अनु० १५१।

इद्धं–चित्तं। नि० चू० प्र० ३६ अ।

इन्द्रकूपः–उंडतमः कूपविशेषः। आव० ८२७।

इन्द्रजालम्–कुहकम्। दश० २५४।

इन्द्रनीलः – रत्नविशेषः। जीवा० २३। आव० १८१, २५९। प्रज्ञा० ९१।

इन्द्रियगोचरा–विषयाः। आव० ५८४।

इन्द्रियदुष्प्रणिहितकायिका–आद्यैन्द्रियैः–श्रोतादिभिर्दुष्प्रणिहितस्य इष्टानिष्टविषयप्राप्तौ मनाक्सङ्गनिर्वेदद्वारेणापवर्गमार्गं प्रति दुर्व्यवस्थितस्य क्रिया। आव० ६११।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इन्द्रियार्थावग्रहः-स्पर्शनादीन्द्रियाणां ये स्पर्शादयो अर्थाः तेषां अवग्रहः-सामान्यमात्रज्ञानं। नंदी १७४।

इन्धनं-गोमयो भण्यते। ओघ० १२९।

इब्भ-इभमर्हतीति इभ्यः। बृ० प्र० १९९ अ। यद्द्रव्यनिचयान्तरितो हस्त्यपि न दृश्यते। इभो-हस्ती तत्प्रमाणं द्रव्यमर्हतीति निरुक्तादिभ्यः। जं० प्र० १२२। हस्तिप्रमाणद्रविणराशिपतिः। औप० २७। अर्थवान्। ठाणा० ४६३। यद्द्रव्यनिचयान्तरितो महेभो न दृश्यते। औप० ५८। इभमर्हन्तीतीभ्याः – यद्द्रव्यस्तूपान्तरित उच्छ्रितकदलिकादण्डो हस्ती न दृश्यते ते। ठाणा० ३५८। महाधनाः। भग० ४६३। धनवान्। प्रज्ञा० ३३०। इभो-हस्ती तत्प्रमाणं द्रव्यमर्हतीतीभ्यः। यत्सत्कपुञ्जीकृतहिरण्यरत्नादिद्रव्येणान्तरितो हस्त्यपि न दृश्यते सोऽधिकतरद्रव्यो वा इभ्य इत्यर्थः। जीवा० २८०। अनु० २३। यावतो द्रव्यस्योत्करेणान्तरितो हस्ती न दृश्यते तावद् द्रव्यपतयः। प्रश्न० ९६।

इब्भजाति – मातिपक्खविसुद्धा इब्भजाइ। नि० चू० प्र० २९० अ। विशिष्टा जातयः। ठाणा० ३५८।

इमंपि-इदमपि, इतिपूर्वकोऽपिशब्दः। आचा० ६५।

इमेसु-इमेषु। आचा० ३२६।

इय-इतः, आर्षत्वात अस्य। प्रज्ञा० ११२। आगतः। (मर०)।

इयणिंह-इत इदानीम्। ठाणा० १४३।

इयपट्ठा-इतिप्रष्ठाः-प्रधानाः, वाग्मिनः। उपा० ४६।

इयरं-इतरं, रजोहरणनिषद्या औपग्रहिकं कार्पासिकं और्णिकं वा चीरं, सार्थो वा। ओघ० २३। इतरशब्देन रजोहरणनिषद्योच्यते। ओघ० २३।

इयरेयर-इतरेतरः, इतरेतरसंयोगः। उत्त० २३।

इरिआवहं-ईरणमीर्या, पथि ईर्या ईर्यापथं-गमनागमनम्। ओघ० ३७।

इरिआवहिए – ऐर्यापथिकः, केवलयोगप्रत्ययः कर्मबन्धः, क्रियास्थाने त्रयोदशं क्रियास्थानम्। सम० २५।

इरितासमिती-जीवसंरक्खणजुगमेत्तंतरदिट्ठिस्स अप्पमादिणो संजमोवकरणुप्पायणणिमित्तं जा गमणकिरिया सा। नि० चू० प्र० १६ आ।

इरिमदिर-लक्ष्मीमन्दिरम्, लक्ष्म्यालयं, प्रभूतलक्ष्मीकम्। दश० ५८।

इरिया-ईरणमीर्या-गतिपरिणामः। उत्त० ५१४। वर्तनी। उप० मा० गा० ३६०। ईर्या-आचारप्रकल्पस्य द्वादशो भेदः। आव० ६६०। ईर्या-गमनम्। भग० ३२३। ईरणमीर्या-गमनमित्यर्थः। आचा० ३७४। ईर्या-आचारप्रकल्पस्य द्वितियश्रुतस्कन्धस्य तृतीयमध्ययनम्। प्रश्न० १४६। ईर्या-गमनं, ईर्याकार्यं कर्म। आव० २६५। ईर्या-गमनम्। भग० १०६।

इरियाइ-ईर्यादि, संयमविषया विराधना। ओघ० ८०।

इरियामि-ईरे-गच्छामि गोचरचर्यादिष्विति। उत्त० ४४५।

इरियावह – ईर्या-गमनं, तत्प्रधानः पन्था ईर्यापथः। आव० ५७६।

इरियावहकिरिया – ईर्यापथक्रिया, या उपशान्तमोहादारभ्य सयोगिकेवलिनं यावदिति। सूत्र० ३०४।

इरियावहियं-ऐर्यापथिकी, ईर्या-गमनं तद्विषयः पन्था-मार्गस्तत्र भवा, केवलकाययोगप्रत्ययः कर्मबन्धः इत्यर्थः। भग० १०६। ईरणमीर्या-गतिस्तस्याः पन्था यदाश्रिता सा भवति तस्मिन् भवमध्यात्मादित्वाट्ठकि ऐर्यापथिकं, पथिस्थस्तिष्ठच्चैर्यापथिकम्। उत्त० ५९५।

इरियावहिया – ईर्यापथक्रिया, क्रियायास्त्रयोदशो भेदः। आव० ६४८। ईर्यापथिकी – विंशतिक्रियामध्ये विंशतितमा। आव० ६१२। ऐर्यापथिकी-गमनप्रधानः पन्थाः ईर्यापथस्तत्र भवा। आव० ५७३। ईर्यापथिकी-चंक्रमणक्रिया। बृ० तृ० २७ अ।

इरियासमिइ – ईर्यासमितिः – निरवद्यप्रवृत्तिरूपा। प्रश्न० १४३। ईर्यासमितिः-आवश्यकायैव संयमार्थं सर्वतो युगमात्रनिरीक्षणायुक्तस्य शनैर्न्यस्तपदा गतिः। तत्त्वा० ९-५।

इरियासमिए-ईरणं-गमनमीर्या तस्यां समितो-दत्तावधानः पुरतो युगमात्रभूभागन्यस्तदृष्टिगामीत्यर्थः। आचा० ४२८।

इला-हिमवते चतुर्थकूटः। ठाणा० ७१। धरणेन्द्रस्य महिषीनाम। भग० ५०४।

इलाइपुत्त-ससंवेगः। (मर०)।

इलादेवया – इलादेवता, इलावर्द्धननगरदेवता। आव० ३५९।

इलादेवी-पश्चिमरुचकवास्तव्या दिक्कुमारी। आव० १२२। पुष्पचूलायाः पञ्चममध्ययनम्। निर० ३७। पाश्चात्यरुचकवास्तव्या प्रथमादिक्कुमारीमहत्तरिका। जं० प्र० ३९१।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इलादेवीकूडे – इलादेवीकूटं, क्षुल्लहिमवत्कूटः । जं० प्र० २९६ । इलादेवीदिक्कुमारीकूटम् । जं० प्र० ३८१ ।

इलापुत्तो – इलापुत्रः, इलावर्द्धननगरसार्थवाहीपुत्रः । आव० ३५९ । तीर्थकराचार्यव्यतिरिक्तेभ्यः श्रुत्वा प्रतिबुद्धः । सूत्र० १७२ ।

इलावद्धणं–इलावर्द्धनं, नगरविशेषः । आव० ३५९ ।

इलिआगई–इलिकागतिः, गत्यंतरगतिविशेषः । विशे० २४४ । भग० ८४ । ठाणा० ८९ । आव० ३६३ ।

इलिएण । नि० चू० प्र० १६ अ ।

इलिका – धान्यकीटः । भग० ८४ । धान्यजन्तुविशेषः । आव० ३६३ ।

इलू–धान्यविशेषः । नि० चू० तृ० १४९ अ ।

इष्टकापाकः–यत्रेष्टकाः पच्यन्ते तत् । जीवा० १२४ ।

इसत्थं–प्राकृतशैल्या इषुशास्त्रं–नागबाणादिदिव्यास्त्रादिसूचकं शास्त्रम् । जं० प्र० १३८ ।

इसत्थे । नि० चू० प्र० २६७आ ।

इसि–ऋषयः–गणधरव्यतिरिक्ताः शेषा जिनशिष्याः । मुनयः यतयो वा । सम० १५९ । त्रिकालदर्शिनः । राज० ४६ ।

इसिगणिया – ऋषिगणितदेशवास्तव्या देवानन्दादासी । भग० ४६० ।

इसिचेव–वाणवंतरपणपन्निदा । ठाणा० ८५ ।

इसिज्झयं–ऋषिध्वजं–मुनिचिह्नं रजोहरणादि । उत्त० ४७८ ।

इसितडागं – ऋषितडाकं, तोसलिनगरे सरः । बृ० द्वि० २५७ अ ।

इसितलागं । बृ० द्वि० १३६ अ ।

इसिदासे–ऋषिदासः, अनुत्तरोपपातिकदशानां तृतीयवर्गस्य तृतीयमध्ययनम् । अनुत्त० २ ।

इसिदिण्णं–ऋषिदिन्नम्, ऐरवते पंचमजिननाम । सम० १५३ ।

इसिपब्भारा–सिद्धशिलानाम । सम० २२ ।

इसिभद्द–आलभिकायां श्रमणोपासकविशेषः । भग० ५५० ।

इसिभासिआ–ऋषिभाषिताः । आव० ६१ ।

इसिभासिय । बृ० ३५ अ ।

इसिभासियाइं–ऋषिभाषितानि, उत्तराध्ययनादीनि । विशे० ९३१ । आव० ३०९ । ऋषिभाषितं–उत्तराध्ययनादि । सूत्र० ३८६ ।

इसिया–मुञ्जागर्भभूता शलाका । सूत्र० २७९ ।

इसिवज्झा–ऋषिवध्या–ऋषिहत्या । उत्त० ४४० ।

इसिवाइंदा–वाणमन्तरविशेषः । ठाणा० ८५ ।

इसिवाइय–ऋषिवादिकः, वाणमन्तरविशेषः । प्रज्ञा० ९५ । व्यन्तरनिकायानामुपरिवर्त्तिनो वाणव्यन्तरजातिविशेषाः । प्रश्न० ६९ ।

इसिवालए–वाणव्यंतरऋषिपालेन्द्रः । ठाणा० ८५ ।

इसिवाले – ऋषिपालः, उत्तरऋषिवादिकव्यन्तराणामिन्द्रः । प्रज्ञा० ९८ ।

इसिवालो – तोसलिवासिना क्रीत उज्जयिनीकुत्रिकापणाधिपः सुरः । बृ० द्वि० २६७ आ । पंचमवासुदेवपूर्वभवनाम । सम० १५३ ।

इसिवुड्ढी–ऋषिवृद्धिः, ब्रह्मदत्तस्याष्टाग्रमहिषीणां मध्ये सप्तमी राज्ञीनाम । उत्त० ३७९ ।

इसी–ऋषिः, विशिष्टतपश्चरणोपेतो महर्षिः । सूत्र० २९८ । दक्षिणऋषिवादिकव्यन्तराणामिन्द्रः । प्रज्ञा० ९८ । पश्यतीति अतिशयज्ञानी । औप० ७८ । सुविहितः । ओघ० २२२ ।

इसु–इषुः, शरः । दश० १८ । इषुः–ज्याविष्कंभयोर्वर्गविशेषमूलं विष्कंभाच्छोध्यं शेषार्धम् । तत्त्वा० ३–११ ।

इसुसत्थं–इषुशास्त्रम्, बाणकला । आव० ३९२ ।

इस्सरियं–ऐश्वर्यं–प्रभुत्वं, द्रव्यादिसमृद्धिर्वा । उत्त० ४७४ ।

इस्सरे–भूतेन्द्रविशेषः । ठाणा० ८५ ।

इस्सा – ईर्ष्या । आव० ४१० । परगुणासहनम् । उत्त० ६५६ ।

इहत्थे–इहार्थ ईहास्थो वा । ठाणा० २४८ ।

इहरा–इतरथा, अन्यथा । पिण्ड० १४१ । अन्यथा । आव० २६० ।

इहलोगइया–मणुस्सा । नि० चू० द्वि० ७१ आ ।

इहलोकभते – इहलोकभयं–मनुष्यादिकस्य सजातीयादन्यस्मान्मनुष्यादेरेव सकाशाद्यद्भयम् । ठाणा० ३८९ । यत्सजातीयाद् भयम् । सम० १३ । इहलोके भयं स्वभावाद् यत् प्राप्यते । आव० ४७२ । स्वजातीयात् मनुष्यादेर्मनुष्यादिकस्यैव भयम् । प्रश्न० १४३ ।

इहलोगसंवेगणी–संवेगनीकथायाः प्रथमभेदः, इहलोकः–मनुष्यजन्म, तत्स्वरूपकथनेन संवेगनी । ठाणा० २१० ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इहलोगासंसप्पओगे -- इहलोकासंसाप्रयोगः, इहलोकः-मनुष्यलोकस्तस्मिन्नाशंसा-अभिलाषप्रयोगः। आव० ८३९।
इहलोगो-इहलोकः, मनुष्यलोकः। आव० ८४०।
इहलोयभयं - इहलोकभयं-मनुष्यादिसजातीयादन्यस्मान्मनुष्यादेरेव भयम्। आव० ६४५।
इहलोयसंवेयणी-इहलोकसंवेजनी, संवेजनीकथायास्तृतीयो भेदः। दश० ११२।
इहेहे-विप्साभिधानं सम्भ्रमख्यापनार्थं, यदि वा इहेति लोके इहेत्यस्मिन् मृत्यौ। उत्त० ४०९।

ई

ईइ-ईतिः, गड्डरिकादिरूपा। जीवा० १८८। जं० प्र० २९।
ईति - दुरितविशेषः। भग० ८। धान्याद्युपद्रवकारिशलभमूषकादिः। जं० प्र० ६६।
ईती-ईतिः-धान्याद्युपद्रवकारी प्रचुरमूषकादिप्राणिगणः। सम० ६२।
ईप्सितप्रतीप्सित-व्यवहारविशेषः। विशे० ६२४।
ईरियट्ठा-ईर्याविशुद्ध्यर्थम्। ठाणा० ३६०।
ईरिया-गमनं। ठाणा० ३४३। ईरणमीर्या-गतिपरिणामः। उत्त० ५२४।
ईरियावहिया-ऐर्यापथिकीक्रिया, योगमात्रजः कर्मबन्धः। आव० ६१२। ईर्या-गमनं तत्प्रधानः पन्था-मार्ग ईर्यापथस्तत्र भवमैर्यापथिकं- केवलयोगप्रत्ययं कर्म्म। भग० ३८५। आव० ६४८, ६४९।
ईरियावहियाकिरिया - ईर्यापथिकक्रिया-यदुपशान्तमोहादेरेकविधकर्म्मबन्धनमिति। ठाणा० ३१६।
ईरियासमिइ- ईर्यासमितिः, ईर्यायां समितिः, ईर्याविषये एकीभावेन चेष्टनम्। आव० ६१५। रथशकटयानवाहनाक्रान्तेषु मार्गेषु सूर्यरश्मिप्रतापितेषु प्रासुकविविक्तेषु पथिषु युगमात्रदृष्टिना भूत्वा गमनागमनं कर्त्तव्यम्। आव० ६१५।
ईर्याप्रत्ययं-ईरणमीर्या-गमनं तेन जनितम्। सूत्र० १२।
ईर्याप्रथप्राप्ता:-योगसंयमप्राप्ताः। तत्त्वा० ९-४८।
ईर्याविशुद्धि-ईर्या-गमनं तस्या विशुद्धिर्युगमात्रनिहितदृष्टित्वम्। ठाणा० ३६०।
ईलिकागतिः-गतिविशेषः। प्रज्ञा० १५१। नंदी० १५३।
ईली-करवालविशेषः। प्रश्न। ४८।

ईश्वरकारणिक:-क्रियावादिद्वितीयविकल्पः। सम० ११०।
ईश्वरकारणिन:-क्रियावादिद्वितीयविकल्पः। ठाणा० २६८।
ईश्वरपुत्र:-इभ्यानां पुत्रः ईश्वरपुत्रः। नंदी २५८।
ईश्वरवादिन:। आव० ८१६।
ईषत्कुटिला-कुण्डलीभूता। जं० प्र० ११३।
ईषा-गात्रविशेषः। जं० प्र० ५५। राज० ९३।
ईसक्खो-ईशाख्यः, ईशनमैश्वर्यमात्मनः ख्याति अन्तर्भूतण्यर्थतया ख्यापयति-प्रथयति यः सः। जीवा० २१७।
ईसत्थ-इषुशास्त्रम्, धनुर्वेदः। आव० १२९। प्रश्न० ९७। धणुवेदादि-धनुर्वेदादि। नि० चू० तृ० २० आ।
ईसत्थसत्थरहचरियाकुसलो - इष्वस्त्रशस्त्ररथचर्याकुशलः। उत्त० २१४।
ईसर - ईश्वरः, भोगिकादिः अणिमाद्यष्टविधैश्वर्ययुक्तो वा। जं० प्र० १२२। लवणे उत्तरपातालकलशः। ठाणा० ४८०, २२६। प्रभुरमात्यादिः। अन्त० १६। स्फातिमान्। जीवा० ३६५। युवराजादिः भोगिको वा। प्रश्न० ९६। भोगिकादिः, अणिमाद्यष्टविधैश्वर्ययुक्तो वा। जीवा० २८०। बृ० तृ० २५५ आ। युवराजः, अणिमाद्यैश्वर्ययुक्तः। औप० ५८। प्रज्ञा० ३३०, ३२७। महेश्वरः। प्रश्न० ३३। प्रधानः, प्रभुः, स्वामी। आव० ५०२। भूतवादिकव्यन्तरेन्द्रः। प्रज्ञा० ९८। 'ईस ईश्वर्ये' ऐश्वर्येण युक्तः ईश्वरः, सो य गामभोतियादि। नि० चू० प्र० २७७ अ। गृहस्वामी। आचा० ४०३, ३७०। द्रव्यपतिः। उत्त० ३५३। युवराजो माण्डलिकोऽमात्यो वा, अणिमाद्यष्टविधैश्वर्ययुक्त ईश्वरः। ठाणा० ४६३। युवराजः सामान्यमण्डलिकोऽमात्यश्च। अनु० २३। युवराजः। भग० ३१८। युवराजादयः। भग० ४६३। औप० १४। युवराजा। राज० १२१।
ईसरस्स-पातालकलशः। सम० ८७।
ईसरा-ईश्वराः, युवराजाः, अणिमाद्यैश्वर्ययुक्ताः। जं० प्र० १९०।
ईसरिए-ऐश्वर्यः, मदस्य षष्ठं स्थानम्। आव० ६४६।
ईसरी-ईश्वरी, सोपारके श्राविकाविशेषः। आव० ३०४।
ईसा - ईशा, पिशाचकुमारेन्द्रस्याभ्यन्तरिका पर्षत्। जीवा० १७१। ईश्वरी-लोकपालाग्रमहिषीणां आद्या पर्षद्। ठाणा०

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१२७। ईर्ष्या–प्रतिपक्षाभ्युदयोपलम्भजनितो मत्सरविशेषः। आव० ६११।

ईसाण–ईशानः–ईशानावतंसकाभिधविमानोपलक्षितः द्वितीयकल्पः। अनु० ९२।

ईसाणवडिंसए–ईशानावतंसकः, ईशानकल्पमध्येऽवतंसकः। जीवा० ३९१।

ईसाणवडेंसए–ईशानकल्पेन्द्रविमानं। भग० २०३।

ईसाणा–ईशानदेवलोकनिवासिन ईशानाः, द्वितीयो देवलोकः। प्रज्ञा० ६९। पूर्वोत्तरदिक्कोणनाम। ठाणा० १३३।

ईसाणी–पूर्वोत्तरदिक्कोणनाम। भग० ४९३। ऐशानी ईशानकोण, पूर्वोत्तरमध्यवर्तिदिक्। आव० २१५।

ईसाणे–द्वितीयकल्पेन्द्रः। ठाणा० ८५। अहोरात्रस्यैकादशमुहूर्तनाम। सूर्य० १४६। एकादशमुहूर्तनाम। जं० प्र० ४९१। देवलोकविशेषः। आव० ११५।

ईसिं–ईषत्, मनाक्। जीवा० १८१।

ईसिं ओट्ठवलंबिणी–ईषदोष्ठावलम्बिनी, ईषत्–मनाक् ततः परम्परमास्वादतया झटित्येवाग्रतो गच्छति ओष्ठेऽवलम्बते–लगतीत्येवंशीला। प्रज्ञा० ३६४।

ईसिं ओणयकाओ–ईषदवनतकायः। आव० २१६।

इसिं तंबच्छिकरणी–ईषत्ताम्राक्षिकरणी, ईषत्–मनाक् ताम्रे अक्षिणी क्रियेते अनयेति। प्रज्ञा० ३६४।

ईसिंपब्भारगओ – ईषत्प्राग्भारगतः – ईषदवनतकायः। आव० २१६।

ईसिं वोच्छेदकडुई – ईषद्व्युच्छेदकटुका, ईषत्–मनाक् पानव्यच्छेदे सति तत ऊर्ध्वं कटुका एलादिद्रव्यसम्पर्कत उपलक्ष्यमाणतिक्तवीर्येति। प्रज्ञा० ३६४। जीवा ३५१।

ईसि–ईषत्, मनाक्। प्रज्ञा० ९१। आव० ८५७। ईषत्प्राग्भारानाम। प्रज्ञा० १०७। सिद्धशिलानाम। रत्नप्रभाद्यपेक्षया ह्रस्वत्वाद् ईषत्। ठाणा० ४४०। सम० २२।

ईसिगि–सरस्सछल्ली–त्वक्। नि० चू० तृ० ६३ आ।

ईसिपंचहस्सक्खरुच्चारणद्धा–अयोगिकालमानं। उत्त० ५७७। ईषदिति–स्वल्पः प्रयत्नापेक्षया पञ्चानां ह्रस्वाक्षराणां–अइउऋलृइत्येवंरूपाणामुच्चरणमुच्चारो भणनं तस्याद्धा–कालो यावता त उच्चार्यन्त। उत्त० ५९६।

ईसिपब्भारा–ईषत्प्राग्भारा, ईषद्भाराक्रान्तपुरुषवन्नता अन्तेष्विति। अनु० ९२। सिद्धशिलानाम, प्राग्भारस्य ह्रस्वत्वादीषत्प्रागभारा। ठाणा० ४४०। सम० २२। सिद्धशिला। आव० ६००।

ईसी ओट्ठावलंबिणी–ईषदोष्ठावलम्बिनी, ईषद् ओष्ठमवलम्बते–ततः परमतिप्रकृष्टास्वादगुणरसोपेतत्वात् झटिति परतः प्रयाति। जीवा० ३५१।

ईसी तंबच्छिकरणी–ईषत्ताम्राक्षिकरणी, किंचिन्नेत्ररक्तताकरणी। जीवा० ३५१।

ईसीपब्भारगए–ईषत्प्राग्भारगतः। आव० ६४८।

ईसीपब्भारा–ईषत्प्राग्भारा, सिद्धभूमिः। आव० ४४२। अष्टमभूमिः, अन्त्याभूमिः। आव० ६००। पञ्चचत्वारिंशयोजनलक्षायामविष्कम्भप्रमाणा शुद्धस्फटिकसंकाशा सिद्धशिला। प्रज्ञा० २२८। ईषद्–अल्पो रत्नप्रभाद्यपेक्षया प्राग्भारः–उच्छ्रयादिलक्षणो यस्यां सा। ठाणा० २५१। सिद्धशिला। प्रज्ञा० १०७। ईषत्–अल्पो योजनाष्टकबाहल्यपञ्चचत्वारिंशल्लक्षविष्कम्भात् प्राग्भारः पुद्गलनिचयो यस्याः सा। ठाणा० १२५।

ईसेणिआ–ईसिनिकाः। जं० प्र० १९१।

ईहइ–ईहते–पर्यालोचयति। आव० २६।

ईहते–पूर्वापराविरोधेन पर्यालोचयति। नंदी २५०।

ईहा – अन्वयधर्मघटनप्रवृत्तश्चापायाभिमुख एव बोधः। विशे० १७०। सदर्थविशेषालोचनं। भग० ३४४। सदर्थाभिमुखा ज्ञानचेष्टा। भग० ६३३। 'ईहचेष्टायाम्' ईहनमीहासतामन्वयिनां व्यतिरेकिणां चाऽर्थानां पर्यालोचना। विशे० २२६। वितर्कः। सम० ११५। अवग्रहादुत्तरकालमवायात्पूर्वं सद्भूतार्थविशेषोपादानाभिमुखोऽसद्भूतार्थविशेषपरित्यागाभिमुखः–प्रायोऽत्र मधुरत्वादयः शङ्खादिशब्दधर्मा दृश्यन्ते न खरकर्कशनिष्ठुरतादयः शार्ङ्गादिशब्दधर्मा इत्येवंरूपो मतिविशेषः। नंदी १६८। ईहनमीहा–सदर्थपर्यायलोचनम्। नंदी १८६। ईहनमीहा–सतामर्थानामन्वयिनां व्यतिरेकाणां च पर्यालोचना। आव० १८। तदवगृहीतार्थविशेषालोचनम्। आव० ९। ईनहमीहा–सद्भूतार्थपर्यालोचनरूपा चेष्टा। प्रज्ञा० ३१०। नंदी १६८। किमिदमित्थमुतान्यथेत्येवं सदर्थालोचनाभिमुखा मतिः चेष्टा। औप० ९९। सदर्थपर्यालोचनात्मिका। दश० १२६। अवगृहीतार्थैकदेशाच्छेषानुगमनं। निश्चयविशेषजिज्ञासा। तत्त्वा०

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१ – १५। अवग्रहार्थगतासद्भूतसद्भूतविशेषालोचनम्। राज० १३०।

ईहामिग–ईहामृगः–वृकः। भग० ४७८। जं० प्र० ४३। जीवा० १९९। नाट्यविधिविशेषः। जीवा० २४६। जं० प्र० ४१५। आटव्यः पशुः। आचा० ४२३।

ईहामिय–ईहामृगाः–वृकाः। राज० २८।

उ

उंछं–उञ्छं–भक्तं। ओघ० १५४। अन्यान्यवेश्मतः स्वल्पं स्वल्पमामीलनात्। उत्त० ६६७। जुगुप्सनीयं, गर्ह्यम्। सूत्र० १०८। भैक्ष्यम्। सूत्र० ७४। अल्पाल्पम्। प्रश्न० १११। छादनाद्युत्तरगुणदोषरहितः। आचा० ३६८। अज्ञातपिण्डोञ्छसूचकत्वादिति साधोरुपमानम्। दश० १८। एषणीयः। आचा० ३७६। उञ्छ्यते–अल्पाल्पतया गृह्यत इति, भक्तपानादिः। ठाणा० २१३।

उंछवित्ती – उञ्छवृत्ती–कणयाचनवृत्तिः। आव० ७०५। व्य० द्वि० ३५९ अ।

उंछविही–कणयाचनवृत्तिः। आव० ७०५।

उंजणं–अवमं(सं)तुअणं। दश० चू० ६९।

उंजण–उञ्जनम्। उत्सेचनम्। दश० २२८, १५४।

उंजायणा–वासिष्ठगोत्रस्य नामविशेषः। ठाणा० ३९०।

उंजेज्जा–उत्सिञ्चेत्। दश० १५४।

उंडअ–उण्डकः, पिण्डकः। ओघ० २९।

उंडगं–उन्दकम्, स्थण्डिलम्। दश० १५६।

उंडत्तं–उद्वेधः। ठाणा० ५२५।

उंडया–ग्रन्थयः। नि० चू० प्र० २४५ आ।

उंडिं–मुद्राम्। व्य० द्वि० १६७ आ।

उंडिका–मुद्रा। बृ० प्र० ३३ अ।

उंडुअं–उन्दुकम्–स्थानम्। दश० १७०। बृ० प्र० २०२ अ।

उंडेरगा। नि० चू० द्वि० १२५ आ।

उंडेरय–वटकाः। आव० ६८०।

उंदर–उन्दुरः। प्रश्न० ८।

उंदु–उन्दु–मुखम्। अनु० २९।

उंदुर – उन्दुरः–मूषकः। ओघ० १२६। आव० ६४१। उत्त० १०९। नि० चू० द्वि० २२ अ।

उंदुरुक्कं–मुखेन वृषभादिशब्दकरणम्। अनु० २९।

उंदोइयाए–अडोलिया, यवननृपतिदुहिता। बृ० प्र० १९१ अ।

उंबर–उदुम्बरः, बहुबिजकवृक्षविशेषः। प्रज्ञा० ३२। भग० ८०३। चतुर्थभवनवासिदेवस्य वृक्षः। ठाणा० ४८७। उम्बरः। व्य० द्वि० ३६२ अ। गिहेलुको। नि० चू० द्वि० ८३ आ।

उंबरदत्त–उदुम्बरदत्तः, दुःखविपाके सप्तममध्ययनम्। विपा० ७८। पाटलखण्डनगरे सागरदत्तसार्थवाहसुतः। विपा० ७४। जक्षविशेषः। विपा० ७४।

उंबरमंथुं–चूर्णविशेषः। आचा० ३४८।

उंबरवच्चं–उंबरस्स फला जत्थ गिरिउडे उच्चविज्जंति तं उंबरवच्चं भण्णत्ति। नि० चू० प्र० १९२ आ।

उंबरिय–वृक्षविशेषः। भग० ८०३।

उंबरो–उदुम्बरदत्तः, सार्थवाहसुतः, दुःखविपाकानां सप्तममध्ययनम्। विपा० ३५।

उ–उपयोगकरणे। आव० ४४९।

उअत्तं–उत्तीर्णम्। नि० चू० प्र० ३४५ आ।

उअरदंते–उदरदान्तः–येन वा तेन वा वृत्तिशीलः। दश० २३३।

उआहणित्ता–उपाहत्य, समीपमानीय। दश० ५९।

उइंति–उद्यन्ति, उदयं यान्ति। उत्त० ४८६।

उइओदए–उदितोदयः, सिद्धौ कायोत्सर्गफलमिति दृष्टान्ते राजा। आव० ८००।

उइज्जंति–उदीर्यन्ते, उद्रेकाऽवस्थां नीयन्ते। आव० ५६८।

उइण्णा–अवतीर्णा। उत्त० ३००।

उइन्न–उदीर्णः–विपाकापन्नः। आचा० १५१।

उईरयं–उदीरकं–प्रवर्त्तकम्। प्रश्न० ८६।

उईरयइ–उदीरयति–अन्यान् वातान् जलमपि चोत्–प्राबल्येन प्रेरयति। जीवा० ३०७।

उउ–उत। नि० चू० प्र० ३४८ अ। ऋतुः। भग० ५४३। ऋतु–रक्तरूपः, शास्त्रप्रसिद्धो वा। रक्तवृत्तिलक्षणः। ठाणा० ३१३।

उउबद्ध–ऋतुबद्ध उच्यते शीतकाल उष्णकालश्च। ओघ० ११८। ऋतुबद्धः। आव० १८९। शीतोष्णकालयोः। ओघ० २०५। शीतोष्णकालौ मिलितौ चैव भण्यते। ओघ० १३१।

उउबद्धपीढफलगं – यः पक्षस्याभ्यन्तरे पीठफलकादीनां बन्धनानि मुक्त्वा प्रत्युपेक्षणां न करोति यो वा दिला-

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वस्तृतसंस्तारकः सोऽबद्धपीठफलकः तमू । व्य० प्र० १६४ अ। जो य पक्खस्स पीढफलिगादियाण बंधे मोत्तुं पडिलेहणं ण करेति सो संजओ उउबद्धपीढफलगो अधवा णिच्चथणिय-संथारगो णिच्चुत्थरियसंथारगो य उउबद्धपीढफलगो भण्णति । नि० चू० द्वि० ९१ अ।

उउबद्धोग्गहो-ऋतुबद्धावग्रहः । नि० चू० प्र० २३९ अ।

उउपरियट्ट-ऋतुपरिवर्तः- ऋत्वन्तरम् । आचा० ३२७।

उउय-ऋतुजः-कालोचितः । प्रश्न० १६२।

उउसंधी-ऋतुसन्धिः-ऋतोः पर्यवसानम् । आचा० ३२७।

उऊ-ऋतुः, मासद्वयमानः । भग० २११ । ऋतुः । आचा० ३२७।

उऊसंवच्छरे-ऋतवो-लोकप्रसिद्धाः वसन्तादयः तद्व्यव-हारहेतुः संवत्सरः ऋतुसंवत्सरः, तृतीयप्रमाणसंवत्सरः । जं० प्र० ४८७।

उएट्टे-शिल्पे चतुर्थभेदः । अनु० १४९।

उक्कट्टणं-गाढतरम् । नि० चू० प्र० ११५ अ।

उक्कंचण - ऊर्ध्वं कंचनमुत्कंचनं-हीणगुणस्य गुणोत्कर्षप्रति-पादनम् । उत्कोचा । राज० ११५।

उक्कंचणदीव-ऊर्ध्वदण्डव्रतः । भग० ५४८।

उक्कंचणया-उत्कञ्चनता-मुग्धवञ्चनप्रवृत्तस्य समीपवर्त्तिविद-ग्धचित्तरक्षार्थं क्षणमव्यापारतयाऽवस्थानम् । औप० ८१। मुग्धवञ्चनप्रवृत्तस्य समीपवर्तिविदग्धचित्तरक्षणार्थं क्षणमव्या-पारतया अवस्थानम् । राज० २९।

उक्कंतो-उत्क्रान्तः, आयुःक्षयेण मृतः । उत्त० ४६०। उत्कृतः-त्वगपनयनेन छिन्नः । उत्त० ४६०।

उक्कंबिओ-वंशादिकम्बाभिरवबद्धः । आचा० ३६१।

उक्क-उल्का । व्य० द्वि० २४१ अ । गगनाग्निः । दश० १५४।

उक्कइयकरणं-सिव्वणं, तुण्णणं । नि० चू० प्र० १२४ अ।

उक्कच्छिय-आर्यिकाणां त्रयोदशभेदोपधौ एकादशी । ओघ० २०९।

उक्कच्छिया-कच्छाए समीवं उवकच्छं, तं छादयंतीति । नि० चू० प्र० १८० अ।

उक्कजिय-डंडायतं । नि० चू० तृ० ५९ अ।

उक्कडं-उत्कटं-उपेतम् । जं० प्र० २७५। दुष्कृतम् । आव० ७८२। प्रचुरः । आव० ७७४।

उक्कडुअ - उत्कटुकानि, यथास्थानमनिविष्टानि । जं० प्र० १७०।

उक्कडुआसणिए-उत्कुटुकासनं-पीठादौ पुतालगनेनोपवेशन-रूपमभिग्रहतो यस्यास्ति स । ठाणा० २९८।

उक्कड्ढग-अपकर्षकः, यो गेहाद्ग्रहणं निष्काशयति, चौरान् वा आकार्य परगृहाणि मोषयति, चौरपृष्ठवहो वा । प्रश्न० ४७।

उक्कड्ढियं-उत्कर्षितम्-उत्पाटितम् । पिण्ड० ११६।

उक्कत्थणं-उत्कत्थनं-त्वचोऽपनयनम् । प्रश्न० २४।

उक्कम-उत्क्रमः, पश्चानुपूर्वीभवनम् । विशे० १६ । उत्क्रमः । विशे० १७४।

उक्कमणअणाभोगकिरिया-उत्क्रमणानाभोगक्रिया, लङ्घ-नप्लवनधावनासमीक्ष्यगमनागमनादिक्रिया । आव० ६१४।

उक्करं - उत्करं-क्षेत्रगवादि प्रति अविद्यमानराजदेयद्रव्यम् । विपा० ६३।

उक्करियाभेदे-उत्कटिकाभेदः-द्रव्यस्य पञ्चमभेदः । प्रज्ञा० २६७।

उक्करिसियखग्गो-आकृष्टखड्गः । आव० ५५४।

उक्कलंबिज्जिउं-उल्लम्बयितुम् । आव० २२०।

उक्कलंबेइ - अवलम्बयति । आव० ४२६। उद्बध्नाति । नि० चू० द्वि० ५२ आ।

उक्कलंबेति- उब्बंधेति । नि० चू० प्र० ११८ अ।

उक्कल-उत्कलः-ऊर्ध्वं धर्मकलाया यत्तत् । प्रश्न० २७। उत्कलः-प्रदेशविशेषः, नैमित्तिकविशेषः । आचा० ३५९ । नैमित्तिकः । आचा० ३५९ । त्रीन्द्रियजीवभेदः । उत्त० ६९५।

उक्कलति-उत्कलति-उच्छलति । उत्त० १२४।

उक्कला-उत्कटा, उत्कला वा । ठाणा० ३४३।

उक्कलिया-उत्कलिका-लघुतरः समुदायः । औप० ५७। भग० ४६३ । त्रीन्द्रियजन्तुविशेषः । जीवा० ३२। उत्साहः । सूर्य० २९६ । लघुतरः समुदायः । भग० ११५।

उक्कलियाअंडं-वक्खोइलियाअंडगं । दश० चू० १२१।

उक्कलियावाउ - उत्कलिकावातः, बादरवायुकायभेदः । आचा० ७४।

उक्कलियावाए-उत्कलिकाभिः प्रचुरतराभिः सम्मिश्रितो यो वातः उत्कलिकावातः । प्रज्ञा० ३० । जीवा० २९।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उक्कलियावाया-उत्कलिकावातः, उत्कलिकाभिर्यो वाति सः । भग० १९६ । ये स्थित्वा स्थित्वा पुनर्वान्ति । उत्त० ६९४ ।

उक्कस-उत्कर्षः-औन्नत्यम् । दश० १८९ ।

उक्कसणं-उद्गंतेण प्रेरणं । नि० चू० तृ० ६३ आ ।

उक्कसाई-उत्कषायी-प्रबलकषायी । उत्त० ४१० ।

उक्कसाहिज्जा । आचा० ३७८ ।

उक्कसिस्सामि-लघु सदपरशकललगनत उत्कर्षयिष्यामि । आचा० २४४ ।

उक्कसे-उत्कर्षेत्-उत्कामयेत् । आचा० २९३ ।

उक्कस्स-उत्कर्षन्तीत्युत्कर्षाः-उत्कर्षवन्तः, उत्कृष्टसङ्ख्याः, परमानन्ताः । ठाणा० ३५ ।

उक्का-उल्का-चुडुली । जीवा० २९ । ये मूलाग्नितो विच्युत्य विच्युत्याग्निकणाः प्रसर्पन्ति ते । जीवा० १२४ । महद्रेखा प्रकाशकारिणी, रेखारहितो विस्फुलिङ्गः प्रभाकरो वा । आव० ७५२ । दीपिका । नंदी ८४ । चुडुली । आव० ५६६ । निपतन् रेखायुक्तो ज्योतिष्पिण्डः । ओघ० २०५ । स्वदेहवर्णां रेखां कुर्वन्ती या पतति सा रेखाविरहिता वा उद्योतं कुर्वन्ती पतति सा । आव० ७३५ । गगनाग्निज्वाला । जं० प्र० ५२ । चुडुली । प्रज्ञा० २९ । पगासविरहितो य, महंतरेहा पहा । नि० चू० तृ० ७५ आ । सदेहवण्णं रेहं करेंती जा पडइ सा उक्का, रेहविरहिता वा उज्जोवं करेंती पडती सा वि उक्का । नि० चू० तृ० ७० अ । अग्निपिण्डाः । ठाणा० ४२० । आकाशजा । ठाणा० ४७६ ।

उक्कापडणं-उल्कापातनम्, उल्कापातः । आव० ७३५ ।

उक्कापाए-उल्कापातः-व्योम्नि संमूर्च्छितज्वलननिपतनरूपः । जीवा० २८३ ।

उक्कापाय-उल्कापातः, सरेखः सोद्योतो वा तारकस्येव पातः । भग० १९६ ।

उक्कामयंति-उत्कामयन्ति-अपनयति । दश० ८६ ।

उक्कामुहदीवे-अन्तरद्वीपनाम । ठाणा० २२६ ।

उक्कामुहा-उल्कामुखनामैकविंशतितमोऽन्तरद्वीपः । प्रज्ञा० ५० । अन्तरद्वीपविशेषः । जीवा० १४४ ।

उक्कारियभेय-उत्कारिकाभेदः, एरण्डबीजानामिव यो भेदः । भग० २२४ ।

उक्कालिए-उत्कालिकं-कालवेलावर्जं पठ्यते तदूर्ध्वं कालिकादित्युत्कालिकं-दशकालिकादि । ठाणा० ५२ । कालवेलावर्जं पठ्यते तत् । नंदी २०४ ।

उक्कावाते-उल्का-आकाशजा तस्याः पातः उल्कापातः । ठाणा० ४७६ । व्योमसम्मूर्च्छितज्वलनपतनरूपः प्रसिद्ध एव । अनु० १२१ ।

उक्कासे-उत्कर्षणं, उत्काशनं वा । भग० ५७२ ।

उक्किट्टणा-सूत्रार्थकथनम् । बृ० तृ० २५ अ । उत्कीर्तना-संशब्दना । आव० ५६ ।

उक्किट्ठ-उत्कृष्टं - उत्कृष्टिनादः, आनन्दमहाध्वनिः । प्रश्न० ४९ । प्रधानां कर्षणनिषेधाद्वा । भग० ५६४ । उत्कृष्टिः-आनन्दध्वनिः । जं० प्र० २०० । उत्कृष्टिः-आनन्दमहाध्वनिः । भग० ११५ । उत्कृष्टः-उत्कर्षवती । भग० १६७ । उत्कृष्टम्-कालिङ्गालाबुत्रपुषफलादीनां शस्त्रकृतानि श्लक्ष्णखण्डानि चिञ्चिणिकादिपत्रसमुदायो वा उदूखलकण्डितः । दश० १७० । दोद्धियकालिंगादीणि उक्खले छुब्भंति । दश० चू० १७९ ।

उक्किट्ठकलयलो-उत्कृष्टकलकलः । आव० १७३ ।

उक्किट्ठरस-उत्कृष्टरसः-प्रचुररसोपेतः । पिण्ड० १४९ ।

उक्किट्ठि-उत्कृष्टिः-आनन्दमहाध्वनिः । औप० ५९ । राज० १२२ ।

उक्किट्ठिसीहनादो-उत्कृष्टिसिंहनादः । आव० ३४५ ।

उक्किट्ठी-उत्कृष्टिः । आव० ४१३ । उत्कर्षवशः । सूर्य० २८१ ।

उक्किण्णं-उत्कीर्णं-भुवमुत्कीर्य पालीरूपम् । सम० १३७ ।

उक्किण्णंतरा-उत्कीर्णान्तराः, उत्कीर्णमन्तरं यासां खातपरिखानां ताः । जीवा० १५९ ।

उक्किण्ण-उत्कीर्णः-गुण्डितः । प्रश्न० ५९ । उत्कीर्णमिवोत्कीर्णं, अतीवव्यक्तम् । जं० प्र० ७६ । आकीर्णः । प्रश्न० २५ । प्रज्ञा० ५६१ । ओघ० ५४ ।

उक्कित्तणं-उत्कीर्त्तनम्, सामान्येन संशब्दनम् । आव० ६०४ । संशब्दनम् । विशे० ४४२ ।

उक्कित्तणा-उत्कीर्त्तना, प्राबल्येन-परया भक्त्या संशब्दना । आव० ४९२ ।

उक्कित्तिया-उत्कीर्त्तिता-कथिता । सूर्य० २९६ ।

उक्किन्नं-अतीवव्यक्तम् । प्रज्ञा० ८५ ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उक्किणंतर–उत्कीर्णमन्तरं यासां खातपरिखाणां ता उत्कीर्णान्तराः। प्रज्ञा० ८५।

उक्किण्ण–उत्कीर्णं–शिलादिषु नामकादि। दश० ८६।

उक्किरणगाइं–फलखायककपर्दकादिविकिरणानि। बृ० द्वि० १५५ अ।

उक्किरिज्जमाण–क्षुरिकादिभिः कोष्ठादिपुटानां कोष्ठादिद्रव्याणां वा उत्कीर्यमाणः। जीवा० १९२। उत्कीर्यमाण–क्षुरिकादिभिः कोष्ठादिपुटानां कोष्ठादिद्रव्याणां वा उल्लिख्यमानः। जं० प्र० ३६।

उक्किलंतो–उत्कलन्। आव० २०७।

उक्कीरमाण–उत्किरन्–वेधनकेन मध्याद्विकिरन्। अनु० २२३।

उक्कुंचणं–उत्कुञ्चनं, ऊर्ध्वं शूलाद्यारोपणार्थं कुञ्चनम्। सूत्र० ३२९।

उक्कुज्जिय–ऊर्ध्वकायमुन्नम्य। आचा० ३४४।

उक्कुट्ठं। आचा० ३४२।

उक्कुट्ठहत्थो – उक्कुट्ठ–सचित्तवणस्सतिपत्तंकुरफलाणि वा उक्खले छुब्भति, तेहिं हत्थो लित्तो एस। नि० चू० प्र० ३८ अ।

उक्कुट्ठि–उत्कृष्टिः–हर्षविशेषप्रेरितः। आव० २३१।

उक्कुट्ठिकलयलो–उत्कृष्टिकलकलः। आव० १७५।

उक्कुट्ठिसीहणायं–उत्कृष्टिसिंहनादः, हर्षविशेषप्रेरितो ध्वनिविशेषः। आव० २३१।

उक्कुट्ठी–पुक्कारकरणं। नि० चू० तृ० ६१ आ।

उक्कुट्ठो–सचित्तवणस्सतिपत्तंकुरफलाणि वा उक्खले छुब्भंति। नि० चू० प्र० ३८ अ।

उक्कुड–उत्कुटुकासनः। आव० ६४८। ठाणा० २९९।

उक्कुडुअ–उत्कुटुकम्, यथास्थानमनिविष्टम्। भग० ३०८। ओघ० १०७। मुक्तासनः। उत्त० ५५। आधारे पुताऽलगनरूपम्। भग० १२५। आचा० ४२४।

उक्कुडुगासण–उत्कुटुकासनम्, कायक्लेशभेदः। दश० २८।

उक्कुडुती – उत्कुटुका–आसनालग्नपुतः पादाभ्यामवस्थित उत्कुटुकस्तस्य या सा। ठाणा० ३०२।

उक्कुडुयभाणवत्थे–उत्कुटुकः सन् भाजनवस्त्राणि–गोच्छकादीनि प्रत्युपेक्षयेत्, यतो वस्त्रप्रत्युपेक्षणा उत्कुटुकेनैव कर्त्तव्या। ओघ० ११७।

उक्कुडुयासणिए – कायक्लेशभेदः। भग० ९२१। कायक्लेशद्वितीयभेदः। ठाणा० २९७।

उक्कुद्दइ–उत्कूर्दते–ऊर्ध्वं गच्छति। उत्त० ५५१।

उक्कुरुडिका–तृणभस्मगोमयाङ्गारादिमीलकः। उत्त० ३५९।

उक्कुरुडिया–उत्कुरुटकः। आव० १९४।

उक्कूइय–उत्कूजित–कृताव्यक्तमहाध्वनिः। प्रश्न० २०।

उक्कूजियं – उत्कूजितं – अव्यक्तमहाध्वनिकरणम्। प्रश्न० १६०।

उक्कूलं–उत्कूलयति–सन्मार्गादपध्वंसयति कूलाद्वा–न्यायसरित्प्रवाहतटादूर्ध्वं यत्तत् उत्कूलम्। द्वितीयाधर्मद्वारस्य पञ्चदशं नाम। प्रश्न० २६।

उक्केरो–उत्केरः–समूहः। ओघ० ११७, ११६, २१३। स्थिल्यादिवर्धनरूप उत्कोचः–उद्वर्त्तना। विशे० १००६।

उक्कोचा–उत्कोचा–उत्कोटा, लञ्चा। औप० २।

उक्कोड–लंचा। नि० चू० द्वि० ४५ अ।

उक्कोडा–उत्कोटा–उत्कोचा–लञ्चा। विपा० ३९। उत्कोचा, लञ्चा। औप० २।

उक्कोडालंच–उत्कोटालंचयोः–द्रव्यस्य बहुत्वेतरादिभिर्लोके प्रतीतभेदयोः। प्रश्न० ५६।

उक्कोडिय – उत्कोटा–लञ्चा तया चरन्ति उत्कोटिकाः। राज० २।

उक्कोस–उत्कृष्टतः–अतिशयेन। ओघ० २२७। उत्कर्षतीति उत्कर्षः, उत्कृष्टः। सूर्य० १३। जात्यादिभिर्मदस्थानैर्लघुप्रकृतिं पुरुषमुत्कर्षयतीति उत्कर्षकः–मानः। सूत्र० ६९। उत्क्रोशः–कुररः। प्रश्न० ८। उत्कृष्टम्–कमनीयम्। दश० २११।

उक्कोसए–उत्कर्ष एव उत्कर्षका उत्कृष्टः। सूर्य० ११। उत्कर्षिका उत्कृष्टा। सूर्य० १४।

उक्कोसए कुंभे–उत्कृष्टकः कुम्भः–आढकशतनिष्पन्नः। अनु० १५१।

उक्कोसकसिणं–सतसहस्समूल्लं। नि० चू० प्र० १३९ आ।

उक्कोसगमयपत्तो–उत्कर्षेण मदं प्राप्तः उत्कर्षमदप्राप्तः। जीवा० ३५१।

उक्कोसतिसामासा–जेट्ठो आसाढो य। नि० चू० प्र० १२३ आ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उक्कोसतिसामासे-उत्कृष्टतृण्मासः-उत्कृष्टा तृड्मासयोः-ज्येष्ठाषाढयोर्यस्मिन् काले सः। ओघ० २१०।

उक्कोससंथरणं-उत्कृष्टं संस्तरणं-भिक्षार्थमवतीर्णास्ततः पर्याप्तं हिंडित्वा यावत् तृतीयपौरुष्या आदौ स्वाध्याय-प्रस्थापनवेला तावत् सन्निवर्त्तते एतद्, अथवा तृतीयपौ-रुष्या आदौ स्वाध्यायप्रस्थापनवेलावान सन्निवर्त्तते एतद्। व्य० द्वि० १६३ आ।

उक्कोसा - उत्कर्षः-प्रकर्षः तद्योगादुत्कर्षा उत्कर्षतीति वा उत्कर्षा-उत्कृष्टा। ठाणा० १३९।

उक्कोसेणं। अनु० १६३।

उक्खं-उक्षं-सम्बन्धो-विषयविषयीभावलक्षणः। नंदी ७१। सम्बन्धनं-अन्यजनकभावलक्षणम्। ठाणा० ५०।

उक्खंदं-उत्कन्दम्। आव० १७५। अवस्कन्दः। आव० ३००।

उक्खंधो-अवस्कन्दः, छलेन परबलमर्दनम्। प्रश्न० ३८।

उक्खंपिर-उत्कण्ठित। (सं०)।

उक्खडुमड्डा - देशीपदं, पुनःपुनःशब्दार्थे। व्य० प्र० ६५ आ।

उक्खणिहिति-उत्खनीः। आव० २२६।

उक्खलं-स्थानविशेषः। नि० चू० द्वि० ८३ आ।

उक्खलि-उखा-स्थाली। पिण्ड० ८४।

उक्खिओ-सेवितः। मर०।

उक्खित्त-उत्क्षिप्तं, गेयविशेषः। जं० प्र० ४१२। उत्पा-टितम्। विपा० ४७। भाजनगतम्। ओघ० ८८।

उक्खित्तचरए-उत्क्षिप्तं-स्वप्रयोजनाय पाकभाजनादुद्धृतं तदर्थमभिग्रहविशेषाच्चरति-तद्गवेषणाय गच्छतीति उत्क्षि-प्तचरकः। ठाणा० २९८।

उक्खित्तचरगा-पिण्डैषणाभेदविशेषः। नि० चू०तृ० १२ अ।

उक्खित्तचरगो-उत्क्षिप्तचरकः-उत्क्षिप्तं-पाकपिठरादुद्-धृतमेव चरति-गवेषयति यः सः। प्रश्न० १०६।

उक्खित्तणा - ज्ञातायां प्रथममध्ययनम्। आव० ६५३। षष्ठाङ्गे प्रथमं ज्ञातम्। उत्त० ६१४।

उक्खित्तणाए-षष्ठाङ्गे प्रथमज्ञातः। सम० ३६। ज्ञातायां प्रथममध्ययनम्। आव० ६५३।

उक्खित्तणिक्खित्तचरगा - पिण्डैषणाभेदविशेषः। नि० चू० तृ० १२ अ।

उक्खित्तपुव्वा - उत्क्षिप्तपूर्वाः-तेषामादौ दर्शिता यथा-ऽस्यां वसत यूयमिति। आचा० ३६९।

उक्खित्तय-उत्क्षिप्तं-प्रथमतः समारभ्यमाणम्। जीवा० २४७।

उक्खित्तविवेगो-उत्क्षिप्तविवेकः। आव० ८५४।

उक्खित्ता-उत्क्षिप्ताः-सिक्ताः। जं० प्र० २२१।

उक्खित्तायं-उत्क्षिप्तकं-प्रथमतः समारभ्यमाणम्। जीवा० १९४।

उक्खित्तो-उत्क्षिप्तः-कृतः स्थापितः। आव० ४३३।

उक्खिविया-उत्क्षिप्ता। आव० ३७०।

उक्खु-वनस्पतिविशेषः। भग० ८०२।

उक्खुलनियत्था - उखुलनिवसिता, विपर्यस्तवस्त्रा। बृ० द्वि० २५५ अ।

उक्खेव-उत्क्षेपः-हस्तोत्पाटनम्। व्य० प्र० २३२ आ।

उक्खेवओ-उत्क्षेपः-प्रारम्भवाक्यम्। निरय० २३।

उक्खेवग-उत्क्षेपकः-वंशदलादिमयो मुष्टिग्राह्यदण्डमध्यभागः। भग० ४६८। शिष्याणामुत्क्षेपकः। व्य० प्र० २३२ आ।

उक्खेवण-उत्क्षेपकः-वंशदलादिमयो मुष्टिग्राह्यो दण्डमध्य-भागः। ज्ञाता० ४८।

उक्खेवो - उत्क्षेपः-प्रस्तावना। विपा० ५५। क्षेपणम्। ओघ० ११०।

उक्खो-परिधानवस्त्रैकदेशः। बृ० प्र० १७७ अ। परिधाणं; वत्थस्स अब्भिंतरचूलाए उवरि कण्णो णाभिहिज्ज उक्खो भण्णति। नि० चू० द्वि० १५४ अ।

उखंदचोरभएणं। नि० चू० प्र० २६० अ।

उखल-उदूखला। प्रश्न० ८।

उखलियं-पुडियाकारं। नि० चू० द्वि० १ आ।

उखली-उदूखली। आव० ८५५।

उखा-स्थाली। भग० ३२६।

उखुत्तो-णिसण्णो। नि० चू० प्र० ७७ अ।

उगहणंतगो-योनिद्वाररक्षार्थकं वस्त्रम्। ओघ० २०९।

उग्गं-उग्रम्-अप्रधृष्यम्। सूर्य० ४। भग० १२। ज्ञाता० ९।

उग्ग-उग्रः-क्षत्रियपुरुषेण शूद्रस्त्रियां जातः। आचा० ८। आदिदेवावस्थापितावऽऽरक्षकवंशजातः। भग० ११५। आरक्षकः। आव० १२८। आदिदेवेन य आरक्षकत्वेन नियुक्तास्तद्वंशजाश्च। औप० २६। शुभाध्यवसायप्रबलः।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आव० ८०२। आरक्षिकाः। आचा० ३२७। आदिराजेनाऽऽरक्षकत्वेन ये व्यवस्थापितास्तद्वंश्यः। ठाणा० ३५८। भगवतो नाभेयस्य राज्यकाले ये आरक्षका आसन्। ठाणा० ११४। आरक्षकादयः। उत्त० ४१८। आदिदेवेनारक्षकत्वे नियुक्तास्तद्वंश्याः। भग० ४८१।

उग्गकुलं-उग्रकुलम्। आव० १७९।

उग्गच्छ-उद्गत्य-क्रमेण तत्रोद्गमनं कृत्वा। भग० २०७।

उग्गतवा-उग्रतपाः-अप्रधृष्यानशनादिवान्। सूर्य० ४। अष्टमादि। ठाणा० २३३। उग्रं-उत्कटं दारुणं वा कर्मशत्रून् प्रति तपः-अनशनादिः। उत्त० ३६५।

उग्गतवित्ती-उग्गते आदिच्चे वित्ती जस्स सो, आदिच्च मुत्तीए जस्स वित्ती सो उग्गतवित्ती। नि० चू० प्र० ३०८ आ।

उग्गतेय-उग्रतेजाः-तीव्रप्रभावः, तीव्रविषः। प्रश्न० १०७।

उग्गपुत्तो-उग्रपुत्रः, क्षत्रियविशेषजातीयः। सूत्र० २३६।

उग्गम-उद्गमः-षोडशविध आधाकर्मादिदोषः। प्रश्न० १५५। आधाकर्मादिदोषविशेषः। आव० ५७६। उद्गमनमुद्गमः-पिण्डादेः प्रभवः। ठाणा० १५९।

उग्गमइ-आगच्छति। आव० ४२२।

उग्गमकोडी-उद्गमकोटिः-उद्गमदोषरूपा। पिण्ड० १९७।

उग्गमितं-उद्गमितम्। आव० ८५९।

उग्गमोवघाते-उद्गमोपघातः-उद्गमदोषैराधाकर्मादिभिः षोडशप्रकारैर्भक्तपानोपकरणालयानामशुद्धता। ठाणा० ३२०।

उग्गय-उद्गतः-निष्काशितः। औप० ६८। ऊर्ध्वं गताः उद्गताः-व्यवस्थिताः। ज्ञाता० १४। व्यूता। ज्ञाता० २३। उद्गता-संस्थिता। जं० प्र० ७१। निविष्टा। भग० ४७८। उपरिवर्त्तिनी। जं० प्र० २९२।

उग्गयमुत्ती-सूर्योद्गमात् परं प्रतिश्रयावग्रहाद् बहिः प्रचारवच्छरीरत्वात्। बृ० तृ० १७९ अ। मूर्त्तिः-शरीरं, तं जस्स प्रतिश्रयावग्रहात् उदिते आइच्चे वृत्तिनिमित्तं प्रचारं करोति सो। नि० चू० प्र० ३०८ आ।

उग्गयवित्ती-उग्गय इति वा उदओत्ति, वर्त्तनं वृत्तिः, उग्गयए सूरिए जस्स वित्ती सो। नि० चू० प्र० ३०९ आ।

उग्गवई-उग्रवती, रात्रितिथिनाम। जं० प्र० ४९१।

उग्गवती-उग्रवती, रात्रितिथिनाम। सूर्य० १४८।

उग्गविसं-दुर्जरविषम्। भग० ६७२।

उग्गविसा-उग्रं विषं येषां ते उग्रविषाः। प्रज्ञा० ४६। उरःपरिसर्पविशेषः। जीवा० ३९।

उग्गसेण-उग्रसेनः, द्वारिकायां राजा। आव० ९४। नृपविशेषः। बृ० प्र० ३० अ। मथुरानृपतिः, कंसपिता। उत्त० ४९०। राजमुख्यः। अन्त० २।

उग्गहं-योनिद्वारं तद्वस्त्रमपि। बृ० द्वि० २५१ आ।

उग्गह-अवग्रहः। ओघ० १५२। धर्मलाभदानम्। दश० १६७। अव-ईषत् सामान्यं गृह्णातीति। विशे० १६०। आश्रयः। विपा० ३३। जोणिदुवारस्स सामइकी संज्ञा उग्गह इति। नि० चू० प्र० १७९ आ। उपग्रहम्-अवष्टम्भम्। ओघ० १५४। पतद्ग्रहम्। ओघ० १७५। प्रथमपरिच्छेदनं अशेषविशेषनिरपेक्षानिर्देश्यरूपादेरवग्रहणम्। ठाणा० ५१। अवगृह्यते-स्वामिना स्वीक्रियते यः सोऽवग्रहः। भग० ७००। सामान्यार्थस्य-अशेषविशेषनिरपेक्षस्यानिर्देश्यस्य रूपादेः अव इति प्रथमतो ग्रहणं-परिच्छेदनमवग्रहः। भग० ३४४। अवग्रहः-अव्यक्तरूपः परिच्छेदः। प्रज्ञा० ३११। अवधारणम्। सुन्दरा एत इत्यवधारणम्। उत्त० १४५। अवग्रहः-परिग्रहः। सूत्र० १७९। अविवक्षिताशेषस्य सामान्यरूपस्यानिर्देश्यस्य रूपादेरवग्रहणमवग्रहः। राज० १३०। पडिग्गहो। नि० चू० द्वि० ११६ अ। अवग्रहः-आभवनव्यवहारः। व्य० द्वि० ९३ अ। अवग्रहणमवग्रहः-अनिर्देश्यसामान्यमात्ररूपार्थग्रहणम्। नंदी १६८। आवासः। निरय० २। अवग्रहणं-सम्बध्यमानस्य शब्दादिरूपस्यार्थस्याव्यक्तरूपः परिच्छेदः। नंदी १६८।

उग्गहजायणे-अवग्रहयाञ्चा-वसतिस्वाम्यनुज्ञा। आव० ६५८।

उग्गहणंतयं-योनिद्वाररक्षार्थकं वस्त्रम्। बृ० द्वि० २५१ आ।

उग्गहणमेधावी-अवग्रहमेधावी, सूत्रार्थग्रहणपटुप्रज्ञावान्। बृ० प्र० १२५ आ।

उग्गहपडिमा-अवगृह्यत इत्यवग्रहो-वसतिस्तत्प्रतिमाः-अभिग्रहाः अवग्रहप्रतिमाः। ठाणा० ३८७। आचाराङ्गस्य षोडशमध्ययनम्। उत्त० ६१७। आचा० ४०२। सम० ४४। आचारप्रकल्पे द्वितीयश्रुतस्कन्धस्य सप्तममध्ययनम्। प्रश्न० १४५। आचारप्रकल्पस्य षोडशो भेदः। आव० ६६०।

उग्गहिआ-अवगृहीता-पञ्चमी पिण्डैषणा। आव० ५७२।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उग्गहिए–अवगृहीतं–परिवेषणार्थमुत्पाटितं । ठाणा० ४६५ ।

उग्गहियं – अवगृहीतम् । आव० २८८ । बद्धः । भग० ४५९ । अवगृह्णाति–आदत्ते हस्तेन दायस्तद् । ठाणा० १४८ । अवगृहीता–भोजनकाले शरावादिषूपहृतमेव भोजनजातं यत्ततो गृह्णतः । ठाणा० ३८६ । यद् अवगृह्णाति यच्च संहरति यच्च आस्यके प्रक्षिपति । व्य० द्वि० ३५४ अ । परिवेषणार्थमुत्पाटितम् । औप० ३७ । अवग्रहोऽस्यास्तीति अवग्रहिकं–वसतिपीठफलकादिकं । औपग्रहिकं–दण्डकादिकमुपधिजातम् । औप० ३७ ।

उग्गहियए–अवगृहीतकः–बद्धः । राज० ४४ ।

उग्गहिया–जं परिवेसगेण परिवेसणाए परस्स कडुच्छुतादिणा उग्गहियं आणियंति वुत्तं भवति, तेण य तं पडिसिद्धं तं तहुक्खितं चेव साधुस्स देति एसा उवग्गहिया । नि० चू० तृ० १२ अ ।

उग्गा–आरक्षिकाः । बृ० द्वि० १५१ आ । कुलार्यप्रथमभेदः । प्रज्ञा० ५६ । खाद्यविशेषः । जं० प्र० ११८ । आदिदेवावस्थापिताः । राज० १२१ । प्रभुणा आरक्षकत्वेन नियुक्तास्ते उग्राः । जं० प्र० १४५ ।

उग्गाढो–प्रगुणः । बृ० प्र० २९७ अ ।

उग्गारो–उद्गिरणं उग्गालो । नि० चू० प्र० ३१५ अ ।

उग्गालिदासो–दासविशेषः । नि० चू० द्वि० ४० अ ।

उग्गाले–उद्गालयेत्–श्लेष्मनिष्ठीवनं कुर्यात् । ओघ० १८६ ।

उग्गालो–उद्गिरणं उग्गालो । नि० चू० प्र० ३१५ अ ।

उग्गाहिऊणं–उद्ग्राह्य । आव० ३९९ ।

उग्गाहिएणं–उद्ग्राहितेन–पात्रबन्धबद्धेन पात्रकेण । ओघ० १२२ ।

उग्गाहितं–उद्ग्राहितम्–गृहीतम् । आव० ६१८ । उत्क्षिप्तं, उपकरणम् । ओघ० ७२ ।

उग्गाहिमं–अवगाहिमं, पक्वान्नं खण्डखाद्यादि । प्रश्न० १६३ ।

उग्गाहिय–उद्ग्राहितं–गृहीतं पात्रकम् । ओघ० १४९ ।

उग्गाहे–उद्ग्राहयति–सङ्घट्टितेनास्ते । ओघ० १८४ ।

उग्गाहेउं–उद्ग्राह्य–संयन्त्रयित्वा । ओघ० ७४ ।

उग्गाहेऊण–उद्ग्राह्य । उत्त० १०० ।

उग्गिरिऊणं–उद्गीर्य । आव० २०८ ।

उग्गुंडिया–उद्धूलितम् । भग० ३०८ ।

उग्गोवणा–उद्गोपनम्–विवक्षितस्य पदार्थस्य जनप्रकाशचिकीर्षा । पिण्ड० २९ ।

उग्गोवेति–उप्पाएति । नि० चू० प्र० २३४ अ ।

उग्घडयं–अनुवर्त्तनम्, अनुकरणम् । आव० ५१५ ।

उग्घाइए–उद्घाइए–उद्घातितं, विनाशितं विनाशयिष्यमाणत्वेनोपचारात् । ठाणा० ५०२ ।

उग्घाइम–उद्घातिमम्–उद्घातो–भागपातस्तेन निर्वृत्तम्, लघु । ठाणा० १६३ ।

उग्घाड–उद्घाटं–अदत्तार्गलमीषत्स्थगितं वा । आव० ५७५ ।

उग्घाडकवाडउग्घाडणा –उद्घाटकपाटोद्घाटना, उद्घाटम्–अदत्तार्गलमीषत्स्थगितं वा कपाटं तस्योद्घाटनं–सुतरां प्रेरणम् तदेव । श्वानवत्सदारकसंघट्टना । आव० ५७५ ।

उग्घाडणकवाड–उद्घाटकपाटं–अनर्गलितकपाटं । ओघ० १६६ ।

उग्घाडाए पोरिसिए–उद्घाटपौरुष्याम् । आव० ८३८ ।

उग्घाडितो–उद्घाटितः । आव० ३१७, ३१८ ।

उग्घाडिया–उद्घाटिताः । आव० २९२ ।

उग्घात – उद्घातः–भागपातः । ठाणा० १६३, ३२५ । लघूकरणलक्षणः । ठाणा० ३११ ।

उग्घातिते–उद्घातः–भागपातो यत्रास्ति तदुद्घातिकं, लघ्वित्यर्थः । ठाणा० ३२५ ।

उग्घाय – आचाराङ्गस्य षड्विंशतितममध्ययनम् । उत्त० ६१७ । आचारप्रकल्पस्य षड्विंशतितमो भेदः । आव० ६६० ।

उग्घायाइं–लघूनि । बृ० प्र० १४५ अ ।

उग्घोसणाट्ठाणीया–उद्घोषणास्थानीयाः । आव० ३८५ ।

उग्गतेजाः–आधाकर्मण एव अभोज्यतायां पदातिः । पिण्ड० ७१ ।

उग्रसेनः–भोगराजा, राजीमत्याः पिता । दश० ९७ ।

उग्रसेनतनयः–नभःसेनकुमारः । विशे० ६१० ।

उघरिसा । नि० चू० प्र० १०५ आ ।

उघोसेहि । नि० चू० प्र० ३४४ आ ।

उचितः–जितः, अभ्यस्तो वा । आव० ५१४ ।

उचूलयालगं–अधःशिरस उपरि पादस्य कूपजले बोलणाकर्षणम् । विपा० ७२ ।

उच्चं–उच्चः–पूज्यः । भग० १६४ ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उच्चंतए-उच्चन्तकः-दन्तरागः। प्रज्ञा० ३६०। उच्चंतगो-दन्तरागः। जं० प्र० ३३।

उच्चंते-उच्चंतगो-दन्तरागः। राज० ३२।

उच्चंपिय-संघातितं। (तं०)।

उच्चछंदो-उच्चच्छन्दः-उच्चो-महानात्मोत्कर्षणप्रवणश्छन्दः-अभिप्रायो यस्य सः। प्रश्न० ३१।

उच्चता-उच्चतया-निदेजत्वेन। अप्रातिहारिकतया। बृ० द्वि० २१९ अ।

उच्चतायभयगो-तुमे ममं एच्चिरं कालं कम्मं कायव्वं जं जं अहं भणामि, एत्तियं तेण धणं दाहामित्ति। नि० चू० द्वि० ४४।

उच्चत्तं-उच्चत्वं। जं० प्र० २०। अनु० १७१। उच्चत्वं-उत्सेधः। जं० प्र० ३२१। उच्छ्रयः। ठाणा० ६९। ऊर्द्ध्व-स्थितस्यैकमपरं तिर्यक्स्थितस्यान्यत् गुणोन्नतिरूपम्। ठाणा० ३६।

उच्चत्तछाया-उच्चत्वछाया, छायायाः षष्ठो भेदः। सूर्य० ९५।

उच्चत्तभयते - उच्चताभृतकः-मूल्यकालनियमं कृत्वा यो नियतं यथावसरं कर्म्म कार्यते स। ठाणा० २०३।

उच्चत्तविसाणो - उच्चविषाणः उच्चश्रृङ्गः। उत्त० ३०३। उत्तमविषाणः। आव० ७१९।

उच्चत्ता-मुधिकता। पिण्ड० १००।

उच्चयबंधे-उच्चयः-ऊर्द्ध्वं चयनं-राशीकरणं तद्रूपो बन्धः उच्चयबन्धः। भग० ३९५।

उच्चरेति। नि० चू० प्र० २०२ आ।

उच्चलिओ-उच्चलितः। आव० ३८५। आव० ३१७।

उच्चा-ऊर्द्ध्वं चिता, उपरिस्थितत्वेन वा। उत्त० ११०।

उच्चाओ-उच्चातो-श्रान्तः। ओघ० १७७। नि० चू० प्र० १८८ अ।

उच्चागोए-उच्चैर्गोत्रं-यदुदयवशादुत्तमजातिकुलबलतपोरूपैश्वर्यश्रुतसत्काराभ्युत्थानासनप्रदानाञ्जलिप्रग्रहादिसम्भवस्तत्। प्रज्ञा० ४७५। मानसत्कारार्हः। आचा० ११६।

उच्चागोत्ते-उच्चैर्गोत्रः-उच्चैः-लक्ष्म्यादिक्षयेऽपि पूज्यतया गोत्रं-कुलमस्येति। उत्त० १८८।

उच्चारे - उच्चारः-विष्ठा। भग० ८७। संज्ञा। बृ० प्र० ३०६ अ। सण्णा। नि० चू० प्र० १४३ आ। पुरीषः। आव० ५६४, ६१६, ७८१। उत्त० ५१७। सम० ११। जं० प्र० १४८। ठाणा० ३४३। शरीरादुत्-प्राबल्येन च्यवते-अपयाति चरतीति वा उच्चारः-विष्ठा। आचा० ४०९। पुरीषपरिष्ठापनम्। उत्त० ३५७। गृहस्थैः सह पुरीषव्युत्सर्गं कुर्वन्ति, श्लेष्मणः परिष्ठापनमङ्गणे कुर्वन्ति वा। ओघ० ५६।

उच्चारभूमी - उच्चारभूमिः-पुरीषभूमिः। आव० ७८४। उच्चारप्रश्रवणविधिसप्तैककः, सप्तसप्तक्यां तृतीयस्य भेदः। ठाणा० ३८७।

उच्चालइय-ऊर्ध्वमुत्क्षिप्य भूमौ। आचा० ३११। उच्चालयितारम्-अपनेतारम्। आचा० १६९।

उच्चालियंमि-उच्चालिते-उत्पाटिते। ओघ० २२०।

उच्चावइत्ता-उच्चैः कृत्वा। उत्पाट्य। प्रज्ञा० ३५७।

उच्चावए-उच्चावचः-उत्तमाधमः। जीवा० ३७४।

उच्चावतं-उच्चावचम्-असमञ्जसं। ठाणा० २४७।

उच्चावयं-उच्चावचं-उच्चं नाम मैवं कुर्वन्तु, अवचं नाम कुर्वन्तु। आचा० ३६३। शोभनाशोभनम्। जीवा० १६६। उच्चावचम्। दश० १६६। अनुकूलप्रतिकूलम्, असमञ्जसं वा। भग० १०१।

उच्चावया-अनुकूलप्रतिकूला, असमञ्जसा। अन्त० १८। उच्चावचाः-गुरुलघवो नानारूपा वा। सूत्र० २०७। ऊर्द्ध्वं चिता उच्चा, शीतातपनिवारकत्वादिगुणैः शय्यान्तरोपरिस्थितत्वेन वा उच्चाः, तद्विपरीतास्त्ववचाः, अनयोर्द्वन्द्वे उच्चावचाः, नानाप्रकारा वा। उत्त० ११०। शोभनाशोभनभेदेन नानाप्रकाराः। दश० १८४। असमञ्जसा। भग० ६८३। ज्ञाता० २००।

उच्चावयाइं-उच्चावचानि-विकृष्टाविकृष्टतया नानाविधानि उच्चव्रतानि वा शेषव्रतापेक्षया महाव्रतानि। उत्त० ३६३।

उच्चिअ-उच्चितं, उच्चिताकरणं, पादस्योत्पाटनम्। जं० प्र० २६५।

उच्चिक्खित्तं-उच्चोत्क्षिप्तम्। पिण्ड० ११०।

उच्चिट्ठ-कांसारादिभक्षणेनोच्छिष्टे। बृ० प्र० २१५ अ।

उच्चिट्ठए-उच्छिष्टम्-भ्रष्टम्। दश० १०४।

उच्चिणिउं-उच्चेतुं-गृहीतुम्। आव० ८१९।

उच्चियपउमं-उच्चितपद्मं। आव० १७०।

उच्चुण्णेउं-अवचूर्ण्य, गुण्डयित्वा। ओघ० १४३।

उच्चूलं-अवचूलं-ऽग्रकन्यस्ताधोमुखकूर्चकः। औप० ६३।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उच्चेंती-उच्चिन्वती-अवचयं कुर्वती। दश० ४१।

उच्चैःश्रवा-सुरवरेन्द्रवाहनं हयः। जं० प्र० २३५।

उच्चोदए-उच्चोदयः, ब्रह्मदत्तस्य प्रधानः प्रथमः प्रासादः। उत्त० ३८५।

उच्चोलपहिं-उच्चुलुकैः, छंटाभिः चुलुकैः। आव० ६७८।

उच्छंग - उत्सङ्गः-पृष्ठदेशः। जं० प्र० २६५। पृष्ठदेशः। औप० ७१। भग० ४८०।

उच्छण्णं-उच्छिन्नम्, क्षीणम्। आव० ६७०, ६७१।

उच्छदयति-बोलं करोति। ओघ० १५३।

उच्छन्नं-अपशब्दं-विरूपं छन्नं-स्वदोषाणां परगुणानां वाऽऽवरणमपच्छन्नं। उत्थत्वं, न्यूनत्वं वा, द्वितीयाधर्मद्वारस्य चतुर्दशं नाम। प्रश्न० २६।

उच्छन्ननाणी - उच्छन्नज्ञानी-यावत्शक्तिप्रच्छादितज्ञानी। प्रज्ञा० ४६१।

उच्छयं-उच्छ्रयं-व्याप्तम्। आव० १८४।

उच्छलंत-उच्छलन्तः-उद्वलन्तः। प्रश्न० ६२।

उच्छ(त्थ)ल-उत्-उन्नतानि स्थलानि-धूल्युच्छ्रयरूपाण्युच्छ(त्थ)लानि। भग० ३०७।

उच्छलिओ-उच्छलितः-निर्गतः। आव० ४०२।

उच्छवो-उत्सवः-शक्रोत्सवादिः। प्रश्न० १५५। इन्द्रोत्सवादिः। प्रश्न० १४०।

उच्छहया-उत्सहन्-अर्थोद्यमवान्। दश० २५३।

उच्छा-तुच्छा, रिक्ता। (गणि०)।

उच्छाइओ-उत्सादितः। आव० ३९८।

उच्छाएइ-आच्छादयति। आव० ६२४।

उच्छाडणं। नि० चू० प्र० १२१ अ।

उच्छायणयाए-उच्छादनतायै, सचेतनाचेतनतद्गतवस्तूच्छादनाय। भग० ६८४।

उच्छाह-उत्साहः-वीर्यं। सम० ११८।

उच्छिंपक-अवच्छिम्पकः-चौरविशेषः। प्रश्न० ४७।

उच्छिंपणं - उत्क्षेपणं-जलमध्यान्मत्स्यादीनामाकर्षणम्। प्रश्न० २२।

उच्छिण्णं। नि० चू० द्वि० १०४ अ।

उच्छिन्नगोत्तागारं-उच्छिन्नगोत्रागारम्, उच्छिन्नं गोत्रागारं-तत्स्वामिगोत्रगृहं यस्य तत्। भग० २००।

उच्छिन्नसामिय-उच्छिन्नस्वामिकम्, निःसत्ताकीभूतस्वामिकम्। भग० २००।

उच्छिन्नसेउय-उच्छिन्नसेतुकम्-त्यक्तमर्यादम्। भग० २००।

उच्छिन्ना-निर्नष्टसत्ताकाः। ठाणा० २९४।

उच्छु-इक्षुः। दश० २२६। आव० ८५४।

उच्छुक्किओ-जुगुप्सितः। बृ० द्वि० २५५आ।

उच्छुखण्ड-इक्षुखण्डः। दश० ११६।

उच्छुगंडिय-इक्षुगण्डियं-सपर्वेक्षुशकलम्। आचा० ३५४।

उच्छुघर-इक्षुगृहम्। व्य० द्वि० ३१९ अ। आव० ३०१। नि० चू० द्वि० १०९ अ। विशे० १००२।

उच्छुजंतं-इक्षुयन्त्रम्। आव० ८२९।

उच्छुड्डो-उन्मग्नः। विशे० ५१५।

उच्छुद्धं-विक्षिप्तम्। ओघ० १५०। परित्यक्तं। बृ० द्वि० १३३ आ। रोगाघ्रातं। बृ० तृ० २३ आ।

उच्छुभ-आधिक्येन क्षिप, प्रवेशयेत्यर्थः। प्रश्न० २०।

उच्छुभइ-किञ्चित्क्षिपतेत्यर्थः। भग० ६८५।

उच्छुमेरगं-अपनीतत्वगिक्षुगण्डिका। आचा० ३४८।

उच्छुहइ-अवष्टभ्नाति, विध्यतीत्यर्थः। ज्ञाता० ६८।

उच्छूढं-उज्झितं संस्कारपरित्यागात्। सूर्य० ५। उज्झितम्। भग० १२। राज० ५७। विपा० ३४। औप० ८४। जं० प्र० १६।

उच्छूढ-निःसृतः। सूर्य० ९२। अवक्षिप्तः-अर्गलास्थानान्निष्कासितः। जीवा० २७२। स्वस्थानादवक्षिप्तो-निष्काशितः। जं० प्र० १११। प्रश्न० ८१।

उच्छूढसरीरे-उच्छूढशरीरः-उज्झितमिवोज्झितं तत्संस्कारत्यागात् शरीरं येन सः। भग० १२।

उच्छूढाइं-लुंटितानि। बृ० प्र० ५७ अ।

उच्छूनं। ओघ० २१६।

उच्छूनावस्था-विनष्टावस्था। जीवा० १०७।

उच्छूरं-अकालम्। ओघ० १४८।

उच्छूरिया-सुप्रावृत्ता। बृ० द्वि० २५६ आ।

उच्छेवा-उच्छेवा नाम यत्र पतितुमारब्धं तत्रान्यस्येष्टकादेः संस्थापनम्। व्य० द्वि० ७ अ।

उच्छोडेइ-उच्छोटयति। आव० ३९९।

उच्छोभवंदणयं-इच्छामि खमासमणो वंदिउं जावणिज्जाए

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

निसीहियाए तिविहेणं एयं उच्छोभवंदणयं । नि० चू० द्वि० ९३ अ ।

उच्छोभो-आलः, कलङ्कः । आव० ४०१ ।

उच्छोलणं – एक्कसिं धोवणं उच्छोलणं । नि० चू० द्वि० ११८ आ । तेल्लादिणा फासुगअफासुएण देसे उच्छोलणं । नि० चू० द्वि० ८९ अ । उच्छोलनं-अयतनया शीतोदकादिना हस्तपादादिप्रक्षालनम् । सूत्र० १८१ ।

उच्छोलणा-उच्छोलना-पुरीषमुत्सृज्य प्रभुतेन पयसा क्षालनम् । ओघ० ५५ । ओघ० १२० । एक्कसि उच्छोलणा । नि० चू० प्र० १८८ अ ।

उच्छोलणापहोअ- उत्सोलनया – उदकायतनया प्रकर्षेण धावति-पादादिशुद्धिं करोति यः स उत्सोलनाप्रधावी । दश० १६० ।

उच्छोलिंति-प्रक्षालयन्ति । गणि० ।

उच्छोलेइ-अग्रतो मुखां चपेटां ददाति । भग० १७५ ।

उच्छोलेज्ज-ईषद् उच्छोलनं विदध्यात् । आचा० ३६३ । सकृदुदकेन प्रक्षालनं कुर्यात् । आचा० ३४२ ।

उच्छोलेति-सकृदुदकेन प्रक्षालनम् । नि० चू० प्र० ११६ आ ।

उजु-ऋजुः-मायारहितः संयमवान वा । दश० २६२ ।

उजुगं-दृष्टिवादे सूत्रभेदः । सम० १२८ ।

उजुमइ-ऋजुमतिः, ऋज्वी-प्रायो घटादिसामान्यमात्रग्राहिणी मतिः । विशे० ३८० ।

उजुवालिआ-ऋजुवालिका, वीरस्य केवलोत्पत्तिस्थानम् । आव० १३९ ।

उज्ज-आर्षत्वादुद्द्योतयतीति उद्द्योतः । उत्त० ३८ ।

उज्जमंतो-मूलुत्तरगुणेसु विसुद्धो विवित्तो । नि० चू० द्वि० २५ अ ।

उज्जम-उद्यमः-यथाशक्ति अनुष्ठानम् । आचा० १५० । अनालस्यम् । औप० ४८ ।

उज्जममाणो-उद्यच्छन्-उद्यमं कुर्वन् । आव० ५३४ ।

उज्जयनी-नगरीविशेषः । नंदी १४५ ।

उज्जयन्त-पर्वतविशेषः । जं० प्र० १६८ । क्रीडापर्वतविशेषः । भग० ३०६ । रैवतकम् । उत्त० ४९२ । अट्टनमलवास्तव्यनगरम् । व्य० द्वि० ३५७ अ ।

उज्जयिनी-चण्डप्रद्योतराजधानी । प्रश्न० ९० । नगरीविशेषः । आचा० २४८ । बृ० तृ० २१८ आ । विशे० ४९६ । कुणालस्य पितृदत्ता नगरी । विशे० ४०९ ।

उज्जयिनीराजपुत्र-उज्जयिन्याः राजपुत्रः । आचा० २४८ ।

उज्जरा-प्रवाहाः । आव० ६२० ।

उज्जल-उज्ज्वलः-विपक्षलेशेनाप्यकलङ्कितः । भग० ४८४, २३१ । निर्म्मलः । जीवा० २२७ । ज्ञाता० २२१ । बहिःश्वेतवर्णः । जं० प्र० ५२८ । उज्जवलम्-सुखलेशवर्जितम् । प्रश्न० १५६ । शुद्धम् । जीवा० १८८ ।

उज्जला-उज्ज्वला । आव० १९२ । विपक्षलेशेनाप्यकलङ्किता । प्रश्न० १७ । उत्-प्राबल्येन मलिनशरीराः अलब्धसुखास्वादाश्च । बृ० द्वि० ४० अ ।

उज्जा-ऊर्जा-बलम् । व्य० प्र० १४४ आ ।

उज्जाण-जत्थ लोगो उज्जाणियाए वच्चति । जं वा ईसि णगरस्स उवकंठ ठियं तं । नि० चू० प्र० २६५ अ । पुष्पादिमद्वृक्षसंकुलादौ उत्सवादौ बहुजनभोग्यम् । प्रश्न० १२७ । ऊर्द्धं यानमस्मिन्निति उद्यानम्-उदकम् । आव० ७९७ । पुष्पादिसद्वृक्षसंकुलमुत्सवादौ बहुजनोपभोग्यम् । जीवा० २५८ । आव० १९७ । ऊर्ध्वं यानमुद्यानं-मार्गस्योन्नतो भागः, उट्टङ्क इत्यर्थः । सूत्र०८८ । पुष्पादिमद्वृक्षसंकुलबहुजनभोग्यवनविशेषः । प्रश्न० ७३ । पुष्पादिमद्वृक्षसंकुलमुत्सवादौ बहुजनभोग्यम् । प्रश्न० १२७ । औप० ३ । क्रीडार्थागतजनानां प्रयोजनाभावेनोर्ध्वावलम्बितयानवाहनाद्याश्रयभूतं तरुखण्डम् । जं० प्र० ३८८ । पुष्पफलोपेतादिमहावृक्षसमुदायरूपम् । औप० ४१ । जनक्रीडास्थानम् । दश० २१८ । पुष्पादिमद्वृक्षसंकुलं, उत्सवादौ बहुजनभोग्यम् । भग० २३८ । पुष्पादिमद्वृक्षसंकुलमुत्सवादौ बहुजनोपभोग्यम् । राज० ११२ । ऊर्ध्वं विलम्बितानि प्रयोजनाभावात् यानानि यत्र तदुद्यानं-नगरात्प्रत्यासन्नवर्ती यानवाहनक्रीडागृहाद्याश्रयस्तरुखण्डः । राज० २३ । चम्पकवनाद्युपशोभितमिति । ठाणा० ३१२ । औद्यानिक्यां निर्गतो जनो यत्र भुंक्ते । व्य० द्वि० ३६२ अ । वस्त्राभरणादिसमलङ्कृतविग्रहाः सन्निहिताशनाद्याहारमदनोत्सवादिषु क्रीडार्थं लोका उद्यान्ति यत्र तच्चम्पकादितरुखण्डमण्डितम् । अनु० २४ । पत्रपुष्पफलच्छायोपगतवृक्षोपशोभितं, विविधवेषोन्नतमानश्च बहुजनो यत्र भोजनार्थं यातीति । सम० ११७ । पुष्पफलादिसमृद्धानेकवृक्षसंकुलानि उत्सवादौ बहु-

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जनपरिभोग्यानि। अनु० १५९। पुष्पादिमद्वृक्षयुक्तम्। भग० ४८३। आरामः क्रीडावनं वा। उत्त० ४५१।

उज्जाणगिहाणि-उद्यानगृहाणि। ठाणा० ८६।

उज्जाणानि-उद्यानानि-पत्रपुष्पफलच्छायोपगादिवृक्षोपशोभितानि बहुजनस्य विविधवेषस्योन्नतमानस्य भोजनार्थं यानं-गमनं येषु। ठाणा० ८६।

उज्जाणियलेणाइ-उद्यानगतजनानामुपकारिकगृहाणि नगरप्रदेशगृहाणि वा। भग० ६१७।

उज्जाणिया-उद्यानिका। आव० ६७९।

उज्जाणियागओ-उद्यानिकागतः। आव० ४०२।

उज्जाणियागमणं-उज्जानिकागमनं। आव० ४५३।

उज्जाणेत्ति-प्रतिलोमगामिनीत्यर्थः। नि० चू० प्र० ४४ आ।

उज्जालंतं-उज्ज्वालनम्-व्यजनादिभिर्वृद्धयापादनम्। दश० १५४।

उज्जालओ-प्रज्वालकः। नि० चू० प्र० ५० अ।

उज्जालेह-उज्ज्वालयत, दीपयत। जं० प्र० १६२।

उज्जिंतगिरि-उज्जयन्तगिरिः, पर्वतविशेषः। आचा० ४१८। नंदी ६०।

उज्जिओ-बलवान्। बृ० द्वि० १९५ अ।

उज्जितं-ऊर्जितम्। आव० ३०४।

उज्जीवाविया-उज्जीविता। आव० ५५९।

उज्जीवितेवाशीर्वाद। नंदी १६०।

उज्जु-समं संजमो वा। दश० चू० ५२। ऋजोः-ज्ञानदर्शनचारित्राख्यस्य मोक्षमार्गस्यानुष्ठानादकुटिलः, यथावस्थितपदार्थस्वरूपपरिच्छेदाद्वा, सर्वोपाधिशुद्धोऽवक्रः। आचा० १५४। ऋजुः-अकुटिलः। आचा० ४२। अवक्रः, अविपरीतस्वभावः। ठाणा० १८३। अवक्रः। उत्त० ५९०। गृह्याभिमुखः। ओघ० १५६। वर्त्तमानमतीतानागतवक्रपरित्यागाद् वस्त्वखिलं, वक्रविपर्ययादभिमुखं वा। आव० २८४। अतीतानागतपरकीयपरिहरणमाञ्जलं वस्तु। अनु० १८।

उज्जुअ-ऋजुकम्-मायारहितः। पिण्ड० १४७। अभिमुखः। दश० १८४।

उज्जुआयता - ऋजुश्चासावायता चेति ऋज्वायता यया जीवादय ऊर्द्ध्वलोकादेरधोलोकादौ ऋजुतया यान्ति। भग० ८६६। ऋज्वी-सरला सा चासावायता च-दीर्घा ऋज्वायता। ठाणा० ४०७।

उज्जुकडे-ऋजुकृतः-ऋजुः-संयमस्तत्प्रधानं ऋजु वा-मायात्यागतः कृतम्-अनुष्ठानं यस्य सः। उत्त० ४१४।

उज्जुग-ऋजुम्। आव० ३८४। दक्षिणहस्तः। ओघ० १७५।

उज्जुजड्डु-ऋजवश्च प्राञ्जलतया जडाश्च तत एव दुष्प्रतिपाद्यतया ऋजुजडाः। उत्त० ५०२।

उज्जुतभिन्नं-यत् चिर्भटादिकं विदार्य ऊर्ध्वफालिरूपाः पेश्यः कृतं तद् ऋजुकभिन्नम्। बृ० प्र० १७५ अ।

उज्जुते -- ऋजुकः-अवक्रः, उद्यतो वा-अनलसः। प्रश्न० १५७।

उज्जुत्तो-उद्युक्तः। ओघ० १६०।

उज्जुदंसी - ऋजुदर्शी-ऋजुर्मोक्षं प्रति ऋजुत्वात्संयमस्तं पश्यत्युपादेयतयेति ऋजुदर्शी-संयमप्रतिबद्धः। दश० ११८।

उज्जुपन्न-ऋजुप्रज्ञः। ठाणा० २०२।

उज्जुभूयं-ऋजुभूतं-प्रगुणीभूतम्। उत्त० १८५।

उज्जुमइ-ऋजुमतिः-मार्गप्रवृत्तबुद्धिः। दश० १६०।

उज्जुमई - ऋज्वी-सामान्यग्राहिणी मतिरस्य स। नंदी १०९, १०८। ऋज्वी-सामान्यतो मनोमात्रग्राहिणी मतिः-मनःपर्यायज्ञानं येषां ते। औप० २८।

उज्जुया-ऋजुका-न वक्रा। जीवा० २७१।

उज्जुवालिया-ऋजुवालिका, वीरस्य केवलोत्पत्तिस्थानम्। आव० २२७।

उज्जुसंधिसंखेडयं-उज्जुसंधिसंखेडयाओ वा सगडमगं पर्वेदेति। नि० चू० द्वि० ८६ अ।

उज्जुसुअ-ऋजु-अतीताऽनागतपरिहारेण परकीयपरिहारेण वाऽकुटिलं वस्तु सूत्रयतीति ऋजुसूत्रः। विशे० ३१। ऋजुसूत्रः - ऋजु - वर्त्तमानमतीतानागतवक्रपरित्यागाद् वस्त्वखिलं तत्सूत्रयति-गमयतीति। ऋजुश्रुतः-ऋजु-वक्रविपर्ययादभिमुखं श्रुतं-ज्ञानमस्येति। आव० २८४। ऋजु-अवक्रं श्रुतमस्य सोऽयमृजुश्रुतः, ऋजु-अवक्रं वस्तु सूत्रयतीति ऋजुसूत्रः। विशे० ९०७। ठाणा० ३९२।

उज्जुसुते - ऋजु-वक्रविपर्ययादभिमुखं श्रुतं-ज्ञानं यस्यासौ ऋजुश्रुतः, ऋजु वा-वर्त्तमानमतीतानागतवक्रपरित्यागाद्वस्तु सूत्रयति-गमयति इति ऋजूसूत्रः। ठाणा० ३९०। ऋजु-वक्रविपर्ययादभिमुखं श्रुतं-ज्ञानं यस्य सः। ठाणा० ३९२। ऋजु-अवक्रमभिमुखं श्रुतं-श्रुतज्ञानं यस्येति। ठाणा० १५२।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ऋजुः-अवक्रं श्रुतमस्येति। अनु० २६५। स्वकीयं संप्राप्तं च वस्तु नान्यदित्यभ्युपगमपरः, ऋजु वा-अतीतानागतवक्रपरित्यागाद्वर्त्तमानं वस्तु सूत्रयति-गमयतीति ऋजुसूत्रः। ठाणा० १५२।

उज्जुसुयं-ऋजुसूत्रं-नयगतौ भेदः। प्रज्ञा० ३२७। ऋजु-अतीतानागतपरिहारेण प्राञ्जलं वस्तु सूत्रयति-अभ्युपगच्छतीति ऋजुसूत्रः। अनु० १८।

उज्जुसेढीपत्ते - ऋजुश्रेणिप्राप्तः-ऋजुः-अवक्रा श्रेणिः-आकाशप्रदेशपंक्तिस्तां प्राप्तः। अनुश्रेणिगतः। उत्त० ५९७।

उज्जुहित्ता-प्रेर्य। उत्त० ५५१।

उज्जू-ऋजुः-यतिः, यतिरेव परमार्थतः ऋजुः। आचा० १५६।

उज्जूहिगा-गावीओ उज्जूहिताओ अडविहुत्तीओ उज्जुहिज्जंति अहवा गोसंखडि उज्जूहिगा। नि० चू० द्वि० ७१ अ।

उज्जेंत-रैवतकः। बृ० द्वि० १०६अ। उज्जयन्तः-पर्वतविशेषः। आव० ८२७। परदारगमने पर्वतविशेषः। आव० ८२३।

उज्जेणय-उज्जयिनीकः। आव० ६३६।

उज्जेणा-उपयोजना-संघट्टना। बृ० द्वि० १४६ अ।

उज्जेणि-उज्जयिनी, गुरुनिग्रहविषये पुरी। आव० ८१३। सर्वकामविरक्तताविषये नगरी। आव० ७१४। अज्ञातोदाहरणे प्रद्योतराजधानी। आव० ६९९। मालवदेशे नगरी। दश० ५७। शिल्पसिद्धदृष्टान्ते पुरी। आव० ४१०। कायदण्डोदाहरणे नगरीविशेषः। आव० ५७७। भद्रगुप्तस्थविरनिर्यामणास्थानम्। आव० ३०२।

उज्जेणिगाओ-औज्जयिन्यः। आव० ६४।

उज्जेणिया-उद्यानिका। आव० २१०।

उज्जेणी-उज्जयिनी, लवालवोदाहरणे नगरी। आव० ७२१। गुणविषये पुरी। आव० ८१९। विनयदृष्टान्ते पुरी। आव० ७०८। शिल्पकर्मविषये नगरी। आव० ४०९। स्थिरीकरणोदाहरणे नगरी। दश० १०३। योगसंग्रहेऽनिश्रितोपधानदृष्टान्ते नगरी। आव० ६६८। जितशत्रुराजधानी। उत्त० २१३, १९२। औत्पात्तिकीदृष्टान्ते नगरी। आव० ४१५। भद्रगुप्ताचार्यस्थानम्। आव० २९२। नगरीविशेषः। बृ० प्र० १९१ अ, १९० आ। योगसंग्रहे शिक्षादृष्टान्ते नगरी। आव० ६७२। प्रथमे आलोचनायोगे नगरी। आव० ६६४। योगसंग्रहे आपत्सु दृढधर्मत्वदृष्टान्ते नगरीविशेषः। आव० ६६७। हस्तिमित्रगाथापतिस्थानम्। उत्त० ८५। देवदत्तागणिकावसननगरी। उत्त० २१८। उज्जयिनी-नगरीविशेषः। उत्त० ९९, २९४, १२७, ८७। प्रद्योतनराजधानी। उत्त० ९६। चेटीदेवतोक्तं भग्नसाधुस्थानम्। बृ० प्र० १७१ आ। बृ० प्र० ३९ अ। नगरीविशेषः। नि० चू० प्र० २४३ अ। नि० चू० द्वि० ५७ आ। बृ० प्र० १९१ अ। बृ० द्वि० २६७ अ। कालकाचार्यविहारभूमिः। नि० चू० प्र० ३३९ आ। बृ० प्र० ४७ अ। बृ० तृ० १४९ अ।

उज्जेणीनयरी-अवन्तीजनपदे नगरी। उत्त० ४९।

उज्जेणीसावगसुतो - उज्जयनीश्रावकपुत्रः-उज्जयिन्यां श्रावकसुतः। उत्त० २९४।

उज्जोअ-उद्द्योतः-प्रभासमूहः। जीवा० २६७। अनुष्णप्रकाशः। जं० प्र० ४३३। दीप्यमानता। जीवा० ३९९। उद्योतं-चान्द्रप्रकाशम्। जं० प्र० २२९।

उज्जोइंति-उद्द्योतयन्ति। भग० ३२७।

उज्जोएइ-उद्द्योतयति-भृशं प्रकाशयति। भग० ७८।

उज्जोएमाण-उद्योतयन्। औप० ५०।

उज्जोओ-उद्योतः-रत्नादिप्रकाशः। उत्त० ५६१।

उज्जोयगरे - उद्योतकरः - केवलालोकेन तत्पूर्वकप्रवचनदीपेन वा सर्वलोकप्रकाशकरणशीलः। आव० ४९४।

उज्जोयणामे-यदुदयाज्जन्तुशरीराण्यनुष्णप्रकाशकरूपमुद्योतं कुर्वन्ति यथा यतिदेवोत्तरवैक्रियचन्द्रनक्षत्रतारविमानरत्नौषधयस्तदुद्योतनाम। प्रज्ञा० ४७४।

उज्जोवणं-गाविणं पसरणं। नि० चू० प्र० १०७ अ।

उज्जोवेंति-उद्योतयन्ति। सूर्य० ६३। उद्द्योतयतः-भृशं प्रकाशयतः। जं० प्र० ४६१।

उज्जोवेमाणा-उद्योतयमानः स्थूलवस्तुप्रदर्शनतः। ठाणा० ४२१।

उज्झंतगं-उज्झितकं, त्याज्यम्। आव० ६६८।

उज्झंता-क्षपयन्तः। अनु० १३१।

उज्झंसिओ-तिरस्कृतः। आव० २०४।

उज्झकूखणिया - पवनप्रेरिता उदककणिकाः। बृ० द्वि० २९ आ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उज्झखणी-दगवातो सीतभरो सा य उज्झखणी भण्णति। नि० चू० प्र० २३२ आ।

उज्झणं-बहिर्नयनं। विशे० १०२९।

उज्झनं-परिशाटः। आव० ५७६।

उज्झमज्जी-उद्घाटनम्। आव० ६६५।

उज्झयारेमि-उपकरोमि। बृ० प्र० ४६ आ।

उज्झर-अवझरः-पर्वततटादुदकस्याधःपतनम्। भग० २३८। प्रवाहः। (तं०)। उज्झरः-प्रवाहः। नंदी ४७। गिरितटादुदकस्याधःपतनानि। जं० प्र० ६६। गिरिष्वम्भसां प्रस्रवाः। प्रज्ञा० ७२। निर्ज्झरः। ज्ञाता० २६।

उज्झररवो-निर्झरशब्दः। ज्ञाता० १६१।

उज्झा-उज्झा-उपयोगपुरस्सरं ध्यानकर्त्तारः। विशे० १२२९। अयोध्या, सगरराजधानी। आव० १६१। अजितनाथजन्मभूमिः। आव० १६०। उ इत्येतदक्षरं उपयोगकरणे वर्तते, ज्झ इति चेदं ध्यानस्य भवति निर्देशे, ततश्च प्राकृतशैल्या उज्झा, उपयोगपुरस्सरं ध्यानकर्तार इत्यर्थः। आव० ४४९। अनन्तनाथजन्मभूमिः। आव० १६०।

उज्झाइओ-विरूपः। बृ० द्वि० २४१ अ।

उज्झाइगं-जुगुप्सा। बृ० द्वि० २२९ आ।

उज्झाइतं-विरूपं। बृ० द्वि० २२९ आ।

उज्झातो-उपाध्यायः। उत्त० १४९।

उज्झाहि-उज्झीः। आव० २१७।

उज्झिआ-उज्झिता-सद्विवेकशून्या। सूत्र० ९२।

उज्झिणिका-पारिष्ठापनिका। बृ० तृ० १२३अ। बृ० द्वि० २४२ आ।

उज्झितं-छर्दितं, त्यागम्। पिण्ड० १६९।

उज्झितक-विजयसार्थवाहपुत्रः। ठाणा० ५०७। दु:खविपाकानां द्वितयमध्ययनम्। ठाणा० ५०७।

उज्झित्तए - उज्झितुं-सर्वस्या देशविरतेस्त्यागेन। ज्ञाता० १३४।

उज्झिय-उज्झितः-उज्झितधर्मा, सप्तमी पिण्डैषणा। आव० ५७२। उज्झितधर्मा। आव० ५६८।

उज्झियए-उज्झितकः-सुभद्राविजयमित्रसार्थवाहयोः सुतः। विपा० ४६। सार्थवाहपुत्रः, अन्तकृद्दशासु दुःखविपाकानां द्वितीयमध्ययनम्। विपा० ३५।

उज्झियतो-उज्झितः-त्यक्तः। आव० ८२३।

उज्झियधम्मा-चतुर्थी वस्त्रैषणा। आचा० ३७७। यत्परित्यागार्हं भोजनजातमन्ये च द्विपदादयो नावकाङ्क्षन्ति तदर्द्धत्यक्तं वा गृह्णत इति, सप्तमी पिण्डैषणा। ठाणा० ३८७। आव० ५६८, ५७२।

उज्झियधम्मिय-उज्झितधर्मिकं-उज्झितं-परित्यागः स एव धर्मः-पर्यायो यस्यास्ति तत्। अन्त० ३। उज्झितधर्मिका-सप्तमी पिण्डैषणा। आचा० ३५७। जं असणादिगं गिही उज्झिउकामो साहू य उवट्ठितो तं तस्स देति ण य तं कोइ अण्णो दुपदादि अभिलसति एसा उज्झियधम्मिया। नि० चू० तृ० १२ अ। नि० चू० द्वि० १६३ आ।

उज्झियधम्मे-उज्झितमेव धर्मः-स्वभावो यस्य तद् उज्झितधर्मं-परित्यागार्हम्। बृ० प्र० ९७आ।

उट्ट-उष्ट्रः। प्रज्ञा० २५२। उष्ट्रः-द्विखुरचतुष्पदविशेषः। प्रज्ञा० ४५। जीवा० ३८। म्लेच्छविशेषः। प्रज्ञा० ५५।

उट्टण-आवर्त्तनम्-भक्तीभवनम्। व्य० प्र० २०३ आ।

उट्टवामा-उष्ट्री। आव० ४१८।

उट्टिए-उष्ट्राणामिदम् औष्ट्रिकम्। अनु० ३५। उष्ट्रिका-बृहन्मृन्मयभाण्डम्। उपा० ४।

उट्टिते-उष्ट्रलोममयम्। ठाणा० ३३८।

उट्टितो-उव्वसिओ। नि० चू० प्र० १७८ आ।

उट्टियं-उट्टरोमेसु उट्टियं। नि० चू० प्र० १२६ अ।

उट्टिया - उष्ट्रिका-महामृण्मयो भाजनविशेषः। औप० १०६। मृण्मयो महाभाजनविशेषः। उपा० २१। सुरातैलादिभाजनविशेषः। उपा० ४०। उवरिहुत्तिकरणं। नि० चू० तृ० ५९ अ, ६१ अ।

उट्टियासमणा - उष्ट्रिका-महामृण्मयो भाजनविशेषस्तत्र प्रविष्टा ये श्राम्यन्ति-तपस्यन्तीति उष्ट्रिकाश्रमणाः। औप० १०६।

उट्ठं-ओष्ठ-कर्णम्। ओघ० २१९।

उट्ठंभिया-अवष्टभ्य-आक्रम्य। आचा० ३१२।

उट्ठण-उत्थितः। बृ० द्वि० ७९ अ।

उट्ठवेसि-उद्धरसि। ज्ञाता० ६९।

उट्ठा-उत्था-कायस्योर्ध्वभवनम्। औप० ८३। ऊर्ध्वं वर्त्तनम्। सूर्य० ६। भग० १४। उष्ट्री। दश० १९३।

उट्ठा(ट्टा)-उष्ट्राः-जलचरविशेषाः। सूत्र० १६०।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उट्ठाए-उत्थाय-उद्यतविहारं प्रतिपद्य सर्वालङ्कारं परित्यज्य पञ्चमुष्टिकं लोचं विधायैकेन देवदुष्येणेन्द्रक्षिप्तेन युक्तः कृतसामायिकप्रतिज्ञ आविर्भूतमनःपर्यायज्ञानोऽष्टप्रकारकर्म्मक्षयार्थं तीर्थप्रवर्त्तनार्थं चोत्थाय। आचा० ३०१। उत्थानं उत्था-ऊर्ध्वं वर्त्तनं। राज० ५८।

उट्ठाण-उत्थानम्-उद्वसनम्। नंदी २०७। प्रथममुद्गमनम्। उत्त० ३५१। जन्म। भग० ६६१। चेष्टाविशेषः। ठाणा० । २३। उत्थानम्। पिण्ड० ७१। ऊर्ध्वीभवनम्। भग० ३११। सूर्य० २८६। श्रवणाय गुरुं प्रत्यभिमुखगमनम्। सूर्य० २९६। देहचेष्टाविशेषः। प्रज्ञा० ४६३। ऊर्ध्वं भवनम्। जं० प्र० १३०। उत्पत्तिः। ज्ञाता० १८९।

उट्ठाणपरियाणियं-परियानं-विविधव्यतिकरपरिगमनं तदेव पारियानिकं-चरितं उत्थानात्-जन्मन आरभ्य पारियानिकं उत्थानपारियानिकम्। भग० ६६०।

उट्ठाणपरियावणियं-उत्थानपर्यापनिकम्। आव० ६५।

उट्ठाणसुए-उत्थानश्रुतं-उद्वसनं तद्धेतुः श्रुतमुत्थानश्रुतम्। नंदी २०७।

उट्ठाय-उत्थाय-अभ्युपगम्य। आचा० ३८। सर्वं सावद्यं कर्म्म न मया कर्तव्यमित्येवं प्रतिज्ञामन्दरमारुह्य। आदाय-गृहीत्वा। आचा० १४०।

उट्ठावणा-उच्चेव ठावणा उत-प्राबल्येन वा ट्ठावणा उट्ठावणा। नि० चू० द्वि० ४७ अ।

उट्ठावणागहणं-उपस्थापनायां हस्तिदन्तोन्नताकारहस्तादिभिःर्यद् रजोहरणादिग्रहणं। बृ० द्वि० २८६ अ।

उट्ठिअ-उद्युक्तः। ओघ० २२०। उत्थितः-उद्भ्रमितः। ओघ० ४९। उद्यतः। ओघ० २२०।

उट्ठिए-उत्थितः-ज्ञानदर्शनचारित्रोद्योगवान्। आचा० १७६। उत्-प्राबल्येन स्थित उत्थितः। आचा० २५८।

उट्ठिय-उत्थितः-संयमोद्योगवान्। आचा० २२४। रुअं। नि० चू० प्र० २२८ आ। ईश्वरीभूतम्। पिण्ड० १२३।

उट्ठी-अष्ट्रा। आव० ६२४।

उट्ठुभह-अवष्ठीव्यत-निष्ठीव्यत। भग० ६८५।

उट्ठेइ-उत्थाय-विबुद्धय। भग० १२२।

उट्ठेमि-आयामि-आगच्छामि। आव० ६८५।

उड्डकारिसी-ऋषिविशेषः। बृ० प्र० २८६ आ।

उडए-उटजः-तापसाश्रमगृहम्। निरय० २६।

उडओ-ओटजः-तापसाश्रमः। उत्त० १३४।

उडव-उटजः-तापसाश्रमः। जीवा० १०५। कोट्टिंबो। नि० चू० द्वि० ७७ आ। पर्णकुटी। आव० १८९।

उडवसंठिया-उटजसंस्थिताः-तापसाश्रमसंस्थिताः। आवलिकाबाह्यस्य दशमं संस्थानम्। जीवा० १०४।

उडुंकरिसि-ऋषिविशेषः। नि० चू० द्वि० ६८ आ।

उडुंडुग-उद्दंडकः-जनहास्यः। नि० चू० तृ० ५० अ।

उडु-ऋतुः। नि० चू० प्र० २३९ अ। उडुपः-तरणकाष्ठं-तुम्बकादि। पिण्ड० १०२।

उडुकः-तप्रः। विशे० ३५३।

उडुकल्लाणिआ-ऋतुकल्याणिकाः, ऋतुषु षट्स्वपि कल्याणिकाः- ऋतुविपरीतस्पर्शत्वेन सुखस्पर्शाः अथवाऽमृतकन्यात्वेन सदा कल्याणकारिण्यः। जं० प्र० २६३।

उडुपं-नौः। आचा० ४१।

उडुबद्धियं-ऋतुबद्धम्-शीतोष्णकालयोर्मासकल्पम्। आचा० ३६५।

उडुवई-उडुपतिः-उडूनां-नक्षत्राणां पतिः-प्रभुः सः। उत्त० ३५१।

उडुविमानं-सौधर्मे प्रथमः प्रस्तटः। ठाणा० २५१।

उडू-कालविशेषः। भग० ८८८। ऋतवः-द्विमासमानाः। ठाणा० ८६। नक्षत्रः। उत्त० ३५१।

उडूसंवच्छरे-ऋतुसंवत्सरः, कर्मसंवत्सरः, सवनसंवत्सरश्च। सूर्य० १६८। यस्मिन् संवत्सरे त्रीणि शतानि षष्ट्यधिकानि परिपूर्णान्यहोरात्राणां भवति एष ऋतुसंवत्सरः, ऋतवो लोकप्रसिद्धाः वसन्तादयः तत्प्रधानसंवत्सर ऋतुसंवत्सरः। सूर्य० १६९।

उड्डुं-कुडचं। बृ० द्वि० ६१ आ।

उड्डुंचकादि-उदघट्टकादि। ओघ० ८९।

उड्डुंचगा-उदञ्चकाः-याचकाः। बृ० प्र० ८६ आ।

उड्डुंचय-उड्डञ्चकाः-उदघेटकास्तान् कुर्वन्ति, आलापकान् कर्णाघाटकेन पठित्वा तथैवोच्चरन्ति इत्यर्थः। बृ० द्वि० ६० आ।

उड्डुंचये-कुट्टियाओ। नि० चू० प्र० १५१ अ।

उड्डुंडग-ऊर्ध्वीकृतदण्डः। औप० ९०।

उड्डुंति-व्यवस्थापयन्ति। आव० ५१९।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उड्डुबालग – कोट्टपालकः। आव० २०४। आरक्षकः। आव० २०४।

उड्डुग–पलालं। नि० चू० द्वि० ६१ अ।

उड्डुच्छे–उद्घोषिते। नि० चू० द्वि० १३२ अ।

उड्डुणकं–प्रपंचः। नि० चू० तृ० २६ आ।

उड्डु(ड्डु)ति। नि० चू० प्र० २३२ आ।

उड्डुमरं–उत्थाणं। नि० चू० प्र० १९४ आ।

उड्डुमादी–खितिखाणतो उड्डुमादी। नि० चू० द्वि० ४४ आ।

उड्डुहणं–व्यङ्गनयोर्द्वयोरनवस्थाप्यः। बृ० प्र० ३०८ अ।

उड्डाह – उपघातः। ओघ० ८९। प्रवचनहीला। ओघ० ४८। खिंसा। पिण्ड० १०९। अपवादः। आव० ८००। उपघातः। ओघ० १४९। आव० १९५।

उड्डाहितो–निर्भर्त्सितः। उत्त० १३९।

उड्डिओ–अवतारितः। आव० ३९६।

उड्डियाओ–अवतारिता। दश० ५७।

उड्डुयं–उद्गारितम्। आव० ७७९।

उड्डुयरो–यः समुद्दिशन् संज्ञां वा व्युत्सृजन् चपलतया हस्तादीन्यपि लेपयति। बृ० प्र० २७२ अ।

उड्डुयालेउं–मथितुम्–मन्थनं कर्तुम्। दश० ६०।

उड्डुति–छड्डेति। नि० चू० प्र० २९० अ।

उड्डुह–धरथ। नि० चू० प्र० २३७ अ।

उड्ड–वमनं। नि० चू० प्र० ३१५ आ। नि० चू० ५८ अ। बृ० प्र० ७५ अ। णदीए समुद्दे वा वेलापाणियस्स प्रतिकूलं उड्डं। नि० चू० तृ० ६३ आ।

उड्डंउच्चत्त–ऊर्ध्वस्थितस्यैकमपरं, तिर्यक्स्थितस्यान्यत्, गुणोन्नतिरूपं, तत्रेतरापोहेनोर्ध्वस्थितस्य यदुच्चत्वं तदूर्ध्वोच्चत्वम्। ठाणा० ३६।

उड्डंकप्पेसु–ऊर्ध्वं कल्पेषु–ऊर्ध्वं कल्पोपरिवर्त्तिषु ग्रैवेयकादिविमानकेषु कल्पेषु–सौधर्मादिषु, ऊर्ध्वं वा उपरिकल्प्यन्ते विशिष्टपुण्यभाजामवस्थितिविषयतयेति सौधर्मादयो ग्रैवेयकादयश्च सर्वेऽपि कल्पा एव तेषु। उत्त० १८६।

उड्डंजाणू–शुद्धपृथिव्यासनवर्जनात् औपग्रहिकनिषद्याभावाच्च उत्कटुकासनः सन्नपदिश्यते ऊर्ध्वं जानुनी यस्य स ऊर्ध्वजानुः। ज्ञाता० २।

उड्ड–ऊर्ध्वं–कर्णकः। ओघ० १९८। सर्वोपरिस्थितम्। उत्त० २९८। अनाच्छादितममालगृहम्। ठाणा० १५७। ऊर्ध्वं। नंदी १५४।

उड्डकवाडे–ऊर्ध्वमपि लोकान्तं स्पृष्टे ते अधोऽपि च लोकान्तं स्पृष्टे ते ऊर्ध्वकपाटे। प्रज्ञा० ७५।

उड्डकाएहिं–ऊर्ध्वकायैः–द्रोणैः काकैर्वैक्रियैः। सूत्र० १३७।

उड्डगो। ठाणा० १५८।

उड्डघट्टणा–ऊर्ध्वघट्टना–मुसलीद्वितीयभेदः। ऊर्ध्वं कुट्टिकादिपटलानि घट्टयति। ओघ० १०९।

उड्डचरा–ऊर्ध्वचरा–गृध्रादयः। आचा० २९१।

उड्डठाण – ऊर्ध्वस्थानम्–कायोत्सर्गादि। उत्त० ६९९। कायोत्सर्गः, ऊर्ध्वतया स्थानम्–अवस्थानं पुरुषस्य ऊर्ध्वस्थानम्। ठाणा० ३।

उड्डत्ता–मुख्यता। भग० २५४। ऊर्ध्वता–लघुपरिणामता। प्रज्ञा० ५०४। भग० २३।

उड्डमंतो – उद्वमन्–अधस्तनमध्यमत्रिभागगतवातसङ्क्षोभवशाजलमूर्ध्वमुत्क्षिपन्। जीवा० ३०८।

उड्डरेणु – ऊर्ध्वरेणुः–ऊर्ध्वाधस्तिर्यक्चलनधर्मोपलभ्यो रेणुः। भग० २७७।

उड्डरेणू–ऊर्ध्वरेणुः–स्वतः परतो वा ऊर्ध्वाधस्तिर्यक्चलनधर्मा रेणुः। अनु० १६३।

उड्डलोए–तिर्यग्लोकस्योपरिष्टादूर्ध्वलोकः। प्रज्ञा० १४४।

उड्डलोयतिरियलोए–ऊर्ध्वलोकस्य यदधस्तनमाकाशप्रदेशप्रतरं यच्च तिर्यग्लोकस्य सर्वोपरितनमाकाशप्रदेशप्रतरमेष ऊर्ध्वलोकतिर्यग्लोकः। प्रज्ञा० १४४।

उड्डलोयपयरं–ऊर्ध्वलोकप्रतरं–तिर्यग्लोकस्य चोपरि यदेकप्रादेशिकमाकाशप्रतरं तत्। प्रज्ञा० १४४।

उड्डवाए – ऊर्ध्वमुद्गच्छन् यो वाति वातः स ऊर्ध्ववातः। जीवा० २९। ऊर्ध्वमुद्गच्छन् यो वाति वातः स ऊर्ध्ववातः। प्रज्ञा० ३०।

उड्डवियडं–मालरहितं छायरहितं परं पार्श्वतः कुड्ययुक्तं तदूर्ध्वविवृतं भवति। बृ० द्वि० १८१ अ।

उड्डवेइया–ऊर्ध्ववेदिका, यत्र जान्वोरुपरि हस्तौ कृत्वा प्रतिलिख्यते सा। ओघ० ११०।

उड्डस्सासो–ऊर्ध्वश्वासः। आव० ६२९।

उड्डा–ऊर्ध्वं–वमनम्। बृ० प्र० ७५ अ।

उड्डाई–ऊर्ध्वादि–छर्दनादिदोषः। ओघ० १३६।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उड्ढिया-ऊर्ध्वीकृता। आव० २२३।

उड्ढोववन्नगा-ऊर्ध्वलोकस्तत्रोपपन्नकाः-उत्पन्ना ऊर्ध्वोपपन्नकाः। ठाणा० ५७। सौधर्मादिभ्यो द्वादशभ्यः कल्पेभ्य ऊर्ध्वमुपपन्नाः ऊर्ध्वोपपन्नाः। जीवा० ३४६।

उणादि-उण्प्रभृतिप्रत्ययान्तं पदम्। प्रश्न० ११७।

उणुयत्ता-स्थिता। आव० २७२।

उण्डा-पिण्डी। ज्ञाता० ९१।

उण्णए - उच्छिन्नं नतं-पूर्वप्रवृत्तं नमनमभिमानादुन्नतम्, उच्छिन्नो वा नयो-नीतिरभिमानादेवोन्नयो नयाभाव इत्यर्थः। भग० ५७२।

उण्णणं। नि० चू० प्र० १२४ अ।

उण्णमणी-उन्नामिनी-विद्याविशेषः। दश० ४१।

उण्णय-उन्नतः-प्रधानजातिकः। आव० २४०।

उण्णयविसालकुलवंसा-उन्नताः प्रधानजातित्वात् विशालाः-पितामहपितृव्याद्यनेकसमाकुलाः कुलान्येव वंशाः-अन्वया येषां ते उन्नतविशालकुलवंशाः। आव० २४०।

उण्णया-उन्नतानि-गुणवन्ति, उच्चानि। औप० ३।

उण्णयासणं-उन्नतासनं-उच्चासनम्। जीवा० २००।

उण्णागं-उर्णाकं, ग्रामविशेषः। आव० २११।

उण्णिए-अविलोममयम्। ठाणा० ३३८। ऊर्णाया इदम् और्णिकम्। अनु० ३५।

उण्णियं-ऊरणो रोमेसु उण्णियं। नि० चू० प्र० १२६ अ।

उण्णेज्जं-उपनेयम्। दश० ८६।

उण्हं-उष्णं, उष्णरूपः। सूर्य० १७२। उषति-दहति जन्तुमिति उष्णम्। उत्त० ३८। चतुर्थः परीषहः। आव० ६५६। उष्णः-घर्मः। ठाणा० ३४५।

उण्हकालो-उष्णकालः-ग्रीष्मः। ओघ० २१२।

उण्हयं-उष्णम्। आव० ८५८।

उण्हवणं-उष्णापनम्-उष्णीकरणम्। पिण्ड० ८२।

उण्हा-उष्णा। आव० ३८९।

उण्होदए-उष्णोदकं-स्वभावत एव क्वचिन्निर्झरादावुष्णपरिणामम्। जीवा० २५।

उण्होदय-उष्णोदकः। आव० ८५५।

उण्होला-घृतेलिका। आव० २१७।

उत् - प्राबल्येन, अपुनर्भवरूपतया वा। प्रज्ञा० ११२। प्राबल्ये। प्रज्ञा० ५५९।

उत्कम्पनदीपाः-ऊर्ध्वदण्डवन्तः। ज्ञाता० ४४।

उत्करिकाभेदः-समुत्कीर्यमाणप्रस्थकस्येवेति। ठाणा० ४७५।

उत्कर्षण। ठाणा० २१२। आचा० २७७।

उत्कुट्टित-चिंचनकादिः। व्य० प्र० २८ अ।

उत्कुरुटिकादि-आसनविशेषः। ओघ० ४१। तुषराश्यादि। ओघ० ४१।

उत्क्षिप्तचरका-उत्क्षिप्तं-पाकपिठरात् पूर्वमेव दायकेनोद्धृतं तये चरन्ति-गवेषयन्ति ते। बृ० प्र० २५७ आ।

उत्क्षिप्यते। ओघ० २१५।

उत्तइया-उत्तेजिता-अधिकं दीपिता। दश० ११५।

उत्तणं-उत्तृणम्-उद्गततृणम्। प्रश्न० १४।

उत्तणा-दीर्घत्रि(तृ)णा। नि० चू० प्र० ३३६ अ।

उत्तणाणि-उत्तृणानि-ऊर्ध्वीभूतानि तृणानि दीर्घाणीतियावत् तानि यत्र मार्गे भवन्ति। बृ० द्वि० ७९ आ।

उत्तत्तकणगवन्ना - उत्तप्तकनकवर्णाः - ईषद्रक्तवर्णाः। प्रज्ञा० ९५।

उत्तम-उत्तमो गिरिषु सर्वतोऽप्यधिकसमुन्नतत्वात्, मेरोश्चतुर्दशं नाम। जं० प्र० ३७५। गिरीणामुत्तम इति उत्तमः। मन्दरस्य चतुर्दशं नाम। सूर्य० ७८। मिथ्यात्वमोहनीयज्ञानावरणचारित्रमोहादित्रिविधतमसः उन्मुक्ता इति उत्तमाः। आव० ५०८। उपरिवर्ति। देवलोकाद्यपेक्षया प्रधानम्। उत्त० ३१९। ऊर्ध्वं तमसः-अज्ञानाद्यत्तत्तथा, अज्ञानरहित इत्यर्थः। ज्ञाता० ७६।

उत्तमकट्ठ-उत्तमकाष्ठा-प्रकृष्टावस्था। जं० प्र० ९८। उत्तमकाष्ठा-परमकाष्ठा, उत्तमावस्था परमकष्टो वा। भग० ३०५।

उत्तमकट्ठपत्त-उत्तमकाष्ठाप्राप्तः-परमप्रकर्षप्राप्तः। सूर्य० ११।

उत्तमकट्ठपत्ता - परमकाष्ठाप्राप्ता, उत्तमावस्थायां गता, परमकष्टप्राप्ता वा। भग० ३०५।

उत्तमट्ठ - अनशनाय। (आउ०)। उत्तमार्थः-अनशनम्। ओघ० १४। उत्तमः-प्रधानोऽर्थः-प्रयोजनं स उत्तमार्थः-मोक्षः। उत्त० ३५३। पर्यन्तसमयाराधनारूपः। उत्त० ४७९। मोक्षः। उत्त० ५२३।

उत्तमट्ठकालंमि-उत्तमार्थकाले-अनशनकाले। ओघ० २२७

उत्तमट्ठगवेसए-उत्तमार्थगवेषकः-उत्तमः-प्रधानोऽर्थः-प्रयो-

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जनं उत्तमार्थः, स च मोक्ष एव तं गवेषयति-अन्वेषयतीति। उत्त० ३५३।

उत्तमट्ठपत्ता - उत्तमार्थप्राप्ताः, उत्तमान् तत्कालापेक्षयोत्कृष्टानर्थान्-आयुष्यकादीन् प्राप्ता उत्तमार्थप्राप्ताः, उत्तमकाष्ठां प्राप्ता वा-प्रकृष्टावस्थां गताः। भग० २७७।

उत्तमसाहवेहिं-उत्तमसाधुभिः। पउ० १-१०।

उत्तमा-उत्तमाः-प्रधानाः, ऊर्ध्वं वा तमस इति उत्तमसः। आव० ५०७। पूर्णभद्रस्य तृतीयाग्रमहिषी। भग० ५०४। ठाणा० २०४। प्रथमरात्रिनाम। सूर्य० १४७। जं० प्र० ४९१।

उत्तमार्घम्-परार्घं, महार्घं वा। दश० २२१।

उत्तमुत्तम-उत्तमोत्तम्-अतिशयप्रधानम्। उत्त० ३१९।

उत्तमेणं-ऊर्ध्वं तमसः-अज्ञानाद्यत्तत् तथा तेन ज्ञानयुक्तेन। उत्तमपुरुषासेवितत्वाद्वोत्तमेन। भग० १२५।

उत्तयंतं-उत्तयमानं-ऊर्ध्वं व्यथ्यमानम्। विपा० ७४।

उत्तरं-वासकप्पकंवली। नि० चू० प्र० ३५३ आ।

उत्तरंग-उत्तराङ्गं। जीवा० ३५९। उत्तरङ्गं-द्वारस्योपरि तिर्यगव्यवस्थितं काष्ठम्। जीवा० २०४। जं० प्र० ४८।

उत्तर-उत्तरत-उत्तरदिग्वर्त्ती सर्वेभ्यो भरतादिवर्षेभ्य इति, मेरुनाम। जं० प्र० ३७६। ऐरावते द्वाविंशतितमतीर्थंकरः। सम० १५४। अग्रवर्त्ती। विद्यादिशक्त्यभावेऽनुल्लङ्घनीयः। जं० प्र० ४६२। भवधारणीयशरीरापेक्षया कार्योत्पत्तिकालापेक्षया चोत्तरकालभावि। जं० प्र० ४०२। कार्यम्। सूत्र० ३८५।

उत्तरअंतरदीवा - उत्तरस्यां दिशि येऽन्तर्द्वीपाः। भग० ४९२।

उत्तरउत्तरा-उत्तरोत्तरविमानवासिनः, उत्तरो वा उपरितनस्थानवर्ती, उत्तरः-प्रधानो येषु ते उत्तरोत्तराः। उत्त० १८७।

उत्तरकंचुइज्ज-उत्तरकञ्चुकः-तनुत्राणविशेषः। विपा० ४६।

उत्तरकंचुइय उत्तरकञ्चुकः-तनुत्राणविशेषः। विपा० ४७।

उत्तरकरणं - मूलतः स्वहेतुभ्य उत्पन्नस्य पुनरुत्तरकालं विशेषाधानात्मकं करणम्। उत्त० १९४। औदारिकवैक्रियाहारेषु तैजसकार्मणयोस्तदसम्भवादङ्गोपाङ्गनामैवोत्तरकरणमिति। उत्त० १९७।

उत्तरकिरियं-उत्तरक्रियम्-उत्तरा-उत्तरशरीराश्रया क्रिया-गतिलक्षणा यत्र गमने तदुत्तरक्रियम्। भग० २१२।

उत्तरकुरा -उत्तरपूर्वरतिकरपर्वतस्य पश्चिमायामीशानदेवेन्द्रस्य रामाराख्याः राजधानी। जीवा० ३६५। ठाणा० २३१। नेमनाथशिबिकानाम। सम० १५१। उत्तरकुरुः। आव० ११६। मेरोर्जम्बूद्वीपगतः उत्तरतः उत्तरकुरुनामा विदेहः। जं० प्र० ३१०।

उत्तरकुरु-कुरुविशेषः। जीवा० २६६। वापीनाम। जं० प्र० ३७०। नेमनाथस्य शिबिका। उत्त० ४९२। साकेतनगरे उद्यानम्। विपा० ९५। आव० ११५। क्षेत्रविशेषः। ठाणा० ६८। अकर्मभूमिविशेषः। प्रज्ञा० ५०।

उत्तरकुरुकूडे-उत्तरकुरुदेवकूटं। जं० प्र० ३३७।

उत्तरकुरुदहे-उत्तरकुरौ महाद्रहः। ठाणा० ३२६। उत्तरकुरुहृदः द्रहविशेषः। जं० प्र० ३३०।

उत्तरकुरुवत्तव्वया उत्तरकुरुवक्तव्यता। भग० २७६।

उत्तरकुरुवाए-उत्तरकुरुषु। पउ० ३१-८।

उत्तरकुरुकुड - उत्तरकुरुकूटं-गन्धमादनपर्वते चतुर्थकूटः। जं० प्र० ३१३।

उत्तरकूलग-गङ्गाया उत्तरकूल एव वास्तव्यम्। भग० ५१९। औप० ९०।

उत्तरकूला- उत्तरकूलगा-गङ्गोत्तरकूलवास्तव्यास्तापसाः। निरय० २५।

उत्तरखत्तियकुंडपुर-नगरविशेषः। आचा० ४२१।

उत्तरगंधारा-उत्तरगान्धारा-गान्धारस्वरस्य पञ्चमी मूर्छना। जीवा० १९३। गान्धारग्रामस्य पञ्चमी मूर्छना। ठाणा० ३९३।

उत्तरगज्जभो-उत्तरगर्जभः-वातविशेषः। आव० ३८७।

उत्तरगुण-उत्तरगुणः, पौरुषीपुरिमार्धैकासनकोपवासादितपोरूपः। विशे० १०१६।

उत्तरगुणनिर्मितः - पुरुषप्रायोग्याकारवन्ति द्रव्याणि। आव० २७७।

उत्तरगुणनिर्वर्त्तितः - यस्तु काष्ठचित्रकर्मादिष्वालिखितः सः। नृ० प्र० १४३ अ।

उत्तरगुणपच्चक्खाण - उत्तरगुणप्रत्याख्यानम्। आव० ४७९।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उत्तरगुणलद्धिं – उत्तरगुणाः–पिण्डविशुद्ध्यादयस्तेषु चेह प्रक्रमात्तपो गृह्यते ततश्च उत्तरगुणलब्धि–तपोलब्धिम्। भग० ७९५।

उत्तरगुणा–दशविधप्रत्याख्यानरूपाः। भग० ८९४। नि० चू० द्वि० १६६ अ। मूलगुणापेक्षया स्वाध्यायादीन्। उत्त० ५३६।

उत्तरगुणे–उत्तरगुणविषयं–क्रीतकृतादि। आव० ३२५।

उत्तरचूलियं–उत्तरचूडम्, यद् वन्दनं कृत्वा पश्चान्महता शब्देन मस्तकेन वन्द इति भणति, कृतिकर्मणि एकोनत्रिंशत्तमो गुणः। आव० ५४४।

उत्तरज्झ–उत्तराध्यः–उत्तराध्ययनम्। तृतीया निर्युक्तिः। आव० ६१।

उत्तरज्झयणा–उत्तराध्ययनानि। आव० ७५९।

उत्तरज्झयणाइं – उत्तराध्ययनानि–सर्वाण्यपि चाध्ययनानि प्रधानान्येव तथाऽप्यमून्येव रूढ्योत्तराध्ययनशब्दवाच्यत्वेन प्रसिद्धानि। नंदी २०६।

उत्तरज्झाए–उत्तराध्यायाः–उत्तराः–प्रधाना अधीयन्त इत्यध्यायाः–अध्ययनानि तत उत्तराश्च ते अध्यायाश्च। उत्त० ७१२।

उत्तरड्ढभरहकूड – उत्तरार्द्धभरतनाम्नो देवस्य निवासभूतं कूटं उत्तरार्धभरतकूटम्। जं० प्र० ७७।

उत्तरणं–निरंतरं। नि० चू० द्वि० ७७ अ। एक्काए चेव अप्पो य गच्छा मे उत्तरणं। नि० चू० द्वि० ७७ आ। तुंबोडुपादिभिर्नौवर्जितैर्यद् उत्तीर्यते तद् उत्तरणम्। बृ० तृ० १६१ अ। जत्थ तरंतो जलं संघट्टेति तं सव्वं उत्तरणं भन्नति। नि० चू० द्वि० ७८ आ।

उत्तरद्दारिता–उत्तरद्वारिका। ठाणा० ४२४।

उत्तरद्धे–उत्तरार्द्धे–उत्तरभागे। जं० प्र० ४८२।

उत्तरपओगकरणं–उत्तरप्रयोगकरणं, जीवप्रयोगकरणद्वितीयभेदः। आव० ४५८।

उत्तरपट्टो–उत्तरपट्टकः। ओघ० २१७। उत्तरपट्टः। ओघ० ८३।

उत्तरपदव्याहतं–गत्यागतिलक्षणे द्वितीयो भेदः। आव० २८१।

उत्तरपरिकर्मक्रियते–उद्ध्रियते। आव० ७६५।

उत्तरपासो–उत्तरपार्श्वः। जीवा० २०४, ३५९।

उत्तरपुरच्छिमिल्लाओ–उत्तरपूर्वेण, उत्तरपूर्वस्यां दिशि। जीवा० १४४।

उत्तरपुरच्छिमे–औत्तरपौरस्त्यः, उत्तरपूर्वारूपो दिग्विभागः–ईशानकोणः। सूर्य० २।

उत्तरपुरत्थिमेल्लं–उत्तरपूर्वे, ईशाने कोणे इत्यर्थः। सूर्य० २१।

उत्तरपुव्वा–ईशानकोणः। आव० ६३०।

उत्तरफग्गुणी–उत्तरफाल्गुनी, हस्तोत्तरा। आव० २५५।

उत्तरबलिस्सहगणे–गणविशेषः। ठाणा। ४५१।

उत्तरभद्रपदाः–प्रोष्ठपदाः। सूर्य० ११४।

उत्तरमंदा –उत्तरमन्दाभिधा गान्धारस्वरान्तर्गता सप्तमी मूर्च्छना। जं० प्र० ३८। मध्यमग्रामस्य प्रथमा मूर्छना। ठाणा० ३९३। गान्धारस्वरस्य सप्तमी मूर्छना। जीवा० १९३।

उत्तरमहुर–वणिग्विशेषः। नि० चू० प्र० २१० अ।

उत्तरवाए–उत्तरवादः–उत्कृष्टवादः। आचा० २४३।

उत्तरवेउव्विते–उत्तरवैक्रियम्। प्रज्ञा० २९८।

उत्तरवेउव्वियं–उत्तरवैकुर्विकम्, उत्तरमुत्तरकालभविनस्वभविनस्वभाविकमित्यर्थः, वैकुर्विकं विकुर्वणं तेन निर्वृत्तं वैकुर्विकम्। विशिष्टवस्तू विशिष्टाभरणसुश्लिष्टतत्परिधानसमीचीनकुङ्कुमाद्युपलेपनजनितमतिमनोहारिरामणीयकम्। व्य० प्र० १९५ आ। उत्तरवैक्रियम्–पूर्ववैक्रियाऽपेक्षयोत्तरकालभावि वैक्रियम्। भग० ७२।

उत्तरवेउव्विया–उत्तरवैक्रिया, तद्ग्रहणोत्तरकालं कार्यमाश्रित्य या क्रियते सा। अनु० १६३।

उत्तरसत्तासुओ–उत्तरसत्त्वासुकः, उत्तरपौरस्त्यवातभेदः। आव० ३८६।

उत्तरसाढा – उत्तराषाढा,–अकम्पितजन्मनक्षत्रम्। आव० २५५।

उत्तरसाला –अत्थानिगादिमंडवो हयगयाण वा साला उत्तरसाला। नि० चू० प्र० २६९ अ।

उत्तरा–उत्तरमथुरा। आव० ६८८। उत्तरवाचाला। आव० १९५। उत्तराभाद्रपदा–उत्तराफाल्गुनी "उत्तराषाढा"। सूर्य० १३०। उत्तरफाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तरभद्रपदा। जं० प्र० ५०२। उत्तरमथुरा। आव० ३५६। बोटिकशिव-

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भूतेर्भगिनी। आव० ३२४। शिवभूतेर्भगिनी। विशे० १०२२। मध्यमग्रामस्य तृतीया मूर्छना। ठाणा० ३९३।

उत्तराधर्यम् । भग० २६८।

उत्तरापथे-देशविशेषः। नि० चू० तृ० ४४ अ।

उत्तरावक्कमणं-उत्तरस्यां दिश्यपक्रमणं-अवतरणं यस्मात्तद् उत्तरापक्रमणम्-उत्तराभिमुखं पूर्वं तु पूर्वाभिमुखमासीदिति। भग० ४७७। उत्तरस्यां दिश्यपक्रमणं-अवतरणं यस्मात्तदुत्तरापक्रमणं-उत्तराभिमुखम्। ज्ञाता० ५६।

उत्तरावह-उत्तरापथः, उत्तरदिग्विभागः। आव० ९९। नि० चू० प्र० ९६ आ। उत्तरदिग्गता देशाः। विशे० ६२४। उत्तरदिक्सम्बन्धी देशः। आव० ८३०, २९५। बृ० द्वि० २२७ अ। नि० चू० प्र० १६ अ।

उत्तरासंग-उत्तरासङ्गः, वक्षसि तिर्यग्विस्तारितवस्त्रविशेषः। जं० प्र० १८७। उत्तरीयस्य देहे न्यासविशेषः। भग० १३८।

उत्तासणगं-उत्त्रासनकं-भयङ्करम्। ज्ञाता० १३३।

उत्तरासमा-मध्यमग्रामस्य चतुर्थी मूर्छना। ठाणा० ३९३।

उत्तरासाढा-उत्तराषाढानां-उत्तराषाढापर्यन्तानां नक्षत्राणाम्। सूर्य० ११४।

उत्तरासाढाणक्खत्ते-उत्तराषाढानक्षत्रम्। सूर्य० १३०।

उत्तरित्तए-उत्तरीतुं-लङ्घयितुम्। ठाणा० ३०९।

उत्तरिज्ज-उत्तरीयम्-उत्तरासङ्गः। जं० प्र० १८९। भग० ३१९। वसनविशेषः। भग० ४६८। उपरिकायाच्छादनम्। ज्ञाता० २७।

उत्तरिज्जयं-उत्तरीयकं-उपरितनवसनम्। उपा० ५०।

उत्तरीकरणं-उत्तरकरणं पुनः संस्कारद्वारेणोपरिकरणमुच्यते, उत्तरं च तत् करणं च इत्युत्तरकरणं, अनुत्तरमुत्तरं क्रियत इत्युत्तरीकरणम्। आव० ७७९।

उत्तरीयं-प्रावरणं प्रच्छदपटीऽर्थः। उत्तरीयं पुनर्यत् तदुपरि प्रस्तीर्यते। बृ० प्र० ९८ अ।

उत्तरोट्ठरोमा-दाढियाओ। नि० चू० प्र० १९० अ।

उत्तरो-उत्तरग्रहणात् संजतसम्मदिट्ठिग्गहणं। नि० चू० प्र० ६३ अ।

उत्ताणग-उत्तानः। आव० ६४८। उत्तानकाः-ऊर्ध्वमुखशायिनः। जं० प्र० २३९।

उत्ताणतो-उत्तानकः। उत्त० २४४।

उत्ताणयं-उत्तानकं-उत्तानीकृतम्। प्रज्ञा० १०७। उत्तानकम्-ऊर्ध्वमुखम्। उत्त० ६८५। भग० १२५।

उत्ताणसेज्जए। निरय० ३४।

उत्ताणा-उत्ताना। ठाणा० २९९।

उत्तानं-स्पष्टम्। प्रज्ञा० ५९९। प्रतलम्। ठाणा० २७८। स्वच्छतयोपलभ्यमध्यस्वरूपत्वम्। ठाणा० २७८।

उत्तानीकृतं। सूर्य० ३६।

उत्तारंती-अवतारयन्ती। आव० ६७६।

उत्तारो-उत्तारः-अधस्तादवतरणम्। जीवा० २६९। जलमध्याद्बहिर्विनिर्गमनम्। जीवा० १९७।

उत्तालं-उत्-प्राबल्यार्थे इत्यतितालमस्थानतालं वा। ठाणा० ३९६। अनु० १३२। उत्-प्राबल्येन अतितालं अस्थानतालं वा। जं० प्र० ४०। जीवा० १९४।

उत्तालिज्जंताणं-आलपनम्। राज० ४६।

उत्तासणओ-उद्वेगजनकः। ठाणा० ४६१।

उत्तासणयं-उत्त्रासनिका-स्मरणेनाप्युद्वेगजनिका। भग० १७५।

उत्तासिया-उत्तासिता-आस्फालिता। भग० १५४।

उत्तिंग-उत्तिङ्गः-पिपीलिकासन्तानकः। आचा० २८५। तृणाग्रः। आचा० ३२२। रन्ध्रम्। आचा० ३७९। उदगं हत्थादिणा पिहेति। नि० चू० तृ० ६३ आ। कीटिकानगरम्। दश० १७५। सर्पच्छत्रादिः। दश० २२९। गर्दभाकृतिजीवविशेषः, कीटिकानगरं वा। आव० ५७३। कीलियावासो। नि० चू० प्र० २५५ आ। कीडयणगरगो उत्तिंगो, फरुगइभो वा। नि० चू० द्वि० ८३ अ। कीटिकानगरम्। बृ० तृ० १६६आ। छिद्रं। नि० चू० तृ० ६३ आ। कीडियानगरयं। दश० चू० ८०।

उत्तिंगसुहुम-उत्तिङ्गसूक्ष्मं-कीटिकानगरम्। दश० २३०।

उत्तिण्णो-उत्तीर्णः-अवतीर्णः। ओघ० २०।

उत्तिन्न-अवतीर्णः। दश० १९५।

उत्तिमं-उत्तमम्-श्रेष्ठम्। आव० ४८७।

उत्तिमट्ठो-उत्तमार्थः-अनशनम्। बृ० द्वि० १०० अ। उत्तमार्थः-कालधर्मः। आव० ६२६। भक्तप्रत्याख्यानम्। आव० ५६३।

उत्ती-उक्तिः, शब्दकरणम्। आव० ४६४।

उत्तुअणा-उत्तेजना। बृ० द्वि० ७२ आ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उत्तुइउ-(देशी०) गर्व्वं। व्य० प्र० २१० आ।

उत्तुइया-उत्तेजिता। बृ० तृ० २७ आ।

उत्तुडियाइ-राज्यादि। आव० ५५५।

उत्तुप्पियं--उत्तुपितं-स्नेहितम्। प्रश्न०। ५९।

उत्तेड-बिन्दुः। पिण्ड० १०।

उत्तेत्ता-अपवर्त्त्य। आव० ६२४।

उत्थरंत-आस्तृण्वन्-आच्छादयन्। प्रश्न० ४७।

उत्थरमाणो-अभिभवन्। आव० ५६७।

उत्थल - उन्नतानि-स्थलानि धूलुच्छ्रयरूपाणि। जं० प्र० १६८।

उत्थल्लं। ओघ० १९२।

उत्था-उत्थानं-मूलोत्पत्तिम्। उत्त० ४७५।

उत्थाण-अतिसारः। व्य० द्वि० २७४ अ।

उत्थिप-यूथं-सङ्घान्तरं, तीर्थान्तरमित्यर्थः। उपा० १३।

उत्थितवादः-उत्थितस्तद्वादः। आचा० २०३।

उत्थिय-उत्थियः-यूथिकः। भग० ३२४।

उत्थुभण--अवस्तोभनम्, अनिष्टोपशान्तये निष्ठीवनेन थुथुकरणम्। बृ० प्र० २१५ अ।

उत्पला-हस्तिनागपुरे भीमस्य भार्या। ठाणा० ५०७।

उत्पलिनीकन्द-पद्मनीकन्दः। प्रज्ञा० ३७।

उत्पातनिपातप्रसक्तसंकुचितप्रसारितरेकरचितभ्रान्तसम्भ्रान्तः-एकत्रिंशत्तमो नाट्यविधिः। जीवा० २४७।

उत्पादपूर्व-प्रथमपूर्वनाम। उत्त० ३४२।

उत्पादसभा-उत्पादभवनविमानभाविनी सभा। प्रश्न० १३५।

उत्पादिताच्छिन्नकौतूहलं-स्वविषये श्रोतृणां जनितमविच्छिन्नं कौतुकं येन तत्तथा। षड्विंशतितमो वचनातिशयः। सम० ६३।

उत्प्रासनं। उत्त० ४३४।

उत्प्रासयेत्-आचा० १२९।

उत्प्रासवचनं। नि० चू० प्र० १०८ आ।

उत्प्रास्यमान-उन्नतमाना-गर्वाध्मातो महता चारित्रमोहेन मुह्यति संसारमोहेन बोध्यत इति। आचा० २१६।

उत्प्लुत-भीतः। ज्ञाता० १६१।

उत्प्लुत्य-बुद्धया गत्वा। सूर्य० ४७।

उत्सकलय-अनुजानीहि। ओघ० ६८।

उत्सर्गसमितिः-स्थण्डिले स्थावरजङ्गमजन्तुवर्जिते निरीक्ष्य प्रमृज्य च मूत्रपुरीषादीनामुत्सर्गः। तत्त्वा० ९-५।

उत्सर्गसूत्रं। बृ० प्र० ५१ आ।

उत्सर्गापवादसूत्रं। बृ० प्र० ५१ आ।

उत्सर्पण-क्रियाविशेषः। आचा० ३६४।

उत्सादितं। उत्त० ६५।

उत्साहः-सूत्रार्थपरावर्तनायामभियोगः। बृ० प्र० ११३ आ।

उत्सिक्तं-काञ्जिकस्य सौवीरिणीतो यद् निष्काशनं तत्। बृ० प्र० २७५ अ।

उत्सिक्ता। उत्त० ३१९।

उत्सूर वेलातिक्रमः। पिण्ड० ७१। विशे० ६३७।

उत्सृजति-मुञ्चति, निसृजति। विशे० २०९।

उत्सृ(च्छृ)तम्-प्रासादादि। आव० ८२६।

उत्सृष्टम्-उत्सर्जनम्-त्यागः। आचा० ३६२।

उत्सेधबहुलं-उत्सेधाख्यो नाभेरधस्तनो देहभागो गृह्यते, ततः सह आदिना-नाभेरधस्तनभागेन यथोक्तप्रमाणलक्षणेन वर्त्तत इति सादि, उत्सेधबहुलमिति भावः। जीवा० ४२।

उदंक-उदङ्को-येनोदकमुदच्यते। जं० प्र० १०१। जीवा० २६६।

उदंचनम्-अरघट्टघटीनिवहादिभिरुत्सेचनम्। उत्त० ५९९। पिण्ड० १५३।

उदंत-सरीरवट्टमाणी, वत्ता। नि० चू० तृ० १३३ अ। उदन्तः-वृत्तान्तः। आव० ६९२।

उदंतवाहगो-उदन्तवाहकः, वृत्तान्तवाहकः। आव० ५३६।

उदंतवाहतो-उदन्तवाहकः-दूतः। उत्त० १०८।

उदइए-उदयः-कर्म्मणां विपाकः स एवौदयिकः-क्रियामात्रं, उदयेन निष्पन्नः औदयिकः। भग० ६४९, ७२२। औदयिकः-ज्ञानावरणादीनामष्टानां प्रकृतीनामात्मीयात्मीयस्वरूपेण विपाकतोऽनुभवनमुदयः स एव, यथोक्तेन वोदयेन निष्पन्नः। अनु० ११४।

उदई-उदयः-अनुक्रमोदितस्यैवेति। भग० ५१२। अनुक्रमगतानामुदयः। भग० ९७३।

उदउल्ल-उदकार्द्रः, यद् बिन्दुसहितं भाजनादि गलद्बिन्दुरिति। ओघ० १७०। स्पष्टोपलभ्यमानजलसंसर्गं, अप्का-

Jain Education International 2010_05　For Private & Personal Use Only　www.jainelibrary.org

यम्रक्षितचतुर्थभेदः। पिण्ड० १४१। उदकेनार्द्रः। अनु० १६०। गलद्बिन्दुः। आचा० ३४६, ३७९।

उदउल्लादि–उदकार्द्रादि। आव० ५२।

उदए–पर्वगवनस्पतिविशेषः। प्रज्ञा० ३३। उदयः। ओघ० ११३। उदकः–अन्ययूथिकः। भग० ३२३। पेढालपुत्रो निर्ग्रन्थः। सूत्र० ४०९। षष्ठ आजीविकोपासकः। भग० ३६९। जलरुहवनस्पतिविशेषः। प्रज्ञा० ३१, ३३। जम्बूद्वीपभरते आगामिसप्तमतीर्थंकरः। सम० १५३। तृतीयतीर्थकृत्पूर्वभवनाम। सम० १५४। उदयः–जीवगतो लेश्यादिपरिणामः, फलप्रदानाभिमुख्यलक्षणं कर्म। उत्त० ३५। उदयः–विपाकवेदनानुभवरूपः। पिण्ड० ४१। उदकः। प्रश्न० २२। निर्ग्रन्थविशेषः। सूत्र० ४०७।

उदचरा–उदकचराः–उदके चरन्तीति उदकचराः–पूतरकच्छेदनकलोड्डणकत्रसा मत्स्यकच्छपादयः। आचा० २३८।

उदकं–जलरुहविशेषः। जीवा० २६। जलरुहभेदः। आचा० ५७।

उदकगृहम्–उदकभवनम्। आचा० ३४१, २३८।

उदकप्रतिष्ठापनमात्रक–उपकरणधावनोदकप्रक्षेपस्थानम्। आचा० ३४१।

उदकरजः–उदकरेणुसमूहः। औप० ४७। जीवा० १९१।

उदकार्द्र–बिन्दुसहितं। बृ० प्र० २८२ आ।

उदग–उदकं। सूत्र० ३०७। अणंतवणप्फई। दश० चू० १२०। नि० चू० द्वि० ७९ अ। उदकम्–अनन्तवनस्पतिविशेषः। दश० २२९। नगरपरिखाजलम्। ज्ञाता० १०। जलाश्रयमात्रम्। भग० ९२। जनपदसत्त्वे पयः, उदकादिपर्यायः। दश० २०८। पूत्युदकोपमानतः खल्वन्नपानमुपभोक्तव्यम्। साध्वोरुपमानम्। दश० १९। शिरापानीयम्। दश० १५३।

उदगगब्भे–उदकगर्भः–कालान्तरेण जलप्रवर्षणहेतुः। भग० १३३।

उदगजोणिया–उदकस्य योनयः–परिणामकारणभूता उदकयोनयः त एवोदकयोनिका–उदकजननस्वभावा। ठाणा० १४२।

उदगणाए–षष्ठाङ्गे द्वादशं ज्ञातम्। उत्त० ६१४। उदर्क–नगरपरिखाजलं तदेव ज्ञातं–उदाहरणं उदकज्ञातम्। ज्ञाता० १०। सम० ३६। ज्ञातायां द्वादशमध्ययनम्। आव० ६५३।

उदगतीरं–उदगागारातो जत्थ णिज्जति उदगं तं उदगतीरं, दूरंपि णज्जति उदगं तम्हा ण होइ तं उदगतीरं, तो जत्तियं णदीपूरेण अक्कमति तं उदगतीरं, अहवा जहिं ठिएहिं जलं दीसति अहवा णदीए तडीए उदगतीरं, अहवा जहिं ठितो जलट्ठिएण सिंचति सिंधुगंगादिणा तं जलतीरं, अहवा जावतियं विविओ फुसंति अहवा जावतितं जलेण फुडं तं उदगतीरं। नि० चू० तृ० १६ आ।

उदगत्ताभा–गौतमगोत्रोत्तरभेदः। ठाणा० ३९०।

उदगदोणी–उदगदोणी वा–अरहट्टस्स भवति जीए उवरिं घडीओ पाणियं पाडेंति। अहवा घरंगणए कट्ठमयी अप्पोदएसु देसेसु कीरइ तत्थ मणुस्सा ण्हावेंति। दश० चू० ११०। जलभाजनं यत्र तप्तं लोहं शीतलीकरणाय क्षिप्यते। भग० ६९७। उदकद्रोणिः–अरहट्टजलधारिका। दश० २१८ आ।

उदगपउरो–उदकप्रचुरः–देशविशेषः सिन्धुविषयवत्। बृ० तृ० १३८ आ।

उदगपडणं–उदकपतनम्। आव० २७३।

उदगबिंदु–उदकबिन्दुः। अनु० १६१।

उदगभाविया–जा उदके छूढपुव्वा सा। नि० चू० प्र० ४६ अ।

उदगभासो – उदकभासः – शिवकभुजगेन्द्रस्यावासपर्वतः। जीवा० ३११।

उदगमच्छ–उदकमत्स्यः–इन्द्रधनुःखण्डम्। भग० १९६। इन्द्रधनुषः खण्डम्। जीवा० २८३। इन्द्रधनुःखण्डानि। अनु० १२१।

उदगमाला – उदकमाला – समपानीयोपरिभूता माला। जीवा० ३२४। उदकशिखा, वेलेत्यर्थः। ठाणा० ४८०।

उदगवलणी। नि० चू० प्र० २४ अ।

उदगवारगसमाणं–उदकवारकसमानं–लघुपानीयघटसमानम्। जीवा० १२२।

उदगावत्तं–उदकावर्त्तोदकबिन्दोर्मध्ये अवगाह्य तिष्ठेदित्यर्थः। अनु० १६१।

उदग्ग–उदग्रः–उन्नतपर्यवसानेन उत्तरोत्तरं वृद्धिमान्। भग० १२५। उच्चं, समुच्छ्रितशिर इत्यर्थः, प्रधानः, बहिः। जीवा०

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३४३। उदग्रः-उच्चः। ज्ञाता० ६६। उदग्रः-तीव्रः। ज्ञाता० ७६।

उदड्ढे-रत्नप्रभायां अपक्रान्तमहानरकः। ठाणा० ३६५।

उदतण-उदयणं-उदयगामि, प्रवर्द्धमानं। ठाणा० ३४२।

उदत्त-तुदत्रम् भूमिस्फोटनशस्त्रविशेषः। आव० ८२९। उदात्तः-उन्नतभाववान्। भग० १२५।

उदधि-जलनिचयः। ठाणा० १७७।

उदधिघनं। जीवा० १९१।

उदपानं-कूपः। बृ० प्र० १८३ अ।

उदप्पील - उदकोत्पीलः-तडागादिषु जलसमूहः। भग० १९९।

उदब्भेया-उदकोद्भेदः-गिरितटादिभ्यो जलोद्भवः। भग० १९९।

उदय-उदीरणावलिकागततत्पुद्गलोद्भूतसामर्थ्यता। आव० ७७। आयामः। भग० १८७। पताका। भग० १८७। पेढालपुत्रः। पार्श्वजिनशिष्यः। ठाणा० ४५७। भाविया। नि० चू० प्र० २६४ आ।

उदयट्ठी-उदयार्थी, लाभार्थी। सूत्र० ३९४।

उदयण-उदयनः-वीणावत्सराजः। उत्त० १४२।

उदयणकुमारं-उदयनकुमारं, मृगावतीपुत्रः। आव० ६७।

उदयणमाया- उदयनमाता, भावप्रतिक्रमणदृष्टान्ते मृगावती आर्या। आव० ४८५।

उदयनिप्पन्ने-औदयिकभावस्य द्वितीयभेदः। भग० ७२२।

उदयपहो-उदकपथः, लोकानां जलानयनमार्गः। आव० ६४०।

उदयभासे-वेलन्धरनागराजस्यावासः। ठाणा० २२६।

उदयवद्दलं-उदकवर्द्दलं भाविरेणुसन्तापोपशान्तये। आव० २३०।

उदयवत्तित्वं-समुदयः, समुदायो वा। प्रश्न० ६३।

उदयास्तान्तरं-तापक्षेत्रम्। जं० प्र० ४४२। प्रकाशक्षेत्रं, तापक्षेत्रम्। जं० प्र० ४५५।

उदरं। आचा० ३८।

उदरपोप्पयं-उदरामर्शनम्। आव० ६६।

उदरवलिमंसं - उदरवलिमांसं, उदरोपरि या वलयाकारा मांसरेखा तस्या मांसं। आव० ६७८।

उदरिं-वातपित्तादिसमुत्थमष्टधोदरं तदस्यास्तीत्युदरी। आचा० २३५। उदरी-जलोदरी। प्रश्न० १६१।

उदवाहा-उदकवाहाः-अपकृष्टान्यल्पान्युदकवहनानि। भग० १९९।

उदसि-उदस्वित्। नि० चू० प्र० ६ अ।

उदहिकुमारा- उदधिकुमाराः-वरुणस्याज्ञोपपातवचननिर्देशवर्त्तिनो देवाः। भग० १९९। भुवनपतिदेवविशेषः। प्रज्ञा० ६९।

उदहिकुमारीओ - उदधिकुमार्यः - वरुणस्याज्ञोपपातवचननिर्देशवर्तिन्यो देव्यः। भग० १९९।

उदहिनामाणं - उदधिनाम्नाम्-आर्यसमुद्राणाम्। आचा० २६२।

उदहीसरिसनामाणं - उदधिः-समुद्रस्तेन सदृक्-सदृशं नाम-अभिधानमेषामुदधिसदृग्नामानि-सागरोपमाणि। उत्त० ६४७।

उदाइ-उदायी-कूणिकराज्ञो हस्ती। भग० ३१७। नृपविशेषः। आव० ६८७। भग० ६७३, ६७५।

उदाइज्जा। भग० १८३।

उदाइमारक-साधुवेषधारकः। नि० चू० प्र० २९३ आ।

उदाइमारय - श्रमणवेषधारको विनयरत्नमुनिः। नि० चू० तृ० २३ आ।

उदाइयाए-असिवं उदाइयाए अभिद्दुतं। नि० चू० प्र० ९७ अ।

उदात्तं-उदात्तत्वं-उच्चैर्वृत्तिता। द्वितीयो वचनातिशयः। सम० ६३।

उदायण - वीतभयराजा। भग० ६१८। नि० चू० द्वि० १४५ अ। शतानीकराजपुत्रः। विपा० ६८। भग० ५५६। अन्तिमराजर्षिः। ठाणा० ४३०। उदायनः-विगतिद्वारे वीतभयनगराधिपतिः। आव० ५३७। आव० २९८। सौवीरराजवृषभो राजा। उत्त० ४४८। प्रद्योतराज्ये गान्धर्वविद्याप्रधानः। आव० ६७३। विदर्भकनगराधिपतिः। प्रश्न० ८९। अन्तिमराजर्षिः। बृ० प्र० १६६ अ।

उदायितकुमारो - उदायिकुमारः-पद्मावतीपुत्रः। आव० ६८३।

उदायिनृपः - यः कृत्रिमसाधुभिर्मारितः। सूत्र० २५०। आव० ५२९। सूत्र० ३६५। आचा० ९।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उदायिनृपमारक – श्रमणवेषधारको मुनिः । बृ० प्र० २०४ अ । विशे० १२५५ । ठाणा० १८५ ।

उदायिमारगो – उदायिमारकः – श्रमणवेषधारको मुनिः । नि० चू० द्वि० ३९ अ, ४१ अ ।

उदायी–कूणिकराजस्य हस्तिराजः । भग० ७२० । कोणिकपुत्रः । ठाणा० ४५६ ।

उदार–उदारं–उद्भटम् । जं० प्र० २०३ । उदारत्वं–अभिधेयार्थस्यातुच्छत्वं गुम्फगुणविशेषो वा । द्वाविंशतितमो वचनातिशयः । सम० ६३ । शोभनं । ठाणा० २३३ । प्रधानम् । प्रज्ञा० २६९ । ठाणा० २९५ । तीर्थकरगणधरशरीरापेक्षया शेषशरीरेभ्यः प्रधानं, सातिरेकयोजनसहस्रमानत्वाच्छेषशरीरेभ्यो महाप्रमाणं वा । अनु० १९६ । औदार्यवान् । भग० १२५ ।

उदाला–उदाराः–महान्तः । उत्त० ४१९ ।

उदाहड–भणिया । नि० चू० तृ० ४९ आ ।

उदाहरण–चरितकल्पितभेदम् । आव० ५९७ । कथनम् । उत्त० ३२२ । उदाहरणम्–साध्यसाधनान्वयव्यतिरेकप्रदर्शनमुदाहरणं, दृष्टान्तः । दश० ३३ ।

उदाहरे–उदाहरेत्–उदाहृतवान् । उत्त० २४१ ।

उदाहु – उताहो निपातो विकल्पार्थः । भग० १७ । भग० २३७ । उक्तवान् । आचा० १२८ । आहोश्वित् । उपा० ३८ ।

उदिए–उदितः–उदयं प्राप्तः, स्थित इत्यर्थः । जं० प्र० ५२८ ।

उदिओदए–उदितोदयः, कायोत्सर्गदृष्टान्ते राजा । आव० ७९९ । पारिणामिकीबुद्धौ पुरिमतालपुरे राजा । आव० ४३० । उदितोदितः–पुरिमतालनगराधिपतिः । विपा० ५८ । श्रीकान्तापतिः । नंदी १६६ ।

उदिक्खंते–प्रतीक्ष्यमाणः । बृ० तृ० ११६ आ ।

उदिण्णं–उदीर्णम्–पीडितम् । आव० ८६३ । विपाकोदयमागतम् । प्रज्ञा० ४०३ ।

उदिन्नं–उदीर्णम्–स्वत उदीरणाकरणेन वोदितम् । भग० ९० ।

उदिन्नमोह–उदीर्णमोहः–उत्कटवेदमोहनीयः । भग० २२३ ।

उदीणपाइणं–उदगेव उदीचीनं प्रागेव प्राचीनं उदीचीनं च तदुदीच्या आसन्नत्वात् प्राचीनं च तत्प्राच्याः प्रत्यासन्नत्वाद् उदीचीनप्राचीनम्–दिगन्तरं क्षेत्रदिगपेक्षया पूर्वोत्तरदिगित्यर्थः । भग० २०७ । उदीचीनं च तदुदीच्या आसन्नत्वात् प्राचीनं च प्राच्याः प्रत्यासन्नत्वादिति । जं० प्र० ४८० ।

उदीणवाए–यः उदीच्या दिशः समागच्छति वातः स उदीचीनवातः । जीवा० २९ । यः उदीच्या दिशः समागच्छति वातः स उदीचीनवातः । प्रज्ञा० ३० ।

उदीर–उदीरिंसु ३ उदयप्राप्ते दलिके अनुदितांस्तान् आकृष्य करणेन वेदितवन्तः ३ । ठाणा० २८९ । उदीरितवन्तः–अध्यवसायवशेनानुदीर्णोदयप्रवेशनतः । ठाणा० १७९ ।

उदीरइ–उदीरयति–प्राबल्येन प्रेरयति, पदार्थान्तरं प्रतिपादयति वा । भग० १८३ ।

उदीरण – अनुदयप्राप्तस्य करणेनाकृष्योदये प्रक्षेपणमिति । ठाणा० १०१, १९५ । उदीरणम्–अनुदितस्य करणविशेषादुदयप्रवेशनम् । भग० ५३ । उदीरणाकरणवशतः कर्मपुद्गलानामनुदयप्राप्तानामुदयावलिकायां प्रवेशनम् । प्रज्ञा० २९२ । करणेनाकृष्य दलिकस्योदये दानम् । ठाणा० ४१७ ।

उदीरणा–अप्राप्तसमये उदयप्रापणं सैव उदीरणा । जं० प्र० १६८ । अप्राप्तकालफलानां कर्मणामुदये प्रवेशनम् । ठाणा० २२१ ।

उदीरणाभवियं–उदीरणाभविकम्–तत्र भविष्यतीति भवा सैव भविका, उदीरणा भविका यस्येति, उदीरणायां वा भव्यं–योग्यमुदीरणाभव्यमिति । भग० ५८ ।

उदीरिए–उदीरणम्–स्थिरस्य सतः प्रेरणम् । भग० १८ । उदीरणा–उदीरणा नाम अनुदयप्राप्तं चिरेणाऽऽगामिना कालेन यद्वेदयितव्यं कर्मदलिकं तस्य विशिष्टाध्यवसायलक्षणेन करणेनाकृष्योदये प्रक्षेपणं । भग० १५ ।

उदीरिय–उत्–प्राबल्येनेरितं–प्रेरितं उदीरितं । जीवा० १९२ ।

उदीरिया – उदीरिताः–स्वभावतोऽनुदितान् पुद्गलानुदयप्राप्ते कर्मदलिके करणविशेषेण प्रक्षिप्य यान् वेद्यते । भग० २४ । उदीरिता–उदयमुपनीता, वेदिता । भग० १८५ ।

उदीरेंत–उदीरयन्तं–वस्त्वन्तरं प्रेरयन्तम् । ठाणा० ३८५ ।

उदीरेइ–उदीरयति–भणति, प्रवर्त्तयति । ठाणा० १९७ ।

उदुम्बर–द्वितीयं महाकुष्ठम् । प्रश्न० १५१ । महाकुष्ठविशेषः । आचा० २३५ । कर्मविपाकस्याष्टममध्ययनम् । ठाणा० ५०८ । खाद्यवृक्षविशेषः । आव० ८२८ ।

उदुम्बरदत्त–सागरदत्तसार्थवाहसुतः । ठाणा० ५०८ ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उदुरुसेज्ञा-रुष्येत् । नि० चू० द्वि० ४९ आ ।

उदुसुहं-ऋतुसुखं, ऋतुशुभं वा-कालोचितम् । प्रश्न० १४१ ।

उदू,उडू-द्विमासप्रमाणकालविशेष ऋतुः । ठाणा० ३६९ ।

उदूखल-काष्ठनिमित्तं खण्डनोपयोगि शस्त्रम् । भग० २१३ । आचा० ३४४ ।

उदूरूढो-पडिनियत्तो । नि० चू० प्र० १८४ अ ।

उद्दो-उद्रः-म्लेच्छविशेषः । चिलातदेशनिवासी । प्रश्न० १४ ।

उद्गमनप्रविभक्ति-चन्द्रसूर्ययोरुद्गमनं-उदयनं तत्प्रविभक्ती-रचना तदभिनयगर्भं यथा उदये सूर्यचन्द्रयोर्मण्डलमरुणं प्राच्यां चारुणः प्रकाशस्तथा यत्राभिनीयते तदुद्गमनप्रविभक्ति । षष्ठो नाट्यविधिः । जं० प्र० ४१६ ।

उद्गीर्ण-वान्तम् । उत्त० ३३९ ।

उद्ग्राहितं-मेलितम् । नंदी १५९ ।

उद्घाटितः-प्रकाशितः, प्रकटितः । ठाणा० ४१२ ।

उद्घाटितज्ञः-प्रथमो विनेयः । प्रज्ञा० ४२५ ।

उद्धेट्टका-उड्डुचका । बृ० द्वि० ६० आ ।

उद्दंडगा-ऊर्ध्वकृतदण्डाः ये सञ्चरन्ति । भग० ५१९ ।

उद्दंडपुर-नगरनाम । भग० ६७५ ।

उद्दंडा-ऊर्ध्वकृतदण्डा ये संचरन्ति । निरय० २५ ।

उद्दंडुको-जनोपहास्यः । बृ० द्वि० २४२ अ ।

उद्दंस-त्रीन्द्रियजीवभेदः । उत्त० ६९५ ।

उद्दंसगा-त्रीन्द्रियविशेषः । प्रज्ञा० ४२ ।

उद्दंसे-उद्दंशः । आव० २१७ ।

उदए मारणंतिए-उदये मारणान्तिके वेदनोदये मारणान्तिकेऽपि न क्षोभः कार्यः । योगसंग्रहे एकोनत्रिंशत्तमो योगः । आव० ६६४ ।

उद्दद्दरं-सुभिक्खं । नि० चू० प्र० ८९ अ । सुभिक्षं । नि० चू० प्र० ३१५ अ । ऊर्ध्वदरं ते दरा ऊर्ध्वं यत्र पूर्यन्ते तदूर्ध्वदरम् । बृ० द्वि० १०० अ । दुविधा दरा-वणदरा य पोट्टदरा य, ते ऊढं पूरेंति जत्थ तं उद्दद्दरं-सुभिक्खं । नि० चू० प्र० २२६ अ ।

उद्दवणं-उत्थानं-नाशः । बृ० द्वि० ७९ अ ।

उद्दवण - अपद्रावणम्-अतिपातविवर्जिता पीडा । पिण्ड० ३७ ।

उद्दवणकर - मारणान्तिकवेदनाकारि धनहरणाद्युपद्रवकारि वा । औप० ४२ ।

उद्दवणया-कूटपाशधारणता । भग० ९३ । विज्ञाए सप्पो अन्यत्र नीयते । नि० चू० प्र० ३३५ अ ।

उद्दवणा-उपद्रवणमपद्रवणं वा । प्राणवधस्य नवमः पर्यायः । प्रश्न० ५ ।

उद्दवातितगणे-गणविशेषः । ठाणा० ४५१ ।

उद्दविया-अवद्राविताः - उत्त्रासिताः । आव० ५७४ । मारिताः । भग० ७६६ ।

उद्दवेंति - अपद्रावयन्ति-जीवितात् व्यपरोपयन्ति । प्रज्ञा० ५९३ ।

उद्दवेउं-अपद्राव्य । उत्त० २०७ ।

उद्दवेह-विनाशयत । उपा० ४९ ।

उद्दवेहिइ - अपद्रावयिष्यति-उपद्रवान् करिष्यति । भग० ६९१ ।

उद्दाइंता-शोभमाना । ज्ञाता० २७ ।

उद्दाइ-उद्दाति-रचयति । भग० ९३ । उद्याति-जलस्योपरि वर्त्तते । भग० १८४ । अपद्रवति-म्रियते । भग० १११ ।

उद्दाइआ-उपद्राविका, उपद्रवकारिणी । ओघ० १७ । उपद्रोत्री । ओघ० १५ ।

उद्दाइत्ता-अपद्दत्य-मृत्वा । भग० १११ । अपद्राय-मृत्वा । ठाणा० ४७१ । अवद्राय-मृत्वा । जीवा० २६३ । जं० प्र० ४२५ ।

उद्दाणं-उद्दाणं, वैधव्यम् । आव० ४३७ ।

उद्दाणगं-मृतकम् । आव० ७०० ।

उद्दाणभत्तारा-अपद्राणभर्तृका, भत्तारेण परिठविता । नि० चू० प्र० १०९ आ ।

उद्दाणि - उद्राः-सिन्धुविषये मत्स्यास्तत्सूक्ष्मचर्मनिष्पन्नानि उद्राणि । आचा० ३९४ ।

उद्दाम - उद्दामः - चरणनिपातजीवोपमर्दनिरपेक्षत्वाद् द्रुतचारी । अनु० २६ ।

उद्दामिया-उद्दामिता-अपनीतबन्धना, प्रलम्बिता । विपा० ४६ ।

उद्दायंति-अपद्रान्ति-प्राणैर्विमुच्यन्ते । आचा० २१७ ।

उद्दायणं-वीतभयणगरे राया । नि० चू० प्र० ३४६ आ ।

उद्दाल - अवदालः, विदलनं, पादादिन्यासे अधोगमनम् । विदलनम् । जीवा० २३२ । राज० ९३ ।

उद्दालक-एकोरुकद्वीपे वृक्षविशेषः । जीवा० १४५ ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उद्दाला-उद्दालाः, द्रुमविशेषः। जं० प्र० ९८।

उद्दालिओ-उद्दालितः-बलाद्गृहीतः। आव० ७१७। अपहृतः। उत्त० ३०१।

उद्दावणया-उत्त्रासनम्। भग० १८४।

उद्दावो - उद्दावः-स्थानान्तरेष्वथाप्यसङ्क्रामितः। जीवा० ३५५।

उद्दाह-प्रकृष्टो दाहः। ठाणा० ५०८।

उद्दिक्खाहि-प्रतीक्षस्व। नि० चू० प्र० ३२२ अ।

उद्दिट्ठ-यावदर्थिकाः पाखण्डिनः श्रमणान्-साधून् उद्दिश्य दुर्भिक्षापगमादौ यद्भिक्षावितरणं तदौद्देशिकमुद्दिष्टम्। प्रश्न० १५३। उद्दिष्टम्-स्वार्थमेव निष्पन्नमशनादिकं भिक्षाचराणां दानाय यत् पृथक्कल्पितं तत्। पिण्ड० ७७। उद्दिट्ठप्ररूवेण ओभासंति। नि० चू० द्वि० १६३ अ। भासति। नि० चू० द्वि० १६३ आ। वस्त्रैषणायाः प्रथमो भेदः। आचा० २७७। उद्दिष्टा-अमावास्या। भग० १३५।

उद्दिट्ठआदेसं-समणा निग्गंथ सक्क तावसा गेरुय आजीव एतेसु उद्दिट्ठआदेसं भण्णति। नि० चू० प्र० २३० आ।

उद्दिट्ठभत्तं-उद्दिष्टभक्तं-दानाय परिकल्पितं यद्भक्तपानादिकं तत्। सूत्र० ३९९।

उद्दिट्ठभत्तपरिण्णाए - उद्दिष्टं-तमेव श्रावकमुद्दिश्य कृतं भक्तं-ओदनादि उद्दिष्टभक्तं तत्परिज्ञातं येनासावुद्दिष्टभक्तपरिज्ञातः, श्रमणोपासकस्य दशमी प्रतिमा। सम० १९।

उद्दिट्ठवज्जए-उद्दिष्टवर्जकः, श्रावकस्य दशमी प्रतिज्ञा। आव० ६४६।

उद्दिट्ठसमादेसं-णिग्गंथा-साहू। नि० चू० प्र० २३० आ।

उद्दिट्ठा-उद्दिष्टा-यस्याः स्थापनायाः उत्कृष्टा आरोपणा ज्ञातुमिष्टा सा ईप्सिता। व्य० प्र० ७५ आ। अमावास्या। जीवा० ३०५। ठाणा० २३७। राज० १२३। उपदिष्टा। औप० १००। विपा० ९३। कथिताः। उत्त० २२९।

उद्दिट्ठाओ-उद्दिष्टाः-सामान्यतोऽभिहिताः। ठाणा० ३०८।

उद्दिट्ठो-उद्दिष्टः-प्रतिपादितः। सूत्र० १७६।

उद्दित्ता-प्रज्वालितः। बृ० द्वि० ६१ आ।

उद्दिष्टं। बृ० प्र० ८३ अ।

उद्दिसति-उवसंपज्जते इत्यर्थः। नि० चू० प्र० २९१ आ।

उद्दिसियवत्थं-गुरुसमक्षं उद्दिष्टं-प्रतिज्ञातं वस्त्रं उद्दिष्टवस्त्रम्। बृ० प्र० ९७ आ।

उद्दिस्स-उद्दिश्य, उद्दिशति। आचा० ३२५।

उद्दिस्सपविभत्तगती-उद्दिश्यप्रविभक्तगतिः-प्रविभक्तं प्रतिनियतमाचार्यादिकमुद्दिश्य यत्तत्पार्श्वे गच्छति सा। विहायोगतेस्त्रयोदशो भेदः। प्रज्ञा० ३२७।

उद्दिस्सामि-वाचयामि। विशे० १२९५।

उद्दूढं-मुषितम्, (देशी०)। बृ० द्वि० १०५ अ। नि० चू० प्र० २२७ अ।

उद्दूढसेस-जं लुंटागेहिं अप्पणट्ठा बाहिं णिणीतं तं भोत्तुं सेसं छड्डियं। नि० चू० द्वि० २० आ।

उद्देस-उद्देशः-अध्ययनैकदेशभूतम्। दश० ७। उद्देशनं उद्देशः-वस्तुनः सामान्याभिधानं। विशे० ६३९। वाचनासूत्रप्रदानम्। व्य० प्र० २६ अ। उद्दिश्यते इति उपदेशः, सदसत्कर्त्तव्यादेशः। नारकादिव्यपदेशः उच्चावचगोत्रादिव्यपदेशो वा। आचा० १२४। गुरुवचनविशेषः। अनु० ४। यावदर्थिकादिप्रविधानम्। पिण्ड० ३५। उद्देशनमुद्देशः-सामान्याभिधानरूपः। अनु० २५७। उद्देशकः-द्वीपसमुद्रोद्देशकावयवविशेषः। भग० ७६९। अध्ययनार्थदेशाभिधायी अध्ययनविभागः। भग० ५। सामान्याभिधानमध्ययनम्। आव० १०४। गुरोः सामान्याभिधायि वचनम्। उत्त० ७३। उद्देसो अभिनवस्स। नि० चू० प्र० २२३आ। वाचयामीति गुरुप्रतिज्ञारूपः उद्देशः। विशे० १२९६। अविसेसिओ उद्देसो। नि० चू० द्वि० १०८ अ। क्षेत्रकालविभागः। बृ० द्वि० २६९ अ।

उद्देसग-उद्देशकः-त्रीन्द्रियजन्तुविशेषः। जीवा० ३२।

उद्देसणंतेवासी-उद्देशनान्तेवासी। ठाणा० २४०।

उद्देसणकाला-उद्देशनकालाः-उद्देशावसराः श्रुतोपचाररूपाः। सम० ४६।

उद्देसणायरिय -उद्देशनाचार्यः, आचार्यविशेषः। दश० ३१।

उद्देसणायरिए-उद्देशनम्-अङ्गादेः पठनेऽधिकारित्वकरणं तत्र तेन वाऽऽचार्यः-गुरुः उद्देशनाचार्यः। ठाणा० २४०।

उद्देसिअ - उद्दिश्य कृतम् औद्देशिकम्-उद्दिष्टकृतकर्मादिभेदम्। दश० १७४।

उद्देसिअचरिमतिग-उद्देशचरमत्रितयम्, औद्देशिकस्य पाखण्डश्रमणनिर्ग्रन्थविषयम्। दश० १६२।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उद्देसियं-उद्दिस्सं कज्जइ तं उद्देसियं, साधुनिमित्तं आरंभो। दश० चू० ५० । इह यावन्तः केचन भिक्षाचराः समागच्छन्ति तावतः सर्वान् उद्दिश्य यत् क्रियते तत्। बृ० प्र० ८३ अ। औद्देशिकं-विभागौद्देशिकप्रथमो भेदः। इह यत् उद्दिष्टं कृतं कर्म वा यावन्तः केऽपि भिक्षाचराः समागमिष्यन्ति पाखण्डिनो गृहस्था वा तेभ्यः सर्वेभ्योऽपि दातव्यमिति सङ्कल्पितं भवति तदा तत्। पिण्ड० ७९। शबलस्य षष्ठो भेदः। सम० ३९। औद्देशिकं-यावदर्थिकादिप्रणिधानेन निर्वृत्तं, द्वितीय उद्गमदोषः। पिण्ड० ३४। औद्देशिकं-अर्थिनः पाखण्डिनः श्रमणान्निर्ग्रन्थान् वोद्दिश्य दुर्भिक्षात्ययादौ यद्भक्तं वितीर्यते तत्। ठाणा० ४६६। साध्वकल्प्यमशनादि। दश० २०३। उद्दिष्टं-प्राक् सङ्कल्पितम्। आचा० ३९५।

उद्देसुद्देसं-उद्देशः-अध्ययनविषयः तस्य उद्देशः उद्देशोद्देशः आव० १०६।

उद्देहगणे-गणविशेषः। ठाणा० ४५१।

उद्देहलिका-भूमिस्फोटकविशेषः। आचा० ५७।

उद्देहिका-काष्ठनिश्रितो जीवविशेषः। आचा० ५५।

उद्देहिगा-उद्देहिकाकृतवल्मीकमृत्तिका। पिण्ड० २०।

उद्देहिया-उद्देहिकाः, जन्तुविशेषः। ओघ० १२६। त्रीन्द्रियजीवविशेषः। उत्त० ६९५। त्रीन्द्रियजन्तुविशेषः। जीवा० ३२। प्रज्ञा० ४२।

उद्दोहक-उद्दोहकः-घातकः। उद्दहको वा-अटव्यादिदाहकः। प्रश्न० ४६।

उद्धंसणं-निर्भर्त्सनम्। बृ० तृ० ९० अ।

उद्धंसणा - उद्धंसना, उद्धुलना-आक्रोशः। ओघ० ४५। प्रवचनविषया हीला। बृ० द्वि० १८० आ। दुष्कुलीनेत्यादिः कुलाद्यभिमानपातनार्थः। ज्ञाता० २००।

उद्धंसणाओ-अवहेलनाः। आव० ६५।

उद्धंसणाहिं-दुष्कुलीनेत्यादिभिः कुलाद्यभिमानपातनार्थैर्वचनैः। भग० ६८३।

उद्धंसणो-वधः। ओघ० २१५।

उद्धंसिया-खरंटियाणि। नि० चू० प्र० २१२ आ। उद्धर्षिता-खरंटिता। बृ० द्वि० २१७ अ। ओभासिया। नि० चू० प्र० १९५ अ।

उद्ध-ऊर्ध्वं। जं० प्र० ४६२। नंदी १५४।

उद्धघणभवण -ऊर्ध्वघनभवनानि-उच्चाविरलगेहानि। जं० प्र० १४४।

उद्धट्टा-उवउट्टा-घ्राताः। नि० चू० प्र० १५२ अ।

उद्धट्टु-उद्धृत्य। आचा० ३७७।

उद्धट्ठाणं-कायोत्सर्गम्। नि० चू० प्र० ११३ आ।

उद्धड-उद्धृता, स्थालादौ स्वयोगेन भोजनजातमुद्धृतम्। तृतीया पिण्डैषणा। आव० ५७२। जत्थ उवक्खडियं भायणे ताओ उद्धरियं छप्पगादिसु एस उद्धडा। नि० चू० तृ० १२ अ।

उद्धतरेणुयं-उद्धतरेणुकं-ऊर्ध्वगतरजस्कम्। जं० प्र० १४५।

उद्धत्त-औद्धत्यम्-अहङ्कारः। उत्त० ५२६।

उद्धत्तमणहारिणो-औद्धत्यं-अहङ्कारस्तत्प्रधानं मन औद्धत्यमनस्तद्धरणशीलाः औद्धत्यमनोहारिणः - अत्यन्तशान्तचित्तवृत्तयः, यतय इत्यर्थः। उत्त० ५२६।

उद्धपुरीया - ऊर्ध्वपुरीततः-ऊर्ध्वगतान्त्राः। प्रश्न० ५६।

उद्धपूरित - ऊर्ध्वपूरितः-श्वासपूरितोर्द्ध्वकायः ऊर्ध्वो वा स्थितो धूल्या पूरितः। प्रश्न० ५६।

उद्धमंताणं-यथायोगमुद्ध्मायमानादिषु। राज० ४६।

उद्धमुइंगागार - ऊर्ध्वमृदङ्गाकारः - मल्लकसम्पुटाकारः। भग० २४९।

उद्धम्ममाणं-उत्पाट्यमानम्। प्रश्न० ५०। उत्पाद्यमानम्। प्रश्न० ६२।

उद्धरंति-उत्पाटयन्ति। ओघ० २२७।

उद्धरणं-उद्ध्रियते-उत्तरपरिकर्म क्रियते। आव० ७६४।

उद्धरुट्ठो-तीव्ररोषः रोषकाले। आव० ६३२।

उद्धरेणू - स्वतः परतो वा ऊर्ध्वाधस्तिर्यक्चलनधर्मो जालप्रविष्टसूर्यप्रभाभिव्यङ्ग्यो रेणुरूर्ध्वरेणुः। जं० प्र० ९४।

उद्धलोगवत्थव्वा - ऊर्ध्वलोकवासित्वं-समभूतलात् पञ्चशतयोजनोच्चनन्दनवनगतपञ्चशतिकाष्टकूटनिवासित्वम्। जं० प्र० ३८८।

उद्धसियरोमकूवो-उद्धूषितरोमकूपः। आव० ५१३।

उद्धाइओ-उद्धावितः। आव० २०६, १९२। अवधावितः। आव० ५१३।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उद्धाइया-उद्धाविताः । उत्त० १०० । वेगेन प्रसृताः । उत्त० ३६४ ।

उद्धाईया-उद्धाविताः सन्नद्धगताः । उत्त० १७९ ।

उद्धायमाणो-उत्तिष्ठन् । प्रश्न० ६२ । उद्धावमानः-प्रवर्द्धमानः । ज्ञाता० ७० ।

उद्धारपलिओवमे - तत्र वक्ष्यमाणस्वरूपवालाग्राणां तत्खण्डानां वा तदुद्धारेण द्वीपसमुद्राणां वा प्रतिसमयमुद्धरणं-अपोद्धरणमपहरणमुद्धारः तद्विषयं तत्प्रधानं वा पल्योपमम्-उद्धारपल्योपमम् । अनु० १८० ।

उद्धावणं-कार्यस्य निष्पादनम् । व्य० प्र० १७२ अ ।

उद्धिअ-उद्धृतः-देशान्निर्वासितः । जं० प्र० २७७ ।

उद्धिय-उद्धृता-निष्काशनम् । ठाणा० ४६३ ।

उद्धी-उद्धिः । जं० प्र० ४५४ । 'मेलितु पण्हियाओ चलणे वित्थारिऊण बाहिरओ । ठाउस्सग्गं एसो बाहिरउद्धी मुणेयव्वो ॥ अंगुट्ठे मेलविउं वित्थारिय पण्हियाओ बाहिं तु । ठाउस्सग्गं एसो भणिओ अब्भिंतरुद्धित्ति ॥' आव० ७९८ ।

उद्धीमुहकलंबुआपुप्फसंठिता - ऊर्ध्वमुखकलम्बुकपुष्पसंस्थिता-ऊर्ध्वमुखस्य कलम्बुकापुष्पस्येव-नालिकापुष्पस्येव संस्थितं-संस्थानं यस्याः सा । सूर्य० ६७ ।

उद्धुअ - इतस्ततो विप्रसृतः । जं० प्र० ५१ । जीवा० १६०, २०६ ।

उद्धुताए-उद्धुतया-दर्पातिशयेन । भग० ५२७ ।

उद्धुममाणं-उत्पाद्यमानम् । औप० ४७ ।

उद्धुय-उद्धुतः-उद्भूतः । औप० ५ । इतस्ततो विप्रसृतः । सूर्य० २९३ । उद्भूतः । भग० ५४० । उद्भूता-वायुना । ज्ञाता० ८० ।

उद्धुयाए - उद्धुतया - वस्त्रादीनामुद्धूतत्वेन, उद्धतया वा सदर्प्पया । भग० १६७ ।

उद्धुव्वमाणं-उत्पाद्यमानम् । औप० ४७ ।

उद्धुसियं-रोमाञ्चितम् । उद्धुषितम् । नि० चू० प्र० ३१५ आ ।

उद्धूय-उद्धूतः । आव० ५२० ।

उद्धूलिता-सरकृता । नि० चू० प्र० ३२४ आ ।

उद्भिज्जत्वं-सम्मूर्च्छजत्वम् । ठाणा० ११४ ।

उद्भामक-उद्यतविहारी । व्य० प्र० १६८ अ ।

उद्भामकभिक्षाचर्या - बहिर्ग्रामेषु भिक्षार्थं पर्यटनम् । बृ० प्र० २०६ आ ।

उद्यतकं-उच्छिन्नम् । प्रश्न० १५४ । पामिच्चं, भिक्षादोषः । आचा० ३२९ ।

उद्यतविहारेण मासकल्पादिना । उत्त० ५८७ ।

उद्यानि-प्रतिश्रोतोगामिनी सा । व्य० प्र० २५ आ ।

उद्युक्तः-परायणः । आव० ५८७ ।

उद्राः-सिन्धुविषये मत्स्यास्तत्सूक्ष्मचर्मनिष्पन्नानि । आचा० ३९४ ।

उद्राणि-सिन्धुविषये मत्स्यास्तत्सूक्ष्मचर्मनिष्पन्नानि । आचा० ३९४ ।

उद्वर्त्तनं-निष्क्रमणम् । आचा० ६९ । स्थित्यादेर्वृद्धिकरणस्वरूपम् । भग० २५ ।

उद्वर्त्तनकरणं-करणविशेषः । भग० २४, ९० ।

उद्वर्त्य-निष्क्रम्य । आव० १७७ ।

उद्वसं-शून्यम् । उत्त० १०९ ।

उद्वसितगृहं-शून्यागारम् । उत्त० ६६५ ।

उद्वालयन्-आलोडयन् । दश० १८ ।

उन्न-और्णिकः । ठाणा० ३३८ ।

उन्नए-उन्नतः । सम० ७१ ।

उन्नतमणे-उन्नतमणाः-प्रकृत्या औदार्यादियुक्तमनाः । ठाणा० १८३ ।

उन्नतरूवे-संस्थानावयवादिसौन्दर्याद् उन्नतरूपः । ठाणा० १८३ ।

उन्नतावत्ते-उन्नतः-उच्छ्रितः स चासावावर्त्तश्चेति उन्नतावर्त्तः । ठाणा० २८८ ।

उन्नय-उन्नतं-अङ्गुलिपर्वाणि । ओघ० १७१ । गुणवन्ति, उन्नानि च । ज्ञाता० ३ ।

उन्नयनं-शृङ्गारविशेषः । जं० प्र० ११६ ।

उन्नयमाणे-उन्नतमानः, उन्नतो मानोऽस्येत्युन्नतमानः, उन्नतं वाऽऽत्मानं मन्यत इति । आचा० २१५ ।

उन्नाडीओ । नि० चू० प्र० ११२ अ ।

उन्नात-महाविदेहे नगरविशेषः । निरय० ४२ ।

उन्नामओ-ऊर्णामयः । आव० ४१८ ।

उन्नामिज्जंते-उन्नाम्यते ऊर्ध्वमुक्षिप्यते । जीवा० ३०७ ।

Jain Education International 2010_05   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

उन्नामिज्जइ(ए)-उन्नामितः-उत्क्षिप्तः, प्रसिद्धिं गत इति-यावत्। अनु० १४३।

उन्निद्रीकृतं-बोधितम्। जीवा० २७१।

उन्निय-और्णिकम्। ठाणा० ३३०।

उन्मग्नजला-नदीविशेषः। ठाणा० ७१।

उन्माथितः। आव० १५६।

उपकारिका - राजधानीस्वामिसत्कप्रासादावतंसकादीनां पीठिका। जीवा० २२२।

उपकार्योपकारिका - राज्ञामुपकार्योपकारिका। जं० प्र० ३२१। जीवा० २२२।

उपगतश्लाघं - उपगतश्लाघत्वं-उक्तगुणयोगात्प्राप्तश्लाघता। चतुर्विंशतितमो वचनातिशयः। सम० ६३।

उपगूहनं-परिष्वजनम्। नि० चू० प्र० २५६ आ।

उपघसरं-निर्द्धमनम्। ओघ० १६२।

उपचयद्रव्यमन्दः-यः परिस्थूरतरशरीरतया गमनादिव्यापारं कर्तुं न शक्नोति। बृ० प्र० ११३ अ।

उपचयभावमन्दः-यो बुद्धेरुपचयेन यतस्ततः कार्यं कर्तुं नोत्सहते। बृ० प्र० ११३ अ।

उपचारोपेतं-उपचारोपेतत्वं-अग्राम्यता। तृतीयो वचनातिशयः। सम० ६३।

उपचियमंसो-बल्लियसरीरो। नि० चू० प्र० २६६ आ।

उपदर्शना - जम्बूद्वीपनीलवर्षधरपर्वते नवमकूटः। ठाणा० ७२।

उपदिष्टा - महाकल्याणकसम्बन्धितया पुण्यतिथित्वेन प्रख्याता, तथा पौर्णमासीषु च तिसृष्वपि चतुर्मासकतिथिष्वित्यर्थः। सूत्र० ४०८।

उपदेशः-श्रुतस्य पर्यायः। विशे० ४१६।

उपधानकं-द्रव्योपधानम्। आव० ६६८। बिब्बोयणा। विब्बोयणा, तपनीयमय्यो गण्डोपधानकाः। जीवा० २३१।

उपनीतरागं-उपनीतरागत्वं-मालकोशादिग्रामरागयुक्तता। सप्तमो वचनातिशयः। सम० ६२।

उपपत्ति। भग० १५।

उपबृंहयन्-अनुमोदयन्। ज्ञाता० १८।

उपभोगपरिभोगः - अशनादिवाहनान्तानां बहुसावद्यानां वर्जनमल्पसावद्यानामपि परिमाणम्। तत्त्वा० ७-१६।

उपमानं - दृष्टान्तः। ओघ० १७। श्रुतातिदेशवाक्यस्य समानार्थोपलम्भने संज्ञासंज्ञिसम्बन्धज्ञानमुपमानम्। ठाणा० २६२।

उपयुक्तद्रव्यसम्यक् - यदुपयुक्तं-अभ्यवहृतं द्रव्यं मनःसमाधानाय प्रभवति तत्। आचा० १७६।

उपरतकायिकी - अप्रमत्तसंयतस्योपरतस्य सावद्ययोगेभ्यो निवृत्तस्य क्रिया। कायिकीक्रियायास्तृतीयो भेदः। आव० ६११।

उपरितनक्षुल्लकप्रतराः-तत्र तिर्यग्लोकमध्यवर्त्तिनः सर्वलघुरज्जुप्रमाणात् क्षुल्लकप्रतरादारभ्य यावदधो नव योजनशतानि तावदस्यां रत्नप्रभायां पृथिव्यां ये प्रतराः ते उपरितनक्षुल्लकप्रतराः। नंदी ११०।

उपरिमाण-उपरितना। आव० ६४७।

उपर्यविस्रम्भः। आचा० १०६।

उपलिंपंति - घटकमुखस्य तत्पिधानकस्य च गोमयादिना रन्ध्रं भञ्जन्ति। ज्ञाता० ११९।

उपवस्तुं-उपवासान् कर्त्तुम्। पिण्ड० १६७।

उपवेंतो-उपागच्छन, आगच्छन्। आव० ४३४।

उपशमनिष्पन्नः-उपशान्तक्रोध इत्यादि उदयाभावफलरूप आत्मपरिणाम इति भावना। ठाणा० ३७८।

उपशान्ता-प्रदेशतोऽप्यवेद्यमानाः कषायाः। ठाणा० ५।

उपश्रा-द्वेषः। व्य० प्र० ७ अ।

उपसंप-उपसम्पत्-उपसम्पत्तिः-प्राप्तिः। भग० ९०४।

उपसंपदालोचना-आलोचनाया द्वितीयो भेदः। व्य० प्र० ४८ आ।

उपसङ्घात-अनिष्टरूपस्तूपसङ्घातः। नंदी १७१।

उपस्थं-उपस्थितम्। व्य० द्वि० २२२ आ।

उपस्थापनं-पुनर्दीक्षणं पुनश्चरणं पुनर्व्रतारोपणम्। तत्त्वा० ९-२२।

उपस्थापयितुं-उत्स्थापनाकरणतः। व्य० द्वि० २१५ अ।

उपस्पृशति-वस्त्राणि प्रक्षालयति। आव० ४३४।

उपहितं-भोजनस्थाने ढौकितं भक्तमिति भावः। ठाणा० १४८।

उपादानकारणं-मृदादि। ठाणा० ४९।

उपाधिः-उपाधानमुपाधिः-सन्निधिः। भग० ४।

उपाया-व्याख्याङ्गानि। आचा० ८२।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उपायोपेयभावलक्षण:-वचनरूपापन्नं प्रकरणमुपायः तत्परिज्ञानं चोपेयम्। प्रज्ञा० २।

उपार्द्धभाग-पोषचतुर्थभागः। आचा० ३२६।

उपालंभ-उपालम्भः विनेयस्याविहितविधायिनः। ज्ञाता० ७७।

उपालक-निर्व्यूहः, गवाक्षः। व्य० प्र० १३३ अ।

उपैति-करोति। आचा० २१७।

उपोद्घातनिर्युक्तिः-निर्युक्तिभेदः। ठाणा० ६।

उप्पइयं-उत्पत्तिकं-उद्भूतम्। उत्त० ११९।

उप्पज्जंते-उत्पद्यन्ते, एतत्प्रभावात् स्फातिमद्भवन्ति। जं० प्र० २५८।

उप्पज्जमाणकालं-उत्पद्यमानकालं-आद्यसमयादारभ्योत्पत्त्यन्तसमयं यावदुत्पद्यमानत्वस्येष्टत्वाद् वर्तमानभविष्यत्कालविषयं द्रव्यम्। भग० १८।

उप्पडा-त्रीन्द्रियविशेषः। प्रज्ञा० ४२।

उप्पण-उत्पन्नं-विधिना प्राप्तम्। दश० १८१।

उप्पण्णमिस्सिया-उत्पन्नमिश्रिता-उत्पन्ना मिश्रिता अनुत्पन्नैः सह सङ्ख्या पूरणार्थं यत्र सा। सत्यामृषाभाषायाः प्रथमो भेदः। प्रज्ञा० २५६।

उप्पत्ति-उत्पत्तिः-निदानम्। व्य० प्र० ९१ अ।

उप्पत्तिअं-पर्वतिथिमन्तरेणाकस्मिकं भोज्यम्। बृ० द्वि० १९२ अ।

उप्पत्तिआ-उत्पत्तिरेव न शास्त्राभ्यासकर्मपरिशीलनादिकं प्रयोजनं-कारणं यस्याः सा औत्पत्तिकी। नंदी १४४।

उप्पत्तिकसाय-द्रव्यादेर्बाह्यात् कषायप्रभवः तदेव कषायनिमित्तत्वात् उत्पत्तिकषायः। आव० ३९०। शरीरोपधिक्षेत्रवास्तुस्थाण्वादयो यदाश्रित्य तेषामुत्पत्तिः। आचा० ९१।

उप्पत्तिया-औत्पत्तिकी-उत्पत्तिरेव प्रयोजनं यस्याः सा, बुद्धिविशेषः। आव० ४१४। उत्पत्तिकी-अदृष्टाश्रुताननुभूतविषयाकस्माद्भवनशीला। राज० ११६।

उप्पत्ती-उत्पत्तिकरः स्वकल्पनाशिल्पनिर्मितः शतरूपकादिः। आव० ४९९। आरम्भमात्रम्। ठाणा० २८५। सामान्यतो या च विशेषतः। ठाणा० ४४९।

उप्पन्न-उत्पन्नविषया-सत्यामृषाभाषाभेदः। दश० २०९।

उप्पन्नमीसते-उत्पन्नविषयं मिश्रं-सत्यामृषा उत्पन्नमिश्रं तदेवोत्पन्नमिश्रकम्। ठाणा० ४८९।

उप्पयंते-भूतलादुत्पततः। ज्ञाता० ४६।

उप्पयनिवयं-उत्पातः-आकाशे उल्लनं निपातः-तस्मादवपतनं उत्पातपूर्वो निपातो यस्मिन् तदुत्पातनिपातम्। दिव्यनाट्यविधिः। जं० प्र० ४१२।

उप्पराउ-उपरितः-उपरिष्टात्। दश० ३८।

उप्परामुहो-उपरिमुखः। आव० १८१।

उप्पराहुत्तो-उपरिभूतः। आव० ५०२।

उप्पलं-उत्पलं-नीलोत्पलादि। आचा० ३४८। चतुरशीतिरुत्पलाङ्गशतसहस्राणि। जीवा० ३४५। गर्दभकम्। राज० ८। जीवा० १७७। उत्पलकुष्ठं, नीलोत्पलं वा। जीवा० २७७। उत्पलं। प्रज्ञा० ३७। जलरुहविशेषः। प्रज्ञा० २३। कालविशेषः। भग० २७५। उत्पलं-चतुरशीत्या लक्षैरुत्पलाङ्गैः। अनु० १००। उत्पलार्थः एकादशशते प्रथम उद्देशकः। भग० ५११। कालविशेषः। भग० ८८८। भग० २१०। कालविशेषः। सूर्य० ९१। नीलोत्पलमुत्पलकुष्ठं वा। सम० ६१। औप० १६। आरणकल्पे विमानविशेषः। सम० ३८। उत्पलकुष्ठं-गन्धद्रव्यविशेषः। ज्ञाता० १२९। उत्पलं-नीलोत्पलादि। दश० १८५। उत्पलं-कुष्ठम्। जं० प्र० ११७।

उप्पलंग-उत्पलाङ्गं-चतुरशीतिर्हूहुकशतसहस्राणि। जीवा० ३४५। कालविशेषः। ठाणा० ८६। उत्पलाङ्गः, कालविशेषः। सूर्य० ९१। भग० ८८८। उत्पलाङ्गं चतुरशीत्य लक्षैर्हूहुकैः। अनु० १००।

उप्पलगुम्मा-उत्पलगुल्मा, पुष्करिणीनाम। जं० प्र० ३३५ ३६०।

उप्पलनालं-उत्पलनालं-उत्पलं-नीलोत्पलादि नालं-तस्यैवाधारः। आचा० ३४८।

उप्पलपउमोपसोभिता-उत्पलपद्मोपशोभिता। आव० ८१९।

उप्पलबेंटिया-उत्पलवृन्तानि नियमविशेषात् प्राह्यतया भैक्षत्वेन येषां सन्ति ते उत्पलवृन्तिकाः। औप० १०६।

उप्पलयं-उत्पलकं-गर्दभकम्। जीवा० १८२।

उप्पलहत्थगा-उत्पलाख्यजलजकुसुमसमूहविशेषाः। जं० प्र० ४४। उत्पलाख्यजलजकुसुमसङ्घातविशेषाः। राज० ८

उप्पलहत्थय-उत्पलहस्तकः-उत्पलाख्यजलजकुसुमसमूहविशेषः। जीवा० १९९।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उप्पला-पिशाचेन्द्रकालस्य तृतीयाग्रमहिषी । ठाणा० २०४ । पुष्करिणीविशेषः । जं० प्र० ३६० ।

उप्पलाइं-गर्द्दभकानि ईषन्नीलानि वा । जं० प्र० २६ ।

उप्पलावए-उत्प्लावयति । दश० २०५ ।

उप्पलुज्जला-उत्पलोज्ज्वला, पुष्करिणीनाम । जं० प्र० ३३५, ३६० ।

उप्पलुद्देसए - उत्पलोद्देशकः-एकादशशते प्रथमः । भग० ९६६ ।

उप्पह-उत्पथः-उन्मार्गः । उत्त० ५४८ । परसमयः । ठाणा० २४१ ।

उप्पा-उत्पादः । ठाणा० १९ ।

उप्पाइओ-उत्पातः । आव० २९८ ।

उप्पाइत्ता-उत्पादयितुं-सम्पादनाय, अथवाऽनुत्पन्नानां भोगानामुत्पादयिता-उत्पादकः । ठाणा० २६४ । सम्पादनशीलः । ठाणा० ३८६ ।

उप्पाइया - उत्पाताः-अनिष्टसूचका रुधिरवृष्ट्यादयस्तद्धेतुका येऽनर्थास्ते औत्पातिकाः । सम० ६२ ।

उप्पाए - उत्पातं-सहजरुधिरवृष्ट्यादिलक्षणोत्पातफलनिरूपकं निमित्तशास्त्रम् । सम० ४९ । उत्पादः । आव० ६६२ ।

उप्पाएति - उत्-प्राबल्येन पावयति । नि० चू० प्र० २५२ आ ।

उप्पाएमाणे-व्युत्पादयन् । उत्त० १५७ ।

उप्पाओ - उत्पादः-उत्पत्तिहेतुभूतः क्रियालक्षणः । विशे० २४१ ।

उप्पाते-उत्पादः-सहजरुधिरवृष्ट्यादिः । ठाणा० ४२७ ।

उप्पाय-उत्पातपूर्वं-प्रथमपूर्वनाम । ठाणा० ४८४ । उत्पातः-प्रकृतिविकारो रक्तवृष्ट्यादिः । प्रश्न० १०९ । उल्कापातदिग्दाहादिकम् । अनु० २१६ । उत्पादः-यतो नानुत्पन्नं वस्तु लक्ष्यते अतोऽयमपि वस्तुलक्षणम् । आव० २८२ । उत्पातं-सहजरुधिरवृष्ट्यादिकम् । आव० ६६० । उत्पातं-कपिहसितादि । सूत्र० ३१८ । प्रथमपूर्वम् । नंदी ५२ । ठाणा० १९९ ।

उप्पायग-उत्पादकः-ये भूमिं भित्त्वा समुत्तिष्ठन्ति ते । व्य० द्वि० २८८ आ ।

उप्पायण - उत्पादना - सम्पादनं, गृहस्थात्पिण्डादेरुपार्जनमित्यर्थः । ठाणा० १५९ ।

उप्पायणा-उत्पादना-धात्र्यादिका षोडशविधा । प्रश्न० १५५ । धात्र्यादिलक्षणदोषविशेषः । आव० ५७६ ।

उप्पायणोवघाते- उत्पादनया-उत्पादनादोषैः, उपघातः-अशुद्धता उत्पादनोपघातः । ठाणा० ३२० ।

उप्पायपव्वए-उत्पातपर्वतः । सम० ३३ । तिर्यग्लोकगमनाय यत्रागत्योत्पतति सः । भग० १४४ ।

उप्पायपव्वयगा-उत्पातपर्वताः-यत्रागत्य बहवः सूर्याभविमानवासिनो वैमानिका देवा देव्यश्च विचित्रक्रीडानिमित्तं वैक्रियशरीरमारचयन्ति । राज० ७९ ।

उप्पायपव्वया-यत्रागत्य बहवो व्यन्तरदेवा देव्यश्च विचित्रक्रीडानिमित्तं वैक्रियशरीरमारचयन्ति । जं० प्र० ४४ । जीवा० १९९ ।

उप्पायपुव्वं-उत्पादपूर्वम्, तत्थ सव्वदव्वाणं पज्जवाण य उप्पायभंगीकाउं पण्णवणा कया । नंदी २४१ । यत्रोत्पादमाश्रित्य द्रव्यपर्यायाणां प्ररूपणा कृता तद् । सम० २६ ।

उप्पाया-त्रीन्द्रियविशेषः । प्रज्ञा० ४२ ।

उप्पाल-प्रहरणकोशविशेषः । जीवा० २३२ । प्रहरणकोशः-प्रहरणस्थानम् । राज० ९३ । मत्तवारणम् । जीवा० २७९ ।

उप्पालसंठिओ-उत्पालसंस्थितः-मत्तवारणसंस्थितः । जीवा० २७९ ।

उप्पासितो-उत्प्रासितः-असूयितः । आव० १०१ ।

उप्पासिया-हसिताः । नि० चू० प्र० ६९ अ ।

उप्पिं-उपरि । भग० ८२ । ठाणा० ४३२ ।

उप्पिंजल-उप्पिञ्जलं-आकुलकम् । राज० ५२ ।

उप्पिच्छ-श्वाससंयुक्तम् । जं० प्र० ४० । श्वासयुक्तं, त्वरितम् । ठाणा० ३९६ । अनु० १३२ । आकुलं रोषभृतं वोच्यते । श्वासयुक्तं वा । जीवा० १९४ । भीतौ । ज्ञाता० १६१ ।

उप्पिट्टणयं-उत्पिट्टनकं-कुट्टनोत्पिट्टना । उत्त० ८ ।

उप्पिट्टणा-उत्-प्राबल्येन पिट्टना उत्पिट्टना । उत्त० ८ ।

उप्पित्थं-श्वासयुक्तम् ।

उप्पिबंत-उत्पिबन्तः-आसादयन्तः । प्रश्न० ६३ ।

उप्पियंतं-मुहुर्मुहुः श्वसन्तम् । व्य० द्वि० ५३ आ ।

उप्पियणं-मुहुः श्वसनम् । व्य० द्वि० ५३ अ ।

उप्पिलणा-उत्पीडनं-प्राणादीनां प्लावनम् । व्य० द्वि० १० अ ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उप्पील-उत्पीलः-समूहः । प्रश्न० ५० ।

उप्पीलइ-उत्पीडयति-प्राबल्येन बाधते । जीवा० ३२६ ।

उप्पीलिय-उत्पीडिता प्रत्यञ्चारोपणेन, बाहौ बद्धा । भग० १९३ । गाढीकृता । राज० ११८ । भग० ३१७ । ज्ञाता० २२१ । जीवा० २५९ । उत्पीडितः-गाढं बद्धः । प्रश्न० ४७ । उत्पीडिता-गुणसारणेन कृतावपीडा, बाहौ बद्धा वा । भग० ३१८ । कृतप्रत्यञ्चारोपणा । विपा० ४७ । आरोपितप्रत्यञ्चा । औप० ७१ । आक्रान्ता गुणेन । ज्ञाता० ८५ ।

उप्पीसेज्जा । भग० ७६६ ।

उप्पुया-उत्प्लुताः-उत्सुकाः । प्रश्न० ५२ ।

उप्पूर - उत्पूरं-प्राचुर्यम् । प्रश्न० ४३ । जलप्लवः । प्रश्न० ७६ ।

उप्पेक्खेज्ज-उपेक्ष्यते । आव० ६४० ।

उप्फंदति-उत्स्पन्दते-प्रविशति । उत्त० ३५५ ।

उप्फंसणं । ओघ० १९५ ।

उप्फणिंसु-साध्वर्थं वाताय दत्तवन्तः । आचा० ३४३ ।

उप्फसणा - अप्कायस्पर्शनं यत्सहचरितं लवणोत्तारणम् । बृ० द्वि० ६१ आ ।

उप्फालग-उत्प्रासकम् । उत्त० ६५६ ।

उप्फिडइ-मण्डूकवत्प्लवते । उत्त० ५५१ ।

उप्फुल्लं-विगसिएहिं इत्थीसारीरं रयणादि वा ण निज्झाइयव्वं । दश० चू० ७७ । उत्फुल्लं-विकसितलोचनम् । दश० १६८ । निष्पुष्पः । नि० चू० प्र० २०१ अ ।

उप्फेणओफेणीयं-सकोपोष्मवचनं यथा भवति । विपा० ८३ ।

उप्फेस - मुकुटम् । औप० २५ । शिरोवेष्टनम् । आचा० ३८० । प्रज्ञा० ८७ ।

उप्फेसि-शिरोवेष्टनं, शेखरक इत्यर्थः । ठाणा० ३०४ ।

उप्फोसं-उत्स्पर्शनं छंटनम् । बृ० प्र० २८५ अ ।

उप्फोसणं-क्रियाविशेषः । नि० चू० द्वि० १६६ अ ।

उप्फोसणा-जलच्छटा । नि० चू० द्वि० ६३ अ ।

उप्फोसेज्ज-रुष्येत् । नि० चू० प्र० १८६ आ ।

उफुल्लो-निष्पुष्पः । ओघ० ९७ ।

उबद्धो-अवबद्धः । आव० २९९ ।

उब्बद्धओ-उद्बद्धः । आव० ४५२ ।

उब्बुडा-उद्याता । आव० ६७७ ।

उब्बुड्ड-अन्तःप्रवेशितम् । अनुत्त० ७ ।

उब्बुड्डनिबुड्डयं-उन्मग्ननिमग्नत्वम् । प्रश्न० ६३ ।

उब्भं-तव । उत्त० १४७ ।

उब्भंडो-असंवृतपरिधानादि । बृ० तृ० २२५ अ ।

उब्भज्जिय-उद्भिद्य । उत्त० १९२ ।

उब्भट्ट-अभ्यर्थितम् । पिण्ड० ९० ।

उब्भड-उद्भटं-विकरालम् । जं० प्र० १७० । अनुत्त० ७ । भग० ३०८ । स्पष्टम् । भग० ३०८ ।

उब्भमा-उत्-प्राबल्येन भ्रमयन्ति उद्भ्रमाः-भिक्षाचराः । व्य० प्र० १५३ आ ।

उब्भमे-उद्भ्रमेत्-यायात् । आचा० २९१ ।

उब्भव-उद्भवः-सम्भवः । ज्ञाता० ५० । सम्भूतिः । भग० ४७० ।

उब्भवणं-निश्रावणं । नि० चू० प्र० ५२ आ ।

उब्भवेति-उच्छ्रयति । आव० ३४२ ।

उब्भातो-निसण्णो । नि० चू० प्र० ३५ आ ।

उब्भाम-भिक्षाचरग्रामः । व्य० प्र० २५० अ ।

उब्भामइला-उद्भ्रामिला-स्वैरिणी । व्य० द्वि० ३१ आ ।

उब्भामओ-उद्भ्रामकः, जारः । पिण्ड० १२३ । पारदारिकः । ओघ० ९२ । बृ० तृ० ४८ अ ।

उब्भामगं-भिक्खायरिया । नि० चू० प्र० ७७ आ । नि० चू० प्र० ३६ आ । पारदारिकाः । ओघ० ७५ । बृ० द्वि० २६ अ । पारदारिगो । नि० चू० प्र० १०७ अ । संघाडगो । नि० चू० द्वि० ९४ आ ।

उब्भामनितोय - उद्भ्रामकनियोगः-ग्रामः । व्य० प्र० १५३ आ ।

उब्भामिगा-उद्भ्रामिका-कुलटा । व्य० द्वि० १५० आ । उद्भ्रामिका-मनोगुप्तिदृष्टान्ते श्रेष्ठिसुतश्रावकजिनदासभार्या । आव० ५७८ । असती । दश० ५७ ।

उब्भामिज्जेंति-अपभ्राज्यन्ते । बृ० तृ० १३७ आ ।

उब्भामिया - कुशीला । बृ० द्वि० २६४ आ । उद्भ्रामिका-स्वैरिणी । आव० ४२१ ।

उब्भामे-भिक्खायरियं गच्छति । नि० चू० प्र० ११३ आ । भिक्षाभ्रमणम् । ठाणा० २६६ ।

उब्भावण-उद्भावनं - महर्द्धिकतासम्पादनं कृतवान् । बृ० तृ० ९३ अ । परिभवः । ओघ० १४८ ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उब्भावणा-उद्भावना-उत्प्रेक्षणा। भग० ४८९। उत्क्षेपणानि। ज्ञाता० १७७। उद्भावना। दश० ४४। प्रकाशनम्। नंदी० ५३। अपभ्राजना। उत्त० १६९।

उब्भिगा-उद्भिदो-भूमिभेदाज्जाता उद्भिज्जाः-खञ्जनकादयः। ठाणा० ३८६।

उब्भिज। नि० चू० प्र० ३३५ आ।

उब्भिज्ज - उद्भेद्या - वस्तुलप्रभृतिशाकभर्जिका। पिण्ड० १६८। उद्भिद्य भुवं जाता उद्भिज्जा खञ्जनकादिः। प्रश्न० ९०।

उब्भिज्जमाण-उद्भिद्यमानं-उद्घाट्यमानम्। जीवा० १९१।

उब्भिन्न-उद्भेदनं उद्भिन्नं साधुभ्यो घृतादिदाननिमित्तं कुतुपादेः मुखस्य गोमयादिस्थगितस्योद्घाटनं तद्योगाद्देयमपि घृतादि उद्भिन्नम्। द्वादश उद्गमदोषः। पिण्ड० ३४।

उब्भिय-उद्भेदनमुद्भित् उद्भिज्जन्म येषां ते उद्भिज्जाः-पत्तङ्ग-खञ्जरीटपारिप्लवादयः। दश० १४१। उद्भिज्जं-लवणाक-राद्युत्पन्नम्। आचा० ३५५।

उब्भुतिया-आभ्युदयिकी, देवतापरिगृहीता गोशीर्षचन्दन-मयी भेरी। आव० ९७।

उब्भूयावेउ। दश० चू० ८०।

उब्भेंति-उच्छ्रयन्ति। आव० ३४२। ऊर्ध्वयन्ति। उत्त० १४७।

उब्भेइम-उद्भेद्यं-सामुद्रादि। अप्रासुकम्। दश० १९८।

उभओ - उभयतः-उभौ शिरोऽन्तपादान्तावाश्रित्य। ज्ञाता० १५।

उभयं - उभयं-संयमासंयमस्वरूपं श्रावकोपयोगि। दश० १५८। संघायसाडण, संघातशातनकरणं, यस्य शकटोदाह-रणम्। आव० ४६२।

उभयंभागा - उभयभागा-चन्द्रेणोभयतः - उभयभागाभ्यां पूर्वतः पश्चाच्चेत्यर्थो भज्यन्ते-भुज्यन्ते यानि तानि उभय-भागानि, चन्द्रस्य पूर्वतः पृष्ठतश्च भोगमुपगच्छन्तीत्यर्थः। ठाणा० ३६८। उभयभागानि - उभयं-दिवसरात्री तस्य दिवसस्य रात्रेश्चेत्यर्थः, चन्द्रयोगस्यादिमधिकृत्य भागो येषां तानि। सूर्य०। १०४।

उभयओ-उभयतः, उभयोः-पार्श्वयोः। सूर्य २९३।

उभयकप्पिय - उभयकल्पिकः-यो द्वावपि सूत्रार्थौ युगपद् ग्रहीतुं समर्थः। बृ० प्र० ६३ अ।

उभयकाला-दिया रातो य। नि० चू० तृ० २१आ।

उभयकिइकम्मं-उभयकृतिकर्म-वन्दनम्। ओघ० २२।

उभयजं-गुणनिष्पन्नं, समयप्रसिद्धञ्च। पिण्ड० ४।

उभयतरो-तं च तवं करेंतो आयरियाइवेयावच्चंपि करेति सलद्धित्तणओ एस उभयतरो। नि० चू० तृ० १२३ अ।

उभयनिसेहो-उभयनिषेधः, सङ्घातपरिशातशून्यं, यस्य स्थू-णोदाहरणम्। आव० ४६२।

उभयपंता-उभयप्रान्ता-अभद्रिका, अशोभनेत्यर्थः। ओघ० १५।

उभयपइट्ठिते - उभयप्रतिष्ठितः-आत्मपरविषयः। ठाणा० १९३।

उभयपद्व्याहतं-गत्यागतिलक्षणे भेदः। आव० २८१।

उभयपदाव्याहतं-गत्यागतिलक्षणे भेदः। आव० २८१।

उभयभविए - उभयभविकं-इहपरलक्षणयोर्भवयोः यदनुगा-मितया वर्त्तते तदुभयभविकम्। भग० ३३।

उभयाशया- पञ्चविधाचारपरिज्ञानकरणोद्यतगुर्वादेशादेरन्य-थाकरणलक्षणया गुरुप्रत्यनीकद्रव्यलिङ्गधार्यनेकश्रमणवत् सूत्रा-र्थोभयैर्विराध्येत्यर्थः। सम० १३३।

उभयास्तिकः। सम० ४२।

उमंथण-अवमंथमधोमुखम्। व्य० द्वि० ३२३ आ।

उमज्जायणसगोत्ते-पुष्यनक्षत्रस्य गोत्रम्। सूर्य० १५०।

उमा-प्रद्योतराजधान्यामुज्जयिन्यां गणिका। आव० ६८६। द्विपृष्ठवासुदेवमाता। आव० १६२। सम० १५२।

उमाए-अवमितः परिच्छिन्नो वा। सूर्य० ९५।

उमाणं-प्रवेशः स्वपक्षपरपक्षयोर्येषु तानि तथा। आचा० ३२६।

उमाव्यतिकर। आचा० १४६।

उम्मग्गं-विवरं उन्मज्यतेऽनेनेति वोन्मज्यम्, ऊर्द्ध्वं वा मार्ग-मुन्मार्गं, सर्वथा अरन्ध्रमित्यर्थः। आचा० २३४। अका-र्याचरणम्। आचा० २०३। उन्मार्गः। आव० ७७८। मार्गादूर्ध्वं, क्षायोपशमिकभावत्यागेनौदयिकभावसङ्क्रमः। आव० ५७१।

उम्मग्गगो-अडविपहेण गच्छति अहवा अपंथेण चेव। नि० चू० प्र० ३१९।

उम्मग्गजला-उन्मग्नं जलं यस्यां सा उन्मग्नजला। जं० प्र० २३०।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उम्मग्गदेसणाए-उन्मार्गदेशनया-सम्यग्दर्शनादिरूपभावमार्गातिक्रान्तधर्मप्रथनेन। ठाणा० २७५।

उम्मग्गनिमग्गो - उन्मग्ननिमग्नं-ऊद्र्ध्वाधोजलगमनम्। प्रश्न० ६३।

उम्मज्जगा - उन्मज्जनमात्रेण ये स्नान्ति। तापसविशेषाः। निरय० २५। भग० ५१९।

उम्मज्जगो-उन्मज्जकः-उन्मज्जनमात्रेण यः स्नाति। औप० ९०।

उम्मज्जणिमज्जिय-उन्मग्ननिमग्निका-उत्पतनिपता। ठाणा० १६१।

उम्मज्जति-स्पृशति। नि० चू० प्र० ११५ अ।

उम्मज्जा - उन्मज्जनमुन्मज्जा-नरकतिर्यग्गतिनिर्गमनात्मिका। उत्त० २८०।

उम्मत्तजला-रम्यक्‌विजये महानदी। जं० प्र० ३५२। नदीविशेषः। ठाणा० ८०।

उम्मत्ता-मन्मथोन्मादयुक्ताः, विटाः। बृ० द्वि० १३८ आ।

उम्मत्तिगा-उन्मत्ताः। आव० ४००।

उम्मत्तो-उत्-प्राबल्येन मत्ते उन्मत्ते, दरमत्तो वा उन्मत्तो। नि० चू० प्र० २७६ आ।

उम्मरीय-उम्बरीयः-प्रत्युदुम्बरं रूपको दातव्य इत्येवं लक्षणः। बृ० तृ० ५१ अ।

उम्माओ-उन्मादः-क्षिप्तचित्तादिकः। आव० ७५९।

उम्माणं-उन्मानं-तुलारोपितस्यार्द्धभारप्रमाणता। प्रश्न० ७४। जं० प्र० २५२। ठाणा० ४६१। खण्डगुडादि धरिमम्। ठाणा० ४४९। तुलाकर्षादि तद्विषयम्। ठाणा० ४४९। नाराचादिः। आचा० ४१३। तुलाकर्षादि। ठाणा० १९८। तुलारूपम्। भग० ५४४। कर्षपलादि खण्डगुडादिद्रव्यमानहेतुः। जं० प्र० २२७। अर्द्धभारमानता। भग० ११९। अर्द्धभारप्रमाणता। ज्ञाता० ११।

उम्माणजुत्तो-जइ तुलाए आरोविओ अद्धभारं तुलति तो उम्माणजुत्तो। नि० चू० तृ० ६१ अ। पुरिसो तुलारोवितो अद्धभारं तुलेमाणो उम्माणजुत्तो। नि० चू० द्वि० ८५ आ।

उम्माणा-उन्मानानि-तुलायाः कर्षादीनि। ठाणा० ८६।

उम्माद-चतुर्दशशते द्वितीय उद्देशः। उन्मादार्थाभिधायकत्वादुन्मादो द्वितीयः। भग० ६३०।

उम्माय - उन्मादः-नष्टचित्ततया आलजालभाषणम्। असंप्राप्तकामभेदः। दश० १९४। चित्तविभ्रमः। ठाणा० १५०। महामिथ्यात्वलक्षणः तीर्थकरादीनामवर्णं वदतो भवत्येव तीर्थकराद्यवर्णवदनकुपितप्रवचनदेवतातो वा यत्। ठाणा० ३६०। सग्रहत्वम्। ठाणा० ३६०। ग्रहो बुद्धिविप्लवः। ठाणा० ४७।

उम्मिमालिणीओ-नदीविशेषः। ठाणा० ८०।

उम्मिल्लिज्जंते-उन्मील्यमाने। आव० ६३।

उम्मी - ऊर्म्मयः-महाकल्लोलाः। भग० ७११। ऊर्मिः-संबाधः। औप० ५७। विचिः, तरङ्गः। आव० ६०१। ऊर्म्मिः-संबाधः। भग० ४६३। कल्लोलः। ठाणा० ५०२। सम्बाधः, तरङ्गः, कल्लोलाकारो वा जनसमुदायः। भग० ११५।

उम्मीलिआ-उन्मिषितलोचनाः। जं० प्र० ५४, २९८। बहिष्कृता। जं० प्र० २९७, ५४।

उम्मीलिय-उन्मीलितं-बहिष्कृतम्। सूर्य० २६४। प्रज्ञा० ९९। जीवा० २०९।

उम्मीसं-उन्मिश्रं-शबलीभूतम्। आचा० ३२१। आगामुकसत्त्वसंवलितं सक्तुकादि। आचा० ३२२। एकीकृत्य। ओघ० १६९। पुष्पादिसम्मिश्रम्, सप्तम एषणादोषः। पिण्ड० १४७।

उम्मुक्को-उन्मुक्तः-प्राबल्येन मुक्तः, पृथग्भूतः। आव० ५०८।

उम्मुग्गा-उन्मग्ना-नदीविशेषः। आव० १५०।

उम्मुय-औल्मुकः। प्रश्न० ७३।

उम्मूलणा सरीराओ-उन्मूलना शरीरात्, निष्काशनं जीवस्य देहादिति। प्राणवधस्य द्वितीयः पर्यायः। प्रश्न० ५।

उम्ह-उष्मा-परितापः। बृ० द्वि० १९४ अ।

उयट्टी-कटी, जङ्घा। उत्त० ११८।

उयत्ति-तेयस्सणो। नि० चू० प्र० ३०१ आ।

उयत्तिया-अपवृत्य। आचा० ३४६।

उयरं-जलोयरं। नि० चू० प्र० ५८ आ।

उयल्ला-मृता। आव० २७२।

उयविय-विशिष्टं परिकर्मितम्। राज० ९३।

उयवेंति-एतद्ग्रहे तत्र समुद्देशाप्यते इत्यर्थः। व्य० द्वि० ४५२ अ।

उयारं-उपकारः। (महाप्र०)।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उयाहरे-उदाहरेत्-उद्घट्टयेत् । उत्त० ३४५ ।

उयाहु-उदाहु-उदाहृतवान् । उत्त० २७० ।

उरं-उरः-वक्षः । आचा० ३८ ।

उरंमुहो-अर्वाङ्मुखः । आव० ४२७ ।

उरकंठसिरविसुद्धं-उरःकण्ठशिरोविशुद्धम्-यद्युरसि स्वरो विशालस्तदुरोविशुद्धं, कण्ठे यदि स्वरो वर्तितोऽतिस्फुटितश्च तदा कण्ठविशुद्धं, शिरसि प्राप्तो यदि नानुनासिकस्ततः शिरोविशुद्धम्, अथवा उरःकण्ठशिरस्सु श्लेष्मणाऽव्याकुलेषु विशुद्धेषु प्रशस्तेषु यद् गीयते तत् । अनु० १३२ ।

उरक्खंधगेवेज्जय - उरस्कन्धग्रैवेयकं-भूषणविधिविशेषः । जीवा० २६८ ।

उरक्खय-उरःक्षतं-उरोविघातः, हृदयबाधा । विशे० १३१ ।

उरगपरिसप्पा-उरो-वक्षस्तेन परिसर्पन्तीति उरःपरिसर्पाः । उत्त० ६९९ ।

उरगविही-शुक्रस्य महाग्रहस्य षष्ठी विथीः । ठाणा० ४६८ ।

उरत्थ-उरस्थः, वक्षोभूषणविशेषः । जं० प्र० २१३ । आचा० ४२३ । हृदयाभरणविशेषः । जं० प्र० १०५ ।

उरपरिसप्पा-उरसा-वक्षसा परिसर्पन्तीति उरःपरिसर्पाः-सर्पादयः । ठाणा० ११४ । सम० १३५ । उरसा परिसर्पन्तीति उरःपरिसर्पाः । प्रज्ञा० ४५ ।

उरब्भ-उरभ्रः-ऊरणः । जं० प्र० ३१ । जीवा० १८९ ।

उरब्भरुहिरं-उरभ्ररुधिरम् । प्रज्ञा० ३६१ ।

उरब्भिज्जं-उत्तराध्ययनस्य सप्तममध्ययनम् । उत्त० २७१ । सम० ६४ ।

उरलं-विरलप्रदेशम् । प्रज्ञा० २६९ । अल्पप्रदेशोपचितत्वाद् बृहत्त्वाच्च । ठाणा० २९५ ।

उरविसुद्ध-यद्युरसि स्वरो विशालस्तर्हि उरोविशुद्धम् । अनु० १३२ ।

उरसे-उपगतो-जातो रसः-पुत्रस्नेहलक्षणो यस्मिन् पितृस्नेहलक्षणो वा यस्यासावुपरसः, उरसि वा-हृदये स्नेहाद्वर्तते यः स ओरसः । पुत्रस्य पञ्चमो भेदः । उरसा वर्त्तत इति ओरसो-बलवान् । ठाणा० ५१६ ।

उरःशुद्धं-यद्युरसि स्वरो विशालस्तर्हि उरोविशुद्धम् । जं० प्र० ४० ।

उरस्ताडं-वक्षस्ताडम् । नंदी १५७ ।

उरस्सं-उरसि भवं उरस्यम् । जीवा० १२२ । उरसि भवं उरस्यं-आन्तरोत्साहः । जं० प्र० ३८७ ।

उरस्सबल-अन्तरोत्साहवीर्यम् । उपा० ४७ ।

उरस्सबलसमण्णागए - औरस्यबलसमन्वागतः-आन्तरोत्साहवीर्ययुक्तः । अनु० १७७ ।

उरस्सबलसमन्नागए-उरस्यबलसमन्वागतः-आन्तरोत्साहवीर्ययुक्तः । जीवा० १२२ ।

उराल-विस्तरालं, विशालम् । ठाणा० २९५ । उदारं-स्थूलम् । सूत्र० ५१ । स्वल्पप्रदेशोपचितत्वात् बृहत्त्वाच्च, मांसास्थिपूयबद्धं यच्छरीरं तत्समयपरिभाषया उरालम् । सम० १४२ । घडियं आभरणादि । नि० चू० प्र० ८२आ । प्रधानः । सूर्य० ५ । ठाणा० ५०३ । आव० २८७ । वनस्पतिविशेषः । प्रज्ञा० ३३ । शोभनो मनोज्ञो वा । सूत्र० १८४ । अत्यन्तोद्भटः, समग्रसामग्रीकः, मधुमद्यमांसाद्युपेतः । सूत्र० ३२५ ।

उराला-उदाराः-बादराः । ठाणा० १६१ ।

उरिणणं । ओघ० १६६ ।

उरितिय-उरसि त्रिकम् । औप० ५५ ।

उरुंभेइ-अवतारयति । आव० ४०८ ।

उरोविघातः-उरःक्षतं, हृदयबाधा । विशे० १३१ ।

उरोहओ-अंतेपुरं । नि० चू० तृ० ४१ अ ।

उर्व्वशी-अरणिः । नंदी १९ ।

उलग्गंति-अवलगन्ति । आव० ३९६ ।

उलजायगं-वीरल्लो । नि० चू० प्र० १५५ अ ।

उलूक-ऊर्ध्वकर्णः । अनु० १५० । मतविशेषः । आव० ३७६ ।

उलूगि-उलूकी, तत्प्रधाना विद्या । आव० ३१९ ।

उलूयपणीयं-उलूकप्रणीतं-वैशेषिकप्रणीतम् । आव० ३२१ ।

उलोट्टए-अपवर्त्तन्ते । प्रश्न० ८६ ।

उल्मुकं-अलातम् । ओघ० १७ । प्रज्ञा० २९ । दश० १५४ । उल्कादि । आव० ५८८ ।

उल्लं-आर्द्रं-प्रचुरव्यञ्जनम् । दश० १८१ ।

उल्लंघणं-ऊर्ध्वं लङ्घनम् । भग० ९२५ । उल्लङ्घनं-कर्दमादीनामतिक्रमणम् । औप० ४२ । सहजात् पादविक्षेपान्मनागधिकतरः पादविक्षेपः उल्लङ्घनम् । प्रज्ञा० ६०६ । उल्लङ्घनः-बालादीनामुचितप्रतिप्रत्ययकरणतोऽधःकर्त्ता । वत्सडिम्भा

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दीनां चण्डश्चारभटवृत्याश्रयणतः । उत्त० ४३४ । तथाविध-निमित्तेन ऊर्ध्वभूमिकायुत्क्रमणे गर्ताद्यतिक्रमणे वा । उत्त० ५१९ ।

उलंछेइ-विगतलाञ्छनं करोति । ज्ञाता० ८८ ।

उलंठ-उच्छृङ्खलः । आव० ३४४ ।

उलंडगा-मृद्गोलकाः । नि० चू० प्र० ३५६ आ ।

उलंडणा-उल्लंघणा । दश० चू० ७७ ।

उलंडा-मृद्गोलकाः । बृ० द्वि० २७१ आ ।

उलंबण-उल्लम्बनं-वृक्षशाखादावुद्बन्धनम् । सम० १२६ ।

उलंबियगा – अवलम्बितकाः – रज्ज्वा बद्धा गर्त्तादाववतारिताः । औप० ८७ ।

उल्ल-आर्द्रः । ओघ० १८८ । उत्त० ५३० । भग० २३२ । आर्द्रा स्तिमितसकलचीवरेतियावत् । उत्त० ४९३ ।

उल्लग-आर्द्रः । आव० ६२१ ।

उल्लगजाति-वीरल्लगसउणो । नि० चू० प्र० २०४ आ ।

उल्लच्छणा-अपवर्त्तना, अपप्रेरणा । प्रश्न० ५६ ।

उल्लण-येनौदनमार्द्रीकृत्योपयुज्यते उल्लणम् । पिण्ड० १६८ । ओघ० १४६ ।

उल्लणिया-स्नानजलार्द्रशरीरस्य जललूषणवस्त्रम् । उपा० ४ ।

उल्लदेत्ता-अवलाद्य-उत्तार्य । आव० २९१ ।

उल्लपडसाडओ-आर्द्रपटशाटकः । आव० २११ ।

उल्लपडसाडगो-आर्द्रशाटिकापटः । आव० ६८७ ।

उल्लपडसाडया-स्नानेनार्द्रे पटशाटिके-उत्तरीयपरिधानवस्त्रे । ज्ञाता० ८४ ।

उल्ललिया-चलिता । बृ० द्वि० १४९ आ ।

उल्लवइ-उत्-प्राबल्येनासम्बद्धभाषितादिरूपेण लपति-वक्ति उल्लपति । उत्त० ३४४ ।

उल्लवितं-उल्लप्तम् । आव० ३४३ ।

उल्लविय-उल्लपितम्-मन्मनभाषितादि । उत्त० ४२८ ।

उल्लवेंत-उल्लापयन् । आव० ६९२ ।

उल्लवेंति-आलापयन्ति । (गणि०) ।

उल्लवेइ-उल्लपति । आव० २१६ ।

उल्लवेयव्वो-विध्यापयितव्यः । आव० ३८४ ।

उल्लहिज्जंति-उल्लिख्यमाना । आव० २०० ।

उल्ला-तिंता । नि० चू० प्र० ४६ अ । आर्द्रः । आव० ६२२ ।

उल्लाट्टा-प्रत्यावर्त्तः । व्य० प्र० १६७ आ ।

उल्लालेमाणे-उल्लालयन्-ताडयन । जं० प्र० ३९७ ।

उल्लाव – उल्लापः-वचनम् । उत्त० ३३४ । काक्कावर्णनम् । ठाणा० ४०७ । काक्कावर्णनम् । ज्ञाता० ५७ । भग० ४७८ । प्रतिवचनम् । ओघ० ५२ । उल्लापम् । आव० २२३ । काक्कावर्णनम् । औप० ५७ ।

उल्लाविंतो-उल्लापयन । उत्त० ८५ ।

उल्लिंचइ-उल्लिञ्चति-आकर्षति । पिण्ड० ११८ ।

उल्लिंचण-उदकनिष्काशनम् । नि० चू० प्र० २०७ आ ।

उल्लिंचाविज्जिहिति । ओघ० ३३ ।

उल्लिउ-उल्लिखितः । उत्त० ४६० ।

उल्लिय-आर्द्रः । आव० ६२१ ।

उल्लिहावेइ-चुम्बयति-आस्वादयति । आव० ६८० ।

उल्ली – पनकः । ठाणा० ४३० । पणगो । नि० चू० प्र० २५५ आ । पणओ । दश० चू० ८० ।

उल्लीण-अपहासः । (मर०) ।

उल्लीना-उपलीना-प्रच्छन्ना । आचा० ३७१ ।

उल्लुराइ । ओघ० १३७ ।

उल्लुका-जनपदो नदीविशेषश्च । विशे० ९२७ । नदीविशेषः । विशे० ९२७ ।

उल्लुकातीरं-उल्लुकानद्याः समीपे नगरविशेषः । धूलिप्राकाराव्रतत्वात् खेटमुच्यते । विशे० ९२७ ।

उल्लुगं-अवरुग्णम्-भग्नम् । प्रश्न० २२ ।

उल्लुगतीरं – उल्लुकतीरं-उल्लुकानद्यास्तीरे नगरविशेषः । उत्त० १६५ ।

उल्लुगा – उल्लुका-नदीविशेषः । उत्त० १६५ । आव० ३१७ ।

उल्लुगातीरं – उल्लुकातीरम् । पञ्चमनिह्नवोत्पत्तिस्थानम् । विशे० ९३४ । आव० ३१२, ३१७ ।

उल्लुग्गंगी-म्लानाङ्गी । आव० ३९४ ।

उल्लुणिह-शिम्बीः । नि० चू० द्वि० १४४ आ ।

उल्लुयतीरे – उल्लुकतीरं-उल्लुकानद्यास्तीरे नगरविशेषः । भग० ७०५ ।

उल्लूहं । ओघ० १५८ ।

उल्लेति-आर्द्रयति । आव० १०१ ।

उल्लोअ-उल्लोकः-उपरिभागः । जं० प्र० ३२१ ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उल्लोइआ-उल्लोइयमिव उल्लोइअं च सेटिकादिना कुड्यादिषु धवलनम् । जं० प्र० ७६ ।

उल्लोइयं-सेटिकादिना कुड्यानां धवलनम् । भग० ५८२ । कुड्यानां मालस्य च सेटिकादिभिः संमृष्टीकरणम् । जीवा० १६० । राज० ३६ । सम० १३८ । कुड्यमालानां सेटिकादिभिः संमृष्टीकरणम् । औप० ५ । कुड्यानां मालस्य च सेटिकादिभिः संमृष्टीकरणम् । जीवा० २२७ । प्रज्ञा० ८६ ।

उल्लोए-उल्लोकः, उल्लोचः । भग० ६४५ । उपरिभागः । जं० प्र० ४९, ४०० । जीवा० २०५ । उल्लोचः-चन्द्रोदयः । सूर्य० २९३ । उल्लोकः -उपरितनभागः । जीवा० २०९, ३६० ।

उल्लोय - उल्लोकः-उपरिभागः । भग० ५४० । उद्देशः । भग० ६५९ । लेशोद्देशः । बृ० प्र० २५७ आ ।

उल्लोयगं-उल्लोचम् । आव० १२४ ।

उल्लोलिया-मलगुटिका । गुटिका । आव० ६८० ।

उल्लोलेइ-उल्लोडयत् । आचा० ४२३ ।

उल्हविज्जंतो-विध्यापितः । आव० ३८४ ।

उवंगा - उपाङ्गानि - शिक्षादिषडङ्गार्थप्रपञ्चनपराः प्रबन्धाः । भग० ११४ । शिक्षादिषडङ्गव्याख्यानरूपाणि । अनु० ३६ ।

उवंगाइं-उपाङ्गानि-अङ्गावयवभूतान्यङ्गुल्यादीनि । प्रज्ञा० ४६९ ।

उव - उप-सामीप्यार्थः । प्रज्ञा० ४ । दश० १४५ । भग० ३७ । उपमेतिवत्सादृश्येऽपि दृश्यते । उत्त० २३५ । सकृदर्थे, अन्तर्वचनः । आव० ८२८ । अभ्यधिकं पुनः पुनः । उत्त० ६४४ ।

उवइअ-उपचितौ, उन्नतौ, औपचयिकौ, उचितौ, अवपतितौ, क्रमेण हीयमानोपचयौ । जं० प्र० ११२ ।

उवइगं-उद्देहिका । नि० चू० प्र० ५७ आ ।

उवइज्जा-अवपतेत, आगच्छेत् । आचा० ३६५ ।

उवइस्सइ-उपदिश्यते-श्रोतृभावापेक्षया सामीप्येन कथ्यते । दश० ११० ।

उवउग्गहकरो-किरियापरो । नि० चू० प्र० २६६ अ ।

उवउत्त-उपयुक्तः-अनन्यचित्तः । दश० १०६ । अवहितः । भग० ८९ । णमोक्कारपरायणो । नि० चू० प्र० ४७अ । उपयुक्तः-अभिष्वङ्गवान् । भग० ९०५ । व्यापृतः, निष्ठां गतः । विशे० ९७४ । अभ्यवहृतम् । आचा० १७६ ।

उवएस-उपदेशः-आदेशः । व्य० प्र० १० आ । गुरुणाऽनुज्ञातः । ओघ० १५१ । हिताहितप्रवृत्तिनिवृत्त्युपदेशनादुपदेशः । अनु० ३८ । अन्यतरक्रियायां प्रवर्त्तनेच्छोत्पादनं उपदेशः । वचनविभक्तेर्द्वितीयो भेदः । अनु० १३४ । यथा आत्मा न बध्यत इत्यादिविषयः । दश० १२० । उपदेशः-गुर्वादिना वस्तुतत्त्वकथनम् । प्रज्ञा० ५८ । श्रुतस्य पर्यायः । विशे० ४२३ । कथनम् । आव० ६०४, २६५ ।

उवएसदव्वमूलं-उपदेशद्रव्यमूलं-यच्चिकित्सको रोगप्रतिघातसमर्थं मूलमुपदिशत्यातुरायेति । आचा० ८८ ।

उवएसरुई-उपदेशो-गुर्वादिना वस्तुतत्त्वकथनं तेन रुचिः-जिनप्रणीततत्त्वाभिलाषरूपा यस्य स उपदेशरुचिः । प्रज्ञा० ५८ ।

उवएसिया-उप-सामीप्येन देशिता उपदेशिता । आव० ६२ ।

उवओग-उपयोगः-स्वस्वविषये लब्ध्यनुसारेणात्मनः परिच्छेदव्यापारः । जीवा० १६ । उपयोजनमुपयोगः-विवक्षितकर्म्मणि मनसोऽभिनिवेशः । नंदी १६४ । ज्ञानं, संवेदनं, प्रत्ययः । विशे० ३६ । साकारानाकारभेदं चैतन्यम् । ठाणा० ३३४ । जीवस्य बोधरूपो व्यापारः । अनु० १६ । अवहितत्वम् । उत्त० ५६१ । भावेन्द्रियस्य द्वितीयो भेदः । भग० ८७ । मतिः । ओघ० ११६ । उपयोगः-लब्धिनिमित्त आत्मनो मनस्साचिव्याद् अर्थग्रहणं प्रति व्यापारः । आचा० १०४ । उपयोगः-आन्तरः श्रुतपरिणामः । विशे० २९७ । चेतनाविशेषः । भग० १४९ । चैतन्यं साकारानाकारभेदम् । भग० १४८ । उपयोजनमुपयोगः-विवक्षिते कर्मणि मनसोऽभिनिवेशः । आव० ४२६ । विपाकानुभवनम् । दश० ८६ । श्रोतुस्तदभिमुखता । आव० ३४१ । सावधानता । औप० ४८ । स्वाध्यायाद्युपयुक्तता । उत्त० १४५ । स्वस्वविषये लब्ध्यनुसारेणात्मनो व्यापारः प्रणिधानम् । प्रज्ञा० २९४ । प्रज्ञापनाया एकोनत्रिंशत्तमं पदम् । प्रज्ञा० ६ । उपयोजनं उपयोगः भावे घञ्, यद्वा उपयुज्यते-वस्तुपरिच्छेदं प्रति व्यापार्यते जीवोऽनेनेत्युपयोगः, 'पुंनाम्नि घ' इति करणे घप्रत्ययो बोधरूपो जीवस्य तत्त्वभूतो व्यापारः । प्रज्ञा० ५२६ । दश० १०८ ।

उवकप्पिया-उपकल्पिता । उत्त० २८७ ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उवकरण–उपकरणं–अङ्गादानाख्यः। बृ० तृ० ९८अ। उपकरणं–ग्लानाद्यवस्थायामन्येनोपकारकरणम्। प्रश्न० १२९। उपधिः। परिग्रहस्य पञ्चदश नाम। प्रश्न० ९२। अङ्गम्। भग० २२४।

उवकरणपणिधाणे–उपकरणस्य लौकिकलोकोत्तररूपस्य वस्त्रपात्रादेः संयमासंयमोपकाराय प्रणिधानं–प्रयोगः उपकरणप्रणिधानम्। ठाणा० १९६।

उवकरणसंवरे–उपकरणसंवरः–अप्रतिनियताकल्पनीयवस्त्राद्यग्रहणरूपोऽथवा विप्रकीर्णस्य वस्त्राद्युपकरणस्य संवरणम्। ठाणा० ४७३।

उवकरिंसु–अवकीर्णवन्तः। आचा० ३११।

उवकरिज्ज–उपकुर्यात्–ढौकयेत्। आचा० ३५१।

उवकरेउ–उपकरोतु। उपा० १५।

उवकरणे–उपकरणे। बृ० द्वि० २८१ अ।

उवकुलं–कुलस्य समीपं उपकुलम्। जं० प्र० ५०६।

उवकुला–उपकुलानि। सूर्य० १११।

उवकोसा–कोशाया लघ्वी भगिनी उपकोशा। आव० ६९५। आव० ४२५।

उवक्कम–उपक्रमणं–आयुःपुद्‌गलानां संवर्त्तनं समुपस्थितं तत्। आचा० २९१। उपक्रमणमुपक्रमः, उपक्रम्यतेऽनेनास्मादस्मिन्निति वोपक्रमः–व्याचिख्यासितशास्त्रस्य समीपानयनम्। आचा० ३। उपक्रमणं उपक्रमः–दीर्घकालभाविन्याः स्थितेः स्वल्पकालताऽऽपादनम्। उत्त० ३२१। उपेति–सामीप्येन क्रमणं उपक्रमः–दूरस्थस्य समीपापादनम्। ओघ० १। उपायेन परिज्ञानम्। ठाणा० १५५। उपायपूर्वक आरम्भः। ठाणा० १५४। प्रकृत्यादित्वेन पुद्‌गलानां परिणमनसमर्थं जीववीर्यम्। ठाणा० २२१। अभिप्रेतार्थसामीप्यानयनलक्षणः। आव० २५७। कालगमनम्। बृ० द्वि० २३० अ। नाशः। (आउ०)। उप–सामीप्ये, 'क्रमुपादविक्षेपे' उपक्रमणं दूरस्थस्य शास्त्रादिवस्तुनस्तैस्तैः प्रतिपादनप्रकारैः समीपीकरणं–न्यासदेशानयनं निक्षेपयोग्यताकरणमित्युपक्रमः। विशे० ४३०। कर्मवेदनोपायः। भग० ६५। स्वयमेव समीपे भवनमुदीरणाकरणेन वा समीपानयनम्। प्रज्ञा० ५५७। उपक्रमः–दूरस्थस्य वस्तुनस्तैस्तैः प्रतिपादनप्रकारैः समीपमानीय निक्षेपयोग्यताकरणं, उपक्रम्यते–निक्षेपयोग्यं क्रियतेऽनेन गुरुवाग्योगेनेति, उपक्रम्यतेऽस्मिन् शिष्यश्रवणभावे सतीति, उपक्रम्यतेऽस्माद्विनीतविनेयविनयादिति वा। अनु० ४५। विशे० ४३०। उपक्रमणमुपक्रम इति भावसाधनः व्याचिख्यासितशास्त्रस्य समीपानयनेन निक्षेपावसरप्रापणं, उपक्रम्यते वाऽनेन गुरुवाग्योगेनेत्युपक्रम इति करणसाधनः, उपक्रम्यतेऽस्मिन्निति वा शिष्यश्रवणभावे सतीत्युपक्रम इत्यधिकरणसाधनः, उपक्रम्यतेऽस्मादिति वा विनेयविनयादित्युपक्रम इत्यपादानसाधन इति। जं० प्र० ९। उपक्रम्यते–क्रियतेऽनेनेत्युपक्रमः–कर्मणो बद्धत्वोदीरितत्वाहिना परिणमनहेतुर्जीवस्य शक्तिविशेषो योऽन्यत्र करणमिति रूढः, बन्धनादीनामारम्भः। ठाणा० २२१। वस्तुपरिकर्म्मरूपः। ठाणा० २२१। अप्राप्तकालस्य निर्जरणम्। भग० ७१५। आनुपूर्व्यादिः। सम० ११५। निरुक्तिस्तु उपक्रमणं उपक्रमः इति भावसाधनः, शास्त्रस्य न्यासदेशसमीपीकरणलक्षणः, उपक्रम्यते वाऽनेन गुरुवाग्योगेनेत्युपक्रम इति करणसाधनः, उपक्रम्यतेऽस्मिन्निति वा शिष्यश्रवणभावे सतीत्युपक्रम इत्यधिकरणसाधनः, उपक्रम्यतेऽस्मादिति वा विनीतविनेयादित्युपक्रम इत्यपादान इति। ठाणा० ४। कर्मोदीरणकारणम्। ठाणा० ८९।

उवक्कमकाल–उपक्रमकालः–अभिप्रेतार्थसामीप्यानयनलक्षणः। विशे० ८३७। अभिप्रेतार्थसामीप्यानयनलक्षणः सामाचार्यायुष्कभेदभिन्नः। दश० ९।

उवक्कमिओ–औपक्रमिकः–दण्डकशशास्त्रादिनाऽसातवेदनीयोदयापादकः। सूत्र० ७८।

उवक्कमिया–उपक्रमणमुपक्रमः–स्वयमेव समीपे भवनमुदीरणाकरणेन वा समीपानयनं तेन निर्वृता औपक्रमिकी। प्रज्ञा० ५५७। औपक्रमिकी। सम० १४६। प्रज्ञा० ५५४। उपक्रमेण–कर्मोदीरणकारणेन निर्वृता तत्र वा भवा औपक्रमिकी–ज्वरातीसारादिजन्या। ठाणा० ८९। कर्मवेदनोपायस्तत्र भवा औपक्रमिकी स्वयमुदीर्णस्योदीरणाकरणेन चोदयमुपनीतस्य कर्मणोऽनुभवः। भग० ६५। स्वयमुदीर्णस्योदीरणाकरणेन चोदयमुपनीतस्य वेद्यस्यानुभवात् औपक्रमिकी। भग० ४९७।

उवक्कम्म–उपक्रम्य–आगत्य। सूत्र० ३५६।

उवक्कयं–उपस्कृतं–नियुक्तम्। जीवा० २६८।

उवक्केस–उपक्लेशाः–कृषिपाशुपाल्यवाणिज्याद्यनुष्ठानानुगताः पण्डितजनगर्हिताः शीतोष्णश्रमादयो घृतलवणचिन्ताद-

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यश्च। दश० २७३। उपक्लेशः-स्वगतशोकादिः। भग० ९२५।

उवक्खड – उपस्कृतं – उपस्कर्त्तुमारब्धम्। पिण्ड० ६५। उपस्करणमुपस्कृतं-पाकः। ठाणा० २२०। लवणवेसवारादि-संस्कृतम्। उत्त० ३६०।

उवक्खडणसाला-महाणसो। नि० चू० प्र० २७२ आ।

उवक्खडामं-जहा चणयादीण उवक्खडियाण जे ण सिज्झंति ते कंकडुया तं उवक्खडियामं भण्णति। नि० चू० द्वि० १२५ अ।

उवक्खडियं। ओघ १६०।

उवक्खडेंति-उपस्कुर्वन्ति। आव० २९१।

उवक्खडे-उपस्कृतानि-नियुक्तानि। जं० प्र० १०५।

उवक्खडेउ-उपस्करोतु-राध्यतु। उपा० १५।

उवक्खडेज्जा-तदशनादि पचेत्। आचा० ३५१।

उवक्खरो-सप्पादिकः। नि० चू० प्र० ३५६ अ। उपकरणम्। (मर०)। उपस्क्रियतेऽनेनेति उपस्करः-हिङ्ग्वादिः। ठाणा० २२०।

उवग-गर्त्ता। बृ० द्वि० ३१ अ।

उवगओ-उपगतः। आव० ४००। सामीप्येन कर्मविगम-लक्षणेन प्राप्तः। आव० ३८६।

उवगच्छया-कक्खा। नि० चू० प्र० २५५ अ।

उवगत-उपगतः। आव० ३०८। उपगतः-आश्रितः। उत्त० १७८।

उवगमं-उपगच्छति-सादृश्येन प्राप्नोति। उत्त० २३५।

उवगमण-उपगमनं-अवस्थानम्। सम० ३५। अस्पन्द-तयाऽवस्थानम्। भग० १२०।

उवगयं-उपगतं-सामीप्येनात्मनि शब्दादिज्ञानं परिणतम्। नंदी १८०। मृतम्। पिण्ड० १३४। उपगतं-ज्ञातम्। आव० ८१२।

उवगरण-चोलपट्टको रजोहरणं नैषद्याद्वयोपेतं मुखवस्त्रिका उपलक्षणत्वादौर्णिकसौत्रिकौ च कल्पौ। बृ० प्र० २९५ अ। दंडकं रजोहरणं च। बृ० प्र० ७१ आ। उपकरणं-औपग्रहिकम्। प्रश्न० १५६। उपकरणं-उपधिरेव। आव० ५६८। आवरणप्रहरणादिकम्। भग० ९४। लौहीकडुच्छुकादि। भग० २३८। कङ्कटादिकम्। भग० ३२२। व्यजनकटक-कवलकार्गलादि। आचा० ६०। उपकरोतीति उपकरणम्। ओघ० २०७। वस्त्रादि। भग० ७५०। धर्म्मशरीरोपष्टम्भहेतुः। उत्त० ३५८। अनेकविधं कटपिटकशूर्पादिकम्। अनु० १५९। रजोहरणदण्डकादि। ओघ० १२५। द्रव्येन्द्रियस्य द्वितीयो भेदः। भग० ८७। प्रज्ञा० २३। खड्गस्थानीयाया बाह्यनिर्वृत्तेर्या खड्गधारास्थानीया स्वच्छतरपुद्गलसमूहात्मिकाऽभ्यन्तरा-निर्वृत्तिस्तस्याः शक्तिविशेषः। जीवा० १६। हस्त्यश्वरथासन-मञ्चकादि। आचा० १००। औपग्रहिकम्। उत्त० ३५८।

उवगरणपडिया – उपकरणप्रतिज्ञा-उपकरणार्थिनः समागच्छेयुः। आचा० ३८४।

उवगरणसंजमे-उपकरणसंयमः-महामूल्यवस्त्रादिपरिहारः, पुस्तकवस्त्रतृणचर्म्मपञ्चकपरिहारो वा। ठाणा० २३३।

उवगरयं(वरए)-अपवरकम्। आव० ६६६।

उवगसित्ताणं-उपसंश्लिष्य, समीपमागत्य। सूत्र० १०७।

उवगहिओ-उपगृहीतः-उपकृतः। आव० ७६८। उपग्रहितः। आव० ७९३।

उवगा-उपगाः-प्राप्ताः। प्रज्ञा० ७०। उपगच्छन्ति-तदेक-चित्ततया तत्परायणो वर्त्तन्ते। जीवा० २६०।

उवगारग्ग-उपकाराग्रं-यत्पूर्वोक्तस्य विस्तरतोऽनुक्तस्य च प्रतिपादनादुपकारे वर्त्तते तद्। आचा० ३१८।

उवगारियलेणाइ – औपकारिकलयनानि-प्रासादादिपीठक-ल्पानि। भग० ६१७।

उवगारिया-राजधानीस्वामिसत्कप्रासादावतंसकादीन् उपकरोति-उपष्टभ्नातीति उपकारिका-राजधानीस्वामिसत्कप्रासादावतंसकादीनां पीठिका। जीवा० २२२। पीठिका। राज० ८१।

उवगिण्हह-उपगृह्णीत-उपष्टम्भं कुरुत। भग० २१९।

उवगूहिअ – उपगूहितं-परिष्वक्तम्। सम्प्राप्तकामस्य षष्ठो भेदः। दश० ११४।

उवगो-अन्यगच्छीयः साधुः। बृ० तृ० २१७ अ। खुड्डा कुमारो वा। नि० चू० प्र० ८८ अ।

उवग्गं-उपाग्रं-समीपभूतम्। आव० ४०७।

उवग्गछाया-छायाभेदः। सूर्य० ९५।

उवग्गह-उपग्रहः-शिष्याणामेव ज्ञानादिषु सीदतामुपष्टंभक-रणम्। व्य० प्र० १७२ अ। उपष्टम्भः। पिण्ड० २७। उपगृह्णातीति उपग्रहः। ओघ० २०७। शिष्याणां भक्त-

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्रुतादिदानेनोपष्टम्भनम्। प्रश्न० १२६। अनाचार्याणामन्यगणसत्कानां दिग्बन्धं कृत्वा धरणम्। व्य० प्र० २३५ अ। ग्रहणम्। ओघ० १४७। वस्त्रादिभिरुपष्टम्भः। ठाणा० ३३२। अवष्टम्भम्। ओघ० १५४। उपगृह्णातीति उपग्रहः-भक्तादिः। ओघ० १८३।

उवग्गहितो - उवउज्जति उवग्गहितो। नि० चू० द्वि० १११ आ।

उवग्गहिय-औपग्रहिकम्। ओघ० २१७। उपधिः। उत्त० ५१७।

उवग्गहोवही-औत्पत्तिकं कारणमपेक्ष्य संजमोपकरण इति गृह्यते। नि० चू० प्र० १७९ अ। उपग्रहोपधिः-उपधेर्द्वितीयो भेदः। अवग्रहोपधिः-यः कारणे आपन्ने संयमार्थं गृह्यते सः। ओघ० २०८।

उवग्गाहियं-औपग्रहिकं, सामुदानिकम्। उत्त० १०८।

उवग्गे-उपाग्रे-समीपभूते। विशे० ११७८। प्राप्ते। (महाप्र०)

उवग्घाय - उपोद्घातः-उपोद्घननं- व्याख्येयस्य सूत्रस्य व्याख्यानविधिसमीपीकरणम्। विशे० ६३८। अनु० २५८।

उवग्घायनिज्जुत्तिअणुगमे - उपोद्घननं - व्याख्येयस्य सूत्रस्य व्याख्याविधिसमीपीकरणमुपोद्घातस्तस्य तद्विषया वा निर्युक्तिस्तद्रूपस्तस्या वा अनुगमः उपोद्घातनिर्युक्त्यनुगमः। अनु० २५८। उपोद्घातनिर्युक्त्यनुगमः, निर्युक्त्यनुगमभेदः। आचा० ३।

उवघाइयणिस्सिया - उपघातनिःसृता चौरस्त्वमित्याद्यभ्याख्यानम्। प्रज्ञा० २५६।

उवघाइयाआरोवणा-सार्द्धदिनद्वयस्य पक्षस्य चोपघातनेन लघूनां मासादीनां प्राचीनप्रायश्चित्ते आरोपणा उपघातिकारोपणा। सम० ४७।

उवघात - उपघातो-पीडा व्यापादनं वा। नि० चू० प्र० १३७ आ। अशुद्धता। ठाणा० ३२०। सत्त्वघातादिः। सूत्रस्य द्वात्रिंशद्दोषे द्वितीयः। अनु० २६१। बाधा। ओघ० १३७।

उवघातनिस्सिते-उपघाते-प्राणिवधे निश्रितं-आश्रितं उपघातनिश्रितं, दशमं मृषा। ठाणा० ४८९।

उवघाय-उपघातः-प्रतिसेवणादि। ओघ० २२५। सर्वतो घातनम्। प्रश्न० १३७। संयमात्मप्रवचनबाधात्मकः। उत्त० ५१८। पिण्डादेरकल्पनीयताकरणं, चरणस्य वा शबलीकरणं, आधाकर्म्मत्वादिभिर्दुष्टता। ठाणा० १५९।

उवघायजणयं-उपघातजनकं-सत्त्वोपघातजनकम्। सूत्रदोषविशेषः। आव० ३७५। सत्त्वोपघातादिप्रवर्त्तकम्। विशे० ४६४।

उवघायणामे-यदुदयात् स्वशरीरावयवैरेव शरीरान्तः परिवर्द्धमानैः प्रतिजिह्वागलवृन्दलम्बकचोरदन्तादिभिरुपहन्यते, यद्वा स्वयंकृतोद्बन्धनभैरवप्रपातादिभिरुपघातनाम। प्रज्ञा० ४७३।

उवघायनिस्सिय-उपघातनिसृता-मृषाभाषा भेदः। दश० २०९।

उवघेत्तुं-उपग्रहीतुं, संस्थापयितुं, निर्वापयितुं वा। बृ० द्वि० २१० अ।

उवचए-उपचीयते-उपचयं नीयतेऽनेनेति उपचयः-पुद्गलसङ्ग्रहणसम्पत्, पर्याप्तिरिति। प्रज्ञा० ३०९। प्राभूत्येन चयः। प्रज्ञा० ४३२। स्वस्याबाधाकालस्योपरि ज्ञानावरणीयादिकर्मपुद्गलानां वेदनार्थं निषेकः। प्रज्ञा० २९२।

उवचओ-उपचयः-प्रभूततरा वृद्धिः। पिण्ड० ४१। परिग्रहस्य चतुर्थं नाम। प्रश्न० ९२।

उवचयति - उपचीयते-विशेषत उपचयमायाति। प्रज्ञा० २२८।

उवचरंति - उपचरन्ति-उपसर्गयन्ति। उप-सामीप्येन मांसादिकमश्नन्ति अथवा श्मशानादौ पक्षिणो गृध्रादय उपचरन्ति इति। आचा० ३०८।

उवचरए-उपचरकः-चरः। आचा० ३७७। उपचारकः। आचा० ३६५।

उवचरगो-राजछिद्रान्वेषी। नि० चू० प्र० ३३५ अ।

उवचरित्तु-गृहीत्वा। नि० चू० प्र० २१ अ।

उवचार - उवचरति-पडिजागरति, उवचरति पुच्छति, लोगोपचारमात्रेणागच्छति, साधूणं मज्जाया चेव जं गिलाणस्स वट्टियव्वं एस, ज्ञानादिकं तस्समीपादीहतीत्यर्थः, पच्छित्तं मा मे भविस्सतित्ति निर्जरार्थः एस उपचारः। नि० चू० प्र० ३१९ अ। ग्रहणं अधिगमेत्यर्थः। नि० चू० प्र० २० आ।

उवचारमेत्तं-कल्पनामात्रं। नि० चू० प्र० २१ अ।

उवचिअं - उपचितं-साचितम्। आव० १७६। परिकर्मितम्। औप० १७।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उवचिए-उपशोभितं-भृतं । जं० प्र० २९२ । उपचितं-समृद्धः । ज्ञाता० ९८ ।

उवचिओ - उपचितः-निवेशितः । प्रज्ञा० ८६ । जीवा० २२७, १६० ।

उवचिज्जंति-निषेकरचनतः निकाचनतो वा उपचीयन्ते । भग० २५३ ।

उवचिट्ठइज्जा-उपतिष्ठेत्-विनयेन सेवेत । दश० २४५ ।

उवचिण - उपचितवन्तः-परिपोषणतः । ठाणा० १७९ । उपचयनं-चितस्याबाधाकालं मुक्त्वा ज्ञानावरणीयादितया निषेकः । ठाणा० १९५ । परिपोषणम् । ठाणा० ४१७ ।

उवचिणाइ - प्रदेशबन्धापेक्षया निकाचनापेक्षया वेति । भग० १०२ ।

उवचिणिंसु-उपचितवन्तः । ठाणा० २८९ ।

उवचिय-उपचितं-तेजितम् । प्रज्ञा० ९१ । उपचितं-परिकर्मितम् । राज० ३७ । जीवा० २१० । युक्तम् । जीवा० २०४ । मांसलम् । जीवा० २७१ । समानजातीयप्रकृत्यन्तरदलिकसङ्क्रमेणोपचयं नीतः । प्रज्ञा० ४५९ । भृतः । जं० प्र० ४२ । परिकर्मितम् । भग० ५४० । विशिष्टं परिकर्मितम् । राज० ९३ । उपचयः-पौनःपुन्येन प्रदेशानुभागादेर्वर्धनम् । भग० ५३ । औपचयिकः-उपचयनिर्वृत्तः औपयिको वा-उचितः । प्रश्न० ८१ । निवेशितः । औप० ५ । बहुशः प्रदेशसामीप्येन शरीरे चिता एवेति । भग० २४ । युक्तः । जं० प्र० ४८ ।

उवचीयइ - उपचीयते-उपचयमायाति । जीवा० ३२२, ३०६ । उपचयमुपगच्छति । जीवा० ४०० ।

उवच्छगो-कक्खो । नि० चू० प्र० २११ अ ।

उवच्छुभे । आव० १८० ।

उवजाइय-उपयाचिते-देवताराधने भवः औपयाचितकः । ठाणा० ५१६ ।

उवजीवइ-उपजीवति-अनुभवति । भग० ११२ ।

उवजीवति - उपजीवति-जीवनार्थमाश्रयते । व्य० प्र० १६३ आ ।

उवजीविओ-उपजीवितः । ठाणा० ३७२ ।

उवजेमणा-रसवती । नि० चू० प्र० ३४९ आ ।

उवजोइया-ज्योतिषः समीपे ये त उपज्योतिषस्त एवोपज्योतिष्काः-अग्निसमीपवर्तिनो महानसिका ऋत्विजो वा । उत्त० ३६४ ।

उवज्झाए-उपाध्यायः । प्रज्ञा० ३२७ । अध्यापकः । आव० ३५३ ।

उवज्झाओ - उपयोगपूर्वकं पापपरिवर्जनतो ध्यानारोहणेन कर्माण्यपनयतीति उपाध्यायः । आव० ४४९ ।

उवज्झाय-उपाध्यायः-उप-समीपमागत्य अधीयते-पठयते यस्य सः, उप अधि-आधिक्येन गम्यते सः, उप अधि-आधिक्येन स्मर्यते सूत्रतो जिनप्रवचनं यस्मात् सः, उपाधिः-सन्निधिस्तेन तत्र वा आयः-लाभः श्रुतस्य यस्य, उपाधीनां-विशेषणानां आयो-लाभः यस्मात् सः, उपाधिरेव-सन्निधिरेव आयं-इष्टफलं दैवजनितत्वेन आयानां-इष्टफलानां समूहस्तदेकहेतुत्वाद् यस्य, आधीनां-मनःपीडानां आयो-लाभ आध्यायः, अधियां-कुबुद्धीनां आयोऽध्यायः, दुर्ध्यानं वाऽध्यायः, उपहत आध्यायो वा अध्यायो येन सः । भग० ३ । सूत्रदाता । ठाणा० २९९ । आचारगोचरविनयं स्वाध्यायं वा आचार्यादनु तस्मादुपाधीयते सङ्ग्रहोपग्रहानुग्रहार्थं वा । तत्त्वा० ९-२४ । उपगम्योपेत्य यतो येभ्योऽधीयते पठन्ति शिष्यास्त उपाध्यायाः, यच्च यस्मादुप-समीपे गतं-प्राप्तं शिष्यमध्यापयन्ति तत उपाध्यायाः, यस्माच्च स्वपरहितस्योपायध्यायका उपायचिन्तकास्ततस्त उपाध्यायाः । विशे० १२३० । सूत्रार्थतदुभयविदः ज्ञानदर्शनचारित्रेषूद्युक्ता-उपयुक्तास्तथा शिष्याणां सूत्रवाचनाप्रदानादिनिष्पादका एतादृशा भवन्ति । व्य० प्र० १७१ आ ।

उवट्टगा । नि० चू० प्र० २३२ आ ।

उवट्टणं-सकृत् उवट्टणं । नि० चू० प्र० १९० आ ।

उवट्टित्ता-उद्वृत्य-तत्परित्यागेनान्यत्र गत्वा । उत्त० २९६ ।

उवट्ठिय-उपस्थापितः । आव० २८८ ।

उवट्ठवेति-उपस्थापयति, उपढौकयति, प्राभृतीकरोति । जं० प्र० २४४ ।

उवट्ठाइ-उत्तिष्ठते । आव० ३१८ ।

उवट्ठाएज्जा-उपतिष्ठेत् , उपस्थानम्-परलोकक्रियास्वभ्युपगमं कुर्यादित्यर्थः । भग० ६४ ।

उवट्ठाणं-गोसादिठाणं । नि० चू० द्वि० ७० अ । उपस्थानेन-धर्मचरणाभ्यासोद्यमेन वर्तते इति उपस्थानः । आचा० २२७ ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उवट्ठाणगिह – उपस्थानगृहं – आस्थानमण्डपः। ठाणा० २९४। भग० २००।

उवट्ठाणसाला–उपस्थानशाला–आस्थानसभा। औप० २३। आस्थानशाला। आव० ३००। उपवेशनमण्डपः। निरय० ८। आस्थानमण्डपः। निरय० १०। जं० प्र० १८७।

उवट्ठाणा – मासद्वयं चतुर्मासद्वयं चावर्जयित्वा पुनस्तत्रैव वसतामुपस्थानेति। ठाणा० ३२१।

उवट्ठावणा–उपस्थापना–महाव्रतारोपणरूपा। उत्त० ५६८। उप–सामीप्येन सर्वदावस्थानलक्षणेन तिष्ठन्त्यस्यामिति उपस्थापना–शय्या। व्य० द्वि० १०४ अ।

उवट्ठावणाए गहणं–तत्रोपस्थापनायां विधीयमानायां हस्तिदन्तोन्नताकारहस्तादिभिर्यद् रजोहरणादि गृह्यते तद् उपस्थापनाग्रहणम्। बृ० द्वि० २५६ अ।

उवट्ठावणायरिते–उत्थापनयाचार्यः। ठाणा० २३९।

उवट्ठाविए गहणं – उपस्थापितस्य – छेदोपस्थापनीयचारित्रं प्रापितस्य यद् उपधेर्धारणं परिभोगो वा तद् उपस्थापितग्रहणम्। बृ० द्वि० २८६ अ।

उवट्ठावित्तए – उत्थापयितुं – महाव्रतेषु व्यवस्थापयितुम्। ठाणा० ५७।

उवट्ठिअ–उपस्थितं–उद्यतम्। ओघ० १७६।

उवट्ठिए–उपस्थितं–प्रत्युद्यतम्। आव० ५४१। दीक्षितः। बृ० द्वि० २६४ अ। अत्यन्तावस्थायि। भग० १००।

उवट्टिता–दूरीकृता। नि० चू० द्वि० ९४ आ।

उवट्टिताओ–गोलोपलखनिः। नि० चू० द्वि० ४० आ।

उवट्ठिय–उपस्थापितः। आव० ५५९। उपस्थितः–उद्यतः। उत्त० ६३७। प्रत्यासन्नीभूतम्। उत्त० ६६८।

उवणयं–उपनयनं–कलाग्रहणार्थं नयनं धर्मश्रवणनिमित्तं वा साधुसकाशं नयनम्। आव० १२९।

उवणयणं–कलाग्राहणम्। भग० ५४५। उपनयनं–बालानां कलाग्रहणम्। प्रश्न० ३९।

उवणिक्खिविउं–उपनिक्षिप्य। आव० ५५५।

उवणिवाय–उपनिपातः–जनमीलकः। ठाणा० ४२।

उवणिविट्ठ–उपविष्टं–सामीप्येन स्थितम्। जीवा० १९९।

उवणिहि – उप–सामीप्येन निधिः उपनिधिः–एकस्मिन् विवक्षितेऽर्थे पूर्वं व्यवस्थापिते तत्समीप एवापरापरस्य वक्ष्यमाणपूर्वानुपूर्व्यादिक्रमेण यन्निक्षेपणं सः। अनु० ५२।

उवणीअ–उपनीतः–नियोजितः। ठाणा० २५९। उपसंहारोपनययुक्तमुपनीतम्। अनु० १३३। उपनयोपसंहृतमुपनीतम्। अनु० २६२। उपसंहारयुक्तम्। ठाणा० ३९७। प्रापितम्। ठाणा० ४९४। निगमितं, योजितम्। ठाणा० २५९।

उवणीए–उपनीतं–योजितम्। जं० प्र० १०५।

उवणीते–उपनीतं–प्रापितं, दशमो विशेषः। ठाणा० ४९२।

उवणीय–उपनीतं–योजितम्। जीवा० २६८। उपनयोपसंहृतम्। आव० ३७६। विनीतं, ढौकितं, दायकेन वर्णितगुणं वा। औप० ३९। प्रापितः। आचा० ७८।

उवणीयअवणीयवयणं – उपनीतापनीतवचनं – कश्चिद् गुणः प्रशस्यः कश्चिन्निन्द्यः। आचा० ३८७।

उवणीयवयणं – उपनीतवचनं–प्रशंसावचनम्। आचा० ३८७। प्रज्ञा० २६७। गुणोपनयनरूपम्। प्रश्न० ११८।

उवणीयावणीयवयणं – उपनीतापनीतवचनं – यत्प्रशस्य निन्दति। प्रज्ञा० २६७। यत्रैकं गुणमुपनीय गुणान्तरमपनीयते तत्। प्रश्न० ११८।

उवणेइ–उपनयति, प्राभृतीकरोति। जं० प्र० २०४।

उवण्णं–प्रोज्झितं। नि० चू० प्र० २७४ आ।

उवण्णत्थ–उपन्यस्तं–उपकल्पितम्। दश० १७१।

उवण्हाणयं–माषचूर्णादिसिणाणं। नि० चू० प्र० ११६ आ।

उवतत्तो–उपतप्तः–आपन्नसंतापः। प्रश्न० १९।

उवतेसणे–उपदिश्यत इति उपदेशनं–उपदेशक्रियाया व्याप्यमुपलक्ष्यत्वादस्य क्रियाया यद् व्याप्यं तत् कर्म्मेत्यर्थः। द्वितीया वचनविभक्तिः। ठाणा० ४२८।

उवतेसरुई–उपदेशः–गुर्वादिना कथनं तेन रुचिर्यस्येत्युपदेशरुचिः। ठाणा० ५०३। उत्त० ५६३।

उवत्तावलिए–चतत्रावलितः। सूत्र० ३८७।

उवत्तिया–अपवर्त्तिता। ज्ञाता० ४८।

उवत्थड–उपस्तीर्णः–उपच्छादितः। भग० ३७, १५३।

उवत्थमं–अस्तं। नि० चू० तृ० ६० अ।

उवत्थाण–उपस्थानं–प्रत्यासक्तिगमनम्। निरय० ३३।

उवत्थाणियं–उपस्थानं–प्रत्यासक्तिगमनं तत्र प्रेक्षणककरणाय यदा विधत्ते। निरय० ३३।

उवत्थाणीअं – उपस्थानिकं–प्राभृतम्। जं० प्र० २०३, २५२।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उवत्थिए-अभ्युपगतः । ज्ञाता० २२० ।

उवत्थिया-उपस्थिता-उपनता । सम० १८ ।

उवदंसं-उपदर्शनम् । आव० ७२६ ।

उवदंसणकूड-उपदर्शनकूटं, उपदर्शननामकं कूटम् । जं० प्र० ३७७ ।

उवदंसिज्जंति - उपदर्श्यन्ते-निगमनेन शिष्यबुद्धौ निःशङ्कं व्यवस्थाप्यन्ते । नंदी २१२ । उपदर्श्यन्ते उपनयनिगमनाभ्यां सकलनयाभिप्रायतो वा । सम० १०९ ।

उवदंसिया-उप-सामीप्येन यथा श्रोतॄणां झटिति यथाव स्थितवस्तुतत्त्वावबोधो भवति तथा स्फुटवचनैरित्यर्थः, दर्शिताः-श्रवणगोचरं नीता उपदिष्टाः । प्रज्ञा० ४ ।

उवदंसेइ-सकलनययुक्तिभिः उपदर्शयति । भग० ७११ । ठाणा० ५०३ । उपदर्शयति-प्रकाशयति । भग० १४९ ।

उवदिट्ठाभावमूलं-उपदेष्टृभावमूलं - उपदेष्टा-यैः कर्मभिः प्राणिनो मूलत्वेनोत्पद्यन्ते । आचा० ८८ ।

उवद्दवा-उपद्रवाः-राजचौर्यादिकृताः । भग० ४६९ ।

उवद्दवेइ-उपद्रवयति-उपद्रवं करोति । ठाणा० ३०५ ।

उवद्दवेह-उपद्रवयथ-मारयथ । भग० ३१८ ।

उवधाणं-उपदधातीत्युपधानं-तपः । दश० १०४ ।

उवधायपंडगो-पंडगस्स बीयो भेओ । नि० चू० द्वि० ३१ अ ।

उवधारणया-धार्यतेऽनेनेति धारणं, उप-सामीप्येन धारणं उपधारणं-व्यञ्जनावग्रहेऽपि द्वितीयादिसमयेषु प्रतिसमयपूर्वापूर्वशब्दादिपुद्गलादानपुरस्सरं प्राक्तनप्राक्तनसमयगृहीतशब्दादिपुद्गलधारणपरिणामः तद्भाव उपधारणता । नंदी १७४ । उपधारणता - अविच्युतिस्मृतिवासनाविषयकरणम् । ठाणा० ४४१ ।

उवधारियं-उपधारितं-अवधारितम् । भग० १०१ ।

उवनंद-उपनन्दः । आव० २०१ ।

उवनगरगामं-उपनगरग्रामः । आव० ३०१ ।

उवनिक्खित्ते-उपनिक्षिप्तः-व्यवस्थापितः । आचा० ३४४ ।

उवनिग्गय-उपविनिर्गतः-निरन्तरविनिर्गतः । राज० ६ ।

उवनिहिते-उपनिधीयत इति उपनिधिः-प्रत्यासन्नं यद्यथाकथञ्चिदानीतं तेन चरति तद्ग्रहणायेत्यर्थः इत्यौपनिधिकः, उपनिहितमेव वा यस्य ग्रहणविषयतयाऽस्ति स प्रज्ञादेराकृतिगणत्वेन मत्वर्थीयाणप्रत्यये औपनिहित इति । ठाणा० २९८ ।

उवनिहिय-उपनिधिना - प्रत्यासत्त्या चरति-प्रत्यासन्नमेव गृह्णाति यः स औपनिधिकः । प्रश्न० १०६ ।

उवनिही-उपनिधिः-प्रत्यासत्तिः । प्रश्न० १०६ ।

उवन्नास-उपन्यसनं उपन्यासः । दश० ३५ ।

उवन्नासोवणए-वादिना अभिमतार्थसाधनाय कृते वस्तूपन्यासे तद्विघटनाय यः प्रतिवादिना विरुद्धार्थोपनयः क्रियते पर्यनुयोगोपन्यासे वा य उत्तरोपनयः स उपन्यासोपनयः । ठाणा० २५४ ।

उवप्पयाण-उपप्रदानं-अभिमतार्थदानम् । विपा० ६५ । उपप्रदानम् । दश० १०९ ।

उवब्बूहियं - उपबृंहितं-समर्थितं, अनुमतं वा । आव० ५३९ ।

उवभोग-उपभुज्यत इति उपभोगः-सकृद्भोगोऽशनपानादि, अन्तर्भोगः, आहारादि वा । आव० ८२८ । सकृद्भोगः । भग० २९७ । आव० ८३० । पुनःपुनर्भुज्यत इति उपभोगः-वस्त्रालङ्कारादि । प्रज्ञा० ४७५ । ण्हाणवत्थाभरणगंधमल्लाणुलेवणभूवणवासतंबोलादि । नि० चू० तृ० १ आ । धारणमुपभोगः । आव० ३२५ । उपभोगः-पौनःपुन्येन चोपभोजनमुपभोगः । भग० ३५० ।

उवभोगंतराए - उपभोगान्तरायः - यदुदयवशात् सत्यपि विशिष्टवस्त्रालङ्कारादिसम्भवेऽसति च प्रत्याख्यानपरिणामे वैराग्ये वा केवलकार्पण्यान्नोत्सहते भोक्तुं तत् । प्रज्ञा० ४७५ ।

उवम-उपमीयतेऽनेन दार्ष्टान्तिकोऽर्थ इत्युपमानम् । दश० ३४ ।

उवमा-उपमा-सादृश्यम् । उत्त० २७९ । दृष्टान्ताः । बृ० प्र० १६८ आ । सादृश्योपदर्शनरूपा । उत्त० २७२ । उपमादोषः-हीनाधिकोपमानाभिधानं, अष्टाविंशतितमः सूत्रदोषः । आव० ३७४ । उपमा । प्रज्ञा० ३६४ । खाद्यविशेषः । जीवा० २७८ । उपेत्युपयोगपूर्वकं मेति ज्ञानं, उपमा-सम्प्रधारणा । उत्त० २२४ ।

उवमाणं-उपमानं-दृष्टान्तः । ओघ० १७ ।

उवमादोसो-उपमादोषः-यत्र हीनोपमा क्रियते । सूत्रस्य द्वात्रिंशद्दोषेऽष्टाविंशतितमो दोषः । अनु० २६२ ।

उवयंति-अवपतन्ति-अवतरन्ति । आचा० २६६ ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उवयरयं-अपवरकम्। आव० ७२२।

उवयातिते-उपयाचिते-देवताराधने भवः औपयाचितकः। ठाणा० ५१६।

उवयार-उपचारः। आव० ५६, २१३। पूजा। राज० ३६। प्रज्ञा० ८६। जीवा० २२७, २५५। जं० प्र० ७७। औप० ५। आराधनाप्रकारः। दश० २५०। लोकव्यवहारः। औप० १३। देवतापूजा। प्रश्न० ५१। पूजा। उपकारः। प्रश्न० ११७। दश० ७९। पूजा। भग० ५४०। व्यवहारः। ठाणा० ४०९। व्यवहारः, पूजा वा। भग० ९२५। यतो मुख्याभावे सति प्रयोजने निमित्ते चोपचारः प्रवर्त्तते। विशे० १६६।

उवयारियलेणं-गृहस्य पीठबन्धकल्पम्। भग० १४६।

उवयारिया-उपकरोति-उपष्टभ्नाति प्रासादावतंसकानित्युपकारिका-राजधानीप्रभुसत्कप्रासादावतंसकादीनां पीठिका। जं० प्र० ३२१।

उवयालि-अनुत्तरोपपातिकदशानां प्रथमवर्गस्य तृतीयमध्ययनम्। अनुत्त० १७२।

उवयाली-अन्तकृद्दशानां चतुर्थवर्गस्य तृतीयमध्ययनम्। अन्त० १४।

उवयिगा-उद्देहिया। नि० चू० प्र० ५३आ।

उवयिया-त्रीन्द्रियजन्तुविशेषः। जीवा० ३२।

उवयोगपदं-प्रज्ञापनायामेकोनत्रिंशत्तमं पदम्। भग० ७१३।

उवरए-उपरतः-सङ्कुचितगात्रः। आचा० २०४। उपरतः-कालगतः। व्य० द्वि० ३४आ।

उवरति-उपरतिः-विरतिः। ठाणा० ३।

उवरतो-उपरतः-रावः। उत्त० २१८।

उवरय-उद्दलको-वियोजकः। सम० ४७। उपरताः। आचा० ३५०।

उवराग-उपरागः-ग्रहणम्। भग० १४७। उपरञ्जनं ग्रहणमित्यर्थः। प्रश्न० ३९।

उवराते-उपरागः-राहुविमानतेजसोपरञ्जनम्। ठाणा० ४७६।

उवरिं-उपरि-कुड्यस्थाने। ओघ० १७५। नीव्रादौ। ओघ० १६२। अग्रे। ठाणा० २२५।

उवरिएणं-जत्थ गामे संखडी तत्थेव गंतुकामा जे वा तस्स गामस्स उवरिएणंति मज्झेण गंतुकामा। नि० चू० प्र० ३१६अ। उपरितनः। आव० २६२।

उवरिचरे-उपरिचरः सत्यवादी वसू राजा। जीवा० १२१।

उवरिभासा-उपरिभाषा-उत्तरकालं तदेव किंलाधिकं यद् भाषते सा। आव० ७९२।

उवरिमागारो-उपरिमाकारः-उपरितन आकारः-उत्तरङ्गादिरूपः। जीवा० २१६।

उवरियलेणं-उपरितलम्। भग० १९५।

उवरिलुए-उपरितनं, उपरिभवम्। दश० २११।

उवरिल्ले-उपरितनम्। अनु० १७७।

उवरिल्ले माणसे-उपरितनमध्यमाधस्तनानां मानसानां सद्भावात् तदन्यव्यवच्छेदायोपरितने, माणसे-गंगादिप्रऌपणतः प्रागुक्तस्वरूपे सरसि सरःप्रमाणायुष्कयुक्ते इत्यर्थः। भग० ६७४।

उवरिल्ले माणसुत्तरे-उपरितनमानसोत्तरे। भग० ६७४।

उवरुद्द-उपरौद्रः-नरके षष्ठः परमाधार्मिकः। आव० ६५०। यस्तु तेषामङ्गोपाङ्गानि भनक्ति सोऽत्यन्तरौद्रत्वादुपरौद्रः, नरके षष्ठः परमाधार्मिकः। सम० २८। उपरुद्रः-षष्ठः परमाधार्मिकः। सूत्र० १२८।

उवरुवरि-उपर्युपरि-निरन्तरम्। प्रश्न० ५१।

उवरेगं-उपरेकं-एकान्तं, निर्व्यापारता वा। उत्त० १९३।

उवरोह-उपरोधः-निषेधः। दश० १०८। सङ्घट्टनादिलक्षणः। आव० ५९३। उपरोधः-उपघातः। विशे० ७४८।

उवलंबयरज्जू-विमानानामुपरितोऽधस्ताद्यावद् रज्जुः। (दे०)

उवल-उपलः-गण्डशैलादिः। उत्त० ६८९। टङ्काद्युपकरणपरिकर्मणा योग्यः पाषाणः। जीवा० २३। प्रज्ञा० २७। पृथिवीभेदः। आचा० २९। दग्धपाषाणः। भग० २९३। छिन्नपासाणा। नि० चू० द्वि० ८०अ। छिन्नपाषाणाः। बृ० तृ० १६२आ।

उवलद्धिमंति-उपलब्धिमन्ति-द्रष्टृणि। दश० १२९।

उवलद्धी-उपलब्धिः, उपलब्धये-उपलब्धिनिमित्तम्। आव० २८०।

उवलभसि-उपलम्भयसि, दर्शयसि। भग० ६८३।

उवलभेज्जा-उपलभेत-प्राप्नुयात्। जीवा० १२३।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उवलिंपिज्ज-उपलिम्पनम् । आचा० १३५ ।

उवलित्ता-जातिजुंगितामेओ । नि० चू० द्वि० ४३आ ।

उवलेद्दा-संतुष्ठा । उत्त० १९२ ।

उवलेवण-उपलेपनं छगणादिना । अनु० २६ । छगलमट्टियाए लिंवणं । नि० चू० प्र० २३१अ ।

उवलेवणकओवयारो-कृतोपलेपनोपचार: ।आव० ४१६।

उवल्लियंती-उपलीयन्ते-आश्रयन्ति । व्य० द्वि० २७८आ ।

उवल्लिसामि-उपालयिष्ये-वत्स्यामि । आचा० ४०६ ।

उववज्जति-उत्पद्यते । जीवा० ११० ।

उववज्जिऊण-उपयुज्य-उपयोगं दत्त्वा । ओघ० ११६ ।

उववज्झा-उपवाह्याः-राजादिवल्लभाः। औपवाह्याः-राजादिवल्लभानां कर्मकरा इति । दश० २४८ ।

उववण्णो-उपपन्नः । जीवा० ९७ ।

उववत्तारो-वचनव्यत्ययादुपपत्ता भवति इति ।ठाणा० ४२०।

उववन्नो-उपपन्नः-आश्रितः । सूर्य० २८१ ।

उववाइए-उपपातः-प्रादुर्भावो जन्मान्तरसंक्रान्तिः, उपपाते भवः औपपातिकः । आचा० १६ । उपपादुकः-भवान्तरसङ्क्रान्तिभाक् । आचा० २० ।

उववाइय-उपपातेन निर्वृत्तः औपपातिकः-भवाद्भवान्तरगामीति । सूत्र० २० । उपयाच्यते-मृग्यते स्म यत्तत् उपयाचितं-ईप्सितं वस्तु । ज्ञाता० ८४ ।

उववाइया-उपपाताज्जाताः उपपातजाः अथवा उपपाते भवाः औपपातिकाः-देवाः नारकाश्च । दश० १४१ ।

उववाए - उपपातः - उपपाताभिमुख्येनापान्तरालगतिवृत्त्येत्यर्थः। भग० ९६३ । देवजन्म । ठाणा० ४१९ । नादकाग्रुपपातार्थः, द्वादशशते षष्ठोद्देशकः। भग० ५९६ । उपपातः-प्रादुर्भावः । प्रज्ञा० ३२८ ।

उववाएणं-उपपतनमुपपातः, बादरपृथ्वीकायिकानां पर्याप्तानां यदनन्तरमुक्तं स्थानं तत्प्राप्त्याभिमुख्यमिति भावः तेनोपपातेन, उपपातमङ्गीकृत्य । प्रज्ञा० ७३ ।

उववात-उपपातं-नारकदेवानां जन्म । ठाणा० ४६६ । उपपातः-गमनमात्रम् । ठाणा० ३७६ ।

उववातसभा-उपपातसभा-यस्यामुत्पद्यते सा । ठाणा० ३५२ ।

उववातो-उवसंपज्जणं । नि० चू० प्र० २४१अ ।

उववायं-उपपातं-जन्म । आचा० १६३ । भवनपतिस्वस्थानप्राप्त्याभिमुख्यम् । भग० १४३ । उत्पातेन निर्वृत्तं औत्पातिकम् । आव० ७३१ । उप-समीपे पतनं-स्थानं उपपातः हग्वचनविषयदेशावस्थानं । उत्त० ४४ । उपपातः-सेवा । भग० १६८ ।

उववायगई-उपपाताय-उत्पादाय गमनं सा उपपातगतिः । भग० ३८१ ।

उववायगती-उपपात एव गतिः उपपातगतिः । गतिप्रपातस्य चतुर्थो भेदः । प्रज्ञा० ३२६ ।

उववायसभा-सिद्धायतनस्योत्तरपूर्वस्यां सभा उपपातसभा। जीवा० २३६ ।

उववास-उपवासः, अभक्तार्थकरणम् । ठाणा० १२६ ।

उववूह-उपबृंहणं-समानधार्मिकाणां सद्गुणप्रशंसनेन तद्वृद्धिकरणम् । दश० १०२ । उपबृंहणमुपबृंहा-दर्शनादिगुणान्वितानां सुलब्धजन्मानो यूयं युक्तं च भवादृशामिदमित्यादिवचोभिस्तत्तद्गुणपरिवर्द्धनं सा । उत्त० ५६७ । समानधार्मिकाणां सद्गुणप्रशंसनेन तद्वृद्धिकरणम् । प्रज्ञा० ५६ ।

उववूहइ-उपबृंहते-समर्थयति । दश० ४४ ।

उववेओ - उपपेत इति लक्षणव्यञ्जनगुणोपपेतः । ठाणा० ४६१ ।

उववेय - उपपेतः-युक्तः । जीवा० २७४ । भग० ११९ । उप अप इत इति शब्दत्रयस्य स्थाने शकन्ध्वादिदर्शनादुपपेतः-युक्तः । ज्ञाता० ११ ।

उवसंकमित्ता-उपसङ्क्रम्य । सूर्य० ११ ।

उवसंकमित्तु-उपसङ्क्रम्य, आसन्नीभूय । आचा० ३३१। उपसङ्क्रम्य-उपेत्य । आचा० २७१ ।

उवसंखा-उपसंख्या-सम्यग्यथावस्थितार्थपरिज्ञानम् । सूत्र० २१४ ।

उवसंत-उपशान्तं-अनाकुलम् । ओघ० १७६ । यत् शेषं सत्तायामनुदयागतं वर्त्तते तद् । विष्कम्भितोदयमुपनीतमिथ्यास्वभावं च । विशे० २८६ । किञ्चिन्मिथ्यात्वरूपतामपनीय सम्यक्त्वरूपतया परिणतं किञ्चिन्मिथ्यात्वरूपमेव । बृ० प्र० २१आ । रागद्वेषपावकोपशमाद् उपशान्तः । आचा० १५० । रूपालोकानाद्यौत्सुक्यत्यागतः । अनु० १४० । अन्तर्वृत्त्या उपशान्तः । भग० ४९० । विष्कम्भितो-

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दयमपनीतमिथ्यास्वभावं च । विष्कम्भितोदयमित्यर्थः । ठाणा० ४८ । उपशान्तं-न सर्वथाऽभावमापन्नं, निकाचितावयवस्थोद्रेकरहितं वा । प्रज्ञा० ४०३ । औप० ३५ । जं० प्र० १४६ । जं० प्र० ३८९ । जम्बूद्वीपैरवते तीर्थकरनाम । सम० १५३ । पवज्जापरिणतं । नि० चू० द्वि० २८अ । उपशान्तः-उपरतः । दश० २०६ । सूत्र० ४१७ । अपगतसन्देहः संवृत्त इति । सूत्र० ४०९ । अनुदयावस्थः । प्रज्ञा० २९१ ।

उवसंतकसातो-उपशान्तकषायः । उत्त० २५७ ।

उवसंतजीवी-अन्तर्वृत्त्यपेक्षया उपशान्तजीवी । प्रश्न० १०६ ।

उवसंतमोह-उपशान्तमोहः-अनुत्कटवेदमोहनीयः । भग० २२३ । श्रेणिपरिसमाप्तावन्तर्मुहूर्त्तं यावदुपशांतवीतरागः । भूतग्रामस्यैकादशं गुणस्थानम् । आव० ६५० ।

उवसंतमोहनिज्जो-उपशान्तमोहनीयः- उपशान्तं-अनुदयं प्राप्तं मोहनीयं दर्शनमोहनीयं यस्यासौ । उत्त० ३०६ ।

उवसंपजहण-उवसंपदनं उपसम्पद्-अन्यरूपप्रतिपत्तिः, सा च हानं च स्वरूपपरित्याग उपसम्पद्धानम् । उत्त० ४७० ।

उवसंपज्जइ-उपसम्पद्यते । आव० ८२५ ।

उवसंपज्जणा-उपसम्पदः । दश० १०५ ।

उवसंपज्जमाणगति-उपसंपद्यमानगतिः-यदन्यमुपसम्पद्य-आश्रित्य तदवष्टम्भेन गमनम् । विहायोगतेस्तृतीयो भेदः । प्रज्ञा० ३२७ ।

उवसंपज्जसेणियपरिकम्मे-पञ्चमं परिकर्म । सम० १२८ ।

उवसंपज्जित्ता-उपसम्पद्य-सामीप्येनाङ्गीकृत्य । दश० १५० ।

उवसंपन्नं-उपसम्पन्नं-नियमायोस्थितम् । सूत्र० ४१० ।

उवसंपया-उपसंपत्-सामीप्येनाङ्गीकरणं यदेतदुत्प्रव्रजनम् । दश० २७३ । सामाचार्या दशमो भेदः । उपसम्पत्-इतो भवदीयोऽहमित्यभ्युपगमः । ठाणा ४९९ । उपसम्पत् । आव० २५९ । सामाचार्या दशमो भेदः । उपसम्पत्-ज्ञानादिनिमित्तमाचार्यान्तराश्रयणम् । भग० ९२० । उपसंपन्निरुप-संपत्-ज्ञानाद्यर्थं भवदीयोऽहमित्यभ्युपगमः । ठाणा० १४० । त्वदीयोऽहमित्येवं श्रुताद्यर्थमन्यदीयसत्ताभ्युपगमः । अनु० १०३ । उवसंपदनं उपसम्पत्-अन्यरूपप्रतिपत्तिः । उत्त० ४७० ।

उवसंहार-उपसंहारः-उपनयः । दश० ३२ । बृ० तृ० १३६आ ।

उवसग्ग-उपसृज्यते-धातुसमीपे नियुज्यते इति उपसर्गः । प्रश्न० ११७ । बाधाविशेषाः । ठाणा० २८० । राजादिजनितः । ओघ० १९० । उप-सामीप्येन सर्जनम्, उपसृज्यतेऽनेनेति वा करणसाधनः, उपसृज्यतेऽसाविति वा कर्मसाधनः । आव० ४०४ । प्रव्रज्याग्रहणे निवारणम् । पिण्ड० १३९ । देवादिकृतोपद्रवाः । ठाणा० ५२३ । राजस्वजनादिकृतो देवमनुष्यतिर्यक्कृतो वा । पिण्ड० १७० । उप-सामीप्येन सृज्यते तिर्यग्मनुष्यामरैः कर्मवशगेनात्मना क्रियत इति उपसर्गः । उत्त० १०९ । उपसर्गः-उपसर्जनं, धर्मभ्रंशनम् । दिव्याद्यः । भग० १०१ ।

उवसग्गपरिण्णा-उपसर्गपरिज्ञा, सूत्रकृताङ्गाद्यश्रुतस्कन्धे तृतीयमध्ययनम् । आव० ६५१ । उत्त० ६१४ ।

उवसग्गपरिन्ना-सूत्रकृताङ्गे तृतीयमध्ययनम् । सम० ३१ ।

उवसग्गसहो-उपसर्गसहः । आव० ६४८ ।

उवसत्तो-उपसक्तः-गाढमासक्तः । उत्त० ६३२ ।

उवसमंति-उपशाम्यन्ति-संवर्त्तकवायुविकुर्वणान्निवर्त्तन्ते, संवर्त्तकवातविकुर्वणमुपसंहरन्तीति भावः । राज० २३ ।

उवसम-उपशममिति औपशमिकम् । विपाकोदयविष्कम्भणलक्षणः । दश० ४३ । उपशमः-विपाकोदयविष्कम्भणलक्षणः । नंदी ७७ । क्रोधाद्युदयाभावे भवति । आचा० १५० । शान्तिरूपः । दश० २३४ । पञ्चदशदिवसनाम । जं० प्र० ४९० । सूर्य० १४७ । क्षायोपशमिकः । सूत्र० ६ । त्रिंशतितमो मुहूर्तनाम । जं० प्र० ४९१ । मध्यस्थपरिणामः । आव० ८५१ । उदीर्णस्य क्षयः अनुदीर्णस्य च विपाकतः प्रदेशतश्चाननुभवनम् । सर्वथैव विष्कम्भितोदयत्वमित्यर्थः । भग० ५९ । खमा । दश० चू० १२४ । उदयनिरोधोदयप्राप्ताफलीकरणम् । दश० २३४ ।

उवसमणा-उपशमना-उदयोदीरणानिधत्तनिकाचनाकरणानामयोग्यत्वेन कर्म्मणोऽवस्थापनम् । ठाणा० २२१ ।

उवसमविवेयसंवरं-उपशमविवेकसंवरम्, चिलातस्योपदेशः । आव० ३७१ ।

उवसमिए-उपशमः-उदीर्णस्य कर्म्मणःक्षयोऽनुदीर्णस्य विष्कम्भितोदयत्वं स एवौपशमिकः-क्रियामात्रं, उपशमेन वा

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

निर्वृतः औपशमिकः–सम्यग्दर्शनादि । भग० ६४९ । औपशमिकः – उपशमनमुपशमः–कर्मणोऽनुदयाक्षीणावस्था भस्मपटलावच्छन्नाग्निवत् स एव, तेन वा निर्वृतः । अनु० ११४ ।

उवसामिअं – उपशमितं – भस्मछन्नाग्निकल्पतां प्रापितम् । आव० ७९ ।

उवसामेमाण–क्षुद्रव्यन्तराधिष्ठितं समयप्रसिद्धविधिनोपशमयन्त इति । ठाणा० ३५३

उवसाहिज्जउत्ति–पच्यताम् । नि० चू० प्र० ३४९आ ।

उवसित–उपाश्रितः–अङ्गीकृतः । वैयावृत्त्यकरत्वादिना प्रत्यासन्नतरः । द्वेषः । शिष्यप्रतीच्छककुलाद्यपेक्षा । भग० ३८५ ।

उवस्सए–उपाश्रयः । प्रश्न० १२७ ।

उवस्सओ–उपाश्रयः–वसतिः । प्रश्न० १२७ ।

उवस्सग–उपाश्रयः–वसतिः । ओघ० १७३ ।

उवस्सगा–उपाश्रयाः । बृ० द्वि० १८३अ ।

उवस्सते–उपाश्रयः–निलयः । प्रश्न० १२८ ।

उवस्सय – उपाश्रयः –वसतिः । ओघ० ६५, १७३ । दश० २१८ । जं० प्र० १२१ । उपाश्रयः–गृहपतिगृहादिकम् । ठाणा० ३१५ । वसतेर्वृत्तिपरिक्षिप्तः, परेषामनालोकवत इत्यर्थः । ज्ञाता० २०५ । उपाश्रयाः–उपाश्रीयन्ते–भज्यन्ते शीतादित्राणार्थं ये ते उपाश्रयाः–वसतयः । ठाणा० १५७ । पडिस्सयो । सव्वगं वा आसणं । दश० चू० १११ ।

उवस्सयसंकिलेसे–द्वितीयः संक्लेशः । उपाश्रयो–वसतिस्तद्विषयः सङ्क्लेशः–असमाधिः उपाश्रयसङ्क्लेशः । ठाणा० ४८९ ।

उवस्सित–उपाश्रितः–द्वेषः । शिष्यकुलाद्यपेक्षा । ठाणा० ४४१ । द्वेषः, शिष्यप्रतीच्छककुलाद्यपेक्षा । ठाणा० ३१९ ।

उवहडे – उपहृतं – भोजनस्थाने ढौकितं भक्तमिति भावः । ठाणा० १४८ ।

उवहतो–अविसुद्धो । नि० चू० द्वि० ११६अ ।

उवहय–उपहतिः । उत्त० १४५ । सदोसं । नि० चू० तृ० ८१आ ।

उवहयपरिणामो–उपहतपरिणामः । आव० ५१३ ।

उवहरइ–उपहरति–विनाशयति । ज्ञाता० १९२ ।

उवहाणं–उपधानं–तपः । सूत्र० ६५, ६९, ७५ । तपश्चरणम् । सूत्र० २५१ । अनशनादिकं तपः । सूत्र० ५८ । आगमोपचाररूपमाचाम्लादि । उत्त० १२८ । गुणोपष्टम्भकारि । प्रश्न० १५७ । उच्छीर्षकम् । बृ० द्वि० २२०अ । उपधानं–करणम् । व्य० प्र० ५०आ । स्थगनम् । व्य० द्वि० ५आ । प्रायश्चित्तम् । व्य० द्वि० १९५अ । विहितशास्त्रोपचारः । उत्त० ६५६ । तपः । ठाणा० ४४५ । उपधानं–तपः । सम० ५७ । ठाणा० ६५, १९५ । उपधीयते–उपष्टभ्यते श्रुतमनेनेति उपधानं–श्रुतविषयस्तपउपचारः । ठाणा० १८१ । विधानम् । सम० १२७ । उपदधातीत्युपधानं–उपकरोतीत्यर्थः । ओघ० ११३ । अङ्गानङ्गाध्ययनादौ यथायोगमाचाम्लादितपोविशेषः । उत्त० ३४७ ।

उवहाणगं – पूयादिपुन्नं सिरोवहाणं । नि० चू० द्वि० ६१अ । उपधानम् । ठाणा० २३४ । उपधानकं–अप्रतिलेखितदूष्यपञ्चके द्वितीयो भेदः । आव० ६५२ ।

उवहाणपडिमा–उपधानं–तपस्तत्प्रतिमोपधानप्रतिमा, द्वादश भिक्षुप्रतिमा एकादशोपासकप्रतिमाश्चेत्येवंरूपा । ठाणा० ६५ । सम० ९६ ।

उवहाणवीरिए–उपधानं–तपस्तत्र वीर्यं यस्य स उपधानवीर्यः–तपस्यनिगूहितबलवीर्यः । सूत्र० ६५ ।

उवहाणसुयं – उपधानश्रुतं – आचाराङ्गस्याष्टममध्ययनम् । उत्त० ६१६ । सम० ४४ । उपधानश्रुतं, आचारप्रकल्पे प्रथमश्रुतस्कन्धस्याष्टममध्ययनम् । आव० ६६० । प्रश्न० १४५ ।

उवहारं–उपहारः । आव० १९० । बलिः । आव० ६९८ ।

उवहारा–बलिमादिया । नि० चू० प्र० २६९अ ।

उवहारियं–अवधारितं–निर्णीतम् । आव० ६३५ ।

उवहि–उपदधातीति उपधिः –उप – सामीप्येन संयमं धारयति पोषयति चेत्यर्थः । स च पात्रादिरूपः । ओघ० १२ । उपकरणम् । उत्त० ५८८ । वर्षाकल्पादिः । उत्त० ३५८ । उपकरणमाभरणादिद्रव्यतो, भावतस्तु छद्मादि येनात्मा नरक उपधीयते । उत्त० ४६३ । उपधिः–संस्तारकादिः । ओघ० ८० । रजोहरणादिः । ठाणा० ३१७ । उपधीयते–सङ्गृह्यत इति उपधिः । आचा० १८० । आगमोक्तं वस्त्रादिः । दश० १९९ । पात्रनियोगादिः । व्य० प्र० २३७ अ । उपधिः–वस्त्रादिः । प्रश्न० १२४ । उपधीयते–ढौक्यते दुर्गतिं प्रत्यात्मा येनासावुपधिः–माया, अष्ट-

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रकारं वा कर्म । सूत्र० ६८ । उपकरणम् । आव० ५६८ । प्रज्ञा० २९१ । प्रश्न० ३९ । उपदधातीति उपधिः । ओघ० २०७ । माया । प्रश्न० २८ । औधिकः । प्रश्न० १५६ । माया । सूत्र० १०३ । उपदधातीति उपधिः–उप–सामीप्येन संयमं धारयति पोषयति चेति पात्रादिरूपः । ओघ० १२ । आव० ६६१ । उपधीयते येनासावुपधिः – वञ्चनीयसमीपगमनहेतुर्भावः । भग० ५७२ । उपधिः–उपकरणम् । पिण्ड० १२ । कषायः । दश० ७६ । उवकरणं । नि० चू०प्र० ६४ आ ।

उवहिअसुद्धं–उपधिना–मायया अशुद्धं–सावद्यं उपध्यशुद्धं, अधर्मद्वारस्यैकोनत्रिंशत्तमं नाम । प्रश्न० २६ ।

उवहिए–उपधिकः–मायित्वेन प्रच्छन्नचारी । ज्ञाता० ८१ । उपहितः – प्रक्षिप्तः–प्राप्तः । भग० १०० । उपहितानि–गुरोराहाराद्यर्थं ढौकितानि । विशे० ४४० ।

उवहिओ–अधिकज्ञानाद्यर्थकः सन् गुरुषु बहुमानपरः । व्य० प्र० २३६अ ।

उवहिय–उपहितः–क्षिप्तः । विशे० ९४३ । औपधिकः–मायाचारी । प्रश्न० ३० ।

उवहिसंकिलेसे–प्रथमसङ्क्लेशः । उपधीयते – उपष्टभ्यते संयमः संयमशरीरं वा येन स उपधिः–वस्त्रादिस्तद्विषयः सङ्क्लेशः–असमाधिः । ठाणा० ४८९ ।

उवहिसंभोग–उपधेः संभोगः उपधिसंभोगः । व्य० द्वि० ११९ आ ।

उवही–उवधिः–परवंचनाभिप्रायः । बृ० तृ० ४६ आ । नि० चू० प्र० २८९ आ ।

उवाइ–उत्लावकप्रधाना विद्याः । विशे० ९८२ ।

उवाइक्कम्म–उपातिक्रम्य–सम्यक् परिहृत्य । आचा० ३५६ ।

उवाइणावित्तए – उपानाययितुं, संप्रापयितुम् । बृ० तृ० ११४ आ । उपादापयितुं ग्राहयितुमित्यर्थः । ज्ञाता० १७७ ।

उवाइणावित्ता–उपादापय्य–प्रापय्य । भग० २९२ ।

उवाइणित्ता–उपनीय–अतिवाह्य । आचा० ३६५ ।

उवाइति–उपयाचते । आव० ४०४ ।

उवाईय–उपादितं–उपभुक्तम् । आचा० १०८ ।

उवाईयसेसेण–उपादितं–उपभुक्तम् , तस्य शेषमुपभुक्तशेषम् । आचा० १०८ ।

उवाए–उपायः–अप्रतिहतलाभकारणम् । ज्ञाता० ३४ ।

उवाओ–अवपातः । गर्त्तः । आचा० ३३८ । उपायः । आव० ४१४ ।

उवागच्छति–पविसति । नि० चू० प्र० २३० अ ।

उवागच्छिज्जा–उपागच्छेयुः–अतिथयो भवेयुः । आचा० ४०३ ।

उवागमण–उपागमनं–स्थानम् । आचा० ३७५ ।

उवात–अवपातः । सेवा । ठाणा० १२९, ५१६ । ज्ञाता० ४ ।

उवातिणा–नयति । नि० चू० द्वि० २२ आ ।

उवातियं । नि० चू० द्वि० १४४ अ ।

उवातिया–उपयाचितम् । नि० चू० प्र० ३५१ आ ।

उवाते–उपायः–उपेयं प्रति पुरुषव्यापारादिका साधनसामग्री स यत्र द्रव्यादावुपेये अस्तीत्यभिधीयते यथैतेषु द्रव्यादिविशेषेषु साधनीयेष्वस्त्युपायः, उपादेयता वाऽस्य यत्राभिधीयते तदाहरणमुपायः । आहरणस्य द्वितीयो भेदः । ठाणा० २५३ ।

उवातो–आणानिद्देसो । दश० चू० १३९ ।

उवादानं–उपादानं–आयः, हेतुः । विशे० ५४३ ।

उवादिणावेत्ता–उपादाय–गृहीत्वा, आक्रम्य । सूत्र० २३४ ।

उवादीयमाणा–उपादीयन्ते–कर्मणा बध्यन्ते । आचा० ७८ ।

उवाय–खड्डा । दश० चू० ७४ । उपायः – उदाहरणस्य द्वितीयो भेदः । ३५ । एकान्तमृदुभणनादिलक्षणः । दश० २४७ । उप–सामीप्येन (आयः) विवक्षितवस्तुनोऽविकललाभहेतुत्वाद्वस्तुनो लाभ एवोपायः–अभिलषितवस्त्ववाप्तये व्यापारविशेषः । दश० ४० । उपार्जनहेतुः । उत्त० ६३१ ।

उवायकारी–उपायकारी–सूत्रोपदेशप्रवर्त्तकः । सूत्र० २३४ ।

उवायकिरिया–उपायक्रिया–यद्द्रव्यं येनोपायेन क्रियते सा । सूत्र० ३०४ ।

उवायणं–अवपातयतो–भ्रंशतोऽकुर्वतः । व्य० प्र० २९अ ।

उवायवं–अवपातवान्–वन्दनशीलः, निकटवर्त्ती वा । दश० २५३ ।

उवारियालेणे – चमरचञ्चाबलीचञ्चाभिधानराजधान्योर्मध्यभागे तद्भवनयोर्मध्योन्नताऽवतरत्पार्श्वपीठरूपे अवतारिकलयने । सम० ३१ ।

उवालंभ–उपालम्भनं उपालम्भो–भङ्ग्यन्तरेणानुशासनमेव स यत्राभिधीयते सः । आहरणतद्देशे द्वितीयो भेदः । ठाणा० २५३ । उपालम्भः–इयमेवानौचित्यप्रवृत्तिप्रतिपादनगर्भा । ठाणा० १५५ । सपिपासशिक्षारूप उपालम्भः । बृ० प्र० १५०आ । सानुनयोपदेशप्रदानम् । व्य० प्र० ११७ अ ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उपालम्भः उपालम्भः-भंग्यैव विचित्रं भणनम् । दश० ४६ ।

उवालियइ-उपलीयते । आचा० ३६५ ।

उवासंतर-अवकाशान्तरं-आकाशविशेषः, अवकाशरूपान्तरालं वा । भग० ७७ ।

उवासंतराति । ठाणा० ८६ ।

उवासंतरे-द्वयोरन्तरमवकाशान्तरम् । भग० २७२ । ठाणा० ४३२ ।

उवासग-उपासकः-श्रावकः । आव० ६४६ । नि० चू० द्वि० २५अ । सम० ११९ । साधू चेइए वा पोसहं उवासतो उवासगो भवति । नि० चू० द्वि० १२१आ । उपासते-सेवन्ते यतीनित्युपासकाः-श्रावकाः । उत्त० ६१३ ।

उवासगदसा-उपासकानां-श्रमणोपासकानां सम्बन्धिनोऽनुष्ठानस्य प्रतिपादिका दशाः-दशाध्ययनरूपा उपासकदशाः । उपा० १ । दश० ४७ ।

उवासणा-उपासना-नापितकर्म । आव० १२९ ।

उवासमाणा-रात्रिजागरणात्तदुपासनां विदधानाः । ठाणा० ३५३ ।

उवासय-उपासकः । दश० ४७ ।

उवाहणं-उपानत् । आव० ३०५, ३४१ ।

उवाही-उपाधीयते-व्यपदिश्यते येनेत्युपाधिः-विशेषणं स उपाधिः । आचा० १५६ ।

उविच्च-उपेत्य स्वप्रवृत्त्या । उत्त० ३९१ ।

उविद्धो-अवबद्धः । आव० ३५१ ।

उविय-परिकर्मितम् । ज्ञाता० २३ ।

उवीलगो-आलोययं गूहंतं जो महुरादिवयणपओगेहिं तहा भणइ जहा सम्मं आलोएति सो उवीलगो । नि० चू० तृ० १२८आ ।

उवीलणं-निश्चयम् । नि० चू० प्र० १४२अ । अवपीडना, बन्धनविशेषः । ज्ञाता० २३२ ।

उवीलेमाणे-अवपीलयन्-बाधयन् । विपा० ३९ ।

उवेक्खेज्जा-उपेक्षेत-अवधीरयेत् । उत्त० ११२ ।

उवेक्खेयव्वो-उपेक्षितव्यः । आव० ६४१ ।

उवेच्च-उपेत्य, आकुट्टिकया । बृ० द्वि० १३९आ ।

उवेहमाण-उपेक्षमाणः-अकुर्वन् । आचा० १५६ । परीषहोपसर्गान् सहमान इष्टानिष्टविषयेषु वोपेक्षमाणो माध्यस्थ्यमवलम्बमानः । आचा० ४३० । उत्प्रेक्षमाणः-अवगच्छन् । आचा० २१२ । पर्यालोचयन् । आचा० २२४ ।

उवेहा-उपेक्षा-उप-सामीप्येनेक्षा, अवधीरणायां वर्त्तते । ओघ० ११४ ।

उवेहे-उपेक्षेत-औदासीन्येन पश्येत् । उत्त० ९१ ।

उवट्टंतो-अवपतन् । आव० २०३ ।

उव्वट्टइ-उद्वर्त्तयति-म्रक्षिततैलापनयनं करोति । जं० प्र० ३९४ ।

उव्वट्टण-उद्वर्त्तनं-तत्प्रथमतया वामपार्श्वेन सुप्तस्य दक्षिणपार्श्वेन वर्तनम् । आव० ५७४ । अपवर्त्तना । विशे० १००६ । उद्वर्त्तना-नारकतिर्यगेकेन्द्रियेभ्यो निर्गमः । आव० ५३३ । उद्वर्त्तनं-लोठनम् । पिण्ड० १६४ । पङ्कापनयनलक्षणम् । दश० ११७ ।

उव्वट्टणट्ठ-उद्वर्त्तनार्थं-उद्वर्त्तननिमित्तम् । दश० २०६ ।

उवट्टयं-उद्वर्त्तकं-चूर्णपिण्डम् । जं० प्र० ३९४ ।

उव्वट्टा-उद्वृत्ताः । प्रज्ञा० ३९७ ।

उव्वट्टिताणि-उद्वर्त्तितानि । आव० ९८ ।

उव्वट्टिया-उद्वर्त्तिता-च्याविता । पिण्ड० १२३ ।

उव्वट्टेति-एक्कसिं उव्वट्टेति । नि० चू० प्र० ११६आ ।

उव्वट्टो-उद्वृत्तः । आव० १७३ ।

उव्वणवेसो-उल्बणवेषः । ओघ० १४६ ।

उव्वण्णो-उत्कंठितः । व्य० द्वि २०३आ ।

उव्वत्तंतो-उद्वर्तयन् । आव० ३१३ । ओघ० ८४ ।

उव्वत्तणं-उद्वर्तनम्-मार्गपरावर्त्तनं । बृ० तृ० १२९आ । उत्ताणयस्स पासल्लियकरणं । नि० चू० प्र० २११अ । उद्वर्तते-यतो व्रजस्ततो याति । ओघ० ४७ ।

उव्वत्तणा-परावत्तणाकुंचणपसारणा कायव्वा । नि० चू० प्र० ६०अ ।

उव्वत्तमाणे-अपवर्तयन् । आचा० ३४३ ।

उव्वत्ता-जं पाडिहारियणिद्दिज्जं तं । नि० चू० प्र० २२५आ ।

उव्वत्तिया-तेणेव अगणिनिक्खित्तं ओयत्तेऊण एगपासेन देति । दश० चू० ८० ।

उव्वत्तेहि-उद्वर्त्तय । आव० ३५८ ।

उव्वरं-अतिप्रशस्यम् । व्य० द्वि० ४२१आ ।

उव्वरए । बृ० द्वि० ६२अ ।

उव्वरग-अपवरकम् । आव० ६२२ । नि०चू०प्र० १७४अ ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उव्वरति-उद्धरति। आव० ८५९।

उव्वरयं-अपवरकम्। आव० ५६१।

उव्वरिअ-उद्वरितं। यदधिकं जातम्। ओघ० १८८। अतिरिक्तम्। ओघ० १८६।

उव्वरियं-उद्धरितम्। पिण्ड ७९। अशनादेः शेषभागः। आव० ८५९।

उव्वरो-उद्वरः-घर्मोपतापः। बृ० द्वि० २९३अ।

उव्वलणं-उद्वलनं, अभ्यङ्गनम्। बृ० द्वि० २१९अ।

उव्वलणेहि-उद्वेलनानि-देहोपलेपनविशेषाः। ज्ञाता० १८३।

उव्वसिए-उद्वसितः-उत्थितः। ओघ० ४९।

उव्वसिय-उद्वस्य (उदुष्य)। आव० ७१।

उव्वाओ-श्रान्तः। नि० चू० प्र० १६०अ।

उव्वाण-उद्वानं-किञ्चित्सस्निग्धं। ओघ० १७१।

उव्वाता-परिश्रान्तः। बृ०द्वि० ८०आ। व्य०द्वि० १५७अ।

उव्वाया-उद्वाताः-अतीवपरिश्रान्ताः। बृ०प्र० २४३आ। परिश्रान्ताः। व्य० द्वि० २०२आ।

उव्वालना-उद्वालना, निष्काशना। बृ० द्वि० २५०अ।

उव्वासिअ-उद्वासितः-शोषितः। ओघ० १७४।

उव्वासेइ-उपहसति। आव० ६६९।

उव्विग्ग-उद्विग्नं-खिन्नम्। भग० १६६। संजातभयः। विपा० ४३। उद्विग्नाः-अथ पुनर्नानेन सार्द्धं युद्धयामहे इत्यपुनःकरणाशयवन्तः। जं० प्र० २३९। उद्वेगवान्। प्रश्न० ५२।

उव्विद्ध-उद्विद्धं-ऊद्ध्र्वम्। औप० ३। उद्विद्धं-उण्डम्। ज्ञाता० २। ऊर्ध्वगतः। जं० प्र० १६४। उच्चा। आव० १८४। उन्मिताः, उच्चैस्त्वेन वा। अनु० १५८। उद्विद्धः-अत्यर्थमुच्चः। औप० ९। उच्चः। राज० ५।

उव्विहंताई-उत्पतन्ति। ज्ञाता० २३२।

उव्विहइ-ऊर्ध्वं विजहाति, ऊर्ध्वं क्षिपति। भग० २३०। उद्विजहाति-ऊद्र्ध्वं क्षिपति। ज्ञाता० १६८।

उव्विहति-उप्पाडेति। नि० चू० प्र० २५६आ।

उव्विहामि-नयामि। ज्ञाता० १३९।

उव्विहिय-उद्वूह्य-उत्प्रेर्य। भग० ६२८।

उव्वीलए-अपव्रीडकः-लज्जापनोदको यथा परः सुखमालोचयतीति। ठाणा० ४८६।

उव्वीलणं-अपकर्षणम्। उप० मा० गा० ७७।

उव्वीहामि-उच्चेष्यामि। नि चू० प्र० २०१अ।

उव्वेयग-उद्वेगकः-इष्टवियोगादिजन्यः उद्वेगः, उद्वेजको वा लोकोद्वेगकारी चौरादिर्वा। भग० १९८।

उव्वेयण-उद्वेजनं-चलनम्। भग० ४७१।

उव्वेयणओ-उद्वेजनकः-चित्तविप्लवकारी, उद्वेगकरः। प्रश्न० ५।

उव्वेयणयं-उद्वेगकृत्। महाप्र०।

उव्वेला-उद्वेला। आव० ५१४।

उव्वेलियं-उद्वेलितं, उत्सारितम्। बृ० द्वि० २५५आ।

उव्वेलेंति-उद्वेलयन्ति। आव० १८९।

उव्वेलेउं-उद्वेलयितुं, उद्वेष्टयितुम्। बृ० द्वि० २५७अ।

उव्वेह-उद्वेधः। अनु० १७१। जीवा० ३२२। उण्डत्वम्। ३२५, ३४३, २२७। राज० ९१। जं० प्र० २८४। सम० ९७। ठाणा० ५२५। बाहल्यम्। जं० प्र० ३२७। भुवि प्रवेशः। ठाणा० ६९। भूगतत्वम्। जं० प्र० २८२। भूमाववगाहः। ठाणा० ४७९। भूमिप्रवेशः। जं० प्र० ७२।

उव्वेहलिया-वनस्पतिविशेषः। भग० ८०४।

उष्णः-स्पर्शस्याष्टमो भेदः। प्रज्ञा० ४७३।

उष्णरूपा-योनिभेदः। आचा० २४।

उस-अवश्यायः। विशे० १०२९।

उसक्कण-रंधियपुव्वस्स उसक्कणं करेज्ज। नि०चू०प्र० १४२आ।

उसक्कावेउ-उत्ष्वष्क्य, अधःप्राप्य। आव० ६२१।

उसक्को-उत्कण्ठुलः। नि० चू० तृ० ३६अ।

उसगार-मत्स्यविशेषः। प्रज्ञा० ४४।

उसडा-उत्सृता-उच्चाः। जं० प्र० ४४।

उसण-उष्णः-प्रतिकूलः। ठाणा० ४४४।

उसण्णं-लोअगपरिभोगं उसण्णं भण्णइ। नि० चू० द्वि० १५९अ।

उसण्हसण्हिआओ-अतिशयेन प्राबल्येन च श्लक्ष्णश्लक्ष्णिका उश्लक्ष्णश्लक्ष्णिका। अनु० १६३।

उसभ-ऋषभः, पञ्चदश कुलकरनाम। जं० प्र० १३२। भरतचक्रिपिता। आव० १६२। सम० १५२। वृषभः-भूषणविधिविशेषः। जीवा० २६९। ब्रह्मदत्तपत्न्याः शिलायाः पिता। उत्त० ३७९। समग्रसंयमभारोद्वहनाद् वृषभः। आदिजिनः। आव० ५०२। सम्प्रदायगम्यं द्रविडवंग-

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जं० प्र० १०७। पट्टः। सम० १४९। परिवेष्टनपट्टः । ठाणा० ३५७ । प्रज्ञा० ४७२ ।

उसभकण्ठो-वृषभकण्ठः-वृषभकण्ठप्रमाणो रत्नविशेषः । जीवा० २३४ ।

उसभकूड-ऋषभकूटः, जम्बूद्वीपे उत्तरार्द्धभरते पर्वतः । जं० प्र० ८७। आव० १५१ ।

उसभज्झया-वृषभध्वजाः-वृषभचिह्नोपेता ध्वजाः। जीवा० २१५ ।

उसभनाराय-ऋषभनाराचं-यत्पुनः कीलिकारहितं संहननं तत् । प्रज्ञा० ४७२ ।

उसभदत्त-नामविशेषः। भग० ६२०, ५३३, ५४९, ५५६, ५५७। आचा० ४२९ । नवमशते त्रयत्रिंशत्तमोद्देशकेऽभिहितः। भग० ४७५। ऋषभदत्तः-इषुकारनगरे गाथापतिः । विपा० ९५ । जम्बूस्वामिनः पिता। नि०चू०द्वि० २९अ।

उसभपुरं-ऋषभपुरं, द्वितीयनिह्नवोत्पत्तिस्थानम् । विशे० ९३४ । धनावहराजधानी । विपा० ९४ । राजगृहस्यापरनाम । आव० ३१५ । नगरविशेषः । उत्त० १०४। राजगृहम् । ठाणा० ४१४। जीवप्रदेशप्ररूपकनिह्नवोत्पत्तिस्थानम्। आव० ३१२ ।

उसभसिरि-श्रीऋषभः । सम० १०६ ।

उसभसेण-मुनिसुव्रतजिनस्य भिक्षादाता । सम० १५१ । ऋषभस्वामिनः प्रथमगणधरः । सम० १५२ । बृ० प्र० २५४अ । ऋषभसेनः-भरतपुत्रः । आव० १४९ ।

उसभा-ऋषभा-शाश्वतप्रथमप्रतिमानाम । जीवा० २२८ ।

उसवियं-उवसामियं । नि० चू० प्र० २९४अ ।

उसह-ऋषभः, संयमभारोद्वहनादृषभ इव ऋषभः, वृषभो वा इति संस्कारः, तत्र वृषभ इव वृषभ इति वा, वृषेण भातीति वा वृषभः । जं० प्र० १३५ ।

उसहकूडप्पभाइं-ऋषभकूटप्रभाणि, ऋषभकूटाकाराणि । जं० प्र० ८८ ।

उसहकूडे-ऋषभकूटः । जं० प्र० २५० ।

उसहच्छाया-वृषभच्छाया-छायायाः सप्तमो भेदः । प्रज्ञा० ३२७।

उसहपुरं-ऋषभपुरं-नगरविशेषः । उत्त० १०५।

उसा-त्रेहो । नि० चू० द्वि० ८३अ ।

उसिण-तावितं तं चेव ववगयजीवं, एक्कसिं धोवणं । नि० चू० द्वि० ११८आ । निदाघादितापात्मकम् । उत्त० ८२ । उष्णः-धर्मः । ठाणा० २८७। आहारपाकादिकारणं वह्नया-द्यनुगतः । अनु० ११०।उष्णो मार्दवपाककृत् ।ठाणा० २६। उष्णः-अप्रासुकम् । दश० २०६ ।

उसिणपरितावे-उष्णपरितापः-उष्णं-उष्णस्पर्शवद् भूशिलादि तेन परितापः । उत्त० ८९ ।

उसिणब्भूए-अस्वाभाविकमौष्ण्यं प्राप्तः । भग० १७५ ।

उसिणोदए-उष्णोदकं-स्वभावत एव क्वचिन्निर्झरादावुष्णपरिणामम् । बादराप्कायभेदः । प्रज्ञा० २८ ।

उसिणोदगं-उष्णोदकं-क्वथितोदकम् । दश० २२८ । उद्वृत्तत्रिदण्डम् । पिण्ड० १७ ।

उसिणोदगवियडेण-उष्णोदकविकटेन- उष्णोदकेनाप्रासुकेनात्रिदण्डोद्वृत्तेन पश्चाद्वा सचित्तीभूतेन । आचा० ३४२ ।

उसिय-उत्सृतानि-लम्बमानानि । राज० ६४ ।

उसीर-उशीरं-वीरणीमूलम् । ज्ञाता० २३२। जीवा० १९१। राज० ३४ । मूलविशेषः। जीवा० १३६। ओशीरं-वीरणीमूलम् । प्रश्न० १६२ ।

उसीसदुवणं-सीसस्स समीवं उवसीसं, सीसस्स वा उक्खंभणं उसीसं दुवणं-णिक्खेवो । नि० चू० प्र० २४७अ ।

उसु-इषुः-बाणः । भग० ९३, २३० । शरपत्रफलादिसमुदायः । भग० २३० ।

उसुअ-इषुकः-इषुकाकारमाभरणं, तिलकं वा। पिण्ड०१२४।

उसुआर-इषुकारः-राजपुत्रविशेषः । उत्त० ३९४ ।

उसुआरपुरं-इषुकारपुरं-नगरविशेषः । उत्त० ३७५ ।

उसुकारिज्जं-इषुकारीयं-उत्तराध्ययने चतुर्दशमध्ययनम् । उत्त० ३९३ ।

उसुकाल-उक्खलं, उदूखलं । नि० चू० द्वि० ८३आ।

उसुगारपव्वय-पर्वतविशेषः । ठाणा० ८० ।

उसुत्तियल्लयं-जेण वा कट्ठाइ संचालेति तं सविसं उसुत्तियल्लयं । नि० चू० प्र० ११६आ ।

उसुद्धसरीरो-मलपंकियसरीरो उसुद्धसरीरो भन्नति । नि० चू० द्वि० ६५अ ।

उसुमट्टिता-कुट्टिया पुणो मट्टियाए सह कुट्टिज्जंति एस। नि० चू० तृ० ६४अ ।

उसुयार-इषुकारः-नगरविशेषः, ऋषभदत्तगाथापतिस्थानम्। विपा० ९५ । इषुकारपुरनृपतिः । उत्त० ३९५ ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उसुयारपुरं-इषुकारपुरं, कुरुजनपदे नगरं, इषुकारराजधानी। उत्त० ३९५।

उसुयारिज्जं-उत्तराध्ययने चतुर्दशमध्ययनम्। सम० ६४।

उसू-इषुः-शरः। सिद्धिगमने दृष्टान्तः। आव० ४४२। तिलगो। नि० चू० द्वि० ९५अ।

उसूयालं-उदूखलम्। आचा० ३९७।

उसे-ऊषः-पांशुक्षारः। दश० १७०।

उस्सओ-उच्छ्रयः भावोन्नतत्वम्। अहिंसायाः पञ्चचत्वारिंशत्तमं नाम। प्रश्न० ९९।

उस्सकइ-उत्ष्वष्कते-तदाकारभावमात्रधारणतस्तत्प्रतिबिम्बमात्रधारणतो वोत्सर्पतीत्यर्थः, कृष्णलेश्यातो हि नीललेश्या विशुद्धा ततस्तदाकारभावं तत्प्रतिबिम्बमात्रं वा दधाना सती मनाक् विशुद्धा भवतीत्युत्सर्प्पतीति। प्रज्ञा० ३७२।

उस्सक्कण-उत्ष्वष्कणं-परतः करणम्। पिण्ड० ९१।

उस्सग्गनिवाइयाण-उत्सर्गपातिनामुत्सर्गेण संयममनुपालेयतां यासाम्। व्य० द्वि० ४२९अ।

उस्सग्गो-उत्सर्गः-उपयोगः। ओघ० १५५। परिष्ठापनम्। ओघ० १३८। कायोत्सर्गः। आव० ७८२। उवओगं, काउस्सग्गो। नि० चू० द्वि० १६४अ। पइण्णकहा। नि० चू० प्र० २४०अ। कारणनिरपेक्षं सामान्यस्वरूपम्। बृ० तृ० ९७आ।

उस्सण्णं-लोअगपरिभोगं उस्सण्णं भण्णइ। नि० चू० द्वि० १५९अ। उस्सण्णं एकान्तेनैव अलक्षणयुक्ता बोंदि सरीरमित्यर्थः। नि० चू० द्वि० ८५आ। उत्सन्नं-बाहुल्यतः। औप० ८६। उत्सन्नं-अनुपरतम्। आव० ५९०।

उस्सण्णदोस-उत्सन्नदोषः-अनुपरतं बाहल्येन प्रवर्त्तते इति। आव० ५९०।

उस्सण्णपए-उत्सन्नपदे-प्रभूतपदे। व्य० प्र० ९३अ।

उस्सण्णा-अवसन्नाः-पङ्क इव निमग्नाः। प्रश्न० ६९।

उस्सण्णो-बहुतरगुणावराही। नि० चू० द्वि० ९०आ।

उस्सण्हसण्हिआ-उत्तरप्रमाणापेक्षया उत्-प्राबल्येन श्लक्ष्णश्लक्ष्णिका उच्छलक्ष्णश्लक्ष्णिका। जं० प्र० ९४।

उस्सण्हसण्हिया - व्यावहारिकपरमाणुपुद्गलानां समुदायाः-द्व्यादिसमुदायास्तेषां समितयो-मीलनानि तासां समागमः-परिणामवशादेकीभवनं समुदयसमितिसमागमस्तेन या परिणाममात्रेति गम्यते, सा एकाऽत्यन्तं श्लक्ष्णा श्लक्ष्णश्लक्ष्णा सैव श्लक्ष्णश्लक्ष्णिका उत्-प्राबल्येन श्लक्ष्णश्लक्ष्णिका उत्श्लक्ष्णश्लक्ष्णिका। भग० २७५।

उस्सन्नं-प्रायशः। आव० ५६८। अविरुद्धं। नि० चू० द्वि० ७०अ।

उस्सन्नकयाहारो-प्रायशोऽकृताहारः। आव० ५६८।

उस्सप्पिअ-उत्सर्पिता वस्त्र्युत्सर्पणेन। जं० प्र० १०२।

उस्सप्पिणी-सागरोपमाणां दशकोटीकोट्य एव दुष्षमदुष्षमारकक्रमेणैकोत्सर्प्पिणी। जीवा० ३४५। उत्सर्पति-वर्धते आरकापेक्षया वर्धयति (वा) क्रमेणायुरादीन् भावानित्युत्सर्पिणी। जं० प्र० ८९। उत्सर्प्पिणी-दशसागरोपमकोटाकोटिमाना। अनु० १००। ठाणा० ८६। उत्सर्प्पति-वर्द्धतेऽरकापेक्षया उत्सर्प्पयति वा भावानायुष्कादीन् वर्द्धयतीति। ठाणा० २७।

उस्सय-यस्मिंश्च सत्यूर्ध्वं श्रयति जात्यादिना दर्पाध्मातः पुरुष उत्तानीभवति सः उच्छ्रायः-मानः। सूत्र० १८०।

उस्सरति-उत्सर्पति। आव० ३०३।

उस्सवित्ता-उद्धहुत्ताणि काऊण। दश० चू० ८०।

उस्सविया - संस्थाप्योच्चावचचैर्विश्रम्भजनकैरालापैर्विश्रम्भे पातयित्वा। सूत्र० १०६।

उस्सा-अवश्यायः-त्रेहः। अप्कायभेदः। प्रज्ञा० २८। रजन्यां यस्त्रेहः पतति। आचा० ४०।

उस्साग-यन्निर्विशेषणं क्रियते। उप० मा० गा० ४००।

उस्साबिन्दूथिबुगो-अवश्यायबिन्दुः। आव० ८४५।

उस्सारिता-उत्सारिता-समीपमागता। आव० ८४१।

उस्सासनाम-उच्छ्वासनाम-यदुदयवशादात्मन उच्छ्वासनिःश्वासलब्धिरुपजायते तत्। उच्छ्वासनिःश्वासयोग्यपुद्गलग्रहणमोक्षविषया लब्धिरुपजायते तत्। प्रज्ञा० ४७३।

उस्सासविसा-उच्छ्वासे विषं येषां ते उच्छ्वासविषाः। प्रज्ञा० ४६।

उस्सासा-उच्छ्वासः-मुखादिना वायुग्रहणम्। भग० ४७०।

उस्सासो-उच्छ्वासः। आव० ८४५।

उस्साहे-उत्साहः-श्रवणविषये मनस उत्कलिकाविशेषः। सूर्य० २९६।

उस्सिंघइ-उज्जिघ्रति, जिघ्रति। आव० ६७४।

उस्सिंघणा-उद्घ्राणम्। आव० ४२४।

उस्सिंचण-उद्र्ध्वं सेचनं उत्सेचनं-कूपादेः कोशादिनोत्क्षेपणम्। आचा० ४२। दृतौ वातस्य प्राबल्येन पूरणम्। आचा०

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७४, ३७९ ।

उस्सिंचणाए-उत्सेचनेन-अरघट्टघट्टीनिवहादिभिरुदञ्चनेन । उत्त० ५९९ ।

उस्सिंचमाणे-उत्सिञ्चन्-आक्षिपन् । आचा० ३४३ ।

उस्सिंचिया-उत्सिच्य-अतिभृतादुज्झनभयेन ततो वा दानार्थं तीमनादीनि दद्यात् । दश० १७५ ।

उस्सिउस्सिओ-उच्छ्रितोच्छ्रितः । आव० ७७९ ।

उस्सिओदए-उच्छ्रितोदकः-ऊर्ध्ववृद्धिगतजलः । भग० २८१ ।

उस्सिट्टा-उत्सृष्टा-प्रबलतया सर्वासु दिक्षु प्रसृता । प्रज्ञा०९९ ।

उस्सित्तं-उत्सिक्तं-अत्यर्थं जलाभिषेचनम् । प्रश्न० १२७ ।

उस्सिन्न-अस्विन्नम्-वह्न्युदकयोगेनानापादितविकारान्तरम् । दश० १८५ । उत्स्विन्नम्-मुण्डेरकादि । बृ० प्र० २६७ आ ।

उस्सियं-उच्छ्रितं-प्रख्यातम् । सूत्र०४०८ । उच्छ्रितं-उत्कटम् । सूर्य० २६२ । उत्सृतां, उच्छ्रित्येवोच्छ्रित्य-उत्तरोत्तरसंयमस्थानावाप्त्या तामुच्छ्रितामिव कृत्वा वा । उत्त० ३४१ । उत्सृतः-अपगतः । ज्ञाता० १०९ ।

उस्सियनिसन्नओ-उत्सृतनिषण्णः । आव० ७७२ ।

उस्सियपडागं-उच्छ्रितपताकम् । आव० ७०३ ।

उस्सियफलिह-उच्छ्रितं स्फटिकमिव स्फटिकं-अन्तःकरणं यस्य सः । ज्ञाता० १०९ ।

उस्सीवेत्ता-उत्सीव्य । आव० ४२१ ।

उस्सुक-उच्छुल्का-अविद्यमानशुल्कग्रहणम् । विपा० ६३ । उच्छुल्का-मुक्तशुल्का । भग० ५४४ । ज्ञाता० ४० ।

उस्सुगो-उत्सुकः । आव० ३०१ ।

उस्सुत्तं-सुत्तादवेतं । नि०चू०द्वि० २३आ । ऊर्ध्वं सूत्रादुत्सूत्रः, सूत्रानुक्तः । आव० ५७१ । आव० ७७८ ।

उस्सुय-उत्सुकः । ज्ञाता० १६१ ।

उस्सूरं-अकालं । नि०चू०तृ० १३६आ । ओघ० ९८ ।

उस्सूरलंभो-उत्सूरलाभः । आव० ८४३ ।

उस्सूरीभूतं-उत्सूर्यीभूतम् । आव० ८५२ ।

उस्सूलय-खातिका परबलपातार्थमुपरिच्छादितगर्त्ता वा । उत्त० ३११ ।

उस्सेइमं-पिष्टोत्स्वेदनार्थमुदकम् । आचा० ३४६ । मरहट्ठविसए उस्सइया दीवगा सीओदगे बुज्झंति, अहवा पिट्ठस्स उस्सेज्जमाणस्स हेट्ठा जं पाणियं तं । नि० चू० तृ० ६०अ ।

उस्सेतिमामं-जहा पिट्ठं पुढविकायभायणं आउकायस्स भरेत्ता मीसए अद्दहिज्जति मुहं से वत्थेण उहाडिज्जति, ताहे पिट्ठपयणयं रोट्टस्स भरेत्ता ताहे तीसे थालीए जलभरियाए उवरिं ठविज्जति ताहे अहोछिड्डेण तं पि ओसिज्जति हेट्ठाहुत्तं वा ठविज्जति तत्थ जं आमं तं उस्सेतिमामं भण्णति । नि० चू० द्वि० १२५ अ ।

उस्सेतिमे-उत्स्वेदेन निर्वृत्तं उत्स्वेदिमं-येन व्रीह्यादिपिष्टं सुराद्यर्थं उत्स्वेद्यते तत् । ठाणा० १४७ ।

उस्सेहंगुल-उच्छ्रयाङ्गुलं-अङ्गुलस्य द्वितीयो भेदः।प्रज्ञा०२९९। अनन्तानां सूक्ष्मपरमाणुपुद्गलानामित्यादिक्रमेणोच्छ्रयो वृद्धिनयनं तस्माज्जातं तत् । उत्सेधो-नारकादिशरीराणामुच्चैस्त्वं तत्स्वरूपनिर्णयार्थमङ्गुलमुत्सेधाङ्गुलम् । अनु० १५६,१६० ।

उस्सेह-उत्सेधः-उच्चत्वम् । सम० ११४ । उत्सेधः-शिखरम् । जीवा० २०४, ३६० । सर्वाग्रम् । जीवा० २२५ । उच्छ्रयः-शिखरम् । राज० ६२ ।

उस्सेहपरिवुड्ढी-उत्सेधपरिवृद्धिः-सर्वाग्रपरिवृद्धिः । जीवा० ३२३ ।

उस्सोढुं-उत्सोढ्य-असोढ्वा । व्य० प्र० १६४अ ।

उहरिय-पेढियमादिसु आरुभिउं ओआरेति, अथवा कायं उच्चं करेज्जा उक्कुज्जियडंडायतं तद्वद् गृह्णाति, कायं उड्ढं कृत्वा गृह्णाति उण्णमिय इत्यर्थः । नि० चू० तृ० ५९ अ ।

उहसेइ-अपहसति । आव० २१९ ।

(ऊ)

ऊखा-कुम्भी । प्रश्न० १७ ।

ऊणं-ऊनम्-वर्णादिभिर्हीनम् । सूत्रदोषविशेषः । आव० ३७४ । यद् व्यञ्जनाभिलापावश्यकैरसम्पूर्णं वन्दते, कृतिकर्मणि अष्टाविंशतितमो दोषः । आव० ५४४ ।

ऊणगसयभागो-ऊनशतभागः-शतभागोऽपि न पूर्यत इत्यर्थः । आव० ५२२ ।

ऊणोअरिआ-ऊनोदरस्य भाव ऊनोदरता । दश० २७ ।

ऊणोयरिया-अवमस्य-ऊनस्योदरस्य करणमवमोदरिका । भग० ९२१ ।

ऊनं-अक्षरपदादिभिरेव हीनमूनम् । हेतुदृष्टान्ताभ्यामेव हीनमूनम् । अनु० २६१ ।

ऊयरिणिया । नि० चू० प्र० ६१ आ ।

ऊरणय-ऊरणिका । आव० ६२३ ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ऊरणिया-ऊर्णिका । आव० ६२३ ।
ऊरणी-अविला । पिण्ड० ७१ ।
ऊरु । आचा० ३८ ।
ऊरुगं-ऊरुः । ओघ० १२५ ।
ऊरुघंटा-जङ्घाघण्टा । ज्ञाता० २३९ ।
ऊरुयाल-ऊरुदारः-ऊर्वोः-जङ्घयोर्दारो-दारणं ज्वालो वा ज्वालनं यः सः । प्रश्न० ५७ ।
ऊरुयावल-ऊरुकयोरावलनं ऊरुकावलः । प्रश्न० ५७ ।
ऊर्ध्वलोकः-शुभलोकः । जं० प्र० २४९ ।
ऊर्ध्ववेदिका-यत्र जानुनोरुपरि हस्तौ कृत्वा प्रत्युपेक्षते। वेदिकायाः प्रथमभेदः । ठाणा० ३६२ ।
ऊर्ध्वस्थितः । आचा० २९४ ।
ऊर्ध्वोपविष्टा । पिण्ड० १०५ ।
ऊलेऊण-आर्द्रीकर्तुं, जलेन भेतुम् । विशे० ६२७ ।
ऊस-उषो-यद्वशादूषरं क्षेत्रम्। प्रज्ञा० २७। ऊषरादिक्षेत्रोद्भवो लवणिमसम्मिश्रो रजोविशेषः । पिण्ड० ८ । क्षारमृत्तिका । उत्त० ६८९ । ओषः-क्षारमृत्तिका । आचा० ३४२ । अवश्यायः । ओघ० १३० ।
ऊसड-उत्सृतः, उच्चः । जीवा० २०० ।
ऊसढं-उच्छ्रितं वर्णादिगुणोपेतं ।आचा० ३३९। उत्सृतं-ऋद्धिमत्कुलम् । दश० १८६ । वर्णगन्धरसस्पर्शोपपेतम् । आव० ७२६ । उच्छ्रितं वर्णगन्धाद्युपेतम्। आचा० ३९०। उत्कृष्टम् । व्य० द्वि० १८९ अ। उच्चं । दश० चू० ८७।
ऊसत्त-उत्सक्तः-उपरिलग्नः । जं० प्र० ७६। ऊर्ध्वं सक्त उत्सक्तः-उल्लोचतले उपरिसंबद्धः। प्रज्ञा० ८६। जीवा. १६०, २२७ ।
ऊसभूमी-सिंधुविषये भूमिः । नि० चू० प्र० १६१ अ ।
ऊसरणं-उत्सरणं-आरोहणम् । विशे० ५३८ ।
ऊसरदेस-ऊषरदेशः । आव० ८३९ ।
ऊसविए- उत्सर्प्य- ऊसिविकऊणेत्यर्थः, ऊदूर्ध्वीकृत्य वा । भग० ९३ ।
ऊसविय-उच्छ्रितानि ।भग ५४१। उच्छ्रितं-ऊदूर्ध्वीकृतम्। ज्ञाता० १३९ ।
ऊसवेइ-उच्छ्रितं करोति । भग० १७५ ।
ऊसवो-जत्थ सामण्णभत्तविसेसो कज्जइ सो ऊसवो। नि० चू० द्वि० १६२ अ। जत्थ तं च उवसाहिज्जति जणो य अलंकिय विभूसितो उज्जाणादिसु मित्तादिजणपरिवुडो खज्जपेज्जादिणा उवललति। नि० चू० तृ० १४ आ। उत्सवः-शक्रोत्सवादिः। आव० १२९ ।
ऊससंति-उच्छ्वसन्ति-बाह्यक्रियां कुर्वन्ति । प्रज्ञा० २१९।
ऊससिअं-उच्छ्वसितं-उत्-ऊर्ध्वं प्रबलं वा श्वसितम् । आव० ७७९ ।
ऊससिय-उच्छ्वसनमुच्छ्वसितम् । अनक्षरश्रुतभेदः। विशे० २७४ । उच्छ्वसिता-उद्भिन्नाः। उत्त० ४८१ ।
ऊससियरोमकूवो-उच्छ्वसितरोमकूपः-उच्छ्वसिता इवोच्छ्वसिताः-उद्भिन्ना रोमकूपा-रोमरन्ध्राणि यस्यासौ। उत्त० ४८१ ।
ऊसासनीसासे-उच्छ्वासेन युक्तो निःश्वास उच्छ्वासनिःश्वासः-प्राणः । जं० प्र० ९० ।
ऊसासपए-उच्छ्वासपदं, प्रज्ञापनायाः सप्तमं पदम् । भग० १९ ।
ऊसासा-यावद्भिः समयैः पादो वृत्तस्य नीयते तावत्समया उच्छ्वासाः । ठाणा० ३९३ । उच्छ्वासाः। प्रज्ञा० २४६ । सङ्ख्येया आवलिका उच्छ्वासः। जीवा० ३४४। प्रज्ञापनायाः सप्तमं पदम्। प्रज्ञा० ६। सङ्ख्येया आवलिका उच्छ्वासः-अन्तर्मुखः पवनः । जं० प्र० ९० ।
ऊसासेहि-उच्छ्वासय-मारय । आव० ८१९
ऊसिअ-उच्छ्रितानि-लम्बमानानि । जं० प्र० ५० । प्रबलतया सर्वासु दिक्षु प्रसृता उत्सृता । जं०प्र०५३। जीवा० १७५। उच्छ्रितं-उत्कटम् । जं० प्र० ५२२ ।
ऊसिए-उच्छ्रितं-लम्बमानम् । जीवा० ३६१ ।
ऊसिओदयं-उच्छ्रत-ऊर्ध्व उदय-आयामो यत्र गमने तदुच्छ्रितोदयं, ऊर्ध्वपताकमित्यर्थः । भग० १८७ ।
ऊसिता-उत्सृता-प्रबलतया सर्वासु दिक्षु प्रसृता । जीवा० ३७९ । सूर्य० २६३ ।
ऊसितोदग-उच्छ्रितोदकः-उच्छ्रितमुदकं यस्मिन् सः । जीवा० ३२१ ।
ऊसित्तो-उपसिक्तः,अपत्योत्पादनसामर्थ्यविकलः, निर्बीजः। बृ० तृ० ९७आ । णो जस्स अवच्चं उप्पज्जति निब्बीओ सो। नि० चू० द्वि० ३१अ ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ऊसिय-उच्छ्रितं-ऊर्द्ध्वीकृतम् । भग० ५४१ । उच्छ्रितः-ऊर्ध्वीकृतः, उत्सृतो वा-अपगतः । राज० १२३ । उच्छ्रितं-ऊर्ध्वं नीतम् । ज्ञाता० १६ । उत्सृता-प्रबलतया सर्वासु दिक्षु प्रसृता । सम० १३९ । उच्छ्रितः-ऊर्द्ध्वीकृतः । जीवा० २४६ उत्सृतः । आव० ७७२ । उत्सृतं-लम्बमानम् । जीवा० २०५ । उच्छ्रितम्-उन्नतम् । ऊर्ध्वीकृतं, अपगतः, अपनीतः । भग० १३५ । नंदी ४६ । उच्छ्रितं-ऊर्द्ध्वम् । भग० १८७ ।

ऊसियपडागं-उच्छ्रितपताकम् । आव० ३०० ।

ऊसियफलिह-उच्छ्रितस्फटिकाः-उच्छ्रितमुन्नतं स्फटिकमिव स्फटिकं चित्तं येषां ते । मौनीन्द्रप्रवचनावाप्त्या परितुष्टमानसा इत्यर्थः । उच्छ्रितः-अर्गलास्थानादपनीयोर्द्ध्वीकृतो न तिरश्चीनः कपाटपश्चाद्भागादपनीत इत्यर्थः परिघः-अर्गला येषां ते उच्छ्रितपरिघाः, उच्छ्रितः-गृहद्वारादपगतः परिघो येषां ते उच्छ्रितपरिघाः । भग० १३५ । उच्छ्रितं स्फाटिकमिव स्फाटिकं-अन्तःकरणं यस्य सः । राज० १२३ ।

ऊसिरं-जीवाश्रयस्थानमित्यर्थः । नि० चू० द्वि० ६० आ ।

ऊसीसयं-उच्छीर्षकम् । आव० १२४ ।

ऊसूरं-वेलातिक्रमः । ओघ० १४२ ।

ऊसूरओ-उत्सूरः । आव० १०३ ।

ऊह - सम्भवत्पदार्थविशेषास्तित्वाध्यवसाय ऊहस्तर्कः-एवमेवं चैतत्स्यात् । आचा० २३७ ।

ऊहा-बुद्धिः । दश० १२५ । ओघमात्रसंज्ञा । विशे० २८१ । स्वतर्कबुद्धिः । आव० ३२४ । स्ववितर्कात्मिका । उत्त० १८१ ।

ऊहिय-ऊहितः-ज्ञातः । आव० ७२१ ।

ऋ

ऋक्षाः-अच्छाः । जीवा० ३८ ।

ऋजुप्रज्ञत्वं-मध्यमजिनयतीनां विशेषणम् । आव० ७९ ।

ऋजुवक्रजडत्वं । आव० ७९ ।

ऋजुश्रेणिप्रतिपन्नः-यो भवोपग्राहिकर्मजालं क्षपयित्वाऽस्पृशद्गत्या सिद्ध्यतीति । आव० ४४१ ।

ऋजुसूत्रः - साम्प्रतार्थानामभिधानपरिज्ञानम् । तत्त्वा० १-३५ ।

ऋज्वी-यस्यामेकां दिशमभिगृह्योपाश्रयाद् निर्गतः प्राञ्जलेनैव पथा समश्रेणिव्यवस्थितगृहपङ्क्तौ भिक्षां परिभ्रमन् तावद् याति यावत्पङ्क्तौ चरमगृहं, ततो भिक्षामगृह्णन्नेवापर्याप्तेऽपि प्राञ्जलयैव गत्या प्रतिनिवर्तते सा ऋज्वी । बृ० प्र० २५७ अ ।

ऋणं-पापम् । प्रश्न० ७ ।

ऋणघ्ना-ऋणं-कर्म तद्घ्ना । आव० ५९५ ।

ऋतं-दुःखं, पीडितम् । ठाणा० १८८ । दुःखम् । आव० ५८४ । पीडितः । भग० ५६० । दुःखपर्यायवाची । उत्त० ६०९ ।

ऋतुबद्धावग्रहः-अवग्रहस्य द्वितीयो भेदः । सम० २३ ।

ऋतुमासः - कर्म्ममासः, स त्रिंशद्दिवसप्रमाणः । बृ० प्र० १८६ आ ।

ऋतुसंवत्सरः-सावनसंवत्सरः । ठाणा० ३४५ ।

ऋद्धा-भवनादिभिर्वृद्धिमुपगता । ज्ञाता० १ ।

ऋषभः-प्रथमतीर्थंकरः । ज्ञाता० १२९ ।

ऋषभमण्डलप्रविभक्तिः-एकादशो नाट्यविधिः । जीवा० २४६ ।

ऋषभदत्तः-कोडालसगोत्रब्राह्मणविशेषः । आव० १७८ ।

ऋषभस्वामी-प्रथमतीर्थंकरः । व्य० द्वि० २ आ ।

ऋषितः-नोपशमं नीतः । व्य० द्वि० २२४ आ ।

ऋषिवादिकाः-गन्धर्वभेदविशेषः । प्रज्ञा० ७० ।

ए

एंती-आगच्छन्ती । बृ० द्वि० १६७ आ ।

एंतो-आगच्छन् । आव० ४२० ।

एंतओ-आगच्छन् । आव० १९६ ।

ए-वाक्यालंकारे । अनु० १७६ । अलङ्कारे । भग० ७०५ । वाक्यालङ्कारे । भग० ८२ । आमन्त्रणार्थः, अलङ्कारार्थोऽवा । भग० ३७ ।

एइंसु-ज्ञातवन्तोऽनुभूतवन्तः । भग० ७२६ ।

एइणा-अनेन । बृ० द्वि० ११० अ ।

एई-इयती । आव० ५१३ ।

एककाः-अध्ययनविशेषः । ठाणा० ३८७ ।

एकखुर-अश्वगोहस्तिसिंहादयः । सम० १३५ ।

एकतश्चक्रवालं-एकस्यां दिशि नटानां मण्डलाकारेण नर्त्तनम् । जं० प्र० ४१५ ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एकतोवक्रद्विधातोवक्रएकतश्चक्रवालद्विधातश्चक्रवालचक्रार्द्धचक्रवालाभिनयात्मकः-चतुर्थी नाट्यविधिः। जीवा० २४६। जं० प्र० ४१५।

एकतोवक्र-एकतोवक्रं नाम नटानां एकस्यां दिशि धनुराकारश्रेण्या नर्त्तनम्। जं० प्र० ४१५।

एकतोवेदिका-एकं जानु बाह्वोरन्तरे कृत्वेति। ठाणा० ३६२।

एकत्तवियक्कं-एकत्ववितर्कम्। आव० ३२७।

एकत्ववितर्कमविचारं - शुक्लध्यानद्वितीयभेदः। आव० ६०३।

एकधारं-शस्त्रविशेषः। दश० २०१।

एकभविक-तत्र एकस्मिन् भवे तस्मिन्नेवातिक्रान्ते भावी। एकभविकः-योऽनन्तर एव भवे इन्द्रतयोत्पस्यत इति। ठाणा० १०३।

एकभावं-एकत्वम्। उत्त० ५८०।

एकमुखं। ओघ० ९९।

एकल्लओ-एकाकी। आव० ३०६।

एकलशाटक-एकवस्त्रकः। ओघ० ४३।

एकविहारप्रतिमा-पञ्चमी प्रतिमा। सम० ९६।

एकस्थीकृतं-न एकस्थमनेकस्थं अनेकस्थमेकस्थमिव कृतमेकस्थीकृतम्। आचा० ६३।

एका -एकाः-श्रेष्ठाः संज्ञाशब्दत्वान्न सर्वादित्वम्। जं० प्र० १३१।

एकाए-एकः। व्य० द्वि० ४१७ अ।

एका त-एक एवाहमित्यन्तो-निश्चयः। उत्त० ३०७।

एकान्तरः-अनन्तरसमयः। आव० १४।

एकान्तवित्-एकान्तेन विदितसंसारस्वभावतया मौनीन्द्रमेव शासनं तथ्यं नान्यदित्येवं वेत्तीति। सूत्र० २६५।

एकायतनं - एकं-अद्वितीयं आयतनं-ज्ञानादित्रयम्। आचा० २०७।

एकावलिः-भूषणविधिविशेषः। जीवा० २६८।

एकावली-विचित्रमणिककृता एकसरिका। जं० प्र० १०५। विचित्रमणिका। ज्ञाता० ४३। कनकावल्यभिलापेनेत्यर्थः। औप० ३०।

एकाशीतिपदवास्तुन्यासः। जं० प्र० २०८।

एकिका-प्रश्रवणम्। आचा० ४०९।

एक्कई-एकीकृत्य-यौगपद्येन। ओघ० १११।

एक्कगमा-एकगमाः-तुल्याभिलापाः। ठाणा० ५८।

एक्कगमे-एकगमः-षड्भ्योऽप्यन्तेऽङ्क एव पाठः। अन्त० ४।

एक्कडे-पर्वगविशेषः। प्रज्ञा० ३३।

एक्कमुहा-जेसिं एक्कओ णालाण मूहा ते एक्कतोमूहा। नि० चू० प्र० १६१ अ।

एक्कल्लओ-एकाकी। आव० १९३।

एक्कवारिआ। ओघ० ९७।

एक्कसंकलितबद्धा-एकश्रृंखलाबद्धाः। आव० ६३।

एक्कसरा-सहैव। आव० ३६७।

एक्कसिं-एकशः। आव० ८१३।

एक्कसेल-एकशैलः-वक्षस्कारपर्वतः। जं० प्र० ३४७।

एक्काणिया-एकाकिनी। आव० ५६०।

एक्कारसी-एकादशी तिथिः। ज्ञाता० १५३।

एक्काहिज्जा-व्यन्तरीविशेषा। नि० चू० प्र० ३०४ आ।

एगंगिओ-संघातिमासंघातिमो एगंगिओ भवति। नि० चू० द्वि० ७९ अ।

एगंगियं- एकांगिकं तज्जातदसिकं सदसिकाकम्बलीखण्डनिष्पादितम्। ओघ० २१४। य एकेन फलकादिना कृतः। बृ० तृ० १६२ अ। एकाङ्गिकं-तज्जातदशिकं न वा द्वयादिखण्डनिष्पन्नम्। बृ० द्वि० २३९ अ।

एगंत-एकान्तं-विजनम्। ज्ञाता० ८८। नियमः। उत्त० २४१। एकः-अद्वितीयः, कर्मणामन्तो यस्मिन्निति, मोक्षः। उत्त० ३०७। एकनिश्चयः। भग० २९०। एकान्तं-अनुपघातकं स्थानम्। दश० १५६। निश्चयः। उत्त० ५८७। इतरव्यासङ्गपरिहारात्मकम्। उत्त० ६२२। मोक्षः। दश० १६५। विजनम्। भग० ३२३। योजनमण्डलादन्यत्र। जं० प्र० ३८८।

एगंतचरिया-एकान्तचर्या-द्रव्यक्षेत्रकालभावेष्वसम्बद्धता। दश० १५।

एगंतदिट्ठी-एकान्तदृष्टिः-एकोऽन्तो-निश्चयो यस्याः सा तथा, सा चासौ दृष्टिः, अनन्याक्षिप्ता। उत्त० ४५७। एकान्तदृष्टिः-एकान्तेन तत्त्वेषु-जीवादिषु पदार्थेषु दृष्टिर्यस्यासौ। सूत्र० २३४। एकोऽन्तो-निश्चयो यस्याः सा एकान्ता सा दृष्टिः-बुद्धिर्यस्मिन् एकान्तदृष्टिः। ज्ञाता० ५१। एकान्ता-ग्रा-

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ह्यमेवेदं मयेत्येवमेव निश्चया दृष्टिर्यस्य सः । ज्ञाता० ८० । एकान्तेन निश्चला जीवादितत्त्वेषु दृष्टिः–सम्यग्दर्शनं यस्य स एकान्तदृष्टिः–निष्प्रकम्पसम्यक्त्वः । सूत्र० १४१ ।

एगंतदिट्ठीए-एकोऽन्तो-निश्चयो यस्याः सा एकान्ता सा दृष्टिः–बुद्धिर्यस्मिन्निर्ग्रन्थे प्रवचने–चारित्रपालनं प्रति तदेकान्तदृष्टिकम् । एकान्ता–एकनिश्चया दृष्टिः–दृक् यस्य स एकान्तदृष्टिकः । ज्ञाता० ५१ ।

एगंतधारा-एकत्रान्ते–वस्तुभागेऽपहर्तव्यलक्षणे धारा–परोपतापप्रधानवृत्तिलक्षणा यस्य स एकधारः । ज्ञाता० ८० । एकान्तधारा–तीक्ष्णधारा । उत्त० ३२७ । एकान्ता–एकविभागाश्रया धारा यस्य सा एकान्तधारा । ज्ञाता० ५१ ।

एगंतपंडिए-एकान्तपण्डितः–साधुः । भग० ९१ ।

एगंतबाले-एकान्तबालः–मिथ्यादृष्टिः अविरतो वा । भग० ९० ।

एगंतमंतं-एक इत्येवमन्तो-निश्चयः यत्रासावेकान्त एक इत्यर्थः अतस्तमन्तं भूभागम् । भग० २९० ।

एगंतमोणेण-एकान्तमौनेन-संयमेन करणभूतेन । सूत्र० २३९ ।

एगंतरं-एकान्तरोऽनन्तरसमयः । विशे० २०९ । एकान्तरं–एकेन चतुर्थलक्षणेन तपसाऽन्तरं–व्यवधानं यस्मिंस्तत् उत्त० ७०६ ।

एग-एकः–असहायो रागद्वेषादिसहभावविरहितो गौतमादिरित्यर्थः । उत्त० २४१ । तथाविधतीर्थकरनामकर्मोदयादनुत्तरावाप्तविभूतिरद्वितीयः, तीर्थकरः । घातिकर्मसाहित्यरहितः । उत्त० २४१ । एकत्र । ओघ० ३३ । असहायः । ठाणा० ३५ । तत्र प्रदेशार्थतया असंख्यातप्रदेशोऽपि जीवो द्रव्यार्थतया एकः, अथवा प्रतिक्षणं पूर्वस्वभावक्षयापरस्वरूपोत्पादयोगेनानन्तभेदोऽपि कालत्रयानुगामिचैतन्यमात्रापेक्षया एकः, अथवा प्रतिसन्तानं चैतन्यभेदेनानन्तत्वेऽप्यात्मनां संग्रहनयाश्रितसामान्यरूपापेक्षयैकत्वम् इति । सम० ५ । मोक्षोऽशेषमलकलङ्करहितत्वात् संयमो वा रागद्वेषरहितत्वात् । आचा० २१२ । पूर्वपूर्वरूपः उत्तरोत्तररूपः, आद्यः, पर्यवसानो वा । प्रज्ञा० २६५ । धर्मसहायविप्रमुक्तः अल्पसागारिकस्थितो वा । दश० १८८ । उद्रेकावस्थावर्तिनैकेन गुणेन स्पर्शाख्येनोपलक्षितः इति एकः–वायुः । आचा० ७५ । एकाकी, असहायः । ठाणा० १९० । आन्तरव्यक्तरागादिसहायवियोगात् अद्वितीयः तथाविधपदात्यादिसहायविरहात् । ज्ञाता० ३४ । सदृशः । ज्ञाता० ५७ । एकः–रागद्वेषरहिततया ओजाः, यद्वाऽस्मिन् संसारचक्रवाले पर्यटन्नसुमान् स्वकृतसुखदुःखफलभाक्त्वेनैकस्यैव परलोकगमनतया सदैकक एव भवति । सूत्र० २६५ । समानः । राज० ४९ । मोक्षः संयमो वा । सूत्र० २३५ ।

एगइओ-एकदा कदाचिद् एकचरो वा । आचा० ३३० ।

एगइया-एकका:, एके केचनेत्यर्थः । भग ३२ ।

एगइयाणं-एकेषां, न तु सर्वेषाम् । भग० १२९ ।

एगईओ-एकः कश्चिदेकाकी वा । आचा० ३३० ।

एगउ-एकस्मिन् देशे । ज्ञाता० । ९३ ।

एगओ-एकतः । ज्ञाता० ७० । एकः स एव एककः, एको वा प्रतिमाप्रतिपत्त्यादौ गच्छतीत्येकगः । एकं वा कर्मसाहित्यविगमतो मोक्षं गच्छति–तत्प्राप्तियोगानुष्ठानप्रवृत्तेर्यातीत्येकगः । उत्त० १०८ ।

एगओखहा-एकस्यां दिश्यङ्कुशाकारा । ठाणा० ४०७ । यया जीवः पुद्गलो वा नाड्या वामपार्श्वादेस्तां प्रविष्टस्तयैव गत्वा पुनस्तद्वामपार्श्वादावुत्पद्यते सा एकतःखा, एकस्यां दिशि वामादिपार्श्वलक्षणायां खस्य–आकाशस्य लोकनाडीव्यतिरिक्तलक्षणस्य भावादिति । भग० ८६६ ।

एगओजण्णोवइयकिच्चगए । भग० ११० ।

एगओवंका-एकतः–एकस्यां दिशि वङ्का–वक्रा एकतोवक्रा । भग० ८६६ ।

एगओवत्ता-द्वीन्द्रियजीवविशेषाः । प्रज्ञा० ४१ ।

एगखम्भ-एकस्तम्भः–एकः स्तम्भो यस्मिन् सः प्रासादः । दश० ४१ ।

एगखुर-प्रतिपदमेकः खुरो येषां ते एकखुराः–अश्वादयः । जीवा० ३८ । प्रतिपदमेकः खुरः–शफो येषां ते एकखुराः–अश्वादयः । प्रज्ञा० ४५ । एकः खुरः–चरणे येषामधोवर्त्यस्थिविशेषो येषां ते एकखुरा–हयादयः । उत० ६९९ ।

एगगयं-एगांगिकं–तकम् । व्य० द्वि० ८१ आ ।

एगगुण-एकगुणः एकेन गुणो–गुणनं–ताडनं यस्य स एकगुणः । ठाणा० ३५ ।

एगगुणकालए-एकः–सर्वजघन्यो गुणः–अंशस्तेन कालकः परमाण्वादिरेकगुणकालकः–सर्वजघन्यकृष्णः । अनु० १११ ।

एगग्ग-एकाग्रस्य–एकालम्बनस्यार्थाचेतसो भावः एकाग्र्यं–ध्यानम् । उत्त० ६२१ ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एगग्गचित्त-एकाग्रचित्तः-एकाग्रालंबनः। दश० ५७।

एगग्गमणो-एकाग्रमनाः-अवहितचित्तः। उत्त० ५९९।

एगग्गहण-एकग्रहणेन-एकशब्देन। भग० १४९।

एगग्गहणगहिया-एकग्रहणगृहीता-एकग्रहणेन-एकशब्देन-धर्मास्तिकाय इत्येवंलक्षणेन गृहीता ये ते तथा, एकशब्दाभिधेया इत्यर्थः। भग० १४९।

एगचरा-एकचराः-एकाकिनः। आचा० ३०८।

एगचक्खू-अतिशयवत् श्रुतज्ञानादिर्वर्जितो विवक्षित इति एकचक्षुः चक्षुरिन्द्रियापेक्षया। एकं चक्षुरस्येति। ठाणा० १७१।

एगचक्खू विणिहय-एकचक्षुर्विनिहतः-एकं चक्षुर्विनिहतं यस्य सः। प्रश्न० २५।

एगचरिया-एकचर्या-एकाकिविहारप्रतिमाऽभ्युपगमः। आचा० २४३।

एगचोरो-एकचौरः-य एकाकी सन् हरति सः। प्रश्न० ४६।

एगच्चा-एकार्च्या-अद्वितीयपूज्याः संयमानुष्ठाने वा असदृशी अर्चा-शरीरं येषां ते एकार्चाः। उपा० २९।

एगच्छत्त-एकछत्रा एकं छत्रं-नृपतिचिह्नमस्यामिति, अविद्यमानद्वितीयनृपतिः। उत्त० ४४८।

एगजंबूए-उल्लुकतीरे चैत्यविशेषः। भग० ७०५।

एगजडी-एकजटी-एकाशीतितमो ग्रहः। जं० प्र० ५३५। त्र्यशीतितमो ग्रहः। ठाणा० ७९।

एगज्जं-एकग्रम्-एकवाक्यतया संप्रधार्य। आचा० ३३०।

एगट्ठ-एकस्थः-एकत्र। आव० ७१०। एकार्थ-अनन्यविषयं एकप्रयोजनं वा। भग० १७।

एगट्ठभागमुहुत्तेहिं-मुहूर्तैकषष्टिभागाभ्याम्। सूर्य० १२।

एगट्ठाणं-एकस्थानकं-यथा अङ्गोपाङ्गस्थापितं तेन तथावस्थितेनैव समुद्देष्टव्यम्। आव० ८५३।

एगट्ठि-एगबीयं। नि० चू० प्र० ५६ आ।

एगट्ठिआणुओगे-एकश्चासावर्थश्च-अभिधेयो जीवादिः स येषामस्ति त एकार्थिकाः-शब्दास्तैरनुयोगस्तत्कथनमित्यर्थः। ठाणा० ४८१।

एगट्ठिए-एकश्चासावर्थश्च-अभिधेयः एकार्थः स यस्यास्ति स एकार्थिकः, एकार्थवाचक इत्यर्थः। ठाणा० ४९२।

एगट्ठिभागमुहुत्तेहिं-मुहूर्तैकषष्टिभागाभ्याम्। सूर्य० १२।

एगट्ठिभागे-एकषष्टिभागान्। सूर्य० २५।

एगट्ठिया-एकमस्थिकं फलमध्ये येषां ते। भग० ८०४। एकमस्थिकं-फलमध्ये बीजं येषां ते एकास्थिकाः। भग० ३६४। एकास्थिका-नौः। विपा० ८०। ज्ञाता० २२७। फलं फलं प्रति एकमस्थि येषां ते एकास्थिकाः। प्रज्ञा० ३१।

एगठाणं-एकस्थानम्। आव० ८५२। एकः सङ्घाटकः। ओघ० ९९।

एगणासा-एकनाशा पश्चिमरुचकवास्तव्या पञ्चमी दिक्कुमारीमहत्तरिका। जं० प्र० ३९१।

एगणिसेज्जाए-एकेनासनपरिग्रहेण। सम० ७२।

एगतियाओ-एककाः-काश्चन। जीवा० १९८।

एगतो-एकतः-एकस्मिन् स्थाने। व्य० प्र० १५४ अ।

एगतोनिसहसंठिया-एकतो-रथस्य एकस्मिन् पार्श्वे यो नितरां सहते स्कन्धपृष्ठे वा समारोपितं भारमिति निषधो-बलीवर्द्दस्तस्येव संस्थितं-संस्थानं यस्याः सा एकतोनिषधसंस्थिता। सूर्य० ७१।

एगतोवंका-एकओवंका-एकस्यां दिशि वक्रा। ठाणा० ४०७।

एगतोवत्ता-एकतोवर्ताः-द्वीन्द्रियजीवविशेषाः। जीवा० ३१।

एगतोवेति-एगखीला। नि० चू० प्र० १२७ अ।

एगत्त-एकता, यैकता-निरालम्बनत्वम्। भग० ९२४। एकत्वं-अभेदः। ठाणा० १९१।

एगत्तवियक्के-एकत्वेन-अभेदेनोत्पादादिपर्यायाणामन्यतमैकपर्यायालम्बनतयेत्यर्थो वितर्कः-पूर्वगतश्रुताश्रयो व्यञ्जनरूपोऽर्थरूपो वा यस्य तदेकत्ववितर्कम्। ठाणा० १९१।

एगत्तीकरण-एकत्वकरणं-एकाग्रत्वविधानम्। ज्ञाता० ४६।

एगत्था-एकार्थाः-एके च ते अर्थाश्चेति एकार्थाः, एकेषांचिन् न सर्वेषां निखिलानां वक्तुमशक्यत्वादर्थाः-जीवादयः। सम० ११३।

एगदिसिं-एकया दिशा पूर्वोत्तरलक्षणया। ज्ञाता० ४५।

एगदुवारा-एकद्वारा-एकप्रवेशनिर्गममार्गा। ज्ञाता० २३८।

एगदिट्ठी-एकदृष्टिः-बद्धलक्षः। प्रश्न० १५८।

एगन्तुच्छेय-सर्वथा उत्-प्राबल्येन छेदो-विनाशः एकान्तोच्छेदः-निरन्वयो नाश इत्यर्थः। दश० ४०।

एगपक्खं-एकपक्षः, एकः पक्षो ब्राह्मणलक्षणो यस्य तत्। उत्त० ३६०।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एगपक्खी-एकपक्षिकः-एकवाचनः, एककुलवर्त्ती। व्य० प्र० २१२ अ। एकपक्षिकः-अल्पश्रुतः। व्य० प्र० २१३ अ। गुरुभ्राता भ्राता गुरुगुरुर्गुरुनप्ता समानकुलश्च समानश्रुतो वा। बृ० तृ० १३६ आ।

एगपत्ती-एकपत्नी। आव० ६५।

एगपयेसोगाढं-एकप्रदेशावगाढम्-जीवापेक्षया कर्मद्रव्यापेक्षया च ये एके प्रदेशास्तेष्ववगाढम्। भग० ५३।

एगभविय-एकभविकः-नोआगमतः द्रव्यद्रुमस्य प्रथमः प्रकारः, य एकेन भवेनानन्तरं द्रुमेषूत्पस्यते। दश० १७।

एगभायणो-समपंक्तिः। नि० चू० तृ० ४७ अ।

एगभाव-एको भावः-सांसारिकसुखविपर्ययात् स्वाभाविकसुखरूपो यस्यासावेकभावः। भग० ६४०। मध्यस्थता। ओघ० ११३।

एगभूए-एकभूतः एक एव-आत्मोपमः। ठाणा० २१। एकत्वं प्राप्तः। भग० ६४०।

एगमंडवे-एकमडम्बं नाम यस्य निवेशस्य सर्वासु दिक्षु विदिक्षु च नास्ति कोऽप्यन्यो ग्रामो नगरं वा तस्मिन्नेकमडम्बे। व्य० द्वि० २१६ अ।

एगमणा-एकं-दर्शनान्तरोक्तजीवाजीवविभक्तावगतत्वेन मनः-चित्तं येषां ते एकमनसः-श्रद्धानवन्तः। उत्त० ६७१।

एगमणो-एकमनाः-एकाग्रचित्तः। आव० ७८०।

एगमना-एकम्-एकत्र प्रस्तुते वस्तुन्यभिनिविष्टत्वेन मनो यस्यासौ एकमनाः। उत्त० ५९९।

एगमेगं-एकैकम्। सूर्य० ३३।

एगयओ-एकतः एकस्कन्धतया। भग० १०४। एकतः-एकीभूय, संयुज्येत्यर्थः। भग० ७७४। एकत्र। ठाणा० ३१४।

एगयर – एकतरं, अन्यतमत्। आव० ७३। एकतरः-अनुकूलः। आचा० २४२।

एगराइंदियाए-द्वादशी एकरात्रमानेति। ज्ञाता० ७३।

एगराइया-एकरात्रिकः-अपान्तराले वसामि तत्र गोकुलादौ प्रचुरगोरसादिलाभेऽपि प्रतिबन्धमकुर्वता कारणमन्तरेण मयैकरात्रमेव वस्तव्यं नाधिकमित्येवंरूपेणाभिग्रहेण। व्य० प्र० १३६ आ। एकरात्रिकी। उत्त० ५३१। आव० २१६।

एगराइयाभिक्खुपडिमा – रात्रिप्रमाणा द्वादशी भिक्षुप्रतिमा। सम० २१।

एगराई-एकरात्रिकी। आव० ६४८।

एगरायं एका रात्रिर्यत्र तत् एकरात्रं। एकां रात्रिं यावत् तत्। उत्त० ११०।

एगलंभिए-य एकं प्रधानं शिष्यमात्मना लभते गृह्णाति शेषास्त्वाचार्यस्य समर्पयति, स एकलाभेन चरतीति एकलाभिकः। व्य० प्र० २३२ आ।

एगल्ल-एकाकिनः। ठाणा० ४१६।

एगल्लविहार-एकाकिविहारः। आव० ३६५।

एगवंद-एकवृन्द एकाकी। व्य० प्र० २०१ अ।

एगविऊ-एकमेवात्मानं परलोकगामिनं वेत्तीति एकवित्, न मे कश्चिद् दुःखपरित्राणकारी सहायोऽस्तीत्येवमेकवित्। एकान्तविद् वा-एकान्तेन विदितसंसारस्वभावतया मौनीन्द्रमेव शासनं तथ्यं नान्यदित्येवं वेत्तीत्येकान्तवित्, एकः-मोक्षः संयमो वा तं वेत्तीति। सूत्र० २६५।

एगविह-एकविधः। विशे० ३९६।

एगविहिविहाणा-एकेन विधिना प्रकारेण चक्रवाललक्षणेन विधानं स्वरूपस्य करणं येषां ते एकविधिविधानाः। भग० २८२।

एगसरा-विचित्तेहिं एगसरा एगावली। नि० चू० प्र० २५४ आ। जहा संजतीए पयालणी कसामिव्वणी णिव्भंगे वा दिज्जति। नि० चू० प्र० १२७ अ।

एगसाडियउत्तरासंगकरण-एका शाटिका यस्मिंस्तत्तथा, तच्च तदुत्तरासङ्गकरणं च-उत्तरीयस्य न्यासविशेषः। ज्ञाता० ४६।

एगसालयं-एकशालकम्। जीवा० २६९।

एगसित्थ एकसिक्थु-यत्रैकमेव सिक्थु भुज्यते तत्। उत्त० ६०४।

एगसेलकूडे-एकशैलकूटं, एकशैलवक्षस्कारकूटनाम। जं० प्र० ३४७।

एगसेलग। ज्ञाता० २४२।

एगसेले। एकशैलो धातकीखण्डपश्चिमार्धस्थमन्दरपर्वतस्थे स्वनामख्याते वक्षस्कारपर्वते। ठाणा० ८०। एकशैलो जम्बूद्वीपस्थमन्दरपर्वतसमीपस्थे स्वनामख्याते वक्षस्कारपर्वते। ठाणा० ३२६।

एगा एका-अद्वितीया। आव० ४६५।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एगागारो-एकाकारः एकस्वरूपः। जीवा १४३।

एगागिसमुद्दिसगा-ये न मण्डल्युपजीविनः। ओघ० ८७।

एगाणिओ-एकाकी। आव० ५५८।

एगाणुप्पेहा-एकस्य-एकाकिनो असहायस्यानुप्रेक्षा-भावना एकानुप्रेक्षा। ठाणा० १९०।

एगाभिमुहा-एकं भगवन्तं अभिमुखं येषां ते एकाभिमुखाः। ज्ञाता० ४५।

एगाभोगो-एगा योगो भण्णति। नि० चू० प्र० ४७ अ।

एगामोसा- त्रिभिरंगुलीभिर्वा यद्गृहीतव्यं तदेकायै गृह्णाति सा, मध्ये गृहीत्वा हस्ताभ्यां वस्त्रं घृषन् त्रिभागावशेषं यावन्नयति द्वाभ्यां वा पार्श्वाभ्यां यावद् ग्रहणा। ओघ० ११०। एकामर्शनं एकामर्शा। उत्त० ५४१।

एगाय-एकाकिनः। सूत्र० १४०।

एगालंभी-एकलाभी-यः प्रधानः शिष्यः तमेकं यो न ददाति अवशेषांस्तु सर्वानपि प्रव्रजितान् गुरूणां प्रयच्छति। येषामेक एव लाभो-यथा यदि भक्तं लभन्ते ततो वस्त्रादीनि न, यथा वस्त्रादीनि लभन्ते तर्हि न भक्तमपि, एकमेव लभन्ते इत्येवंशीला एकलाभिनः। व्य० प्र० २३२ आ।

एगावलि-तपविशेषः। आचा० ४२३। एकावली-नानामणिकमयी माला। औप० ५५। विचित्रमणिका। ज्ञाता० ४३। विचित्रमणिकमयी। भग० ४७७।

एगावलिसंठिते-एकावलिसंस्थितः-अनुराधानक्षत्रसंस्थानम्। सूर्य० १३०।

एगावली-एकावलिका-जघन्ययुक्तासङ्ख्यातकसमयानां समुदायः। जीवा० ३४४। विचित्रमणिकमयी। भग० ४५९।

एगावाती-एकवादी-तत्रैक एवात्मादिरर्थ इत्येवं वदतीति। ठाणा० ४२५।

एगासणं- एकाशनं नाम सकृदुपविष्टपुताचालनेन भोजनम्। आव० ८५३।

एगाहं-एकाहं एकमहर्यावत्। जीवा० १०९। दिने दिने गत्वा नोदयति, एकान्तरितं वा। बृ० तृ० १४२ आ। एकाहं-अभक्तार्थम्। व्य० द्वि० ३८६ अ।

एगाहच्चं-एका हत्या-हननं-प्रहारो यत्र जीवितव्यपरोपणे तदेकाहत्यम्। भग० ३२३। एका एव आहत्या-आहननं प्रहारो यत्र भस्मीकरणे तदेकाहत्यम्। भग० ६७०। एकं घातं, एकेन घातेनेति भावः। राज० १३४।

एगाहजातगा-एकाहर्जाता एकदिवसोत्पन्नाः। आव० ११६।

एगाहिगारिगा-एकस्मिन् शय्यातरं पिण्डादावधिकृतदोषेऽनालोचिते एव यानि शेषदोषसमुत्थितानि प्रायश्चित्तानि तानि एकाधिकारिकाणि, एकाधिकारे भवानि एकाधिकारिकाणि। व्य० प्र० ३० अ।

एगाहिय-ज्वरविशेषः। भग० १९७।

एगुरूया-एकोरुकः-अन्तरद्वीपविशेषः। जीवा० १४४।

एगूरूता। ठाणा० २२५।

एगूरूयदीवे-अन्तरद्वीपे प्रथमः। ठाणा० २२५।

एगेभवं-एको भवान्। ज्ञाता० ११०।

एगोदगं-एकोदकं, सर्वात्मनोदकप्लावितम्। जीवा० ३२६।

एगोरुया-अन्तरद्वीपविशेषः। प्रज्ञा० ५०।

एच्चिरेण-इयता। ओघ० ६५।

एज एजतीति एजः -वायुः कम्पनशीलत्वात्। आचा० ७५।

एज्जंत-आयान्तमागच्छन्तम्। उत्त० ३५८। आयान्तम्। आव० २८७।

एज्ज-एयातां-समागच्छताम्। बृ० तृ० १४१ अ।

एज्जमाणं-इयत्, आगच्छत्। जं० प्र० २३३। प्रत्यागच्छत्। ज्ञाता० १३९। एज्यमानं-कम्प्यमानम्। जीवा० १८१।

एज्जा-आगच्छेत्। बृ० द्वि० १८७ अ।

एडगारूढो-एडकारूढः। आव० ४१७।

एडेंति-एडयन्ति-अपनयन्ति। जं० प्र० ३८८।

एडेइ-छर्दयति, तीरे प्रक्षिपति। जं० प्र० २३०।

एडेति-अपनयति। भग० ६६५।

एडेसि-छर्दयसि। ज्ञाता० ६९।

एणी स्नायुः। प्रश्न० ८०। हरिणी। जं० प्र० ११०। जीवा० २७०। एण्यः-स्नायवः। जं० प्र० ११०।

एणीयारा-एगी-हरिणी मृगग्रहणार्थं चारयन्ति-पोषयन्ति ये ते। प्रश्न० १४।

एणेज्जग-गोशालपरावर्त्तिस्थानम्। भग० ६७४।

एतं-एतम्-एकम्। प्रश्न० १९।

एतमट्ठं-एतं-पुद्गलानामपरापरपरिणामलक्षणमर्थम्। ज्ञाता० १७७।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एतेवं-एतदेवमित्यर्थः । भग० ४५५ ।

एत्ताहे-अधुना । आव० ३५९ ।

एत्तिओ-एतावान् । आव० ४२२ ।

एत्तिलुयं-एतावत् । आव० ५५५ ।

एत्तियपरिक्खओ-ईयत्परीक्षकः । आव० ८२६ ।

एत्तो-एषु । उत्त० १४२ । इतः-अहिकडेवरादिगन्धात् सकाशात् । ज्ञाता० १३० ।

एत्थं-अत्र, इह । दश० ९९ ।

एत्थ - अशोकवरपादपस्य यदधोऽत्रेत्येवं संबन्धनीयः । ज्ञाता० ६ ।

एत्थोवरए-अस्मिन् संयमे भगवद्वच सि वा उप-सामीप्येन रतः व्यवस्थितः । आचा० १६२ ।

एद्दहो-एतावान् । आव० ३४१ ।

एमेए-एवं अनेन प्रकारेण एते-येऽधिकृताः प्रत्यक्षेण वा परिभ्रमन्तो दृश्यन्ते । दश० ६८ ।

एयं-एतत्, एतावत्प्रमाणम् । सूर्य० ११३ ।

एयंतं-एजमानं, कम्पमानम् । ठाणा० ३८५ ।

एयंतगं-आगच्छत् । आव० २९१ ।

एयइ-एजते-कम्पते । भग० १८३ ।

एयकम्मे-एतद्व्यापारः, एतदेव वा काम्यं-कमनीयं यस्य स । विपा० ४० ।

एयग्गो-एकाग्रः-एकचित्तः । आव० ७७३ ।

एयणुद्देसए - एजनोद्देशकः-भगवतीसूत्रस्य पञ्चमशतकस्य सप्तमोद्देशः । भग० २४६ ।

एयविज्जे-एषैव विद्या-विज्ञानं यस्य स एतद्विद्यः । विपा० ४० ।

एयसामायारो - एतत्सामाचारः-एतज्जीतकल्पः । विपा० ४० ।

एयारूव-एतद्रूपं-वक्ष्यमाणरूपम् । भग० ३२२ । एतद्रूपः- एतदेव रूपं-स्वरूपं यस्य सः । जं० प्र० २२ ।

एयावंति-एतावन्तः । आचा० २३ ।

एरंड-हडकितः । बृ० द्वि० २१९ अ । तृणविशेषः । प्रज्ञा० ३३ । एरण्डः । आचा० १९७ ।

एरंडइए-हडक्कयितः । बृ० द्वि० १०६ आ ।

एरंडकट्ठसगडिया - एरण्डशकटिका-एरण्डकाष्ठमयी । ज्ञाता० ७६ ।

एरंडबीयाण-उत्कटिकाभेदः । प्रज्ञा० २६६ ।

एरंडमिंजिया-एरंडमञ्जिका-एरंडफलम् । भग० २९० ।

एरगा-एरका-गुन्द्रा भद्रमुस्तक इत्यर्थः । बृ० प्र० २०२ अ ।

एरवए-ऐरवतः-क्षेत्रविशेषः । ठाणा० ६८ । ऐरावतः । सूर्य० २२ । ऐरवतः-कर्मभूमिविशेषः । प्रज्ञा० ५५ ।

एरवतीणदी-नदीविशेषः । नि० चू० द्वि० ७९ अ ।

एरावण-ऐरावणः-शक्रगजः । प्रश्न० १३५ । इन्द्रहस्ती । ठाणा० ३०२ । आव० ३५९ । गुच्छाविशेषः । प्रज्ञा० ३२ ।

एरावणदहे-द्रहविशेषः । ठाणा० ३२६ ।

एरावती-नदीविशेषः । ठाणा० ४७७ । कुणालानगर्याः समीपे नदी । बृ० तृ० १६१ आ ।

एरावय - ऐरावतं-उत्तरपार्श्ववर्तिभरतक्षेत्रप्रतिरूपकक्षेत्रवि-शेषः । जं० प्र० ३३० ।

एरिंड-वृक्षविशेषः । भग० ८०२ ।

एलए-एलकः-उरभ्रः । प्रश्न० ३७ ।

एलक-ऊरणकः । अनु० १२९ ।

एलकच्छं-एडकाक्षं - योगसंग्रहेऽनिश्रितोपधानदृष्टान्ते पुरं, यत्पूर्वं दशार्णपुरं नाम नगरमासीत्, यत्र गजाग्रपदाभिधः पर्वतस्तत् । आव० ६६८ ।

एलगच्छा-एडकाक्षः-कायोत्सर्गे दृष्टान्तः । आव० ८०० । एलकाक्षः-ग्रामविशेषः । उत्त० ८७ ।

एलगमूओ - भाषमाण एडक इव बूबुयते एडकमूकः । आव० ६२८ ।

एलगा-एडकाः-द्विखुरचतुष्पदविशेषाः । जीवा० ३८ ।

एलते-एडकः-और्णकः । प्रज्ञा० २५२ ।

एलमूअय-एलमूकता-अजाभाषानुकारित्वम् । दश० १९० ।

एलमूओ-एलमूगो भासइ एलगो जहा बुडबुडति एवं एल-मूगो भासति । नि० चू० द्वि० ३६ आ ।

एलयं-एलकं-ऊरणकम् । उत्त० २७२ ।

एलवालु-चिर्भटविशेषरूपम् । प्रज्ञा० ३७ ।

एला - फलविशेषः । जं० प्र० ३५ । जीवा० १३६, १९१ ।

एलापाडल-एलापाटला-पाटलाविशेषः । ज्ञाता० २३१ ।

एलापुडाण-गन्धद्रव्यविशेषः । ज्ञाता० २३२ ।

एलारस-एलारसः-सुगन्धिफलविशेषरसः । प्रश्न० १६२ ।

एलालुकी-वल्लीविशेषः । आचा० ५७ ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एलावच्चसगोत्तं-इलापतेरपत्यं एलापत्यः, एलापत्येन सह गोत्रेण वर्त्तते यः स एलापत्यसगोत्रः। नंदी ४९।

एलावच्चा-गोत्रविशेषः। ठाणा० ३९०। एलापत्या-रात्रेः तृतीयं नाम। सूर्य० १४७।

एलावालुंकी-वल्लीविशेषः। प्रज्ञा० ३२।

एलासमुग्गयं-एलासमुद्गकम्। जीवा० २३४।

एलिका-तृणपत्रनिश्रितो जीवविशेषः। आचा० ५५।

एलिक्खं-ईदृशोऽभिहितार्थाभिज्ञः। उत्त० २८२।

एलिया-एडका। आव० ८५४।

एलिसय-ईदृशं-एतादृशम्। बृ० द्वि० २८७ अ।

एलुए-एलुकः-देहली। जं० प्र० ४८।

एलुकावालुङ्कं -तिलकम्। दश० १८०।

एलुकः-उदम्बरः, देहली। बृ० प्र० २५७ आ।

एलुगं-देहली। आचा० २२२।

एलुगा-एलुकाः-देहल्यः। राज० ६१। जीवा० २०४, ३५९।

एवं-एवं प्रकारवचनशब्दः। दश० १३६। प्रकारवाचकः। ओघ० ५। उपमार्थे। उत्त० २२४। प्रकारार्थः। प्रज्ञा० २५५। इत्थंकरणाय। ज्ञाता० ११३।

एवं आया-एवमात्मा-एवंरूपः। नंदी २१२।

एवं चतुर्षु - पूर्वापरविदेहदेवकुरूत्तरकुरुरूपेषु क्षेत्रविशेषेषु। चतुर्विधस्य पर्यायः। जं० प्र० ३१२।

एवं भागा - एवंभागानि-वक्ष्यमाणप्रकारभागानि। सूर्य० १०४।

एवंभूओ-एवम्भूतः, यथाभूतो नयः विशेषयति। आव० २८४। यः शब्देनोच्यते चेष्टाक्रियादिकः प्रकारस्तमेवं भूतंप्राप्तं यत्क्रियाविशिष्टं शब्देनोच्यते तामेव क्रियां कुर्वद्वस्तु एवंभूतम्। अनु० २६६।

एवंभूत-एवमिति तथाभूतः सत्यो घटादिरर्थो नान्यथेत्येवमभ्युपगमपर एवंभूतो नयः। ठाणा० १५३। शब्दनयस्य तृतीयो भेदः। उत्त० ७७। यः शब्देनोच्यते चेष्टाक्रियादिकः प्रकारस्तद्विशिष्टस्यैव वस्तुनोऽभ्युपगमात्तमेवं भूतः-प्राप्तः एवंभूतः। अनु० २६६। यथाशब्दार्थं एवं पदार्थो भूतः सन्निित्यर्थोऽन्यथा भूतोऽसन्निति प्रतिपत्तिपर एवंभूतः। ठाणा० ३९०।

एवंभूय-दृष्टिवादे सूत्रस्य भेदः। सम० १२८। एवंभूतः-नयविशेषः। प्रज्ञा० ३२७।

एवंमहालियं-इतिमहतीम्। ज्ञाता० ६२।

एवंमहालिया-एतावन्ति महान्ति। जीवा० ३९९।

एव - एवकारः-क्रमप्रदर्शनार्थः। आव० १०। समुच्चये। ठाणा० ५०४। एवः-अवधारणे भिन्नक्रमश्च। उत्त० २९४। इति गाथालङ्कारमात्रे। विशे० १३४७। पूरणार्थे। आव० ११०। एवम्-अनन्तरोक्तप्रकारेण। उत्त० २८५। क्रमनियमप्रतिपादनार्थः। ओघ० २। एवकारः-परिमाणे। प्रज्ञा० ५५९। एवशब्दः-अपिशब्दार्थः। व्य० प्र० २१३ आ।

एवड्डु-एतावन्। आव० ४३०।

एवमेयं - एवमेवैतत् बद्धवद्भिः प्रतिपादितं तत्तथैवेत्यर्थः। ज्ञाता० ४७।

एवमेवं-बिन्दोरलाक्षणिकत्वादेवमेव। उत्त० ४०९।

एवमेव-उपनयवचनमिति। ज्ञाता० ९६।

एषः-एषः-एषणमेषो-गवेषणम्। उत्त० ५१४।

एषणायामसमतित्वं-विंशतितमसमाधिस्थानम्। प्रश्न० १४४।

एषणासमितिः-धर्मसाधनानामाश्रयस्य चोद्गमोत्पादनैषणादोषवर्जनम्। तत्त्वा० ९-५।

एषणीय-प्रासुकम्। भग० १११।

एषयति-प्रेरयति, प्रयोजयति। विशे० ४९८।

एसणा-एषणा-अभिलाषः। पिण्ड० २। एषणमेषो-गवेषणं तं करोतीति णिक् ततः स्त्रीलिङ्गे भावे युटि एषणा। उत्त० ५१४। गृहिणा दीयमानपिण्डादेर्ग्रहणं एषणा। ठाणा० १५९। शङ्कितादिलक्षणा। आव० ५७६। गवेषणा। प्रश्न० १०८। अनुत्त० ३। पिण्डविशुद्धिः। भग० २९४।

एसणासमिइए- एषणा-गवेषणादिभेदा शङ्कादिलक्षणा वा तस्यां समितिः एषणासमितिः, गोचरगतेन मुनिना सम्यगुपयुक्तेन नवकोटीपरिशुद्धं ग्राह्यम्। आव० ६१६।

एसणाऽसमिए-एषणाऽसमितः, योऽनेषणां न परिहरति। विंशतितमसमाधिस्थानम्। आव० ६५३।

एसणासमिति - सुत्तानुसारेण रयहरणवत्थपादासणपाणनिलओसहऽणेसणं। नि० चू० प्र० १७ अ।

एसणाऽसमिते-अनेषणां न परिहरति। विंशतितमसमाधिस्थानम्। सम० ३७।

एसणिज्जं-एष्यते -गवेष्यते उद्गमादिदोषविकलतया साधुभिर्यत्तद् एषणीयं-कल्प्यम्। ठाणा० १०८, २१३। एष्यत इत्येषणीयं-कल्प्यम्। भग० २२६।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एसणोवघाते-एषणया--तद्दोषैर्दशभिः शङ्कितादिभिः तस्योपघातः-अकल्प्यता। ठाणा० ३२०।

एसिं-एषणीयं-शुद्धम्। पिण्ड० १४८।

एसिआ-गोष्ठाः। आचा० ३२७।

एसिज्जा-एषयेत्-पर्यवसितवृत्त्या कुर्यात्। उत्त० ४६।

एसियं-एषणीयं-आधाकर्मादिदोषरहितम्। आचा० ३३१। एषणीयं-गवेषणाविशुद्धया गवेषितम्। भग० २९३।

एसिया-एषितुं शीलमेषामिति एषिका-मृगलुब्धका हस्तितापसाश्च मांसहेतोर्मृगान् हस्तिनश्च एषन्ति, ये चान्ये पाखण्डिका नानाविधैरुपायैर्भैक्ष्यमेषन्त्यन्यानि वा विषयसाधनानि ते। सूत्र० १७७।

एसु-एष्यामः। ओघ० ७०।

एसुहुम-एतावत्सूक्ष्मः। प्रज्ञा० ६०१। जीवा० ३७५।

एसे-एष्यति-आगमिष्यति। पिण्ड० १६७।

एस्सा-एष्याः--भविष्यन्तः। आव० ६८७।

एस्सुहुमो-एतत्सूक्ष्मः। औप० १०९।

एहंता-एधयन्तः--अनुभवन्तः। दश० २४८।

एहति-एधते-प्राप्नोति। उत्त० ३१४।

एहा-एधाः--समिधो यकाभिरग्निः प्रज्वाल्यते। उत्त० ३७२। एधाः--समिधः, काष्ठानि। आचा० ३०९।

एहामो-एष्यामः। ओघ० ६५।

एहिं-अर्वाकालिकः। इदानीम्। नि० चू० द्वि० १०९ अ।

एहिअगुणा-ऐहिकगुणाः--इहलोकगुणा भक्तपानादयः। ओघ० ३९।

एहिइ-एष्यति। उपा० ४०।

ऐ

ऐर्यापथिकं-केवलयोगप्रत्ययः कर्मबन्धः। प्रश्न० १४३।

ऐरावणापदम्। ठाणा० ४६९।

ऐरावती-शिखरिणि वर्षधरे दशमः कूटः। ठाणा० ७२।

एरावतीया-स्त्राविशेषः। जीवा० ६०।

ओ

ओअं-ओजः--मानसोऽवष्टम्भः। औप० ३३।

ओअंसी-ओजस्वी-आत्मना वीर्याधिकः। जं० प्र० २१९।

ओअट्टणं-उद्वर्त्तनम्। गाढतरमुद्वर्त्तयति। बृ० तृ० ७१ अ।

ओअविअ-परिकर्मितम्। जं० प्र० ५५।

ओअविआ-आरोपितानि। जं० प्र० २९२

ओअवेहि-साधय-अस्मदाज्ञाप्रवर्तनेनास्मद्वशान् कुरु। जं० प्र० २१८।

ओआलितं-द्रावितम्। आव० ३५०।

ओइंधइ-उत्तारयति। पउ० ३४-१५।

ओइण्णेसुं-उत्तिण्णेसु-अवतीर्णेषु कियत्स्वपि गृहिषु मध्ये स्थितः प्रयाति। ओघ० ३२।

ओए-ओजः--तैजसम्। सूत्र० ३४३। एकः--असहायः। सूत्र० १०८। विषमः, प्रथमतृतीयपञ्चमसप्तमाः। पिण्ड० १६९। एको रागादिविरहात्। आचा० २५६। एकोऽशेषमलकलङ्काङ्करहितः। आचा० २३१।

ओओ-ओजः--आरोहादिकयुक्तता। बृ० प्र० ३०९ आ।

ओकच्छिया। ओघ० २०९।

ओकसणं-पंकपनकयोः परिल्हसणम्। बृ० तृ० २२९ अ।

ओकुरुडो-उत्कुरुटः-कुणालानगर्या दोषाभेतर उपाध्यायविशेषः। आव० ४६५।

ओगसणं-नाशनम्। महाप्र०।

ओगाढं-अवतीर्णां अवगाढां वा प्रकर्षप्राप्ताम्। ठाण० ३९९। आत्मप्रदेशेन सह एकक्षेत्रावस्थायि अवगाढम्। प्रज्ञा० ५०२। भग० २१। लेलीभावं गतः। भग० ८३। अङ्गीभूतं। नि० चू० प्र० ३२७ आ। साधुप्रत्यासन्नीभूतः। ठाणा० १९०।

ओगाढरुइ-अवगाढनमवगाढं-द्वादशाङ्गावगाहो विस्ताराधिगमस्तेन रुचिः, अथवा ओगाढ-साधुप्रत्यासन्नीभूतस्तस्य साधूपदेशाद् रुचिरवगाढरुचिः। भग० ९२६।

ओगाढरुती-अवगाहनमवगाढं-द्वादशांगावगाहो विस्तराधिगम इति सम्भाव्यते तेन रुचिः, अथवा ओगाढत्ति-साधुप्रत्यासन्नीभूतस्तस्य साधूपदेशाद् रुचिः। ठाण० १९०।

ओगाढा-प्रविष्टा। ज्ञाता० १३७।

ओगालीफलगं-आर्यक(प्रायक)प्रभृतीनामावल्या समागतं चंपकपट्टादिफलगं। व्य० द्वि० १०७ आ।

ओगास-पडिस्सगस्सेगदेसो। नि० चू० प्र० ८३ अ। अवकाशः--स्थानम्। आव० ५३५। मार्गः। आव० ६७८।

ओगाहंती-अवगाहन्ती-आगच्छन्ती। आव० २३२।

ओगाहणग्गं-यद्यस्य द्रव्यस्याधस्तादवगाढं तदवगाहनाग्रम्। आचा० ३१८।

ओगाहणनामनिहत्ताउए- अवगाहनानामनिधत्तायुः--अवगाहते यस्यां जीवः साऽवगाहना-शरीरमौदारिकादिः तस्य-नाम औदारिकशरीरनामकर्म तेन सह निधत्तमायुः। प्रज्ञा० २९७।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ओगाहणवग्गणाओ-अवगाहनाः एकैकस्य भाषाद्रव्यस्याधारभूता असङ्ख्येयप्रदेशात्मकक्षेत्रविभागरूपास्तासामवगाहनानां वर्गणाः-समुदायाः अवगाहनावर्गणाः। प्रज्ञा०२६५।

ओगाहणसंठाण-प्रज्ञापनायामेकविंशतितमं पदम्। भग०३९६ ४९५, ८४२। अवगाहनासंस्थानम्। प्रज्ञापनाया एकविंशतितमं पदम्। प्रज्ञा० ६।

ओगाहणसेणियापरिकम्मे-परिकर्मे चतुर्थभेदः।सम०१२८।

ओगाहणा-अवगाहना-तनुः, तदाधारभूतं वा क्षेत्रम्। भग०७१। नियतपरिमाणक्षेत्रावगाहित्वम्। भग० २३६। षड्जीवनिकायानां पादसङ्घट्टनम्। पिण्ड० १६१। अवगाहन्तेऽस्यामवस्थायामिति अवगाहना-स्वावस्थैव। आव० ४४४। प्रज्ञा० १०८। अवग्रहणं-परिच्छेदः। प्रज्ञा० ३०९ अवगाहन्ते क्षेत्रं यस्यां स्थिता जन्तवः साऽवगाहना-तनुरित्यर्थः। नंदी ९१। अवगाहते यस्यां जीवः सा अवगाहना-शरीरं औदारिकादिः। प्रज्ञा० २१८। ज्ञाता० २५०।

ओगाहिमं-आदिमे जे तिण्णि घाणा पयतिते चलवलेत्ति, तेण ते चलवल ओगाहिमं भण्णति। नि० चू० प्र० १९७ अ।

ओगाहिमगं-पक्वान्नम्। बृ० प्र० ३१२ आ। अवगाहिमम्। आव० ८५४।

ओगाहिमतो-अवगाहकः। उत्त० १९८।

ओगाहिमाइ-अवगाहिमादि-पक्वान्नमण्डकप्रभृति। पिण्ड० १५२।

ओगाहे-आगच्छति। ओघ० १०४। अवगाहः-शरीरोच्छ्रयः। प्रज्ञा० १८१।

ओगाहेज्जा-अवगाहेत-आश्रयेत। भग० २३३।

ओगाहेत्ता-प्रविश्य। सम० ८८।

ओगाहो-पत्तद्ग्रहः। बृ० द्वि० २५० आ।

ओगिज्झिय-अवगृह्य-आश्रित्य। आचा० ४०३।

ओगिण्हणयाते-अवग्रहणतायैमनोविषयीकरणाय। ठाणा० ४४१।

ओगुट्टिं-खिंसां, निन्दाम्। पउ० ५६-१५।

ओगुंडिया-मलदिग्धदेहाः। बृ० प्र० २७८ आ।

ओगेण्हणया-अवगृह्यतेऽनेनेति अवग्रहणं, करणेऽनट्, प्रथमसमयप्रविष्टशब्दादिपुद्गलादानपरिणामः, तद्भावोऽवग्रहणता। नंदी १७४।

ओग्गह-अवधारणं अवग्रहः। आव० ३४१।

ओघ-औघिकः, अशुभकर्मप्रकृतिजनितो भावोपसर्गः। सूत्र०७८ ओघः-सामान्यम्। आव० २५८, ४५८, ४८०। विशे० ८४२ ४५०।

ओघजीवितं-नारकाद्यविशेषितायुर्द्रव्यमात्रं सामान्यं जीवितम्। ठाणा० ७।

ओघनिष्पन्नः-ओघः-सामान्यमध्ययनादिकं श्रुताभिधानं तेन निष्पन्नः। अनु० २५१। सामान्यशास्त्रनिष्पन्नः।आव०५८।

ओघनिष्पन्ननिक्षेपः। ठाणा० ६।

ओघरूपा-सामाचारीविशेषः। उत्त० ५४७।

ओघसामाचारी-सामाचार्याः प्रथमभेदः। व्य०प्र०१९ आ। ओघनिर्युक्तिः। ओघ० १।

ओघसामाचार्युपक्रमकालः-सामाचार्युपक्रमकालस्य प्रथमो भेदः। ओघ० १।

ओघस्सरा। जं० प्र० ४०७।

ओघा-उन्मुखा निरीक्षमाणाः। व्य० प्र० १३० अ।

ओघाडिज्जइ-उद्घाट्यते-बाह्यः क्रियते। आव० ६९७।

ओघादेसेणं-सामान्यतः। भग० ८६३।

ओघायथण-ओघायतनानि यानि प्रवाहत एव पूज्यस्थानानि तडागजलप्रवेशौघमार्गो वा। आवा० ४११।

ओचार-अपचारि-दीर्घतरधान्यकोष्ठाकारविशेषः। अनु०१५१

ओचिया-आरोपिता। जीवा० १९९।

ओचूल-अवचूलाः-प्रलम्बगुच्छाः। जं०प्र०२६५। प्रलम्बमानगुच्छः। औप० ७०। भग० ४८०। जं० प्र० ५३०।

ओचूलग- अवचूलकं-अधोमुखाञ्चलं, मुत्कलाञ्चलम्। जं० प्र० २४७।

ओच्छगं--वस्त्रं, आलिङ्गनम्। आव० ६८२।

ओच्छन्नपरिच्छन्न-अवच्छन्नपरिच्छन्नः - अत्यन्तमाच्छादितः। जीवा० १८८।

ओच्छवियं-अवच्छादितम्। ज्ञाता० २८।

ओच्छाइय-आच्छादितः-निरुद्धः। प्रश्न० १३४। अवच्छादितः। ज्ञाता० २८।

ओच्छाहिओ-उत्साहितः-उत्कर्षितः। पिण्ड० १३४।

ओज-ओजः-बलम्। प्रश्न० ११६। आहारादि। भग० २०।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ओजःप्रदेशं घनचतुरस्रं-सप्तविंशतिपरमाण्वात्मकं सप्तविंशतिप्रदेशावगाढं च, तत्र नवप्रदेशात्मकस्यैव पूर्वोक्तस्य प्रतरस्याध उपरि च नव नव प्रदेशाः स्थाप्यन्ते, ततः सप्तविंशतिप्रदेशात्मकमोजःप्रदेशं घनचतुरस्रं भवति। प्रज्ञा० १२।

ओजःप्रदेशं घनत्र्यस्रं-पञ्चत्रिंशत्परमाणुनिष्पन्नं पञ्चत्रिंशत्प्रदेशावगाढं च, तच्चैवं-तिर्यग् निरन्तराः पञ्च परमाणवः स्थाप्यन्ते, तेषां चाधोऽधः क्रमेण तिर्यगेव चत्वारस्त्रयो द्वावेकश्चेति पञ्चदशात्मकः प्रतरो जातः, अस्यैव च प्रतरस्योपरि सर्वपङ्क्तिष्वन्त्यान्त्यपरित्यागेन दश, तथैव तदुपर्युपरि षट् त्रय एकश्चेति क्रमेणाणवः स्थाप्यन्ते, एते मिलिताः पञ्चत्रिंशद्भवंति। प्रज्ञा० ११।

ओजःप्रदेशं घनवृत्तं-सप्तप्रदेशं सप्तप्रदेशावगाढं च, तच्चैवं-तत्रैव पञ्चप्रदेशे प्रतरवृत्ते मध्यस्थितस्य परमाणोरुपरिष्टादधस्ताच्च एकैकोऽणुरवस्थाप्यते, तत एवं सप्तप्रदेशं भवति। प्रज्ञा० ११।

ओजःप्रदेशं प्रतरचतुरस्रं-नवपरमाण्वात्मकं नवप्रदेशावगाढं च, तत्र तिर्यग् निरन्तरं त्रिप्रदेशास्तिस्रः पङ्क्तयः स्थाप्यन्ते। प्रज्ञा० १२।

ओजःप्रदेशं प्रतरत्र्यस्रं-त्रिप्रदेशं त्रिप्रदेशावगाढं च तच्चैवं-पूर्वं तिर्यगणुद्वयं न्यस्यते, तत आद्यस्याध एकोऽणुः। प्रज्ञा० ११

ओजःप्रदेशं प्रतरायतं-पञ्चदशपरमाण्वात्मकं पञ्चदशप्रदेशावगाढं च, तत्र पञ्चप्रदेशात्मिकास्तिस्रःपङ्क्तयस्तिर्यक् स्थाप्यन्ते। प्रज्ञा० १२।

ओजःप्रदेशं श्रेण्यायतं-त्रिपरमाणु त्रिप्रदेशावगाढं च, तत्र तिर्यग् निरन्तरं त्रयः स्थाप्यन्ते। प्रज्ञा० ११।

ओजःप्रदेशप्रतरवृत्तं-पञ्चपरमाणुनिष्पन्नं पञ्चाकाशप्रदेशावगाढं च, तद्यथा-एकः परमाणुर्मध्ये स्थाप्यते, चत्वारः क्रमेण पूर्वादिषु चतसृषु दिक्षु। प्रज्ञा० ११।

ओज्झा-उपाध्यायः। दश० २४२।

ओझा-तुलादंडवद्द्वयोरपि मध्ये वर्तते सः। बृ०प्र० १६० अ।

ओट्ठियं-औष्ट्रिकम्। आव० ४१५।

ओडादिः। ठाणा० २०३।

ओढणपरिहाणेसु। नि० चू० प्र० १४० आ।

ओढेऊणं। ओघ० २१७।

ओणए-अवनतं, उत्तमाङ्गप्रधानं, प्रणमनमित्यर्थः। सम० २४। आसन्नम्। भग० ३५।

ओणता-अवनता। आव० २३७।

ओणमओ-अवनमतः। ओघ० १७८।

ओणमित्ता-अवनम्य। आव० २३७।

ओणयं-उत्तमांगप्रधानं प्रगमनम्। बृ० तृ० १० अ। अवनतिः अवनतं-उत्तमाङ्गप्रधानं प्रणमनम्। आव० ५४२। अवनतः। आव० २७७।

ओणामिणी-अवनामिनी-विद्याविशेषः। दश० ४१।

ओतपोतं-(देशी०) आकीर्णम्। बृ० द्वि० १३९ अ।

ओतपोयं-(देशी०) मालयन्ति,। बृ० तृ० ७० अ।

ओतप्रोतः-तद्रूपः। भग० ६५।

ओतारो-अवतारः। आव० ३८४।

ओतिन्नो-अवतीर्णः-गन्तुमुपक्रान्तः। उत्त० २४७।

ओदइ-पश्यति। नंदी ९९।

ओदइए-कर्मणामुदयेन निर्वृत्तः औदयिकः कर्मोदयापादितो गत्याद्यनुभावलक्षणः। सूत्र० २३०।

ओदइयभावमूल-औदयिकभावमूलं - वनस्पतिकायमूलत्व-मनुभवन्नामगोत्रकर्म्मोदयात् मूलजीव एव। आचा० ८८।

ओदग्गे-उत्कट उदग्रवयःस्थितत्वेन वा उदग्रः। उत्त०३४९।

ओदण-ओदनं। ओघ० २१५। कूरो। नि० चू० प्र० ५८ आ।

ओदनं-हिङ्ग्वादिभिरसंस्कृत ओदनादिः। ठाणा० २२०। भक्तम्। उत्त० २७२।

ओदरा। नि० चू० द्वि० २२ अ।

ओदरिअ-औदरिकाः-भट्टपुत्राः। ओघ० ९५।

ओदारं-प्रधानं तीर्थकरादिशरीराणि प्रतीत्य। सम० १४२।

ओदूढो-आशातितः, थूत्कृतः। उत्त० ३५६।

ओद्देसिकं-यावन्तः केचन भिक्षाचरा समागच्छन्ति तावन्तः सर्वानुद्दिश्य यत् क्रियते तत्। बृ० प्र० ८३ अ।

ओधाइओ-अवधावितः। आव० ४२४।

ओधूणण-अवधूननम्-अपूर्वकरणेन कर्म्मग्रन्थेर्भेदापादनम्। आचा० २९७।

ओपल्ला-अपवीर्णा, कुण्ठीभूता। ज्ञाता० १९२।

ओबद्धओ-विद्यादायकादिप्रतिजागरकः। ठाणा० १६५।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ओबद्धपिंडितो-अवबद्धपिण्डकः । उत्त० २१५।
ओबारं-अवद्वारम् । आव० ३४९।
ओबोलेउं-उद्बुडयितुम् । आव० १९७।
ओभावणा-उवहावणा-परिभवः । ओघ० १३१ । अपभावना-लाघवम् । बृ० प्र० २७९ अ ।
ओभासंति-अवभासयन्ति-सप्रकाशा भवन्ति । भग०३२७। अवभासयन्ति । सूर्य० ६३ ।
ओभासंतो-अवभासयन् । ईषदुद्द्योतयन् । जं०प्र० ४६१ ।
ओभास-अवभासः-प्रभा । ज्ञाता० ४ । अवभासः, प्रभाविनिर्गमः । प्रज्ञा० ८० । प्रतिभाविनिर्गमः । जीवा० १०७। पञ्चषष्ठितमो ग्रहः । जं० प्र० ५३५ । सप्तषष्ठितमो महाग्रहविशेषः । ठाणा० ७९ ।
ओभासइ-अवभासते । आविर्भवति, प्राप्यते इति। सूत्र० २१४ । अवभासयति-प्रकाशयति । सूर्य० ६ ।
ओभासणता । नि० चू० प्र० २४७ अ ।
ओभासिज्ज-अवभाषेत-दातारं याचेत् । आचा० ३४० ।
ओभासिज्जा-अवभाषेत-याचेत । आचा० ३५२ ।
ओभासितं-अवभाषितं-याचितं याचनं वा ।बृ०द्वि०१४२अ।
ओभासी-अवभासते-प्रतिभाति, अवभाषते-याचत इत्येवंशीलोऽवभासी । ठाणा० २०७।
ओभासेई-अवभासयति-ईषत्प्रकाशयति । भग० ७८ ।
ओभुग्ग-अवभुग्नं-वक्रम् । ज्ञाता० ११८ ।
ओमंघ-पात्रमवाङ्मुखम् । बृ० प्र० १०७ आ ।
ओमंथियं-अधोमुखीकृतम् । विपा० ४९ । निरय० ६ । ज्ञाता०३३ । अवाङ्मुखम् । बृ० तृ० १९८ आ । ठाणा०२९९।
ओम-बालः । ओघ० १५१ । लघुपर्यायः । ओघ० १८५। अवं-दुर्भिक्षम् । ओघ० ११, १८, ६३ । पिण्ड०७७ । आव० ५३६ । न्यूनम् । आव० १३० । दुर्भिक्षम् । नि० चू० प्र० १८३ आ । नि० चू० प्र० ५४ आ । अवमानि-असाराणि । उत्त० ३५९ । अवमरात्निकः। बृ० द्वि० १९ अ । दुर्भिक्षम् । व्य० प्र० १९८ आ । अवमं-हीनम् । आचा० १६४ । ऊणं । दश० चू० १६२ । ऊनम् । उत्त० ६०४ । अवमा-न्यूना । उत्त० ५३७। पर्यायलघुः । ओघ० १५० । अवमम् । न्यूनम् । दश० २७२ ।

ओमचरओ-ओमत्ति-अवममुपलक्षणत्वादवमौदार्यं चरति-आसेवते अवमचरकः-न्यूनत्वासेवकः । उत्त० ६०६ ।
ओमचेलिए-अवमचेलिकः, असारवस्त्रधारी। आचा०१९७
ओमच्छगरयहरणं-उन्मस्तकरजोहरणम् । आव० ६३८ ।
ओमज्जायणं-अवमजायनं, पुष्यगोत्रविशेषः । जं०प्र०५०० ।
ओमत्तं-अवमत्वं-ऊनता । भग० ७४२ । अवमता-हीनत्वम् । प्रज्ञा० ३०३ ।
ओमत्थिअ-उद्घाटमस्तकः, प्रच्छन्न इति । ओघ० १५ ।
ओमत्थिय-ओमस्थितः, अधोमुखीकृतः । ओघ० १४१ ।
ओमद्दिया-उन्मर्दिका-बहुमर्दनकारिका । भग० ५४८ ।
ओमया-पराजयः, पश्चाद्भवनम् । बृ० द्वि० ७१ अ ।
ओमरत्त-अहोरात्रम् । ओघ० ११६ । अवमा-हीना रात्रिरवमरात्रो-दिनक्षयः । ठाणा० ३६९ ।
ओमराइणिओ-अवमरात्निकः । ओघ० १५० ।
ओमराइणिय-अवमरात्निकः । आव० ७९३ ।
ओमरायणिको-अवमरात्निकः । ओघ० १५२ ।
ओमाणं-प्रवेशः । उत्त० ५५२ ।अपमानम् । बृ०तृ० १२०अ । ससवत्तियं । नि० चू० प्र० २०५ आ । अवमानानि-क्षेत्रादीनां प्रमाणानि हस्तादीनि । ठाणा० ८६ । अवमानं-स्वपक्षपरपक्षप्राभूत्यजं लोकाबहुमानादि । दश० २८० ।
ओमानं-अवमानं-अवमम् । बृ० प्र० २९० आ ।
ओमुयं-उल्मुकम् । ओघ० ११२ ।
ओमोअं-अवमोचकः, आभरणम् । जं० प्र० १८८ । अवमुच्यते-परिधीयते यस्सोऽवमोचकः-आभरणम् ।जं०प्र०१८८ ।
ओमोअर- अवमं-न्यूनमुदरं-जठरमस्यासाववमोदरस्तद्भावः अवमौदर्यं -न्यूनोदरता । उत्त० ६०४ । अल्पाहारात्वम् । उत्त० ६०४ ।
ओमोदरिता-दुब्भिक्खं । नि० चू० प्र० ७५ अ ।
ओमोदरिए-अवमोदरिका,धर्म्मधर्म्मिणोरभेदाद् वा अवमोदरिकः-साधुः । भग० २९३ ।
ओमोयं-अवमुच्यते-परिधीयते यः सोऽवमोकः-आभरणम् । भग० ५४३ ।
ओमोयरण-अवमं च तदुदरं चावमोदरं तस्मात्करोत्यर्थे णिचि ल्युटि चावमोदरणं, अवमोदरकरणम् । उत्त० ६०४ ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ओमोयरिय-अवमौदर्य-दुर्भिक्षम् । आव० ६२६ । अवमं-न्यूनमुदरं-जठरमस्यासाववमोदरस्तद्भावः अवमौदर्य-न्यूनोदरता । उत्त० ६०४ ।

ओमोयरिया-अवमं- ऊनमुदरं-जठरं अवमोदरं तस्य करणमवमोदरिका । ठाणा० ३६४ । अवमं-ऊनमुदरं-जठरं यस्य सः, अवमं चोदरं अवमोदरं तद्भावोऽवमोदरता, अवमोदरस्य वा करणमवमोदरिका । ठाणा० १४८ ।

ओम्मिमालिणी-और्मिमालिनी-नदीविशेषः ।जं०प्र०३५७।

ओयं-रसम् । (तं०)

ओयंसी-ओजस्विनः-मानसावष्टम्भयुक्ताः । भग० १३६ । ओजः-मानसोऽवष्टम्भस्तद्वान् ओजस्वी । राज० ११८ । निरय० २ । ज्ञाता० ७ । ओजस्विनः-मानसबलोपेतत्वात् । सम० १५६ ।

ओय-ओजः-आहारग्रहणे प्रथमो भेदः । ठाणा०९३ । ओजः -आर्तवम् । ठाणा० १४५ । ओजः-प्रकाशः । सूर्य० ७ । विषमः । सूर्य० १५६ । उत्पत्तिदेशे आहारयोग्यपुद्गलसमूहः। प्रज्ञा० ५१० ।

ओयइ-पश्यति । विशे० ३७४ ।

ओयणं-ओदनं । सूर्य० २९३ । कूरः । प्रश्न० १५३ । कूरादि । ओघ० १३३ । ओदनं-कोद्रवौदनादि । आचा० ३१३ ।

ओयत्तण-व्याघातः । पिण्ड० १६२ ।

ओयत्तति-परावर्त्तते । दश० १०८ ।

ओयन्ने-ज्ञातायां सप्तदशमध्ययनम् । आव० ६५३ ।

ओयपएस-विषमसंख्यप्रदेशः । भग० ८६१ ।

ओयरह-अवतरत । आव० ३५२ ।

ओयरिआ-औदरिकानाम-यत्र गताः तत्र रूपकादिकं प्रक्षिप्य समुद्दिशन्ति, समुद्देशनानन्तरं भूयोऽप्यग्रतो गच्छन्ति । बृ० द्वि० १२५अ ।

ओयरिया-औदरिका-उदरभरणैकचित्ताः । ओघ० ७१ ।

ओयवणं-साधनम् । जं० प्र० ५४८ ।

ओयविअं-अल्पसागारिकः-श्रावकः, खेदज्ञम् । ओघ० ५१ ।

ओयविए-प्रसाधिते । व्य० द्वि० १७६आ ।

ओयवियं-सुपरिकर्मितम् । सूर्य० २९३ । तेजितम् । जीवा० १६४ । विशिष्टं परिकर्मितम् । जीवा० २३२ । परिकर्मितम् । जीवा०२७२ । परिकर्मितम् । प्रश्न० ८१ ।

ओयविया-कुशलाः । बृ० तृ० ५८ अ ।

ओयवेइ-उपैति । आव० १५० ।

ओयसंठिती-ओजसः- प्रकाशस्य संस्थितिः-अवस्थानम् । सूर्य० ७९ ।

ओया-ओजः-प्रकाशः । सूर्य० ७९ ।

ओयाए-उपायातः-उपागतः । भग० ३१९ । सम्प्राप्तः। निरय० ६ । उपायातः-उपागतः । ज्ञाता० १६७ । ओजसा-दाहापनयनादिस्वकायकरणशक्त्या। ज्ञाता०१७० ।

ओयाणेत्ति-अनुश्रोतोगामिनी, पानीयानुगामिनी । नि० चू० प्र० ४४ आ ।

ओयारिया-अवतारिता । आव० ६८५ । अवतारिका । आव० ३५० ।

ओयारो-अवतारः-जलमध्यप्रवेशनम् । जीवा० १९७ ।

ओयाहारे-ओजः-उत्पत्तिदेशे आहारयोग्यपुद्गलसमूहः, ओज आहारो येषां ते ओजआहाराः । प्रज्ञा० ५१० । तैजसेन कार्मणेन च शरीरेणौदारिकादिशरीरानिष्पत्तेर्मिश्रेण च य आहारः सः सर्वोऽपि ओजाहारः, औदारिकादिशरीरपर्याप्त्या पर्याप्तकोऽपीन्द्रियानपानभाषामनःपर्याप्तिभिरपर्याप्तकः शरीरेणाहारयन् ओजाहारः । सूत्र० ३४३ ।

ओयो-संजमो । नि० चू० प्र० २१७अ ।

ओरब्भं-औरभ्रं-उत्तराध्ययनेषु सप्तममध्ययनम् । उत्त० ९।

ओरस-आन्तरः । भग० ६३१ ।

ओरस्स-उरसि भवं-औरस्यं-शरीरबलम् । सूत्र० १६६ ।

ओरस्सबली-महापराक्रमाः । बृ० तृ० १७४ आ ।

ओरालं- विस्तरवत्, समयपरिभाषया मांसास्थिस्नाय्वाद्यवबद्धम् । प्रज्ञा० २६९ । मांसास्थिस्नाय्वाद्यवबद्धम् । ठाणा० २९५ । उदारं-अत्यद्भुतम् । सूर्य० २९४ । उदारः-प्रधानः । भीमः । औप० ८४ । ओरालं-आशंसारहिततया प्रधानम् । भग० १२५ । उदारः-प्रधानः । भग० १२ । भीमः-भयानकः। ज्ञाता० ७ । स्फाराकारः । राज० ११९ । भीष्मः, उग्रादिविशेषणविशिष्टतपःकरणतः पार्श्वस्थानामल्पसत्त्वानां भयानकः। जं० प्र० १६ । भग० १२ । सूर्य० ५। उदारः ।जीवा० ३२२। एकेन्द्रियापेक्षया प्रायः स्थूला द्वीन्द्रियादय इति ।उत्त० ६९३।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ओरालतसा-त्रसत्वं तेजोवायुष्वपि प्रसिद्धं अतस्तद्व्यवच्छेदेन द्वीन्द्रियादिप्रतिपत्त्यर्थमोरालग्रहणम् ।ठाणा०३३५।

ओराला तसा-औदारिकत्रसाः-स्थूरत्रसाः ।जीवा० २८ ।

ओरालवण्णकित्तिसद्दा-उदारवर्णकीर्तिशब्दाः । आव० २९३ ।

ओरालसरीरे-उदारशरीरः । उत्त० ३२५ ।

ओरालाइं-मनोहराणि ।ठाणा० २९४ ।उदाराणि-आशंसादोषरहिततयोदारन्वित्तयुक्तानि । ठाणा० २४७ ।

ओरालिए-उदारं-प्रधानं, विस्तरवत्, उरलं-विरलप्रदेशं न तु घनं, ओरालं-समयपरिभाषया मांसास्थिस्नाय्वाद्यवबद्धं तदेव शरीरं, उदारमेव औदारिकम् । प्रज्ञा० २६८ ।

ओरालिय-औदारिकम् । प्रज्ञा०४६९ । उदारमेव-प्रधानमेव बृहदेव वा औदारिकम् । जीवा० १४ । उदारं-प्रधानं उदारमेव औदारिकम् । ठाणा० २९५ ।

ओरालियसरीरणाम-यदुदयादौदारिकशरीरप्रायोग्यान् पुद्गलानादाय औदारिकशरीररूपतया परिणमयति परिणमय्य च जीवप्रदेशैः सह परस्परानुगमरूपतया सम्बन्धयति तदौदारिकशरीरनाम । प्रज्ञा० ४६९ ।

ओरालियशरीरा-औदारिकशरीराः । आव० ७९९ ।

ओरुहइ-अवतरति । आव० १८६ ।

ओरोहं-अवरोधं, अन्तःपुरम् । उत्त० ३०७ । अंतेपुरं । नि० चू० प्र० ८०अ ।विपा० ८२ ।अवरोधः-प्रतोलिद्वारेष्ववान्तरप्राकारः । औप० ३ । प्रतोलीद्वारेष्वन्तःप्राकारः । राज० ३ । अवरोधः-अन्तःपुरम् । उत्त० १२० । अवरोधः । आव० ३५९ । प्रतोलीद्वारेष्ववान्तरप्राकारः। ज्ञाता० २ ।

ओलंडेंति-उल्लङ्घयन्ति । ज्ञाता० ६२ ।

ओलंडेह-उल्लङ्घयत । दश० ९९ । आव० ३५० ।

ओलंब-अवलम्बं-अवलम्बनस्थानम् । जं० प्र० ५२९ ।

ओलंबणदीव-शृङ्खलाबद्धद्वीपः । भग० ५४७ ।

ओलंबितो-अवलम्बितः । उत्त० १२५ ।

ओलइओ-अवलगितः । आव० २९७ ।

ओलइयं-अवलगितं-गोपितम् । उत्त० ११६ ।

ओलएइ-उपलगयति । आव० २१७ ।

ओलगिउं-अवलगितुम् । उत्त० ३०० ।

ओलग्गए-अवलगकः । आव० १७६ ।

ओलग्गति-अवलगति-अनुसरति । उत्त० ८७ ।

ओलग्गयमणूसो-अवलगकमनुष्यः। आव० ९२ ।

ओलग्गा-सेवा । परिचर्या । दश० ९७। जीर्णा । ज्ञाता० २८ ।

ओलग्गाए-अवलगनया । आव० ९० ।

ओलग्गिउं-अवलगितुम् । आव० ७१६ ।

ओलग्गिउं-अवलगितुम् । दश० ९७।

ओलग्गिज्जामि-अवलगामि । आव० ३५६ ।

ओलग्गिता-सेवितुमारब्धा । आव० ८१८ ।

ओलग्गिय-अवलगितः । आव० ४०१ ।

ओलिंति-अवलीयन्ते-प्रत्यागच्छन्ति । विशे० ८५३ ।

ओलिकापातः । ओघ० २०७ ।

ओलित्त-अवलिप्तः । भग० २७४। आव० ५५९।

ओलित्ता-द्वारदेशे पिधानेन सह गोमयादिना अवलिप्ताः ।ठाणा० १२४ ।

ओलिहति । नि० चू० प्र० १९०अ

ओलुग्गसरीरा-भग्नदेहाः । विपा० ४९ । निरय० ९ । अवरुग्णमिव-जीर्णमिव शरीरं यस्याः सा, अवरुग्णा वा चेतसा अवरुग्णशरीरा । ज्ञाता० २८ ।

ओलुग्गा-अवरुग्णा-भग्नमनोवृत्तिः । विपा० ४९। निरय०९। क्षीणा । आव० ७१६ ।जीर्णा । ज्ञाता० ३३।

ओलुहति-अवरोहति । आव० १८१ ।

ओलेंति-परिभ्रमन्ति । आव० २७४ ।

ओलेत्ता-आर्द्रयित्वा । आव० २०९ ।

ओलोयणं-अवलोकनम् । आव० २२४, ३७८ ।

ओलोयणगए-अवलोकनगतम् । उत्त० ९१ ।

ओलोयणट्ठिओ-अवलोकनस्थितः । आव० १४५ ।

ओलोवणे । नि० चू० प्र० २१७अ ।

ओल्यां-पनके वा आगन्तुकप्रतनुद्रवरूपे कर्दम एव ओल्याम्। ठाणा० ३२८ ।

ओल्लं-वासं । नि० चू० प्र० ६७आ ।

ओल्लि । नि० चू० प्र० १२१अ ।

ओवइया-त्रीन्द्रियजीवविशेषः । प्रज्ञा० ४२ ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ओवक्कमियं-उपक्रम्यतेऽनेनायुरित्युपक्रमो-ज्वरातीसारादिस्तत्र भवा या सा औपक्रमिकी। ठाणा० २७।

ओवक्खडितं-उपस्कृतम् । आव० ३५३ ।

ओवग्गहिओ-औपग्रहिकः । उत्तग्गहितः-गच्छसाहारणो। ओघ० ९२ ।

ओवज्झणं-प्रवाहे वहनं । बृ० तृ० २२९अ ।

ओवट्टणा-वालना पश्चादानयनम् । बृ० द्वि० ८५आ ।

ओवणिहिए-उपनिहितं यथा कथञ्चित् प्रत्यासन्नीभूतं तेन चरति यः सः औपनिहितिकः, उपनिधिना वा चरतीति स औपनिधिकः । औप० ३९ ।

ओवतिउं-अवपतितुं-जेतुम् । दश० ५० ।

ओवत्तिया-अपवर्त्य-अग्निनिक्षिप्तेन भाजनेनान्येन वा दद्यात्। दश० १७५ ।

ओवमिए-उपमया निर्वृत्तमौपमिकं, उपमामन्तरेण यत्काल-प्रमाणमनतिशायिना ग्रहीतुं न शक्यते तदौपमिकम्। जं० प्र० ९२ । उपमया निर्वृत्तमौपमिकं, उपमानमन्तरेण यत्कालप्रमाणमनतिशायिना ग्रहीतुं न शक्यते तदौपमिकम्। अनु० १८१ ।

ओवमिय-उपमया निर्वृत्तं औपमिकम्, उपमामन्तरेण यत् कालप्रमाणमनतिशयिना ग्रहीतुं न शक्यते तदौपमिकम् । भग० २७६ ।

ओवम्मं-औपम्यं-उपमा । उत्त० ३२१ । उपमानमुपमा सैवौपम्यं-सदृशः । ठाणा० २६२ ।

ओवमसच्चा-औपम्यसत्या-पर्याप्तिकसत्याभाषाया दशमो भेदः।प्रज्ञा० २५६। उपमैवौपम्यं तेन सत्यं औपम्यसत्यम्। सत्याभाषाया दशमो भेदः । ठाणा० ४८९ । औपम्यसत्यं नाम समुद्रवत्तडागः । सत्याभाषाया दशमो भेदः । दश० २०९ । उपमीयते-सदृशतया गृह्यते वस्त्वनयेत्युपमा सैव औपम्यम् । भग० २२२। उपमानमुपमा सैवौपम्यं अनेन गवयेन सदृशोऽसौ गौरिति सादृश्यप्रतिपत्तिरूपम् ।ठाणा०२५४।

ओवयइ-उत्पतति-ऊर्ध्वं गच्छति । भग० १७९ ।

ओवयण-अवपदनं-प्रोञ्छनकम् । ज्ञाता० ४३ ।

ओवयमाण-अवपततो-व्योमाङ्गणादवतरतः । ज्ञाता०४६। अवपतन् । ज्ञाता० १६६ ।

ओवयारिअविणय। औपचारिकविनयः-विनयस्य द्वितीयो भेदः । दश० ३१ ।

ओवरणं-अपवरकम् । आव० ५६० ।

ओवरिऊण-अवतीर्य । उत्त० ११९ ।

ओवसमिए-कर्मोपशमेन निर्वृत्त औपशमिकः कर्मानुदयलक्षणः। सूत्र० २३० ।

ओवहिए-औपधिकः-उपधिना-छद्मना चरतीत्यौपधिकः । उत्त० ६५६ ।

ओवहिया-औपधिका-मायाप्रयोजना-कषायप्रत्ययाः, उप-करणप्रयोजना वा । औप० १०७ ।

ओवाइणित्तए-उपादातुं-ग्रहीतुं, प्रवेष्टुम् । ठाणा० १५७।

ओवाइयं-उपयाचितम् । विपा० ७७। याचितस्य-प्रार्थि-तस्य प्राप्तेरुपरि देवेभ्यो देयम् । उत्त० १३८ । उपया-चितम् । आव० ७०९ ।

ओवाई-ओलावयप्रधाना विद्या । आव० ३१९ ।

ओवाय-उपाये-मृदुपरुषभाषणादौ भवं औपायं, उपपतनमुप-पातः-समीपभवनं तत्र भवं औपपातं-गुरुसंस्तारास्तरण-विश्रामणादिकृत्यम् । उत्त० ५८ । विघ्नम् (मर०) अवपातः-निर्देशः । सूत्र० २४२ । अवपातः-प्रपातस्थानं, यत्र चलन् जनः सप्रकाशेऽपि पतति। जं० प्र० १२४ । अवपातः-गर्त्तादिरूपम् । दश० १६४। अवपातः-गर्त्ता-विशेषः । प्रश्न० २२ ।

ओवायकारी-उपपातकारी-आचार्यनिर्देशकारी, यथोपदेशं क्रियासु प्रवृत्तः, सूत्रोपदेशप्रवर्त्तकः । सूत्र० २३४ । अव-पातो-निर्देशस्तत्कार्यवपातकारी-वचननिर्देशकारी सदा आज्ञा-विधायी । सूत्र० २४२ ।

ओवासो-अवकाशः । दश० ५८ ।

ओवाही-विशेषेण उपाधीयत इति वोपाधिः । आचा० १७४।

ओविअ-ओपितं-परिकर्मितम् । भग० ४७८ । ओपितः-उज्ज्वालितः । जं० प्र० २००, ४६ ।

ओविय-परिकर्मितम् । औप० २४, ६६ । राज० ४८ । उज्ज्वलितः । ज्ञाता० २२२ । ओपितः-परिकर्मितम् । प्रश्न० ७६ । ज्ञाता० १९ ।

ओविया-आरोपिताः । जं० प्र० ४३ ।

ओवीलं-अवपीडं-शेखरं, उपपीडा वा वेदना। विपा०७२।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ओवीलए-अपव्रीडयति विलज्जीकरोति यो लज्जया सम्यगनालोचयन्तं सर्वं यथा सम्यगालोचयति तथा करोतीत्यपव्रीडकः । ठाणा० ४'४ ।
ओव्वत्तिऊण-अपवर्त्य । ओघ० २१ ।
ओव्विग्गमणो-उद्विग्नमनाः । आव० २२० ।
ओष्ठः-दन्तच्छदः । आचा० ३० ।
ओस-अवश्यायः, शरत्कालभावी श्लक्ष्णवर्षः । उत्त० ३३४। क्षपाजलम् । ठाणा०२८७। अवश्यायः-स्नेहः । दश०१५१ । अवश्यायः-शरदादिषु प्रभातिकसूक्ष्मवर्षः । उत्त० ६९१ ।
ओसक्कइत्ता-उत्ष्वष्क्य-उत्सृत्य लब्धावसरतयोत्सुकीभूय। अवष्वष्क्य-अपसृत्यावसरलाभाय कालहरणं कृत्वा यो विधीयते स तथा । ठाणा०३६५ । अवसर्प्य, प्राप्य वा । आव० १९ ।
ओसक्कणं-रन्धनवेला । ओघ० १४८ । अवष्वष्कणम्, विवक्षितविध्वंसनादिकालस्य ह्रासकरणम्, अर्वाक्करणम् । बृ० प्र० २६१आ । अवष्वष्कणं-स्वयोगप्रवृत्तनियतकालावधेरर्वाक्करणम् । पिण्ड० ९१ ।
ओसक्किय-प्रज्वाल्य । आचा० ३४५ ।
ओसक्किया-अवसर्प्य, अतिदाहभयादुल्मुकान्युत्सार्येत्यर्थः । दश० १७५ ।
ओसढ-उत्सृतः-उपघातेभ्यो निर्गतः । दश० २१९ । एमंगितं । नि० चू० द्वि० १८आ ।
ओसण्ण-चिरायणं अपरिभोगट्ठाणं । नि० चू० प्र० १९३अ । ओसन्नं-बाहुल्यम् । प्रज्ञा० ५०३ । बाहुल्येन । भग० ३०८ । अवसन्ना-श्रान्ता । भग० ५०२ । ओ यो वा संजमो तंमि सण्णो ओसण्णो । नि० चू० प्र० २१७अ ।
ओसण्णद्धो-अपसन्नद्धः । उत्सन्नद्धः । आव० ७१२ ।
ओसत्तमल्लदामा । आचा० ४२३ ।
ओसत्तो-उत्सक्तः-उपरिसंबद्धः । औप० ५ । ज्ञाता० ४ ।
ओसधी-वण्णाइफला अंबादिया । नि० चू० द्वि० १५७अ ।
ओसधीओ । ठाणा० ८० ।
ओसन्न-उत्सन्नं-प्रायेण । विशे०९२६। अवसन्नः-विवक्षितानुष्ठानालसः, आवश्यकस्वाध्यायप्रत्युपेक्षणाध्यानादीनामसम्यक्कारीत्यर्थः । ज्ञाता० ११३ । बाहुल्यलक्षणम् । भग० २१ । प्रायः । भग० ३०९ । प्रवृत्तेः प्राचुर्यं बाहुल्यं, बाहुल्येनानुपरतत्वेन । ठाणा० १८९ । प्रायसः । आव० २८५ । उस्सण्णं-प्राचुर्येण । प्रश्न० २२ । अवसन्नः-सामाचार्यसेवनेऽवसन्नवत् अवसन्नः । आव० ५७ । एकान्तः । बृ० प्र० ११आ ।
ओसन्नकारणं-बाहुल्यं, बाह्यकारणम् । प्रज्ञा० २२३ । बाहुल्यकारणम् । प्रज्ञा० ५०३ ।
ओसन्नदोसे-बाहुल्येनानुपरतत्वेन दोषो हिंसादीनां चतुर्णामन्यतर ओसन्नदोषः । ठाणा० १८९ ।
ओसन्नया-पराभवः । उप० मा० गा० ३५० ।
ओसन्नविहारी-अवसन्नानां विहारो बहूनि दिनानि यावत्तथा वर्त्तनं अस्यास्तीति अवसन्नविहारी । ज्ञाता० १११ ।
ओसप्पिणि-अवसर्पति हीयमानारकतयाऽवसर्पयति वा-क्रमेणायुःशरीरादिभावान् हापयतीत्यवसर्पिणी । जं० प्र० ८९ । दशकोटीकोट्यः सागरोपमाणां सुषमसुषमाद्यरकक्रमेण अवसर्पिणी । जीवा० ३८५ ।
ओसप्पिणी-अवसर्पन्ति-प्रतिसमयं कालप्रमाणं जन्तूनां वा शरीरायुःप्रमाणादिकमपेक्ष्य ह्रासमनुभवन्त्यवश्यमिति अवसर्पिण्यः, दश सागरोपमकोटिकोटीपरिमाणाः । उत्त० ६५७। अवसर्पिणी-अवसर्प्पति हीयमानारकतया अवसर्प्पयति वाऽऽयुष्कशरीरादिभावान् हापयतीति, सागरोपमकोटीकोटीदशकप्रमाणः कालविशेषः । ठाणा० २७ । अवसर्प्पिणी-दशसागरोपमकोटाकोटिमाना । अनु०९९ । कालविशेषः । आव० १२०, भग० ८८८ । दशसागरोपमकोटीकोट्यः प्रमाणाः । ठाणा० ८६ ।
ओसमणं-व्यवशमनम् । बृ०द्वि० ७७अ ।
ओसरइ-अपसर्पति । उत्त० ५३ । अपसरति । उत्त० ३०२ । आव० ६४०, ३५९ ।
ओसरणं-बहूनां साधूनामेकत्रमीलनम् । बृ०तृ०२१८आ । समवसरणम् । बृ०प्र०२७७आ । चउ० । व्याख्यानश्रवणादि । बृ०द्वि०२५२आ । अवसरणं-साधुसमुदायः । पिण्ड०९२ ।
ओसरणा-आर्यिकाणामुपकरणविशेषः । ओघ० २०९ ।
ओसरिऊण-अपसृत्य । आव० २९२ ।
ओसरिओ-अपसृतः । आव० ४०५ ।
ओसरित्ता-अपसृत्य । आव० ११३ । व्युत्सृज्य । आउ० ।
ओसरे-अवसर्पन्ति । आव० ६१८ ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ओसवणं-प्रशमनम् । नि० चू० प्र० २०७ अ ।

ओसह-औषधः । अन्तरुपयुज्यते । ओघ०१३४ । एकाङ्गम् । प्रश्न०१५३ । महातिक्तकघृतादि । भग०३२६ । केवलहरीतक्यादि, अन्तरुपयोगि वा । पिण्ड०१९ । एकद्रव्यरूपम् । विपा० ४१ । ज्ञाता० १८१ । त्रिकटुकादि । ज्ञाता० १३६ । आव० ११५ । उत्त०१४२ । हरितक्यादि । ओघ०६८ । एलाद्यचूर्णादि । नि० चू० प्र० ७६अ । बहुद्रव्यसमुदायः । नि०चू०प्र०१४४आ । एकद्रव्याश्रयं, त्रिफलादि । औप०१०० ।

ओसहङ्ग-औषधाङ्गम् । औषधकारणम् । उत्त० १४२।

ओसहजुत्ती – औषधयुक्तिः–औषधादीनां–अगुरुकुंकुमादीनां सज्जिकाराजिकादीनां च युक्तिः–योजनं समविषमविभागनीतिर्वा । उत्त० ३० ।

ओसहाइ-औषधादि–अगुरुकुंकुमादि सज्जिकाराजिकादि च । उत्त० ३० ।

ओसहि-औषधयः, फलपाकान्ताः, ते च शाल्यादयः । प्रज्ञा० ३० । औषधिः–शाल्यादिः । भग० ३०६ । आचा० ३० ।

ओसहिपत्ता-सर्वरोगापहारित्वात्तपश्चरणप्रभवो लब्धिविशेषः । प्रश्न० १०५ ।

ओसही-औषधिः–जयाविजयद्धिवृद्ध्यादयः । उत्त० ४९० । फलपाकान्ताः । उत्त० ६९२ । औषधी राजधानीनाम । जं० प्र० ३४७ । औषधिः–फलपाकान्ताः, शाल्यादिः । जीवा० २६ ।

ओसहीओ-औषधयः, शाल्यादिकाः । जं० प्र० १६८ । सालिमातियाओ । नि० चू० प्र० १९५आ ।

ओसही तिणा-औषधितृणानि–शाल्यादीनि । उत्त० ६९२ ।

ओसा-अवश्यायः–जलविशेषः । आव०५७३ । स्नेहः । जीवा० २५ । स्थानविशेषः । उत्त० ३७९ । रात्रिजलम् । भग० ६९४ ।

ओसारिथ-अवसारितं–अवलंबितम् । भग०३१८ । ज्ञाता० २२१ । प्रलम्बीकृता । ज्ञाता० २३९ ।

ओसारेज्जा-अपसारयेत्–पातयेत् । अनु० १७६ ।

ओसावणि । नि० चू० प्र० ७६अ ।

ओसारेयव्वो-परित्यागः । नि० चू० प्र० ३४२अ ।

ओसासिअ-आवश्यकी । बृ० द्वि० २१७आ ।

ओसित्त-अवसिक्तं, आर्द्रीकृतम् । आचा० ३२१ ।

ओसीरं-ओशीरं–वीरणीमूलम् । प्रश्न० १६३ । चन्दनम् । उत्त० १४२ । उशीरं–वीरणं मूलम् । जं० प्र० ३५ । वीरणीमूलम् । ज्ञाता० २३२ ।

ओसीरपुड-पुष्पजातिविशेषः । ज्ञाता० २३२।

ओसीसं-उच्छीर्षम् । आव० ४५३ ।

ओसीसओ-उच्छीर्षकः । आव० ३५४ ।

ओसीसा-सीसस्स समीवं उवसीसं । नि०चू०प्र०२४७अ ।

ओसूरो-उत्सूर्यः । आव० ४१६ ।

ओसोवणि-अवस्वापिनीम् । आव० ३७१ ।

ओस्सट्टो-उत्साहः । नि० चू० प्र० २८४आ ।

ओस्सन्नं-बाहुल्येन–अनुपरतत्वेन । भग० ९२६ ।

ओस्सारेह-उत्सारयत–पारयत । उत्त० १७८ ।

ओहंजलिया-चतुरिन्द्रियजन्तुविशेषः । जीवा० ३२ । प्रज्ञा० ४२ ।

ओह-ओघोपधिः–उपधेः प्रथमो भेदः यो नित्यमेव गृह्यते । ओघ० २०८ । संक्षेपः । नि० चू० प्र० १७९अ । ओघः–प्रवाहः । जीवा० २०७ । सामान्यं, स्वपरपृथग्विभागकरणाभावरूपः । पिण्ड०७७ । प्रवाहः । उत्त० २४१ । जं०प्र० ५३, ११७ । ओघः–सामान्यं श्रुताभिधानम् । दश०१५ । भवौघः, संसारः, अष्टप्रकारं कर्म वा । सूत्र० २९ । अविच्छेदः, अविच्छुटितत्वम् । प्रश्न० ८२ । संसारसमुद्रः । सूत्र० १४५ । प्रवाहेणाविच्छिन्नम् । प्रश्न० ७४ । सामान्यम् । पिण्ड० १४७ । सामान्यः । आव० ३३६ । प्रवाही । जीवा० २७७ । सामान्यम् । जं० प्र० ७ । उस्सग्गो–तत्थ सव्वं कालियसुत्तं ओयरति तं सव्वं ओहो भण्णति । पेढिया निसीहपेढिया । नि० चू० प्र० ९७आ । सुत्ते सुत्ते जं उस्सग्गदरिसणं तं ओहो, जो पुण अविसिट्ठा आवत्ती सो ओहो । नि०चू०तृ०१४५आ । सामान्यमध्ययनादि नाम । ठाणा० ५ । ओघः–प्रत्यक्षोपलभ्यमानं संसारसमुद्रः । दश० २५६ । संक्षेपतः । ओघ० ८८ ।

ओहजीव-ओघजीवः, भावजीवस्य प्रथमो भेदः । दश०१२।

ओहट्ठ-प्रार्थितम् । ओघ० ६७ । याचितः । नि० चू० प्र० १६५अ ।

ओहनिप्फण्ण-ओघनिष्पन्नः । निक्षेपभेदः । दश०१५ । अङ्गाध्ययनादिसामान्याभिधानन्यासः । आचा० ३ ।

ओहबले-ओघबलः । अव्यवच्छिन्नबलः । औप० ७८ ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ओहय-उपहतः-विनाशितः। जं०प्र०२७७। राज्यापहारादुपहताः। ठाणा० ४६३। विनाशनेनोपहताः। ज्ञाता० ५६।

ओहयमणसंकप्प-उपहतः-ध्वस्तो मनसः संकल्पो-दर्पहर्षादिप्रभवो विकल्पो यस्य सः। भग० १८०। ज्ञाता० २९। उपहतमनःसङ्कल्पः। आव ६८२।

ओहयहय-उपहतहतः। आव० ६५०।

ओहरति-उपहरति-विनाशयति। ज्ञाता० १९२।

ओहरिए-विनाशयति। ज्ञाता० १९०।

ओहरितभारो-उत्तारितभारः। ओघ० २२७।

ओहरिय-अग्निकायोपरि व्यवस्थितं पिठरकादिकमाहारभाजनमपवृत्त्य। आचा० ३४५। तिरश्चीनो भूत्वा। आचा० ३४४। पार्श्वतो मुक्तः। उप०मा०गा० ४९९।

ओहसंभोग-ओघसंभोगः, उपध्यादिद्वादशप्रकारः। व्य० द्वि० ११९आ।

ओहसण्णा-मतिज्ञानाद्यावरणक्षयोपशमाच्छब्दाद्यर्थगोचरा सामान्यावबोधक्रियैव संज्ञायतेऽनयेत्योघसंज्ञा। ठाणा० ५०५।

ओहसन्ना-ओघसञ्ज्ञा-मतिज्ञानावरणकर्मक्षयोपशमनाच्छब्दाद्यर्थगोचरा सामान्यावबोधक्रिया, दर्शनोपयोग इति, सामान्यप्रवृत्तिर्यथा वल्ल्या वृत्त्यारोहणं वा। प्रज्ञा० २२२। मतिज्ञानावरणक्षयोपशमाच्छब्दाद्यर्थगोचरा सामान्यावबोधक्रियैव सञ्ज्ञायते वस्त्वनयेति ओघसञ्ज्ञा। दर्शनोपयोगः। सामान्यप्रवृत्तिरोघसञ्ज्ञा। भग० ३१४।

ओहसामायारी-ओघसामाचारी-सामान्येन संक्षेपतः साधुसमाचाराभिधानरूपा। विशे० ८४२।

ओहसियं-अवघर्षणमवघर्षितं भूत्यादिना निमज्जनम्। जीवा० २१३।

ओहस्सरा-ओघस्वरा-चमरेन्द्रस्य घण्टा। जं० प्र० ४०७। ओघेन-प्रवाहेण स्वरो यासां ता ओघस्वरा। जीवा० २०७।

ओहा-अपभ्राजना। बृ० प्र० ९९आ।

ओहाइया-उद्धाविताः। आव० ६६।

ओहाडणी-अवघाटिनी-आच्छादनहेतुकम्बोपरिस्थाप्यमानमहाप्रमाणकिलिञ्चस्थानीया। जीवा०१८०। जं०प्र० २१।

ओहाडिअ-अवघाटितः-आच्छादितः। जं० प्र० ७३।

ओहाडिओ-आधाटीः। आव०२८५। निष्काशितः। आव० ३५८।

ओहाडियं-स्थगितम्। आव० ८८८। स्फेटितम्। आव०२०५।

ओहाडिया-उद्घाथिता। आव० ५१४। अपस्फेटिता। आव० ३६८।

ओहाडेइ-आच्छादयति। आव० ३७०।

ओहाडेति। दश० चू० ८८।

ओहाण-उवयोगो। नि० चू०द्वि०५८आ। विहारो, धावणेण लिंगो धावणेण वा। नि० चू० तृ० ३५ अ। अवधानम्-अपसरणम्। दश० २७१। अवधावमानाः। ओघ० ६१। अवधावनम्। ठाणा० २११।

ओहाणपेही-छिद्दं अलभमाणो रातो समाहिपरिद्धत्रणलक्खेण ओहावेज्जा। नि० चू० प्र० १९४अ।

ओहाणुप्पेही-अवधावनानुप्रेक्षी। दश० ९४।

ओहातेज्जा-उपहन्यात्। ठाणा० ३२८।

ओहामिए-अपभ्राजितः। आव० ६६५।

ओहामिओ-अपभ्राजितः, हीलितः। आव० ६९४। अपभ्राजितः, तिरस्कृतः। ओघ० ५३।

ओहामिज्जइ-अवधाव्यते। आव० २९५।

ओहार-अधो जले नावो नेता मत्स्यविशेषः। बृ०तृ०१६१आ। जलजन्तुविशेषः। प्रश्न० ५१। कच्छपः। पिण्ड० १०२। मच्छो। नि० चू० द्वि० ७८आ।

ओहारयित्ता-अवधारयिता-शङ्कितस्याप्यर्थस्य निःशङ्कितस्यैवमेवायमित्येवं वक्ता, अवहारयिता-परगुणानामपहारकारी। सम० ३८।

ओहारसंखड। नि० चू० द्वि० १०७ अ।

ओहारिणी-अवधारणी-अवधारणात्मिका। उत्त० ५६। अवधार्यते-अवगम्यतेऽर्थोऽनयेति अवधारणी-अवबोधबीजभूता। प्रज्ञा० २४६-२४७। संकिया। दश० चू० १४०। अवधारणी-अवबोधबीजभूता। भग० १४२।

ओहारितं-अवहृतं-गृहीतम्। आव० ८५९।

ओहारेमाणीओ-वीजयन्त्यः। जीवा० २३३।

ओहावंत-अवधावन्ते, अवसर्पन्ति। ओघ० ६२।

ओहावइ-अवधावति। उत्त० १३३।

ओहावणं-अपभ्राजनं, अपमानं, निन्दा वा। पिण्ड० १४०। अवधावनं-पार्श्वस्थादिविहाराश्रयणम्। बृ० द्वि० १६३आ। लिंगविवेकबुद्ध्या गमनम्। व्य०प्र०२४९अ। अपभ्राजना-लाञ्छना। आव० ५३७। अपभ्राजना। आव०३१९,६६५।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मलना । ओघ० ९३ । गृहस्थीभवनम् । बृ०तृ०१४४अ । अपभ्राजना । उत्त०१९२ । परिभवः। ओघ०१८८ । हीलना । ओघ० ७४ ।

ओहाविअ-अवधावितः-अपसृतः । दश० २४७ ।

ओहाविउकामो-अवधावितुकामः । उन्निष्क्रमितुकामः । उत्त० १३३ ।

ओहावेज्जा-अवधावेत् । व्य० प्र० १६६आ ।

ओहासणं-समयपरिभाषया विशिष्टद्रव्ययाचनम् । आव० ५७६ ।

ओहासणभिक्खा-ओहासणभिक्षा-विशिष्टद्रव्ययाचनं समयपरिभाषया ओहासणं तत्प्रधाना या भिक्षा । आव०५७६ ।

ओहासिअ-ओभासिअ-पार्थितः । ओघ०७०। सूत्र० ३८६ ।

ओहिंजलिया-चतुरिन्द्रियजीवभेदः । उत्त० ६९६ ।

ओहि-अवधिः-अवधीयतेऽनेनास्मादस्मिन्वेति ।ठाणा०३४७। रूपिमर्यादा, करणनिरपेक्षो बोधरूपः । ठाणा० ४४८ । अवधीयतेऽनेनेति, अवधीयत इति, अधोऽधोविस्तृतं परिच्छिद्यते मर्यादया वेति, अवधीयतेऽस्माद् अस्मिन् वा, अवधानं वा विषयपरिच्छेदनम् । आव०८ । मध्ये । ओघ०२०८ । अधोऽधो विस्तृतविषयवेदकम् । परिच्छेदः । मर्यादा । उत्त० ५५७ । अव-अधोऽधो विस्तृतं वस्तु धीयते-परिच्छिद्यतेऽनेनेत्यवधिः, अथवा अवधिर्मर्यादा रूपिष्वेव द्रव्येषु परिच्छेदकतया प्रवृत्तिरूपा तदुपलक्षितं ज्ञानमप्यवधिः, यद्वा अवधानं -आत्मनोऽर्थसाक्षात्करणव्यापारोऽवधिः ।नंदी६५। अवधिः-अवशब्दोऽधःशब्दार्थः, ततश्चाध इत्यधस्ताद्धावति अधोऽधो विस्तृतविषयवेदकतयेत्यवधिः, औणादिको डिः, यद्वा 'अवे' त्यध एव धानं धातूनामनेकार्थत्वात् परिच्छेदोऽवधिः, 'उपसर्गे घोः कि'रिति (पा. ३-३-९२) किः, अथवाऽवधिः-मर्यादा रूपिष्वेव द्रव्येषु परिच्छेदकतया प्रवृत्तिरित्येवंरूपा तदुपलक्षितं ज्ञानमप्यवधिः । तृतीयं ज्ञानम् । उत्त०५५७। औधिकः-विशेषणरहितः । प्रज्ञा० ३४२ ।

ओहिदंसणं-अवधिदर्शनं-अवधिरेव दर्शनं-रूपिसामान्यग्रहणम् । जीवा० १८ ।

ओहिमरणं-अवधिमरणं-सप्तदशमरणभेदे द्वितीयः । उत्त०२३०। पञ्चविधमरणे द्वितीयः । भग० ६२४ । अवधिः-मर्यादा तेन मरणं अवधिमरणं, यानि हि नारकादिभवनिबन्धनतयाऽऽयुःकर्मदलिकान्यनुभूय म्रियते यदि पुनस्तान्येवानुभूय मरिष्यति तदा तत् । सम० ३३ ।

ओहियं-औधिकम् । ओघ० २१७, १९९ । औधिकम्-निर्विशेषणं नरकम् । भग० ४५ ।

ओहियमत्तगं-प्रश्रवणमात्रकम् । नि०चू०तृ० १३२आ ।

ओहिया-औघिकी-तिर्यक्स्त्री । जीवा० ५९ ।

ओही-अवधिः-प्रज्ञापनायास्त्रयस्त्रिंशत्तमं पदम् । प्रज्ञा०६ । अव-अधो विस्तृतं वस्तु धीयते परिच्छिद्यतेऽनेनेति अवधिः-मर्यादा वा रूपिष्वेव द्रव्येषु परिच्छेदकतया प्रवृत्तिरूपा तदुपलक्षितं ज्ञानमप्यवधिः । प्रज्ञा० ५२७ ।

ओहीपदं-प्रज्ञापनायाः त्रयस्त्रिंशत्तमं पदम् । भग० ७१९ ।

ओहीरमाणी-प्रचलायमाना । भग० ५४० । वारंवारं ईषन्निद्रां गच्छन्तीत्यर्थः । ज्ञाता० १५ ।

ओहुए-अवधुत उल्लंघितः । बृ० द्वि० ६१ अ ।

ओहे-ओघमरणं सामान्यतः सर्वप्राणिनां प्राणपरित्यागात्मकम् । उत्त० ३२० ।

ओहेणं-ओघेन-संक्षेपेण । ओघ० ८८ ।

ओहोवधी-ओहः-संक्षेपः, स्तोकः, लिङ्गकारकः, अवश्यंग्राह्यः । उपधेर्भेदः । नि० चू० प्र० १७९ अ ।

ओहोवही-ओघोपधिः-उपधेर्भेदः । उत्त० ५३७ । ओघोपधिः नित्यमेव यो गृह्यते ओघोपधिः । ओघ० २०८ ।

औदारिकं-चङ्गिकम् । ओघ० ९० । उपादानात्प्रभृति अनुसमयमुद्गच्छति वर्धते जीर्यते शीर्यते । तत्त्वा० २-४९ ।

औदारिकबन्धनं-यदुदयवशाद् औदारिकपुद्गलानां गृहीतानां गृह्यमाणानां च परस्परं तैजसादिपुद्गलैश्च सह सम्बन्ध उपजायते तत् । प्रज्ञा० ४७० ।

औदारिकसङ्घातनाम-यदुदयवशादौदारिकशरीररचनाऽनुकारिसङ्घातरूपा जायते तत् । प्रज्ञा० ४७० ।

औदारिकाङ्गोपाङ्गनाम-यदुदयवशादौदारिकशरीरत्वेन परिणतानां पुद्गलानामङ्गोपाङ्गविभागपरिणतिरुपजायते तत् । प्रज्ञा० ४७० ।

औदार्य-दाक्षिण्यम् । जं० प्र० १८४ ।

औद्देशिक-शबलस्य षष्ठो भेदः । प्रश्न० १४४ । आधाकर्म । सूत्र० १९१ ।

औद्भूतिकी-द्वितीयभेरीनाम । विशे० ६१९ ।

औपसर्गिकं-पदस्य तृतीयो भेदः । आव०३७९ । परीति औपसर्गिकम् । अनु० ११३ ।

औलूक्यं-मतविशेषः । उत्त० ३३७

इति प्रथमो विभागः समाप्तः ।

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आगमवाचनादातृ - बहुश्रुत - युगप्रधानसदृश - देवसूरतपागच्छसामाचारी-
संरक्षणकटिबद्ध-श्रेष्ठिदेवचन्द्रलालभाईजैनपुस्तकोद्धार-
श्रीजैनानन्दपुस्तकालयाद्यनेकसंस्थासंस्थापक-
अनेकग्रन्थप्रणेतृ - श्रीवर्धमानजैनागममंदिर-
(सिद्धक्षेत्र)श्रीवर्धमानजैनताम्रपत्रागममंदिर-
(सूर्यपुर)संस्थापक-आगमोद्धारक-ध्यानस्थस्वर्गत-

आचार्यश्रीआनन्दसागरसूरीश्वरसङ्कलितः

श्रीअल्पपरिचितसैद्धान्तिकशब्दकोषः

(समस्तस्वरस्वरूपः प्रथमो विभागः)

श्रेष्ठि-देवचन्द्लालभाई-जैनपुस्तकोद्धारे ग्रन्थाङ्कः १०१ ॥

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आ मकान

शेठ देवचंद लालभाई जैन पुस्तकोद्धार फंडनी कायमी रकमथी खरीदवामां आवेलुं छे.
रु-१,१०,०००. एक लाख दश हजार.

कालबादेवी नं १६६ आ मकान छे. तेमां भोंयतळीए शयाजी विजय वोशिंग कु. पहेले माळे- एल. काशिनाथ बेंकर बीजे माळे- जादवजी प्रेमजी गांधी ना बोर्डो छे.

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

શેઠ દેવચંદ લાલભાઇ જૈન પુસ્તકોદ્ધાર ફંડના

હાલમાં મળતા નવીન ગ્રંથો.

ગ્રંથાંક નં.		
૧૦૧	અલ્પ પરિચિત સિદ્ધાન્તિકશબ્દકોષ (વિભાગ પહેલો સંપૂર્ણ સ્વર) પ્રેરક-આચાર્ય આણંદસાગરસૂરિજી	૬-૦-૦
૧૦૨	શ્રાવક ધર્મ પંચાશકચૂર્ણી	૨-૦-૦
૧૦૩	દશવૈકાલિક લઘુવૃત્તિ સુમતિસાધુસૂરિ	૩-૦-૦
૮૫	આવશ્યકસૂત્ર મલયગિરિ ત્રીજો ભાગ	૨-૮-૦
૮૬	લોકપ્રકાશ મૂલ ચોથો વિભાગ પ્રત	૧-૦-૦
૮૭	ભરતેશ્વર બાહુબલિ વૃત્તિ દ્વિતીય વિભાગ સંપૂર્ણ	૨-૦-૦
૮૮	પ્રશમરતિપ્રકરણ બૃહદ્ગચ્છીય શ્રી હરીભદ્રસૂરિ-કૃત વિવરણ સમેત	૧-૪-૦
૮૯	અધ્યાત્મકલ્પદ્રુમ રત્નચંદ્રગણિ વર્ધનવિજયગણિ કૃત ટીકા યુક્ત	૩-૦-૦
૯૦	ગૌતમીય કાવ્ય રૂપચંદ્રગણિકૃત	૧-૮-૦
૯૧	સટીક વૈરાગ્યશતકાદિ ગ્રંથપંચકમ્	૧-૦-૦
૯૨	અભિધાનચિંતામણી કોશ	૪-૦-૦

ગ્રંથાંક નં.		
૯૩	જૈન કુમારસંભવ	૨-૮-૦
૯૪	સિદ્ધહેમશબ્દાનુશાસન બૃહદ્વૃત્યચૂર્ણી નવપાદ અવચૂર્ણિકાર શ્રીમદ્ અમરચંદ્ર	૫-૦-૦
૯૫	વીતરાગસ્તોત્ર અવચૂર્ણી વિવરણ અને ભાષાંતર સમેત	૧-૮-૦
૯૮	પંચપ્રતિક્રમણ વિધિ સહિત	૧-૪-૦
૯૯	શ્રમણસૂત્રાદિ અવચૂરિ	૧-૦-
૧૦૦	વંદન પ્રતિક્રમણ અવચૂરિ	૧-૮-૦
૧૦૪	**ઉત્તરાધ્યયન અવચૂરિ**	**પ્રેસમાં**
૧૦૫	**પિંડનિર્યુક્તિ અવચૂરી**	"
૧૦૬	**શ્રાદ્ધવિધિ**	"
૧૦૭	**નંદિ અવચૂરી**	"
૧૦૯	**સૂયગડાંગ દીપીકા**	"
૧૧૦	**જંબુદ્વિપ ચૂર્ણી**	"
૧૧૧	**ચંદ્રપ્રજ્ઞપ્તી**	"

આગમોદય સમિતિ પ્રકાશિત

ગ્રંથાંક નં.		
૪૫	ભક્તામર સ્તોત્ર પાદપૂર્તિરૂપ કાવ્ય પ્રથમવિભાગ ટીકા ભાષાંતર	૩-૦-૦
૪૭	પંચસંગ્રહ ટીકા સહ	૨-૮-૦
૫૦	જીવસમાસ પ્રકરણશતક	૧-૮-૦
૫૧	સ્તુતિ ચતુર્વિંશતિકા સચિત્ર શોભનમુનિકૃત સંસ્કૃત	૮-૦-૦
૫૨	સ્તુતિ ચતુર્વિંશતિકા સચિત્ર કવિ ધનપાલકૃત ઐંદ્રસ્તુતિ	૬-૦-૦
૫૩	સ્તુતિચતુર્વિંશતિકા સચિત્ર બપ્પભટ્ટસૂરિકૃત ભાષાંતર યુક્ત	૬-૦-૦
૫૪	ભક્તામર સ્તોત્ર પાદપૂર્તિરૂપ કાવ્ય બીજો વિભાગ ટીકા ભાષાંતર	૩-૮-૦

ગ્રંથાંક નં.		
૫૫	નંદ્યાદિ ગાથાલંકારાદિ યુતો (સપ્તસૂત્ર) વિષયાનુક્રમ	૨-૦-૦
૫૬	આવશ્યક મલયગિરિકૃત ટીકા યુક્ત પૂર્વભાગ	૪-૦-૦
૫૭	લોકપ્રકાશ પ્રથમવિભાગ, દ્રવ્યલોક ૧ થી ૧૧ ભાષાંતર	૩-૮-૦
૫૯	ચતુર્વિંશતિકા જિનાનંદ સ્તુતિ મેરૂવિજયકૃત ભાષાંતર સમેત	૬-૦-૦
૬૦	આવશ્યક મલયગિરિતકૃત ટીકા યુક્ત બીજો ભાગ	૨-૮-૦
૬૧	લોકપ્રકાશ દ્વિતીય વિભાગ, ક્ષેત્રલોક સર્ગ ૧૨ થી ૨૦	૩-૮-૦

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International 2010_05 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org